ISSN 2454-972X

हिमप्रस्थ

अप्रैल, 2017

हिमाचल में बहती
विकास की पावन धारा

सर्वजीत

भारत की है शान हिमाचल

भारत की है शान हिमाचल, भारत की है यह जान।
उत्तर में है मुकुट हिमालय, दुनिया करती इसके गुणगान।

देवी देवलुओं की धरती हिमाचल, कुदरत मानो इसके प्राण।
ज्वाला, नयना, चामुंडा, वज्रेश्वरी, चिंतपुरनी हैं आदि शक्ति की पहचान।

भोले बैजनाथ और त्रिलोकी नाथ यहीं पर बसते, हटे नहीं किसी का इनसे ध्यान।
वीर शहीदों की धरती, दुश्मन से हैं ये लोहा लेकर देते बहादुरी का प्रमाण।

सीमा प्रहरी ये कभी न थकते, न ही वे हैं किसी से डरते।
जान हथेली पर रखकर वे, सबसे आगे जाने को तरसते।

मां भारती की रक्षा खातिर, न्योछावर करते अपने प्यारे प्राण।
देश की खातिर बांध बना कर, देशवासियों पर आकर्षित करते ध्यान।

सूखी बंजर धरती को, हरा भरा बनाने की इन्होंने मन में ली है ठान।
पर्यावरण हैं देश का बचाते, जंगलों की रक्षा कर प्रकृति को करते सलाम।

सभी हिमाचली देश प्रेम के गीत हैं गाते, मानो यही उनकी जान
जन, गण, मन, अधिनायक है इनका गान, ध्यान व मान।

चित्र कला में आगे सबसे, कवि, साहित्यकार हैं इसकी पहचान।
कहां कहां तक बखान करूं मैं, भारत की है यह आन, बान और शान।

कुदरत ने अपने हाथों इसे सजाया, पर्यटकों ने कीमत है इसकी जानी।
छोड़ न कोई यहां से जाना चाहता, यहीं रहने की है सब ने ठानी।

जो भी यहां पर रहने लगता, जाना नहीं फिर अन्यत्र चाहता।
हिमाचल का ही होकर रह जाता, यही यहां की है पहचान।

साक्षरता दर में सब से आगे, स्वच्छता में है इसका प्रथम स्थान।
भारत की है शान हिमाचल, भारत की है यह जान।

सड़कों का है जाल बिछा यहां, हैरान है देख कर सारा जहान।
प्लास्टिक पर रोक लगा कर, हिमाचल सरकार ने है दिया प्रमाण।

सच्चे सुच्चे लोग यहाँ के, छल कपट नहीं है इनको आता।
सब से प्यार भरे मन से मिलते, कोई किसी का बुरा नहीं चाहता।

नंदकिशोर परिमल

ISSN : 2454-972X

हिमप्रस्थ

वर्ष : 62 अप्रैल, 2017 अंक : 1

प्रधान सम्पादक
आर. एस. नेगी

वरिष्ठ सम्पादक
विनोद भारद्वाज

सम्पादक
वेद प्रकाश

उप सम्पादक
योगराज शर्मा

कम्पोजिंग एवं पृष्ठ सज्जा : **अश्वनी**

सम्पादकीय कार्यालय: हि. प्र. प्रिंटिंग प्रेस परिसर, घोड़ा चौकी, शिमला-5

वार्षिक शुल्क : 150 रुपये, एक प्रति : 15 रुपये

E-Mail : himprasthahp@gmail.com
Tell: 0177 2633145, 2830374
Website: himachalpr.gov.in/himprastha.asp

ज्ञान सागर

जो कुछ भी विश्व को अधिक मानवीय और विवेकशील बनाता है उसे प्रगति कहते हैं।

– डब्ल्यू. लिपमैन

आवरण एवं रेखांकन : **सर्वजीत**

इस अंक में

अपनी बात

अप्रैल का माह प्रदेशवासियों के लिए विशेष महत्त्व रखता है। इस महीने की कुछ घटनाएं एवं तिथियां ऐसी हैं जिनका नाता प्रदेश के गौरवपूर्ण इतिहास के साथ गहरे से जुड़ा है। 15 अप्रैल एक ऐसी ही तारीख है जब वर्ष 1948 में इसी पावन दिन 30 पहाड़ी रियासतों के विलय के उपरांत हिमाचल प्रदेश अस्तित्व में आया। प्रदेश के ईमानदार एवं कर्मठ लोगों तथा दूरदर्शी नेताओं के अथक प्रयासों का ही प्रतिफल था कि छोटी-छोटी रियासतों में बंटे इस पर्वतीय क्षेत्र को भारतीय मानचित्र पर एक अलग पहचान मिली। प्रारंभ में अपने अस्तित्व की लड़ाई से लेकर पूर्ण राज्यत्व का दर्जा प्राप्त करने तक चले एक लंबे संघर्ष के नायक रहे, डॉ. वाई.एस. परमार जिन्होंने इसका न केवल कुशल नेतृत्व किया, बल्कि राज्य के शैशवकाल में इसके विकास की ठोस नींव रखी। अस्तित्व में आने के बाद प्रदेश में हुए सर्वांगीण व अभूतपूर्व विकास का अंदाजा इस बात से लगाया जा सकता है कि पूर्ण राज्य बनने के पश्चात हिमाचल प्रदेश आज देश के पर्वतीय और छोटे राज्यों के लिए न केवल विकास का मॉडल बना है, बल्कि स्वास्थ्य, कृषि-बागबानी, समाज कल्याण व समावेशी वृद्धि जैसे क्षेत्रों में देश के बड़े राज्यों की श्रेणी में भी अग्रणी राज्य बनकर उभरा है। परिणामस्वरूप प्रदेश को आज देशभर में सबसे अधिक खुशहाल और आर्थिक रूप से तेजी से उभरते राज्य के रूप में जाना जाता है। देश के अनेक आर्थिक सर्वेक्षण रिपोर्टों और विभिन्न अंतर्राष्ट्रीय एजेंसियों द्वारा जारी नवीनतम आकलनों ने हिमाचल की इन उपलब्धियों को सत्यापित किया है। 15 अप्रैल का दिन हिमाचल प्रदेश के साथ-साथ हिमप्रस्थ पत्रिका के लिए भी उतना ही महत्त्वपूर्ण है। प्रदेश के अस्तित्व में आने के लगभग आठ वर्ष उपरांत संयोगवश 15 अप्रैल के ही दिन वर्ष 1955 में हिमप्रस्थ का उदय हुआ और इसने राज्य की पहली राजकीय पत्रिका के रूप में अपना सफर आरंभ किया। आज से 62 वर्ष पूर्व पत्रिका का प्रादुर्भाव एक ऐसे समय में हुआ जब इस पर्वतीय भू-भाग में पत्र-पत्रिकाओं के नाम पर शायद एकाध प्रकाशन निकलता होगा। छोटी-छोटी रियासतों को मिलाकर अस्तित्व में आए इस राज्य के अधिकांश क्षेत्रों में साहित्यिक गतिविधियां लगभग न के बराबर थीं। इस पहाड़ी राज्य के हर क्षेत्र की अपनी अलग संस्कृति, बोलचाल, रहन-सहन व रीति-रिवाजों के संरक्षण के लिए किसी साहित्यिक मंच की नितांत आवश्यकता थी। प्रदेश के नए, उदीयमान एवं स्थापित रचनाकारों को हिमप्रस्थ के रूप में एक सशक्त मंच मिल जाने से हिमाचल के दुर्गम व दूरस्थ क्षेत्रों में गुमनाम पड़ी अंचलिक लोक संस्कृति को एक-दूसरे क्षेत्र से रूबरू करवाने के साथ-साथ प्रदेश से बाहर पाठकों तक पहुंचाने में भारी मदद मिली। सरकार और लोगों के बीच सेतु का काम करते हुए विकास एवं जन कल्याण गतिविधियों को आम जन तक पहुंचाने तथा इन कार्यक्रमों के कार्यान्वयन की फीडबैक से सरकार को अवगत करवाने में पत्रिका ने महत्ती भूमिका निभाई। सूचना एवं प्रौद्योगिकी में आए क्रांतिकारी बदलावों के दौर में भी पत्रिका ने अपनी प्रासंगिकता को बनाए रखा है। इसमें समय की मांग के अनुरूप जनोपयोगी एवं सुरुचिपूर्ण सामग्री समाहित कर इसे प्रिंटिंग की आधुनिक तकनीक से मुद्रित किया जा रहा है। इंटरनेट के बढ़ते प्रभाव को ध्यान में रखते हुए हिमप्रस्थ को विभागीय वैबसाइट पर उपलब्ध करवाकर इसकी ग्लोबल पहुंच को सुनिश्चित बनाया गया है। इस अंक में नियमित सामग्री सहित हिमाचल दिवस के उपलक्ष्य में प्रदेश के इतिहास व विकास पर केंद्रित विशेष सामग्री जुटाई गई है। लेखक व पाठक हमारी सबसे बड़ी पूंजी हैं। आपके सुझावों की हम सदैव अपेक्षा रखते हैं।

–संपादक

70वां हिमाचल दिवस



पर्वतीय क्षेत्रों के विकास का ध्वजवाहक हिमाचल

हिमाचल दिवस पर मुख्यमंत्री श्री वीरभद्र सिंह का आलेख

हिमाचल प्रदेश अपने अस्तित्व के 70वें वर्ष में प्रवेश कर रहा है। वर्ष 1948 में आज ही के दिन, 30 पहाड़ी रियासतों के विलय से हिमाचल प्रदेश अस्तित्व में आया। इस पावन अवसर पर मैं, सभी प्रदेशवासियों को हार्दिक बधाई देता हूं तथा प्रदेश के उन महान सपूतों को अपने श्रद्धासुमन अर्पित करता हूँ, जिन्होंने हिमाचल प्रदेश को अलग पहचान दिलाने के लिए कठिन परिश्रम किया। मैं, इस अवसर पर प्रदेश के प्रथम मुख्य मंत्री तथा हिमाचल निर्माता डा. वाई.एस. परमार को भी अपने श्रद्धासुमन अर्पित करता हूँ, जिन्होंने प्रदेश को शैशव काल में ठोस एवं सशक्त आधार प्रदान किया।

15 अप्रैल का दिन प्रदेशवासियों के लिए जहां हर्षोल्लास का पर्व है, वहीं हम सब के लिए आत्म-विवेचन का भी अवसर है कि इन वर्षों में हमने क्या अर्जित किया है।हमारे प्रदेश ने इन वर्षो में अभूतपूर्व प्रगति कर एक मिसाल कायम की है। आज हमारा प्रदेश देश में पर्वतीय क्षेत्र के विकास का आदर्श बन कर उभरा है तथा इसकी आर्थिकी में तीव्र वृद्धि हो रही है। इस दौरान प्रदेश के सभी क्षेत्रों में हुआ अभूतपूर्व विकास इसका साक्षी है।

यदि हम वर्ष 1948 के हिमाचल की तुलना आज से करें तो हम पाएंगे कि हिमाचल प्रदेश ने उल्लेखनीय एवं अभूतपूर्व प्रगति की है। प्रदेश में प्रति व्यक्ति आय, जो 1948 में 240 रुपये थी, आज बढ़कर 1,47,277 रुपये हो गई है। राज्य का सकल घरेलू उत्पाद 26 करोड़ रुपये से बढ़कर 1,24,570 करोड़ रुपये तथा साक्षरता दर 7 प्रतिशत से बढ़कर 83.78 प्रतिशत तक पहुंच गई है। प्रदेश के गठन के समय राज्य में केवल छः गांवों में बिजली तथा 331 गांवों में पेयजल सुविधा थी। आज राज्य के सभी गांवों में पेयजल सुविधा तथा प्रत्येक घर में बिजली की सुविधा है। प्रदेश में तीन किलोमीटर की परिधि में शिक्षण संस्थान हैं तथा दूर-दराज क्षेत्रों में भी स्वास्थ्य संस्थान खोले गए हैं।

वर्तमान प्रदेश सरकार ने 25 दिसम्बर, 2012 को प्रदेश की बागडोर संभाली तथा इसके साथ ही सरकार ने प्रदेश के समान एवं सतत् विकास पर ध्यान केन्द्रित किया। निर्धन, कमजोर तथा उपेक्षित वर्गों के कल्याण को विशेष प्राथमिकता दी गई

वर्तमान प्रदेश सरकार ने 25 दिसम्बर, 2012 को प्रदेश की बागडोर संभाली तथा इसके साथ ही सरकार ने प्रदेश के समान एवं सतत् विकास पर ध्यान केन्द्रित किया। निर्धन, कमजोर तथा उपेक्षित वर्गों के कल्याण को विशेष प्राथमिकता दी गई है। प्रदेश सरकार ने निर्धन तथा उपेक्षित वर्गों पर विशेष ध्यान देते हुए स्वास्थ्य, शिक्षा तथा संतुलित अधोसंरचना विकास जैसे क्षेत्रों में अभूतपूर्व प्रगति की है। प्रदेश को शिक्षा तथा सतत् विकास में देश का सर्वश्रेष्ठ राज्य घोषित किया गया है। प्रदेश को देश के बड़े राज्यों में पहला खुले में शौच मुक्त राज्य घोषित किया गया है।

है। प्रदेश सरकार ने निर्धन तथा उपेक्षित वर्गों पर विशेष ध्यान देते हुए स्वास्थ्य, शिक्षा तथा संतुलित अधोसंरचना विकास जैसे क्षेत्रों में अभूतपूर्व प्रगति की है। प्रदेश को शिक्षा तथा सतत् विकास में देश का सर्वश्रेष्ठ राज्य घोषित किया गया है। प्रदेश को देश के बड़े राज्यों में पहला खुले में शौच मुक्त राज्य घोषित किया गया है।

समाज के कमजोर वर्गों के कल्याण एवं उत्थान को विशेष प्राथमिकता दी गई है ताकि उनकी आर्थिकी में सुधार किया जा सके। प्रदेश में 3,89,168 लोगों को सामाजिक सुरक्षा पेंशन प्रदान की जा रही है। प्रदेश सरकार ने गत चार वर्षों में सामाजिक सुरक्षा पेंशन को 450 रुपये से बढ़ाकर 650 रुपये किया और अब 700 रुपये प्रतिमाह किया गया है। वर्तमान वित्तीय वर्ष के दौरान सामाजिक सुरक्षा पेंशन प्रदान करने पर 410 करोड़ रुपये खर्च किए जा रहे हैं। मदर टेरेसा मातृ आश्रय संबल योजना के अंतर्गत सहायता राशि को 3000 रुपये से बढ़ाकर 4000 रुपये किया गया है।

प्रदेश सरकार यह सुनिश्चित बना रही है कि सभी को खाने के लिए पर्याप्त भोजन व रहने के लिए घर हो। शत-प्रतिशत जनसंख्या को सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अंतर्गत लाया गया है। प्रदेश के 37 लाख से अधिक लोगों को राजीव अन्न योजना के अंतर्गत खाद्य सुरक्षा प्रदान की जा रही है तथा उन्हें दो रुपये प्रति किलो की दर से तीन किलो गेहूं एवं तीन रुपये प्रति किलो की दर से दो किलो चावल प्रति व्यक्ति प्रति माह प्रदान किए जा रहे हैं। विशेष उपदान योजना के अंतर्गत सभी राशनकार्ड धारकों को दालें, खाद्य तेल तथा आयोडीन युक्त नमक प्रदान करने पर गत चार वर्षों में 750 करोड़ रुपये खर्च किए गए हैं तथा इस वित्तीय वर्ष के लिए 220 करोड़ रुपये आबंटित किए गए हैं। प्रदेश में ई-पीडीएस योजना आरम्भ की गई है तथा सार्वजनिक वितरण प्रणाली में दक्षता एवं पारदर्शिता लाने के लिए लगभग 16.64 लाख राशनकार्ड वितरित किए गए हैं।

प्रदेश की 70 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या जीवनयापन के लिए कृषि पर निर्भर है, इसलिए ग्रामीण आर्थिकी को सुदृढ़ करने के लिए कृषि विकास को सर्वोच्च प्राथमिकता दी गई है। किसानों को 4 लाख से अधिक मृदा स्वास्थ्य कार्ड वितरित किए गए हैं। इस योजना के सफल कार्यान्वयन के लिए हमीरपुर जिले को प्रधानमंत्री द्वारा देश के सर्वश्रेष्ठ जिले के रूप में सम्मानित किया गया है। प्रदेश में मुख्यमंत्री खेत संरक्षण योजना का कारगर कार्यान्वयन किया जा रहा है तथा इस वित्तीय वर्ष से किसानों को अपने खेतों में बाड़ लगाने के लिए 60 प्रतिशत का उपदान दिया जा रहा है ताकि उनकी फसलों को आवारा पशुओं एवं बंदरों से बचाया जा सके। डॉ. वाई. एस. परमार किसान स्वरोजगार योजना के अंतर्गत लगभग 53.45 करोड़ रुपये खर्च कर 41.37 हेक्टेयर क्षेत्र में 2525 पॉलीहाउस निर्मित किए गए हैं। प्रदेश के 36 हजार से अधिक किसानों ने जैविक खेती को अपनाया है तथा किसानों को 7,14,221 किसान क्रेडिट कार्ड वितरित किए गए हैं।

हमारी कृषि आर्थिकी में बागबानी की महत्वपूर्ण भूमिका है। प्रदेश की बागबानी आर्थिकी को सुदृढ़ करने के विशेष प्रयास किए जा रहे हैं। राज्य में गुणात्मक फलों के उत्पादन को बढ़ाने के लिए विश्व बैंक पोषित बागबानी विकास परियोजना आरम्भ की गई है। किसानों की बागबानी फसलों को ओलावृष्टि से बचाने के लिए 15.52 लाख वर्ग मीटर से अधिक क्षेत्र को एंटी हेलनेट के अंतर्गत लाया गया है। हेलनेट पर दिए जाने वाले उपदान को 50 प्रतिशत से बढ़ाकर 80 प्रतिशत किया गया है। प्रदेश के 1,00,493 किसान मौसम आधारित फसल बीमा योजना का लाभ उठा रहे हैं। इस वित्तीय वर्ष से इस योजना का विस्तार सेब, आम, पलम, आड़ू तथा नींबू प्रजाति के फलों के लिए सभी सम्भावित खण्डों के लिए किया गया है।

प्रत्येक घर को स्वच्छ पेयजल तथा अधिक से अधिक खेतों को सिंचाई सुविधा प्रदान करना प्रदेश सरकार की प्राथमिकता है। वर्तमान वित्तीय वर्ष के दौरान विभिन्न पेयजल एवं सिंचाई परियोजनाओं पर 2238 करोड़ रुपये खर्च किए जाएंगे। ऊना जिला में 922 करोड़ रुपये की स्वां नदी तटीकरण परियोजना तथा कांगड़ा जिला में 180 करोड़ रुपये की छौंछ खड्ड तटीकरण परियोजना का कार्य प्रगति पर है। शिमला नगर को 24 घंटे पेयजल आपूर्ति प्रदान करने के लिए विश्व बैंक की सहायता से 837 करोड़ रुपये की परियोजना स्वीकृत की गई है।

सड़क. विकास की भाग्य रेखाएं हैं तथा ग्रामीण आर्थिकी,

विशेष रूप से पहाड़ी राज्यों की समृद्धि के लिए आवश्यक अधोसंरचना है। सरकार सड़कों के निर्माण को प्राथमिकता दे रही है तथा ग्रामीण क्षेत्रों में सड़क नेटवर्क सुदृढ़ करने पर विशेष बल दिया जा रहा है। प्रदेश की कुल 3226 पंचायतों में से 3138 पंचायतों को वाहन योग्य सड़का. से जोड़ा गया है तथा शेष 74 पंचायतों को जोड़ने का कार्य प्रगति पर है। विगत चार वर्षों में प्रदेश में 2000 किलोमीटर से अधिक सड़का. और 204 पुलों का निर्माण किया गया तथा 864 गांवों को सड़क मार्ग से जोड़ा गया है।

हिमाचल प्रदेश तेजी से देश का शिक्षा का उत्कृष्ट केन्द्र बनने की ओर अग्रसर है। गत चार वर्षों में प्रदेश में 42 नए महाविद्यालय खोले गए तथा 1328 नए सरकारी स्कूल खोले अथवा स्तरोन्नत किए गए। इसके अतिरिक्त, इस अवधि के दौरान प्रदेश में दो नए इंजीनियरिंग कॉलेज, 34 आईटीआई तथा आईआईटी, आईआईएम, आईआईआईटी तथा आरवीटीआई जैसे केन्द्र सरकार द्वारा वित्त पोषित चार संस्थान खोले गए। राजीव गांधी डिजिटल योजना के अंतर्गत 10वीं तथा 12वीं की मेधावी विद्यार्थियों को 10 हजार नेटबुक प्रदान की जा रही हैं।

सभी को उनके घरद्वार पर बेहतर स्वास्थ्य सुविधाएं प्रदान करना सुनिश्चित बनाया जा रहा है। प्रदेश में स्वास्थ्य पर व्यय कुल सकल राज्य घरेलु उत्पाद का 1.43 प्रतिशत है, जो देश में दूसरे स्थान पर सर्वाधिक है। गत चार वर्षों के दौरान प्रदेश में 21 नागरिक अस्पताल, 34 सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र, 96 प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र तथा 29 स्वास्थ्य उप-केन्द्र खोले गए। शिमला के समीप चमियाना में 290 करोड़ रुपये की लागत से आईजीएमसी का एक सुपर स्पेशियलिटी खण्ड निर्मित किया जा रहा है। ईएसआई मेडिकल कॉलेज एवं अस्पताल मण्डी को राज्य सरकार द्वारा अधिगृहित कर इसका नामकरण लाल बहादुर शास्त्री राजकीय मेडिकल कॉलेज एवं अस्पताल किया गया है। वर्तमान वित्तीय वर्ष के दौरान प्रदेश में लोगा. को बेहतर स्वास्थ्य सेवाएं प्रदान करने पर 1720 करोड़ रुपये खर्च किए जा रहे हैं।

जल विद्युत क्षमता का दोहन प्रदेश की समृद्धि की कुंजी है तथा राज्य सरकार इस प्राकृतिक संसाधन के समुचित दोहन को विशेष प्राथमिकता दे रही है। अभी तक प्रदेश में 10,351 मेगावाट जल विद्युत क्षमता का दोहन किया जा चुका है। काशंग जल विद्युत परियोजना को इस वर्ष पूरा किया गया था जबकि सैंज तथा उहल जल विद्युत परियोजनाओं को वर्तमान वित्तीय वर्ष के दौरान पूरा किया जाएगा, जिससे प्रदेश में राज्य क्षेत्र में 200 मेगावाट अतिरिक्त क्षमता का इजाफा होगा। गत चार वर्षों के दौरान प्रदेश के घरेलू विद्युत उपभोक्ताओं को सस्ती दरों पर बिजली प्रदान करने पर 1490 करोड़ रुपये व्यय किए गए हैं। वर्तमान वित्तीय वर्ष के दौरान इसके लिए 450 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया है।

पर्यटन दूसरा ऐसा क्षेत्र है जो आय के साधन के साथ-साथ स्थानीय लोगों को रोजगार के अवसर प्रदान करने का मुख्य स्रोत हो सकता है। राज्य सरकार प्रदेश में सतत् पर्यटन विकास को बढ़ावा दे रही है। केन्द्रीय पर्यटन मंत्रालय द्वारा हिमालयन सर्किट के अंतर्गत 100 करोड़ रुपये की 14 परियोजनाओं की डीपीआर को मंजूरी दी गई है। इसके अतिरिक्त एशियाई विकास बैंक द्वारा प्रदेश में पर्यटन विकास के लिए 640 करोड़ रुपये की ऋण सहायता को मंजूरी दी गई है।

प्रदेश के लोगों को रोजगार प्रदान करने तथा आय सृजन के लिए औद्योगिक विकास को बढ़ावा दिया जा रहा है। पर्यावरण मित्र, प्रदूषण मुक्त, आय एवं रोजगार सृजन वाले उद्योगों को विशेष प्रोत्साहन दिया जा रहा है। कांगड़ा जिला के कंदरोड़ी तथा ऊना जिला के पंडोगा में नए अत्याधुनिक औद्योगिक क्षेत्र विकसित किए जा रहे हैं। नए उद्योगों को स्थापित करने के लिए सभी स्वीकृतियां 45 दिनों के भीतर प्रदान की जा रही हैं। नए निवेशकों की सुविधा के लिए स्टाम्प शुल्क तथा भू-उपयोग हस्तांतरण शुल्क को कम किया गया है। 300 या इससे अधिक हिमाचलियों को रोजगार प्रदान करने वाली नई औद्योगिक इकाइयों से प्रथम 5 वर्षों तक केवल एक प्रतिशत विद्युत शुल्क वसूला जा रहा है। प्रदेश में मुख्यमंत्री स्टार्टअप/इनोवेशन परियोजना/नए उद्योग परियोजना शुरू की गई है, जिसके अंतर्गत नए स्टार्टअप उद्यमियों को अनेक रियायतें प्रदान की जा रही हैं।

धर्मशाला को स्मार्ट सिटी मिशन के अंतर्गत 2109 करोड़ रुपये की परियोजना के लिए चुना गया है तथा केन्द्र द्वारा इसके लिए 186 करोड़ रुपये की पहली किस्त जारी की गई है। शिमला तथा कुल्लू नगरों को अम्रुत योजना के अंतर्गत चुना

समाज के कमजोर वर्गों के कल्याण एवं उत्थान को विशेष प्राथमिकता दी गई है ताकि उनकी आर्थिकी में सुधार किया जा सके। प्रदेश में 3,89,168 लोगों को सामाजिक सुरक्षा पेंशन प्रदान की जा रही है। प्रदेश सरकार ने गत चार वर्षों में सामाजिक सुरक्षा पेंशन को 450 रुपये से बढ़ाकर 650 रुपये किया और अब 700 रुपये प्रतिमाह किया गया है। वर्तमान वित्तीय वर्ष के दौरान सामाजिक सुरक्षा पेंशन प्रदान करने पर 410 करोड़ रुपये खर्च किए जा रहे हैं। मदर टेरेसा मातृ आश्रय संबल योजना के अंतर्गत सहायता राशि को 3000 रुपये से बढ़ाकर 4000 रुपये किया गया है।

गया है।

प्रदेश के लोगों को सुरक्षित, आरामदेय एवं भरोसेमंद सार्वजनिक परिवहन सुविधाएं प्रदान की जा रही हैं। वर्तमान वित्तीय वर्ष के दौरान पहाड़ी सड़कों के लिए उपयुक्त छोटी व आरामदेय बसें खरीदने के लिए 215 करोड़ रुपये आबंटित किए गए तथा इसके अतिरिक्त 50 करोड़ रुपये का सम-हिस्सा भी प्रदान किया जाएगा। राज्य पथ परिवहन निगम के बेड़े में 1300 नई बसें शामिल की गई हैं। महिलाओं को निगम की बसों में किराये में 25 प्रतिशत की छूट दी जा रही है। युवाओं को रोजगार के अवसर प्रदान करने के लिए वर्तमान वित्तीय वर्ष के दौरान उन्हें कम से कम एक हजार नए बस परमिट प्रदान किए जाएंगे।

राज्य सरकार प्रदेश के बेरोजगार युवाओं को रोजगार परक बनाने के लिए उनके कौशल उन्नयन को विशेष प्राथमिकता दे रही है। इसके लिए प्रदेश सरकार द्वारा 500 करोड़ रुपये की कौशल विकास भत्ता योजना आरम्भ की गई है। अभी तक इस योजना के अंतर्गत 1,52,000 युवाओं को कौशल विकास भत्ता प्रदान किया गया है। प्रदेश में एशियाई विकास बैंक की सहायता से 640 करोड़ रुपये की कौशल विकास परियोजना को कार्यान्वित करने के लिए कौशल विकास निगम स्थापित किया गया है तथा इससे 65 हजार युवाओं को रोजगार उपलब्ध होगा।

एक ऐतिहासिक निर्णय लेते हुए राज्य सरकार ने दस जमा दो तथा इससे अधिक शिक्षित बेरोजगार युवाओं को एक हजार रुपये प्रतिमाह का बेरोजगारी भत्ता देने का निर्णय लिया है। शारीरिक रूप से अक्षम युवाओं को 1500 रुपये प्रतिमाह का भत्ता दिया जाएगा।

प्रदेश के विकास में कर्मचारियों की महत्वपूर्ण भूमिका को देखते हुए राज्य सरकार के कर्मचारियों के साथ सौहार्दपूर्ण संबंध हैं तथा उनकी सभी जायज मांगों को सहानुभूतिपूर्वक निपटाया जा रहा है। प्रदेश के कर्मचारियों को गत चार वर्षों में 2455 करोड़ रुपये के वित्तीय लाभ तथा पेंशनरों एवं पारिवारिक पेंशनरों को 910 करोड़ रुपये के वित्तीय लाभ दिए गए हैं। अनुबंध कर्मचारियों के मानदेय को ग्रेड पे के 50 प्रतिशत से बढ़ाकर 75 प्रतिशत किया गया है तथा दिहाड़ीदारों की दिहाड़ी बढ़ाकर 210 रुपये की गई है।

मेरी सरकार प्रदेश के सभी क्षेत्रों के समान एवं संतुलित विकास तथा समाज के सभी वर्गों, विशेष रूप से निर्धन एवं उपेक्षित वर्गों के कल्याण के प्रति वचनबद्ध है। हमारी सरकार लोगों को स्वच्छ, पारदर्शी एवं जवाबदेह प्रशासन प्रदान करने के प्रति वचनबद्ध है।

हिमाचल दिवस के इस पावन अवसर पर आओ हम सभी संकल्प लें कि हम हिमाचल प्रदेश को देश का सर्वाधिक विकसित एवं समृद्ध राज्य बनाने के लिए एकजुट होकर प्रयास करेंगे।



आलेख

अपनी संस्कृति ढूंढने जो मैं निकला

◆ अनिल सोनी

संस्कृति अपने शृंगार की वजह और रजा नहीं जानती, फिर भी मानवीय विकास का यही पहलू अंगीकार होता है। संपर्क और संवाद से हटकर, परिवर्तन और उपलब्धियों के जिस ताने-बाने में हिमाचल एक नया समाज बुन रहा है, उसे हम अब अभिवादन की आत्मीयता से कतई नहीं जोड़ सकते, फिर भी प्रगतिशीलता से भरे इस प्रदेश से रचनात्मक समाज खारिज नहीं होता। आज भी किन्नौर की पहाड़ियों पर जब चिलगोजे की फसल तैयार हो जाती है, तो उसे हासिल करने की सामाजिक कर्मठता, अपनी परंपराओं की दहलीज के भीतर जश्न मनाती है। पूरा परिवेश जब सामाजिक परिदृश्य बन जाता है या आर्थिक बदलाव के बीच जीने की शर्तें यथावत अपने मूल्यों की परिपाटी से बाहर नहीं जातीं, तो सांस्कृतिक पहलुओं की रवानगी में अंतरभेद नहीं हो सकता। चिलगोजे से जुड़ा बाजार उस भावना को क्षीण नहीं करता, जो न जाने कितने दशकों से समाज के सामूहिक व्यवहार को समान धरातल पर चलना सिखाती है। फसल के बंटवारे का अधिकार रेखांकित नहीं होता, फिर भी समाज की अमानत में सांस्कृतिक संरक्षण होता है। यह दीगर है कि सामाजिक-सांस्कृतिक पक्ष को समझे बिना आर्थिक संरक्षणवाद के नए मुहावरों तक पहुंचे हिमाचल की एक दूसरी तस्वीर भी है। समाज की बदलती ख्वाहिशों ने सांस्कृतिक बदलाव को स्वीकार करते हुए, अपने जीवन से उम्मीदें और जीवन की उम्मीदें बदल दीं। यहीं से वर्ग भेद बढ़ता है और संवेदना भी बदलती है। खेत के करीब अगर हिमाचली रसोई में साग-भाजी के बजाय चाइनीज व्यंजनों की कड़ाही से महक आए, तो प्रदेश की माटी का वजूद क्या होगा। आधी सदी पूर्व उजड़े तिब्बती समुदाय ने अगर इस दौरान अपनी सांस्कृतिक विरासत की तहें हिमाचल में बिछा दीं, तो हमने अपना इतना कुछ क्यों खो दिया। यह शायद इसलिए भी क्योंकि जीवन में सियासी व आर्थिक महत्त्व बढ़ गया और पर्वतीय आगोश से फिसलकर परंपराएं घायल हुईं, तो कहीं लोक साहित्य के पांव भी चलना भूल गए। शादी-विवाह समारोह में बढ़ती गई रौनक ने वे नाते छीन लिए जो हर रीत पर गुनगुनाते थे और जब वधु पक्ष के आंगन में बाराती पगड़ियों के तुर्रे लहलाते थे, तो धाम के साथ मिलने वाली गालियों का सुर माहौल की अहमियत को यादगार बना देता था। यादगार पल तो शायद अब पहले से ज्यादा असरदार माने जाते हैं, मगर डीजे के शोर में दुल्हन के हाथों में बंधे कलीरे नहीं बजते।

पहले हिमाचली धाम में साझी विरासत से जब घर-घर से छाछ का मटका आता होगा, तो भाईचारे की संस्कृति की एक रसोई बन जाती थी, लेकिन अब तो इसका भी ब्रांड आ गया और हम भरे कनस्तर के साथ अपनी खरीद क्षमता का अवतार बन जाते हैं। विडंबना यह कि अब दही का छोटा सा कटोरा भी हम आपस में नहीं बांट सकते और इसलिए बाजार की बोलियों में धनिए की पत्तियों से कई जंगली फूल-फल तक का मोल-भाव करते हैं। आज हिमाचल उपभोक्तावाद की नस्ल के रूप में हर जेब में पैसा तो देखता है, लेकिन अपने होने का साझापन नसीब नहीं होता। 'मोमो' हमारी रगों में गहरे उतर गया है? और हर छोटी दुकान भी इसी उत्पाद की संस्कृति बन गई। बेशक कुल्लू-मंडी के कुछ स्वयं सहायता समूहों ने 'सिड्डू' को रेस्तरां की प्लेट में प्रस्तुत किया तो वाहवाही मिली, लेकिन खाने और पीने की बाजारू आदतों ने हमारी अपनी रसोई की आग ठंडी कर दी। मंडी में इसी विरासत को खोजते चौकियों के ढहते वजूद में, खंडहर बनते संयुक्त परिवार से कहीं अधिक बलशाली हो गए सोलन के एकल अपार्टमेंट। कुछ परिवार हिमाचल से बाहर निकलकर चंडीगढ़ के आसपास बसने लायक समाज पा रहे हैं, तो उनके साथ पहचान के लिए हम किस मिट्टी का लगाव देखेंगे। ऐसे में सवाल यह भी कि क्या हिमाचल की अपनी राजधानी ने आज तक अपनी संस्कृति का रखाव किया। क्या हमने अपनी बोलियों की मिठास से चुनकर हिमाचल की अपनी भाषा को एकत्रित किया या लेखक वर्ग केवल सरकारी यात्र के निवेदन तक ही सिमट गया। धन्य हैं सूद परिवारों की वे हवेलियां जो गरली-परागपुर को धरोहर गांव बनाती हैं, लेकिन क्या हम सुजानपुर की लुटी-पिटी विरासत में अपनी संस्कृति के किसी विशाल स्तंभ को खोज पाए या इतिहास के जो पल चंबा, कांगड़ा, सिरमौर या रामपुर बुशहर में छुप गए, उन्हें गौरव की हकीकत में हिमाचली विरासत बना पाए। संस्कृति

तो उस वक्त भी खूब लड़ी होगी जब भाखड़ा बांध की ऊंचाई में एक-एक करके बिलासपुर के सारे मंदिर डूबे होंगे या जहां पौंग जलाशय तनकर खड़ा हुआ, वहां की गलियां कितनी आहों के बीच अपनी संस्कृति का रास्ता भूली होंगी। विडंबना यह भी कि संस्कृति की पूरी परिपाटी को निगल चुके बांधों का जब नामकरण हुआ, तब भी किसी हिमाचली नायक का नाम इनसे नहीं जुड़ा। आश्चर्य यह कि अब एक शाश्वत अभिव्यक्ति में सरकारी प्रेस विज्ञप्ति कहती है कि मेले हमारी सांस्कृतिक धरोहर, लेकिन न वहां टमक की थाप और न ही नाटी की लय में झूमती संस्कृति मिलती है। हिमाचल का राजनीतिक नसीब भी सांस्कृतिक वजूद को छीनकर इसे छीजने की नौबत तक ले जा चुका है और इस हिसाब से समारोहों के आयोजन में बेशुमार पगडियां बंटने लगी हैं। अब नलवाड़ी मेलों में पशु नहीं बिकता, लेकिन हिमाचली लोक कलाकार बिकता है चंद सिक्कों में। समारोहों की भीड़ में मनोरंजन की खाल उस वक्त उखड़ती है जब हिमाचली कलाकार के सामने कोई पंजाबी गायक सारे सिक्के बटोर रहा होता है, लेकिन सिक्के का एक पहलू यह भी कि क्या हिमाचली समाज ने लोक गीत-संगीत के जरिए आत्म सम्मान की कोई पराकाष्ठा लिखी। आज भी बंजतरी समाज हमारी देव परांपराओं की मजदूरी करते हैं, लेकिन हमने उन्हें कलाकार भी नहीं माना। आज हिमाचल ने नए पर्व खोज लिए तो प्रवासी मजदूरों ने छठ पूजन से हमारी नदियों के सांस्कृतिक मुहाने बदल दिए। अब कलाकार राजस्थान या पश्चिम बंगाल से आते हैं, तो हम विशालकाय मूर्तियों की प्रतिस्पर्द्धा में कभी गणेशोत्सव, तो कभी दुर्गाष्टमी की प्रासंगिकता खोजते हैं। न जाने इस दौर में 'रली पूजन' का आंगन कहां चला गया और कितने ही सरोकार अपनी ही संस्कृति से अछूत हो गए। तिब्बती समुदाय शरणार्थी बनकर हिमाचल में बसा, लेकिन विरासत से सांस्कृतिक आदत तक अपनी पहचान के विषय व स्तंभ मजबूत कर लिए। कहने को मंडी हमारी सांस्कृतिक राजधानी है, लेकिन आज तक यहां प्रदेश स्तरीय सांस्कृतिक परिसर विकसित नहीं कर पाए। हजार साल की सभ्यता, संस्कृति व कला का संगम रहा चंबा आज भी अपने कलात्मक पक्ष का महत्त्व नहीं बता पा रहा, तो कहीं न कहीं हिमाचली सोच का क्षेत्रवाद ही आड़े आ रहा है। कला के नाम पर इतराने के लिए शिमला का गेयटी थियेटर तो है, लेकिन कहां है हिमाचल का लोक थियेटर। बेशक अब कुल्लू के ठाकुर दास राठी या शिमला के कुलदीप शर्मा की नाटियों पर पूरा प्रदेश झूमता है, लेकिन संस्कृति से प्रदेश का साहित्य दूर हो गया। लेखक समुदाय भारतीय संदर्भों में खुद की बुलंदी नाप सकता है, लेकिन सामूहिक प्रयास होता तो आज हिमाचली रंगमंच भी होता। लेखकीय उदासीनता की जमीन पर मरते लोक थियेटर की सिसकियों में करियाला, बांठड़ा, स्वांग या भगत के चिन्ह तड़प रहे हैं। आश्चर्य यह कि हिमाचल के नाम पर स्थापित विश्वविद्यालय भी अपने मजमून की तारीफ में हिमाचल के कलात्मक पक्ष की नाक नहीं बचा पाया, यह उसे भी मालूम नहीं। उत्सव व समारोहों के मंचों ने जो परोसा, उससे हिमाचल का सांस्कृतिक पक्ष ही क्यों पीछे रह गया। पर्यटन राज्य होते हुए भी हिमाचल के सांस्कृतिक व धरोहर पक्ष को माकूल समर्थन नहीं मिला। सांस्कृतिक पर्यटन के लिहाज से कोई भी समारोह खुद को साबित नहीं कर पाया, जबकि बौद्ध पर्यटन की शुरुआती तैयारी भी होती, तो लेह-लद्दाख से कहीं अधिक महत्त्व की सांस्कृतिक विशालता से भरा हुआ लाहुल-स्पीति स्वागत कर रहा होता। मसरूर फेस्टिवल को अजंता-एलोरा महोत्सव की तरह लगातार मनाया जाता या तमाम ऐतिहासिक व धरोहर स्थल, हिमाचली कला एवं संस्कृति के संगम बनते, तो संरक्षण का उद्देश्य पूर्ण होता। हिमाचल के नागरिक समाज का लोक संस्कृति व कला के प्रति घटता रुझान भयंकर दौर में पहुंच चुका है और अतिक्रमण के पंजों में प्रदेश अपने धरोहर मूल्य को बेरहमी से खो रहा है। भित्ति चित्रों से सुसज्जित घर जिस तरह ढह रहे हैं या स्लेटपोश मकानों की छत बदल रही है, उसे देखते हुए हमारी परंपराओं का अतीत सिमट रहा है। इस बीच जब बांधों का पानी घटता है, तो बिलासपुर के डूबे हुए मंदिर या पौंग से निकलती बाथू की लड़ी, हमें अपने दर्द का एहसास बयान कराते हैं। जीवन की रफ्तार के बीच खुद को ढूंढते कदम, टूटते घुंघरुओं के सुर और घायल होते परिवेश की चीख अब भी नहीं सुनी, तो कातिल हम ही होंगे।



(प्रधान संपादक 'दिव्य हिमाचल' प्रकाशन समूह)

आलेख

मुड़-मुड़ के न देख

◆ डॉ. ओमप्रकाश सारस्वत

दो दिव्यांगों की मैत्री पर आधारित कभी 'दोस्ती' फिल्म देखी थी। बड़ी द्रावक और कई हृदयस्पर्शी गानों से भरपूर। उसके एक दृश्य में, दो दोस्तों में से एक दृष्टिबाधित, अपने से आगे-जाने वालों के पीछे हाथ फैलता हुआ गाता है -

जाने वालो ज़रा
मुड़के देखो इधर
एक इन्सान हूं मैं
तुम्हारी तरह।

परंतु जाने वाले चले गए और उनकी तरह का इन्सान दया की भीख मांगता हुआ पीछे रह गया।

दया की भीख मांगने वाले इस निष्करूप दुनिया में, सदा पीछे ही रहते देखे गए हैं। यहां आगे चलने वाला कोई किसी के लिए नहीं रुकता। किसी को अपने साथ नहीं ले जाता। अंततः, आपको स्वयं ही तय करना है अपना रास्ता।

एक ज़माना था जब किन्हीं बड़े सभागार-समारोहों में सत्संग-आयोजनों में, 'प्रसाद' बांटने वाले, रोटी-दाल बरताने वाले, पानी पिलाने वाले, ज़रूर पीछे 'मुड़कर' देख-पूछ लिया करते थे कि कोई छूट तो नहीं गया। वे अपनी ज़िम्मेदारी से बंधे अपने कर्त्तव्य को समर्पित थे। पधारी हुई संगतें' उनकी सराहना करती थीं। सेवा करने वाले, असंख्य आशीर्वादों से मालामाल हो जाते थे। माहौल सद्भावना की गंधि से महक उठता था। सामान्य लोग कई अलंकारों/कई विशेषणों से सज उठते थे।

परंतु आज, यदि आप किसी सड़क/रास्ते पर चलते हुए बार-बार पीछे मुड़-मुड़कर देख रहे हैं और पीछे कोई सुकुमारी/या आधुनिका आ रही है तो पीछे देखना आपके वर्तमान को, भविष्य के संकट पथ की ओर धकेल सकता है।

यह मुड़-मुड़ के कुछ भी दोहराने की आदत कहीं-भी सराही नहीं जाती। मेले-ठेलों में, सार्वजनिक स्थलों पर, भीड़भरे चौराहों पर मुड़-मुड़ के 'टीज़' करना, मुड़-मुड़ के जेब साफ करना, धौंस जमाना, दादागीरी करना, आखिर मुसीबत को ही बुलावा है। पढ़ाई में, मुड़-मुड़ के एक ही कक्षा के बैंचों पर बैठने का चाव, मुड़-मुड़ के झूठ बोल कर सच्चा होने की कोशिश, मुड़-मुड़ के जबान लड़ाना और सच्चाई पर हकलाना, सब संकटों के निमंत्रण हैं। बार-बार कुछ का भी, पुनः-पुनः दोहराव वैरस्य उपजाता है।

कभी आज़ादी के आंदोलन के दिनों में रात-रात भर चलने वाले कवि सम्मेलनों में श्रोता, अच्छी रचनाओं को, मुड़-मुड़ के सुनने की ताकीद करते थे। कवि उत्साहित होकर, बार-बार एक ही रचना को फिर-फिर सुनाते थे। लोग ताली बजा-बजाकर स्वागत करते थे। आयोजक, आगे भी ऐसे सम्मेलन करने की घोषणा करते और अधिक-से-अधिक संख्या में आने का आग्रह करते। अब वे दिन बीत गए हैं। किंतु कुछ तत्कालीन कवि उन शैलियों को आज भी मुड़-मुड़ के देखते हैं और गुदगुदी का अनुभव करते हैं। कभी-कभी मुझमें भी, हिमाचल के पुराने साहित्यिक माहौल की सुखद स्मृतियां जमीं में दबे कंद की तरह 'पुंगर-पुंगर' उठती हैं। तब के आयोजक, आमंत्रण सूचियों को मुड़-मुड़ के 'चैक' करते थे कि कोई लेखक/लेखिका 'सद्दे' बिना तो नहीं रह गया। कार्यक्रम वाले, अपने घरों में होने वाले समारोहों/उत्सवों में बुलाए जाने वाले मेहमानों की तरह बुलाते थे। सबको सादर बुलाना एक परंपरा थी। आयोजक यत्न करते थे कि कहीं उनके कर्त्तव्य शिष्टता या शिष्टाचार में कोई छेद न रह जाए।

लगता है ऐसी सोच, कुछ खास संस्कारवान् व्यक्तियों का ही गहना होती होगी। तब के लोग आयोजनों का महत्त्व और दायित्व समझते थे। वे स्वयं भी विद्वान-साहित्यकार होते थे और कलावंतों, विद्यावंतों का सत्कार करते थे।

हमारे समाज में विद्या, बुद्धि, आयु और चरित्र में समुन्नत लोगों के समादर की परंपरा रही है। परंतु आज इन्हीं लोगों के तिरस्कार, अपकार की चाल है। आयोजक स्वयं ही सब कुछ हो जाते हैं। मैंने ऐसे कई आयोजन देखे हैं जिनमें, उसी/उन्हीं संस्थाओं के अध्यक्ष, उन्हीं के अतिथि और उन्हीं के प्रतिभागी और पुरस्कार विजेता होते हैं। कई-कई संस्थाओं में तो सदा-सदा के लिए, परमानेंट अध्यक्ष और मुख्यातिथि, विद्यमान रहते हैं, ऐसी संस्थाओं को कहीं इधर-उधर, जाने, नज़र दौड़ाने की ज़रूरत नहीं रहती। अच्छा भी है, फिर आत्मनिर्भरता यही तो होती है। आज कोई भी आयोजन, संस्था/संस्थानों के बल पर खुद को ही प्रतिष्ठित करने



के माध्यम हैं। फिर अगर घर में ही पूछ नहीं होगी तो बाहर कौन पूछेगा?

आप मुझसे ज्याद देखते होंगे कि मोबाइल/स्मार्टफोनों पर व्हाट्एप, यूट्यूब, ब्लूटुथ, मैसेंजर, ट्विटर एवं फेसबुक आदि पर स्वयं को परोसने की जो होड़ लगी है, वह कब और कहां जाकर समाप्त होगी? मुझे तो इल्म नहीं! हर कुछ (मैं लिख नहीं सकता, आप समझ रहे होंगे) वितरित किया जा रहा है। कई देर की तलाश के बाद, कुछ पठनीय, कुछ दर्शनीय मिलता है। शॉर्ट वीडियोज़ तो सब कुछ को 'सरपास' कर गए हैं। फिर इन 'एप्स' पर तो हद हो गई। कहीं इधर-उधर से शीर्षक मारकर, कहीं रचनाओं के अंश/उपांश उड़ाकर (कभी-कभी तो तद्वत् ही) पूरी हिमाकत के साथ अपने नाम से कुछ भी प्रकाशित कर दिए जाते हैं। हैरानी का सबब यह भी है कि कई-कई विभूतियां तो, खुद के उद्घाटन में इतनी मसरूफ हैं कि उनकी तत्परता और व्याकुलता देखते ही बनती है। कहीं-कहीं तो कुछ महानुभावों ने कितने श्वास निगले, इसका भी ब्योरा देते हैं। ईश्वर, सामर्थ्य दे!!

साहित्य का प्रसंग उपस्थित है तो लगते हाथ कह दूं कि भारत में (शायद अन्यत्र भी) पहले अच्छा मनुष्य (न हि मानुषात् श्रेष्ठतरं हि किञ्चित), श्रेष्ठ साहित्यकार, (कविर्मनीषी, परिभूः स्वयंभूः) होने की होड़ रहती थी। साधनाव्रती, जीवनभर, श्रम कर-करके बमुश्किल दो-चार रचनाएं देते थे किंतु अब, अतुल बलशाली, लेखक, डेढ़-दो-सौ-सौ पुस्तकों के मालिक हो रहे हैं! रचनाओं को कंधों पर ढो-ढोकर थक रहे हैं।

अल्लाह करे
ज़ोरे क़लम और!

मंचों पर उम्रभर एक ही गीत? गा-गाकर, श्रोताओं को श्रुतिपंगु कर देने वाले प्रवीर आज साहित्य के नायक हैं। चुटकुलेबाज़ी और गलेबाज़ी ने असल कविता को मंचों से बेदख़ल कर दिया है। सब ओर शोर-ही-शोर है; प्रचार का शोर, प्रमोशन का शोर। साहित्य रचना का सबसे बड़ा फल है पुरस्कार। वो जैसे भी मिले। वैसे तो संस्थाएं, अपनों को ही और मुड़-मुड़कर भी अपनों को ही बांटती हैं। (एक रेवड़ियों वाली कहावत भी है) पर अगर कभी कोई नाम, दायरे के बाहर का फंस ही जाए तो कार्यक्रम ही अगले प्रोग्रैम तक स्थगित है। वैसे पुरस्कारों की चयन प्रक्रिया, उसके निर्णायकों की भूमिका पर सदा से ही प्रश्न उठते आए हैं। कुछ जुगाड़ू निर्णायक देशभर की चयन समितियों में उपस्थित रहते हैं।

मेरे एक खूब अनुभवी, सम्मान्य लेखक मित्र हैं, वे जब भी कोई रचना करते हैं, मुझे अवश्य सुनाते हैं। भले ही फोन पर ही। उन्हें मेरे धैर्य और जागरूकता पर पूरा भरोसा है कि न तो मैं बीच में सुनना छोड़ूंगा और न ही सोऊंगा। कभी-कभी वे रचना-वाचन के दौरान, अपने अनुभव लोक के गर्म-सर्द मौसमों में पहुंच जाते हैं और अपनी पसंद की मधुर-मधुर वीथियों में मुड़-मुड़कर विचरने लगते हैं। ऐसे में, काफी देर तक उनके साथ घूमना थकान भी देने लगता है- परंतु वे भला...।

फिर अंत में मुझे कहना ही पड़ता है- छोड़ो भगवन्, अब उस व्यतीत को क्या दुहराना। पुराने फफोले फोड़ने से जख्म हरे ही होते हैं।

मुड़-मुड़ के न देख
मुड़ मुड़ के....

जी-6, नॉल्सवुड कॉलोनी, शिमला-171 002,
मो. 0 94180 54054

आलेख

बदलते परिवेश में बदलते सांस्कृतिक मूल्य

◆ सुदर्शन वशिष्ठ

हिमाचल प्रदेश एक ऐसा राज्य है जो अपनी बहुरंगी संस्कृति के लिए जाना जाता है। यूं तो देश के सभी भागों की संस्कृति का अपना-अपना महत्त्व रहा है किंतु इस पर्वतीय प्रदेश की बहुविध, बहुरंगी छटा इसे विशेष बनाती है। भाषा, वेशभूषा, रहन सहन, रीति रिवाज, लोक संगीत, लोक गीत, लोक नाट्य और लोक वार्ता; सब अनूठे और अनोखे हैं। एक ही प्रदेश में अनके रूपों के दर्शन होते हैं। लाहुल से भंगाल; कांगड़ा से चम्बा; सोलन से सिरमौर, कुल्लू से भरमौर; सब क्षेत्रों की अपनी अपनी विशिष्ट संस्कृति है। अपने लोकगीत हैं, अपना संगीत है, अपना पहरावा है, अपना लोकनाच है।

संस्कृति और विशेषकर पर्वत कंदराओं की संस्कृति की यह विशेषता रही है कि यह बाहरी प्रभाव से इतनी आसानी से मिटती नहीं। आज भी यह संस्कृति अपने मूल रूप में किन्हीं गुफाओं, पर्वत कंदराओं में छिपी है। इसे मिटाया नहीं जा सका हालांकि बाहरी हमले बराबर होते रहे।

सदियों तक भारत में विदेशी हमलावर सीमाओं का अतिक्रमण करते रहे, परतन्त्र होने पर संस्कृति को नष्ट भ्रष्ट करने का भरपूर प्रयास हुआ फिर भी हमारी परंपराएं, हमारे विश्वास, हमारी मान्यताएं जिंदा रहीं।

आज स्थिति दूसरी है। पूरा विश्व एक हो रहा है। दूरियां मिटने, सूचना तथा तकनीक के व्यापक प्रसार ने कुछ ऐसी संरचना की है कि हर व्यक्ति की सोच पर सीधा प्रभाव पड़ रहा है। हमारे संस्कारों को कोई दूसरा ध्वस्त नहीं कर रहा, हम अपनी मान्यताओं को तोड़ने के खुद जिम्मेवार हो रहे हैं। इसके लिए शिक्षा-दीक्षा और पूरा परिवेश दोषी है।

सीमाओं को हड़पने के मैन्यूनल युद्ध से ज्यादा ख़तरनाक है, दिमाग़ों को बदल देना, पूरी सोच को बदल देना। इसी मानसिक परिवर्तन के तहत हर बच्चा सवाल करता है, यह क्यों! ऐसा किस देश में है!

बहुत से लोग कहते हैं, ये अपसंस्कृति का काल है। इस अपसंस्कृति के लिए बहुत हद तक हम खुद जिम्मेवार हैं। जो सूचनाएं हमारे बेड रूम में सीधे आ पहुंची, उन से सीधा सीधा साक्षात्कार करना पड़ता है। यानि सीधे सीधे वे घर के भीतरी गुप्त कमरे तक बिना बुलाए पहुंच जाती हैं। आप इन से बच नहीं सकते। टी.वी. से मोबाइल तक बहुतेरे ऐसे साधन हैं जो आपको एकांगी हो जीने नहीं देंगे।

वैदिक पौराणिक साहित्य की बात की जाए तो उस में वर्णित काल आज से पांच हजार वर्ष पूर्व का माना गया है। जब मनुष्य गुफाओं में वास करता था, ये उससे बहुत बाद का समय रहा होगा। यह हैरान कर देने वाली बात है कि जो मान्यताएं या विश्वास उस युग में थे, वे आज भी जीवित हैं।

हिमालयी जनजाति संस्कृति में ही नहीं, पूरे प्रदेश की संस्कृति में आदि देव शिव का अभूतपूर्व स्थान है जिससे सिद्ध होता है कि यहां की संस्कृति विश्व की मूल संस्कृति रही है।

शिव को आदि देव माना गया है। शिव अपने शरीर पर भस्म रमाते हैं, मृगछाला पहनते हैं, बैल की सवारी करते हैं, गले में सांपों की माला पहनते हैं। यह सब आदिम सभ्यता का प्रतीक है। कई मूर्तियों में शिव को मूंछों वाला बताया गया है।

''सिब कैलासों के बासी, धौलीधारों के राजा

संकर संकट हरणा.....'' चम्बा और भरमौर का एक प्रसिद्ध गाना है। भरमौर में हर गद्दी शिव है और हर गद्दण गौरजां अर्थात पार्वती। उसे धूड़ू भी कहा जाता हैः ''धूड़ू नचेया जटा ओ खलारी ओ...।'' यहां धूड़ू अर्थात शिव को एक आम आदमी की तरह माना गया है और उनका मानवीकरण किया गया है। वह पहाड़ी दर पहाड़ी घूमता है और पार्वती उसे नदी नालों में ढूंढती है :

"रिढ़ियां तां रिढ़ियां धूड़ू बोला नहठदा, नाल़े ता खोह्ल़े गौरां तोपंदी।"

इसी तरह गद्दियों द्वारा की जाने वाली शिव पूजा 'नुआल़ा' में सृष्टि की उत्पत्ति के बाद शिव विवाह का वर्णन है। नुआल़ा एक महत्वपूर्ण उत्सव है जो नवगृह प्रवेश, पुत्र प्राप्ति, नई फसल के आने पर या मनोकामना पूर्ण होने पर किया जाता है। पूरे विधि

विधान के बाद चार बंदे परंपरागत वाद्यों के साथ शिव गाथा का गायन करते हैं। इस गायन को ऐंचली कहते हैं जिसमें रामीण अर्थात रामकथा और शिवीण अर्थात शिव गाथा गाई जाती है।

चम्बा में मणिमहेश, किनौर में किन्नर कैलास पर शिव का वास माना गया है।

वैदिक पौराणिक साहित्य में यक्ष, गन्धर्व, किन्नर-किम्पुरुष, कोल-किरात, नाग तथा खश वर्गों का वर्णन मिलता है। यद्यपि इन्हें सीधे सीधे देवता नहीं माना गया तथापि इनका निवास स्थान पृथ्वी पर न हो कर पर्वतों पर माना गया है। पर्वत देवताओं के अधीन थे और इन्हें स्वर्ग कहा गया। पर्वतवासियों में दैत्य-दानव भी शामिल थे। इनका स्थान मनुष्य से ऊपर और देवों के समीप रहा है। विष्णु पुराण में भूगोल वर्णन में गन्धमादन पर्वत तथा कैलास के साथ मेरू पर्वत के चारों ओर शीतांत आदि केसर पर्वतों के बीच सिद्ध चारणों से सेवित कंदराओं का वर्णन है। यहीं गन्धर्व, यक्ष, राक्षस, दैत्य दानवों को अहर्निश क्रीड़ा करते बताया गया है। यह भी कहा गया है कि यह सभी स्थान पृथ्वी के स्वर्ग कहलाते थे, जहां देवता और धार्मिक पुरुष वास करते थे। इन्द्र का स्वर्ग, कुबेर की अलकापुरी, शिव की कैलासपुरी सभी हिमालय या पर्वतों पर स्थित थीं।

श्रीमद्‌भागवत के चतुर्थ स्कंध में भी कैलास का वर्णन इसी प्रकार किया है :

"उस कैलास पर औषधि, तप, मन्त्र तथा योग आदि उपायों से सिद्ध हुए और जन्म से ही सिद्ध देवता नित्य निवास करते हैं। किन्नर, गन्धर्व और अप्सरा आदि सदा वहां बने रहते हैं।"

कैलास जाते हुए ही कुबेर की अलकापुरी का वर्णन आता है जहां सौगन्धिक वनों में यक्ष पत्नियां निवास करती हैं।

समय के अनन्तर जब पृथ्वी पर आर्य जाति का प्रभुत्व बना, उस युग में स्वर्ग पर विजय प्राप्त करने की एक महत्त्वाकांक्षा सभी राजाओं में बनी रहती थी। जो स्वर्ग पर विजय प्राप्त करता, वह इन्द्र कहलाता था। अनेक प्रतापी राजाओं का स्वर्ग पर विजय और इन्द्र पद पाने का उल्लेख मिलता है। इससे आर्यों और देवों तथा देवस्थानों में रहने वाले वर्गों में संघर्ष बना रहा। आर्यों ने बार-बार पर्वतों पर आक्रमण किए और विजय के बाद इन जातियों को दास दस्यु की श्रेणी में भी रखा।

इन वर्गों से अवशेष अभी भी इस प्रदेश में पाए जाते हैं।

किन्नरों का उल्लेख यक्ष, गन्धर्व, सिद्ध तथा विद्याधरों के साथ हुआ है। वायु पुराण में किन्नरों को महानील पर्वत का वासी बताया गया है। मत्स्यपुराण में यक्ष, पिशाच, राक्षस, विद्याधर, किन्नर, गन्धर्वो को हिमवान पर्वत का वासी माना गया। महाभारत में किन्नरों का वास किंपुरुषवर्ष कहा गया है। किन्नौर में आज भी खानदान को 'किम' कहा जाता है, अतः किंपुरुष वर्ष सार्थक होता है। यह प्रदेश धवलगिरि को लांघ कर आता था। गन्धर्व किन्नर, अप्सराओं का वास मानसरोवर भी माना गया। कुछ पुराणों में किन्नरों को निशाचरों की श्रेणी में भी रखा गया है।

उक्त संदर्भों से यह निश्चित हो जाता है कि किन्नर हिमालय वासी थे। किन्नरों को अश्वमुख तथा किन्नरियों को मधसुर कण्ठी कहा गया है। ये लोग नृत्य व गायन में प्रवीण थे।

नाग जाति भी एक पुरातन जाति है जो जनजातीय क्षेत्रों में आज तो विद्यमान नहीं है किन्तु इसके अवशेष वर्तमान हैं। नाग जल स्रोतों के स्वामी थे। ये पशुधन के स्वामी भी माने गए हैं। जल स्रोतों पर आधिपत्य होने के कारण इनका पुरातन संघों व आर्यों से संघर्ष होता रहा।

ऋग्वेद के दशम मण्डल के 199वें सूक्त के ऋषि नाग वंश के थे। राजा नहुष, जिन्होंने इन्द्रपद छीना, नागवंशीय थे।

नाग उत्पत्ति की पौराणिक कथा की भान्ति यहां भी कई कथाएं प्रचलित रही हैं। जैसे कुल्लू में भोटंती देवी और वासुकी नाग से अन्य नाग उत्पन्न हुए या एक कन्या द्वारा अठारह नाग पैदा होने पर एक घड़े में रखने की कथा है उसी प्रकार किन्नौर में भी नाग उत्पत्ति कथा है।

उरनी में नाग देवता का एक गीत गाया जाता है। बसेहरू नाग के बारे में भी एक कथा प्रचलित है। किन्नौर में नाग को नागस कहा जाता है। यहां के एक लोक गीत में नाग प्रदेश का भी उल्लेख आता है।

नाग और आर्यों में निरन्तर संघर्ष होता रहा। ऋग्वेद के इन्द्र-वृत्र युद्ध में वृत्र को 'अहि' कहा गया है। अहि से प्रतीत होता है वृत्र नागों का अधिपति था जिसका आधिपत्य सप्तसिन्धु में था। आर्यों ने उसे असुर कह कर पुकारा। उसका जलस्रोतों पर अधिकार था अतः इन्द्र को उससे युद्ध करना पड़ा। वृत्र को 'अहि' कहा गया तो शम्बर को भी 'अहि' कहा गया। अहि के अर्थ में शम्बर भी एक नाग शासक था जिसे आर्यों ने सुप्तावस्था में धोखे से मार डाला। चालीस वर्ष तक युद्ध के बाद भी उसे परास्त नहीं कर पाए :

यः शम्बर पर्वतेषु क्षियतं चत्वारिश्यां शरधन्व विंदते।
ओजायमानं यो अहिं जघान दानुं शयानं सजसान इन्द्र।।
(ऋ. 2.12.11.)

सप्तसिष्धु के जलस्रोत विपाशा, परुषणी के मध्य स्थित थे जहां आज के चंबा, मंडी, कुल्लू और कांगड़ा हैं।

यह माना जाता है, हिमाचल के ऊपरी क्षेत्रों में कोल, किरातों व नागों के प्रभुत्व को खशों ने समाप्त किया। पहले ये एक लम्बे चौड़े भू भाग के स्वामी रहे, बाद में धीरे धीरे इनका प्रभाव एक ही क्षेत्र तक सीमित हो गया।

विष्णु पुराण के अनुसार कश्यप की पत्नी खश से यक्ष तथा राक्षस उत्पन्न हुए। उनकी संतान खश कहलाई। खश का दूसरा नाम दरद भी माना जाता है जिनकी भाषा दरद पैशाची थी और

जो कश्मीर तक फैली थी।

पलीनी (79 ई.) ने कहा है कि सिंधु और यमुना के बीच जंगल में वास करने वाली जातियां खश और क्षत्रिय हैं। खश कुमाऊं से पश्चिम की ओर रहते थे। तौंस और शारदा नदियों के बीच गढ़वाल, कुमाऊं में तंगण और किरात बसते थे। फ्रांसिस हैमिल्टन ने माना है कि खश नेपाल और कश्मीर के बीच रहते थे। इनका दर्जा राजपूतों से कुछ कम था। नेपाल की भाषा पर्वती और पश्चिम की खश कहलाती थी।

खशों का संघर्ष यहां किन्नर किरातों और नागों से हुआ। नागों को तो भगा दिया गया, किन्नर किरातों से संघर्ष के बाद ये एक अलग भूभाग में बस गए। खशों का क्षेत्र आज का महासू है जो सिरमौर तक जाता है। खशों से ही कनैत, राहू और चौहान बने। कुछ इतिहासकारों ने माना है कि खश आर्यों का ही एक वर्ग था।

शिमला हिल्ज स्टेट गजेटियर में उल्लेख है :

''आजकल लोगों में प्रचलित परंपरा के अनुसार इन पहाड़ों के मूल निवासी खश थे, जिनमें जाति या वर्गभेद नहीं था। वह आर्य शाखा के थे, इसके बारे में कुछ नहीं कहा जा सकता। लेकिन यह माना गया है कि वे उसी जाति के थे जिसके कुमाऊं और गढ़वाल के खशिया लोग है और जो आमतौर पर आर्य समझे जाते हैं।''



वैदिक पौराणिक इतिहास की बात छोड़ दें तो बाद का लोक साहित्य भी वैदिक ऋचाओं की भान्ति निरन्तर बहता रहा।

यूं तो बदलते परिवेश का प्रभाव संस्कृति के सभी संस्कारों पर देखने को मिल रहा है किन्तु सर्वाधिक प्रभावित हुआ है हमारा लोक साहित्य जो बुजुर्गों ने अपनी स्मरण शक्ति के बल पर जिंदा रखा हुआ था। इस अंचल की दुर्लभ लोक कथाएं, लोक गाथाएं, लोक गीत, भाषा के अन्तर्गत मुहावरे लोकोक्तियां आदि आदि संकट में हैं। कुछ तो लुप्तप्राय हैं।

लोक वार्ता श्रुत साहित्य है जो वैदिक ऋचाओं की भान्ति पीढ़ी दर पीढ़ी यात्रा करता है। यह मौखिक परंपरा सदियों से चलती रही। इस दुर्लभ साहित्य का कोई लिखित टेक्स्ट नहीं होता और आज भी नहीं है। यह एक से दूसरे तक निरंतर बहता रहता है और बढ़ता रहता है। एक कथा या गाथा जब आगे बखानी जाती है तो उस में देशकाल के अनुसार कुछ न कुछ और जोड़ा जाता है। इसे 'फुल्ल कलि़यां' लगाना कहा जाता है। कथा में स्थान और समय के अनुरूप जोड़ जमा किया जाता है। जैसे एक लोक कथा जब यात्रा करती है तो उसके पात्र, परिस्थितियां उस स्थान के अनुरूप परिवर्तित होते जाते हैं जहां वह सुनाई जा रही है। उदाहरणतः 'लाटी शरजड. और हिनाडंडुव' जनजातीय क्षेत्र किन्नौर तथा लाहौल स्पीति में एक सी प्रचलित हैं जबकि कुल्लू आ कर इन में भौगोलिक कारणों से परिवर्तन हुआ। इसी तरह राजा विक्रमादित्य की कई कथाएं प्रचलित हैं जिनमें परिवेशजन्य परिस्थितियों के अनुसार परिवर्तन पाएं जाते हैं। इन्हीं कथाओं में समाज के विश्वास, मान्यताएं, आस्थाएं छिपी रहती हैं।

लोक गीत, लोक नाट्य, लोक गाथा, कथा सब में अपनी माटी की गन्ध समाई रहती है। यहां तक कि देवताओं को भी जनमानस ने अपने अनुरूप ही देखा, जाना और समझा। भरमौर में शिवजी मूंछों वाले हैं। वे गद्दी के वेश में पहाड़ी दर पहाड़ी घूमते हैं। गौरजां उन्हें पीछे पीछे ढूंढती फिरती है। देवताओं की आकृतियां, वेशभूषा स्थानीय रूप लिए हुए होती है। उन्हें वही पकवान खिलाए जाते हैं जो लोग स्वयं खाते हैं।

यह धारणा निराधार है कि लोक कथा बच्चों के लिए है या उसमें किसी तरह का बचपना होता है। प्रायः लोक कथा को नानी, दादी की कहानियां कह कर टाल दिया जाता है। वास्तविकता यह नहीं है। लोक कथाएं गहन अध्ययन, गहरी समीक्षा और बारीक मनोविश्लेषण की मांग करती हैं। यह लम्बे अनुभव के साथ व्यावहारिक दृष्टिकोण की उपज है।

लोक कथा का कभी लिखित टेक्सट नहीं रहा। यह मौखिक परंपरा से ही आगे बढ़ी है। कथाकारों ने अपनी बुद्धि, विवेक और काल की मांग के अनुसार इन कथाओं का बखान किया। लोक कथा एक पूरी संस्कृति को वहन करती है। इसमें जनमानस की आस्थाएं, विश्वास और आदर्श परिलक्षित होते हैं। समूचे समाज की भावना, आकांक्षा और मंगलकामना इन कथाओं में छिपी रहती है।

जब सर्दियों में अलाव के पास एक कथा सुनाई जाती है तो वहां बच्चे, बूढ़े, युवा, पुरुष और महिला सहित सभी आयुवर्ग और बुद्धि विवेक के लोग एक साथ उपस्थित रहते हैं। वे सब कथाओं

पर टिप्पणी करते हैं.... ये कैसे हो सकता है.... अच्छा! उस युग में भी इतना सत था या तोते में भी इतनी अक्ल होती है... आदि आदि। कथा, यदि पुराने युग की हो तो उसे आज के संदर्भ में देखते परखते हैं। कथा वाचक कथा का एक प्रसंग सुनाने के बाद हुंकारे की प्रतीक्षा करता है। श्रोताओं की प्रतिक्रिया जाने के बाद ही वह आगे बढ़ता है। कथा सुनाने वाले चाहे अशिक्षित हों, निरक्षर हों, उन की समझ विकसित होती है और वे अपने अनुभवों के अनुसार कथा के बारीक तंतुओं का विश्लेषण करते हैं। कथा सुनना और सुनाना कभी एकतरफा आयोजन नहीं रहा, उसमें सभी की सक्रिय इनवॉल्वमेंट बनी रहती है।

लोक कथा का जन्म मानव सभ्यता के साथ हुआ। मां के दूध के साथ जो बालक को मिला है, वह लोक कथा है। जन्म घुट्टी के साथ जो पिलाया गया, वह लोक कथा है। लोक कथा वह है जो बूढ़े ने बालक को सुनाई, युवक को सुनाई। जो बूढ़े ने बूढ़े को सुनाई। लोक कथा बालक की है, युवक की है, वृद्ध की है।

लोक कथा का उद्‌भव उतना ही पुराना है जितना मानव सभ्यता का। सृष्टि का पहला कथाकार लोक कथाकार ही रहा होगा। सर्दियों की लम्बी रात और जलते अलाव ने इसे बहुत लम्बे समय तक जिंदा रखा।

लोक कथा एक क्षेत्र से दूसरे तक यात्रा करती है। अपने अपने परिवेश के अनुरूप कथाकारों ने उसके स्वरूप को बदला। उसे अपने परिवेश के अनूकल बना कर बखाना। इसी कारण एक कथा के कई रूपांतर मिलते हैं। जो टेक्सट एक जगह है, वह दूसरी जगह भिन्नता लिए हुए होगा।

इसी तरह कथाओं के घटना वर्णन में प्रभाव डालने के लिए व्याख्या का अपना अपना ढंग है। किन्नौर में जब राक्षस किसी को खाने के लिए पकड़ लेता है तो खाने से पहले 'दांत पैने करने' चला जाता है जितने में शिकार छूटने की तरकीब ढूंढ लेता है। इसी प्रकार निचले क्षेत्र में किसी को मारने के लिए बाहर जा कर सील पर छुरी तेज की जाती है जिसकी आवाज सुन भीतर पकड़ा हुआ व्यक्ति समझ जाता है कि यह उसे मारने की तैयारी है और छुरी के तेज होते होते वह बचने या भागने की तरकीब सोच लेता है।

हमारी अधिकांश कथाएं 'और अंत मे सब सुखपूर्वक रहने लगे' के आदर्श पर आधारित हैं। कथा नायक द्वारा संघर्ष, विपत्तियों से जूझते जाना, किंतु अंत में विजय; इन कथाओं में देखने को मिलती है। ऐसा भारत में ही नहीं, अन्य देशों की कथाओं में भी है। 'अल्योनुष्का और इवानुष्का' तथा 'चुड़ैल का अंत' जैसी रूसी कथाएं, 'कामधेनु की चक्की' जैसी जापानी कथाएं इसका उदाहरण हैं।

एक कथा अनजाने में कई कुछ कह जाती है। सीधे सीधे न कह कर परोक्ष रूप से बड़ी से बड़ी बात कह दी जाती है। जाने अनजाने एक संदेश भी दे जाती है। उदाहरणतः एक कथा में एक ब्राह्मण, बढ़ई, सुनार ऐसे मित्र हैं कि एक साथ रहते हैं, एक साथ खाते हैं और एक साथ सोते हैं। एक ही गांव में रहते हुए उन में कोई ऊंच नीच, छुआछूत नहीं है। एक कथा में शेरनी और गाय में मित्रता है। शेरनी का बच्चा और गाय का बछड़ा घनिष्ट मित्र हैं। एक अन्य कथा में सांप, चूहा, शेर और आदमी साथ रहते हैं। राक्सस, मानव कन्या को अपनी बेटी मानता है। ऐसे संदेश या ऐसी बातें जो स्पष्ट नहीं कही जा सकतीं, कथा के माध्यम से समझायी जाती रही हैं।

बहुत सी कथाओं में कुछ कॉमन तत्व भी मिलते हैं जो सब जगह एक से हैं। देवता और विशेषकर शिव के प्रकट होने में सब जगह एक सामान्य कथा प्रचलित है। जंगल में एक गाय किसी पत्थर पर या मूर्ति पर दूध की धाराएं गिराती है जहां पता चलने पर देवता स्थापित हो जाता है। किसी व्यक्ति को हल चलाते हुए फाल से किसी मूर्ति का टकरा कर निकलना, किसी को सपना होना कि अमुक स्थान पर मूर्ति दबी है, उसे निकालो आदि सामान्य कथाएं हैं जो किसी देवी या देवता के प्रकट होने के बारे आम सुनाई जाती हैं।

इसी प्रकार अन्य कथाओं में किसी राक्षस की जान दूर गुफा में रखे पिंजरे में बंद तोते में होना, राक्षसी का मानवी रूप धर रानी बन कर उत्पात करना, राजकुमार द्वारा अंततः राक्षसी का वध, किसी पुरुष या महिला को कागभाषा का ज्ञान होना आदि ऐसे तन्तु हैं जो कई कथाओं में समान रूप से मिलते हैं।

आज के युग में पुरातन संस्कृति का ह्रास हुआ है। पहले अलाव की जगह हीटर लगे फिर एयर कण्डीशंड होने का युग आ गया। नानी दादी की कथाओं की जगह पहले ट्रांसिस्टर, फिर टेलिविजन ने ली। अब ई-मेल, फेस बुक, ब्लॉग आदि की तकनीक आई।

आज, जिन्हें मैं पूछता हूं, वे भी अपनी याद्‌दाश्त पर जोर डालते हुए पूरी बात नहीं बता पाते। मेरे नानाजी को अनेक कथाएं कण्ठस्थ थीं। सर्दियों की रात में बरामदे में जब बड़ा अंगीठा जलता था तो शाम सात बजे से ही कथाओं का शुभारम्भ हो जाता। उन दिनों गांव में शाम सात बजे तक रात का भोजन कर लिया जाता था। कई कथाएं वे गा कर सुनाते थे। कुछ कथाएं आधी गा कर और बीच बीच में वर्णन के साथ सुनाई जातीं। गोपीचंद भरथरी, राजा होठी, राजा रसालू, राजा विक्रमादित्य, राजा भोज, गुलवकावली आदि कितनी ही कथाएं थीं जो महीनों चली रहतीं। एक कथा जब आरम्भ होती तो उसी के बीच कई कथाएं आ जातीं और अंत आते आते पता ही नहीं रहता कि कथा किस प्रसंग से आरम्भ हुई थी। इस तरह कथा को बढ़ाते जाना उसमें 'फुल्ल कलियां' लगाना कहा जाता।

अपनी ही बात करूं तो ऐसी कथाओं के अंशमात्र आज भी स्मरण है हालांकि पूरी कथा याद नहीं रही और बहुत ढूंढने, बहुत

पूछताछ करने पर भी कोई कथा पूरी नहीं कर पाया। कथा शुरू होती...... एक साहूकार का लड़का हूण्डी भरने चला....वह व्यापार के लिए जहाज में सवार होता तो पता नहीं कहां कहां पहुंच जाता। बीच में ही साहूकार का प्रसंग गायब हो जाता है और कथा किसी राजा पर आ कर समाप्त होती है। इसी तरह दो कथाओं के अंश स्मरण है जो आज तक नहीं भूले।

एक और कथा जिस का प्रसंग आज भी याद है.........एक राजकुमार से एक नजूमी ने कहा कि तुम्हारे राज्य में एक घोड़ा बिकने के लिए आएगा। उसे तुम कभी मत खरीदना। किंतु तुम उसे खरीद लोगे। यदि खरीद ही लिया तो उस पर सवार मत होना। यदि सवार हो भी गये तो पूर्व दिशा में मत जाना। राजकुमार इस बात को मन में गांठ मार बान्ध लेता है। एक सुबह जब राजकुमार उठा तो महल के नीचे मैदान में एक सजीला नीले रंग का घोड़ा देखा। घोड़ा बहुत अद्‌भुत था। वह नीचे आया तो पता चला कोई घोड़े बेचने वाला आया है। राजकुमार ने घोड़ा देखा तो देखता ही रह गया। उसने सोचा, खरीदना तो हैं नहीं, जरा सवारी कर के देखता हूं। वह घोड़े पर सवार हो गया। मैदान के चक्कर लगाने शुरू कर दिए। एक चक्कर लगाया, दूसरा लगाया। धीरे-धीरे घोड़ ने अपनी मस्तानी चाल से गति बढ़ायी। एकाएक राजकुमार जोश में आ गया और उसने घोड़े को ऐड़ी लगा दी। बस घोड़ हवा से बातें करने लगा और राजकुमार को पूर्व दिशा की ओर ले उड़ा। आगे की कथा रहस्य और रोमांच से भरपूर है। वह कई जंगलों, नदियों, घाटियों और शिखरों को लांघता किसी अनजान नगर में जा पहुंचा। राजकुमार जानते हुए भी वही करता है जो उसे निषेध था। इस कारण उसे कई मुसीबतों का सामना करना पड़ता है किंतु अंततः वह कई उपलब्धियों के साथ विजयी हो कर लौटता है।

हमारे यहां देव कथाओं की एक अलग परंपरा है। यहां के हर गांव में मंदिर है बल्कि एक गांव में तीन तीन मंदिर हैं। हर देवता की एक कथा है। कुल्लू, सिरमौर और शिमला में विशिष्ट देव परंपरा है। हर देवता के उद्‌भव की अपनी कथा है। यह पौराणिक प्रसंग के साथ स्थानीय घटनाओं से जुड़ी हुई हैं। फागुन में फागली के समय देवता की 'भारथा' सुनाई जाती है जिसमें उस देवता की उत्पत्ति और कृत्यों बारे बखान रहता है। इसके अतिरिक्त शिव-पार्वती, देवी के स्थानों, नाग-सिद्धों के बारे में अपनी कथाएं हैं। बाबा बालकनाथ, गुग्गा गाथा, सरबण गाथा आदि कथाएं भी हैं। कुछ कथाएं ऐसी हैं जो पौराणिक प्रसंगों पर आधारित हैं जैसे सत्यवान सावित्री कथा। कुछ गाथाएं भी आधी गा कर और सुना कर बखानी जाती हैं। इनमें वीरगाथाएं भी शामिल हैं जिन्हें 'झेड़े' या 'वार' कहा जाता है।

जब तक हिमाचल में देव परंपरा जीवित रहेगी, देव कथाएं भी जिंदा रहेंगी, यह निश्चित है।

लोक वार्ता का दूसरा महत्त्वपूर्ण तत्व लोक गीत है जिसमें लोक संगीत भी समाहित रहता है।

लोक कथा की तरह लोक गाथा विधा समाप्ति के कगार पर है। लोक गीत तो किसी न किसी रूप में अभी जिंदा है, लोक गाथाएं समाप्त हो रही हैं। लोक गाथाओं के जानकार लगातार कम होते जा रहे हैं।



लोक गीतों के रचयिता वे अनाम कवि हैं जिन्होंने कभी अपने नाम नहीं दिए। लोक कवियों के काव्य को देखते हुए अचम्भा होता है। जिन्हें कभी कहीं से अकादमी, ज्ञानपीठ या व्यास सम्मान नहीं मिला। जिनका नाम, लम्बा चौड़ा परिचय तो दूर, अता पता तक ज्ञात नहीं है, ऐसे कवियों ने उस समय में वह बात कह दी है जो आज सजग से सजग और जागरूक कवि नहीं कह पाता। भाषा का वह शिल्प, बिम्ब प्रतीकों का प्रयोग, कथ्य की गहराई सब अद्‌भुत है। लोक की रचना जितनी गहन होती है, उतनी ही काव्यमयी हालांकि उन कवियों ने कभी छंद विधान नहीं सीखा, किसी काव्य शास्त्र की दीक्षा नहीं ली, कोई अतुकांत पदावली का अध्ययन नहीं किया। वे उतने चतुर सुजान भी नहीं थे। समय के अनुसार वे स्वतः ही तरह तरह के छंद रचते गए।

लोकगीत रचना में गीतकार भी वही है, संगीतकार भी वही है तो गायक भी वही है। बहुत बार गीत का आनंद लेने वाले भी वही होते हैं। उसके लिए श्रोताओं की भीड़ या वाहवाही की जरूरत भी नहीं। वह श्रोताओं को रिझाने के लिए नहीं गाता।

लोकगीत समाज का प्रतिबिम्ब बड़ी निर्ममतापूर्वक प्रस्तुत करते हैं। वे समाज की कुरीति, आडम्बर को पर्त दर पर्त उघाड़ते चले जाते हैं बिना किसी लागलपेट के। गीतकार और गायक, दोनों ही निर्भयता से अपना पक्ष पेश करते हैं। राजसत्ता, समाज, परंपरा, रूढ़ियों के ख़िलाफ ये निडर हो कर खड़े होते हैं।

कांगड़ा के एक गीत में राजा हरिसिंह भेड़ें चराती गद्दण को बलपूर्वक अपने महलों में डाल लेता है। उसे महलों में रहना नहीं भाता। एक दिन राजा उसे छल कर पूछता है कि उसे गद्दी भाता है या राजा। गद्दण का उत्तर है कि, मुझे कुछ कुछ ममता तो राजा से हो गई है किंतु गद्दी (पति) के नाम से जैसे छुरी चल जाती है :

''थोड़ी थोड़ी ममता राजा तुसां दी बी लगदी
गद्दिए दे नाएं लगदी छुरी ओ।''

इससे भी अधिक मर्मस्पर्शी दृश्य तब उपस्थित होता है जब गद्दण महलों में है और उसका पति गद्दी महलों के नीचे भेड़ें चराता हुआ मुरली बजाता है :

''महलां दे हेठ गद्दी भेडां जे चारे
मुरलिया रूणक सुणाई बो
मेरेया बांकेया गद्दिया।''

कांगड़ा के एक अन्य गीत 'धोबण' में महलों के आने पर धोबन को राजा की पहली रानी (सौतन) द्वारा जहर दे कर मारने के बाद जब उसके मृत शरीर की पिटारी नदी में बहती हुई आती है तो धोबी (उसका पति) उसी नदी के किनारे कपड़े धो रहा होता है। जब धोबी पिटारी खोलता है तो 'सोने की पिटारी में उसके बच्चों की मां' नजर आती है। सोने की पिटारी में उसकी पत्नी नहीं, राजा की प्रेयसी नहीं, अपने बच्चों की मां का दिखना एक अद्भुत प्रयोग है :

'धोबिएं पिंजरा सैहू खोल्लया, हाय खोल्लया
एहू बच्चेयां दी माई ए।'

एक अन्य गीत में नायक निम्न वर्ग की नायिका से प्रेम करता है। वे दोनों एक थाली में दूध भात खाते हैं। एक थाली में इकट्ठा खाने के बाद वह उसकी जाति पूछता है :

'दूध ता भत्त मुआ खादा इक्की थालि़या,
हुण कजो पूछदा तू जाति।'

लोकगीत परम्परा थमती नहीं। समय के साथ साथ नित नये नये गीत बनते जाते हैं। गीत रचना के लिए कवि या गीतकार बनाने या उन्हें प्रोत्साहन, पारिश्रमिक देने की आवश्यकता भी नहीं। गांव की साधारण घटना जैसे फॉरेस्ट गार्ड की प्रेम कथा से ले कर प्रधान मन्त्री इन्दिरा गान्धी के आगमन तक के गीत हैं। राजाओं के समय की घटनाओं से ले कर स्वाधीनता प्राप्ति के बाद दरिया में बान्ध बनने, सड़क निकलने, बिजली तैयार होने, हैलिकॉप्टर उतरने तक के गीत हैं जो अपढ़ किंतु सुघड़ लोगों ने रचे हैं।

कुछ ऐसे भी गीत हैं जो अबाध गति से समय के साथ साथ चले आ रहे हैं। इस गीत परंपरा में पुराने और ठेठ गीतों का विलुप्त हो जाना खेदजनक है। इससे भी ज्यादा खेदजनक हैं इनकी धुनों और साजों से छेड़छाड़। एक ठेठ गीत के पीछे आधुनिक फिल्मी धुन दे देना समझदारी का काम नहीं। इसके लिए पंजाबी गीतों का उदाहरण या उनका अनुकरण किया जाना आवश्यक है। पंजाबी गीत आज फिल्मों में भी छाए हुए हैं। मगर फिल्मों में भी गीत के ऑरिजनल बोल और धुन को नहीं छोड़ा गया। यही बात अन्य आज के लोकप्रिय पंजाबी गानों पर भी लागू होती है। साज तो नये से नये लिए, गाने की असली धुन नहीं बदली। हिमाचल में भी ऐसे प्रयोग करने की आवश्यकता है। जीन पहन कर नाटी के वीडियो बनाना या पहाड़ी गानों में जबरदस्ती हिन्दी गानों के टप्पे डालना इसे समृद्ध नहीं करते अपितु इसके वास्तविक सौंदर्य को बिगाड़ते हैं।

आधुनिक तन्त्र का यह प्रसार बेरोकटोक फैल रहा है। पहाड़ी दर पहाड़ी फैल रही है यह सोनरंगी आग जो यहां की रक्षित संस्कृति को मिटाने की कोशिश कर रही है। समय ऐसा आ चुका है कि कुछ समय बाद किन्हीं दुर्गम पर्वत कंदराओं में यह बनी भी रही तो कोई संस्कृति प्रेमी वहां पहुंच नहीं पाएगा। अधिकांश तो समाप्त हो चुका है, शेष नहीं के बराबर शेष है।

मातृभाषा तो आज दादी की भाषा बन चुकी है। उसे दादी ही मिले जुले रूप में बोलती है। मां तो मजबूरन हिन्दी या अंग्रेजी बोलती है। ठेठ पहाड़ी के प्रयोग की तरह हमारी लोकोक्तियां, मुहावरे समाप्तप्राय हो गए हैं।

विकास के साथ विघटन भी होता है। जहां सड़क जाएगी वहां भौतिक विकास तो होगा, मानसिक विघटन भी होगा। इन दोनों चीज़ों को साथ साथ चलना होगा। इन में वह तो बचा रहेगा, जिस में बचे रहने का जीवट होगा।

अब इस विकास को तो कोई रोक नहीं सकता। संस्कृति और सभ्यता परिवर्तनशील है। अब तक न जाने कितनी ही संस्कृतियां और सभ्यताएं विकसित हुई, परिवर्तित हुईं और अंत में विघटित भी हुईं। विकास के साथ विघटन जुड़ा है। पहले 'स्विच संस्कृति' आई। स्विच के साथ पहिया घूमा, चक्की चली, बिजली चमकी, हीटर जले। एक तिलिस्मी एयूयार की तरह टीवी बेडरूम में आ घुसा। बाजार घर में घुस कर ताक झांक करने लगा। मोबाइल हर बच्चे के हाथ आ गया। बदलाव की संस्कृति अब दैत्याकार होती जा रही है। इस दैत्य की जान किसी तोते में नहीं है अतः कथा का राजकुमार इसे नहीं मार सकता।

ऐसे में इस थाती का संग्रहण आवश्यक है। संग्रहण ही इसका संक्षरण है। जिस तरह भारतीय संस्कृति को हम आज वेद पुराणों के माध्यम से देखते हैं, उसी तरह आज की संस्कृति भी वर्षों बाद किताबों में मिले, गूगल जैसे किसी आधुनिक माध्यम में मिले, यही उसका संरक्षण है।

'अभिनंदन' कृष्ण निवास लोअर पंथा घाटी,
शिमला-171009 मो. 0 94180 85595

विकास

दूर तो हैं पर दूर नहीं ...

◆ अजय पाराशर

विश्व के धार्मिक, आध्यात्मिक एवं सांस्कृतिक इतिहास में हिमालय क्षेत्र अपने उद्‌भव से ही अनूठे भौगोलिक परिवेश के कारण तमाम लोगों के लिए जिज्ञासा, कौतुहल, अध्ययन तथा अनुसंधान का विषय रहा है। यह क्षेत्र अपनी कोमल नैसर्गिक किन्तु नयनाभिराम सुन्दरता के लिए आदिकाल से ही विख्यात है। अनियोजित आधुनिक विकास के बावजूद आज भी इस इलाके में खामोशी, सुकून और खूबसूरती का साम्राज्य बदस्तूर कायम है। यहां व्याप्त आध्यात्मिक तरंगों को आत्मानुसंधानी ही नहीं, आम आदमी भी अत्यन्त आसानी से अनुभव कर लेते हैं।

विभिन्न पर्वतश्रृंखलाओं की नीली पहाड़ियों के पीछे ढकी हिमाच्छादित चोटियां किसी जादूगर की मानिन्द सम्मोहित करने में सक्षम एवं दक्ष हैं। नीली पहाड़ियों के पीछे कतारबद्ध, बर्फ सने पहाड़ों का मुकुट ओढ़े हिमालय, हर व्यक्ति को एक चुम्बक की भांति अपनी ओर आकर्षित करता प्रतीत होता है। सूर्य के तेज प्रकाश या शीतल चांदनी में नहाए पहाड़ जब चांदी की तरह चमकते हैं तो दिलो-दिमाग में प्रसन्नता एवं आनन्द का अपार सागर हिलोरें मारने लगता है, मन शान्ति से भर उठता है, लगता है मानो सदियों की गहरी प्रतीक्षा समाप्त होने वाली है। महाकवि कालीदास ने हिमालय के अपार सौन्दर्य और आकर्षण से प्रभावित होकर ही इसकी स्तुति में शताब्दियों पूर्व गाया था :

''अस्तयुत्तरसयां दिशि देवातात्मा हिमालयो नाम नगाधिराज :
पूर्वोत्तरो तोयनिधी वगाह्य स्थितः प्रिथिव्या इव मानदण्डः''

अर्थात् पूर्वांत और पश्चिमांत समुद्रों तक फैला, वसुधा के मानदण्ड की भांति प्रतीत होने वाला, उत्तर दिशा में देवताओं से अधिष्ठित हिमालय नाम का पर्वतराज है।

इसी विशाल हिमालय के आंचल में बसा छोटा किन्तु सुन्दर राज्य, हिमाचल प्रदेश 'देव भूमि' के नाम से जाना जाता है। वर्तमान में हिमाचल उत्तर में जम्मू-कश्मीर से सटा है और इसके दक्षिण-पूर्व में उत्तराखंड के पर्वतीय क्षेत्र हैं। हिमाचल दक्षिण और पश्चिम में क्रमशः हरियाणा और पंजाब तथा पूर्व में तिब्बत की सीमा से जुड़ा है। यह राज्य अपने प्राकृतिक सौंदर्य, फूलों-फलों से महकते बागीचों एवं वादियों, शांत चित्त झीलों, गुनगुनाते झरनों तथा कलकल बहती नदियों के लिए ही मशहूर नहीं है बल्कि अपनी अनूठी धार्मिक, आध्यात्मिक तथा सांस्कृतिक विरासत के लिए भी जाना जाता है। हर पल, हर कदम बिखरा नया सौंदर्य, नया अनुभव मानो कोई नई नवेली दुल्हन नए-नए श्रृंगार कर अपने पिया को रिझाने के लिए प्रयासरत हो। किसी समाधिस्थ तपस्वी की भांति तटस्थ पर्वतों के नजदीक पहुंचने पर, असीम शांति और प्रेम से भरपूर हिमालय के सीने में नाचती-गाती सदानीरा नदियों का संगीत सुनने को मिलता है। कदम-दर-कदम बदलते दृश्य सर्वत्र व्याप्त एक ही परमात्मा को विभिन्न रूपों में देखने का अद्‌भुत अवसर प्रदान करते हैं। एकता में अनेकता का इससे सुन्दर उदाहरण विश्व में अन्यत्र देखने को नहीं मिलता। संभवतः इसी कारण हिमाचल प्रदेश में असंख्य देवी-देवताओं की पूजा-अर्चना पारम्परिक लोक धर्म एवं संस्कृति की विशेषता रही है और कालान्तर में इसे देव भूमि के नाम से जाना जाने लगा।

हिमाचल प्रदेश शिव-पार्वती की अलौलिक लीलाओं का साक्षी रहा है। हिमाचल प्रदेश, विशेषकर जलन्धर या जालन्धर को शक्ति पीठों की पावन स्थली होने का गौरव प्राप्त है। माना जाता है कि वेदों और पुराणों की रचना भी यहीं हुई। यहां की गिरिकन्दराओं में व्यास, वशिष्ठ, मांडव्य आदि दिव्यात्माओं ने अपनी तपस्या के दौरान प्राप्त अनुभवों को शब्दों में समेटकर देव भाषा संस्कृत में कालजयी रचनाओं को जन्म दिया। महाभारत की रचना से पूर्व महर्षि वशिष्ठ के आग्रह पर महर्षि व्यास ने जलंधर क्षेत्र की यात्रा और यहां स्थित वज्रेश्वरी, ज्वालामुखी, नन्दिकेश्वर, चक्रतीर्थ आदि पीठों के माहात्म्य को जाना। कहते हैं शक्ति की उपासना और पूजा का महत्व तभी है जब अपने सम्पूर्ण जीवन की तपस्या के फल को प्रसाद रूप में सभी में बांटा जाए। भौतिकता पर हासिल विजय से आध्यात्मिक शक्ति का संचय एवं साधना से प्राप्त ज्ञान और शक्ति को समस्त प्राणियों की प्रगति के लिए उपयोग में लाना ही भारतीय दर्शन एवं धर्म का प्रमुख उद्देश्य रहा है।

दैवीलीला एवं लोकगाथाओं से सराबोर पौराणिक आख्यानों में हिमाचल को यक्षों, गंधर्वों और किन्नरों का प्रदेश कहा गया है।

आज भले ही हिमाचल प्रदेश को देश के बड़े राज्यों की श्रेणी में कई क्षेत्रों में अव्वल पुरस्कार प्राप्त हो रहे हैं और पहाड़ी प्रदेशों की श्रेणी में यह आदर्श बनकर उभरा है लेकिन विकास का यह सफर इतना आसान नहीं था, जितना अब प्रतीत होता है। गठन के वक्त हिमाचल प्रदेश बेहद पिछड़ा राज्य था और कठिन भौगोलिक परिस्थितियाँ कुशल एवं गतिशील नेतृत्व की बाट जोह रही थीं। अब तक प्रदेश में रहे पाँच मुख्यमंत्रियों ने लोगों को निराश नहीं किया। इसका श्रेय मेहनतकश एवं ईमानदार हिमाचलवासियों को भी जाता है। प्रथम मुख्य मंत्री डॉ. यशवन्त सिंह परमार से लेकर वर्तमान मुख्य मंत्री श्री वीरभद्र सिंह तक हिमाचल प्रदेश ने विभिन्न कार्यकालों में तरक्की के नए आयाम स्थापित किए हैं।

प्रागैतिहासिक काल में यहां कोल, किरात और नाग जातियां रहा करती थीं। कालान्तर में यहां कुनिंदों और औदुंबरों ने बहु-जनजातीय राज्य स्थापित किए। मध्यकाल में उत्तर-पश्चिम दिशा से हुए आक्रमणों के चलते राजपूताना और आसपास के इलाकों के राजवंशों ने हिमाचल को अपनी शरणास्थली बना कर यहां अपने राज्य स्थापित किए। इन राजवंशों ने अपनी रियासतों में भारतीय चित्रकला की अद्धितीय धरोहर माने जानी वाली पहाड़ी कला और स्थापत्य कला को संरक्षण प्रदान कर उन्हें विश्व प्रसिद्ध बना दिया।

ब्रितानवी सरकार के चंगुल से मुक्ति पाने के लिए छेड़े गए स्वाधीनता संग्राम का असर हिमाचल प्रदेश पर भी पड़ना लाजिमी था। हिमाचल की आजादी की लड़ाई में धामी गोली कांड, चम्बा विद्रोह, पझौता विद्रोह, मंडी तथा बिलासपुर विद्रोह, सुकेत आन्दोलन वगैरह मुख्य घटनाएं हैं। अगर असहयोग आन्दोलन का जिक्र करें तो संभवतः देश में हिमाचल प्रदेश ऐसा पहला इलाका था, जहाँ राजाओं के शासन काल में भ्रष्ट अधिकारियों को हटाने के अलावा बेगार, भूमिकर आदि के खिलाफ इसे सशक्त हथियार के रूप में इस्तेमाल किया जाता था। ऐसे आन्दोलन इस क्षेत्र में सन् 1859 से लेकर 1930 तक सुकेत, नालागढ़, रामपुर बुशैहर, बाघल, चम्बा, सिरमौर, कुल्लू, मंडी, बिलासपुर, ठियोग समेत मुख्तलिफ रियासतों में समय-समय पर होते रहे। इसे स्थानीय बोली में 'दूम्ह' के नाम से जाना जाता था। यह पूरी तरह अहिंसात्मक असहयोग आन्दोलन था। अंग्रेजी शासन के दौरान आयोजित होने वाले ऐसे आन्दोलन आजादी की लड़ाई का हिस्सा थे। इसके चलते ब्रितानवी सरकार को जनता की अधिकांश माँगों को मानने के लिए मजबूर होना पड़ता था। कहते हैं कि जब तक किसी जाति में चेतना प्रस्फुटित नहीं होती, उसकी वास्तविक शक्ति को नहीं पहचाना जाना सकता। जब हिमाचली जनता में जागृति उत्पन्न हुई तो उसकी शक्ति को न केवल स्थानीय शासकों बल्कि अंग्रेजों को भी स्वीकार करना पड़ा।

विभिन्न आन्दोलनों से होते हुए यह लड़ाई शिमला हिल स्टेट्स कॉन्फ्रेंस से हिमालयन हिल स्टेट्स रीजनल काउन्सिल अधिवेशन तक आ पहुँची। यह अधिवेशन 08 से 10 मार्च, 1946 की अवधि में मंडी में सम्पन्न हुआ। इस अधिवेशन में टिहरी गढ़वाल से शिमला तक कुल 48 रियासतों ने भाग लिया। इस ऐतिहासिक सम्मेलन में 14 प्रस्ताव पारित हुए थे। इन तमाम आन्दोलनों के चलते शिमला पहाड़ी राज्यों की 28 तथा पंजाब हिल्ज स्टेट्स की दो रियासतों को मिलाकर 15 अप्रैल, 1948 को हिमाचल प्रदेश को 'सी' या 'ग' श्रेणी के राज्य के रूप में मान्यता प्रदान की गई। इन रियासतों में सबसे छोटी रियासत रतेश थी, जिसका रकबा महज दो वर्गमील और जनसंख्या 558 थी और आमदन थी कुल 500 रुपये सालाना। इस तरह हिमाचल प्रदेश के गठन के उपरान्त 01 मई, 1948 को इसमें मंडी रियासत को शामिल किया गया। इसके बाद जुलाई, 1954 में बिलासपुर रियासत का विलय हुआ और आखिरी में 01 नवम्बर, 1966 को पंजाब के पहाड़ी इलाके, जिनमें शिमला, कांगड़ा, कुल्लू तथा लाहौल-स्पीति को शामिल कर, हिमाचल प्रदेश का वर्तमान स्वरूप सामने आया। कांगड़ा जिला के विशाल क्षेत्रफल के मद्देनजर इसे तीन हिस्सों में विभक्त कर 25 जनवरी, 1971 को कांगड़ा, हमीरपुर तथा ऊना सहित तीन जिले गठित किए गए।

वर्तमान में राज्य का कुल क्षेत्रफल 55,673 वर्ग किलोमीटर है और साल 2011 के मुताबिक कुल जनसंख्या 68,64,602 है और जनसंख्या घनत्व है 123 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर। ग्रामीण जनसंख्या 61,76, 050 और शहरी 6,88,552 है। कुल 34,81,873 पुरुषों के मुकाबले महिलाओं की तादाद 33,82,729 है। राज्य की कुल साक्षरता दर 82.80 फीसद है। पुरुष साक्षरता दर 89.53 और महिलाओं की साक्षरता दर 75.93 प्रतिशत है। वर्तमान में कुल 12 जिलों में 65 उपमंडल, 155 तहसील/उप तहसील सहित 78 विकास खंड लोगों को विभिन्न सुविधाएं प्रदान कर रहे हैं। प्रदेश में कुल 20,690 जनगणना गाँव और 3,226 ग्राम पंचायतें हैं। राज्य में दो नगर निगमों, शिमला तथा धर्मशाला सहित कुल शहरी निकायों की संख्या 51 है। सौ फीसदी गाँवों में पानी-बिजली की सहूलियतें उपलब्ध हैं। प्रति व्यक्ति सालाना आमदन 1,47,272 रुपये है।

आज भले ही हिमाचल प्रदेश को देश के बड़े राज्यों की श्रेणी में कई क्षेत्रों में अव्वल पुरस्कार प्राप्त हो रहे हैं और पहाड़ी प्रदेशों

की श्रेणी में यह आदर्श बनकर उभरा है लेकिन विकास का यह सफर इतना आसान नहीं था, जितना अब प्रतीत होता है। गठन के वक्त हिमाचल प्रदेश बेहद पिछड़ा राज्य था और कठिन भौगोलिक परिस्थितियाँ कुशल एवं गतिशील नेतृत्व की बाट जोह रही थीं। अब तक प्रदेश में रहे पाँच मुख्यमंत्रियों ने लोगों को निराश नहीं किया। इसका श्रेय मेहनतकश एवं ईमानदार हिमाचलवासियों को भी जाता है। प्रथम मुख्य मंत्री डॉ. यशवन्त सिंह परमार से लेकर वर्तमान मुख्य मंत्री श्री वीरभद्र सिंह तक हिमाचल प्रदेश ने विभिन्न कार्यकालों में तरक्की के नए आयाम स्थापित किए हैं। राज्य के लिए यह गर्व का विषय है कि शिक्षा तथा समावेशी विकास के क्षेत्र में हिमाचल प्रदेश को देश में अव्वल आंका गया है। बड़े राज्यों की श्रेणी में इसे भारतवर्ष में खुले में शौचमुक्त प्रथम प्रदेश होने का ऐजाज भी हासिल है। अपने गठन के पश्चात् हिमाचल प्रदेश विभिन्न सरकारों के जेरे-साया विकास का शाहिद रहा है।

राज्य में अब तक रहे पाँच मुख्य मंत्रियों में वर्तमान मुख्य मंत्री श्री वीरभद्र सिंह को हिमाचल प्रदेश को सर्वाधिक नेतृत्व प्रदान करने का सम्मान हासिल है। वे वर्तमान कार्यकाल सहित अब तक छह बार हिमाचल को अपना ओजस्वी नेतृत्व प्रदान कर चुके हैं। जाहिर है जहाँ अपनी लोकप्रियता और नेतृत्व क्षमता के कारण जब उन्हें इतनी मर्तबा मुख्य मंत्री होने का गौरव प्राप्त हुआ तो प्रदेश ने सबसे अधिक तरक्की भी उन्हीं की संवेदनशील, स्वच्छ, पारदर्शी, जवाबदेह एवं गतिशील रहनुमाई में हासिल की। अपने तमाम नागरिकों को प्रदेश खाद्य सुरक्षा प्रदान करने के लिए राजीव गाँधी अन्न योजना लागू कर, लगभग 37 लाख लोगों को हर माह दो रुपये के हिसाब से तीन किलो गेहूँ तथा तीन रुपये प्रति व्यक्ति की दर से दो किलो चावल मुहैया करवाता है। पिछले चार सालों में राज्य में 14 नए उप-मंडल, 16 तहसीलें और 31 उप-तहसीलें गठित की गई हैं। गुणात्मक उच्च तथा तकनीकी शिक्षा के अलावा छात्रों को उनके घर-द्वार पर ही शिक्षा मुहैया करवाने के उद्देश्य से सरकारी क्षेत्र में 42 नए महाविद्यालय स्थापित किए गए हैं, जिससे राज्य में कुल महाविद्यालयों की संख्या 119 तक जा पहुँची है, जो प्रति एक लाख व्यक्तियों के मुकाबले देश भर में सर्वाधिक है। इस दौरान दो इंजिनियरिंग महाविद्यालय, ऑटोमोबिल क्षेत्र में एक सामुदायिक महाविद्यालय, एक फॉर्मेसी तथा पाँच बहु-उद्देश्यीय महाविद्यालय, 34 आई.टी.आई. और चार केन्द्रीय पोषित संस्थान स्थापित किए गए, जिनमें आई.आई.आई.टी., आई.आई.एम., सी.आई. पी.ई.टी. तथा आर.वी.टी.आई. शामिल हैं। लोगों को उत्तम स्वास्थ्य सेवाएं प्रदान करने के उद्देश्य से नाहन में नया मेडिकल कॉलेज खोला गया है जबकि चम्बा और हमीरपुर में ऐसे संस्थान स्थापित किए जा रहे हैं। इस दौरान 21 नागरिक अस्पताल, 34 सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र, 96 प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र तथा 29 स्वास्थ्य उप-केन्द्र खोले गए हैं। पाँच स्वास्थ्य संस्थानों को बतौर ई.एस.आई. संस्थान अधिसूचित किया गया है। इस दौरान 45 आयुर्वेदिक स्वास्थ्य केन्द्रों की स्थापना भी की गई।

राज्य में पशुधन के मारफत लोगों की आर्थिकी सुदृढ़ करने के उद्देश्य से इस अवधि में 40 पशु अस्पताल, दो पशु पॉलीक्लीनिक, 47 पशु औषधालय तथा पाँच पंचायत पशु औषधालय खोले गए। न्यूनतम दिहाड़ी को 150 रुपये से बढ़ाकर 200 रुपये कर दिया गया है। वृद्धावस्था, विधवा तथा प्रकृति से चुनौती प्राप्त व्यक्तियों को दी जाने वाली सामाजिक सुरक्षा पेंशन को 450 रुपये से बढ़ाकर 650 रुपये मासिक कर दिया गया है। वर्तमान में कुल 3,89,168 पात्र व्यक्तियों को यह पेंशन मुहैया करवाई जा रही है। अस्सी साल से अधिक आयु तथा 70 प्रतिशत से अधिक शारीरिक अक्षम व्यक्तियों को 1,200 रुपये माहवार पेंशन दी जा रही है। युवाओं को स्वाभिमानपूर्वक जीवन-यापन में मदद मुहैया करवाने के लक्ष्य से बेरोजगार युवाओं को प्रति माह एक हजार रुपये तथा प्रकृति से चुनौती प्राप्त युवकों को प्रति माह 1,500 रुपये भत्ते के रूप में उपलब्ध करवाए जा रहे हैं। अब तक 1.5 लाख से अधिक युवाओं को यह प्रशिक्षण प्रदान दिया जा चुका है। इस निमित्त हिमाचल प्रदेश दक्षता विकास निगम स्थापित किया गया है। धर्मशाला के स्मार्ट सिटी योजना में चयनित होने पर केन्द्र सरकार द्वारा विभिन्न विकास योजनाओं के लिए स्वीकृत कुल 2109 करोड़ रुपये में से 180 करोड़ रुपये की राशि स्वीकृत की गई है। कृषि क्षेत्र में चालू वित्त वर्ष में 484 करोड़ रुपये और

तमाम कोशिशों के चलते आज हिमाचल प्रदेश देश के अग्रणी राज्यों में अपने आपको शुमार करवाने में सफल रहा है। हिमाचल गरीबी उन्मूलन तथा मानव विकास उन्नयन के क्षेत्र में बेहतर कार्य के लिए अपनी खास पहचान बना चुका है। राज्य ने आर्थिक क्षेत्र में, विशेषकर पिछले दो दशकों में, अन्य राज्यों के मुकाबले बेहतर कारगुजारी दिखाते हुए अपनी प्रति व्यक्ति आय में उल्लेखनीय वृद्धि की है। आज हिमाचल देश का सालाना प्रति व्यक्ति आमदन के मामले में देश में दूसरे स्थान पर है। विश्व बैंक की रिपोर्ट में इसे उल्लेखनीय उपलब्धि माना गया है क्योंकि यहाँ की नब्बे प्रतिशत जनता गाँवों में बसती है।

बागवानी क्षेत्र में विश्व बैंक बागवानी योजना के तहत 1,134 करोड़ रुपये व्यय करने का प्रावधान किया गया है। राजीव गांधी आवास योजना तथा मुख्य मंत्री आवास योजना के तहत गृह निर्माण के लिए दी जाने वाली राशि को 75,000 से बढ़ाकर 1,30,000 रुपये कर दिया गया है। मातृ शक्ति बीमा योजना में दी जाने वाली राशि को बढ़ाकर दोगुना कर दिया गया है।

इसके अतिरिक्त लोगों के कल्याण के लिए विशेष अनुदानित खाद्यान्न योजना, घरेलू उपभोक्ताओं को सस्ती दरों पर विद्युत उपलब्धता, सरकारी स्कूलों और केन्द्रीय स्कूलों के छात्रों को स्कूल आने-जाने की निःशुल्क यात्रा सुविधा, महात्मा गाँधी वर्दी योजना, मुख्य मंत्री वर्दी योजना, राजीव गाँधी डिजिटल विद्यार्थी योजना, मुख्य मंत्री ज्ञानदीप योजना, विभिन्न छात्रवृत्ति योजनाएं, मुफ्त दवा नीति, राष्ट्रीय एम्बूलेंस सेवा, मुख्य मंत्री कन्या दान योजना, बेटी है अनमोल योजना, मदर टेरेसा असहाय मातृ सम्बल योजना, डॉ. वाई.एस. परमार किसान स्वरोजगार योजना, मुख्य मंत्री किसान एवं खेतीहर मजदूर जीवन सुरक्षा योजना, पंचायत पशुधन योजना सहित विभिन्न योजनाएं क्रियान्वित की जा रही हैं।

यह गौरवपूर्ण है कि वर्ष 2013 में राज्य का सकल घरेलू उत्पाद 82,872 करोड़ रुपये था जो 2015-16 में बढ़कर 1,13,672 करोड़ रुपये था, जो 2016-17 में बढकर 1,24,572 करोड़ रुपये हो गया। इस अवधि में सकल घेरलू उत्पाद की 6.8 प्रतिशत राष्ट्रीय दर के मुकाबले हिमाचल की दर 7.4 फीसद रही। नीति आयोग के गठन के बाद पंच वर्षीय योजना खतम किए जाने के बावजूद मुख्य मंत्री श्री वीरभद्र सिंह ने 2017-18 के लिए 5,700 करोड़ रुपये की वार्षिक योजना का प्रावधान किया है। इसमें अनुसूचित जाति घटक योजना के लिए 1436 करोड़ रुपये सहित जनजातीय उप-योजना के लिए 513 करोड़ रुपये और पिछड़ा क्षेत्र उप-योजना के लिए 70 करोड़ रुपये निर्धारित किए गए हैं।

इन तमाम कोशिशों के चलते आज हिमाचल प्रदेश देश के अग्रणी राज्यों में अपने आपको शुमार करवाने में सफल रहा है। हिमाचल गरीबी उन्मूलन तथा मानव विकास उन्नयन के क्षेत्र में बेहतर कार्य के लिए अपनी खास पहचान बना चुका है। राज्य ने आर्थिक क्षेत्र में, विशेषकर पिछले दो दशकों में, अन्य राज्यों के मुकाबले बेहतर कारगुजारी दिखाते हुए अपनी प्रति व्यक्ति आय में उल्लेखनीय वृद्धि की है। आज हिमाचल देश का सालाना प्रति व्यक्ति आमदन के मामले में देश में दूसरे स्थान पर है। विश्व बैंक की रिपोर्ट में इसे उल्लेखनीय उपलब्धि माना गया है क्योंकि यहाँ का नब्बे प्रतिशत जनता गाँवों में बसती है। शिक्षा के मामले में भी राज्य अग्रणी है और प्रदेश विकास में महिलाओं का योगदान अन्य राज्यों के मुकाबले बेहतर है। राज्य के विकास में नागरिकों का योगदान भी उतना ही अहम है। हिमाचल को देश में ऐसा प्रथम राज्य होने का गौरव प्राप्त है, जिसने प्लास्टिक बैग के इस्तेमाल पर पूर्ण नियंत्रण पाने में कामयाबी पाई है। हमीरपुर जिला को देश भर में मृदा स्वास्थ्य कार्ड के प्रभावी क्रियान्वयन में प्रथम रहने पर पुरस्कृत किया गया है। स्वास्थ्य क्षेत्र में जी.एस.डी.पी. का सर्वाधिक 1.43 प्रतिशत व्यय करने वाला हिमाचल प्रदेश, दिल्ली के पश्चात् देश का दूसरा ऐसा राज्य है।

कुछ विशेषज्ञ सवाल उठाते हैं कि क्या हिमाचल प्रदेश तरक्की की अपनी वर्तमान रफ्तार को कायम रख पाएगा? विशेषकर जब राज्य में अपने सीमित संसाधन होने के कारण विकासात्मक आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए बड़ी मशक्कत करनी पड़ रही है। विकास के रास्ते पर चलते हुए अपनी विद्युत उत्पादन क्षमता, जलागम प्रबंधन, पर्यटन और औद्योगिक विकास जैसे शोबों में बेहतर कारगुजारी के बावजूद हिमाचलियों ने अपना सामाजिक ताना-बाना और पर्यावरण सन्तुलन बरकरार रखा है। राज्य सरकार और सामाजिक इदारों ने लडकों के मुकाबले लड़कियों की गिरती संख्या को देखकर जो ठोस कदम उठाए थे, उसके सकारात्मक परिणाम सामने आने लगे हैं। हर साल शिक्षित युवाओं की बढ़ती संख्या को देखते हुए रोजगार की समस्या से पार पाना भी चुनौतीपूर्ण है। नियोजित शहरी विकास पर भी ध्यान केन्द्रित करना होगा। लेकिन आर्थिक विकास के साथ अपने पर्यावरण, सामाजिक और सांस्कृतिक धरोहर के संवर्धन और संरक्षण पर नजर रखने वाले हिमाचलवासियों के लिए अपनी प्रगति की गति को बनाए रखना चुनौतीपूर्ण भले ही हो, दुष्कर नहीं।

उप-निदेशक, सूचना एवं जन सम्पर्क विभाग,
क्षेत्रीय कार्यालय, धर्मशाला, जिला-कांगड़ा
हिमाचल प्रदेश-176 215

सन्दर्भ सहायक :

(1) 'हिमाचल प्रदेश के स्वतंत्रता सेनानी, प्रथम खंड', भाषा एवं संस्कृति विभाग, शिमला (प्रथम संस्करण, 1985).

(2) 'हिमाचल पास्ट, प्रजेंट एंड फ्यूचर', दूरवर्ती शिक्षा निदेशालय, हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय (मार्च, 1975).

(3) आर.के. कौशल, 'हिमाचल प्रदेश-ए सोश्यो-इकॉनिमक, जियोग्राफिकल एंड हिस्टोरिकल सर्वे', (रिलायंस पब्लिशिंग हॉऊस, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 1988).

(4) मियाँ गोवर्धन सिंह, 'हिमाचल प्रदेश-हिस्ट्री, कल्चर एंड इकॉनमी', (मिनर्वा बुक हॉऊस, चतुर्थ संस्करण, शिमला, 1994).

(5) विश्व बैंक रिपोर्ट।

(6) बजट आकलन, हिमाचल प्रदेश सरकार, वर्ष 2017-18.

विकास



हिमाचल प्रदेश को शिक्षा व समावेशी विकास में प्राप्त 'सर्वश्रेष्ठ राज्य' पुरस्कार के साथ मुख्यमंत्री श्री वीरभद्र सिंह व उनके मंत्रिमण्डल के सहयोगी।

हर वर्ग और क्षेत्र का समान विकास सुनिश्चित बनाकर

समावेशी विकास का रचा इतिहास

◆ डॉ. आर. एस. राणा

देश के एक अग्रणी प्रकाशन समूह द्वारा गत वर्ष नई दिल्ली में आयोजित 'स्टेट ऑफ द स्टेट्स' अवार्ड समारोह में जब हिमाचल प्रदेश को शिक्षा के क्षेत्र में 'सर्वश्रेष्ठ' और समावेशी विकास में 'सबसे सुधरा' हुआ राज्य घोषित किया गया, समारोह में उपस्थित केंद्रीय वित्त मंत्री सहित अनेक राज्यों के मुख्य मंत्री इस बात को लेकर चकित थे कि सीमित संसाधनों वाला छोटा-सा यह पहाड़ी प्रदेश कैसे विकास का एक आदर्श हो सकता है! सभी सोचने को विवश थे कि विकास के हर क्षेत्र में एक अग्रणी राज्य के रूप में उभरने के पीछे आखिर 'राज' क्या है?

हिमाचल प्रदेश के विकासात्मक तथा राजनीतिक पृष्ठभूमि पर सरासरी नज़र दौड़ाएं तो पता चलता है कि इस प्रदेश में हुए अभूतपूर्व विकास का श्रेय इस प्रदेश के कुशल नेतृत्व श्री वीरभद्र सिंह, हर वर्ग व हर क्षेत्र के समान विकास की उनकी सोच और इस प्रदेश की मेहनतकश जनता को जाता है। इसी दूरदर्शी सोच तथा सघन प्रयासों के परिणामस्वरूप आज यह प्रदेश पर्वतीय क्षेत्रों के विकास का न केवल एक आदर्श बन पाया है बल्कि सतत् एवं समावेशी विकास में भी देशभर में अपनी पहचान बनाई है। लगभग हर क्षेत्र में अभूतपूर्व विकास और अधोसंरचनात्मक सुविधाओं के विस्तार के कारण आज इस प्रदेश को समाज कल्याण योजनाएं व अन्य बड़े प्रोजेक्ट लागू करने के लिए एक 'प्रयोगशाला' के रूप में देखा जाने लगा है जिससे इस प्रदेश का 'मान' बढ़ा है।

'सबका कल्याण-समग्र विकास'के सिद्धांत को सम्मुख रखकर कार्य कर रही राज्य सरकार ने, संयुक्त राष्ट्र के 25 सितंबर, 2015 को घोषित सतत् विकास के उस एजेंडे को अंगीकार किया है जिसमें वर्ष 2030 तक गरीबी उन्मूलन, सबको शिक्षा, स्वास्थ्य और जलवायु परिवर्तन से होने वाली चुनौतियों का सामना करते हुए समाज में व्याप्त विषमताओं को समाप्त करने जैसे सतत् विकास के 17 लक्ष्य निर्धारित किए हैं। राज्य सरकार ने इन लक्ष्यों को ध्यान में रखते हुए एक 'विज़न डाक्यूमेंट' तैयार किया है जिसमें समय रहते इन लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए एक कार्य योजना तैयार की जा रही है।

15 अप्रैल, 1948 को अस्तित्व में आए इस प्रदेश में हुए विभिन्न क्षेत्रों के विकास पर विश्लेषणात्मक दृष्टि दौड़ाएं तो यह कहना अतिशयोक्ति न होगा कि शिक्षा, स्वास्थ्य, सामाजिक सेवा, सड़क निर्माण तथा अधोसंरचनात्मक सुविधाओं के क्षेत्र में लगभग शून्य से अपनी यात्रा आरंभ करके आज लगभग सभी क्षेत्रों में बुलंदियां छूई हैं और राष्ट्र स्तर पर अनेक पुरस्कार प्राप्त करके अपनी पहचान बनाई है। शिक्षा, चिकित्सा सुविधाओं और सामाजिक सेवा क्षेत्र में विशेष रूप से प्रगति हुई है। प्रदेशवासियों को जवाबदेह, पारदर्शी एवं संवेदनशील प्रशासन उपलब्ध करवाने की दिशा में अनेक कारगर कदम उठाए गए हैं। समयबद्ध सेवाएं प्रदान करने की दृष्टि से 'लोकहित' से जुड़े लगभग सभी विभागों की सेवाओं को 'लोक सेवा गारंटी अधिनियम' के तहत लाया गया है तथा ऑनलाइन सेवाओं को प्राथमिकता दी जा रही है।

समावेशी समाज की रचना में शिक्षा, स्वास्थ्य सेवाएं और रोजगार-सृजन अपनी अहम भूमिका निभाते हैं। सर्वप्रथम, शिक्षा के क्षेत्र में हुए विकास को ही लें। इस प्रदेश के अस्तित्व में आने के समय यहां की साक्षरता दर मात्र 7 प्रतिशत थी, लड़कियां सुविधाओं की कमी, भौगोलिक परिस्थितियों और लड़कियां 'पराए घर का धन' की सोच के कारण लगभग अनपढ़ ही रह जाती थीं। आज स्थिति बड़ी संतोषजनक हो गई है। साक्षरता दर 88 प्रतिशत (अंतरिम रिपोर्ट के अनुसार) तक जा पहुंची है। महिलाओं की साक्षरता दर पहले ही 75 प्रतिशत से ऊपर है जो कि राष्ट्रीय स्तर की साक्षरता दर से कहीं ज्यादा है।

प्रदेश में समावेशी वातावरण बनाने में गरीबी उन्मूलन कार्यक्रमों, सामाजिक कल्याण योजनाओं, खाद्य सुरक्षा व उपदान योजनाओं, किसानों-बागबानों के लिए प्रोत्साहन योजनाओं ने भी बड़ी भूमिका निभाई है। बैंकों द्वारा 80 प्रतिशत से भी ज्यादा किसानों को क्रेडिट कार्ड उपलब्ध करवाए गए हैं। इसी प्रकार प्रदेश में 18.26 लाख राशन कार्डधारक हैं जो विभिन्न खाद्यान्न योजनाओं का लाभ उठा रहे हैं। सार्वजनिक वितरण प्रणाली में पारदर्शिता लाने के लिए ई-कार्ड जारी करने की योजना आरंभ की गई है।

प्रदेश में आज 99 प्रतिशत से ज्यादा बच्चे स्कूल जाते हैं। ड्रॉप आउट दर शून्य के बराबर है। गंभीर विकलांगता वाले विशेष बच्चों तथा घुमंतु परिवारों के बच्चों को वैकल्पिक व्यवस्था करके शिक्षा प्रदान की जा रही है। यहां शिक्षक-शिष्य अनुपात देशभर में सबसे बेहतर है। लड़कियों को विश्वविद्यालय तक की निःशुल्क शिक्षा प्रदान की जा रही है। राजकीय शिक्षण संस्थानों का बहुत बड़ा नेटवर्क उपलब्ध है। प्रशिक्षित स्टाफ तथा अनेक प्रोत्साहनों व वजीफा योजनाओं के कारण गरीब घरों के बच्चे विशेषकर छात्राएं बेहतर प्रदर्शन कर रही हैं। समावेशी शिक्षा प्रदान करने में इस प्रदेश का नाम है, शिक्षा की गुणवत्ता पर भी ध्यान दिया जा रहा है। यही कारण है कि इस प्रदेश को शिक्षा के क्षेत्र में सर्वश्रेष्ठ राज्य आंका गया है।

इसी प्रकार, स्वास्थ्य सुविधाओं के क्षेत्र में भी बड़ा विस्तार हुआ है। इस प्रदेश में राजकीय चिकित्सा संस्थाओं की विश्वसनीयता के कारण लोग गंभीर बीमारी होने की स्थिति में भी यहां इलाज करवाना सुरक्षित समझते हैं। प्रदेश में स्वास्थ्य सुविधाओं पर लगभग 26 हजार रुपये प्रति व्यक्ति खर्च किए जा रहे हैं जो कि ऐसा करने वाला देश का दूसरा राज्य है। गरीब व अन्य जरूरतमंद लोगों को स्वास्थ्य कार्ड बनाकर उन्हें बहुत कम दरों पर स्वास्थ्य सेवाएं उपलब्ध करवाई जा रही हैं। बिलासपुर में एम्स खोलने की तैयारी, नाहन, हमीरपुर तथा चंबा में नए मेडिकल कॉलेजों की स्थापना, नेरचौक (मंडी) में ई.एस.आई. अस्पताल का अधिग्रहण, मंडी में एक चिकित्सा विश्वविद्यालय खोलने का प्रस्ताव तथा केंद्रीय योजनाओं का लाभ उठाते हुए अनेक चिकित्सा योजनाओं के प्रभावकारी क्रियान्वयन से चिकित्सा सुविधाओं में श्रेष्ठता आई है, भविष्य में यह प्रदेश शिक्षा की तरह चिकित्सा सुविधाओं के क्षेत्र में भी सर्वश्रेष्ठ राज्य हो जाएगा।

इसके अलावा, प्रदेश में महिलाओं का सशक्तीकरण, विकास में बराबर की भागीदारी तथा बेसहारा अपंग व विधवाओं को सामाजिक सुरक्षा पेंशन उपलब्ध करवाना जैसे अनेक प्रशंसनीय कृत्य हैं जिनके कारण इस प्रदेश में शासन-प्रशासन की विश्वसनीयता बढ़ी है। आज 3.89 लाख से भी ज्यादा पात्र सामाजिक सुरक्षा योजनाओं का लाभ उठा रहे हैं। युवाओं को रोजगार के अवसर प्रदान करने के प्रति विशेष ध्यान दिया जा रहा है। उनका कौशल बढ़ाने के लिए महत्त्वाकांक्षी योजना चलाई जा रही है जिसका लगभग 1.55 लाख युवा लाभ उठा चुके हैं। प्रदेश में सरकारी क्षेत्र में रोजगार के सीमित अवसरों के कारण कौशल विकास योजना से निजी क्षेत्र में युवाओं को रोजगार पाने में बड़ी सहायता मिली है। इसके अलावा, राज्य सरकार ने प्रोत्साहन स्वरूप युवाओं को बेरोजगारी भत्ता देने की पहल से भी उन्हें रोजगार पाने में बल मिलेगा।

इस प्रदेश में समावेशी वातावरण बनाने में गरीबी उन्मूलन कार्यक्रमों, सामाजिक कल्याण योजनाओं, खाद्य सुरक्षा व उपदान योजनाओं, किसानों-बागबानों के लिए प्रोत्साहन योजनाओं ने भी बड़ी भूमिका निभाई है। बैंकों द्वारा 80 प्रतिशत से भी ज्यादा किसानों को क्रेडिट कार्ड उपलब्ध करवाए गए हैं। इसी प्रकार प्रदेश में 18.26 लाख राशन कार्डधारक हैं जो विभिन्न खाद्यान्न योजनाओं का लाभ उठा रहे हैं। सार्वजनिक वितरण प्रणाली में पारदर्शिता लाने के लिए ई-कार्ड जारी करने की योजना आरंभ की

गई है। कृषि तथा बागबानी ने ग्रामीण अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ बनाने में अपनी अहम भूमिका निभाई है। कृषि क्षेत्र में रिकार्ड उत्पादन के लिए राष्ट्र स्तरीय पुरस्कार प्राप्त करने तथा बागबानी में विशेषकर सेब उत्पादन में अपनी पहचान बनाना अपने आपमें गौरव की बात है। गैर-मौसमी सब्जियों के उत्पादन में यह राज्य अग्रणी हुआ है। कृषि-उत्पादों को मंडियों तक पहुंचाने में सड़कों के अच्छे नेटवर्क ने बड़ी भूमिका निभाई है। कभी सड़कों के अभाव में कृषि गतिविधियां नहीं हो पाती थीं, परंतु आज किसान व बागबान इस प्रदेश की प्रति व्यक्ति आय को राष्ट्रीय स्तर की औसत आय से भी आगे ले जाने में सफल हुए हैं।

प्रदेश में अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ करने तथा संसाधन जुटाने की दृष्टि से विद्युत दोहन, पर्यावरण-मित्र उद्योगों की स्थापना तथा पर्यटन विकास पर विशेष ध्यान दिया जा रहा है। पर्यटन विकास को प्रदेश की अर्थव्यवस्था में प्रमुख स्रोत के रूप में देखा जा रहा है क्योंकि पर्यटन सकल घरेलू उत्पाद में लगभग 7 प्रतिशत का योगदान करता है। विकास और पर्यावरण में संतुलन बनाए रखने पर विशेष ध्यान दिया जा रहा है, क्योंकि यह सरकार पर्यावरण संरक्षण के प्रति सजग है, यही कारण है कि यहां हरे वृक्षों के कटान तथा पॉलीथीन इत्यादि के उपयोग पर पूर्ण प्रतिबंध लगा हुआ है। संसाधनों की परवाह किए बगैर पर्यावरण को बचाए रखने को अधिक महत्त्व दिया जाता है ताकि यह प्रदेश विश्वभर में एक सुंदर, स्वास्थ्यवर्धक एवं शांतमय वातावरण के रूप में अपनी पहचान बनाए।

समावेशी समाज की एक और प्रमुख विशेषता होती है कि जनता को कुशल प्रशासन मिले। इस दिशा में पहल करके प्रदेश में ऑनलाइन सेवाओं को प्राथमिकता दी जा रही है। मुख्य मंत्री स्वयं जनता से रू-ब-रू होते हैं। मुख्य मंत्री कार्यालय, उनके आवास अथवा मुख्य मंत्री जहां भी प्रवास पर होते हैं, लोगों की लंबी कतारें देखी जा सकती हैं। एक छोटे अधिकारी से लेकर मुख्य मंत्री तक आम लोगों की आसान पहुंच, इस प्रदेश को अन्य राज्यों से भिन्न व विशिष्ट बनाती है। लोगों की कर्मठता, ईमानदारी तथा विकास में भागीदारी की रुचि भी इस प्रदेश की शक्ति है। यही कारण है कि यहां के युवा आज देश- विदेश में विभिन्न क्षेत्रों में ऊंचे पदों पर आसीन हैं। चंडीगढ़ के पीजीआई तथा एम्स, दिल्ली में हिमाचली मूल के निदेशकों की नियुक्ति इसका सजीव उदाहरण है।

इस प्रदेश के किसी भी पहलू को ले लें, विशेषताएं ही दिखाई देती हैं। उपभोक्तावाद और भाग-दौड़ भरी जिंदगी जीने वालों की नज़र में भले ही यह प्रदेश और यहां के निवासी प्रतिस्पर्धा में न दिखें, परंतु यह सच्चाई है कि इस प्रदेश में आधुनिकता और संस्कृति व समृद्ध परंपराओं का जो सामंजस्य स्थापित किया है, इसका उदाहरण अन्यत्र नहीं मिलता। यही हमारी संस्कृति है और यही हमारी पहचान भी। इस विशेषता की वही परख कर सकते हैं जो अपनी दृष्टि खुली रखते हैं। केवल वही कह सकते हैं।

(वरिष्ठ संपादक, निदेशालय, सूचना एवं जन संपर्क, शिमला, हिमाचल प्रदेश)



मुख्यमंत्री श्री वीरभद्र सिंह मेधावी छात्र को लैपटॉप प्रदान करते हुए

आलेख

हिमाचल गठन की संघर्षभरी यात्रा

◆ विनोद भारद्वाज

पंद्रह अप्रैल, 1948 को हिमाचल राज्य का उदय हुआ। यह तारीख एक लंबे संघर्ष की गाथा को संजोए हुए है। जिस प्रकार पहाड़ों में अप्रैल माह में पेड़-पौधों में बहार आती है, उसी प्रकार आज से 70 वर्ष पूर्व हिमाचल का उदय हिमालय की गोद में एक सुंदर नक्षत्र के रूप में हुआ। राष्ट्रीय मानचित्र पर आने से पूर्व के परिदृश्य पर नज़र दौड़ाएं तो हिमाचल में 30 छोटी-बड़ी रियासतों के नाम से विभाजित, अशिक्षित तथा गरीबी का पर्याय पृथक-पृथक भूखंड थे।

देश की आजादी के दौरान पहाड़ के निवासियों ने दोहरे संघर्ष को लड़ा। एक रियासत के खिलाफ तथा दूसरा राष्ट्रीय स्तर पर स्वतंत्रता आंदोलन में भाग लेकर। 15 अगस्त, 1947 को देश आजाद हुआ। देशभर में रियासतों का विलय कर राज्यों का गठन होने की प्रक्रिया आरंभ हुई।

स्वतंत्रता आंदोलन पर नज़र दौड़ाएं तो 15 अप्रैल की तारीख को ऐतिहासिक बनाने में यहां के दूरदर्शी नेताओं व जनता ने एक लंबा संघर्ष किया। शिमला तथा कांगड़ा स्वतंत्रता आंदोलन का गढ़ माना जाता था। शिमला देश की ग्रीष्मकालीन राजधानी के रूप में तथा कांगड़ा जनपद पंजाब व लाहौर के समीप होने के कारण आंदोलनों का गढ़ रहा। शिमला का इतिहास वर्ष 1929 में शिमला में कांग्रेस को पुनः संगठित किया गया। 27 फरवरी 1930 को गांधी जी ने देश में सविनय अवज्ञा आंदोलन आरंभ करने की घोषणा की। यह सिलसिला स्वतंत्रता आंदोलन के साथ वर्ष-दर-वर्ष आगे बढ़ता गया। तदोपरांत भारत छोड़ो आंदोलन में भी प्रदेशवासियों ने बढ़-चढ़कर भाग लिया। शिमला में राष्ट्रीय स्तर के नेताओं के शिमला आगमन से जहां प्रदेश में नई जागृति, स्वतंत्रता का बोध हुआ, वहीं रियासत स्तर पर रियासतों के प्रति लोगों में नई चेतना का संचार हुआ। देश में रियासतों में भी जिम्मेदार सरकार स्थापित करने के लिए आंदोलन आरंभ होने लगे। इसी उद्देश्य से 17 दिसंबर, 1927 में बंबई में 'ऑल इंडिया स्टेट्स पीपुल' (अखिल भारतीय रियासती प्रजा परिषद) का संगठन बनाया गया व प्रथम अधिवेशन आयोजित किया गया। यह रियासतों के खिलाफ अभियान के तहत सिरमौर में पं. राजेंद्र दत्त के नेतृत्व में सिरमौर प्रजामंडल का गठन किया गया। वर्ष 1936 में चंबा सेवक संघ का गठन हुआ। वर्ष 1936 में मंडी रियासत में स्वामी पूर्णानंद की अध्यक्षता में मंडी प्रजामंडल बना। वर्ष 1937 में धामी प्रेम प्रचारिणी सभा बनी।

15-16 फरवरी, 1939 को लुधियाणा में 'ऑल इंडिया स्टेट्स पीपुल कांफ्रेंस' का सम्मेलन पं. जवाहर लाल नेहरू की अध्यक्षता में आयोजित किया गया। पं. नेहरू ने रियासतों में प्रजामंडल की स्थापना पर जोर दिया।

11 अगस्त, 1938 में बाघल मे निवासियों ने जीवणुराम चौहान की अध्यक्षता में बाघल प्रजामंडल का गठन किया। इसी भावना को लेकर पं. भास्करानंद ने भज्जी में, सूरत राम प्रकाश ने ठियोग में तथा भागमल सौहटा ने जुब्बल में प्रजा मंडलों का गठन किया। जुब्बल रियासत में पं. मस्त राम, जिया लाल शरखोली और राम सरन प्रजामंडल के सक्रिय सदस्य बने। रियासत कोटी, कुम्हारसेन और बुशहर में भी इसी प्रकार के प्रजा मंडलों के गठन का कार्य आरंभ किया। जून 1939 में शिमला में पहाड़ी रियासतों के निवासियों की एक सभा का आयोजन किया गया। लुधियाणा सम्मेलन से प्रभावित होकर शिमला की पहाड़ी रियासतों की विभिन्न संस्थाओं ने एक संयुक्त संस्था बनाकर उसका नाम 'शिमला हिल स्टेट्स रियासती प्रजा मंडल' रखा।

इस संस्था की स्थापना में बुशहर के पं. पदमदेव और जुब्बल के भागमल सौहटा का विशेष योगदान रहा। रियासतों में प्रजा मंडल के प्रचार-प्रसार के कार्य को भागमल सौहटा ने सक्रियता से चलाया। तदोपरांत भागमल सौहटा, हीरा सिंह पाल, देव सुमन ने महलोग रियासत में 'प्रजा मंडल महलोग' की स्थापना की। 9 जुलाई 1939 को कुनिहार रियासत में राणा हर देव की अध्यक्षता में 'कुनिहार प्रजामंडल' की स्थापना की। पहाड़ी रियासतों में कुनिहार के राणा प्रथम शासक थे जिन्होंने अपनी प्रजा की लोकतांत्रिक मांग को सहर्ष स्वीकार किया।

अंग्रेजों ने पहाड़ की वादियों में लोगों की एकजुटता को देखते हुए आंदोलन को कुचलने का प्रयास किया लेकिन लोगों की सक्रिय भागीदारी को देखकर वे भी पीछे हट गए।

16 जुलाई को धामी गोलीकांड के उपरांत पहाड़ी रियासतों में प्रजामंडल आंदोलन ने जोर पकड़ा। विभिन्न प्रजामंडलों के मध्य

तालमेन बैठाने में उद्देश्य से दिसंबर 1939 में हिमालयन रियासती प्रजा मंडल को संगठित किया गया। इसी दौरान सिरमौर प्रजामंडल ने जोर पकाड़ा। इस अभियान में चौधरी शेर जंग, डॉ. देवेंद्र सिंह तथा शिवानंद रमौल ने सक्रियता से भाग लिया। इन नेताओं पर झूठे मुकद्दमे चलाए गए। इन दिनों डॉ. यशवंत सिंह परमार रियासत में जिला व सत्र न्यायाधीश थे। उन्होंने प्रजामंडल से संबंधित मामलों में फैसला उनके पक्ष में सुनाया। यशवंत सिंह परमार के राजा राजेंद्र प्रकाश के साथ मतभेद हो गए। इसी कारण उन्होंने वर्ष 1941 में नौकरी से त्याग-पत्र दे दिया। राजा ने परमार को रियासत से निकल जाने के आदेश दिए। डॉ. परमार ने वर्ष 1943 से 1946 तक दिल्ली में रहकर सिरमौरियों को संगठित किया। वहीं रियासतों के प्रजामंडल पदाधिकारियों से निरंतर संपर्क बनाकर रखा।

चंबा रियासत में प्रजामंडल ने मांग की कि रियासत में लोकप्रिय सरकार का गठन किया जाए। लोग इकट्ठा हुए और रियासत के खिलाफ आवाज उठाई।

वर्ष 1945 में बुशहर प्रजामंडल का गठन हुआ। इसी वर्ष के अंत में उदयपुर में 'ऑल इंडिया स्टेट्स पीपुल कांफ्रेंस' का अधिवेशन आयोजित किया गया। अधिवेशन के उपरांत वहीं पर पहाड़ी रियासत के प्रतिनिधियों ने क्षेत्र में प्रजामंडल को सुचारू रूप से चलाने के लिए जनवरी 1946 में 'हिमालयन हिल स्टेट्स रीजनल काउंसिल' नाम से एक संस्था की स्थापना की। इसके प्रधान स्वामी पूर्णानंद बने व इसका कार्यालय मंडी रखा गया। पं. पदमदेव को इसका मुख्य सचिव, श्याम चंद नेगी को उपप्रधान तथा शिवानंद रमौल को संयुक्त सचिव बनाया गया। काउंसिल का प्रथम सम्मेलन 8 से 10 मार्च, 1946 को मंडी में हुआ। इस सम्मेलन में पहाड़ी लोगों के हित में तथा राजाओं को अत्याचारों को रोकने के लिए 14 प्रस्ताव पारित किए गए। तदोपरांत 31 अगस्त और पहली सितंबर, 1946 को नाहन में सम्मेलन का आयोजन किया गया। इसके उपरांत प्रजामंडल के नेताओं ने अपनी-अपनी रियासतों में आंदोलन को तेज किया।

फरवरी 1947 में भज्जी के लीला दास वर्मा, बिलासपुर के कांशी राम उपाध्याय तथा प्राजमंडल के कुछ अन्य कार्यकर्ता डॉ. यशवंत सिंह के पास दिल्ली गए और उन्हें शिमला लेकर आए। शिमला में पं. पदमदेव, शिवानंद रमौल, दौलत राम सांख्यान, पं. सीता राम, दुर्गा सिंह राठौड़ और अन्य पहाड़ी नेताओं के आग्रह पर डॉ. परमार स्वतंत्रता आंदोलन में शामिल हुए। उन्होंने शिमला के उपनगर संजौली में कृष्ण विला लॉज में रहना आरंभ किया और वहीं पर लीला दास वर्मा ने प्रजा मंडल का कार्यालय खोला। डॉ. यशवंत सिंह परमार ने इस दौरान स्थायी रूप से राजनीति में पदार्पण कर पहाड़ी रियासतों में प्रजामंडल आंदोलन का नेतृत्व तथा पहाड़ी क्षेत्रों के एकीकरण को आगे बढ़ाया।

मार्च, 1947 में हिमालयन हिल स्टेट्स रीजनल काउंसिल की बैठक शिमला के रॉयल होटल में आयोजित की गई। नई काउंसिल के प्रधान डॉ. यशवंत सिंह को चुना गया। इस काउंसिल का पहला सम्मेलन 31 जुलाई 1947 को शिमला की पहाड़ी रियासत सांगरी में आयोजित किया गया। सम्मेलन की सफलता तथा लोगों की भावनाओं को देखते हुए सांगरी का

जब डॉ. परमार व पद्म देव को सुकेत जाने से रोका

वर्ष 1948 में प्रजामंडल के नेता डॉ. यशवंत सिंह परमार तथा पं. पद्म देव हिमाचल की समस्त छोटी-बड़ी रियासतों में जाकर वहां की जनता की दशा तथा अपनी संस्था के संगठन की स्थिति का अनुमान लगाने के निश्चय से, प्रत्येक राज्य का दौरा कर रहे थे। यह सर्वविदित था कि सुकेत राज्य में प्रजा पर अत्यधिक रूप से दमन की नीति का प्रयोग हो रहा है। अतः दोनों नेताओं ने सुकेत की ओर कदम बढ़ाए। बस में बैठकर दोनों -साई- पहुंचे। यह स्थान रियासत मंडी और सुकेत की सीमा पर स्थित है। सुकेत की उत्तर-पश्चिमी हद पर पहली चौकी है। सुकेत के राजा लक्ष्मण सेन, वहां के चीफ मिनिस्टर श्री डी.एम. अहलूवालिया को इस बात का सूचना प्राप्त हो चुकी थी कि दोनों सुकेत में प्रवेश करना चाहते हैं। अतः चौकी पर पुलिस को पूर्ण सावधान कर दिया गया कि अमुक नामों के व्यक्तियों को रियासत में प्रवेश न करने दिया जाए।

ज्यों ही मोटर साई पहुंची, उसे बैरियर पर रोक लिया गया और नाम धाम की पड़ताल शुरू हो गई। डॉ. परमार व पद्म देव के नामों से परिचित होते ही हैडकांस्टेबल ने शाही फरमान सुना दिया और रोकने का प्रयत्न किया। इस आज्ञा का विरोध करते हुए दोनों नेताओं ने कहा कि हम लोग कोई चोर और खूनी नहीं जो हमें रियासत की सीमा में प्रवेश नहीं करने दिया जा रहा है। हैड कांस्टेबल ने रियासत में चीफ मिनिस्टर से टेलिफोन पर आज्ञा लेने को कहा। ज्यों ही परमार टेलिफोन करने लगे तभी बस पुलिस के कहने पर सवारियों समेत उन्हें वहां छोड़ कर सुंदरनगर (रियासत की राजधानी) के लिए रवाना हो गई। उधर बातचीत का कोई विशेष प्रभाव न पड़ा। चौकी पर दोनों नेताओं ने कहा कि अब हम चोरों की तरह न आकर खूब धूमधाम से रियासत में प्रवेश करेंगे, वापिस चले गए। यह 1947 में दिसंबर माह की घटना है। वैसे तो हमारे दिलों में तानाशाही के विरुद्ध पहले से ही आग दहक रही थी किंतु यह घटना उसको भड़काने के लिए एक और आहुति सिद्ध हुई।

राजा रियासत छोड़कर परिवार सहित कुल्लू के आनी को पलायन कर गया।

अगस्त 1947 में सिरमौर प्रजा मंडल ने नाहन में सम्मेलन का आयोजन किया। इस सम्मेलन में सिरमौर के राजा राजेंद्र प्रकाश ने भी भाग लिया। 18 फरवरी, 1948 को पं. पदमदेव के नेतृत्व में सत्याग्रहियों ने तत्तापानी के रास्ते सुकेत रियासत में प्रवेश किया। 25 फरवरी को सुकेत की राजधानी सुंदरनगर पहुंचे। प्रजामंडल के सम्मुख रियासत की फौजी टुकड़ी ने हथियार डाल दिए।

हिमालयन हिल स्टेट्स सब-रिजनल काउंसिल गुट के अध्यक्ष डॉ. यशवंत सिंह परमार पहाड़ी रियासतों के 'भारत संघ' में विलय का प्रचार करते रहे। काउंसिल का सम्मेलन 21 दिसंबर 1947 को शांगरी रियासत की राजधानी बड़ा गांव में हुआ। इसमें प्रस्ताव पारित हुआ कि सभी पहाड़ी रियासतों को मिलाकर एक पहाड़ी प्रांत बना दिया जाए।

स्वाधीनता दिवस के अवसर पर ठियोग रियासत के प्रजा मंडल के नेताओं ने राणा कर्मचंद को सत्ता छोड़ने पर मजबूर किया। ठियोग पहली रियासत थी जो हिमाचल प्रदेश के बनने से पूर्व ही भारतीय संघ में मिल गई। इसी तरह शेष रियासतें भी प्रजामंडल के सदस्यों ने शेष रियासतों के खिलाफ आंदोलन को तेज किया। इस दौरान पहाड़ी रियासतों को पूर्वी पंजाब में मिला देने की मांग भी उठी। पूर्वी पंजाब के गवर्नर चंदू लाल त्रिवेदी तथा मुख्य मंत्री गोपी चंद भार्गव ने शिमला के बार्नेस कार्ट व पंजाब सचिवालय अलरजली से पं. जवाहर लाल नेहरू तथा सरदार पटेल को पत्र लिखकर पहाड़ी रियासतों को पूर्वी पंजाब में मिलाने का आग्रह किया। इन प्रस्तावों का रियासतों के शासकों व लोगों ने डटकर विरोध किया। यहीं के निवासियों तथा प्रजामंडल के नेताओं का तर्क था कि इन रियासतों के लोग भाषा, संस्कृति और सामाजिक व्यवहार के लिहाज से पंजाब के लोगों से एकदम भिन्न हैं। यह बात नेहरू तथा पटेल ने पंजाब के गवर्नर व मुख्य मंत्री के पत्रों के उत्तर में लिखी। शिमला की पहाड़ी रियासतों के राजाओं ने जनवरी, 1948 के प्रथम सप्ताह में दिल्ली में बैठक आयोजित कर एक प्रस्ताव पारित किया - "पूर्ण रूप से विचार करने के उपरांत यह निर्णय लिया गया है कि लोगों की भावना व भलाई को ध्यान में रखते हुए शिमला की सभी पहाड़ी रियासतों को एक संघ के रूप में संगठित किया जाए।" सभी रियासतों को संदेश भेजा गया कि वे 26 जनवरी, 1948 को सोलन में भाग लें।



बघाट के राजा दुर्गा सिंह तथा मंडी के राजा जोगिंद्र सेन ने दिल्ली में महात्मा गांधी से भेंट की। गांधी जी ने दोनों राजाओं को सलाह दी कि प्रजामंडल तथा राजाओं के प्रतिनिधियों की बैठक बुलाकर अपने भविष्य के बारे में फैसला लें।

राजाओं तथा प्रजामंडल के प्रतिनिधियों का सम्मेलन बघाट के राजा दुर्गा सिंह की अध्यक्षता में 26 से 28 जनवरी 1948 को सोलन के दरबार हाल में हुआ। इस सम्मेलन में शिमला की पहाड़ी रियासतों के प्रतिनिधियों ने भाग लिया। इस सम्मेलन में सभी ने पहाड़ी रियासतों को मिलाकर एक ही भौगोलिक एवं प्रशासनिक इकाई बनाने पर जोर दिया। राजाओं तथा प्रजामंडल के प्रतिनिधियों ने 'हिमालय प्रांत' तथा रियासती संघ के प्रस्तावों पर विचार किया। साथ ही चंबा, मंडी, बिलासपुर, सुकेत, सिरमौर आदि के शासकों व प्रजामंडल के नेताओं से बातचीत करने का प्रस्ताव भी रखा। इसी सभा में प्रस्तावित संघ का नाम 'हिमाचल प्रदेश' रखा गया।

केंद्र सरकार ने भी प्रयास जारी रखे। इसी कड़ी में 2 मार्च 1948 को भारत सरकार के राज्य मंत्रालय (मिनिस्ट्री ऑफ स्टेट्स) ने दिल्ली में शिमला एवं पंजाब की पहाड़ी रियासतों के शासकों की बैठक बुलाई। इस बैठक में मंत्रालय के सचिव सी.सी. देसाई ने पहाड़ी रियासतों के शासकों से बिना शर्त 'विलय पत्र' पर हस्ताक्षर करने को कहा। परंतु बघाट के राजा दुर्गा सिंह ने सोलन सम्मेलन के प्रस्ताव के अनुसार पहाड़ी रियासतों के एक अलग प्रांत 'हिमाचल प्रदेश' में सामूहिक विलय का आग्रह किया। सचिव देसाई ने इसका विरोध किया। पहाड़ी रियासती के नेता व प्रजामंडल के प्रतिनिधि भागमल सौहटा, बुशहरी के नेतृत्व में नेताओं ने गृह मंत्री सरदार पटेल से मुलाकात की। उन्होंने सरदार पटेल को सोलन सम्मेलन का प्रस्ताव पेश किया और उनसे पहाड़ी रियासतों को मिलाकर एक अलग पहाड़ी प्रांत 'हिमाचल प्रदेश' के गठन की स्वीकृति देने की अपील की। तदोपरांत 8 मार्च, 1948 को शिमला की पहाड़ी रियासतों के राजाओं ने विलय पर हस्ताक्षर कर दिए। राज्य मंत्रालय (मिनिस्ट्री

ऑफ स्टेट्स) के सचिव ने केंद्रीय सरकार की ओर से पहाड़ी रियासतों के विलय से एक अलग प्रांत 'हिमाचल प्रदेश' के गठन की घोषणा की। सचिव वी.पी. मेनन ने इस अवसर पर स्पष्ट किया कि 'हमने शिमला हिल स्टेट्स को मिलाकर केंद्रीय शामिल प्रांत 'हिमाचल प्रदेश' बना दिया है और पंजाब हिल स्टेट्स के इसमें विलय की बात अभी विचाराधीन है। इस प्रकार 8 मार्च, 1948 को शिमला की हिल्स की 27 पहाड़ी रियासतों के विलय से 'हिमाचल प्रदेश' के गठन की प्रक्रिया आरंभ हुई। कुछ प्रतिनिधि इसका नाम हिमाचल प्रांत चाहते थे। लेकिन सरदार ने 'हिमाचल प्रदेश' नाम का ही अनुमोदन किया। इस प्रकार सोलन सम्मेलन के प्रस्ताव के अनुसार 'हिमाचल प्रदेश' का जन्म हुआ।

मंडी के राजा जोगेंद्र सेन ने 14 मार्च को विलय पत्र पर हस्ताक्षर किए। चंबा के राजा लक्ष्मण सेन भी जनता के दबाव से विवश होकर विलय पत्र पर हस्ताक्षर किए। सिरमौर व बिलासपुर की रियासतों ने अपनी रियासतों का विलय करने पर पत्र पर हस्ताक्षर किए। 23 मार्च को 1948 को केंद्रीय वित्त सचिव ई.पी. कृपलानी के समक्ष विलय पत्र पर हस्ताक्षर किए।

अंततः 15 अप्रैल, 1948 को पहाड़ी क्षेत्र की 30 छोटी-बड़ी रियासतों के विलय से हिमाचल प्रदेश का उदय हुआ। इसे केंद्र शासित चीफ कमिश्नरी प्रोविन्स का दर्जा दिया गया।

एन.सी. मेहता को हिमाचल का पहला चीफ कमिश्नर नियुक्त किया गया व पैन्ड्रल मून ने डिप्टी चीफ कमिश्नर के रूप में कार्यभार संभाला। शिमला हिल स्टेट्स की 26 छोटी-बड़ी रियासतों को मिलाकर 'महासू' जिला बना दिया गया जबकि मंडी और सुकेत की रियासतों को एक करके मंडी जिला का नाम दिया गया। चंबा तथा सिरमौर के दो अलग-अलग जिले बना दिए गए। 1948 में इन चार जिलों में 23 तहसीलें बनाई गईं। उस समय हिमाचल का क्षेत्रफल 10,451 वर्गमील तथा जनसंख्या 9,83,367 थी। हिमाचल के उदय को लेकर एक संघर्ष के सुखद परिणाम 15 अप्रैल, 1948 को हिमाचल के रूप में आए। यह तिथि हम सभी प्रदेशवासियों के लिए एक ऐतिहासिक ही नहीं, बल्कि राज्य के गौरवमय इतिहास का सुनहरा पन्ना है।

'वे सात दिन' जब डोल गया हिमालय

चौबीस जनवरी, 1968 को हिमाचल प्रदेश विधान सभा में तत्कालीन मुख्य मंत्री डॉ. यशवंत सिंह परमार ने अपने अभिभाषण में सात मार्च, 1948 को 'दि ट्रिब्यून' में प्रकाशित लेख 'सात दिन जिसने हिमालय को हिला दिया' का उल्लेख किया। उन्होंने कहा कि सुकेत सत्याग्रह से हिमालय की रियासतों का भारतीय संघ में विलय का रास्ता प्रशस्त हुआ और हिमाचल, केंद्र का एक पूर्ण रूपेण प्रांत तथा आधुनिक लोकतांत्रिक इकाई के रूप में हुआ।

'दि ट्रिब्यून' में प्रकाशित घटनाओं को हम पाठकों के लिए डॉ. एस.एस. शशि द्वारा लिखी पुस्तक 'हिमाचल- नेचर पीसपुल पैराडाइज' से उद्धृत कर रहे हैं ताकि वे विशेषकर आज के युवा इन ऐतिहासिक घटनाओं को सही परिप्रेक्ष्य में जान सकें।

सात ऐतिहासिक दिन जिन्होंने हिमालय को हिला दिया

'सुकेत की सबसे बड़ी तहसील करसोग पर कब्जा हुआ'- 'सत्याग्रह आगे बढ़ा- पांगणा पर लोगों का कब्जा'- सुकेत रियासत के और हिस्सों पर कब्जा'- 'सत्याग्रही रियासत की राजधानी से आठ मील दूर' और अंततः सुकेत के प्रशासन को पूर्वी पंजाब सरकार ने अपने अधीन लिया' -इन सभी खबरों ने पहाड़ों की रहस्यमय घाटियों से क्रांतिकारी गति से निकल कर बाहरी संसार को अचंभित कर दिया। इन सात दिनों में शांत घाटियां तथा स्वप्न लोक एवं पूर्ण एकांत स्थान से गुजरा मार्च स्वतंत्रता की क्रांति का अग्रदूत बना। सही मायनों में यह लोगों का सुकेत रियासत में विजयी अभियान था, जिसके तहत 392 वर्गमील क्षेत्र तथा 71,000 की जनसंख्या थी (राजस्व 3,75,000) इस बड़े राज्य में, यह आंदोलन तार्किक तथा इसका सुखद अंत था। यह उन लोगों का एक संगठित आंदोलन था जो इतिहास के आरंभ होने से शोषण का शिकार रहे थे।

निहत्थे सत्याग्रही

हिमाचल प्रांत की कैसी वह सरकार थी जहां हजारों की संख्या में बिना किसी तैयारी व प्रबंधों से हजारों निहत्थे सत्याग्रही ने सुकेत राज्य पर कब्जा कर लिया। यह एक प्रश्न पैदान करता है? इन सत्याग्रहियों को राज्य की पुलिस से कोई प्रतिरोध का सामना नहीं करना पड़ा? आजाद किए गए क्षेत्र में सरकार ने अपनी कार्यप्रणाली कैसे चलाई? ये वे प्रश्न हैं जो हमारे जहन में स्वतः ही आते हैं, हमें अपने अनुभव से ज्ञात है कि एक व्यवस्थित सरकार की सैन्य कार्रवाई से बच पाना कितना मुश्किल है। और लोगों जिनके अलग-अलग विचार है, उन्हें एक लक्ष्य की ओर ले जाने के लिए नेतृत्व करना कितना मुश्किल है।

प्रांतीय सरकार

हिमाचल क्षेत्र के राज्यों का भारतीय संघ में विलय करवाने के लिए अखिल भारतीय राज्य लोक सम्मेलन की स्वीकृति उपरांत

राज्य के जन आंदोलन के स्थानीय नेताओं ने हिमाचल प्रांत की प्रांतीय सरकार का गठन किया।

यह योजना इसलिए बनाई गई क्योंकि प्रत्येक रियासत में पृथक तौर पर आंदोलन चलाया जाए और सोलन में 'हिमालयन राज्यों के राजाओं द्वारा अपनी-अपनी रियासत में कुछ और वक्त तक सत्ता पर काबिज रहने के मनसूबों को परास्त किया जा सके। लेकिन तानाशाही शासन के दिन अब थोड़े ही थे। प्रांतीय सरकार के अध्यक्ष सिरमौर के श्री शिवानंद रमौल, बिलासपुर के सदानंद चंदेल, बुशैहर के पं. पदम देव, सुकेत के श्री मुकंद लाल इसके सदस्य थे। इन संगठनों में हिमाचल क्षेत्र के सभी क्षेत्रों को उचित प्रतिनिधित्व दिया गया था।

हिमाचल में सांस्कृतिक परंपरा 'भगत' का अनुसरण करते हुए प्रांतीय सरकार के नेता 8 फरवरी को सुन्नी (भज्जी रियासत) में एकत्रित हुए तथा हिमाचल की रियासतों का विलय, भारतीय गणराज्य में विलय के लिए एक आंदोलन चलाने की वचनबद्धता को दोहराया ताकि केंद्र के अधीन एक पूर्णरूपेण आधुनिक लोकतांत्रिक राज्य का गठन किया जा सके।

सुकेत – प्रथम लक्ष्य

सुकेत को प्रथम लक्ष्य चुना गया। 16 फरवरी को सुकेत के राजा को 48 घंटे का नोटिस दिया गया कि वे लोगों को प्रशासन सौंप दें ताकि इसका विलय भारतीय संघ में किया जा सके।

प्रांतीय सरकार की ओर से डॉ. यशवंत सिंह परमा ने लिखा, "सत्याग्रह आंदोलन के इतिहास में यह कभी भी घटित नहीं हुआ कि लोगों ने बिना समय गंवाए आंदोलन को प्रचार तथा कार्यक्रम से आरंभ किया।" "संचार तथा आवागमन के साधनों की कमी, दुर्गम, बर्फ से ढंके क्षेत्रों तथा खराब मौसम के बावजूद सत्याग्रही तत्तापानी (भज्जी रियासत) में मार्च के लिए एकत्रित होने आरंभ हो गए। सुकेत रियासत पर अहिंसात्मक हमला 18 फरवरी को दो स्थानों से आरंभ हुआ। एक हजार सत्याग्रहियों का एक दल तत्तापानी से सुकेत सीमा की ओर रवाना हुआ जबकि भारतीय सीमा के एक गांव बेहना से दूसरा जत्था रवाना हुआ।

पांचवा दिन

आंदोलन के पांचवें दिन फरवरी, 23 को दोनों जत्थों में पांच हजार सत्याग्रही जो रियासत की सबसे बड़ी तहसील के मुख्यालय करसोग में इकट्ठा हुए। उन्होंने पांचवें दिन रियासत की राजधानी सुंदरनगर से आठ मील दूर जयदेवी में पड़ाव लगाया। प्रांतीय सरकार ने इस अवधि में रियासत के तीन चौथाई क्षेत्र पर कब्जा कर लिया था।

सत्याग्रही 39 मील पैदल चलनकर जयदेवी पहुंचे। इस यात्रा के दौरान उन्होंने लोगों की सरकार के नाम पर अनेक पुलिस चौकियों, डाकघरों तथा सरकारी कार्यालयों पर कब्जा कर लिया था। इनमें 18 फरवरी को फैरनू (सीमा से 15 मील), 19 फरवरी को कोटलू, करसोग (तहसील मुख्यालय), पांगणा (करसोग से नौ मील), 20 फरवरी को निहरी व 23 फरवरी को जयदेवी था। हालांकि सत्याग्रहियों को निहरी में दो दिन वर्षा के कारण रुकना पड़ा। रियासत में बाहर से आए मार्च के अलावा रियासत के भीतर भी लोगों में बगावत देखने को मिली। देहरा तहसील के लोगों में जागृति आई तथा आधा क्षेत्र को स्वतंत्र करवा दिया गया। इस तरह सुकेत आजाद हो गया। इस आजादी का उस वक्त पता चला जब राजा ने अपने कोषागार से जवाहरात तथा अन्य कीमती वस्तुओं को सुरक्षित स्थानों पर ले जाने का समाचार प्राप्त हुआ।

राष्ट्रीय ध्वज

राष्ट्रीय ध्वज के साथ हमने अनेक लड़ाइयां लड़ी हैं तथा अनेक विजय भी हासिल की हैं। लेकिन सुकेत का संघर्ष लोगों की बहादुरी की गाथा सदैव रहेगा तथा एक नई विजय का अद्भुत रिकार्ड होगा। प्रांतीय सरकार की 'सेना' में वे लोग शामिल हुए जो गांव-गांव से आए मुख्यतः कृषक व श्रमिक थे। जिनकी पीठ पर पिट्ठू, जिन्हें जीवन में सीधे खड़े होने तथा सीधे देखने की आदत थी। संघर्ष के नेताओं को राह में खानपान की कोई भी चिंता नहीं थी क्योंकि उन्हें विश्वास था कि राह पर आने वाले प्रत्येक गांव में उनका स्वागत होगा।

एकाएक जो व्यक्ति पीछे रह गए थे, उन्होंने गांव-गांव में सुरक्षा समितियां गठित कर सत्याग्रहियों के परिवारों व घरों की किसी भी रियासत द्वारा किए जाने वाले आक्रोश से रक्षा की। सभी स्थानों पर स्थानीय अधिकारियों तथा कर्मचारियों ने लोकतांत्रिक सरकार के प्रति वफादारी की शपथ ली और बिना किसी प्रशासनिक मशीनरी में बदलाव कर पर्वत की तरह ही लोक सरकार की ओर से कार्य को जारी रखा। षड्यंत्रकारी तत्त्वों को या तो दबा दिया गया और उनमें नेताओं विशेषकर पुलिस तथा उच्च प्रशासनिक अधिकारियों को लोगों द्वारा कैद कर दिया गया।

एक सफल क्रांति

क्रांति की परिभाषा यह होती है कि लोगों द्वारा राजशाही की नियति पर बलपूर्वक कब्जा करना। सुकेत की घटना महान लेखक ट्रास्की (Trotsky) को क्रांति पर एक गौरवग्रंथ लिखने के लिए व्यापक सामग्री उपलब्ध करवाती है। वहीं चैकोरेन को सामाजिक मनोविज्ञान पर रुचिकर तथा उपयोगी आंकड़े उपलब्ध करवा सकती है। सुकेत रियासत के पिछड़े तथा संसाधनहीन लोगों ने सदियों पुराने सामाजिक तंत्र को सात दिन में तहस-नहस कर दिया वे लाखों परिश्रमी भारतीयों जो रजवाड़ाशाही तथा तानाशाही के विरुद्ध संघर्षरत हैं, के लिए सदैव प्रेरणा का स्रोत रहेंगे। वे सात दिन जिन्होंने हिमालय को हिला दिया था, उन्हें हिमाचल के इतिहास में एक गौरव के रूप में याद रखा जाएगा।

(लेखक हिमप्रस्थ के वरिष्ठ संपादक हैं)

विकास

उद्योगीकरण से आर्थिक उन्नति की राह हुई प्रशस्त

◆ वेद प्रकाश

हिमाचल प्रदेश की वर्तमान सरकार ने राज्य में अपने शासनकाल के चार वर्ष से भी अधिक का समय पूर्ण कर लिया है। सरकार ने इस अवधि के दौरान राज्य के समग्र विकास तथा जन कल्याण की दिशा में उल्लेखनीय कार्य किया है। प्रदेश सरकार ने उद्यमियों को विशेष प्रोत्साहन एवं सुविधाएं प्रदान कर निवेशकों को आकर्षित करने की दिशा में गंभीर प्रयास किए हैं। निवेशकों को केन्द्रीय बिक्री कर, प्रवेश कर, विद्युत कर, भूमि प्रयोग परिवर्तन फीस दर, स्टॉम्प ड्यूटी में कमी, फ्लोर ऐरिया रेशो अनुपात में बढ़ोतरी जैसे अनेक ऐसे कदम उठाए हैं जिससे राज्य में नए उद्योगों की स्थापना के कार्य में तेजी आई है। प्रदेश सरकार के इन्हीं प्रयासों का प्रतिफल है कि हिमाचल प्रदेश आज न केवल दवाई निर्माण के क्षेत्र में देश ही नहीं एशिया का सबसे बढ़ा औषध उत्पादक बना है बल्कि उद्यमियों का पसंदीदा निवेश गंतव्य बनकर उभरा है। इसीलिए प्रदेश सरकार राज्य के बद्दी-बरोटीवाला-नालागढ़ औद्योगिक क्षेत्र में थोक औषध पार्क को स्थापित करने जा रही है।

प्रदेश सरकार राज्य में औद्योगिकरण को बढ़ावा देने के लिए 'ईज़ ऑफ डूइंग बिजनेस' की नीति को प्रोत्साहन दे रही है और इस दिशा में अनेक कारगर कदम उठाए गए हैं। इस नीति के तहत ऑनलाइन पंजीकरण, विभिन्न केन्द्रीय व राज्य अधिनियमों के अंतर्गत नवीनीकरण तथा भुगतान जैसी सुविधाएं मुहैया करवाना शामिल है। प्रदेश में वर्ष 2017-18 से उद्योगों की स्थापना के लिए एकल बिंदु पंजीकरण पोर्टल संचालित किया जाएगा जिससे उद्यमियों को सभी आवश्यक बहुविभागीय अनुमोदन एक निर्धारित समय सीमा के भीतर ऑनलाइन पोर्टल के माध्यम से प्राप्त हो सकेगें।

सरकार ने नई 'मुख्य मंत्री स्टार्ट-अप/इनोवेशन प्रोजेक्ट/न्यू इन्डस्ट्रीज स्कीम' को लागू कर अपनी प्रतिबद्धता को पूर किया है। इस योजना के अन्तर्गत Patent Filing Cost की प्रतिपूर्ति, स्टाम्प ड्यिूटी में रियायत, रियायती दर पर भूमि का प्रावधान, वैट में रियायत, हिमाचल प्रदेश प्रदूषण नियन्त्रण बोर्ड से अनुमति प्राप्त करने की फीस में छूट तथा ब्याज में वित्तीय सहायता प्राप्त होगी। राज्य सरकार उद्योग को स्थापित करने के लिए आधारभूत संरचना के विकास के महत्त्व को समझती है। वर्ष 2017-18 में पण्डोगा एवं कन्दरोड़ी में अत्याधुनिक औद्योगिक क्षेत्र आंशिक रूप से प्रारम्भ किए जाएंगे। प्रदेश के औद्योगिक क्षेत्रों में आधारभूत संरचना विकसित करने को प्राथमिकता प्रदान कर रही है। परवाणु औद्योगिक क्षेत्र की स्थानीय सड़कों, नरयाल (पुरानी कसौली सड़क) तथा बरोटीवाला मंधला से परवाणु सड़क को चौड़ा व बेहतर किया जाएगा। इस उद्देश्य के लिए वर्ष 2017-18 के दौरान 3 करोड़ व्यय प्रस्तावित किए जाएंगे।

हिमाचल प्रदेश सरकार राज्य में प्रदूषण-मुक्त, स्थानीय कच्चे माल पर आधारित तथा रोज़गार सृजन की अधिक क्षमता वाले उद्योगों को व्यापक प्रोत्साहन दे रही है। प्रदेश में औद्योगिकीकरण को बढ़ावा देने के लिए ठोस कदम एवं प्रभावी योजना अपनाई जा रही है। प्रदेश में ऐसे औद्योगिक क्षेत्र चिन्हित व विकसित किए जा रहे है, जहां अत्याधुनिक अधोसरंचना सुविधाएं उपलब्ध करवाई जा सके। कृषि आर्थिकी पर निर्भर करता है। लेकिन, औद्योगिक विकास राज्य में बेरोज़गारी की समस्या को काफी हद तक कम करने में सहायक है। प्रदेश में औद्योगिकीकरण से न केवल लोगों की आर्थिकी में सुधार आया है, बल्कि युवाओं को रोजगार के अवसर भी उपलब्ध हुए हैं।

हिमाचल प्रदेश सरकार राज्य में प्रदूषण-मुक्त, स्थानीय कच्चे माल पर आधारित तथा रोज़गार सृजन की अधिक क्षमता वाले उद्योगों को व्यापक प्रोत्साहन दे रही है। प्रदेश में औद्योगीकरण को बढ़ावा देने के लिए ठोस कदम एवं प्रभावी योजना अपनाई जा रही हैं। प्रदेश में ऐसे औद्योगिक क्षेत्र चिन्हित व विकसित किए जा रहे हैं, जहां अत्याधुनिक अधोसंरचना सुविधाएं उपलब्ध करवाई जा सके।

औद्योगिक विकास के क्षेत्र में दूरदर्शी सोच का परिचय देते हुए 'निमंत्रण से निवेश' कार्यक्रम के माध्यम से निवेशकों को राज्य में निवेश के लिए आकर्षित करने का सफल



प्रयास किया है। सरकार की इस पहल से प्रेरित होकर देश के कई बड़े एवं नामी-गिरामी औद्योगिक घराने अब हिमाचल में बड़े औद्योगिक निवेश के लिए स्वेच्छा से आगे आ रहे हैं। इसके लिए मुख्यमंत्री की अध्यक्षता में एक उच्च स्तरीय दल ने मुम्बई, बंगलूरू, अहमदाबाद व दिल्ली में प्रदेश में निवेश आकर्षित करने हेतु 'एमर्जिंग हिमाचल' के अंतर्गत 'इन्वैस्टर मीट' का आयोजन किया गया जिसमें प्रतिष्ठित औद्योगिक घरानों के निवेश प्रस्ताव प्राप्त हुए हैं। इसके अतिरिक्त, उद्योग विभाग में 'निवेश प्रोत्साहन प्रकोष्ठ' का गठन किया गया है। इसके पहले चरण की सफलता को ध्यान में रखते हुए दिल्ली में दो दिवसीय इन्वैस्टर मीट का आयोजन किया गया जिसमें 400 से अधिक प्रतिष्ठित उद्योगपतियों ने भाग लिया और उन्होंने राज्य में निवेश की रुचि दिखाई है।

प्रदेश सरकार द्वारा इस दिशा में किए जा रहे प्रयासों के सुखद परिणाम देखने मिल रहे हैं। एकल खिड़की प्रणाली के अन्तर्गत गत चार वर्षों में 283 परियोजनाओं को अनुमोदित किया गया, जिनमें 13262.27 करोड़ के पूंजी निवेश के साथ लगभग 26680 व्यक्तियों को राजगार मिलने की सम्भावना है। इसके अतिरिक्त, प्रधानमंत्री रोजगार सृजन कार्यक्रम के बेहतर कार्यान्वयन के परिणामस्वरूप युवाओं को 7054 रोजगार के अवसर प्राप्त हुए हैं। इसके अन्तर्गत युवाओं को अपने स्वरोजगार के अवसर आरम्भ करने के लिए 23.93 करोड़ रुपये के ऋण वितरित किए गए हैं।

निवेशकों को अंतरराष्ट्रीय स्तर की सुविधाएं प्रदान करने के लिए प्रदेश के ऊना, कांगड़ा तथा सोलन जिलों में तीन अत्याधुनिक औद्योगिक क्षेत्र विकसित किए जा रहे हैं। इन औद्योगिक क्षेत्रों में निवेशकों को सभी आधुनिक सुविधाएं उपलब्ध करवाई जाएंगी। कांगड़ा ज़िला के कंदरौड़ी में 88.05 करोड़ रुपये व्यय कर औद्योगिक क्षेत्र विकसित किया जा रहा है, जबकि ऊना ज़िले के पंडोगा में 95.77 करोड़ रुपये की लागत से औद्योगिक क्षेत्र विकसित किया जा रहा है।

जिला सोलन के बददी में 100 बीघा भूमि पर भटोलीकलां गांव में 102 करोड़ रुपये की लागत से टैक्नोलॉजी केन्द्र की स्थापना की जा रही है। इससे लघु, सूक्ष्म व मध्यम उद्योग को तकनीकी सहायता एवं अन्य मूलभूत सुविधाएं उपलब्ध होंगी। प्रदेश से निर्यात प्रोत्साहित करने के लिए बद्दी में कन्टेनर पार्किंग सुविधा हेतु कुल 14.42 करोड़ की लागत से इनलैंड कन्टेनर डिपू का निर्माण किया गया है। इसके अलावा, बददी में 10.81 करोड़ रुपये की लागत से व्यापार केन्द्र तथा 26.89 करोड़ रुपये की लागत से वेयर हाउस का निर्माण किया गया है। इसी प्रकार सोलन जिले के नालागढ़ में 2.11 करोड़ रुपये की लागत से एक कॉमन फैसिलिटी केन्द्र का निर्माण भी किया गया है।

बद्दी में औद्योगिक कचरे के सुरक्षित प्रबंधन व निपटारे हेतु 53.80 करोड़ रुपये की लागत से कचरा प्रबन्धन संयंत्र स्थापित किया गया है, जिसकी क्षमता 25 एम.एल.डी. है। संयंत्र ने प्रभावी ढंग से कार्य करना आरम्भ कर दिया है। बददी में औद्योगिक श्रमिकों व बेरोज़गार युवाओं के कौशल विकास व संवर्धन हेतु 8.10 करोड़ रुपये कल लागत से कौशल विकास केन्द्र की स्थापना की गई है। इसके अलावा, बद्दी में 12 करोड़ रुपये की लागत से कामकाजी पुरुष छात्रावास तथा ऊना जिले के बाथु में 4.46 करोड़ रुपये की लागत से लेबर हॉस्टल का निर्माण किया गया है।

प्रदेश सरकार द्वारा उद्यमियों को रियायती दरों पर बिजली

मुहैया कराने के उदेश्य से निर्धारित एक्सट्रा हाई टैंशन (ईएचटी) श्रेणी के उपभोक्ताओं के लिए विद्युत शुल्क को वर्तमान 17 प्रतिशत से घटाकर 13 प्रतिशत करने की, ईएचटी श्रेणी को छोड़कर, वर्तमान में स्थापित मध्यम तथा बड़े उद्योगों के लिए विद्युत शुल्क को वर्तमान दर को 15-17 प्रतिशत से घटाकर 11 प्रतिशत करने की, लघु उद्योगों के लिए विद्युत शुल्क को वर्तमान दर को 9 प्रतिशत से घटाकर 5 प्रतिशत तथा नए उद्योगों के लिए 5 वर्षों तक केवल एक प्रतिशत की दर से विद्युत शुल्क के भुगतान की घोषणा की गई है।

ईएचटी श्रेणी सहित किसी भी नये उद्योग, जो 300 से अधिक हिमाचलियों को रोज़गार प्रदान कर रहा है, से 5 वर्षों तक केवल एक प्रतिशत की दर से विद्युत शुल्क वसूला जा रहा है। इसके अतिरिक्त, नये निवेश पर उद्यमियों से “सेल डीड व लीज डीड” पर स्टॉप ड्यूटी में 50 प्रतिशत की छूट दी गई है।

प्रदेश सरकार ने उद्यमियों की सुविधा के लिए तथा राज्य में नवाचार उद्यमों को प्रोत्साहित करने के लिए ‘मुख्यमंत्री स्टार्ट-अप योजना’ का शुभारम्भ किया गया है। इसके अन्तर्गत, प्रदेश में सभी नए उद्यमों को केवल स्वसत्यापित दस्तावेज ऑनलाईन अथवा व्यक्तिगत रूप से जमा करवाने होंगे। यही नहीं, 100 हिमाचलियों को रोजगार प्रदान करने वाले उद्योगों को औद्योगिक क्षेत्रों में नियायती दरों पर भूमि उपलब्ध करवाई जाएगी।

सामान्यतः यह पाया गया है कि अधिकांश रोजगार 25 लाख रुपये के निवेश वाले सूक्ष्म उद्योगों द्वारा प्रदान किया जाता है। अतः राज्य सरकार ने निर्णय लिया है कि कम से कम 5 लोगों को रोजगार प्रदान करने वाली ऐसी सभी छोटी औद्योगिक इकाइयों को जिन्होंने 10 लाख रुपये तक का ऋण लिया है, को तीन वर्षों के लिए ब्याज पर 4 प्रतिशत की छूट दी जाएगी। सरकार ने यह भी निर्णय लिया है कि नए उद्योगों को भूमि के पंजीकरण के लिए केवल तीन प्रतिशत की दर से स्टॉप शुल्क वसूला जाएगा।

प्रदेश सरकार के इन प्रयासों से हिमाचल प्रदेश तेजी से निवेशकों का पसंदीदा निवेश स्थल बन कर उभरा है, जिससे न केवल प्रदेश में आर्थिक गतिविधियों में वृद्धि हुई है, बल्कि प्रदेश के युवाओं को रोजगार के अवसर भी खुले हैं।

हिमाचल शिक्षा तथा स्वास्थ्य में अव्वल

डॉ प्रदीप कुमार

वर्ष 1971 में राज्य का दर्जा मिलने के पश्चात इस राज्य ने शिक्षा तथा स्वास्थ्य के क्षेत्र में आशातीत प्रगति की है। यही कारण है इस सम्बंध में हिमाचल राष्ट्रीय स्तर पर भी बेहतर स्थिति मे है। जहां तक शिक्षा विशेषतौर पर साक्षरता का सम्बंध है सन् 2011 की जनगणना के अनुसार हिमाचल में साक्षरता दर 82.8 प्रतिशत जबकि भारत में केवल 73 प्रतिशत थी। राज्य में 2014-2015 में नामांकन अनुपात 1-V कक्षा तक हिमाचल में 99.4 परन्तु भारत में 100.1 रहा। कक्षा VI से VIII तथा IX से X कक्षा तक का नामांकन अनुपात भारत में 91.2 तथा 78.5 की तुलना में हिमाचल में क्रमशः 103.1 तथा 115.9 रहा। इस प्रकार 1-V कक्षा तक हिमाचल में नामांकन अनुपात लगभग भारत के बराबर रहा परन्तु VI से X कक्षा तक का नामांकन अनुपात भारत की तुलना में काफी अधिक रहा। इससे प्रतीत होता है कि सरकार जमा दो तथा उच्च शिक्षा में नामांकन वृद्धि की ओर भी कदम बढ़ा रही है। वर्तमान में हिमाचल सरकार शिक्षा में गुणवता लाने का भी भरसक प्रयास कर रही है जैसे कि प्राथमिक स्कूल तथा उच्च/सीनियर सकैंण्डरी स्कूलों में हिमाचल में शिष्य-अध्यापक अनुपात भारत के 24 तथा 27 के मुकाबले हिमाचल में 12 तथा 19 रहा है।

जहां तक स्वास्थ्य का सबंध है सन् 2011 में स्वच्छ पेयजल सुविधा हिमाचल में 93.7 प्रतिशत जबकि भारत में 85.5 प्रतिशत घरेलू परिवारों को उपलब्ध रही। इसी कारण सन् 2012 में प्रति एक हजार जन्म के पीछे शिशु मृत्यु दर भारत मे 40 जबकि हिमाचल में 35 रही। इस प्रकार हिमाचल में पेयजल सुविधा अधिक होने तथा शिशु मृत्यु दर कम होने के कारण सन् 2008-12 में जीवन अवधि हिमाचल (70.5) में भारत (67 वर्ष) की तुलना में काफी अधिक रही। भविष्य में जीवन अवधि के ओर भी अधिक बढ़ने की आशा है क्योंकि सरकार परिवार कल्याण कार्यक्रमों के जरिए मृत्यु दर तथा जन्म दर को भी कम करने के लिए प्रयत्नशील है। यही कारण है कि सन् 2013 में जन्म दर तथा मृत्यु दर भारत में 21.4 प्रति हजार तथा 7 प्रति हजार के मुकाबले हिमाचल में क्रमशः 16 प्रति हजार तथा 6.7 प्रति हजार रही। इन आंकड़ों से प्रतीत होता है हिमाचल मे स्वास्थ्य का स्तर भी भारत से बेहतर है।

इसमें कोई संदेह नहीं कि शिक्षा के संबंध में सरकार ने स्कूलों को अपग्रेड किया है, विद्यालयों में पढ़ रहे विद्यार्थियों को यातायात की सुविधाएं भी निशुल्क प्रदान की जा रही है, लड़कियों को निशुल्क शिक्षा भी दी जा रही है तथा नये कॉलेज भी खोले गये हैं। सभी के लिए स्वास्थ्य के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए भी नये कार्यक्रम लागू किये गये है जैसे कि सरकार शिशु के जन्म तक गर्भवती महिलाओं को स्वास्थ्य संबंधी सुविधाएं निःशुल्क प्रदान कर रही है तथा ग्रामीण स्तर पर भी सरकार विभिन्न योजनाओं द्वारा रोगियों को समुचित सुविधाएं उपलब्ध करवा रही है। बजट 2017-18 में सरकार ने सन् 2022 तक शिशु मृत्यु दर को 20 प्रति हजार तक घटाने के लक्ष्य के साथ क्षय रोग को 2021 तक समाप्त करने के लिए क्षय रोग निवारण योजना को आरंभ करने का निर्णय लिया है।

रोजगार

कौशल विकास से स्वावलंबी होते युवा

◆ सतपाल

प्रदेश सरकार राज्य के युवाओं का कौशल विकास कर उन्हें सशक्त बनाने की दिशा में निरन्तर प्रयासरत है। राज्य के बेरोज़गार युवाओं को हुनरमंद बनाकर स्वावलंबी बनाने के उद्देश्य से उनके कौशल विकास के लिए 500 करोड़ रुपये की 'कौशल विकास भत्ता योजना' आरम्भ की है ताकि सरकारी व निजी क्षेत्र में उन्हें जीवन पर्यन्त रोजगार या स्वरोजगार के अवसर उपलब्ध हो सके। वर्ष 2013 से आरम्भ इस योजना के तहत पात्र युवाओं को 1000 रुपये मासिक तथा शाररिक रूप से अक्षम युवाओं को 1500 रुपये मासिक भत्ता प्रदान किया जा रहा है। प्रदेश ने इस योजना को सफल बनाने के लिए इसकी पात्रता आयु सीमा की शर्त को 18 वर्ष से घटाकर 16 वर्ष तथा शैक्षणिक योग्यता को 10वीं से कम कर 8वीं कर दिया है। यही नहीं, सरकार ने इससे भी एक कदम आगे बढ़ते हुए अब प्लम्बर, बढ़ई, तथा राजमिस्त्री जैसे व्यवसायों में अशिक्षित युवाओं को भी कौशल विकास भत्ता प्रदान कारने का निर्णय लिया है। इसी प्रकार योजना के तहत लाभ प्राप्त करने के लिए प्रार्थी के परिवार की वार्षिक आय सीमा को दो लाख रुपये निर्धारित किया है। सरकार की इस महत्त्वाकांक्षी योजना की सफलता का अंदाजा इसी बात से लगाया जा सकता है कि योजना के तहत प्रदेश में गत चार वर्षों के दौरान प्रद्रो के 1,62,553 युवा लाभान्वित हुए हैं और अभी तक 124 करोड़ रुपये व्यय किए जा चुके हैं। प्रदेश के युवाओं को रोज़गारपरक प्रशिक्षण प्रदान करने के लिए हि. प्र. कौशल विकास निगम की स्थापना की गई है जो आगामी 5 वर्षों में 65 हजार युवाओं को प्रदान करेगा। प्रदेश के युवाओं को बेहतर रोजगार के अवसर प्रदान करने के उद्देश्य से वर्ष 2016-17 में एशियन विकास बैंक द्वारा 640 करोड़ रुपये लागत की कौशल विकास परियोजना की घोषणा की थी जो अब आरम्भ हो गई है। इसमें 50 औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थानों में 53 करोड़ की लागत से राष्ट्रीय मानकों अनुरूप आधुनिक प्रशिक्षण उपकरण लगाना प्रस्तावित है ताकि प्रदेश के युवाओं को बेहतर पढ़ाई के साथ-साथ आजीवन रोजगार सुनिश्चित बनाने के लिए गुणवत्ता वाला कौशल प्रशिक्षण दिया जा सके। प्रदेश के 850 राजकीय वरिष्ठ माध्यमिक विद्यालयों में व्यावसायिक शिक्षा पाठ्यक्रम प्रारम्भ किए गए हैं जिनके व्यावसायिक पाठ्यक्रमों में 57,000 छात्रों को प्रशिक्षण दिया जा रहा है। व्यावसायिक प्रशिक्षण की गुणवत्ता में सुधार लाने के लिए सरकार 650 अतिरिक्त विद्यालयों में व्यावसायिक प्रयोगशालाओं को स्तरोन्नत करेगी। यही नहीं सरकार ने 12 महाविद्यालयों में बी.वॉक् पाठ्यक्रय शुरू करना प्रस्तावित किया है जिससे 2800 युवा लाभान्वित होंगे। इसके लिए 39 करोड़ रुपये खर्च किए जाएंगे। इससे राजकीय वरिष्ठ माध्यमिक विद्यालयों के व्यावसायिक विषय के साथ पास होने वाले छात्रों को रोजगार प्राप्त होगा। कॉलेज छात्रों के रोजगार संभाव्य बेहतर करने के उद्देश्य से वर्ष 2017-18 में सरकार कौशल आधारित स्नातक ऐड-ऑन कार्यक्रम शुरू करेगी। इस कार्यक्रम में स्नातक तृतीय वर्ष के छात्रों को नियमित शैक्षणिक विषयों के अतिरिक्त एक कौशल आधारित पाठ्यक्रय को चयन करने का विकल्प दिया जाएगा। प्रदेश सरकार शहरी व ग्रामीण युवाओं में स्वरोजगार कौशल को प्रोत्साहन करने के उद्देश्य से प्रशिक्षण व व्यवसाय विकास सहायता पैकेज उपलब्ध कराएगी और इसके लिए 52 करोड़ के बजट परिव्यय से 6 शहरी आजीविका केन्द्रों तथा 4 ग्रामीण आजीविका केन्द्रों की स्थापना करना प्रस्तावित है।

बेरोजगारों को मिला आर्थिक मदद का हाथ

प्रदेश सरकार ने राज्य में युवाओं को रोजगार के अधिक से अधिक अवसर मुहैया करवा कर उन्हें सरकारी व निजी क्षेत्र में बड़ी संख्या में रोजगार प्रदान किया है। रोजगार मेलों तथा परिसर साक्षात्कारों के माध्यम से दक्ष एवं कुशल युवाओं को बेहतर रोजगार मिल रहा है। भविष्य में भी प्रत्येक जिला व खंड स्तर पर और ऐसे रोजगार मेलों का आयोजन कर युवाओं को रोजगार प्रदान किया जाएगा। प्रदेश मंत्रिमण्डल ने बजट में घोषित किये गये बेरोजगारी भत्ता योजना–2017 को अपनी मंजूरी देकर युवाओं से किये वायदे को पूर्ण किया है। बावजूद इसके प्रदेश सरकार राज्य में बेरोजगारी की समस्या के समाधान के प्रति पूर्ण रूप से वचनबद्ध है। सरकार ने विभिन्न माध्यमों से बेरोजगारी भत्ता प्रदान करने की मांग पर विचार करने के उपरान्त राज्य के 10+2 या उससे ऊपर की शैक्षणिक योग्यता वाले बेरोजगार युवाओं को 1000 रुपये प्रतिमाह बेरोजगारी भत्ता प्रदान करने का निर्णय लिया है। विकलांग बेरोजगार युवाओं को 1500 रुपये प्रतिमाह भत्ता दिया जाएगा। इस सम्बन्ध में राज्य सरकार पात्रता के विस्तृत दिशा–निर्देश शीघ्र ही जारी करेगी। वर्ष 2017–18 में इस उद्देश्य के लिए 150 करोड़ रुपये का बजट परिव्यय प्रस्तावित किया गया है जो कि कौशल विकास भत्ते के 100 करोड़ रुपये के बजट के अतिरिक्त है।

कृषि

पहाड़ों में जैविक खेती की बहार

'मुख्य मंत्री जैविक खेती पुरस्कार योजना' आरंभ

◆ नर्बदा कंवर

हिमाचल प्रदेश एक ऐसा राज्य है जहां लगभग 90 प्रतिशत आबादी गांवों में रहती है। जिसका अधिकतर क्षेत्र पहाड़ी होने के कारण यहां कृषि जीवन यापन का एक प्रमुख साधन है तथा यहां की जनसंख्या का लगभग 69 प्रतिशत प्रत्यक्ष रूप से इस पर निर्भर है। ग्रामीणों की आर्थिकी से जुड़े इस क्षेत्र में अभूतपूर्व प्रगति हुई है। हरित क्रांति से कृषि क्षेत्र में एक बहुत बड़ा बदलाव आया और उत्पादकता कई गुणा बढ़ी परन्तु आधुनिक कृषि पद्धति में अव्यवस्थित रसायनों के प्रयोग के फलस्वरूप विभिन्न दुष्प्रभाव जैसे कि भूमि की उर्वरता में कमी, दूषित वातावरण, मित्र जीवों/कीटों का निरंतर क्षरण, हानिकारक कीटों का निरन्तर बढ़ना, नई जटिल कृषि विकृतियों का आगमन, प्रति इकाई बढ़ता खर्च इत्यादि चिंता के विषय हैं। इन परिस्थितियों से बचने के लिए खेती के वैकल्पिक तरीकों को अपनाने के बारे में चिन्तन शुरू हुआ जिसमें जैविक खेती प्रमुख है।

हिमाचल के कृषक तथा यहां की कृषि, वर्तमान समय में एक परिवर्तन से गुजर रही है, जिसके अन्तर्गत विभिन्न बाधाओं के बावजूद भी कई प्रयोग किये जा रहे हैं। प्रदेश के अधिकतर क्षेत्रों में सिंचाई सुविधा न होने से जैविक कृषि की अपार सम्भावनाएं हैं और जिस पर प्रदेश सरकार द्वारा काफी जोर भी दिया जा रहा है ताकि स्वस्थ उत्पादों व स्वस्थ पर्यावरण से एक सक्षम समाज व राष्ट्र का निर्माण किया जा सके।

हिमाचल प्रदेश में मैदानी क्षेत्रों की अपेक्षा बहुत कम रसायनों का प्रयोग होता है तथा जैविक खेती के लिये अनुकूल वातावरण भी उपलब्ध है। यदि हम तुलनात्मक दृष्टि से देखें तो कीटनाशक रसायनों की खपत प्रदेश में मात्र 158 ग्राम प्रति हेक्टेयर है जबकि देश की औसत खपत 381 ग्राम प्रति हेक्टेयर है जबकि पंजाब की खपत 1,164 ग्राम प्रति हेक्टेयर है। इसी तरह यहां रासायनिक खादों की खपत 53 किलो प्रति हेक्टेयर है जबकि देश की औसत खपत 141 किलो व पंजाब की खपत 217 किलो प्रति हेक्टेयर है। हिमाचल प्रदेश में काफी मात्रा में बेमौसमी सब्जियों व फलों का उत्पादन हो रहा है और जैविक खेती को अपनाकर कृषि व्यवसाय में अभूतपूर्व परिवर्तन लाया जा सकता है।

प्रदेश सरकार द्वारा हरित आवरण, स्वच्छ नवीकरण ऊर्जा उत्पादन, कार्बन पायदान में कमी जैसे पर्यावरण संरक्षण एवं दीर्घकालीन विकास सम्बन्धी विभिन्न उपाय अपनाये जा रहे हो। इन प्रयासों को और सुदृढ़ करने के लिए जैविक खेती नीति अपनाई जा रही है। कृषि क्षेत्र से जुड़े लोगों को दीर्घकालीन आजीविका प्रदान करने तथा जैविक खेती अपनाने के उद्देश्य से प्रदेश सरकार द्वारा दिसम्बर, 2011 में जैविक खेती नीति बनाई गई थी।

नीति के अनुसार राज्य में जैविक क्षेत्र को पहचान एवं प्रोत्साहन देना था। मुख्य नकदी फसलों–फलों तथा सब्जियों की जैविक पैदावार बढ़ाना। जैव विविधता तथा प्राकृतिक स्रोतों का संरक्षण करना कृषि लागत में कमी के साथ आय में वृद्धि भी हो सके। इसके अतिरिक्त जैविक खेती के लिए उचित वातावरण तैयार करना। नीति में यह भी सुनिश्चित किया गया था कि कृषि क्षेत्र में फसल–पशुपालन की कड़ी को सुदृढ़ कर जैविक खाद तैयार करने वाला हिमाचल समृद्ध प्रदेश बन सके। जैविक चारागाह क्षेत्र, पशुओं को जैविक चारे की आपूर्ति, जैविक वन उत्पाद की सुविधायें प्रदान करना भी नीति का उद्देश्य था और साथ ही साथ पर्यटन पर आधारित जैविक कृषि व्यवसाय तथा जैविक गांवों के लिये निवेश वातावरण तैयार कर ग्रामीण स्वरोजगार तथा मूल्य पर आधारित कृषि क्षेत्र विकसित भी करना मुख्य लक्ष्य था।

प्रदेश सरकार जैविक खेती को बढ़ावा देने के जैविक खाद तथा कीटनाशकों को प्रोत्साहन दे रही है तथा रासायनिक खादों एवं कीटनाशकों के प्रयोग को कम करने पर बल दे रही है। प्रदेश में लगभग 36000 कृषकों ने जैविक उत्पादों की प्रमाणिकता तथा विपणन को प्रोत्साहित किया है। इस वर्ष 2000 हेक्टेयर अतिरिक्त क्षेत्र को जैविक खेती के अधीन लाया जाएगा तथा 200 जैव गांव भी विकसित किये जाएंगे। जैविक खाद की पूर्ति के लिए इस वर्ष 2000 वर्मी कम्पोस्ट इकाइयां स्थापित की जाएगी जिस पर 50 प्रतिशत की अनुदान सहायता की जाएगी। प्रदेश में जैविक खेती को प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से प्रदेश में 'मुख्यमंत्री जैविक खेती पुरस्कार योजना' प्रारम्भ की गई है जिसके अन्तर्गत सर्वोत्तम जैविक



कृषि क्षेत्र में हिमाचल को 'कृषि कर्मण्य' सम्मान

कृषक को 3 लाख का प्रथम, 2 लाख का द्वितीय तथा 1 लाख का तृतीय पुरस्कार दिया जाएगा।

प्रदेश में जैविक खेती को क्रमबद्ध तरीके से बढ़ाया जा रहा है तथा जैविक सामग्री की उपलब्धता किसानों के घरेलू (फार्म) स्तर पर बढ़ाने हेतु व्यापक स्तर पर केंचुआ खाद तैयार करने हेतु कार्ययोजना के अन्तर्गत वर्ष 2015–2016 तक 1,36,203 इकाइयां स्थापित की गई हैं। केंचुआ खाद में पौष्टिक तत्व गोबर की खाद से काफी अधिक है।

कृषि विश्वविद्यालय के वैज्ञानिक तथा कृषि विभाग के अधिकारियों को प्रशिक्षित कर जैविक खेती प्रणाली के प्रयोग को किसानों तक पहुंचाया जा रहा है ताकि कृषक लाभान्वित हो सके। कृषि विश्वविद्यालय पालमपुर में अलग से जैविक खेती विभाग स्थापित किया गया है ताकि जैविक अनुसंधान को गति दी जा सके।

जैविक खेती के अन्तर्गत सेवा प्रदाताओं (सर्विस प्रोवाइडर) जिनमें मोसरका फाउंडेशन जयपुर, हिमोर्ड रामपुर, फार्म टैक्नोक्रेट फोरम पालमपुर, आइकोआ बैंगलौर, बुशैहर ऑरगैनिक सोसाइटी रामपुर, भारत विकास संगम कुल्लू, जय देवता समूह रामपुर, सर्वेश्वर ऑरगैनिक जम्मू इत्यादि संस्थाओं से सहयोग लिया जा रहा है। जैविक प्रमाणीकरण हेतु प्रदेश में तीन प्रमाणीकरण संस्थाएं वनसर्ट एशिया, जयपुर, उतराखण्ड राज्य जैविक प्रमाणीकरण संस्था, देहरादून, अदिति ऑरगैनिक सर्टिफिकेशन प्रा. लि. बैंगलौर कार्य कर रही हैं। इसके अतिरिक्त हिमाचल प्रदेश में भी प्रमाणीकरण संस्था पंजीकृत हो चुकी है और जल्द ही यह संस्था किसानों को सेवाएं उपलब्ध करवाएगी।

कृषि विश्वविद्यालय द्वारा जैविक कृषि पर फसलों के लिए सम्पूर्ण सिफारिशों को तैयार किया जा रहा है। जैविक खेती तथा केंचुआ उत्पादन तकनीकी बारे कृषकों को भारत सरकार तथा कृषि विश्वविद्यालय द्वारा प्रकाशित प्रचार सामग्री भी पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध कराई जा रही है। प्रमाणीकरण लागत कम करने के लिये वर्ष 2015–16 से जैविक प्रमाणीकरण की सहभागिता प्रणाली शुरू की गई है व इसके अंतर्गत 2220 हेक्टेयर क्षेत्र लाया गया है। जैविक खेती के अन्तर्गत हिमाचल प्रदेश में धान, गेहूं, मक्की, सब्जियों व फलों का उत्पादन किया जा रहा है। इसके अतिरिक्त काला जीरा, कोदा, चौलई, चाय आदि फसलों का जैविक उत्पादन भी प्रदेश के किसानों द्वारा किया जा रहा है।

प्रदेश में जैविक खेती हेतु 39440 कृषक पंजीकृत किए जा चुके हैं तथा 21656 हेक्टेयर क्षेत्र को जैविक खेती के अन्तर्गत लाया गया है तथा 10,085 किसानों को जैविक प्रमाण पत्र जारी किये गये हैं।

हिमाचल प्रदेश के कृषकों के व्यावहारिक अनुभव से अभी तक यह पाया गया है कि जैविक खेती अपनाये जाने के परिणाम स्वरूप रासायनिक खादों तथा कीटनाशकों के प्रयोग में कमी आई है और साथ–साथ कृषि लागत में भी कमी आई है तथा भूमि की उर्वरक क्षमता में भी काफी हद तक सुधार आया है। इन अनुभवों के दृष्टिगत यह अपेक्षा की जा सकती है कि हिमाचल प्रदेश के समस्त कृषि जलवायु क्षेत्रों के कृषकों के लिए जैविक खेती लाभकारी सिद्ध होगी।

जन कल्याण की नई सुबह

◆ रीना नेगी

समाज के प्रत्येक वर्ग का समान एवं संतुलित विकास सुनिश्चित बनाने के मूलमंत्र को केंद्र में रखकर वर्तमान सरकार ने विकास की कल्याणकारी योजनाओं को सफलतापूर्वक कार्यान्वित किया है। परिणामस्वरूप आज यह देश में समग्र विकास व जनकल्याण में श्रेष्ठ राज्य बनकर उभरा है।

विकास के परिदृश्य पर नजर दौड़ाएं तो संपूर्ण प्रदेश की तस्वीर ही बदल गई है। प्रति व्यक्ति की आय में बढ़ोतरी इस बात का प्रतीक है कि हिमाचल ने गरीबी को दूर कर खुशहाली की ओर कदम बढ़ाया है। विकास की प्राथमिकताओं को देखते हुए सामाजिक सेवा क्षेत्र को सर्वोच्च प्राथमिकता प्रदान की गई है।

समाज का प्रत्येक व्यक्ति गरिमापूर्ण सम्मान एवं सुरक्षित जीवन यापन करे, इसके लिए अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति, अन्य पिछड़ा वर्ग व अल्पसंख्यक समुदाय, वृद्धावस्था पेंशन, विधवा पेंशन, अक्षम व्यक्ति पेंशन जैसी नवीन कल्याणकारी योजनाएं लागू की गई हैं।

अनुसूचित जाति, अन्य पिछड़ा वर्ग, अल्पसंख्यक, विकलांग, एकल नारी विधवाओं तथा परित्यक्ता महिलाओं को रोजगारोन्मुख कौशल प्रशिक्षण प्रदान किया जा रहा है। बालिकाओं के अस्तित्व को अधिक सुरक्षित करने के लिए ठोस प्रयास किए गए हैं। 'बेटी पढ़ाओ बेटी बचाओ' एक ऐसा ही प्रयास है। इस योजना के तहत बी.पी.एल. परिवारों की कन्याओं को विद्यालय स्तर तक छात्रवृत्ति प्रदान की जाती है जिसे अब स्नातक स्तर तक बढ़ाने की घोषणा की गई है। सरकार ने 'मुस्कान' योजना का शुभारंभ भी किया है जिसके अंतर्गत कन्या भ्रूण हत्या तथा लिंगानुपात में सुधार होगा। 'पंचायत बालिका गौरव पुरस्कार योजना' के तहत ऐसी 15 पंचायतें जिनमें बालिका जन्म दर बालकों की अपेक्षा श्रेष्ठ हो, अनुदान के रूप में 10 लाख दिए जाएंगे। बेटी है अनमोल योजना के तहत सहायता राशि को 5100 रुपये से बढ़ाकर 10,000 रुपये किया है ताकि महिला पुरुष अनुपात में सुधार लाया जा सके। इसी तरह मुख्यमंत्री कन्यादान योजना के तहत सहायता राशि बढ़ाकर 40,000 रुपये की गई है जिससे 4682 कन्याएं लाभान्वित हुई हैं। इसी प्रकार माता शबरी महिला सशक्तीकरण योजना के तहत भी महिलाओं को लाभान्वित किया जा रहा है। इसके अतिरिक्त ऐसे अनाथ बच्चे जिनके माता–पिता अथवा अभिभावकों के बारे में जानकारी प्राप्त हो गई है, उनके नाम उनकी पैतृक सम्पत्ति में दर्ज किये जाएंगे। किशोरावस्था में शिक्षा, लौह तत्त्व व खून की कमी, कुपोषण, कौशल उन्नयन एवं स्वरोजगार की समस्या का सामना कर रही बालिकाओं को उभारने के लिए 'मुख्य मंत्री किशोरी समग्र विकास' योजना की घोषणा की गई है। महिलाओं को रोजगार और उदारता से ऋण मिले, इसके लिए महिला विकास निगम की प्राधिकृत पूंजी को 15 करोड़ रुपये किया गया है। इसी तरह अनेक योजनाएं हैं जैसे 'माता शबरी महिला सशक्तीकरण', महिला कल्याण की योजनाओं को बेहतर ढंग से कार्यान्वित करने के लिए। वर्ष 2017–18 के बजट में महिला एवं बाल विकास विभाग के लिए 418 करोड़ रुपये का बजट परिव्यय प्रस्तावित हैं।

प्रदेश सरकार समाज के कमजोर, उपेक्षित तथा पिछड़े वर्गों के कल्याण के प्रति सजग है। उन्हें उन्नति के समान अवसर उपलब्ध करवाने के लिए सरकार ने कई कल्याणकारी योजनाएं कार्यान्वित की हैं। प्रदेश सरकार विभिन्न पेंशन योजनाओं के तहत प्रदेश में 3,89,168 लोगों को सामाजिक सुरक्षा प्रदान कर रही है। सरकार ने गत चार वर्षों में सामाजिक सुरक्षा पेंशन को 650 से बढ़ाकर 700 रुपये किया गया है।

प्रदेश सरकार समाज के कमजोर, उपेक्षित तथा पिछड़े वर्गों के कल्याण के प्रति सजग है। उन्हें उन्नति के समान अवसर उपलब्ध करवाने के लिए सरकार ने कई कल्याणकारी योजनाएं कार्यान्वित की हैं। हिमाचल प्रदेश राज्य पिछड़ा वर्ग एवं विकास निगम का मुख्य उद्देश्य पात्र लाभार्थियों को रियायती ब्याज दर पर ऋण उपलब्ध करना है। सरकार ने इसमें सस्ते ऋण के लिए सरकारी ब्लॉक गारंटी को 20 करोड़ रुपये से बढ़ाकर 30 करोड़ रुपये प्रस्तावित किया है। उच्चतर शिक्षा एवं व्यावसायिक कोर्सों के अध्ययन के लिए छात्र–छात्राओं को शिक्षा ऋण दिया जा रहा है।

विकलांगों को निजी क्षेत्र में पुनर्वास प्रदान करने वाला हिमाचल देश का पहला राज्य है। उन्हें रोजगार प्रदान करने के लिए सरकार विशेष ध्यान दे रही है। विकलांग विवाह योजना के तहत यदि दोनों

विकलांग हिमाचल के स्थायी निवासी हैं, तथा उन्हें विवाह अनुदान दिया जाता था, लेकिन अब इस योजना को उदार बनाते हुए उन पात्र लाभार्थियों को भी यह लाभ प्रदान किया जाएगा तो प्रदेश के बाहर के व्यक्ति के साथ भी विवाह करते हैं।

सभी विकलांग जिनकी विकलांगता 40 प्रतिशत से अधिक है, को बिना किसी आय सीमा के छात्रवृत्ति प्रदान की जा रही है। मानसिक रूप से अविकसित बच्चों/लोगों को जिनकी आय 35000 रुपये तक है, उनको अपंगता पेंशन प्रदान की जा रही है। कमजोर तथा उपेक्षित वर्गों का सुख तथा सशक्तीकरण इस सरकार के लिए अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। इनको मूलभूत सुविधा प्रदान करने वाली योजनाओं को प्राथमिकता प्रदान की जा रही है। प्रदेश सरकार विभिन्न पेंशन योजनाओं के तहत प्रदेश में 3,89,168 लोगों को सामाजिक सुरक्षा प्रदान कर रही है। सरकार ने गत चार वर्षों में सामाजिक सुरक्षा पेंशन को 450 रुपये से बढ़ाकर 650 रुपये करने के बाद अब 700 रुपये किया गया है।

समाज में संतुलित विकास सुनिश्चित बनाने के ध्येय को केंद्र में रखकर सरकार अनुसूचित जाति, अन्य पिछड़ा वर्ग, अल्पसंख्यक विकलांग, एकल नारी, विधवाओं तथा त्यक्ता नारियों को रोजगारोन्मुख कौशल प्रशिक्षण प्रदान किया जाएगा। कंप्यूटर एप्लीकेशन वाली कौशल विकास योजनाएं भी सफलतापूर्वक चल रही है। इन योजनाओं के तहत 2000 व्यावसायिक कोर्सों में 18 से 35 वर्ष आयु के दलित वर्ग के प्रशिक्षणार्थियों को अपने जिले में 500 तथा जिले से बाहर 750 रुपये प्रतिमाह वजीफे के साथ रोजगारमूलक प्रशिक्षण मुफ्त दिलवा रही है।

इस प्रकार हिमाचल सरकार प्रदेश का चहुंमुखी विकास कर प्रदेश की खुशहाल तस्वीर और उज्ज्वल तकदीर बनाने में सफल रही है जिससे यह स्वयं ही साबित होता है कि आज प्रदेश एक समृद्ध एवं स्वावलंबी राज्य बनने के पीछे सरकार के कदम सार्थक रहे हैं।



सरकार ने 'मुस्कान' योजना का शुभारंभ भी किया है जिसके अंतर्गत कन्या भ्रूण हत्या तथा लिंगानुपात में सुधार होगा। 'पंचायत बालिका गौरव पुरस्कार योजना' के तहत ऐसी 15 पंचायतें जिनमें बालिका जन्म दर बालकों की अपेक्षा श्रेष्ठ हो, अनुदान के रूप में 10 लाख दिए जाएंगे। बेटी है अनमोल योजना के तहत सहायता राशि को 5100 रुपये से बढ़ाकर 10,000 रुपये किया है ताकि महिला पुरुष अनुपात में सुधार लाया जा सके। इसी तरह मुख्यमंत्री कन्यादान योजना के तहत सहायता राशि बढ़ाकर 40,000 रुपये की गई है जिससे 4682 कन्याएं लाभान्वित हुई हैं। इसी प्रकार माता शबरी महिला सशक्तीकरण योजना के तहत भी महिलाओं को लाभान्वित किया जा रहा है।

ज्ञान



शिक्षा के नए शिखरों को छूता हिमाचल

◆ योगराज शर्मा

सभ्य समाज के निर्माण में शिक्षा की अहम भूमिका होती है। शिक्षित व जागरूक समाज ही किसी भी देश को प्रगति का मार्ग प्रशस्त कर नई राह दिखा सकता है। आधुनिकता के इस युग में शिक्षा का विस्तार किए बिना कोई भी समाज आगे नहीं बढ़ सकता। हिमाचल प्रदेश सरकार ने भी मुख्यमंत्री वीरभद्र सिंह के नेतृत्व में शिक्षा को सर्वोच्च प्राथमिकता प्रदान कर समाज के हर वर्ग के बच्चों को मुख्यधारा से जोड़ने के लिए अनेकों योजनाएं व कार्यक्रम चलाए हैं। मोबाइल स्कूल व गैर आवासीय विशेष प्रशिक्षण केन्द्र भी ऐसा ही एक कार्यक्रम है जिसके माध्यम से उन छात्रों में शिक्षा का अलख जगाया जा रहा है जो किसी कारणवश स्कूल नहीं जा पाते। इनमें घुमंतू जीवन बसर करने वाले गुज्जर समुदाय, मैदानी इलाकों से प्रदेश में छोटा-मोटा काम धन्धा करने आने वालों के बच्चों के अलावा शारीरिक रूप से अक्षम बच्चों को शामिल किया गया है। शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009 के अंतर्गत समाज के इन वर्गों के बच्चों को शिक्षित किया जा रहा है। प्रदेश शिक्षा विभाग के अधीन वर्तमान में 132 गैर आवासीय विशेष प्रशिक्षण केन्द्र संचालित किये जा रहे है। ऐसे विशेष प्रशिक्षण केन्द्रों को संचालित किये जाने के पीछे प्रदेश सरकार का मकसद हर बच्चे को शिक्षित करने का है।

उल्लेखनीय है कि प्रदेश सरकार के सार्थक प्रयासों से जहां एक ओर शिक्षण संस्थानों का आधारभूत ढांचा विकसित किया जा रहा है वहीं आधुनिक सुविधाओं से लैस इन शिक्षण संस्थानों मे छात्रों को विश्व स्तरीय शैक्षणिक माहौल मुहैया करवाया जा रहा है। मुख्यमंत्री द्वारा हाल ही में राज्य विधानसभा में प्रस्तुत बजट में भी शिक्षा के विस्तार के लिए 6204 करोड़ रूपये का बजट परिव्यय प्रस्तावित किया है।

सरकार ने अपने वर्तमान कार्यकाल में सरकार ने राज्य के विभिन्न हिस्सों में 42 महाविद्यालय खोले हैं जिनका ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले छात्रों खासकर लड़कियों को फायदा हुआ है। उच्च शिक्षा को मिले विस्तार के साथ-साथ राज्य में प्राथमिक व माध्यमिक शिक्षा के क्षेत्र में भी सुदृढ़ता आई है। प्रदेश सरकार के सार्थक प्रयासों से राज्य के स्कूलों में नामाकंन दर शत प्रतिशत हो गई है और साक्षरता दर 82.80 प्रतिशत तक पहुंच गई है। उच्च शिक्षा विभाग के अधीन वर्तमान में 931 उच्च, 1718 वरिष्ठ माध्यमिक विद्यालय और 115 महाविद्यालय हैं जिनमें 6 संस्कृत महाविद्यालय शामिल हैं।

प्रदेश के सरकारी विद्यालयों में पहली से बारहवीं कक्षा तक के विद्यार्थियों को हिमाचल पथ परिवहन निगम की बसों में निःशुल्क यात्रा सुविधा प्रदान की जा रही है। इससे स्कूल आने-जाने वाले बच्चों को विशेष लाभ पहुंच रहा है। शैक्षणिक

संस्थानों में छात्रों को विश्वस्तरीय सुविधाएं प्रदान करने के साथ-साथ सरकार ने शत प्रतिशत परिणाम देने वाले शिक्षकों को भी सम्मानित करने का निर्णय लिया है। इसके लिए मुख्यमंत्री शिक्षक सम्मान योजना आरंभ की गई है।

हिमचल प्रदेश स्कूल शिक्षा बोर्ड द्वारा संचालित 10वीं एवं 12वीं की परीक्षाओं में श्रेष्ठ प्रदर्शन करने वाले मेधावी विद्यार्थियों को 'राजीव गांधी डिजिटल योजना' के तहत मेधावी छात्रों को नेटबुक प्रदान की जा रही है। इस योजना के आरंभ होने से लेकर अब तक तहत 63 करोड़ 62 लाख 64 हजार 325 रुपये व्यय कर 32500 विद्यार्थियों को लैपटॉप वितरित किए गए जबकि वर्ष 2016-17 के दौरान 18 करोड़ रुपये इसा योजना पर व्यय किए गयें हैं। जबकि 2017-18 में इसके लिए 25 करोड़ रूपये बजट का प्रावधान किया गया है। इस योजना के तहत मेधावी विद्यार्थियों को प्रोत्साहन मिलने के साथ-साथ उन्हें सूचना एवं प्रौद्योगिकी से जोड़ने में सहायता भी मिलेगी।

इस वित्त वर्ष में सरकार ने पहली से पांचवीं कक्षा तक के विद्यार्थियों की पठन क्षमता को बढ़ाने के लिए 'प्रेरणा प्लस' तथा छठी से आठवीं कक्षा तक के विद्यार्थियों की विज्ञान व गणित में क्षमता बढ़ोतरी के लिए 'प्रयास प्लस' कार्यक्रम आरंभ करने की नई योजनाएं आरंभ की हैं।

सरकार ने समाज के कमजोर एवं गरीब वर्गों विशेषकर अनुसूचित जाति, अनुसूचित जन-जाति, अन्य पिछड़ा वर्ग तथा आई.आर.डी.पी. परिवारों के 9वीं व 10वीं कक्षा के 3,52,153 विद्यार्थियों को वर्ष 2013-14 से लेकर 2015-16 तक 27 करोड़ 52 लाख 92 हजार 837 रुपये मुल्य की पाठ्य पुस्तकें निशुल्क वितरित कीं। प्रदेश के सभी पात्र विद्यार्थियों को विभिन्न छात्रवृत्ति योजनाओं के तहत लाभान्वित करने उद्देश्य से अक्तूबर 2016 तक 4,14,480 विद्यार्थियों को 213.21करोड़ रुपये छात्रवृत्ति के रूप में वितरित किए गए। विद्यार्थियों में विज्ञान विषय के बारे में रुचि उत्पन्न करने के लिए कार्यान्वित की जा रही 'प्रेरणा(इन्सपॉयर) पुरस्कार योजना' के तहत इस अवधि में 8299 विद्यार्थियों को पांच हजार रुपये प्रति विद्यार्थी की दर से 5.18 करोड़ रुपये वितरित किए गए।

प्रदेश के शिक्षण संस्थानों में ढांचागत विकास को प्राथमिकता प्रदान करते हुए 317 महाविद्यालय भवनों तथा 1848 विद्यालय भवनों के निर्माण पर गत चार वर्षों के दौरान 355.87 करोड़ रुपये व्यय किए गए। राष्ट्रीय उच्चत्तर शिक्षा अभियान के तहत इस अवधि में 184 करोड़ रुपये की राशि स्वीकृत की गई।

वर्तमान सरकार के विगत चार वर्षों के कार्यकाल के दौरान प्रदेश ने उच्च शिक्षा के क्षेत्र में नई बुलंदियों को छुआ है। शिक्षा को प्राथमिकता प्रदान करते हुए जहां मेडिकल कॉलेज खोले जा रहे हैं, वहीं प्रदेश में केन्द्रीय विश्वविद्यालय, आईआईटी, आईआईएम, एम्स जैसे राष्ट्रीय स्तर के संस्थान युवाओं की प्रतिभा में निखार लाने में अहम भूमिका निभा रहे हैं।

वर्तमान सरकार के बीते चार वर्षों के कार्यकाल के दौरान प्रदेश ने उच्च शिक्षा के क्षेत्र में नई बुलंदियों को छुआ है। शिक्षा को प्राथमिकता प्रदान करते हुए जहां मेडिकल कालेज खोले जा रहे हैं वहीं प्रदेश में केन्द्रीय विश्वविद्यालय, आईआईटी, आईआईएम, एम्स जैसे राष्ट्रीय स्तर के संस्थानों के खुलने से युवाओं को अपनी प्रतिभा में निखार लाने के लिए अहम भूमिका निभा रहे हैं। इसके अलावा प्रदेश की ललित कला के संरक्षण व उसके संवर्धन के लिए प्रदेश सरकार ने राज्य में ललित कला महाविद्यालय खोला है। इस महाविद्यालय के खुलने से जहां एक तरफ चित्रकला व मूर्तिकला को बढ़ावा मिल सकेगा, वहीं छात्रों को पढ़ाई के भी बेहतरीन अवसर मिलेंगे।

शिक्षा के क्षेत्र में हुई यह प्रगति प्रदेश सरकार की कल्याणकारी नीतियों के परिणामस्वरूप ही संभव हो पाई है। छात्रों को घर द्वार पर शिक्षा सुविधा मुहैया करवाने के साथ-साथ अब सरकार की योजना उन्हें गुणवत्ता पूर्ण शिक्षा प्रदान करने की है। गत चार वर्षों में उच्च शिक्षा विभाग में सरकार ने शिक्षकों सहित विभिन्न श्रेणियों के 3418 पदों पर नियुक्तियां की हैं। इसके अलावा 9517 पदों को पदोन्नतियों के माध्यम से भरा गया है। वर्तमान कार्यकाल में सरकार ने अनुबंध पर तैनात 2609 शिक्षकों व गैर शिक्षकों की सेवाओं को नियमित किया है। प्रदेश मंत्रिमंडल की मंजूरी के बाद सरकार जल्द ही सरकार शिक्षकों के 5 हजार पदों को भरने जा रही है। ऐसे में यही उम्मीद की जा रही है कि जा रही है कि शैक्षणिक गुणवत्ता में सुधार आने से ही युवा हुनरमंद बन सकेंगे वहीं उन्हें रोजगार के भी अच्छे अवसर पैदा हो सकेंगे।

तकनीकी शिक्षा को बढ़ावा देने के प्रयासों के तहत बीते चार वर्षों के दौरान राज्य में सरकारी क्षेत्र में तकनीकी महाविद्यालय, एक फार्मेसी महाविद्यालय, 5 बहुतकनीकी संस्थान, 34 औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थान प्रारंभ किए गए हैं। इसके अलावा केन्द्रीय सरकार की सहायता से नाहन में भारतीय प्रबंधन संस्थान, उना भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, सोलन जिला के बद्दी में केन्द्रीय प्लास्टिक अभियांत्रिकी एवं प्रौद्योगिकी संस्थान व शिमला जिले में बसन्तपुर में राजकीय बहुतकनीकी संस्थान तथा रेहन में महिला बहुतकनीकी संस्थान शैक्षणिक सत्र 2017-18 से शुरू किया जा रहा है। इस वित वर्ष में तकनीकी शिक्षा के लिए सरकार ने 220 करोड़ का बजट प्रावधान किया गया है।

चिकित्सा

स्वास्थ्य छत्र की सुरक्षित छांव

◆ विवेक शर्मा

हिमाचल ने स्वास्थ्य तथा शिक्षा के क्षेत्रों में असाधारण प्रगति की है तथा आज हमारा प्रदेश समूचे भारत में स्वास्थ्य सुविधाओं की उपलब्धता एवं गुणवत्ता में एक शीर्ष राज्य के रूप में तेजी से उभरा है। स्वास्थ्य सेवाओं के क्षेत्र में यह अभूतपूर्व विकास एवं विस्तार वर्तमान सरकार की इस महत्त्वपूर्ण क्षेत्र की ओर प्रतिबद्धता का प्रतिबिंब है जिसके फलस्वरूप हिमाचल आज देश का एक ऐसा राज्य है जो अपने सकल घरेलू उत्पाद का 1.43 प्रतिशत स्वास्थ्य पर खर्च कर सर्वोत्तम सुविधाएं अपने नागरिकों को प्रदान करता है तथा प्रति व्यक्ति 26 हजार रुपये स्वास्थ्य प्रसार पर व्यय करता है।

सरकार ने पिछले चार सालों के दौरान अनेक स्वास्थ्य सुविधाएं जनता को उपलब्ध करवाई हैं जिनके अंतर्गत 290 करोड़ रुपये की लागत से सुराला (चम्याना) शिमला में एक अति विशिष्ट चिकित्सा खंड स्थापित किया जा रहा है जिसमें 283 बिस्तर तथा 9 शल्य कक्ष होंगे। सरकार ने इस वर्ष स्वास्थ्य एवं चिकित्सा शिक्षा के लिए 1720 करोड़ रुपये का बजट प्रावधान किया है। सरकार ने 'हिमाचल प्रदेश सार्वभौमिक स्वास्थ्य देखभाल योजना' शुरू की है जिसका लाभ लेने के किसी भी श्रेणी के व्यक्ति को एक दिन का एक रुपया तथा वर्ष का 365 रुपये देने होंगे जिसके तहत व्यक्ति को 30 हजार रुपये की निःशुल्क चिकित्सा उपलब्ध होगी।

वर्तमान में प्रदेश में प्रति 2290 व्यक्ति एक स्वास्थ्य संस्थान उपलब्ध है। प्रदेश सरकार के कार्यकाल में 30 नए नागरिक अस्पताल, 35 सामुदायिक स्वास्थ्य केंद्र खोले गए एवं स्वास्थ्य संस्थानों का उन्नयन लगातार किया जा रहा है। हाल ही में प्रदेश सरकार ने नेरचौक में आयुर्विज्ञान विश्वविद्यालय खोलने की घोषणा की है। सरकार के वर्तमान कार्यकाल में प्रदेश को नाहन, चंबा व हमीरपुर में मेडिकल कॉलेज स्वीकृत करवाए गए जिनमें से नाहन मेडिकल कॉलेज को वर्ष 2016 में कार्यशील बना दिया गया है। ई.एस.आई.सी. मेडिकल कॉलेज नेरचौक का अधिग्रहण कर इसे इस वर्ष आरंभ करने के प्रयास किए जा रहे हैं। वहीं बिलासपुर में एम्स की स्थापना के लिए प्रभावी कदम उठाए गए हैं।

हिमाचल चिकित्सा अधोसंरचना एवं सुविधाएं उपलब्ध करवाने में अन्य राज्यों के लिए एक आदर्श बनकर उभरा है। हिमाचल प्रदेश जैसे पहाड़ी राज्य की कठिन भौगोलिक परिस्थितियों के दृष्टिगत रोगियों एवं घायल व्यक्तियों को समय पर चिकित्सा सहायता उपलब्ध करवाने के लिए राज्य में '108' के नाम से लोकप्रिय सेवा का अभूतपूर्व योगदान रहा है तथा इसी के मद्देनज़र वर्तमान कार्यकाल में इस बेड़े का विस्तार करते हुए इसकी संख्या को बढ़ाकर 321 किया है जो प्रदेश के हर कोने में लोगों को आपातकालीन सेवाएं प्रदान कर रहा है। वर्तमान कार्यकाल में जननी एक्सप्रेस '102' शुरू की गई है जिसके तहत प्रदेश में 126 से अधिक वाहन विभिन्न अस्पतालों में तैनात किए गए। प्रदेश के हर स्वास्थ्य संस्थान में 56 किस्म की जीवन रक्षक दवाइयां मरीजों को निःशुल्क उपलब्ध कराई जा रही है। सरकार ने 'मुख्यमंत्री क्षय रोग निवारण योजना' आरम्भ की है जिसके तहत वर्ष 2021–22 तक हिमाचल प्रदेश को क्षय रोग मुक्त करने का लक्ष्य रखा गया है। प्रदेशवासियों को आधुनिक चिकित्सा सेवा प्रदान करने के वर्तमान सरकार ने धर्मशाला, कुल्लू, मंडी तथा सोलन में डायलिसिस सेवाएं आरंभ की हैं। नवजात शिशुओं के लिए प्रदेश के 120 प्रसव केन्द्रों में नवजात देखभाल केंद्र स्थापित किए गए। प्रदेश में अब शिशु मृत्यु दर प्रत्येक हजार जन्म पर 35 से घटकर 28 हो गई है।

प्रदेश सरकार के वर्तमान काल में जहां शिमला में पं. दीनदयाल उपाध्याय अस्पताल में 28 करोड़ रुपये की लागत से नया भवन तैयार किया है, जिससे लोगों को अत्याधुनिक स्वास्थ्य सुविधाएं प्राप्त होंगी। जनजातीय क्षेत्रों की कठिन भौगोलिक परिस्थितियों को समझते हुए व किन्नौर तथा लाहौल स्पीति क्षेत्र के लोगों को विशेषज्ञ स्वास्थ्य सुविधाएं सुलभ बनाते हुए हिमाचल सरकार ने टेलीमेडिसन परियोजना के द्वारा



इन लोगों को लाभान्वित किया है।

हिमाचल में विशाल औषधीय संपदा की उपलब्धता को देखते हुए भारतीय चिकित्सा पद्धति तथा होम्योपैथी का हिमाचल प्रदेश की स्वास्थ्य देखभाल प्रणाली में एक महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है। वर्तमान में राज्य में 3 आयुर्वेदिक अस्पताल, 1,113 आयुर्वेदिक चिकित्सा केंद्र, 14 होम्योपेथिक स्वास्थ्य केंद्र व 3 यूनानी स्वास्थ्य केंद्र हैं। चार वर्षों के दौरान राज्य में 38 नए आयुर्वेदिक स्वास्थ्य केंद्र खोले गए। प्रदेश के दूरवर्ती क्षेत्रों और बेहतर स्वास्थ्य सुविधाएं प्रदान करने के लिए सरकार ने वर्तमान बजट में इस क्षेत्र को 244 करोड़ रुपये की राशि आवंटित की है।

वर्तमान सरकार द्वारा उपलब्ध करवाई जा रही स्वास्थ्य सुविधाओं के परिणामस्वरूप प्रदेशवासियों को लाभ हुआ है तथा उन्हें श्रेष्ठ स्वास्थ्य सुविधाएं उपलब्ध हो रही हैं।

संस्कृति

लोक संस्कृति की बहुमूल्य धरोहर
पारंपरिक लोकगायन 'जत्ती'

◆ आचार्य परमानंद बंसल

संगीत एक ऐसी आकर्षक कला है जो आदि काल से अध्यात्म की पृष्ठ भूमि पर अंकुरित होकर एक लम्बी यात्रा तय करते हुए शुद्ध, पवित्र सरिता की भांति निरन्तर प्रवाहमान है। यह कहना उचित है कि जब आदि मानव को भाषा का उचित प्रयोग करना नहीं आया था, संगीत का अस्तित्व तभी से रहा है। हड़प्पा के उत्खननों में प्राप्त नृत्यरत, वाद्य-वादन व गायन मुद्राओं में प्राप्त खण्डित मूर्तियां इस साक्ष्य को प्रमाणित करती हैं कि संगीत तत्कालीन समाज की जीवन शैली में व्यवहारित रहा होगा अर्थात ऐसी मूर्तियों का निर्माण संगीत प्रिय सभ्यता के अन्तर्गत ही हो सकता है।

शास्त्रों के अनुसार हमारे यहां 64 कलाएँ मानी जाती हैं। इनमें संगीत सबसे जनप्रिय व हृदय को तत्काल प्रभावित करने वाली कला और सृष्टि के समान आदि व अनन्त है। निरन्तर जीवित रहने वाली यह कला भारतीय संस्कृति व जीवन प्रणाली का अभिन्न अंग है। वेद, पुराणों में वर्णित है कि सृष्टि रचना का कारण नाद, नाद से ओउम और ओउम सृष्टि के कण-कण में विद्यमान है।

शास्त्रों में वर्णित उतराखण्ड जहां पर ऋषि-मुनियों ने शंकर भगवान एवं ईश्वर की कठिन तपस्या कर के मनचाहा वर अथवा शाप देने की क्षमता पाई, जहां पर पाण्डवों ने अज्ञात वास में भ्रमण किया, जो महर्षि व्यास, जमदाग्नि, विशिष्ट, मार्कण्डेय तथा परशुराम जैसे मुनियों द्वारा तपस्या करने के लिए रमणीक स्थान रहा जहां के प्रत्येक मानव के शरीर में नृत्य की थिरकन है, लोच है, कण्ठ में गान है जहां पर दुन्दभी, ढोल, तुरही, करनाल, शहनाई अपने मधुर स्वरों की ध्वनि से पहाड़ों को गुंजित करते हैं, यही है स्वतन्त्रता के बाद का छोटी-बड़ी रियासतों के एकीकरण से उद्‌घाटित वर्तमान के 12 जनपदों का हिमाचल प्रदेश। हिमाचल रूपी इस विशाल सागर की खोज करने की अपार सम्भावनाएं यहां उपलब्ध है। इसी प्रकार यदि यहां की कला संस्कृति की ओर जिज्ञासा भरी दृष्टि से देखा जाए तो बहुत सी प्राचीनतम जानकारी प्राप्त हो सकती है और कला संस्कृति सम्बन्धि असंख्य ग्रंथ लिखे जा सकते हैं।

हिमाचल प्रदेश अपनी बहुरंगी सांस्कृतिक व सांगीतिक परम्पराओं की बहुमूल्य धरोहर के कारण विख्यात है। प्रदेश के 12 जनपदों में अलग-अलग संस्कृति का अनवरत विस्तार हुआ है। इनके अनवरत समावेश से यहां की संस्कृति अनुपम निधि के रूप में हमारे समक्ष है। यहां अनेक लोक गीत शैलियां व लोक गीतों के निबद्ध और अनिबद्ध प्रकार प्रचलित है जिनमें लोका, बामणा रा छोरु, झूरी, लामण, गंगी, ठामरु, बींची, माल, एंचली, कुंजड़ी मल्हार, मुसाधा, नाटी आदि-आदि राष्ट्रीय स्तर पर भी प्रदेश का प्रतिनिधित्व करते हैं। जहां एक ओर भौगोलिक व भाषाई विविधता के कारण सांस्कृतिक परम्पराओं की अकल्पनीय झलक यहां की जीवन शैली से साक्षात करवाती है वहीं पर पर्व, त्योहार, मेले, उत्सवों के आयोजनों से जुड़े अनेक मिथक, दंत कथाएं, यहां की संस्कृति में देखने को मिलती हैं। ये दंत कथाएं कितनी सत्य व गलत है इस बारे में प्रमाणों सहित कुछ नही कहा जा सकता। पग-पग पर देवी देवताओं के स्थलों (थापने या थान) पर जनमानस की अगाध श्रद्धा जहां लोक मानस को व्यवस्थित जीवन जीने की प्रेरणा प्रदान करते हैं वहीं पर इन देवी देवताओं का भय इन्हें व्यभिचारी जीवन जीने से भी रोकता है। कुल देवता, ग्राम देवता, क्षेत्र देवता की संस्तुति के बिना कोई कार्य नहीं होता। लोकमानस इन देवी देवताओं से बेहिचक सम्वाद करते हैं। अन्न-धन-दूध-पूत (चारों पदार्थ) में देवता का हिस्सा अनिवार्यतः देव स्थलों पर अर्पित किया जाता है। सार रूप में हिमाचल वासियों का लोक जीवन धर्म की सुदृढ़ नींव पर ढला है। धर्म इनके जीवन का बल और सम्बल है। यहाँ की लोक कलाओं में कहीं-न-कहीं कोई न कोई धर्म का तत्त्व अवश्य मिलता है।

अपने आँचल में लोक संगीत का अनमोल खजाना समेटे हिमाचल की मनोरम वादियां सदैव ही अपनी कला एवं विविध सांस्कृतिक शैलियों के कारण विश्व विख्यात रही है। लोक वाद्यों से निकलते मनमोहक स्वर जहां चलते पथिक के पगों को विराम लगा देते हैं वहीं लोक गायक प्राचीन विरासत को अपने वंशजों के माध्यम से पीढ़ी-दर-पीढ़ी हस्तांतरित कर लोक गायन शैलियों के परचम को फहराए हुए है। लोक संगीत की इस सरस रस धारा में मण्डी जनपद में प्रचलित भक्ति रस से ओत प्रोत जत्ती गायन

परम्परा की शिवरात्री के अवसर पर विशेष धूम रहती है। जिला मण्डी के करसोग क्षेत्र में शिवरात्री के समय शैव परम्परा के जो धार्मिक गीत गाए जाते हैं उन्हें जत्ती गीत कहा जाता है। सर्वेक्षण से ज्ञात होता है कि जत्ती गीत मण्डी के अतिरिक्त चम्बा, कुल्लू, सोलन, शिमला के क्षेत्रों में भी गाए जाते है परन्तु वहां इन गीतों को अलग-अलग नामों से जाना जाता है। चम्बा में ऐंचली, शिमला व सोलन में आंचली गीत जती गीतों के सदृश्य परिलक्षित होते हैं। यह गायन परम्परा अत्यन्त प्राचीन व लोक जीवन से घनिष्ठ सम्बन्धित रही है।

जत्ती

जती शब्द संस्कृत के 'यति' से लिया गया प्रतीत होता है जिसका अर्थ है योगी। हिन्दी शब्द कोश में जती व यति दोनों शब्दों को समानार्थी बतलाया गया है। दोनों का अभिप्राय जितेंद्रिय, संन्यासी, धर्म पुरुष व सन्यास से सम्बन्धित है। लोकाचरणानुसार जो ऋषि भगवान शिव की स्तुति करते हुए समस्त देवों की भक्ति करें उसे यति कहा गया है। शिवपुराण में भी ऋषि मुनियों के लिए यति शब्द का उल्लेख मिलता है। लोकमान्यता है कि भगवान राम के चौदह वर्ष के बनवास के समय लक्ष्मण ने पूरे बनवास काल में भक्ति स्वरूप पलक तक नहीं झपकी थी। लक्ष्मण की पत्नी उर्मिला ने भी 14 वर्षों तक लक्ष्मण के आगमन की प्रतीक्षा करते हुए कठोर भक्ति और तपस्या की थी। इसी भक्ति की गहनता को यति कहा गया है। कालान्तर में ग्रामीण पर्वतों, देवाल्यों में रहने वाले संत- महात्माओं रिद्धि-सिद्ध ऋषि मुनियों के बाद जब ग्राम्य जन अपने आराध्य देवों की आराधना में गेय इन भक्ति गाथाओं का ग्रामीण भाषाओं में बखान करने लगें तो यह यति शब्द अपभ्रंश होकर जती कहलाया और प्राचीन समय से आज तक प्रचारित रहा।

कुछ मताबिल्मबि क्षेत्रीय भाषा की दृष्टि से जत्ती शब्द को जद्दी का अपभ्रंश मानते हैं। वे जद्दी का अर्थ पुरातन मूल सम्पदा (सम्पति) मूल या प्राचीन से लेते हैं अर्थात प्राचीन से चली आ रही परम्परा जद्दी है। जो समय प्रवाह के साथ बदल कर जत्ती नाम से जानी जाने लगी है। सर्वेक्षण से ज्ञात होता है कि यद्यपि जती गायन की उत्पति के विषय में मुख्य तीन मत हैं तथापि सभी मतानुयायी जत्ती गायन की उत्पत्ति व स्रोत भगवान से व भगवान की विभिन्न लीलाओं को मानते हैं।

प्रथम मत के अनुयायियों का कहना है कि जत्ती गायन परम्परा भगवान श्री राम से हुई। जब भगवान श्री राम वनवास के लिए जा रहे थे तो अयोध्या वासी विलाप करते हुए रानी कैकयी को कोसने लगे। सभी दुखीजनों की दुर्दशा को गाकर सुनाने लगे। आगे चलकर यही गीत जब क्षेत्रीय भाषाओं में विस्तार पाने लगे तो इन्हे 'जत्ती' गीत कहा गया। लोक मान्यतानुसार जब राम लंका पर चढ़ाई करने वाले थे तो उन्होंने लक्ष्मण को बुलाकर कहा कि किसी श्रेष्ठ पंडित को बुलाया जाए, लंका पर चढ़ाई करने के लिए सही मुहूर्त निकालना है। दन्त कथानुसार साही देव ब्राह्मण को बुलाया गया और उसने युद्ध के लिए सही मुहूर्त के बारे में जो कुछ कहा गीत की निम्न पंक्तियों में दृष्टव्य है।

शादे वे आणे हेरा साहे देवा पण्डता
हेरे वे पण्डता पतरा सांचा लंका लै जुद्ध जुडाणा वै
पहला जुद्ध जुड़ा हनुमाने नफरा, लंका जुड़ा राक्षा लै
दुजा जुद्ध जुड़ा लक्ष्मणा जतीया, लंका जुड़ा मेघ वै नाथा लै
तीजा जुद्ध जुड़ा रामाचन्द्रा, लंका जुड़ा दशी सिरे राजै लै।

उपरोक्त पंक्तियों में वर्णित है कि राम जी पंडित को युद्ध मुहूर्त निकालने को कहते हैं। पंडित कहता है "हे प्रभु प्रथम युद्ध हनुमान सेवक व राक्षसों का, दूसरा युद्ध लक्ष्मण योगी व मेघनाथ तथा तीसरा युद्ध रामचन्द्र व दस सिर वाले का होगा जिसमें विजय रामचन्द्र की होगी। आज भी रामायण के प्रत्येक प्रसंग का क्षेत्रीय भाषा में रामचन्द्र की जत्ती के रूप में गायन होता है।

दूसरे मत के अनुसार जत्ती गीतों की उत्पति श्री कृष्ण जन्म से मानी जाती है। श्री कृष्ण के जन्म के बाद वासुदेव श्री कृष्ण को कंस के भय से गोकुल में छोड़ देते हैं। उनके जन्म का समाचार तीनो लोकों में फैल जाता है। भगवान शंकर पार्वती से कहते है कि मै भगवान के दर्शन करने गोकुल जाता हूँ। गोकुल में चारों ओर खुशी का वातावरण है। गोकुल वासी कृष्ण जन्म की खुशी में गीत गाने लगे और भगवान शिव नृत्य करने लगे। जत्ती गायन की निम्न पंक्तियां इस ओर सपष्ट संकेत करती है।

द्वारे नंदो रे शिवजिए नाद बजाया-2
नंद महल ते आई नन्द राणी
मोतिए थाल सजाया
जा जोगी तू जा घर आपणे
तैं मेरा बालक डराया

शिवजिए नाद बजाया
क्या करनी तेरी दौलत दुनिया
क्या करनी तेरी माया
पुत आपणे रा दर्श कराई दे
लाल आपणे रा दर्श कराई दे
शिव दर्शन को आया शिवजिए नाद बजाया

भावार्थ- नंद महल में जैसे ही शिवजी ने नाद बजाया, नंद महल से नंद रानी मोतियों का थाल अर्पित करते हुए कहती हैं कि हे योगी तुम अपने घर चले जाओ तेरी उपस्थिति से मेरा नन्हा बालक भयभीत हो रहा है। प्रत्युत्तर में शिवजी मोतियों की ओर इशारा करते हुए कहते हैं कि मैं तो जत्ती हूँ मुझे इस दौलत, दुनिया व माया से क्या लेना देना। अपने लाल के दर्शन करवा दो, मैं तो केवल और केवल श्री कृष्ण के दर्शन करने आया हूँ।

उस समय के इन गीतों को ही वर्तमान समय में कृष्ण लीलाओं से जोड़कर कृष्ण की जती कहा जाता है।

तीसरे मत के अनुयायी जत्ती की उत्पत्ति भगवान शंकर से मानते हैं। माता सती ने पार्वती के रूप में जन्म लिया। भगवान शंकर के विवाहोत्सव में जो गीत गाए गए उन्हें जत्ती गीत कहा गया। जिस प्रकार दीपावली भगवान राम के अयोध्या लौटने की खुशी में मनाई जाती है उसी प्रकार शिवरात्रि भी शिव-पार्वती के विवाह के उपलक्ष्य में मनाई जाती है। एक सीमा तक यह मानना उचित है कि जत्ती गायन की विषय वस्तु भगवान शिव की क्रिड़ाओं से जुड़ी है। इसका प्रथम कारण है कि जत्ती का शाब्दिक अर्थ योगी होता है और भगवान शंकर योगी है। युगों तक वे समाधि में लीन रहते हैं। दूसरा कारण यह भी है कि जत्ती गायन शिवरात्रि में होता है। तीसरा कारण यह है कि जत्ती गायन मुख्यतः शिव पार्वती के विवाह से शुरू होकर सभी क्रीड़ाओं और घटनाओं का वर्णन करता हुआ समाप्त होता है। शिव लीला से सम्बन्धित इन जत्ती गीतों को शिवजी की जती कहा जाता है इसमें शिवजी को 'सैंई' के नाम से पुकारा जाता है।

जत्ती गायक मोती राम के अनुसार एक बार पार्वती व शिवजी में तकरार हो जाती है। भगवान शंकर पार्वती को छोड़कर चले गए। बारह वर्षो तक उनका कोई अता-पता नही चला तो लोगों ने उन्हे मृत जानकर उनकी तेहरवीं (क्रिया) का आयोजन किया। उसी समय भगवान शंकर वहां प्रकट हो गए तथा तेहरवीं की सामग्री को शिवरात्रि पूजा मण्डप में परिवर्तित कर दिया। ऐसी मान्यता है कि उसी दिन से शिवरात्री मनाई जाने लगी। निम्न जत्ती गायन इस ओर संकेत करता है।

सैंये पोरो राजा वे पाओणा आया, सैंय राजा भाड़े पाओणा आया।

सदा शिवा लै महारे अरघ देणा, पार्वती ले वै कलश लाणा।

न्यूड़ी सैरे फूले म्हारै कामटे डाड़े चुगें बीणेया आणे म्हारे करंड़ो भरे।

न्यूड़ी सेरै फूले म्हारै पाजै रे डाड़े चुगें बीणेया आणे म्हारे करंडो भरे।

पहली बार शिवरात्रि किसने मनाई इस सन्दर्भ में लोक व्यवहार में प्रचलित जत्ती का वर्णन

पहले शवात्रा कूणी पुरुषे लाए गौ
पहले शवात्रा बौणे लाए गुआलूए
किजुरा मण्डला किजुरा दिया गौ
काऊणी रा मण्डला जोखटी रा दिया गौ

अर्थात पहली शिवरात्रि जंगल में गवालों ने मनाई और उस समय मण्डल (पूजा मण्डप) काऊणी (अनाज की एक किस्म) का तथा दीये (दीपक) जोखटी (चीड़ की बिरोजायुक्त लकड़ी) के बनाए।

शिवरात्रि का त्योहार न केवल हिमाचल प्रदेश अपितु भारत वर्ष के कोने-कोने में मनाया जाता है परन्तु शिमला, मण्डी, कुल्लू, किन्नौर जनपदों के ऊपरी सीमावर्ती क्षेत्रों में शिवरात्रि को मनाने का अपना एक अलग ढंग है। सभी वर्गों के लोग बड़ी भक्ति व श्रद्धा भाव से शिवरात्रि के लिए वर्ष भर बचत करते है। एक महीना पहले ही तैयारियों में जुट जाते है। जत्ती गायन भी एक माह पूर्व आरम्भ हो जाता है। गाँव के लोग एक दूसरे के घरों में जाकर अपने प्राचीन वाद्य यन्त्रों के साथ गायन, वादन व नृत्य करते हैं। सभी अपने-अपने घरों में जती गायन करवाना शुभ मानते है और अनिवार्यतः जत्ती गायन करवाते हैं। जब तक सभी घरों में जती गायन पूरा नही हो जाता तब तक (करीब महाशिवरात्रि तक) इसी तरह जत्ती गायन चलता रहता है। लोगों का मानना है कि शिवरात्रि के दिन भगवान शिव का विवाह हुआ सभी ग्रामीण लोगों ने अपनी प्रसन्नता व्यक्त करने के लिए विवाह गीत गाए तथा शिव पार्वती के प्रसंगो और अन्य क्रियाओं का वर्णन जत्ती गीतों में किया। इन जत्ती गीतों की विशेषता है कि जो वर्णन जत्ती गायन में होता है उन्ही अर्थों व भावों के आधार पर वादन और नृत्य भी किया जाता है। रोचक बात यह है कि कई-कई दिनों तक गायक वादक बिना रुके पूरी-पूरी रात इन गीतों का गायन करते है। शिवरात्रि की दूसरी सुबह पूरे जोश, ठेठ खान-पान, घोटे की मस्ती के साथ जती गायन समाप्त किया जाता है। शिवरात्रि के बाद इन गीतों के गायन को अगले वर्ष तक विराम दे दिया जाता है। शिवरात्री के बाद इन गीतों का गायन निषेद्ध माना जाता है। ऐसा करना किसी अशुभ का द्योतक माना जाता है।

शिवरात्रि से तीन दिन पूर्व को चोवाओका, दो दिन पूर्व को चौओका तथा एक दिन पूर्व को आओका तथा शिवरात्रि वाले दिन को साजरी शवरात कहते हैं। खाने में भल्ले, बाबरू भांति-भांति के व्यंजन बनाकर गाँवों में एक दूसरे को बांटते व खिलाते हैं। गाँव

में बकरे काटने की प्रथा भी है। जत्ती गीतों में बकरे काटने का वर्णन होता है।

शुणे गरजे तूँ मेरा तमाशा
खाडू बाकरे री लाई देऊ ल्हासा

आटे के बकरे बनाकर उन्हें तेल में पकाकर अन्य पकवानों सहित भगवान शंकर के पास पूजा में रखे जाते है। शिवरात्रि के दूसरे दिन को बाई शबरात कहते है। बाई शबरात के दिन बहन बेटियों के घर ''नरहलू'' ले जाने की प्रथा है। नरहलू में बाबरु, भल्ले, मालपूड़े, आटे के बकरे आदि ले जाने की प्रथा है।

मण्डल च्दो (चन्दूआ) और महादेव की पूजा

शिवरात्रि के दिन प्रातः काल ग्रामीण लोग स्नानादि से निवृत्त होकर व्रत रखते है। घर का प्रमुख सदस्य जिसे क्षेत्रीय भाषाओं में स्याणा, ठगड़ा, जबरा आदि-आदि नामों से जाना जाता है वह दो और मण्डल की तैयारी में जुट जाता है। वह प्रातः काल हाथ में करन्डू (टोकरी) लेकर पूजा हेतु सामग्री यथा कुपु (सन्तरे से मिलता जुलता फल जम्मटू) पाजा वृक्ष के पत्ते, कुब्श, द्रुब, फूल, जौ की पत्तियां, भांग की छाल, धंतूरे के पत्ते एकत्र करता है। इससे सम्बन्धित एक गीत :-

नीओड़ी बीड़ा फूल भाईयो पाजा रे डांडे
चूंगे बिणेया आणा करण्डो भरे।
नीओड़ी बीड़ा फूले भाईयो कुबश डान्डे
चूंगे बिणेया आणा करण्डो भरे।

कुपुओं की एक माला भांग की छाल की रस्सी के साथ तैयार की जाती है। उसमें विषम संख्या में कुप्पु गूंथे जाते है। प्रत्येक कुप्पु से पहले काले बकरे या भेड़ की ऊन लगाई जाती है। प्रत्येक कुप्पु के पश्चात् पाजे के पत्ते, कुब्श और पीले फूल लगाए जाते हैं। कुपुओं की इसी माला को 'च्दो' कहते है। इस च्दो को भगवान शंकर के अग्नि स्तम्भ के रूप में माना जाता है। लोक मान्यता है कि इसी अग्नि स्तम्भ में भगवान शंकर प्रकट होते है।

भगवान शंकर की पूजा के लिए मण्डल तैयार किया जाता है। यह मण्डल चावल से एक हाथ (डेढ फुट) लम्बा चौड़ा वर्गाकार बनाया जाता है। इसके अन्दर नौ विभाग बनाए जाते हैं। प्रत्येक विभाग में कुल देवता, ग्राम देवता, स्थान देवता आदि समस्त देवताओं का वास माना जाता है। यह मण्डल घर के किसी एक कमरे में दाहिने कोने में स्थापित किया जाता है। इस मण्डल के मध्य भाग में माश के दाने रखकर उपर एक कुप्पु स्थापित किया जाता है जिसे ईश्र कहा जाता है। च्दो का एक सिरा कील के सहारे छत से लटकाया जाता है और दूसरा सिरा चावल के ऊपर रखे ईश्र से टकराता है। मण्डल के पीछे की ओर तीन रोट स्थापित किए जाते है तथा मण्डल के तीन किनारों में बाबरू रखे जाते हैं। पानी का कलश व सिंजिया (बड़ा दीया) चावलों के ढेरों पर स्थापित किया जाता है। सिंजिए को पूरी रात जलाए रखा जाता है इसलिए परिवार का सदस्य इसके पास पूरी रात बैठा होता है ताकि वह समय समय पर इसमें तेल डालता रहे। मण्डल को सजाने के लिए इसके विभागों में आटे के बकरे भल्ले, बाबरु, बकरे का कलेजा व मुण्डी स्थापित की जाती है। दीवार पर भगवान शंकर की तस्वीर लगाई जाती है। घर का मुखिया धोती लगाकर धूप, दीप, नैवेध अर्पित कर सर्वप्रथम महादेव की पूजा करता है और अपना व्रत तोड़ता है। मुखिया के बाद ही परिवार के अन्य सदस्य महादेव की पूजा करते हैं। खाना खाकर सभी सदस्य महादेव (च्दो) के पास बैठकर पूरी रात जत्ती गाते है, नृत्य करते है। प्रातः काल ब्रह्म मुहूर्त में महादेव को जुलूस की शक्ल में पूर्ण भक्ति व श्रद्धा भाव से जत्ती गीतों के गायन के साथ घर से बाहर निकाला जाता है उसे बरामदे के कोने या उचित पवित्र स्थान पर बाँध दिया जाता है।

यदि शिवरात्रि के दिन घर में बच्चा या गाए के बच्चा हो जाए तो उसे अत्यन्त शुभ व खुशहाली का प्रतीक माना जाता है और इस खुशी में तीन कुप्पुओं का एक छोटा सा च्दो तैयार किया जाता है और प्रत्येक वर्ष च्दो में एक कुप्पु की बढ़ोतरी होती रहती है। दुर्भाग्य से यदि इस दिन घर में किसी की मृत्यु हो जाए तो च्दो परिवार के सदस्यों द्वारा नहीं अपितु गांव के किसी व्यक्ति या धी-ध्याण (ब्याही हुई बेटी के पक्ष द्वारा) लगाया जाता है।

संगीत विभाग, हि. प्र. विश्वविद्यालय,
समरहिल, शिमला–171 005



आलेख

जल जीवन का आधार
इस अनमोल संपदा को कैसे बचाएं

◆ प्रकाश गौतम

हर वर्ष अप्रैल महीना शुरू होते ही पूरे भारत से सूखे के समाचार आने लगते हैं। रेडियो, टेलीविजन या अन्य प्रिंट मीडिया, हर ओर बस सूखे की ही चर्चा होती है। जब बरसात में सब कुछ ठीक ठाक लगने लगता है तो लोग सूखे को भूल जाते हैं।

यूं तो चाहे शिमला हो या चंडीगढ़, दिल्ली हो या चेन्नई। हर नगर कस्बे में पूरा साल भर ही पानी के नलकों के आगे हरी, नीली, पीली प्लास्टिक की बाल्टियों की लाइनें लगी रहती है। घर में लगे नलों में तीसरे-चौथे दिन पानी आता है। बाहर गली मोहल्लों में पानी के टैंकर खड़े रहते हैं जहाँ अपनी बारी के लिए लोगों में मारा-पीटी होती रहती है। ऐसे भी दृश्य टेलीविजन पर सामने आए हैं जिनमें पानी भरने की बारी के लिए औरतें आपस में लात-घूंसे बरसाती हुई एक दूसरे के बाल नोचते हुए दिखाई दी।

पानी के बिना जीवन की कल्पना भी नहीं की जा सकती। धरती पर जो भी जीवन है, उसका आधार ही पानी है। इसी तथ्य को ध्यान में रख कर नासा सहित दुनिया भर के वैज्ञानिक ब्रह्मांड में ग्रहों और उपग्रहों पर जीवन की खोज कर रहे हैं।

हमारी धरती पर लगभग तीन चौथाई पानी है और एक चौथाई जमीन। पानी अधिकतर महासागरों, सागरों, झीलों, ग्लेशियरों, नदियों, तालाबों, झरनों, और जमीन के नीचे सतही पानी के रूप में है। महासागरों, सागरों का पानी खारा है जो पीने और सिंचाई के योग्य नहीं है। बहुत सी झीलें भी खारे पानी वाली है। भारतवर्ष में उड़ीसा राज्य में चिलका झील और राजस्थान में साँभर झील खारे पानी की झीलें हैं। धरती पर मीठा पानी मात्र 2.5 प्रतिशत ही है। मीठे पानी के सबसे बड़े स्रोत ग्लेशियर अथवा हिमनद है। हिमनद अधिकतर उत्तर ध्रुवीय आर्कटिक, दक्षिण ध्रुवीय अंटार्कटिक क्षेत्रों तथा हिमालय, आलप्स, एंडीज सहित अन्य ऊंची-ऊंची पर्वत मालाओं पर स्थित है। नदियों, झरनों, मीठे पानी की झीलों और वातावरण में धरती पर उपलब्ध पानी का 0.3 प्रतिशत से भी कम पानी है।

सड़कों पर वाहनों की संख्या में हजारों गुणा बढ़ोतरी हुई है जिनसे उत्सर्जित होने वाले धुएँ, कार्बन डाई-ऑक्साइड, सल्फर-डाइऑक्साइड आदि घातक योगिकों ने वातावरण में ग्रीन हाऊस जैसे कुप्रभाव उत्पन्न किए हैं। धरती का तापमान बढ़ने से अल-नीनों और ला नीना जैसे प्रभाव उत्पन्न हुए हैं।

पिछले पचास वर्षों में अंधाधुंध औद्योगीकरण के चलते धरती के वातावरण का तापमान कई डिग्री सेल्सीयस बढ़ा है। ऐसा होने के कारण ग्लेशियरों के पिघलने की दर तेज हुई है। ग्लेशियरों का क्षेत्रफल सिकुड़ा है। भारत में गंगोत्री ग्लेशियर सिकुड़ कर आधा रह गया है। इस कारण एक ओर जहां नदियों का पानी कम हुआ है, वहीं दूसरी ओर मॉनसून और सीजनल वर्षा के ऊपर भी वातावरण का प्रतिगामी असर पड़ा है। नदियों का जलग्रहण क्षेत्र कम हुआ है। कुछ नदियां तो सीजनल बन कर रह गई है जिनमें शरद ऋतु के अंत से लेकर ग्रीष्म ऋतु के अंत तक बालू, कंकड़ और पत्थर ही दिखाई देते हैं।

शहरों में जनसंख्या में कई गुणा बढ़ोतरी हुई है। इस कारण शुद्ध पानी की मांग शहरों में बढ़ी है। दूसरी ओर शुद्ध पानी की आपूर्ति कम हुई है।

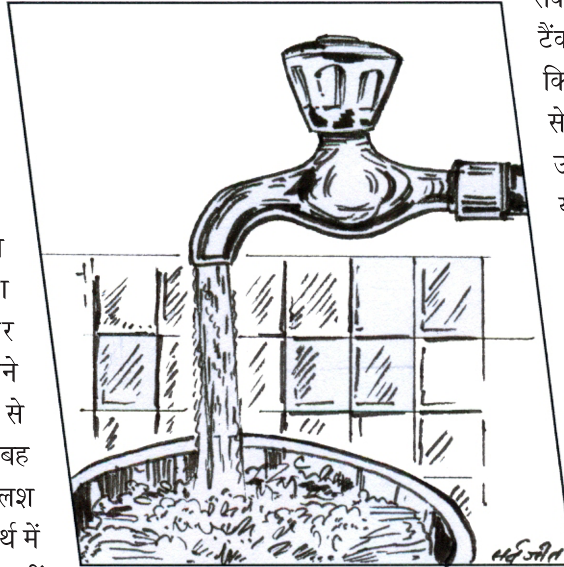
ग्रामीण क्षेत्रों में भी जीवन शैली में परिवर्तन और कृषि के लिए पानी की भारी मांग के चलते सतही भू-जल का अंधाधुंध दोहन हुआ है। इस का परिणाम यह हुआ है की देश के अधिकतर हिस्सों में सतही पानी का स्तर बहुत नीचे चला गया है। अब बहुत गहराई तक कुएं खोदने पड़ते हैं तब जा कर पानी निकलता है। जो पानी निकलता भी है वह खारा होता है और पीने योग्य नहीं होता है। इस बात का साफ पता उस समय चलता है जब हम ऐसे पानी को हाथ धोने या नहाने के लिए प्रयोग करते हैं। ऐसे पानी से साबुन या डिटेर्जेंट झाग नहीं बनाता। उल्टे, शरीर पर चिपचिपा पदार्थ जम जाता है।

पानी की बरबादी का एक बड़ा कारण पाईपों और टंकियों से होने वाला जल रिसाव है। उदाहरण के रूप में यदि किसी घर की 1000 लीटर क्षमता की टंकी से यदि बूंद-बूंद रिसाव हो रहा हो तो वह चौबीस घंटे में खाली हो जाएगी। रिसाव यदि धार के रूप में है तो पाँच-छह घंटे में टंकी खाली हो जाएगी। हम देखते हैं कि जगह-जगह पानी की पाईपों से फव्वारे छूटते रहते हैं। इससे होने वाली पानी की बरबादी का अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है।

कुछ ऐसे भी मामले सामने आए हैं जब जल आपूर्ति के कार्य में लगे कुछ कर्मचारी होटलों इत्यादि को सामनी से अधिक पानी की आपूर्ति करते रहते हैं और आम जनता को कम पानी छोडते

हैं। जब से शहरों और गाँव में फ्लश शौचालय बने हैं, तब से पानी का अंधाधुंध प्रयोग बढ़ा है। पहले तो शहरों तक ही फ्लश शौचालय सीमित होते थे। धीरे धीरे छोटे कस्बों और गाँव तक इनका चलन बढ़ा हैं। यह अच्छी बात है कि शौचालयों के इस्तेमाल से बाहर खुले में गंदगी नहीं फैलती और इससे महामारियाँ नहीं फैलती। फ्लश शौचालयों के इस्तेमाल से जीवन शैली भी आसान हो जाती है। सुविधा भी होती है और समय की भी बचत होती है।

पर यहाँ यह बात उल्लेखनीय है कि पीने और अन्य आवश्यक उपयोग के लिए इतना पानी खर्च नहीं होता जितना फ्लश शौचालयों से मल बहाने के लिए। उदाहरण के लिए मान लीजिये किसी एक व्यक्ति को आदर्श परिस्थितियों में पीने, खाना बनाने और नहाने के लिए दिन में पचास लीटर पानी की आवश्यकता होती है तो मोटे तौर पर इन सब कार्यों के लिए चार बाल्टी पानी की आवश्यकता होती है। परंतु जब वही व्यक्ति शौचालय का इस्तेमाल करता है तो पूरे दिन में सौ लीटर पानी टॉइलेट में बहा देता है। कभी-कभी तो लोग मात्र थूकने के बाद ही आठ-दस लीटर पानी फ्लश से बहा देते हैं। इसका मतलब यह हुआ कि पीने और अन्य इस्तेमाल की लिए जितने पानी की आवश्यता होती है उस से अधिक पानी फ्लश शौचालयों में बह जाता है। बड़े-बड़े होटलों के फ्लश शौचालयों में तो इतना पानी व्यर्थ में बह जाता है कि अनुमान भी नहीं लगाया जा सकता। लोग घंटो शावर की बौछारों में नहाते रहते हैं। बाहर नुक्कड़ पर बच्चों और औरतों का झुरमुट सूखे नल को टुकुर-टुकुर निहारता रहता है। जब लोग पीने के पानी की बूंद-बूंद के लिए तरस जाते हैं तो फ्लश शौचालयों में अंधाधुंध पानी का इस्तेमाल करने का कोई औचित्य नहीं है।



पानी का एक बड़ा दुरुपयोग कपड़े धोने के लिए होता है। जब से वाशिंग मशीनों का प्रयोग शुरू हुआ है इनके द्वारा कपड़े धोने के लिए अंधाधुंध पानी का प्रयोग हो रहा है। कपड़े खँगालने के बाद इस पानी को घर में ही रिसाईकल कर के टॉइलेट में इस्तेमाल किया जा सकता है परंतु अधिकतर लोग ऐसा नहीं करते। पाँच-सात लोगों के परिवार की बात करें तो पानी कि खपत और बचत का अनुमान आप सवयं लगा सकते हैं। आप सोचिए कि यदि सब लोग पानी का ऐसा तर्कसंगत प्रयोग करने लगे तो हर शहर में पानी की आपूर्ति कितना सकारात्मक असर पड़ेगा।

यह सिद्धान्त केवल उन शहरों तक ही उपयोगी है जहां सरकारी स्तर पर एकीकृत सीवरेज प्रणाली उपलब्ध है। जहां लोगों ने अपने-अपने सेप्टिक टैंक बना रखे हैं, वहाँ साबुन और डिटर्जेंट युक्त पानी सैप्टिक टैंक में डालना उचित नहीं होगा।

फ्लश शौचालयों में फ्लश से बहाया जाने वाला पानी कोई सामान्य पानी नहीं होता। यह वह पानी होता है जिस की आपूर्ति सरकार के जल-विभाग और नगर निगमों और नगरपालिकाओं द्वारा की जाती है। इन के द्वारा पानी की आपूर्ति करने पर भारी भरकम रकम खर्च होती है। पानी को पीने योग्य बनाने में बहुत श्रमशक्ति लगती है, बहुत समय लगता है, बहुत बिजली का प्रयोग होता है, बहुत अधिक धन खर्च होता है और बहुत से संसाधन लगते है। फ्लश शौचालयों में पानी की खपत को रोकने के लिए बायो-टॉइलेट एक विकल्प हो सकता है। दूसरा विकल्प यह हो सकता है कि फ्लश शौचालयों और सेप्टिक टैंकों के डिजाईन में इस प्रकार परिवर्तन किया जाए कि मल विसर्जन के लिए कम से कम पानी की खपत हो। इस बात के ऊपर आई.आई. टीज और अन्य यूनिवर्सिटीयों में शोध करने की आवश्यकता है।

दूसरी ओर, फ्लश शौचालयों में वैकल्पिक प्रवाह जल की आपूर्ति किसी शहर में स्थानीय तौर पर ही पहले से प्रयोग हुए, किचन और नहाने से निकले पानी को सरकारी स्तर पर रिसाईकल कर के की जा सकती है। अभी तक न तो किसी राज्य सरकार ने इस बारे में सोचा है, न ही किसी रिसर्च करने वाले का ध्यान इस ओर गया है।

एक अन्य उत्तम व्यवस्था सरकारी स्तर पर यह हो सकती है कि पानी की आपूर्ति की दोहरी व्यवस्था लागू की जाए। अर्थात पीने के पानी की आपूर्ती अलग पाईप लाईनों द्वारा और कपड़े धोने और टॉइलेटस में इस्तेमाल होने वाले पानी की व्यवस्था अलग पाईप लाईनों द्वारा हो। इसके लिए अलग अलग स्टोरेज टंकिया रखनी पड़ेगी। प्रारम्भ में इस व्यवस्था को लागू करने पर भारी खरच आएगा पर बाद में इससे पीने के पानी की फिल्टरेशन और आपूर्ति के ऊपर बहुत कम लागत आएगी। पानी को संसाधित करने में खर्च होने वाली बिजली की भी बचत होगी। इस व्यवस्था का लाभ यह होगा कि लोगों को पीने और किचन मे प्रयोग हेतु प्रतिदिन पानी उपलब्ध हो सकेगा। जब हम सतही जल स्तर की बात कराते हैं तब मन में यह प्रशन उठता है कि जब इतनी बाढ़

आती है, बड़े-बड़े भू-भाग महीनों पानी में डूबे रहते हैं तब सतही जल का स्तर क्यों नहीं बढ़ता? इसका उत्तर है जमीन में कृत्रिम खादों का प्रयोग, औद्योगिक प्रदूषक योगिकों का जमीन में लगातार रिसाव उसे बंजर बनाता जा रहा है। इस से मिट्टी के रिसाव रंध्र अवरूद्ध हो जाते हैं। जमीन की निचली सतह सपाट पत्थर जैसी हो जाती है। जिस कारण बरसात के दिनों में बारिश व बाढ़ का पानी जमीन के अंदर शीघ्र नहीं रिसता और सतही भूजल के स्तर में बढ़ोतरी नहीं होती। बाढ़ और वर्षा का पानी जमीन के ऊपर-ऊपर से व्यर्थ बह जाता है।

जल-ग्रहण क्षेत्रों में अंधाधुंध निर्माण कार्यों से भी सतही जल के स्तर में कमी हुई है। जहां पहले परंपरागत तालाब होते थे, आज वहाँ मल्टी स्टोरी कालोनियां और भवन खड़े हैं। पहले आम तौर पर हर गाँव में एक या दो तालाब तो अवश्य ही होते थे पर वर्तमान में तालाबों का नामो-निशान मिटता जा रहा है।

जनसंख्या में बढ़ोतरी, आवासीय कालोनीयों के अंधाधुंध निर्माण, जीवन शैली में परिवर्तन, शहरीकरण के कारण पानी का बहुत अधिक जमीनी दोहन हुआ है। लाखों नए हैड पंप लगे हैं। भारत के कई शहर तो पानी की आपूर्ति के लिए पुरातन काल से ही सतही पानी के ऊपर ही निर्भर रहे हैं। सतही भू-जल का स्तर सामान्य से बीसियों फुट नीचे गिरा है। इससे पेय जल के लिए त्राही माम की स्थिति उत्पन्न हो रही है। सिंचाई के पानी की बात तो छोड़ ही दीजिये। अतः आज आवश्यकता इस बात की है कि परंपरागत पानी के संसाधनों की ओर भी ध्यान दिया जाए और इनका पुनरुद्धार किया जाए।

यह आवश्यक है कि ग्रामीण क्षेत्रों में चेक डैम बनाएं जाएं जिस से धरती के सतही जल स्तर में बढ़ोतरी हो सके।

पहाड़ी राज्यों जैसे हिमाचल प्रदेश, उत्तराखंड और जम्मू कश्मीर की बात करे तो 1990 से पहले बरसात के मौसम में पहाड़ी ढलानों से अचानक शुद्ध पानी के सोते धरती से फूट पड़ते थे जो चार-पाँच महीने तक बहते रहते थे। बावड़िया और कुएं पानी से लबालब भरे रहते थे। आज न तो पानी के सोते ही फूटते हैं, न लोग ही इस ओर अधिक ध्यान देते हैं। जो बावड़ियाँ और कुएं बचे भी हैं वे शैवाल और काई से भर गए हैं और मछरों के पनपने के अड्डे बन गए हैं। गांवों के लोग वर्ष में दो तीन बार मिल कर कुओं और बावड़ियों की सफाई करते थे पर आज नई पीढ़ी को तो यह भी पता नहीं कि क्या इन जल स्रोतों से क्या कभी उनके पूर्वज पीने के लिए और जीवन की अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए लिए पानी भरते थे।

हिमालयी राज्यों में पानी की कमी नही हैं पर पानी अधिकतर नीचे घाटियों में बहने वाली नदियों और खड्डों में है। अधिकतर गाँव और शहर ऊपरी क्षेत्रों में बसे हैं जैसे शिमला, मसूरी, नैनीताल आदि। नदियों और खड्डों से पानी को बिजली के पंप चला कर उठाना पड़ता है जिस पर भारी भरकम खर्च आता हैं। यहाँ लोगों की हालत पपीहे की तरह है। यदि दोहरी पानी की आपूर्ति व्यवस्था लागू होती है, जैसा कि ऊपर सुझाया गया है, तो शहरों में कम से कम चालीस प्रतिशत बिजली बचेगी जो अन्यत्र उपयोग में लाई जा सकती है। विभिन्न सरकारों का यह प्रशंसनीय कदम रहा है कि उन्होंने जल संसाधित और आपूर्ति करने के लिए एक अलग जल विभाग बना कर लोहे की पाईपों के जरिये घर-घर तक शुद्ध पानी की आपूर्ति की व्यवस्था की है। परंतु यह एक आदर्श स्थिति है और पानी के संसाधन इतने नहीं है कि हम अंधाधुंध, निरंतर, अनंतकाल तक उनका उपयोग कर सके।

भारत में अंधाधुंध औद्योगीकरण के चलते बड़े-बड़े शहरों से फैक्टरीयों से उत्सर्जित विषैले योगिकों से युक्त जल नदियों में बहाया जाता है। घरों से और आवासीय इकाइयों से निकलने वाला जल सीधे नदियों में बहाया जाता हैं जिस से नदियां गंदा नाला बन कर रह गई हैं। यमुना नदी इसका सबसे बड़ा उदाहरण है। यमुना के किनारे कभी भगवान श्री कृष्ण अठखेलियां करते थे, बांसुरी बजाते थे। अगर आज श्री कृष्ण होते तो बांसुरी बजाना तो दूर, शायद नाक पर रुमाल रख कर यमुना किनारे से निकलते।

मानव मल को नदियों में उत्सर्जित करने के बजाए इसका इस्तेमाल वैज्ञानिक ढंग से ट्रीट करके जैविक खाद बनाने के काम में भी हो सकता है। दुनिया के कुछ देशों जैसे डेनमार्क, फिनलैंड, नॉर्वे इत्यादि में मल को ट्रीट कर के सूखी ओर्गेनिक खाद बनाई जाती है। ऐसा करते समय जो मीथेन गैस निकलती है उससे बिजली पैदा की जाती है। भारत में भी उन देशों से प्रेरणा व अनुभव ले कर ऐसे प्रयोग किए जा सकते हैं।

जैविक खाद भारी मात्रा में बनाने पर रासायनिक खादों का प्रयोग कम होगा। लोगों की आर्थिक स्थिति बढ़ेगी। जमीन बंजर होने से बचेगी। ट्रीटमेंट प्लांटों से निकालने वाली यूरिया से रासायनिक खाद बनाई जा सकती है। अमेरिका में कुछ बेरोजगार युवा मल और घर के कूड़े-कचरे से जैविक खाद बना कर मालामाल हो गए हैं। ऐसी जैविक खाद बना कर वे बेच रहे हैं। वे लोग न केवल पैसा कमा रहे हैं बल्कि पर्यावरण के संरक्षण के लिए अपना अमूल्य योगदान कर रहे हैं। ट्रीटमैंट के पश्चात पानी को पुनः प्रयोग योग्य बनाया जा सकता है। इसे कृषि कार्यों में उपयोग में लाया जा सकता है। यह मात्र किसी सरकार का ही दायित्व नहीं है कि ऊपर सुझाए गए उपायों को अपनाएं। अपितु यह हर नागरिक का कर्तव्य है कि पानी के संरक्षण के लिए हर संभव उपक्रम करे। यदि आज हम पानी के लिए इतने त्रासित हो रहे हैं तो सोचिए दस-बीस वर्ष बाद क्या हाल होगा।

सीनियर पोस्टमास्टर आवास, दूसरा तल, जनरल पोस्ट ऑफिस, शिमला, हिमाचल प्रदेश-171 001,
मो. 0 94180 31951

शोध आलेख

भूमंडलीकरण के दौर में महिला सशक्तीकरण

◆ डॉ. मंजु पुरी

भारतीय नारी सभ्यता के प्रारम्भ से आज तक इतिहास के पृष्ठों पर उस नक्षत्र की भांति टिमटिमाती रही है, जिसकी धूमिलता अथवा प्रखरता अप्रत्यक्ष रूपेण उस सभ्यता की शिथिलता अथवा गतिशीलता का संकेत करती रही है। मातृसत्तात्मक समाज से पितृसत्तात्मक व्यवस्था नारी जीवन के उत्कर्ष और अपकर्ष की वह बोलती कहानी है जो सदियों से इतिहास को झकझोरती रही है। इसके आवरण में मानव सभ्यता का अर्द्धांश अनवरत शोषण से उत्पीड़ित अपना मुँह छिपाए पड़ा है। नारी की यह कहानी ही वस्तुतः किसी भी सभ्यता की कहानी है, जिसे उपक्षित कर देने से उस सभ्यता का सही मूल्यांकन कदापि सम्भव नहीं है। तभी तो नेपोलियन बोनापार्ट ने कहा था- 'तुम मुझे योग्य माता दो, मैं तुम्हें एक योग्य राष्ट्र दूंगा।'

वास्तव में समाज में स्त्री विषयक सोच अथवा समाज में स्त्रियों की स्थिति, दो विरोधी प्रतीत होने वाले पक्ष है। जो मूलतः सशक्त है, उसे अशक्त बना दिया गया है। समाज के संतुलित, सम्यक और स्वस्थ विकास के लिए उसे पुनः सशक्त बनना-बनाना होगा। स्त्री सशक्तीकरण को एक सामाजिक अभियान के रूप में स्वीकार करने की आवश्यकता है, क्योंकि समाज के सभी क्षेत्रों में नारी के अस्तित्व को मनुष्य के रूप में वास्तविक और व्यावहारिक स्वीकृति प्राप्त होनी चाहिए। वह पुरूष की अनुचरी नहीं सहचरी बने। उसे भी वह सब अधिकार प्राप्त हो जिसकी वह हकदार है। उसे भोग की वस्तु न मानकर इन्सान समझना चाहिए। स्त्रियों के प्रति हमारा व्यवहार गैर बराबरी पूर्ण इसलिए भी रहा है, क्योंकि अभी तक सामंती मानसिकता टूटी नहीं है। जो लोग मंचों पर नारी मुक्ति का प्रचार करते है वही लोग अपने घरों में स्त्री के साथ बर्बरतापूर्ण पक्षपातपूर्ण सामंती व्यवहार करते हैं। भारतीय समाज में कदम-कदम पर ऐसे तीखे विरोधाभास मौजूद हैं जिसके कारण स्त्रियों के प्रति हमारा व्यवहार पक्षपातपूर्ण, हिंसक व उत्पीड़नकारी रहा है।

''पितृसत्तात्मक समाज ने उनके लिए ऐसे मूल्य, नैतिक सिद्धान्त सुनियोजित ढंग से गढ़े है जिनमें आजीवन उनकी बेटियाँ वधुएं ढ़लती, गलती रहती हैं। सदियों से औरतें इन रीति-रिवाजों परम्पराओं के नाम पर पितृक मूल्यों के सांचों में जकड़ दी गई हैं।''[1]

प्रारम्भ में स्त्री-पुरुष के कार्यों में कोई भेद नहीं था। ज्यों-ज्यों मानव विकास की ओर बढ़ता चला गया, उसके कार्यों में भी विभाजन होता गया। इन कार्यों में विशेषीकरण आया तथा स्त्री-पुरुष में श्रम विभाजन हुआ। संसार का प्रत्येक समाज मातृ-सत्तात्मक परिवार होने से सम्पति पर, परिवार के नाम पर, वंश-गोत्र इत्यादि पर नारी का अधिकार होता था जिससे उसकी स्थिति उच्च हुआ करती थी। लेकिन धीरे-धीरे उस व्यवस्था में जो परिवर्तन हुए और परिवार पितृसत्तात्मक हुए उससे हर मामले में पुरुष ने अपना अधिपत्य स्थापित किया और वह नारी को तुच्छ समझने लगा। उत्पादकता का आश्रय लेकर पुरुष ने नारी को घर की वस्तु बना दिया और स्वयं मालिक बन बैठा है।

''आज महिलाएँ आगे बढ़ने के प्रयास कर रही हैं केवल कुछ प्रतिशत महिलाएँ ही उस स्थान पर पहुँच पाई हैं जहाँ उनको होना चाहिए था। आज भी बहुत सी महिलाएँ पढ़ना-लिखना चाहती हैं। आगे बढ़ना चाहती हैं पर उन्हें साधन उपलब्ध नहीं हैं।''[2] भारत में महिलाओं का वेतन पुरुषों की तुलना में 25 फीसदी कम है। जहाँ एक ओर पुरुषों की औसत प्रति घंटा कुल आय 345.80 रुपये है, वही महिलाओं की केवल 259.8 रुपये है।

''महिलाओं व पुरुषों की खाई को पाटने के लिए ठोस पहल की आवश्यकता है। साथ ही महिलाओं को कौशल प्रशिक्षण, नौकरियां और निर्णय लेने का अधिकार प्रदान कर उनके विकास की ढांचागत बाधाओं को दूर करना भी जरूरी है।''[3]

मुस्लिम समुदाय में तीन बार तलाक-तलाक कह देने मात्र से पुराने से पुराना रिश्ता भी टूट जाता है। क्या तीन शब्द कह देने से पुरूष समाज अपने अंह, अपने प्रभुत्व को दिखाना चाहता है।

''इस्लाम विवाह केवल पुरुषों को विच्छेद का अधिकार देता है स्त्रियों को नहीं। मुस्लिम-कानून पति को अपनी स्त्री को तलाक देने का पूरा अधिकार देता है। तलाक पाने के लिए पति को कारण बताने की भी आवश्यकता नहीं है। इसके विपरीत स्त्री परम्परागत मुस्लिम नियमों के अनुसार विवाह-विच्छेदन नहीं करा सकती, जब

अविनाश मिश्र 'अवि' की बाल कविताएं

प्यारा स्कूल

है कितना प्यारा स्कूल
बच्चों का न्यारा स्कूल।
आते हैं सब पढ़ने बच्चे,
बिलकुल हैं वे दिल के सच्चे।
बातें करते महंगी-सस्ती
करते हैं जी भर के मस्ती।
भारत की बगिया के फूल
हैं उनका प्यारा स्कूल।

लड़ते हैं चिल्लाते हैं
डांटो तो डर जाते हैं
गिनती-पाठ सुनाते हैं
सबके मन को भाते हैं।
हंसते हैं वो करके भूल
है उनका प्यारा स्कूल।

कागज पर तसवीर बनाना
बड़े प्यार से गीत सुनाना
छुट्टी पर घर वापस आना
अपनी मां से प्यारा जताना।
उनके हैं बस यही उसूल
है उनका प्यारा स्कूल।

चली चूहे जी की बरात...

सजकर चूहे की चली बरात
सजी है ढोल-नगाड़ों के साथ।

पहने सबने नये लिबास
मस्ती में दिख रहे हैं खास।

दूल्हे-की खुशी का नहीं ठिकाना
नाच रहे हैं नानी-नाना।

दादा जी की बात निराली
बांधे सर पे पगड़ी काली।

झूम रहे हैं चाची-चाचा
मामा कर रहे खूब तमाशा।

बहन, बुआ हो रही हैं पागल
नाच रही हैं पहन के पायल।

सब-भाई नाचे-दे-दे ताल
सजकर चूहे की चली बरात।

केंद्रीय पुस्तकालय, बुंदेलखंड
विश्वविद्यालय, झांसी, उत्तर प्रदेश-284 128
मो. 0 94536 84144

तक कि उसका पति इसके लिए राजी न हो।''[4] कई बार हमारे विद्वत समाज में नारी कपड़ों को लेकर ही चर्चा आरम्भ हो जाती है। मानो मान चाहे कपड़े पहनकर नारी ने कोई अपराध कर दिया हो-

''हमारे समाज में एक मान्यता बड़ी ही प्रचलित है कि लड़कियाँ ऐसे कपड़े पहनेगी लड़कों का मन भड़केगा मानो समाज ने लड़कियों को लाल कपड़ा और लड़कों को बैल बना दिया हों।''[5] भूमण्ड़लीकरण व उत्तर-आधुनिकता के युग में नारी को भी कुछ विषयों पर सोचने की आवश्यकता है, जैसे फैशन जगत व सिनेमा में नारी के शरीर को उपयोग की वस्तु के रूप में परोसा जाता है। अश्लीलतापूर्ण वस्त्रों व अश्लील शब्दों से युक्त संगीत को सिर्फ मनोरंजन के नाम पर बनाया जाता है।

''त्वचा और चेहरे के सौन्दर्यीकरण की इस मुहिम की सबसे बड़ी शिकार स्त्री है। उसे मानवीय अधिकार और सम्मान देने की जगह एक आकर्षक वस्तु में बदल दिया गया है। हर विज्ञापन में यहाँ तक कि टायर या पेंट की विज्ञापन में भी स्त्री बैठा दी गयी है। वही विक्रेता है, वही खरीदार विज्ञापन जगत में स्त्री एक 'अति' की तरह है। यह 'अति' विज्ञापनशास्त्र की एक मात्र उपलब्धि है। स्त्री विज्ञापन का सबसे बड़ा औजार है। इसलिए भी शायद, स्त्रियों का होना सहज लगता है कि उपभोक्ता आसानी से ढ़ेर हो जाता है।''[6]

अगर इसी प्रकार चलता रहा तो वह दिन दूर नहीं जब हमारी भारतीय संस्कृति खतरे में पड़ जाएगी। जिसका सम्मान पूरे विश्व में किया जाता है। इसलिए महिलाओं को इस विषय पर भी सोचना चाहिए और अश्लीलतापूर्ण संस्कृति का पूरे जोर से विरोध करना चाहिए क्योंकि सशक्तीकरण का अर्थ यह नहीं है कि हम अपनी सांस्कृतिक विरासत को ही भूल जाएं। क्योंकि संस्कृति ही हमारी पहचान है।

सहायक आचार्य (हिन्दी), अन्तर्राष्ट्रीय दूरवर्ती शिक्षा
एवम् मुक्त अध्ययन केन्द्र, समरहिल, शिमला-171005

सन्दर्भ-सूची

1. राकेशकुमार, नारीवादी विमर्श, पृ. 30
2. डॉ. ऊषा रानी, महिला सशक्तीकरण का महत्त्व, पृ. 147
3. अमर उजाला (समाचार पत्र-)
4. डॉ.राज कुमार, नारी के बदलते आयाम, पृ. 53
5. कुमार भास्कर, भूमण्डलीकरण और स्त्री, पृ. 98
6. राजकिशोर, स्त्री, परम्परा और आधुनिकता, पृ. 80

शोध आलेख

प्राकृतिक मानवीय प्रवृत्ति, रंगमय सृष्टि एवं कलात्मक सामंजस्यता में वर्ण संप्रेषण बोध

◆ बलविंद्र कुमार

सृष्टि में व्यापक भौतिक-अभौतिक स्वरूप से लेकर शून्य तक की रचना में संयोजन विद्यमान है जिसमें ब्रह्माण्डों, खण्डों, सौरमण्डलों, ग्रहों की स्थिति, गति व प्रकाश ऊर्जा के संचालक सूर्य की ऊर्जा का समस्त ग्रहों, पिण्डों, उपग्रहों, चन्द्रमा, तारों में समावेश या टकराव व प्रभाव और उनसे उत्पन्न परावर्तित प्रकाश से तैयार जगमगाहट भरी रश्मियाँ व रोशनी पैदा होती हैं। हल्की, फीकी, प्रचण्ड, तीव्र, गर्म, शान्त ज्वलन्त, नकारात्मक व सकारात्मक तरंगात्मक किरणें यह समस्त सृष्टि सौरमण्डल की पिण्ड संरचना, रूप, स्थिति, अनुपात, एकता, सन्तुलन, प्रवाहित संचालन, गति, काल गणना, ऊर्जा शक्ति, नाद राग स्वर संगीत जीवन तथा अन्य तत्त्वों से उत्पन्न दृश्यात्मक, श्रवणात्मक संगति विशाल रूप पर अपनी परिक्रमानुसार अद्भुत दृश्य प्रभाव उत्पन्न करते हैं। अन्तरिक्ष में अनन्त रंग दृश्यवान व ओझल सृष्टि के है वही श्रव्यात्मक मौन नाद राग शब्द है, यह समस्त संगति विशाल दृश्य, श्रव्य स्वरूप की एकीकृत संयोजन है।

इस ब्रह्माण्डीय संरचना में शक्ति पुंज जो अति प्रकाशवान तरंगमयी रंगीन रश्मियों का उद्गम्य केन्द्र है इसके प्रकाश में सभी रंग मौजूद हैं तथा जहां भी यह प्रकाश रश्मियाँ जाती हैं या किसी भी चीज पदार्थ पर प्रत्यक्ष पड़ती है तो एक तिलिस्मी वातावरण तैयार कर देती है जो भौतिक व आध्यात्मिक पहर की होती है।

अपार सृष्टि में पृथ्वी ही एकमात्र ऐसा ग्रह है जिसमें जीवन विद्यमान है जिसमें मानव जाति सर्वोच्च जीव है अर्थात मानव प्राण में समस्त भेदों के ज्ञान बोध करने की क्षमता ईश्वर ने दे रखी है तथा मानव शारीरिक संयोजन अनमोल है इस सृष्टि के समस्त अंश भाग, अंग-अंग के संसार में ईश्वर का संयोजित स्वरूप सर्वत्र एकी त है उदगम्य से अनन्त तक।

सम्पूर्ण सृष्टि में पृथ्वी ग्रह प्राकृतिक तौर पर जीवन्त वातावरण युक्त वनस्पति, जल-थल व इसमें निहित जीव-जन्तु, पशु-पक्षी, जानवर अन्य जीव प्रजातियाँ जो प्रकृति पर आश्रित है सिर्फ कुछ रंग का अंश देख पाने की क्षमता शक्ति रखते हैं अतः एकमात्र मानव शरीर ही दृष्टि से समस्त रंगों की तानों तरंग लहरों को प्रत्यक्ष देख पाता है इसलिये मानवीय जीवन आध्यात्मिक खोज में आन्तरिक व बाहरी भौतिक संरचना की वर्ण संयोजना के दृश्य बोध से साक्षात्कार कर पाता है।

रंगों की उत्पति या सृष्टि हेतु इसके संयोजित भेद को जानना आवश्यक है जिसमें आपार मौन भाषा, गतिशील निरन्तर संचालित प्रकाशवान ब्रह्माण्ड व इसके बीच सन्तुलित अन्तराल में गतिशील पृथ्वी व इसके प्राणवान जीव जगत इन तीनों क्षेत्रों के मध्य का साक्षात्कार वर्ण सम्प्रेषण जो गुरुत्वाकर्षण, निरन्तर गतिशीलता, मौन राग से उत्पन्न अनगिनत रंगीन रश्मियों के माध्यम से दृष्टि, प्रविष्टि, समष्टि, पुष्टि तथा सृष्टि के बोधात्मक चरणों में नियमित विचरण प्रवाहित रहती है।

वहीं मनुष्य में अनोखा उसकी शारीरिक संरचना पाँच तत्त्वों -अग्नि, जल, वायु, मिट्टी, आकाश का संयोजित गठन योग है जिसके भीतर शक्ति पुंज 'नाद ब्रह्म' पुंज शक्ति है। जो प्राण व अग्नि के सम्बन्ध से उत्पन्न होता है। नकार प्राणजीव है तथा दकार अग्निजीव है जो मानवीय शरीर के संयोजित योग में जीवन्तता प्रवाहित करता है जो सन्तुलित है जिसमें अनोखा गुरुत्वाकर्षण, सम्प्रेषण, आत्मसाक्षात्कार, ब्रह्माण्डों, कालों की परिक्रमा करने की क्षमता निहित है इस शरीर में सम्प्रेषण बोध के कारक जो मानवीय मन, बुद्धि, हृदय, निर्णायक क्षमता, चिन्तन, मन्थन रूप में क्रियात्मक प्रवाहित होती है। मानवीय स्वभाविक इन्द्रियबोध-देखने, सुनने, सुगन्ध लेने, स्पर्श, स्वाद से रस, भाव रूप में आत्मसात करने की बोध शक्तियाँ है प्रकृति में विलिन बाहरी आन्तरिक रंगीन जगत को देख पाने की क्षमता विद्यमान है जिसमें प्राकृतिक प्रकाशवान जगमगाहट से युक्त सात रंगों व सात सुरों का दृश्य, श्रव्य भाव रसपूर्ण रंग प्रेरणा युक्त अभिव्यक्ति की क्षमतायें है मानवीय चिन्तन में चेतन, अर्धचेतन, अवचेतन तीन अवस्थायें होती हैं जो भावों स्थायी भावों, विभाव, अनुभाव, व्यभिचारी साथ ही श्रुतियों की प्रवृति से जुड़ी होती है मानवीय दृश्य, श्रव्य के साक्षात्कार पर समस्त रंगों, रसों का बोध जागृत होता है। मनुष्य जीवन का रंगीन सृष्टि से घनिष्ठ सम्बन्ध होता है जहां वह रंगों के माध्यम से देखता परखता आत्मसात करता एवं अभिव्यक्त करता है रंग ही वह भाषा प्रतीक है जो मानव जीवन के प्रत्येक चरण में

उसको समस्त ज्ञान का दृश्य बोध करवाते हैं।

मानवीय दृष्टि संयोजन में आंखों के भीतर रेटिना नामक भाग में रोड्स व कोन्स दो ग्रन्थियां होती है तथा जब यह किसी प्रकाश पुंज के साक्षात्कार प्रभाव सम्पर्क में आती है तो सम्प्रेषणीय दृश्यबोध के साथ-साथ पदार्थ तत्त्व बोध, रस, भाव सहित वर्ण बोध अवशोषित करती है जो चेतन से प्रवेश करता है इसी माध्यम से पदार्थ की प्रतीति के साथ उसमें प्राणवान शक्ति पुंज का बोध भी आत्मसात किया जाता है परन्तु यह मानवीय चैतन्य पराकाष्ठा की सिद्धि पर ही निर्भर करता है।

रंग या वर्ण जो किसी पदार्थ में संयोजित तत्त्व अंश की संगति में प्रवाहित प्राण या गुरुत्वाकर्षण संयोग एवं बाहरी ब्रह्माण्डीय रश्मियों के सम्पर्क से उत्पन्न नवीन दृश्य रंग सृष्टि जो पदार्थ को अन्य से भिन्न करता है यह भिन्नता तत्त्व के रूप, आकार, बनावट, प्रकृति, प्रवृति से प्रतीत होती है।

तीन वर्ण मुख्यतः लाल, पीला, नीला प्राथमिक रंग है जिनके मिश्रण से अन्य द्वितीय तीन रंग नांरगी, हरा, जामुनी बनते हैं तथा प्राथमिक व द्वितीय रंगों के समिश्रण से तृतीय रंग बनते हैं यह समिश्रण प्रक्रिया इतनी विशाल है कि एक स्तर पर पहुंचते-पहुंचते समस्त रंग से मिलकर सफेद रूप धारण कर लेती है। मनुष्य ने प्रकृति के रंगीन संयोजन से प्रेरित होकर वनस्पतिक, खनिज, रासायनिक आदि प्राकृतिक रंगों को संसाधनों से प्राप्त कर प्रयोग में लाया व चित्रित जगत की रचना की। कलाकार जो अभिव्यक्ति के माध्यम से सर्वसाधारण में विशेष है अपनी रचना से साधारण मानवीय जगत को प्रभावित करता है, इसी उद्देश्य से चित्रकला के क्षेत्र में भी रंगों का प्रयोग तन्त्र विद्या, ज्योतिष विद्या, आध्यात्मिक चरणवद्ध प्रतीकों व अन्य विशाल विषयों को दृश्यवान संयोजित कर अभिव्यक्त किया गया है।

मनुष्य द्वारा देखने व सुनने के माध्यम से उसका छिपा हुआ भाव स्वरूप जो चेतन अवस्था के अन्तर्गत स्मरण, कल्पना, या प्राकृतिक दृश्य का संग्रह, प्रतीकों छिपे हुये ज्ञान का दृष्टान्त बोध होता है इसके उपरान्त विभाव, अनुभाव आदि द्वारा पुष्ट होकर रस में परिणत होता है जो नौ रसों में व्यक्त होता है। जिनकी शृंगार, हास्य, रौद्र, करूण, वीर, अद्‌भुत, वीभत्स, भयानक आदि रूप में अनुभूति होती है।

दृश्य श्रव्य स्त्रोत से उत्पन्न रंग, राग, रस के प्रभाव आकर्षण का अवशोषण से अभिव्यक्ति तक चरण :-

दृश्य-श्रव्य रस स्त्रोत पदार्थ का निजी रंग, राग, रसयुक्त प्रभाव उद्‌गम्य से आकर्षण, गुरुत्वाकर्षण या विपरीत साक्षात्कार सम्प्रेषण प्रक्रिया

दर्शक या प्राप्तकर्ता में अवशोषित रंग, राग, रस भाव जागरण से चिन्तन-मन्थन की प्रक्रिया

तत्त्व ज्ञान-बोध से रसानन्द या रसास्वादन प्राप्ति

उपरोक्त तीन चरणों की प्रक्रिया का कलाकार/चित्रकार द्वारा स्थायी अभिव्यक्ति करके प्रस्तुत करना।

इस प्रकार वर्ण विभिन्नता के साथ-साथ मानवीय चारित्रिक वर्ण आकर्षण क्षमता व पसन्द वैयक्तिक होती है इसी व्यक्तिगत स्वभाविकता के कारण चित्रकारों की वर्ण योजना भी वैयक्तिक होती है परन्तु विषय सिद्धान्त के अनुसार रंगों की चयन सीमायें समान रहती हैं।

वर्ण-रस, भावों, श्रुतियों के द्वारा चेतन अवस्थाओं, भाव सम्पर्क से पुष्टिकरण उपरान्त रस, रंग, राग से संयोजित छवि स्थायी आनन्द प्रदान करते हैं। यह वैयक्तिक कलात्मक भिन्न अभिव्यक्त होते हैं। यह निर्भर करता है कि मानवीय वैयक्तिक मानसिक, आत्मीय, व शारीरिक विकास व वृद्धि किस परिस्थिति में हुई है या वातावरण में कुछ स्थायी गुण या भाव जो जन्मजात रहे होते है जो मानवीय आन्तरिक पुष्टि-मन्थन के समय सब वैयक्तिक मूल्यांकन में भूमिका निभाते है जिससे अभिव्यक्ति के बाद रंगों, रसों, भावों, रागों स्वरों में भिन्नता पायी जाती है तथा जो वैयक्तिक अभिव्यक्ति सम्पूर्ण रूप से शुद्ध सर्वोच्च व सत्यता से सुन्दरबोध करवाती हुई प्रकट होती है वही समस्त जगत को भाती है परन्तु जहाँ वैयक्तिक रचना या कल्पना या भौतिक सोच सहित पुष्टिकरण युक्त अभिव्यक्ति होती है। वहाँ उसका आनन्द वह व्यक्ति स्वयं ही लेता है या बहुत कम ही उसको पसन्द करते है अर्थात् सर्वोच्च अभिव्यक्ति वही है जो वास्तविक सूक्ष्म ज्ञान, तत्व ज्ञान, से आत्मसात् होकर व वास्तविकता से युक्त रंगों, छंदों, रागों, धुनों, स्वरों, सुरों, सूत्रों से एकीकृत रूप से प्रकट दृश्यवान हो यही वह रचना है जो देखी सुनी पढ़ी जाती है जो समस्त को आनन्दित करती है वही एक अनुकरण तो कलाकार रचनाकार के माध्यम से हुआ ही है परन्तु व स्वयं भी देखने, पढ़ने, सुनने के सूक्ष्म ज्ञान से सर्वप्रथम आनन्दित होता है तथा उसके अन्दर से प्राकृतिक कल्पना समावेश, मन्थन, पुष्टि करके अभिव्यक्ति होती है यह एक विशेष व अनोखा कला जगत है जिसमें आम आदमी या व्यक्ति उन समस्त सूक्ष्म व तत्त्व ज्ञान को नहीं भेदकर झाँक सकता परन्तु वहाँ चित्रकार ही इन शक्तियों, ऊर्जाओं, रूपों, अवश्य संसार में निहित ज्ञान को दुनिया के समक्ष दृश्यवान् रंगीन सृष्टि में अभिव्यक्त करके उसी ज्ञान रहस्य से परिपूर्ण उसी भाव, रस, राग, रंग की सृष्टि की वर्ण प्रतिशतता द्वारा दुनिया को चित्रित दृश्यबोध करवाता है।

पी-एच. डी. शोधार्थी, दृश्य कला विभाग
हि. प्र. विश्वविद्यालय, समरहिल, शिमला-171005

संदर्भ ग्रन्थ सूची :

1. द्विवेदी प्रेमशंकर : दूबे बिन्दू '' चित्रसूत्रम् (विष्णुधार्मोत्तर पुराण में चित्रकला)
2. शोधार्थी द्वारा कलात्मक दर्शन की आत्माभिव्यक्ति।

यात्रा वृतांत

चीन के गुआंग्झाड में आयोजित प्रथम अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन में हिमाचली लेखक ने प्रस्तुत किया अपना शोध-पत्र। चीन के प्रबुद्धजनों में दिखी भारतीय साहित्य एवं संस्कृति के प्रति प्रबल जिज्ञासा

चीन में भारतीय साहित्य व संस्कृति की दस्तक

◆ **डॉ. सूरत ठाकुर**

नानावटी महिला महाविद्यालय मुंबई (भारत) और गुआंग्डोंग वैदेशिक अध्ययन विश्वविद्यालय गुआंग्झाड (चीन) के संयुक्त तत्वावधान में 24 से 26 अक्तूबर 2016 को गुआंग्झाई में अन्तर्राष्ट्रीय संगोष्ठी आयोजित हो रही थी। मैंनें भी अपना शोधपत्र भेजा, जो चुन लिया गया और बुलावा आ गया।

अब, चीन जाने का अवसर मिल रहा था, तो मन वहां जाने के लिए आतुर था। इसलिए अखबारी हलचल को नकारते हुए भी चीन जाने का मन बना लिया और आयोजकों के पास बायोडाटा और पासपोर्ट आदि दस्तावेज़ भेज दिये। जल्दी ही बिना किसी झंझट के वीज़ा भी मिल गया। ज्यों-ज्यों यात्रा की तारीख नज़दीक आने लगी, लोगों ने डराना आरम्भ कर दिया, तरह-तरह की बातें।

आखिर दोस्तों की शंकाओं को दरकिनार करते हुए 22 अक्तूबर 2016 को कुल्लू-दिल्ली बस में सवार हो गया। दिल्ली से 23 तारीख को 3.00 बजे की फलाईट थी। दिल्ली से हम चार और मुंबई से आठ साथियों ने आना था। मेरा किसी से पूर्व परिचय नहीं था, केवल दूरभाष पर ही बात होती थी। अर्धरात्रि में अन्तर्राष्ट्रीय हवाई अड्डे पहुंचा। वहां जयपुर (राजस्थान) से डॉ. सुधीर सोनी मेरा इंतज़ार कर रहे थे। डॉ. सुधीर को बताया हुआ था कि मैं कुल्लुवी टोपी पहन कर आ रहा हूं, ताकि वे मुझे तत्काल पहचान सकें। वैसे अपनी पहचान करवाने का इससे बढ़िया तरीका और कोई नहीं हो सकता था। कुल्लुवी टोपी ने आजकल अन्तर्राष्ट्रीय पहचान बना ली है। मैं जब भी हिमाचल से बाहर जाता हूं, कुल्लू टोपी पहन लेता हूं। कुल्लू एक अन्तर्राष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त पर्यटक स्थल है। यहां आने वाले सभी पर्यटकों को टोपी खरीदकर पहनना अच्छा लगता है। एअरपोर्ट के अन्दर घुसते ही डॉ. सुधीर सोनी ने मुझे तुरन्त पहचान लिया। एक से दो भले। हमारे साथ दो महिलायें मां-बेटी भी जा रही थीं। ट्रैवल एजेंट ने उनके पास ही हमारे पासपोर्ट दिए हुए थे। दस मिनट के बाद वे भी मिलीं। हम चारों इमिग्रेशन की लाईन में लग गए। यद्यपि मैं एक बार नेपाल हो आया हूं। परन्तु मैंने उसे विदेश नहीं माना। गोरखपुर के सोनाली से बस में गये और उसी से वापिस हुए। कोई रोक-टोक नहीं, कोई पासपोर्ट नहीं। इसलिए मैं कह सकता हूं कि यह मेरी पहली विदेश यात्रा थी, वह भी उस देश की, जहां जाने से हमें डर लगता है। फिर भी विदेश जाने का अपना ही रोमांच होता है।

थाई एअरवेज़ का जहाज़ था। ठीक तीन बजे जहाज़ चल पड़ा। उसे बैंकाक होकर जाना था। लगभग सात बजे प्रातः हम बैंकाक के स्वर्णभूमि एअरपोर्ट पर थे। थाईलैंड को सिल्क कंटरी के नाम से भी जाना जाता है। एअरपोर्ट पर जगह-जगह दी लैंड आफ सिल्क लिखा हुआ था। यहां शहर देखने की इच्छा थी। परन्तु बिना बीज़ा के एअरपोर्ट से बाहर नहीं निकल सकते थे। यहां से आगे का जहाज़ तीन बजे दोपहर को उड़ना था। अतः एअरपोर्ट में ही आठ घण्टे बिताने थे। थाईलेंड की करेंसी थाईबाटा है। भारतीय दो रुपये का एक थाईबाटा है। एअरपोर्ट पर कई दुकानें ब्रांडेड सामान की सजी हुई थीं। बहुत सी तो डयूटी फ्री वाली थी। कीमत पूछो तो बाज़ार से कई गुना अधिक। हमने दो घण्टे इन्हीं दुकानों के अवलोकन में लगाये।

मेरे फोन की बैटरी बुझ चुकी थी। एक स्थान पर बैटरी चार्ज करने के लिए स्विच लगे थे। मोबाईल वहां लगाया और उससे कुछ दूरी पर सोफे पर बैठ गया। न जाने कब नींद ने अपनी आगोश में लिया। नींद से जागा तो देखा फोन नदारद। इधर-उधर झांकने लगा। तभी एक यूरोपियन युवती मेरी ओर देखकर मुस्कराई। वह समझ गई कि मेरा मोबाईल अपने स्थान पर नहीं है। वह मुस्कराते हुए बोली, 'ओह, दैट वाज़ युअर मोबाईल।' मैंनें कहा, ''यस, दैट वाज़ माईन, व्हेअर इज़ दैट।' युअर फोन वाज़ रिंगिंग, नो बोडी वाज़ पिकिंग द कॉल, सो आई गिव दैट टु इन्क्वायरी आफिस।' फिर इन्क्वायरी आमफिस की तरफ इशारा करते हुए वह बोली, 'यू पिक अप दैट फ्रॉम दैट ऑफिस।'' मैंनें कहा, यू काइंडली कम विद मी।'' वह मेरे साथ इन्क्वायरी ऑफिस तक आई और मोबाईल

लेकर मुझे दे दिया। मैंनें उसे थैंक्स कहते हुए पूछा, ''फरोम व्हेयर आर यू।' 'आई एम फ्राम जर्मनी'। वह मुस्कराते हुए बोली। मोबाईल में जब मिस काल देखी, वह बेटे की थी। उसको काल बैक किया। वह मुझे लताड़ते हुए बोला, पापा'! आप कहां थे। पहली बार विदेश जा रहे हो और फोन ही गुम कर दिया।' इन्क्वायरी वाली महिला ने उसका फोन उठाया था और वह बोली थी कि एक यूरोपियन महिला ने यह फोन यहां छोड़ा है और इसके मालिक का कोई पता नहीं है। यह मेरे लिए पहली सीख थी कि कहीं भी अपना सामान अपने से दूर मत रखो। हमें तो गांव में आदत है कि कहीं भी अपना सामान रख देते हैं और लौटने पर सामान वहीं मिलता है।

इमिग्रेशन से निपटने के बाद जहाज़ में बैठ गए। उत्सुकता थी कि कैसा होगा चीन? जहाज़ में एअर होस्टेस खाने के लिए पूछने लगी। हमने शाकाहारी भोजन मांगा। उसने कहा केवल मांसाहारी मिलेगा। हालांकि दिल्ली से बैंकाक की फ्लाईट में शाकाहारी भोजन मिला था। इसलिए समुद्री मछली का आर्डर दे दिया। चावल और बंद के साथ मछली का स्वाद जीभ को बहुत भाया। पीने को गर्म पानी मिला। हम भारतीयों को ठण्डा पानी पीने की आदत है। यहां तक कि अब हम फ्रिज में रखा हुआ अति ठण्डा पीने में गर्व महसूस करते हैं, जबकि वह सेहत के लिए अच्छा नहीं होता। मैंने ठण्डा पानी मांगा तो एअर होस्टेस ने कहा कि नहीं है, पीना है तो गर्म पानी पीयो। मजबूरन गर्म पानी लिया और घूंट-घूंट करके पी लिया।

गुआंग्झाड एअरपोर्ट पर उतरते रात के 11:00 बज चुके थे। एअरपोर्ट से बाहर निकलते ही हमें उम्मीद थी कि आयोजकों में से कोई हमें लेने आएगा। परन्तु ऐसा कुछ नहीं हुआ। आयोजकों पर बहुत गुस्सा आया। टैक्सी वालों को हिदायत देते एक पुलिस वाले से पूछा। उसने एक टैक्सी वाले को बुलाया। टैक्सी वाले ने कहा कि मेरी टैक्सी में दो ही आ सकते हैं। हम चार थे। इसलिए उसके पीछे लगी दूसरी टैक्सी वाले को हाथ दिया। मैं और सुधीर सोनी एक टैक्सी में और रेणू बडालिया और उसकी बेटी दूसरी में बैठे। टैक्सी वाले को गंतव्य बता दिया गया। किराये की बात की तो उन्होंने कहा कि जो मीटर में लिखा होगा, वही दे देना। सामान टैक्सी में रखा और फर्र....र से टैक्सियां चल पड़ीं। अभी लगभग पांच किलोमीटर ही चले होंगे कि एक सुनसान जगह पर दोनों टैक्सियां रुक गईं। हमसे आगे वाला टैक्सी ड्राइवर जिसमें महिलायें बैठी थी, हमारे पास आया और अपना मोबाइल दिखाते हुए बोला, 'दोनों टैक्सियों के 900 युआन लगेंगे।' 900 युआन का मतलब था, भारतीय रुपये के मुताबिक 9000 रुपये। यह तो बहुत ज्यादा था। हम सभी पहली बार चीन जा रहे थे। न ही हमें चीनी आती थीं और न ही उन ड्राइवरों को अंग्रेज़ी या हिन्दी भाषा आती थीं। हम चीन के आयोजकों को फोन करते रहे, परन्तु वे उठाये हीं न। लग रहा था कि टैक्सी ड्राइवर हमें ठग रहे हैं। हमारे विदेशी होने का फायदा उठा रहे हैं। हमारी उनसे नोकझोंक चल ही रही थी कि तभी हाईवे पैट्रोलिंग पर एक पुलिस इंस्पैक्टर की गाड़ी पास में ही खड़ी हो गई। उसने अंग्रेज़ी में पूछा- 'व्हटस द मैटर?' हमने बताया कि ये हमें ठग रहे हैं। वह अंग्रेज़ी जानता था। उसने हमें ढांढस बंधाते हुए कहा कि आप चिंता न करें। उसने उन दोनों टैक्सी वालों को लताड़ा। दोनों की गाड़ी के नम्बर अपने मोबाईल में कैद किए और कहा कि तुम इनके साथ चीटिंग कर रहे हो। तुम्हारा लाइसेंस छह मास के लिए रद्द किया जाएगा। वे दोनों टैक्सी चालक डर गए। वे उसकी मिन्नतें करने लगे। तब उसने यह कहते हुए छोड़ा कि तुम सीधे रास्ते इन्हें ले जाओ, जो मीटर बतायेगा उतना किराया ले लेना। उसने हमें कहा कि तुम इन्हें डेढ़-डेढ़ सौ युआन दे देना और पहुंचने पर मुझे फोन करना और अपना फोन नम्बर हमें दे दिया। उसके बाद दोनों टैक्सी वालों ने हमें चुपचाप गंतव्य तक पहुंचाया। वहां कमरे आयोजकों ने पहले ही बुक कर के रखे थे। कमरे अच्छे, साफ सुथरे थे। थक चुके थे, तुरन्त सो गए।

अगली सुबह दरवाज़े पर लगी घंटी की आवाज़ से आंख खुली। आंख खुलते ही सामने एक सज्जन को पाया। सज्जन हंसमुख थे। हंसते हुए बोले, 'मैं डॉ. गंगा प्रसाद शर्मा विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग का अध्यक्ष, आपको प्रणाम करता हूं।' और हमसे रात वाली असुविधा के लिए क्षमा मांगते हुए गले मिले। उनके मिलन में ऐसा प्रभाव था कि हमारी रात वाली सारी शिकायत समाप्त हो गई। डॉ. गंगा प्रसाद शर्मा लखनऊ के थे और लखनवी अंदाज़ में शुद्ध हिंदी में हमसे इस प्रकार बोलने लगे जैसे हम एक दूसरे को बरसों से जानते हों।

मुंबई से आने वाले दोस्त भी रात को पहुंच चुके थे। नाश्ते पर सभी से परिचय हुआ। विदेश में अपने देश के लोगों से मिलने पर ऐसा लगता है, जैसे अपने सगे सम्बंधियों से मिल रहे हों। भारत से हम 12 लोग थे। डॉ. शर्मा ने बताया कि ठीक 10.30 बजे गुआंगडोंग विश्वविद्यालय के एम.बी.ए. विभाग के सभागार में उद्घाटन सत्र है। ठीक समय पर पहुंच जाना। दो छात्रों को हमारे मार्गदर्शन के लिए लगा दिया और स्वयं व्यवस्था के लिए निकल पड़े।

गुआग्डोंग वैदेशिक अध्ययन विश्वविद्यालय गुआंग्झाड के एशियाई भाषा और साहित्य विभाग में 13 एशियाई भाषाएं पढ़ाई जाती हैं। सन् 1911-12 से यहां श्री हू रूई ने हिंदी विभाग की स्थापना की है। पहले वर्ष के सभी स्नातकों को अच्छी नौकरियां मिली हैं। अब चीनी लोग भारत की संस्कृति को गहनता से जानना चाहते हैं, इसलिए उनका हिंदी सीखना विशेष मायने रखता है।

मणिबेन महिला महाविद्यालय मुंबई के हिंदी विभाग और एशियाई भाषा और साहित्य विभाग क्वांगतोंग वैदेशिक अध्ययन

विश्वविद्यालय ग्वांगझाड एवं शेंझन विश्वविद्यालय चीन में मानविकी एवं सामाजिक विज्ञान के इस प्रथम अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन का विषय था- 'शिक्षा एवं शोध की नई दिशाएं।' ठीक साढ़े दस बजे इस ऐतिहासिक सम्मेलन के उद्घाटन की अध्यक्षता चीन में भारत के कौंसुल जनरल श्री वाई. के. सैलास थंगल ने की। श्री थंगल ने अपने उद्बोधन में कहा कि भारत और चीन दोनों देशों की संस्कृति पांच हज़ार वर्ष प्राचीन है। इस सम्मेलन में दोनों देशों के बीच शिक्षा और शोध के नये द्वार खुलेंगे। उन्होंने विश्वास जताया कि यह सम्मेलन एक दूसरे को जानने- समझने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगा।

सम्मेलन में मुख्य अतिथि के रूप में एन.एस.डी.टी. महिला विश्वविद्यालय मुंबई की उपकुलपति प्रो. शशिकला बंजारी ने अपने वक्तव्य में सम्मेलन के विषय की प्रासंगिकता को रेखांकित करते हुए कहा कि दोनों देशों को शिक्षा के क्षेत्र में नये-नये विषयों के अध्ययन को प्रोत्साहन देना होगा और शिक्षा की महता को ध्यान में रखते हुए अपनी सांझेदारी और सहयोग की भावना को आगे बढ़ाना होगा। गुआंग्डोंग विश्वविद्यालय की कला एंव संस्कृति संकाय की अधिष्ठाता प्रो. ल्यू युआन ने सम्मेलन के सभी प्रतिभागियों का स्वागत करते हुए कहा कि इस आयोजन से चीनी छात्रों में हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं के अध्ययन के प्रति ललक बढ़ेगी।



इस अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन की भारतीय निदेशिका और मणिबेन नानावटी महिला महाविद्यालय की प्राचार्य डॉ. हर्षदा राठौर ने कहा कि आज वैश्विक शिक्षा का दौर है। इस विश्वविद्यालय के वैदेशिक विभाग के निदेशक श्री हू रूई ने कहा कि चीनी सभ्यता लगभग पांच हजार वर्ष पुरानी है। युआनमाउ सबसे पुराना घराना माना जाता है और क्ज़िया (xia) सबसे पहला शासक। भारत की तरह चीन में भी राजशाही रही है। 1 अक्तूबर 1949 को पीपल रिपब्लिक ऑफ चाईना की स्थापना हुई। तब से यही शासन तंत्र चीन में चला हुआ है। भारत और चीन की संस्कृति बहुत प्राचीन है। इस सम्मेलन से दोनों संस्कृतियों के बारे नई जानकारी हासिल होगी।

इस सम्मेलन में मैंने 'वर्तमान संदर्भ में संगीत शिक्षा में गुरु शिष्य परम्परा के महत्त्व' पर अपना शोध पत्र प्रस्तुत किया। जिस पर गुआंगडोंग विश्वविद्यालय के निदेशक श्री हु रूई ने कहा कि चीन को भी भारत की इस महानतम गुरुकुल शिक्षा पद्धति को अपनाने की आवश्यकता है। इस सम्मेलन में विभिन्न सत्रों में शिक्षा और शोध की नई दिशाओं से संबंधित बीस से अधिक गंभीर शोध पत्र प्रस्तुत किए गए, जो मनोविज्ञान, समाजशास्त्र, स्त्री अध्ययन, राजनीति विज्ञान, हिंदी साहित्य, गुजराती साहित्य, उर्दू साहित्य, संगीत, भाषा विज्ञान और चीनी साहित्य पर केंद्रित थे।

प्रथम दिन की संगोष्ठी सायं चार बजे सम्पन्न हुई। उसके बाद डॉ. गंगाप्रसाद शर्मा तथा उनके छह छात्र हमें प्रसिद्ध पर्यटक स्थल केन्टन फोर्ट ले गए। परल नदी के किनारे कैन्टन फोर्ट की ऊंचाई 800 मीटर है। इस फोर्ट में रोशनी की व्यवस्था इस प्रकार की गई है कि इसके आधार से लेकर चोटी तक यह कई रंग बदलता है। गुआंग्झाड में यह स्थान सबसे अधिक पसंदीदा पर्यटक स्थल है। केन्टन फोर्ट में अन्दर ही अन्दर सीढ़ियां तथा लिफ्ट लगाई गई हैं, जिनके माध्यम से चोटी पर जाने के लिए 200 युआन का टिकट लगता है। पर्यटक अपनी बारी के इंतज़ार में घंटों खड़े रहते हैं। केंटन फोर्ट के आसपास अनेकों बंगले और होटल हैं। इस शहर के सबसे अधिक धनवान लोग यहां रहते हैं। चीन में वैसे तो कम्युनिस्ट शासन है, परन्तु जब से चीन ने बाहरी कम्पनियों के लिए अपने दरवाजे खोले हैं, तब से यहां पर धनवान लोगों की फौज खड़ी हो गई है। केन्टन फोर्ट के सामने हमने अलग-अलग कोणों से कई छायाचित्र खींचे। यहां पर व्यावसायिक फोटोग्राफर 10-10 युआन में फोटो खींचते हुए उपलब्ध रहते हैं।

परल नदी के किनारे स्थित लगभग सवा करोड़ आबादी का गुआंग्झाड शहर चीन के दक्षिणी-पश्चिमी गुआंगडोंग प्रांत की राजधानी है। चीन के लोग सबसे पुराने दार्शनिक कन्फयुशियस के दर्शन को ही धर्म मानते हैं। चीन की संस्कृति की आत्मा भी कन्फयुशियस दर्शन ही है। कन्फयुशियस की बताई परम्परा को सबसे अधिक सम्मान देते हैं।

चीन में महिलाएं पुरुषों द्वारा किए जाने वाले सभी काम करती हैं। एक समय था जब गांवों में महिलाएं घरों में ही रहती थी। उस समय चीन में परम्परा थी कि महिलाओं के पांव छोटे होने चाहिए। इसलिए आठ दस वर्ष की आयु में ही लड़कियों को पांव

में छोटे जूते पहनाये जाते थे। उम्र बढ़ने के साथ भी वे उन्हीं जूतों को पहनती थीं, ताकि उनके पांव बड़े न हों। कई बार तो उनके पांव की उंगलियां मुड़ जाती थीं। जब चीन स्वतंत्र हुआ, तो महिलाओं की दशा सुधरने लगी। आज महिलाओं को देर रात तक घर से बाहर निकलकर काम करने की पूरी आज़ादी है। हमारे साथ भी छात्रायें बेखौफ होकर घूमती रहीं। हमारे देश में महिलाओं के साथ अश्लील व्यवहार करने वालों को सज़ा होने में कई वर्ष लगते हैं। परन्तु चीन में ऐसा नहीं है। जो कोई भी महिलाओं का शारीरिक या मानसिक शोषण करता है, उसे सख्त सज़ा मिलती है। इसलिए लोग ऐसा गलत काम करने से डरते हैं। चीन के दोस्तों ने बताया कि यहां पर 32 ऐसे अपराध हैं जिनके सिद्ध होने पर फांसी की सजा दी जाती है, और वह भी तुरन्त। यदि किसी ठेकेदार ने पुल बनाया और पुल टूट गया। उसमें एक व्यक्ति भी मर गया तो ठेकेदार तथा उस पर निगरानी रखने वाले अधिकारी को तुरन्त फांसी दी जाती है। शायद कड़े नियमों के कारण ही चीन में इस तरह के अपराध कम होते हैं।

केंटन फोर्ट में फोटो सैशन करने के बाद हमने वहीं पास में ही क्रूज़ का टिकट लिया। 65 युआन में क्रूज़ पर दो घंटे में परल नदी के ऊपर वोट में तैरते रहे। क्रूज़ की छत से चारों ओर ऊंची-ऊंची इमारतों में विभिन्न रंगों की बल्बों की रोशनियां ऐसी लगती हैं, जैसे सारे आसमान के तारे यहीं सिमट कर रह गये हों और कह रहे हों कि हम धरती पर भी उतर सकते हैं। टिमटिमाती रोशनी का ऐसा नज़ारा मैंनें आज तक कहीं नहीं देखा। दो घंटे तक क्रूज़ में रहने के बाद चार-पांच किलोमीटर का सफर आनंददायक, स्फूर्ति और रोमांच से भरपूर था।

अगले दिन संगोष्ठी के बाद गुआंग्झाड के व्यस्ततम बाजार में शॉपिंग की। हमारे कुछ साथियों ने कपड़े इत्यादि खरीदे। जब महिलाएं घर में हों, तो उस देश की निशानी के रूप में खरीदारी करने की फरमाईश करना उनका अधिकार होता है। चाहे उस वस्तु की आवश्यकता हो या न हो। गर्व से बखान करेंगी कि यह तो ये फलां देश से लाये हैं। घरवाली को नाराज़ करने की हिम्मत हम नहीं जुटा पाते। इसलिए हमने भी न चाहते हुए 400 युआन की बलि दी।

चीनी लड़की हुई लू जो थोड़ी-बहुत हिन्दी जानती थी, से चीन के रस्मों-रिवाज़ के बारे में संवाद होता रहा। उसने बताया कि चीन में छोटे परिवार हैं। एक ही संतान उत्पन्न करने का कानून है। चाहे वह लड़का हो या लड़की। उसने बताया कि गत वर्ष ही सरकार ने दूसरी संतान पैदा करने की अनुमति दी। जो दम्पति दूसरी संतान चाहते हैं, वे सरकार से अनुमति के लिए प्रार्थना पत्र दें। ताज्जुब की बात है कि एक सौ चालीस करोड़ की आबादी में से केवल चालीस हज़ार दम्पतियों ने ही दूसरी संतान पैदा करने की इच्छा जाहिर की। इससे सिद्ध हो गया कि चीनी लोग अब एक ही संतान से संतुष्ट हैं। अधिक संतान पैदा करने को झंझट समझते हैं। युवाओं को अपना जीवन साथी चुनने की पूरी स्वतंत्रता है। 14-15 वर्ष की उम्र में ही अपने साथी का चयन कर लेते हैं। उसके साथ उठना-बैठना, घूमना-फिरना आरम्भ कर देते हैं। जब उन्हें लगता है कि वे एक दूसरे के साथ जीवन बिता सकते हैं, तभी अपने मां-बाप को विवाह करने की सूचना देते हैं। विवाह धूमधाम से किया जाता है। नाचना-गाना, खाना-पीना सब चलता है। उसने यह भी बताया कि एक संतान का सुख यह होता है कि जायदाद का बंटवारा नहीं होता। विवाह के बाद नवदम्पति दोनों परिवारों की देखभाल करते हैं, साथ ही दोनों की जायदाद के हकदार भी।

चीन में जब लोग 40 साल पार कर जाते हैं, तो अपने घर में बिस्तर के पास ही अपने लिए ताबूत बनाकर रखते हैं ताकि हर समय यह एहसास बना रहे कि कभी भी इस जीवन को छोड़ कर जाना है। इसलिए वे अधिक धन एकत्र करने में व़िवास नहीं रखते। इसे छाती पर ताबूत की संज्ञा दी जाती है। मरने के बाद बुजुर्गों को बहुत सम्मान दिया जाता है। मरने के एक साल बाद उनकी याद में उत्सव मनाया जाता है, जिसमें सभी सगे सम्बंधियों को बुलाया जाता है। नाच-गाना होता है।

गुआंग्झाड़ में मोटे लोग बहुत कम देखने को मिले। इसका कारण उनका खानपान है। हालांकि सभी मांसाहारी हैं, परन्तु तला-भुना कोई नहीं खाता। सभी पकवान उबालकर खाते हैं। पानी गर्म पीते हैं। आज से चार हज़ार साल पूर्व चाय का उत्पादन सबसे पहले चीन में हुआ था। आज चीन दुनियां का सबसे बड़ा चाय निर्यातक देश है। स्वाभाविक है कि वे चाय पीते हैं, परन्तु उसमें चीनी नहीं डालते। गर्म पानी उबाला, चाय पत्ती डाली और पी ली। एक खास बात उनके खाने में यह भी देखी कि चीन के लोग मीठे का बहुत कम प्रयोग करते हैं। यही कारण है कि चीन में मधुमेह और उच्च्व रक्तचाप जैसी बीमारियां बहुत कम लोगों को होती हैं।

दो दिनों तक गुआंग्झाड़ में रहने के बाद इस सम्मेलन का समापन समारोह शेन्झेन में होना था। यह शहर गुआंग्झाड़ से 200 किलोमीटर की दूरी पर है। अगली प्रातः पांच बजे की बुलेट ट्रेन से शेन्झेन पहुंचे। वैसे तो चीन में बुलेट ट्रेन की अधिकतम गति 600 किलोमीटर प्रति घंटा है, परन्तु यह ट्रेन छोटे-छोटे कस्बों में रुकने के कारण 170-180 किलोमीटर प्रति घंटे की गति से चल रही थी। चीन की सरकार ने परिवहन की ऐसी योजना बनाई है कि चीन के सभी कोनों से बीजिंग तक 7-8 घंटे में बुलेट ट्रेन से पहुंचा जा सके। इसलिए बुलेट ट्रेन से सभी शहरों को बीजिंग से जोड़ने का काम तीव्र गति से चला हुआ है।

शेन्झेन को चीन का इलैक्ट्रॉनिक शहर कहा जाता है। चीन का सारा इलैक्ट्रॉनिक का सामान यहीं से पूरे विश्व में पहुंचता है। सन् 1980 में इस शहर की आबादी तीस हज़ार थी, जो बढ़ कर

अब एक करोड़ से अधिक हो गई है। शेन्झेन रेलवे स्टेशन के गेट के पास ही शेन्झेन विश्वविद्यालय में पढ़ाने वाली एक शिक्षिका अपने दो छात्रों के साथ तख्ती लिए हमारे इंतज़ार में खड़ी थी। उसके पास डायरी में हम सब के नाम दर्ज़ थे। अतः एक-एक व्यक्ति का नाम चैक करते हुए सभी की गिनती की। उसके बाद वह हमें कहीं मैट्रो ट्रेन से, कहीं बस से विश्वविद्यालय ले गई।

शेन्झेन विश्वविद्यालय सन् 1990 में स्थापित हुआ है। विश्वविद्यालय पहुंचने पर भारतीय अध्ययन केंद्र के निदेशक ने अपने अन्य शिक्षक सहयोगियों तथा छात्रों के साथ हमारा गर्मजोशी से स्वागत किया। शेन्झेन विश्वविद्यालय के भारतीय अध्ययन केंद्र के निदेशक प्रो. यू लान्यू ने सभी अतिथियों का स्वागत करते हुए कहा कि यह सम्मेलन भारत और चीन के विद्यार्थियों, अध्यापकों और लेखकों के लिए मील का पत्थर साबित होगा। उन्होंने दोनों देशों के मध्य शिक्षा और शोध के आदान-प्रदान की संभावना बताई। निदेशक ने बताया कि जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय दिल्ली में चीनी भाषा के प्रोफेसर दीपक ने चीनी ग्रंथों का हिन्दी में और हिन्दी साहित्य का चीनी भाषा में अनुवाद किया है। उन्होंने चीनी भाषा की बारीकियों के बारे में विस्तार से बताते हुए कहा कि चीनी भाषा एकाक्षरी भाषा परिवार में सबसे मुख्य भाषा है, तथा समस्त चीन में बोली जाती है। बोलने वालों की संख्या के आधार पर यह अंग्रेज़ी के बाद संसार की दूसरी भाषा मानी जाती है तथा इसका भौगोलिक क्षेत्र अंग्रेज़ी से भी अधिक विस्तृत है। अफ्रीका और एशिया की विभिन्न भाषाओं में से केवल यही एक भाषा है, जिसे विश्व संघ में कार्य पद्धति के लिए मान्यता प्राप्त है। साहित्यिक और ऐतिहासिक दृष्टि से भी यह संसार की सर्वप्राचीन भाषाओं में से एक है। परन्तु ठीक ऐसे ही यह भाषा संसार की सबसे अवैज्ञानिक और जटिल भाषा है और यही कारण है कि प्राचीन काल से लेकर दूसरे देशों के साथ घोर सम्पर्क रहने पर भी इसके क्षेत्र में कोई विशेष विस्तार नहीं हुआ।

चीनी भाषा एकाक्षरी भाषा परिवार में सबसे मुख्य भाषा है तथा समस्त चीन में बोली जाती है। बोलने वालों की संख्या के आधार पर यह अंग्रेज़ी के बाद संसार की दूसरी सबसे अधिक बोली जाने वाली भाषा मानी जाती है तथा इसका भौगोलिक क्षेत्र अंग्रेज़ी से भी अधिक विस्तृत है। अफ्रीका और एशिया की विभिन्न भाषाओं में से केवल यही एक भाषा है, जिसे विश्व संघ में कार्य पद्धति के लिए मान्यता प्राप्त है। साहित्यिक और ऐतिहासिक दृष्टि से भी यह संसार की सर्वप्राचीन भाषाओं में से एक है। सारे चीन देश में एक ही लिपि प्रचलित है तथा अपने आरम्भिक काल से यही चली आ रही है, इसी में सब लोग पत्र- व्यवहार करते हैं तथा एक दूसरे को समझते हैं। लिपि में परिवर्तन न होने के कारण प्राचीन से प्राचीन साहित्य भी उसके वर्तमान पाठकों के लिए अक्षरशः सुबोध और सुगम है, उन्हें अन्य देश के भाषा-भाषियों की तरह अपने प्राचीन लेखों को पढ़ने में कोई कठिनाई नहीं होती।

सारे चीन देश में एक ही लिपि प्रचलित है तथा अपने आरम्भिक काल से यही चली आ रही है, इसी में सब लोग पत्र-व्यवहार करते हैं तथा एक दूसरे को समझते हैं। लिपि में परिवर्तन न होने के कारण प्राचीन से प्राचीन साहित्य भी उसके वर्तमान पाठकों के लिए अक्षरशः सुबोध और सुगम है, उन्हें अन्य देश के भाषा-भाषियों की तरह अपने प्राचीन लेखों को पढ़ने में कोई कठिनाई नहीं होती। हां, उनके उच्चारण में अवश्य विभिन्नता आई है, और अधिक दूर जाने की आवश्यकता नहीं, यदि केवल अठाहरवीं शताब्दी के कवियों ली-पो अथवा तू-फू की कविताएं ही पीकिंग, शंघाई, अमोई या कातोन के पाठक एक साथ पढ़ें तो कदापि यह अनुभव न होगा कि वह एक ही कविता पढ़ रहे हैं। लिपि चित्रांकित होने के कारण उन सब के सामने लेख एक ही है और सब को उसे पढ़ने और समझने में कोई कठिनाई न होगी, भले ही चित्रांकित शब्द विशेष विभिन्न स्थानों के लिए विभिन्न उच्चारण दे, परन्तु सब के लिए वह एक ही अर्थ का द्योतक है। यही कारण है कि सारे देश में एक भाषा और एक ही लिपि के होते हुए भी इसके दो रूप हैं- साधारण बोल चाल की भाषा 'चुंग कुआ खुआ' और इसका लिखित रूप अथवा साहित्यिक भाषा 'चुंग वेन'। इस विभिन्नता का मुख्य कारण लिपि की असमानता है। चीनी भाषा की लिपि वर्णानुक्रमिक नहीं है, और न ही ध्वन्यात्मक है। चीनी लिपि संकेतात्मक है, प्रत्येक शब्द के लिए प्राचीन काल में संकेत बना है तथा तत्पश्चात् चाहे ध्वनि में कोई भी परिवर्तन आया हो, उस संकेत विशेष (अक्षर) में कोई अन्तर नहीं आया। चीनी भाषा और लिपि चाक्षुष है, श्रवण-परक नहीं। स्थानीय बोलियां प्राचीन काल में भी भिन्न थीं जिन्हें, लिपि एक होने के कारण, सरकारी भाषा 'कुआन खुआ' के अधीन लाने के प्रयत्न होते रहे हैं, और आज भी पीकिंग की बोली को सरकारी मान्यता प्राप्त है तथा वही राष्ट्रीय भाषा ''कुआ यूऊ'' का आधार है। चीनी भाषा की कोई वर्णमाला नहीं, लगभग 214 संकेत चिन्ह हैं, जिन्हें अन्य शब्दों का आधार माना जा सकता है। वह जहां वर्णमाला रहित है, वहां ध्वन्यात्मक भी नहीं। इसमें लिखित शब्दों का कोई ध्वन्यात्मक सम्बन्ध नहीं, परन्तु फिर भी पढ़े जाते हैं।

समापन समारोह में चीन के विद्यार्थियों ने भारतीय साहित्य और संस्कृति से संबंधित बहुत से प्रश्न पूछे। भारत की जाति प्रथा और बोलने की स्वतंत्रता पर उनकी प्रतिक्रिया से उनके भारत के

बारे में दृष्टिकोण का पता चला। संगोष्ठी के बाद निदेशक यू लान्यू ने पुस्तकालय के एक कक्ष में बने संग्रहालय का अवलोकन करवाया। जहां पर जवाहरलाल नेहरू और चीन के तत्कालीन प्रधानमंत्री के चित्रों के अतिरिक्त कामायनी का चीनी में अनुवाद और चारों वेद व्यवस्थित तरीके से रखे हुए थे। अशोक स्तंभ भी एक ओर सलीके से रखा गया था। उसके बाद निदेशक की आज्ञानुसार पांच छात्र हमें शेन्झेन के प्रसिद्ध संग्रहालय तथा शेन्झेन कल्चरल सेंन्टर दिखाने ले गए। संग्रहालय में चीनी साहित्यकारों, कलाकारों, लोक कलाकारों, लोक संस्कृति के विविध रूपों, कृषि के क्रमिक विकास औज़ारों, बागवानी की प्रगति तथा चीन की विकास गाथा से सम्बन्धित अलग-अलग वीथिकाओं को देखने में दो घंटे लगे। उसके बाद हमें शेन्झेन कल्चरल सेंन्टर ले गए। जहां पर शाम साढ़े सात बजे से साढ़े आठ बजे तक लोक कलाकारों का शो चलता है। कल्चर सेंटर में आधुनिकतम तकनीक से चीन की पुरातन संस्कृति के दर्शन हुए। चीन के पुरातन गीतों, नृत्यों, और नाटकों का मंचन बड़े सलीके से किया गया था। गडरियों के नृत्य, परियों के गीत, खेती के गीत, फूलों के गीत, फसल कटाई आदि के गीतों को देखकर चीन की ग्रामीण संस्कृति को समझने का अवसर मिला। वापसी हमारी हांगकांग होकर थी। विश्वविद्यालय के निदेशक ने एक शिक्षिका को हमें हांगकांग के बार्डर पर छोड़ने के लिए नियुक्त किया हुआ था। हमें वह बार्डर पर छोड़ गई। दो घण्टे में इमीग्रेशन से निपट कर हांगकांग की तरफ जाने वाली बस में बैठ गए। शेन्झेन से हांगकांग के बीच परल नदी के ऊपर एक बड़ा पुल एक दूसरे को जोड़ता है। शेन्झेन से 120 किलोमीटर की दूरी पर बसे इस टापू में पहुंचने में एक डेढ़ घंटा लगा। साढ़े दस वर्ग किलोमीटर क्षेत्रफल में फैला हांगकांग समुद्र के बीच एक टापू है, जिसे किसी समय व्यापारियों ने बसाया था जो लोग चीन के साथ इस जल मार्ग से होकर व्यवसाय करते थे। उनका यह पड़ाव हुआ करता था। धीरे-धीरे यह विश्व का सबसे बड़ा व्यापारिक केंद्र बन गया। यद्यपि बाह्य तौर पर यह चीन के अन्तर्गत आता है। यहां पर चीन का ही वीज़ा चलता है। परन्तु आंतरिक रूप से इसे स्वायत्तता प्राप्त है। चीन की करेंसी युआन यहां नहीं चलती। यहां पर हांगकांग का डालर चलता है। नौ भारतीय रुपयों के बराबर एक डालर की कीमत है। यह प्रसिद्ध पर्यटक स्थल है। पूरे विश्व के लोग यहां घूमने आते हैं। इसलिए होटल के कमरे चीन के मुकाबले महंगे हैं। चीन में बहुत कम लोग अंग्रेज़ी जानते हैं, जबकि हांगकांग का हर व्यक्ति काम चलाऊ अंग्रेज़ी जानता है।

चीन में जब लोग 40 साल पार कर जाते हैं, तो अपने घर में बिस्तर के पास ही अपने लिए ताबूत बनाकर रखते हैं। ताकि हर समय यह एहसास बना रहे कि कभी भी इस जीवन को छोड़ कर जाना है। इसलिए वे अधिक धन एकत्र करने में विश्वास नहीं रखते। इसे छाती पर ताबूत की संज्ञा दी जाती है। मरने के बाद बुजुर्गों को बहुत सम्मान दिया जाता है। मरने के एक साल बाद उनकी याद में उत्सव मनाया जाता है, जिसमें सभी सगे सम्बंधियों को बुलाया जाता है। नाच-गाना होता है।

वहां पहुंचकर होटल में सामान रखा और भोजन करके बाज़ार घूमने निकले। हमने दो दिन हांगकांग में ठहरना था। अतः जिसने भी जो सामान खरीदना था, वे खरीदारी में लग गए। मैंने खरीदारी नहीं करनी थी। फिर भी साथियों के साथ इलैक्ट्रॉनिक, कपड़ों आदि के बड़े शोरूमों से लेकर छोटी-छोटी दुकानों के अवलोकन का लुत्फ उठाया। यहां सामान चीन से अधिक महंगा लगा। यहां प्लास्टिक पर प्रतिबन्ध नहीं है और न ही धूम्रपान पर। फिर भी बाज़ार में कहीं भी प्लास्टिक व सिगरेट का एक टुकड़ा भी सड़क पर फेंका हुआ नहीं मिला। हर दस मीटर पर डस्टबिन रखे हुए होते हैं। डस्टबिन में नीचे प्लास्टिक या अन्य कचरा तथा ढक्कन पर एक खोल में पानी रखा हुआ दिखा। लोग सिगरेट पीने के बाद इसी खोल के पानी में सिगरेट बुझाते दिखे। यहां सड़क पर थूकना मना है। जगह-जगह बोर्ड पर लिखा हुआ दिखा- 'जो सड़क पर थूकेगा, उसे 1500 डालर जुर्माना देना पड़ेगा।' सफाई के बारे में इनसे सीख लेते हुए अपने देश में भी इसे अपनाने का निर्णय लिया। भूमि कम है, इसलिए तीस-चालीस मंज़िली ऊंची इमारतें हांगकांग की पहचान हैं। मैट्रो और बसें आवागमन के साधन हैं। सभी बसें एअर कंडिशंड हैं। बस में कंडक्टर नहीं होता। ड्राइवर सीट के साथ एक डब्बा रखा रहता है। निर्धारित किराये के लिए डालर उसमें डालो या डेबिट कार्ड उसमें स्वाईप करो और गंतव्य स्थान पर पहुंच जाओ। यही व्यवस्था चीन में भी है।

हांगकांग में बहुत से दर्शनीय स्थल हैं। लेंटन आइस लैंड में गोंग पोंग 360 सबसे पसंदीदा स्थल है। हमने इसे देखने का निश्चय किया। केबल कार से गोंग पोंग पहुंचे। इस स्थान पर जाने के लिए बड़ी लम्बी लाईनें लगती हैं। दो घंटे के इंतज़ार के बाद केबल कार में चढ़े। केबल कार में सफर रोमांच भरा था। जब पोलिन बौद्ध मोनास्टरी में पहुंचे तो चारों ओर का दृश्य मनोहारी दिखा। महात्मा बुद्ध की 34 मीटर ऊंची प्रतिमा को देखने हांगकांग आने वाले सभी पर्यटक जाते हैं। हांगकांग में डिजनी लैंड भी दर्शनीय है। इसके लिए एक और दिन की दरकार थी जबकि हमने अगली सुबह दिल्ली का टिकट बुक करवाया हुआ था। अतः उसे नहीं देख सके। हांगकांग को देखने के लिए दोबारा आने का निश्चय करके अगली सुबह अंतर्राष्ट्रीय हवाई अड्डे से थाई एअरवेज़ से बैंकाक होते हुए अपनी भूमि पर उतरे।

एसोसियेट प्रोफेसर, राजकीय महाविद्यालय
कुल्लू (हि.प्र.), मो. 0 98163 99807

अर्पण कुमार की कविताएं

समय

समय
जितना तुम्हारा है
उतना मेरा
सुना है
उसके लिए
सभी बराबर हैं

यह भी सुना है
कि सभी की जिंदगी में
अच्छे बुरे दिन आते हैं
लोग बताते हैं
समय एक नदी है

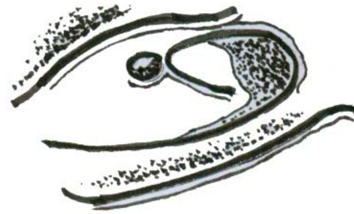
उसमें बहते पानी पर
सबका एक समान हक है
मगर इस तरफ
पानी की जगह जो
कीचड़ है
वह क्या है
कोई नहीं बताता

सशक्तजनों की संग्रह प्रवृत्ति ने
इस पर बड़े-बड़े बाँध
बना लिए हैं

समय का बहता पानी
कहीं और रोक दिया गया है
और हम
कब से दलदल में खड़े हैं

अपने बेहतर समय
की उम्मीद में

हस्ताक्षर



हम बदलते हैं
वक्त के साथ
वक्त के हाथों
बदलता है
हमारा अपना हस्ताक्षर

बैंककर्मी हमें कम
हमारे हस्ताक्षर को अधिक देखते हैं
जब हम नहीं कर पाते
कोई लेन देन
या बाधा आने लगती है उसमें
कभी अपनी उंगलियों को देखते हैं
तो कभी अपने हस्ताक्षर को
जूझते हैं हम अपने आप से
हम वही रहते हैं
और हमारी पहचान
भटक जाती है कहीं
हम घबरा जाते हैं
खुद की पहचान के लिए
मगजमारी बढ़ जाती है
कोरे कागज कई
काले कर डालते हैं
एक अदद हस्ताक्षर के लिए
मगर हमारा मूल हस्ताक्षर
हमें वापस नहीं मिलता

जैसे हम
दूर दूर छिटके रहते हैं
अपने मूल निवास से

हम भूल जाते हैं
पहचान का संकट
गहराने लगा था
तब से ही
जब हमने पहली बार
अपनी देहरी लाँघी थी

चुप्पी

परीक्षा हॉल की चुप्पी
में पसरी होती है
एक विशेष किस्म की सुगबुगाहट
ठीक वैसे ही जैसे
बुखार से तपते शिशु की
माँ के मन में
घर किए होती हैं
कई दुश्चिंताएं

माँ जिस तरह हर
किस्म के यत्न करती है
बुखार को उतारने के लिए
प्रत्याशी जूझते हैं

अधिक से अधिक प्रश्नों के
सही उत्तर देने की
अपनी ही जिजीविषा से

रात बीतती जाती है
मगर नहीं छोड़ती है माँ
आशा की किरण
वैसे ही
समय के अंतिम शहर तक
परीक्षार्थी
अपने दिमाग के घोड़ों का
लगाम नहीं छोड़ता
सही उत्तर की तलाश में
वह विकल्पों के जंगल में
भटकता है
और फिर गहरे आश्वस्ति भाव से
निर्णय की कोई एक
टहनी पकड़कर
सुस्ता उठता है कुछ देर
और किसी एक विकल्प पर
अपनी मुहर लगा
आगे बढ़ जाता है
दूसरे अनजान प्रश्नों से
टकराने के लिए

घर में माँ और
परीक्षा हॉल में
प्रत्याशी की चुप्पी...
दोनों ही हमें
बहादुर योद्धाओं की याद दिलाती





उदासी

उदासी
मेरी प्रेमिका है
और अनिद्रा
मेरी सहेली

घर में सभी सो रहे हैं
और मैं जाग रहा हूँ
रात के बारह कब के बीत चुके
मगर मेरे चेहरे पर बजा बारह
जस का तस रुका पड़ा है
मानो उसने समय के साथ
चलने से इनकार कर दिया हो

सोचता हूँ
कब होता है ऐसा
जब घड़ी की टिक टिक हार जाती है
क्यों होता है ऐसा
कि एक चेहरे को अपनी ताजगी की
परवाह नहीं रह जाती
बाजार के सभी बाजारू नुस्खों को
एक जिद्दी चेहरा हरा देता है

वे मेरे चेहरे से घबरा जाते हैं
उन्हें मेरी अनिद्रा से ऐतराज है
उन्हें मेरी उदासी से खतरा है
वे मुझे समझाते हैं
लंबी उम्र के लिए हँसना जरूरी है
मुझे उनकी सलाह से
धमकी की बारूदी गंध आती है

आगे कहते हैं
खुश रहना भी जरूरी है
मुझे 'खुश दिखना' सुनाई पड़ता है

ओह!
मैं रात में उदास नहीं हो सकता
बाजार की नींद उड़ जाती है

मैं जानता हूँ !

मैं जानता हूँ
तुम दुनिया जहान के नाम ले लोगे
मगर मेरा नाम
कभी नहीं लोगे

अकेले में मुझसे
खूब मीठी बातें करोगे
मेरी प्रशंसा के पुल बाँधोगे
और सबके बीच
मुझसे अनजान हो जाओगे
और फिर
मुझसे आकर कहोगे
नाम में क्या रखा है!
मैं तुम्हारा प्रिय मित्र
तुमसे असहमत होने
का खतरा
मोल नहीं ले सकता

मैं तुम्हारी बात
हँसते हुए दुहरा देता हूँ
हां, नाम में क्या रखा है!

अर्पण कुमार, बी-1/6, एसबीबीजे अधिकारी आवास,
ज्योति नगर, जयपुर, राजस्थान-302005, मो. 0 94133 96755

कहानी

समय का फेर

◆ शेर सिंह

कुछ वर्षों पहले तक यहां केवल नेपाली ही दिखते थे। जब भी किसी को किसी प्रकार के काम करने के लिए मजदूरों की आवश्यकता पड़ती थी, तो इन्हीं नेपाली लोगों का सहारा लेना पड़ता था। यहां इन्हें कोई नेपाली नहीं कहता था। लोग इन्हें अधिकतर बहादुर, भादर, गोरखा कह कर ही बुलाते, संबोधित करते थे। कोई भी छोटा-मोटा काम हो, बस भादर को बुला लो। बुलाने भर की देर... भादर हाजिर ! ऐ भादर... जरा यह लकड़ियां फाड़ दो। भादर यह सामान नीचे सड़क तक पहुंचाना है। अरे बहादुर... तुम क्या कर रहे हो ? चलो मेरे साथ। पत्थर फोड़ना है। यह पेटी उठाकर चलो तो मेरे साथ। यानी जितने काम करने वाले लोग थे, उतने ही बहादुर थे। पूरे जिले में क्या? पूरे राज्ये में यही हाल था।

खेती, किसानी से लेकर घर-परिवार के जितने भी मेहनत मजदूरी के काम होते थे, सब बहादुरों के हवाले थे। इन नेपाली बहादुरों की संख्या टोलियों से लेकर अकेले- दुकेले सब जगह बहुतायत में थी। लोग छोटे से छोटा काम भी इन्हीं से करवाते थे। बहादुर थे भी काम के पक्के! मजबूत कद-काठी, हट्टे- कट्टे, नाटे-मोटे। कुछ लंबे और छरहरे भी। इनके कंधों या हाथों में मजबूत रस्सीस, मजबूत पट्टा हमेशा पड़ा रहता था। इन्हीं चिन्हों को देखकर लोग इन्हें काम पर बुलाते थे। इनसे काम लेते थे। मजदूरी करवाते। ये काम में कोताही नहीं बरतते थे। इसलिए, बदले में सही- सही और मनचाहा मजदूरी देने में किसी को परेशानी नहीं होती थी। इनकी शक्लें भी एक जैसी दिखती। छोटी, पिलपिली आंखें। सिर पर रंगीन तिकोना टोपी ! छोटी- छोटी मूंछें, छितरी हुई दाढ़ी। दाढ़ी ऐसी दिखती जैसे रेगिस्तान में एकाध सूखी सींक की झाड़ी के नुकीले तिनके हों। भौंहें नंगी। इनके नाम भी एक जैसे होते- मन बहादुर, दिल बहादुर, काम बहादुर, शेर बहादुर। लोग इन्हें इनके सामने तो भादर... ऐ दिल भादर कह कर बुलाते। लेकिन पीछे से इन्हें खिसक भादर... तिस्के भादर... ढिल्कस भादर... ठरक भादर कहकर आपस में ठिठोली करते। इनकी एक जैसी शक्ल होने के कारण ये लोगों को गच्चा भी दे जाते थे। जो पैसे लेकर बिना काम निपटाए भाग जाते थे, उन्हें खिसक भादर कहते। हाड़ तोड़ मेहनत करने के बावजूद जो कुछ भी जोड़ -जमा नहीं कर पाता था, वह ढिल्क भादर। जो व्यवहार कुशल होता, वह तिस्कर भादर। और कोई रंगीन मिजाज का होता, तो वह ठरक भादर। बहादुरों की कमी नहीं थी। काम कराने वालों की भी कमी नहीं थी। दोनों जैसे एक -दूसरे पर निर्भर थे। काम लो, दाम दो। काम का पर्याय ही बहादुर था। बहादुर के बिना किसी काम का होना सोचा भी नहीं जा सकता था।

लेकिन इधर पन्द्रह- बीस वर्षों के दौरान बहादुरों की संख्या अपेक्षाकृत बहुत कम रह गई है। अब तो इक्केन-दुक्केस ही बहादुर दिखते हैं। वो भी कुछ बदले-बदले रूप, प्रकार में ! अपने को तनिक अलग दिखाने की चेष्टा में। परन्तु अपनी चेष्टाओं, प्रयासों के बावजूद पहचाने जाते और काम की पूछ होती। लेकिन बहादुरों की जगह अब दूसरों ने ले ली है। कौन हैं ये दूसरे लोग ? कैसे हैं ये कहां से हैं ?

मैंने ज्ञान चंद ठेकेदार को उसके मोबाइल फोन पर बात कर उसे दो -तीन दिन के लिए कुछ मजदूर देने के लिए कहा। इन्हें यहां मजदूर नहीं लेबर या मिस्त्री कहा जाता है। मजदूर बोलना अच्छा नहीं माना जाता है। यहां लोग मजदूरों को भी मान- सम्माहन की दृष्टि से देखते हैं। मुझे अपने खंडहर हुए मकान में मरम्मत का काम कराना था। मकान में किसी के भी नहीं रहने के कारण घर खंडहर में तब्दी ल हो चुका था।

"साहब जी... मैं दो लेबर और एक मिस्त्री भेजता हूं। आपका काम ज्यादा नहीं है। इनसे आपका काम हो जाएगा।" ठेकेदार ने कहा।

"ठेकेदार जी ! कब भेजोगे ? मुझे जरा जल्दी है !"

"आज शनिवार है... सोमवार को आ जाएंगे।"

"क्या रविवार को नहीं आ पाएंगे ?" मैंने मरम्मत के काम को शीघ्र शुरू करने के इरादे से उसे रविवार को ही भेजने के लिए कहा।

"साहब जी ! शंडे को तो वो लोग कहीं जाते हैं... शायद शमशी चर्च में !"

"क्या...?" मैं हैरत में पड़ गया। शमशी और चर्च ! यहां चर्च

भी है मुझे आज तक जानकारी नहीं थी। दशकों बाद आया हूं। इसलिए बहुत सारी चीजे बदल गई हैं। स्थितियां बदल गई, लोग बदल गए हैं, लोगों की जीवनशैली बदल गई है, आचार- विचार बदल गए हैं। मजदूरों में नेपाली, गोरखों की जगह अब दूसरे प्रवासी लोग आ गए हैं।

ठेकेदार जी... सोमवार को पक्के से भेजना। मुझे जल्दी ही काम निपटाना है।" मैंने ज्ञान चंद ठेकेदार से फिर अनुरोध किया। ज्ञान चंद ठेकेदार उत्तर प्रदेश से है। आजमगढ़ का। कुछ वर्षों पहले वह भी एक लेबर के रूप में यहां भुंतर, बजौरा में आया था। फिर वह लेबर से मिस्त्री बना। और अब मिस्त्री की जगह ठेकेदार बन गया है। नए बनने वाले अथवा बनते मकानों का वह ठेका लेता है। स्वभाव से नम्र है। काम को समय पर और अच्छे से कराता है। यहां आराम से मकान बनवाने की ठेकेदारी कर रहा है। लोग इज्जत से बुलाते हैं। तामीज से बात करते हैं। आजमगढ़, गोरखपुर, गोंडा, बस्ती में तो वे उपेक्षित हैं। वहां दलित जान भर लेने से ऊंची जाति के लोग उन्हें चींटी, मक्खी से अधिक कुछ नहीं समझते हैं। यहां तो पता नहीं क्यों-क्यों बनकर चैन की बंसी बजा रहे हैं। ठाठ अलग है ! अपने व्यवहार कुशलता के कारण लाखों का ठेका उसे आसानी से मिल जाता है। उसका पूरा खानदान अब उसके साथ है। उसका छोटा भाई नौणी राम अच्छा मिस्त्री। है- राज मिस्त्री। वह मिस्त्री का काम के साथ- साथ बनते मकान का नक्शा भी समझाने लगता है। अपने मिस्त्री के कार्य के अनुभव ने उसे एक अच्छा डिजाइनर, सिविल इंजीनियर, अर्कीटेक्टस जैसा बना दिया है। उसकी बात में वजन होता। इसलिए घर, मकान, बंगला बनाने वाला व्यक्ति खुशी-खुशी उसके सुझावों, बातों को मान लेता।

सोमवार को प्रातः 8.00 बजे के करीब तेईस-पच्चीस वर्ष के



आस-पास के दो युवक, और ऐसी ही उम्र की एक युवती मेरे घर के आंगन में अपने साजोसमान के साथ हाजिर थे। वे प्रवेश द्वार के साथ की दीवार पर बदरंग हो चुके लकड़ी के पट्टे पर लिखे मेरे नाम आनंद प्रकाश को पढ़ने की कोशिश कर रहे थे। फिर एक ने अपनी उंगली कॉलवेल पर रखी। बाहर आकर मैंने उनको ध्यान से देखा। वे अपनी उम्र से कुछ बड़े ही लग रहे थे। दुबले-पतले। इकहरे बदन वाले। रूखे, काले चेहरे। दोनों युवकों के लंबे बाल, छोटी-छोटी छितरी हुई मूछें। घिस गए टी शर्ट और जींस पहने। पैरों में नाइलोन के जूते। उनमें से एक को लेबर होना चाहिए था, दूसरे को मिस्त्री। लेकिन कौन लेबर है? कौन मिस्त्री? मुझे कुछ अंदाजा नहीं हुआ। दोनों एक जैसे दिख रहे थे। युवती कत्थई रंग के सलवार, कमीज पहने थी। पीठ में एक पुराने बेडशीट से अपने बच्चे को बांध रखा था। युवकों की तुलना में युवती कुछ अधिक ही गहरे सांवले रंग की बल्कि काली ही कहना चाहिए, असुंदर दिख रही थी। आंखें छोटी लेकिन नाक चौड़ी। छोटा कद होने के कारण उस पर सलवार-कमीज जंच नहीं रही थी। संभवतः किसी महिला ने अपना सलवार-कमीज का पुराना सूट उसे दे दिया था। वह उसे ही पहने थी। उसकी पीठ में बंधा बच्चाी जागा हुआ था। बच्चे ने अपना सिर मां की पीठ से सटा रखा था। उसकी टांगे और पैर चादर से बाहर लटक रहे थे। नंगे पैर तलवों पर कोमल होने की बजाए कठोर लग रहे थे। वह इस दुनिया में शायद अपनी मां की शक्ल लेकर आया था। एकदम कोयला सा काला। चौड़ी नाक, आंखें बड़ी पर कीच से भरी हुई। उसके मोटे लगते होंठों के बीच नीचे के मसूढ़ों में तीन छोटे-छोटे सफेद दांत। जब भी वह मुस्कराता, हुलसता तो दांत चमक उठते। इस रूप में वह प्यारा लग रहा था। लेकिन रो-रो कर गालों पर सूख गए आंसुओं और नाक बहने से उनकी जम गई परतें, दांतों की चमक फीका कर रही थीं। अगर वह साफ-सुथरा, नहाया-धुला होता, तो वह वाकई प्यारा लगता। नहाया-धोया, साफ-सुथरा रहना शायद उसकी इस छोटी सी उम्र में ही नसीब में नहीं था। बच्चा किसी भी प्रकार से सुंदर अथवा प्यारा नहीं लग रहा था। लेकिन बच्चा तो बच्चा होता है ! भगवान का रूप होता है। भगवान को कुरूप नहीं कहा जा सकता है !

मैंने एक ही नजर में सबका विश्लेषण कर डाला। उनसे मनचाहा काम लेना कतई मुश्किल नहीं था। "भाईया ! कौन मिस्त्री... कौन लेबर है ?" मुझे जानकारी नहीं थी। मैं वाकई में जानना चाह रहा था।

"मैं मिस्त्री हूं जी..." एक ने कहा

"हम दोनों लेबर हैं !" दूसरे युवक और युवती ने अपने आप बताया।

"कहां से हो भाईया ?" मैंने जानना चाहा।

"साहब जी... झारखंड के हैं !"

"झारखंड के... ? कौन सी जगह से है भई ?"

"जिल्हा गुमला से..."

"ऐसा है... मैं रांची में रहा हूं... हरमू में। एचईसी में था। बिहार और झारखंड के बारे में अच्छे से जानता हूं। इसलिए पूछा।" मैंने उन्हें बताया। रांची का नाम सुनकर वे ऐसे खुश हुए मानो अपने घर पहुंच गए हों।

"ठेकेदार ने आपको काम के बारे बताया होगा ? बाऊंडरी वाल की ये टूटी- फूटी दीवारें ठीक करनी है। आंगन में उखड़ गए फर्श और छत पर बारिश के पानी की निकासी को सही करना है। काम अधिक तो नहीं है... लेकिन करीने से करने की जरूरत है।" मैंने उन्हें काम के बारे बताया।

"ठीक है जी..." सबने एक साथ कहा। अचानक मौसम बिगड़ उठा था। हल्की-हल्की बारिश शुरू हो गई थी। पहाड़ी स्थानों में मौसम के मिजाज का पता नहीं चलता है। धूप और छांव की आंख-मिचौली चलती रहती है। जरा सा कहीं बादलों के दो-तीन टुकड़े आपस में मिले नहीं कि बूंदा- बांदी चालू। पल में बादल, पल में धूप ! अप्रैल, मई महीने में भी लोग कोट, स्वाटर नहीं उतारते हैं।

बूंदा- बांदी शुरू होने के बावजूद उन्होंने अपना काम आरंभ कर लिया था। ईंट के ढेर को पाईप के पानी से खूब भिगोया गया। रेत और सीमेंट को बेल्चे (साबड़) से अच्छे से मिलाना शुरू किया। फिर बीच में गड्ढा सा बनाकर उसे पानी से भर दिया। रेत और सीमेंट ने पानी को अपने में समा लिया। पानी सीमेंट, रेत में गुम हो गया। युवती फुर्ती से बेल्चे चलाती हुई पानी, रेत, सीमेंट को मिलाने लगी। उसकी गांठ पड़ी उंगलियों और हाथ के पंजों में गजब की पकड़ और ताकत थी। सूखी काया होने के बावजूद वह बेल्चें को ऐसे उठा -उठाकर गारे में मार रही थी जैसे बेल्चा नहीं, खुरपी चला रही हो ! पीठ पर बंधा बच्चा बेल्चे के हर धक्के से ऊपर-नीचे होने लगा। बरसते पानी के कारण मुझे काम लटक जाने की चिंता होने लगी। कब जोर पकड़ ले, या धूप खिल जाए? कोई ठिकाना नहीं !

"क्यों मिस्त्री... बारिश में सीमेंट धुल तो नहीं जाएगी ?" मैंने अपनी चिंता और अशंका जताई।

"नहीं साहब जी... बारिश नहीं होगी। देखना आप... कुछ टेम बाद धूप निकल आएगी।" उसने बड़े विश्वास से जवाब दिया। उसके जवाब से मुझे कुछ तसल्ली हुई।

बूंदा-बांदी होने के बावजूद उन्होंने अपना काम जारी रखा। एक युवक ने रेत का ढेर बनाया। उस ढेर में एक बोरी सीमेंट डाला। युवती ने अपनी पीठ पर बंधे बच्चे को वैसे ही बंधे-बंधे बेल्चे से रेत और सीमेंट को मिलाने का काम जारी रखा। बेल्चा चलाते समय झुकने और सीधा होने के क्रम में बच्चा अपनी मां की पीठ में जैसे हिचकोले खा रहा था। वह थोड़े- थोड़े अंतराल में मुंह से हुं... हुं... की आवाज निकालने लगता था। कुछ समय के पश्चात बच्चा मां की पीठ में सुस्त सा हो गया। उसने अपना सिर मां की पीठ से सटा लिया था। उसके सिर की टोपी आधी खिसक कर उसकी गर्दन पर अटक गई थी। घुटे हुए सिर में बारिश की बूंदें बज रही थी। उसके बिना मौजे या बूट, जूते के पैर और नंगी टांगे मां की पीठ से बाहर लटक रहे थे। छोटे-छोटे नंगे और काले पैरों पर बारिश की बूंदें पट- पट पड़ रही थी। वह कुनमुना रहा था। लेकिन युवती इन सबसे लापरवाह बनी बेल्चे पर बेल्चे मार रही थी। जल्दी ही उसने रेत सीमेंट का मसाला तैयार कर लिया था और अब उसे बेल्चे से तसले (तगाड़ी) में भर रही थी। वह तसले में फुर्ती से लगभग तीन बेल्चा मसाला भरती, फिर खड़ी हो जाती। उसके खड़ा होते ही बच्चा भी मां की पीठ में सीधा खड़ा सा हो जाता। बारिश की बूंदा-बांदी में वह बिना डरे या रोये, चुपचाप पड़ा था। केवल बीच- बीच में हुं... हुं... की आवाज निकालना जारी था।

लेकिन यह स्थिति देखकर मुझे कुछ अच्छा नहीं लग रहा था। मेरा मन जाने कैसा- कैसा हो रहा था। मन कह रहा था कि युवती आराम करे। बच्चे को बारिश से बचाए। उसे भीगने न दे। मुझे लग रहा था कि बच्चे को कुछ हो या न हो, वह ठंड जरूर खा जाएगा। मैं असमंजस में पड़ गया था। युवती को छत के नीचे आने के लिए कहूं ? पानी से बच जाएगी। आराम हो जाएगा। बच्चा भी और भीगने से बच जाएगा। बीमार पड़ने की नौबत नहीं आएगी। लेकिन काम रूक जाएगा। तैयार किया गया गारा, मसाला खराब हो जाएगा। दिहाड़ी भी खराब हो जाएगी। फिर मुझे लगने लगा कि मैं कुछ- कुछ स्वार्थी बन रहा हूं। मैंने अपने मन में उठ रहे कोमल विचारों को भी झटकना चाहा। परन्तु ऐसा न कर सका।

"क्या नाम है तुम्हारा?" मैंने युवती से सवाल किया।

"सुमित्रा..." उसने संक्षिप्त सा जवाब दिया और बेल्चे से तसले में सीमेंट का मसाला डालना जारी रखा।

"बच्चे का क्या नाम है ?

"वसंत..." फिर से वही छोटा सा जवाब।

"वाह ! बड़ा अच्छा नाम है ! वसंत... सुमित्रा। और मिस्त्री... तुम्हारा क्या नाम है ?" मैंने मिस्त्री से भी उसका नाम पूछ लिया। वह कुछ क्षण चुप रहा। लगा, कुछ संकोच कर रहा है। लेकिन फिर मेरी तरफ देखते हुए धीरे से बोला, " गंदूर..."

"गंदूर ! अच्छा है..." मैंने कहा।

"हमारे यहां ऐसे ही नाम हैं। हमारे मां-बाप पढ़े-लिखे नहीं है न... इसलिए इसी तरह के नाम हैं।"

"कोई बात नहीं।" मैंने अधिक प्रतिक्रिया व्यक्त किये बिना कहा। हालांकि उन सबकी उम्र पच्चीस वर्ष से अधिक की नहीं लग रही थी। इस आयु में तो देश में सभी लोग, सभी वर्ग

पढ़ना-लिखना जानते हैं। शिक्षित हैं ! फिर इनके साथ ऐसा क्यों? क्यों नहीं पढ़ पाए? मेरे मन में प्रश्न उठ रहे थे, लेकिन मुझे स्थिति का ज्ञान था। गरीबी, तंगी, बेरोजगारी, लाचारी आदमी को कहां से कहां पहुंचा देती है। रोजगार के लिए दर-दर भटकने के लिए मजबूर कर देती है। इसलिए मुझे ज्यादा पूछना उचित नहीं लगा। और न ही अधिक सोच-विचार किया।

बूंदा-बांदी जारी थी। बारिश के पानी में भीगते बच्चे की दयनीय हालत से मुझे कुछ दया आ गई थी। मैंने युवती से कहा, "बच्चे को यहां छत के नीचे रख दो... भीगने से बच जाएगा। ज्यादा भीगेगा तो बीमार पड़ जाएगा !"

"नहीं साहब जी... यह नहीं बैठेगा... छोटा है न अभी..."

"कितने साल का है ?" मैंने फिर प्रश्न किया।

"अभी तो एक साल का हुआ है। नीचे रखने से घिसटने लगता है। गिरने का डर रहता है। अभी नीचे रखा तो और भीग जाएगा... इसे ऐसी ही आदत है।" युवती ने बच्चे को सूखी और खुली जगह रखने से मना कर दिया। वह उसकी एक वर्ष की छोटी सी उम्र में उसे ऐसी ही आदत होने की बात कह रही थी।

"आप लोग आपस में कौन सी भाषा में बात करते हैं ?" मैं अपनी जिज्ञासा और उत्सुकता को दबा नहीं पा रहा था।

"अपनी ही बोली में... कभी-कभी हिंदी में भी..."

"अपनी बोली? मतलब संथाली में?"

"नहीं... नहीं... हमारी अपनी आदिवासी बोली है ! उसी में। दूसरा युवक जो लेबर था और अपना नाम भुवनेश्वर बताया था, ने कहा।

"आप लोग कितने समय से यहां हैं ?"

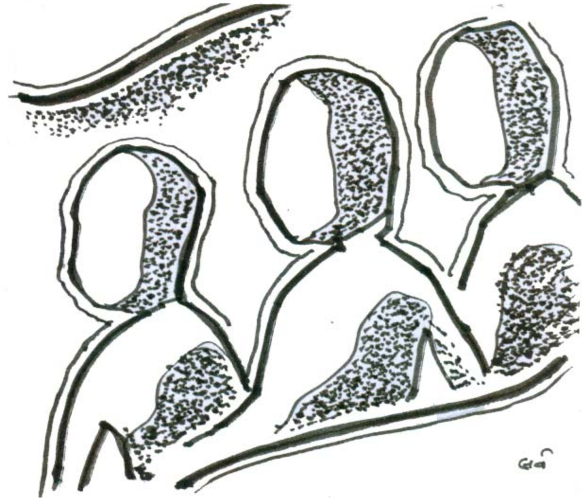
"बारा... पन्द्रह बरस हो गए।" भुवनेश्वर ने ही जवाब दिया। गंदूर हमारी वार्तालाप को चुपचाप सुन रहा था। वह कुछ बोल नहीं रहा था। परन्तु उसके हाथ फुर्ती से करंडी को चला रहे थे। बीच-बीच में वह हमारी बातचीत पर केवल मंद-मंद मुस्करा पड़ता। उसके सांवले, काले चेहरे पर सफेद दंतपंक्ति चमक उठती।

"आप लोग अपने घर जाते हैं ?"

"जाते हैं न... साल दो साल में एक बार। कुलू से अंबाला... बस से... अंबाला से राऊरकेला या गिरिडीह... मूरी तक रेल से ! ट्रेन अमृतसर से चलती है। बहुत बेकार ट्रेन है... पेसेंजर की तरह चलती है। बहुत भीड़ होती है। पर तीन चार दिन में घर पहुंच जाते हैं।" भुवनेश्वेर विस्तार से बता रहा था।" यहां बहुत अच्छा है ! लोग भी अच्छे हैं। सारा पैसा दे देते हैं। पैसे दबाते नहीं हैं। मेहनत को मानते हैं। यहां हर ठेकेदार के पास बिहार, ओरीसा, झारखण्ड, यू पी और छत्तीसगढ़ के लोग हैं। कई-कई सालों से यहीं हैं।"

"आप लोग एक ही परिवार से हैं ?"

"नहीं... नहीं... अलग अलग हैं !" भुवनेश्वर बोला। गंदूर



केवल बीच-बीच में मुस्करा भर रहा था। वह कुछ अधिक ही संकोची लग रहा था। अपनी बात को जारी रखते हुए भुवनेश्वर सुमित्रा की ओर संकेत करते हुए बताने लगा, "इसका घरवाला दूसरी जगह काम कर रहा है। ठेकेदार बहुत तेज... चालाक है ! एक ही परिवार के लोगों को एक जगह काम पर नहीं रखता है। अलग अलग जगह देता है... उसको लगता है... एक ही परिवार के लोगों को एक साथ एक जगह काम पर रखने से वे काम नहीं... मक्कारी करेंगे। हम दोनों की घरवालियां भी दूसरी जगह काम कर रही है।" सचमुच ! सभी जगह झोल था? काम निकालना कोई इन ठेकेदारों से सीखें ! लोग बेकार में राजनेताओं को गालियां देते हैं।

इतनी कम उम्र में भुवनेश्वर के पास अनुभवों का खजाना था। उसने मेरे मुख के भावों को संभवतः पढ़ लिया था। अपना अनुभव बांटने में शायद उसे मजा आ रहा था। रोजगार, रोटी की खोज में कम उम्र में ही वह घर से रोटी की जंग हेतु निकला था। वह बताने लगा, "जहां भी काले लोग देख लो... समझो अपने ही हैं। मैं एक बार नागालेंड गया था। वहां तो लोग सब कुछ खा जाते हैं। सड़क के किनारे कीलों को खूंटी की तरह गाड़ कर धागों से उनके साथ मेंढक तक बांधे रखते हैं। मोल... भाव कर उन्हें बेचते हैं। छोटे-छोटे तक इस काम में लगे होते हैं। काली चीज और काले लोगों को वे ज्यादा पसंद करते हैं। मैं तो थोड़े समय बाद ही वहां से भाग आया था। डर लगता है... पता नहीं कब क्या कर दे ?"

भुवनेश्वर बातूनी तो था लेकिन स्वभाव से सीधा, सरल लग रहा था। खोट, कपट से दूर ! तभी मैं समझ पा रहा था कि क्यों अब नेपाली नहीं दिखते हैं ! नेपाली बहादुरों की जगह अब इन लोगों ने ले ली है। गोरखे तो खा- पीकर सारा कमाया हुआ यहीं पर उड़ा देते थे। लेकिन ये लोग मेहनत कर रहे हैं, कष्ट सह रहे हैं, इतनी दूर आकर पड़े हैं। पैसे कमा रहे हैं, बचा रहे हैं और अपने

घर-परिवार को खुशहाल बनाने का प्रयास कर रहे हैं।

धीरे-धीरे बारिश बंद हो गई थी। हल्की धूप निकल आई थी। अप्रैल का महीना होने के बावजूद ठंड थी। बारिश ने ठंड और बढ़ा दी थी। मौजे, स्वाटर उतर नहीं रहे थे, जबकि देश के अन्य भागों में गर्मी का प्रकोप शुरू हो चुका था।

सुमित्रा ने बच्चे को अब अपनी पीठ से उतार कर उसे नंगी जमीन पर छाती के बल लिटा दिया था। वह बालू, सिमेंट और बजरी के बीच लोट-पोट होने लगा। गीली जमीन पर हुं... हुं... करता घुटनों के बल चलने, घिसटने लगा था। उसके छोटे- छोटे नंगे पैर कीचड़ से सन गए थे। टोपी उतर कर जमीन पर गिर गई थी। वह घुटनों के बल तैयार किये गए सीमेंट के गारे के अवशेषों पर चारों हाथ -पैर से रेंगने लगा। उसके सारे कपड़े और हाथ, पैर मिट्टी तथा गारे से अट पड़े थे। उसकी मां बीच-बीच में उसको एक नजर देखती और फिर तसला अपने सिर पर उठाकर मिस्त्री तक पहुंचाती। वापस आती, फिर पहुंचाती। उसने बच्चे को वैसे ही छोड़ दिया था।

बच्चा बुरी तरह गंदा हो चुका था। उसका काला मुख, चौड़ी नाक, नंगे हाथ-पैर, कपड़े सब गारे के धब्बों से सन गए थे। बच्चे को इस हाल में देख मुझे अपने मन में कुछ तरल-तरल पिघलता, बहता सा अनुभव होने लगा था। मुझे उसकी मां सुमित्रा पर अब क्रोध आने लगा था। बच्चे का बिलकुल ध्यान नहीं रखती है ? कैसी मां है ? फिर सोचा, यदि वह बच्चे का ज्यादा ध्यान रखेगी तो कमाएगी क्या? खाएगी क्या? ठेकेदार उसकी दिहाड़ी वैसे ही खा जाएगा !

बच्चा रेंगता, रपटता हुआ बारिश से बन गए कीचड़ की ओर गया। वह कीचड़ में लोटपोट हो रहा था। उसकी मां फुर्ती से बेल्चे से तसले में सीमेंट का मसाला भरने में व्यस्त थी। बच्चे का क्या भविष्य होगा? क्या वह सम्पन्न परिवार के बच्चों की तरह जी पाएगा? पढ़-लिख पाएगा? अच्छा खा-पी पाएगा? अच्छी जगह रहना संभव होगा ? अच्छा पहन पाएगा अथवा जीवन भर तरसता, लालसा ही करता रह जाएगा? क्या वह अपने मां बाप की तरह मजदूरी ही करता रह जाएगा! मजदूरी ही उसकी नियति होगी... मेहनत ही उसका साथी होगी? यही उसका भविष्य होगा... इसे भाग्य तो नहीं कहेंगे यह पीढ़ी-दर-पीढ़ी खटने की लाचारी, मजबूरी है क्योंकि वे साधनहीन हैं ! सम्पन्न नहीं हैं, शिक्षित नहीं हैं, अपने अधिकारों का ज्ञान नहीं है !

बच्चा रेंगता, रपटता हुआ बारिश से बन गए कीचड़ की ओर गया। वह कीचड़ में लोटपोट हो रहा था। उसकी मां फुर्ती से बेल्चे से तसले में सीमेंट का मसाला भरने में व्यस्त थी। बच्चे का क्या भविष्य होगा? क्या वह सम्पन्न परिवार के बच्चों की तरह जी पाएगा? पढ़-लिख पाएगा? अच्छा खा-पी पाएगा? अच्छी जगह रहना संभव होगा ? अच्छा पहन पाएगा अथवा जीवन भर तरसता, लालसा ही करता रह जाएगा? क्या वह अपने मां बाप की तरह मजदूरी ही करता रह जाएगा! मजदूरी ही उसकी नियति होगी... मेहनत ही उसका साथी होगी? यही उसका भविष्य होगा. .. इसे भाग्य तो नहीं कहेंगे यह पीढ़ी-दर-पीढ़ी खटने की लाचारी, मजबूरी है क्योंकि वे साधनहीन हैं ! सम्पन्न नहीं हैं, शिक्षित नहीं हैं, अपने अधिकारों का ज्ञान नहीं है ! क्या वसंत के जीवन में वसंत आएगा? अथवा अपने मां-बाप की तरह बेल्चे, तसले, गारे, बजरी में ही जीवन निकल जाएगा?

मैं कुछ जज्बाती हो गया था। बच्चे को इस रूप में देखकर मुझे अच्छा नहीं लग रहा था। मुझे लगा, मेरे सीने की धड़कन धीमी होते-होते तेज होने लगी है। बच्चा कीचड़ से लथ पथ हो गया था। उसे कीचड़ या सूखे की अभी कहां समझ थी? मुझसे देखा नहीं गया। मैंने लपककर उसे अपने दोनों हाथों से उठाया और उसे अपनी गोद में ले लिया। उसके कीचड़, सीमेंट के गारे, मसाले से अटे कपड़ों और हाथ पैर ने मेरे साफ और बेदाग कपड़ों को गंदा कर दिया। परन्तु मैंने परवाह नहीं की। उसे अपनी गोद में ही उठाए रखा। फिर मैंने उसे अपने कंधे पर चढ़ा लिया। वह कीचड़ सने मुख से हुलस हुलस कर खुशी से भर मेरे कंधे पर उचक- उचक कर देखने और उछलने लगा। कीचड़ से सना उसका मासूम और अबोध चेहरा प्रसन्नता से गेंदे के फूल की तरह खिल उठा था। उसकी मां ने उसे मेरी गोद और फिर कंधे पर बैठा देखा, तो उसकी छोटी -छोटी आंखें फैल गई ! कुछ क्षण अपनी पलकें झपकाए बिना वह हैरानी से मेरी ओर देखती रह गई। फिर उसकी आंखों में नमी उतर आई और देखते -देखते आंसुओं से छलछला उठी। शायद उसने कभी सपने में भी नहीं सोचा होगा कि कोई सफेदपोश व्यक्ति उसके कुरूप, गंदे, नंग-धडंग बच्चें को अपनी गोद में, कंधे में चढ़ा लेगा। उसकी आंखों में ऐसे भाव आ गए थे जैसे उसका बच्चा किसी राजसी सिंहासन पर बैठा हुआ हो। गंदूर और भुवनेश्वंर की आंखें भी कौतुहल और अचरज से फैल गई थीं। लेकिन सुमित्रा की आंखों में भावातिरेक से उमड़ आया पानी पलकों की बाड़ तोड़ कर, बह जाने के लिए अधीर हो उठा। मेरी पड़ोसन मीरा ने लेबर के बच्चे को मेरे कंधे पर बैठे देखा, तो वह भी जहां की तहां खड़ी हो गई। फिर ठिठक कर काम में लगे मजदूरों की ओर इशारा करते हुए बोली, "इनका बच्चा है...?" हैरानी उसकी आंखों से भी हटने का नाम नहीं ले रही थी !

नाग मंदिर कालोनी, शमशी, पोस्ट शमशी
जिला कुल्लू , हिमाचल प्रदेश -175126
मो. 0 84470 37777

कहानी

मेवे वाला

◆ मनोज कुमार शिव

विजयपुर किसी जन्नत से कम नहीं था। पहाड़ पर बसा एक बेहद खूबसूरत गाँव। उसके ऊपर कुछ था तो केवल नीला आसमान और तलहटी पर बहती थी बलखाती सतलुज। सर्दियों में जब विजयपुर हिम की चादर ओढ़ता तो आभा देखते ही बनती थी। देवदारू-बान का घना जंगल इसकी खूबसूरती को चार चाँद लगाता था।

कार्तिक मास शुरू हो चुका था। हवा में हल्की हल्की ठंडक तैरने लगी थी। यशोधा गौशाला में काम निपटाकर रसोईघर में व्यस्त थी।

गाय के गोबर से लिपा हुआ उसके रसोईघर का फर्श, फर्श पर मिट्टी व गोबर के मिश्रण से की हुई बारीक कलाकारी यशोधा की दक्षता को दर्शा रही थी।

चूल्हे के पास बिछाई हुई खजूर की चट्टाई ,एक ओर खजूर के बिन्ने पर बैठी यशोधा, लकड़ी की परात में आधा गीला-आधा सूखा मक्की का आटा, चूल्हे में बिहूल की जलती हुई लकड़ियां, अगले आंवदे पर रखा तवा, तवे पर अधकच्ची रोटी, पिछले आंवदे पर तांबिया जिसमें पानी गर्म हो रहा था, दूसरे आंवदे पर भाड़ू में बन रही दाल...यशोधा ने तैंथू से अंगारों को आगे खींचकर तवे वाली रोटी को नीचे सेंका तो रोटी फूल गई।

बीच-बीच में यशोधा एक भजन की कुछ पंक्तियां गुनगुना रही थी। रघुपति राघव राजा राम.... अगली रोटी बनाने के लिए आटे की लोई बनाने ही लगी थी कि अम्मा...ओ.. अम्मा..बाहर से किसी ने आवाज दी । अम्मा का संबोधन पाकर यशोधा चौंक गई। जहन में सबसे पहला ख्याल आया अपने बेटे मंगलू का। मंगलू- उसके कलेजे का टुकड़ा। उसे लगा जैसे आंगन में खड़ा होकर उसी को पुकार रहा हो।

खुद को आश्वस्त करने के लिए यशोधा ने बैठे-बैठे ही कहा 'कौण है ओ बाहरे'...

रोशनदान से झांक कर देखा तो उसका मंगलू नहीं बल्कि 13-14 वर्ष का एक लड़का... कंधे पर झोला लटकाए खड़ा था। कौन है बे तू ? क्या काम है तुझे ? यशोधा ने पूछा।

अम्मा! मेरा नाम बिरजू है ..मैं मेवा बेचने वाला हूं...

...मुझे नहीं चाहिए मेवा....अरे नहीं अम्मा! मैं आपको मेवा बेचने नहीं आया....मुझे तो रहने के लिए एक कमरा चाहिए। पिछले घर में पता किया तो उन्होंने कहा कि आपके यहां कमरा खाली है..मैंने हर जगह पता कर लिया....अब आपसे ही अंतिम उम्मीद है.. सर्दियां खत्म होते ही कमरा छोड़ दूंगा ...आप दे दोगी ना मुझे कमरा अम्मा!

यशोधा ने एकटक नजर से उस बातूनी मगर प्यारे से लड़के को देखा। एक मन करा की नहीं देगी कमरा। पता नहीं कौन है? कहां से आया है ?कैसे रहेगा ?क्यों किसी को घर में घुसा ले? पर फिर सोचा कि आज अगर उसका मंगलू साथ होता तो बिल्कुल उसी के जैसा होता...आखिर एक कमरे की ही तो बात है....उसको भी एक साथ मिल जाएगा...सर्दियाँ कट जाएंगी...चार पैसों की आमदनी भी होगी.. ।

अम्मा ! बोलो ...बिरजू ने फिर से कहा।

रुक जरा मैं नीचे आती हूं..

यशोधा ने आटे से सने हाथों को धोया और आंगन में चली गई। पास जाकर जब देखा तो बिरजू में अपने मंगलू का अक्स पाया..वैसी ही बड़ी बड़ी आंखें, ऊँचा लंबा कद, मजबूत शरीर और बातूनी भी पूरा मंगलू जैसा ही... । एक पल को तो लगा जैसे मंगलू ही वापस आ गया हो.. शायद कुलदेवता ने उसकी फरियाद सुन ली हो...

उसे बैठने के लिए एक खजूर का बिन्ना दिया 'अब बता कहां से आया है तू? कितने लोग होंगे तुम यहां रहने वाले ?'

अम्मा मैं अकेला ही हूं ...बाकी साथियों ने पास के गांव में अपने लिए कमरा ले लिया है...हम कुल पांच लोग हैं...मेवा बेचने का काम करते हैं...सर्दियों में पहाड़ की तरफ निकल पड़ते हैं और सर्दियाँ खत्म होते ही वापस अपने घर की ओर ...

'और तेरे मां-बाप?' यशोधा ने पूछा।

मां बाप तो बचपन में ही छोड़ गए। दूर के एक रिश्तेदार ने जैसे-तैसे पाल पोस कर बड़ा किया...अब तो वह भी नहीं रहे...बस टोली के लोग ही अपने हैं...लड़के के चेहरे पर कुछ पल के लिए हल्की निराशा छा गई थी...

मैं एकदम शरीफ लड़का हूं ...ना बीड़ी पीता हूं ना मदिरा ना भांग न सूल्फा... आप दोगी ना कमरा अम्मा...!

'और तेरे घर कहां है?'

घर तो मेरे उत्तराखंड में हैं केदारनाथ धाम का वासी हूँ मैं . .. जय भोलेनाथ!!! बिरजू ने जोर से जयकारा लगाया।

उत्तराखंड का नाम सुनते ही यशोधा का दर्द जाग गया मानो भरते घावों को फिर से किसी ने कुरेद दिया हो।

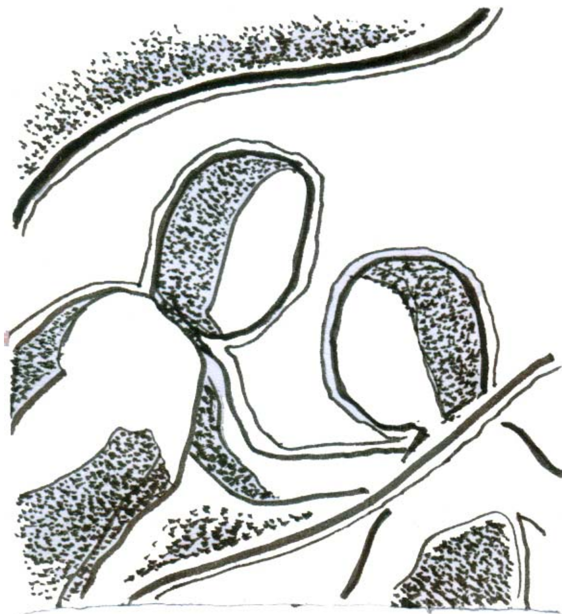
दरअसल... कुछ वर्ष पहले उत्तराखंड में हुई भीषण त्रासदी ने यशोधा के पति और बेटे मंगलू को उससे छीन लिया था। कई महीनों तक तो उसे विश्वास ही नहीं हुआ कि ऐसा कुछ उसके साथ घट चुका है। बेचारी एक-दो बार उनकी तलाश में उत्तराखंड भी जाकर आई। वहाँ अनजान लोगों को उनकी तस्वीर दिखाती और पूछती कि देखा है क्या इनको...मगर सबका एक ही जवाब होता ना...नहीं देखा ...

बह चुकीं सड़कें, जड़ों समेत उखड़े हुए पेड़, बड़ी-बड़ी चट्टानें उस त्रासदी की भयानक तस्वीर पेश कर रहे थे जिन्हें देखकर किसी की भी रूह सिहर उठती।

यशोधा ने पिछले महीने ही अपनी जिंदगी के पचास बसंत देखे। पति हरिया और बेटे मंगलू की गैरमौजूदगी ने उसे हिला कर रख दिया था....।

मगर फिर भी यशोधा ने खुद को काफी हद तक संभाल लिया था।

विजयपुर गांव में उसकी 75 बीघा जमीन थी, पुश्तैनी घर, एक गाय, दो भेड़ें भी पाल रखी थीं। खुद को काम में इतना व्यस्त



रखती थी कि काले अतीत की छाया उसके वर्तमान और भविष्य को प्रभावित ना कर सके...

गांव वाले उसकी हिम्मत और जिंदादिली की दात देते थे। इतनी जमीन में खेती हो रही थी। उजाड़ नहीं डाली थी।

गांव वालों के बैल लेकर, किसी एक आदमी को दिहाड़ी पर लगाकर बीज बिजती थी।

कुछ खेतों में आलू लगाए थे ,कुछ में मक्की बीज रखी थी, दो-तीन खेतों में धान रोपे थे।

अपने खेतों, अपनी फसलों को देखकर उसके चेहरे पर मुस्कान अनायास ही तैरने लगती थी। उसे लगता कि जैसे उसके पति हरिया आज भी इन्हीं खेतों में बैलों की जोड़ी को हांक रहा है और उसका बेटा मंगलू पिता के पीछे पीछे चलकर हल की फाल से ढीली हुई मिट्टी में बीज डाल रहा है। ये खेत उसके खुशहाल अतीत की यादों को समेटे हुए थे।

इन्हें वह बंजर हरगिज नहीं डालना चाहती थी। मगर कुछ धूर्त लोगों की उसकी जमीन पर बुरी नजर थी जो सोचते थे कि कब जैसे मौका मिले और उसकी सारी जमीन हड़प ली जाए।

'अम्मा...ओ अम्मा...' अपने सुनहरे अतीत की यादों में खोयी यशोधा को बिरजू के शब्दों ने वापिस भविष्य में लौटा दिया था.. आंखों से आंसू निकलने ही लगे थे कि उसने अपने दुपट्टे से पोंछ लिए ।

...तो कमरा मिल जाएगा ना... बिरजू ने उत्सुकता से पूछा।

बड़ा बातूनी है रे तू..चपड़ चपड़ बोलता ही रहता है.. कमरा तो है मेरे पास मगर कुछ बातों का ध्यान रखना है तुझे..समझा.. सफाई चाहिए मुझे..गंदगी मुझे जरा भी पसंद नहीं..दूसरा.. ऊंची आवाज में ना तो बोलना ..ना ही फिल्मी गाने चलाने ..तीसरा.. किराया महीने की पहली तारीख को देना होगा। गांव में पहले भी कुछ लोग आए थे ।पंद्रह दिन जमुना के घर रहे और एक दिन रातोरात भाग गए..सारा सामान भी ले गए कलमुँहे ... कोई किराया भाड़ा भी नहीं दिया..

हा.. हा... हा... बिरजू हँस दिया मगर मैं ऐसा बिल्कुल नहीं हूँ अम्मा..मुझे सफाई पसंद है..और मैं किराया भी समय पर दे दिया करूंगा..बिरजू ने मुस्कुराते हुए कहा ।

बिरजू को एहसास हो गया था कि उसे कमरा मिल गया है। यशोधा को कल सुबह सामान सहित आने की बात कहकर वह चला गया ।

यशोधा सोचने लगी थी कि क्या उसने सही भी किया...है तो अजनबी और आजकल तो जमाना वैसे ही खराब है... लूटपाट, चोरी-डकैती तो बहुत ज्यादा होने लगी है पिछले साल भी गांव में चोरी हुई थी... लक्ष्मी के जेवर गायब थे। कुल देवता के मंदिर में दान पात्र टूटा मिला था। वह तो जरूर उन प्रवासियों का काम होगा जो मनसाराम के घर लैंटर डालने आए थे ।और ये भी तो

पाखला है,परदेसी है...पर इस लड़के में जैसे शराफत है भोलापन है और है भी बिल्कुल उसके मंगलू जैसा....

यशोधा ख्यालों के घने जंगल में खो सी गई।

अगली सुबह जब यशोधा गौशाला में गोबर हटा रही थी तो आँगन से किसी की आवाज आई ...अम्मा ओ अम्मा... बाहर निकली तो देखा बिरजू था..सिर पर एक बड़ा संदूक, कंधे पर एक झोला और साथ में दो और लड़के..उनके हाथों में भी सामान था।

संदूक को साथियों की मदद से जमीन पर रखते हुए बिरजू बोला। अम्मा ! ये हैं गोलू और पिंकू..मेरे ही गांव से है..दोनों लड़कों ने यशोधा को नमस्ते की और बिरजू से कुछ बातकर चले गए।

यशोधा ने आंगन के कोने में बनी छोटी हौदी से नल खोल कर अपने गोबर वाले हाथ साफ किए। हौद के साथ वाले कमरे का ताला खोलते हुए बोली ..यह होगा तेरा कमरा बिरजू.. कमरा एकदम बढ़िया है...दीवारों पर पिछली दिवाली को ही चूना किया है.. रोशनदान भी है हवा के लिए.. बस तू सफाई का ध्यान रखना और दीवारें गंदी मत करना..

दरवाजा खुल चुका था। बिरजू ने कमरे में एक नजर दौड़ाई। कमरा उसे पसंद आया। उसे यशोधा की सारी शर्तें भी मंजूर थी। बिरजू सामान को कमरे में ले आया। एक थैला यशोधा भी ले आई।

क्या लाया है बे इतना कुछ तू...??

ज्यादा नहीं अम्मा! कुछ कपड़े हैं..थोड़े से बर्तन है...एक बड़े थैले में मेवा है.. रुको मैं दिखाता हूं..बिरजू ने झट से मेवे वाला थैला खोला। उस में छोटी-छोटी कपड़ों की पोटलियाँ थीं... एक में बादाम, एक में किशमिश, एक में पिस्ता, एक में छुआरे, एक में मिश्री... बिरजू ने थोड़ा-थोड़ा हर पोटली से निकाला और यशोधा की ओर बढ़ाते हुए कहा..लो अम्मा.. खाकर तो देख.. .कैसा है. .. यशोधा ने पहले तो थोड़ा इनकार किया मगर बिरजू के दोबारा कहने पर हथेली आगे बढ़ा ली।

यशोधा सोचने लगी कि जिद्दी तो बहुत है बिरजू.. बिलकुल उसके मंगलू जैसा ,नटखट भी बातूनी भी....

कैसे प्यार से कहता है

अम्मा जैसे मैं ही उसकी अम्मा हूं...पर कितना सुकून मिलता है उससे अम्मा सुनने में..जैसे मंगलू ही लौट आया हो..

कैसे लगे अम्मा मेरे मेवे? ..बिरजू यशोधा को विचारों के समंदर से वापिस ले आया । बहुत अच्छे हैं बे... हल्की मुस्कान के साथ यशोधा बोली । अगली सुबह से काम पर निकल जाऊंगा. . दिनभर मेहनत करूँगा ..ताकि चार पैसे कमा सकूं.. बाकी लड़कों ने भी काम शुरू कर दिया है..बिरजू ने बाकी सामान थैलों से निकालते हुए कहा। यशोधा ने भी सामान को लगाने में उसकी मदद की ।

सर्दियां अब बढ़ने लगी थीं। सुबह जब सूरज सामने वाले पहाड़ पर से झांकने लगता तो विजयपुर में रौनक सी आ जाती थी वरना उस ठंडी सुबह में कोई बाहर नहीं निकलता। एक ऐसी ही सुबह यशोधा घर का काम निपटाकर गाय के लिए पत्ते लाने घासणी की ओर जाने लगी थी..अम्मा! मैं भी चलूंगा तेरे साथ पत्ते लाने यशोधा को जाते हुए देख बिरजू ने विनय पूर्ण ढंग से कहा। 'तुझे मेवा बेचने नहीं जाना क्या !! रहने दे मैं खुद ले आऊंगी... .श्‌ 'तो अभी इतनी धूप भी कहां खिली है अम्मा! जब अच्छी खासी धूप आएगी तब चला जाऊंगा....'

यशोधा समझ गई थी कि बिरजू अपनी जिद्द पर अड़ गया है...'चलो फिरश्‌ मुस्कुराते हुई यशोधा ने कहा।

बिरजू के चेहरे की आभा बढ़ गई। दोनों घासणी की ओर बढ़ चले। यशोधा को बिरजू में अपने मंगलू की हर बात नजर आती थी । उसे तो यही लगता था कि जैसे कुल देवता ने बिरजू के भेष में मंगलू को ही उसे वापस लौटा दिया है।

वह कौन सा मंदिर है अम्मा उस पहाड़ी पर? बिरजू ने पहाड़ी की ओर इशारा करते हुए कहा। वह हमारे कुल देवता का मंदिर है ..यशोधा ने सर झुकाते लगभग दोनों हाथों को जोड़कर मंदिर की ओर देखते हुए कहा। बिरजू ने भी अम्मा को देखकर सर झुकाकर कुल देवता को प्रणाम किया। ये हमारी रक्षा करते हैं हमारी हर मनोकामना पूरी करते हैं और हमें खतरों से बचाते हैं। यशोधा ने घासणी की ओर बढ़ते हुए कहा। अच्छा इतने पालु हैं ये देवता ? बिरजू ने उत्सुकता से पूछा। बातें करते-करते दोनों कब घासणी पहुंच गए पता भी नहीं चला। यशोधा बिहूल के पेड़ पर चढ़कर पत्तियां निकालने लगी। बिरजू ने गिर रही पत्तियों के दो हल्के हल्के बोझे बनाए। दोनों ने बोझे पीठ पर उठाए और घर की ओर चल दिए।

जिस तरह समय आगे बढ़ता जा रहा था दोनों में आत्मीयता बढ़ती गई । घर के बाकी कामों में भी बिरजू सुबह शाम यशोधा की मदद कर दिया करता था। ओबरे से गोबर का किल्टा खेतों में डाल आता... हैंड़पंप से पानी की टोकणी ले आता...काम पूरी तत्परता से करता जैसे उसके अपने घर का काम हो। शाम को जब मेवा बेचकर थका हारा घर आता तो यशोधा उसके लिए अदरक वाली चाय बनाती। जिसे वह सुड़प-सुड़प कर पी जाता।

एक शाम रोज की तरह बिरजू फेरी लगाकर लौटा। चेहरा कुछ उदास लग रहा था।

क्या हुआ बिरजूवा? आज कोई ग्राहक नहीं मिलया क्या?? बिरजू चुप रहा ।

हुआ क्या तुझे? तबीयत तो ठीक है ना तेरी? यशोधा ने चिंता जताते हुए पूछा ।

मन ही मन सोच रही थी कि कहीं गांव वालों ने तो नहीं डांट दिया इसे...या फिर प्रधान के लड़कों ने तो कोई शरारत नहीं करी इसके साथ....

यशोधा को चिंता होने लगी थी । नहीं अम्मा..तबीयत तो ठीक है...फिर इतना उदास क्यों है बे तू? पहले जैसा हँसता मुस्कराता भी तो नहीं है ?

वो अम्मा....

बोल क्या बोलणा चाहता है.....यशोधा ने कारण जानने की उत्सुकता से कहा । वो अम्मा!!.. गांव की एक महिला ने मुझे आपके बारे में बताया...उसने कहा कि आपका परिवार उत्तराखंड. ..... बिरजू बोलते बोलते रूक गया ।

यशोधा के चेहरे पर दर्द उभर आया था.. कोई हरकत नहीं. .कोई शिकन नहीं..

अम्मा मुझे बहुत दुख हुआ जानकर... सच में अम्मा... बिरजू की आंखों में आंसू छलछलाने लगे थे।

यशोधा उस घटना को याद करने लगी । 'मेरा मंगलू...मेरा परिवार...' कहते कहते यशोधा फफक-फफक कर रोने लगी. । अम्मा!! रो मत अम्मा!! भगवान की मर्जी के आगे किसका जोर है.. अम्मा देख मेरा भी तो कोई नहीं है दुनिया में...अनाथ हूं मैं अनाथ... यूँ कहते ही बिरजू की आँखों से गंगा जमुना बहने लगी।

चुप कर बे बिरजूवा.. मैं हूं ना तेरी अम्मा... अम्मा बोलता भी है और मुझे पराया भी समझता है तू...पगला कहीं का। यशोधा ने बिरजू को गले लगाते हुए कहा। बिरजू अब और जोर जोर से रोने लगा। कुछ देर दोनों सुबकते रहे। एक दूसरे को ढांढ़स बनाते रहे। दोनों की आँखों से वर्षों का इकट्ठा हुआ दर्द रिसता रहा जिसे गंवाकर दोनों बहुत हल्का महसूस करने लगे थे।

अगली सुबह यशोधा ने गौशाला का काम निपटाया.. चाय बनाई..दो गिलासों में डाली और ओबरे में बिरजू के पास आ गई. .बिरजू..ओ बिरजू! उठ!! दरवाजा खटखटाते हुए यशोधा ने कहा. . जब थोड़ा और दरवाजा खटखटाया तो पाया कि बिरजू अंदर नहीं था। कहाँ चला गया यह लड़का सुबह सुबह.. मेवों की पोटलियाँ भी अभी यहीं पड़ी हैं...

यशोधा ने आंगन में खड़े होकर इधर उधर देखा तो वहां भी बिरजू नहीं था। आँगन में एक कोने पर जाकर नजर घर के सामने वाली पहाड़ी पर पड़ी..सूर्य उदय होने वाला था। पहाड़ी पर कुल देवता का मंदिर चमक उठा था.. जय सूरज देवा...नमस्कारी तेरे नाम की...जय कुलदेवा.. ।

यशोधा ने सर झुका कर नमस्कार की... कुल देवता के मंदिर को निहार रही थी कि उसी रास्ते किसी को गांव की तरफ आते देखा.. 'अरे ! यह तो बिरजू है ..सुबह सुबह इतनी ठंड में कहाँ घूम रहा है ये पगला! यशोधा ने खुद से बात करते हुए कहा...बिरजू बिजली की तेजी से पहाड़ी से नीचे उतर रहा था । कुछ ही समय में वह आँगन में पहुंच गया। 'कहां गया था तू ? देख तेरे लिए चाय लाई थी..अब तो ठंडी भी होने लगी है...शृ"

बस अम्मा मंदिर तक गया था..बहुत अच्छा मंदिर है...। वो आपने कहा था ना कि देवता बड़ा दयालु हैं सबकी कामनाएं पूरी करता है तो मैं देवता से कुछ मांगने गया था...यशोधा बिरजू की बातों में छुपी मासूमियत देख कर मुस्कुराई। अच्छा... तो सुन ली क्या कुलदेवता ने तेरी फरियाद?

यशोदा ने बिरजू की ओर देखते हुए कहा।

पता नहीं ...बाद में ही पता चलेगा...वैसे क्या मांगा तूने आज कुलदेव से सुबह-सुबह ठंड में जाकर ? यशोधा ने चाय का गिलास बिरजू को थमाते हुए कहा ।

दोनों आंगन की दिवाला पर बैठ गए थे । वो मैंने देवता को कहा... हाँ क्या कहा तूने ? कि आपको मंगलू और उसके बाबू जी को वापिस लौटा दे।

यशोधा ने एक बाजू बढ़ाकर बिरजू को गले लगा लिया और सामने वाली पहाड़ी पर स्थित कुल देवता के मंदिर को निहारने लगी। मानो जैसे पूछ रही हो कि देवा क्या इस मासूम की मन्नत को पूरा कर देगा तू? क्या कोई चमत्कार कर सकता है ?

मंदिर के ठीक ऊपर आसमान में पंछी उड़ रहे थे। नीला आसमान बहुत ही सुंदर दिखाई दे रहा था। धूप गांव के हर घर में दस्तक देने लगी थी। सारा गांव हरकत में आ चुका था। गांव की औरतें अपने अपने डंगरों की सेवा करने में लग गई थीं।

बच्चे विद्यालय जाने की तैयारियां करने लगे थे।

यशोधा को बिरजू के रूप में एक भावनात्मक सहारा मिल गया था। वह उसे अपने बेटे के रूप में मान भी चुकी थी। बिरजू भी यशोधा को न केवल अम्मा कहता बल्कि दिल से मानता भी था। यशोधा बिरजू की हर हरकत में मंगलू को देखती थी। उसका ख्याल रखती थी हालांकि उसे भी पता था कि बिरजू उसका अपना बेटा नहीं है वह तो महज कुछ महीने बाद उसे छोड़ कर चला जाएगा। फिर क्यों इतनी भावनात्मक हुई जा रही है? आखिर यह मोह ममता कैसी जिसका कोई आधार ही नहीं? अब तो गांव की औरतें भी बातें बनाने लगी थीं... कहती फिरती थीं कि एक अजनबी पर इतना विश्वास करना ठीक नहीं । माना कि बेटे जैसा है पर है तो गैर की औलाद ही ना..'

खेतों से लौटते वक्त यशोधा को गोमती ने कहा कि 'यशोधे. ! है कौन ये लड़का जिसको इतना मानती है तू... इन फेरी वालों का क्या भरोसा कब हाथ साफ कर जाएं ...और तेरे पास तो कपड़े-गहने भी बहुत हैं घर पर... क्या पता कब उसका दिमाग फिर जाए ?

यशोधा चुप रही। कुछ नहीं बोली। एक मन तो कर रहा था कि सुना दे गोमती को खरी-खरी.. मगर एक अच्छी पड़ोसन होने के नाते सब सह गई। उसका एक मन कहता कि लोग सही भी तो कह रहे हैं । बिरजू तो कुछ ही दिन उसके पास है फिर तो वह चला जाएगा ..अपने घर..अपने प्रदेश..फिर इतना लगाव क्यों ? मगर दूसरे ही पल उसका दिल उसे बिरजू पर ममता की घनी छांव करने

से नहीं रोक पाता। बेचारी यशोधा कशमकश में जी रहे थी।

सर्दियां खत्म होने की कगार पर थी। पहाड़ों पर बर्फ अब कम ही दिखने लगी थी। सर्दियों का अंत मतलब बिरजू का वापस अपने घर लौट जाना।

अम्मा...!! इन सर्दियों में मैंने तेरह हजार के मेवे बेचे। अच्छी कमाई हो गई। बिरजू ने पैसे यशोधा को दिखाते हुए कहा।

अरे वाह बिरजू... खूब मेहनत करता है बे तू...अच्छी रकम लेकर जाएगा अपने घर इस बार...यशोधा की बातों में हल्की सी निराशा भी थी ..

पता अम्मा! तुम्हारे दिए हुए ऊनी दस्तानों और स्वेटर ने मेरी बहुत मदद की। तभी तो ठंड में इतनी बिक्री हुई। बिरजू थोड़े उत्साह के साथ बोला जिसमें यशोधा के प्रति कृतज्ञता साफ झलक रही थी।

अम्मा गोलू ने 10000 और पिंकू ने 11000 के मेवे बेचे।

गोलू कह रहा था कि वह अपनी मां के लिए एक साड़ी, छोटी बहन के लिए किताबें और अपने बापू के लिए कुर्ता ले जाएगा और पिंकू अपने छोटे भाई के लिए बल्ला, मां के लिए चप्पल ले जा रहा है।

दोनों बहुत खुश हैं...

हम्म्म्म...यशोधा बिरजू की भावनाओं को समझ गई थी। एक लड़का जिसका कोई परिवार ही नहीं किस पर अपना पैसा खर्च करे? किसके साथ अपनी खुशियां मनाए?

यशोधा बिरजू के दर्द को महसूस कर रही थी।

बिरजू के वापस जाने के दिन पास आने लगे थे।

यशोधा ने बिरजू से बात करना कम कर दिया था। उसे वह चाय भी कभी-कभार बना कर देती । न बिरजू की किसी काम में मदद मांगती.न शाम को उसके पास दिन भर की बातें सुनाती । प्यार का भूखा बिरजू यशोधा में आए इस बदलाव को भांप गया था।

..अम्मा !! क्या हुआ है तुझे? अब तू पहले जैसे क्यों नहीं रही ? ना मुझसे बात करती है? ना मुझे प्यार करती है? मुझसे कोई गलती हो गई है क्या ? बता मुझे अम्मा...

चुप कर तू...ज्यादा चपड़ चपड़ करता रहता है ...अपने काम से काम रख...ज्यादा बात करना जरुरी है क्या ? क्यों करूं मैं तुझे प्यार ? यशोधा गुस्से में बोल गई जिसमें उसकी विवशता साफ नजर आ रही थी।

यह तू क्या कह रही है? क्या मैं तेरा बेटा नहीं हूं ?तूने खुद ही तो कहा था ना....

हां हां नहीं है तू मेरा बेटा... तू नहीं है मेरा मंगलू...मेरा मंगलू तो.....

बस अम्मा!! बस.. अब और न बोल..मुझ अनाथ को तूने इतना प्यार दिया. वह भी कम नहीं। आखिर क्यों देगी तू मुझे प्यार



? मैं तो पराई औलाद हूँ ना..पर तूने जितना भी प्यार मुझे दिया मैं उसे जिंदगी भर नहीं भूलूंगा।

यशोधा ने बिरजू की ओर पीठ कर ली थी। न जाने कैसे उसने खुद को इतना कठोर बना दिया था? कैसे वो इतना कुछ कह गई ? उसकी आंखें समंदर हो चुकी थीं। मन ही मन बिरजू से कह रही थी कि मुझे माफ कर दे बिरजू... माफ कर दे मेरे बच्चे ! मैंने जो कुछ भी कहा सब झूठ है। मैं तुझ से बहुत प्यार करती हूं कितना कुछ कह गई तुझे... मुझे माफ कर दे...।

बिरजू का गला भी भर आया था।

अम्मा.. मैं कल जा रहा हूं.. पिंकू और गोलू मेरा सामान बस अड्डे तक पहुंचा देंगे ।फिर हम तीनों शाम की बस से चले जाएंगे। क्या..? तू जा रहा है यशोधा ने आंसू पोंछकर बिरजू की तरफ मुड़ते हुए कहा।

हाँ..अभी कुछ सामान बांधना है।

यशोधा भारी मन से बिरजू का सामान बंधवाने में उसकी मदद करने लगी।

उसका ममता भरा दिल तो कह रहा था कि बिरजू रुक जा बेटा..मत जा... रुक जा मेरे पास..अपनी अम्मा के पास...वहां किसके पास रहेगा ?कौन तेरा ख्याल रखेगा ? किसको मां कहेगा तू ?

मगर उसके हाथ सामान बांधने में लगे थे। बिरजू यशोधा की तरफ देख रहा था मानो मन ही मन कह रहा हो कि अम्मा मुझे रोक ले...मुझे नहीं जाना तुझे छोड़कर...तेरे साथ रहना है तेरा बेटा बनकर...।

मगर बिरजू अपनी इस खवाहिश को यशोधा के सामने शब्द रुप नहीं दे पाया। सोचता रहा कि कहीं अम्मा मुझे गलत ना समझ

बैठे और मुझ फेरीवाले की औकात ही क्या है ? कहां पूरे गांव परगने में अम्मा की इतनी इज्जत-सम्मान और कहां मैं? लोग, इनके नाते रिश्तेदार क्या सोचेंगे ? क्या कहेंगे कि एक अनजान को अपने घर में पनाह देकर परिवार का सदस्य ही बना लिया .. !! कितना कुछ सुनना पड़ेगा बेचारी अम्मा को मेरी वजह से...

नहीं..नहीं मेरी वजह से भोली अम्मा को कोई कुछ कहे..मुझे मंजूर नहीं ....

शाम होने को थी ।यशोधा गाय को दूहने के लिए गौशाला में गई। बिरजू ने अम्मा की रसोई से टोकणी उठाई और पानी लाने चौराहे के हैंडपंप के पास चला गया। आज उसकी चाल बिलकुल धीमी थी। हर एक नजारे को बड़े गौर से देख रहा था मानो जैसे हर दृश्य को अपनी आंखों में सदा के लिए समेटकर रख लेना चाहता हो। प्रधान के घर के साथ वाले छोटे मंदिर के पास पहुंचकर थोड़ी देर रुका रहा.. देव पिंडियों को निहारा,सर झुकाकर नमन किया और आगे बढ़ गया ।थोड़ा आगे जाकर दोराहे पर फिर रुका जहाँ से वह अम्मा के साथ घासणी की तरफ घास पत्तियां लाने जाया करता था ।हर एक चीज जैसे उससे निवेदन कर रही हों कि बिरजू मत जा. ..यहीं का होकर रह जा....

ख्यालों में आकंठ डूबे बिरजू ने कब पानी से घड़ा भरा... कब घर पहुंच गया...पता ही नहीं चला ।अम्मा अब तक रसोईघर में आ चुकी थी। बिरजू ने टोकणी कंधे से उतार कर फर्श पर एक कोने में त्रिड़े पर रख दी थी ।

बिरजूवा आ बैठ...बिन्ना ले... यशोधा ने खजूर के बिन्ने को उसकी तरफ सरकाते हुए कहा।

बिरजू बैठ गया।

आज रात का खाना यहीं खा लेना बिरजू... मैं तेरे लिए सिड्डू बना रही हूँ ...फिर तो तू चला जाएगा अपने घर....

सिड्डू का नाम सुनकर भी बिरजू का उत्साह ठंड़ा रहा। वरना वह तो अम्मा के हाथों बनी हर चीज की बड़ी तारीफ करता। बड़े चाव से खाता। मगर आज एकदम चुप रहा ।

रात का खाना खाकर बिरजू अपने कमरे में आ गया। सारी चीजों को बांध चुका है यह सुनिश्चित कर रहा था ताकि सुबह जल्दी ही निकल सके। आराम करने के लिए खाट पर लेटा तो था मगर आज नींद कहीं गायब थी वरना उसे तो लेटते ही गहरी नींद आ जाया करती थी। मन में अनेक विचार कौंध रहे थे। अम्मा को छोड़ कर कहां जाएगा..? अम्मा का भी तो कोई नहीं है..

इसका ख्याल कौन रखेगा? बेचारी अकेली है....एक बार अम्मा से बात करके तो देखूँ.. मगर कहूंगा क्या...कैसे कह दूं कि मुझे तेरे साथ रहना है अम्मा....तेरे पास रहना है...तेरा बेटा बनकर. ... तेरा मंगलू बनकर....

मगर कैसे? क्या अम्मा समझ पाएगी? क्या यह मेरी कोरी कल्पना ही तो नहीं है...

हाँ..कल्पना ही तो है...ऐसा कैसे हो सकता है? नहीं हो सकता... हरगिज नहीं....'

बाहर टिड्डीओं के दल ने निशा गान शुरू कर दिया था तो बिरजू के भीतर विचारों की उठापटक लगी हुई थी।

यशोधा की आंखों से भी आज नींद गायब थी ।एक मन कह रहा था कि बिरजू को रोक ले ..उसको मना ले..उस बेचारे का भी तो कोई नहीं है दुनिया में...कहां भटकता रहेगा? सोचती कि क्या एक अनाथ को अपनी ममता की छांव भी नहीं दे सकती हूँ? कैसी माँ हूं ? क्या पता देवा की भी यही इच्छा हो...बिरजू को मंगलू की जगह मुझे सौंप दिया हो...मगर गांव वाले क्या कहेंगे? रिश्तेदारी में कई बातें होगी ।

विचारों का ऐसा बवंडर उठा था कि कुछ भी निर्णय ले पाना मुश्किल था।

आखिर वो सुबह भी आ ही गई । यशोधा आज जल्दी उठ गई थी। गौशाला का काम निपटाकर रसोईघर में दही मथने के लिए घड़े को हिलाने लगी थी कि आँगन में किसी की आवाज सुनाई दी। रोशनदान से झांक कर देखा तो गोलू और पिंकू बिरजू का सामान कमरे से बाहर निकाल रहे थे । बिरजू दरवाजे को बंद कर रहा था। 'तुम लोग रुको मैं अभी आता हूँ..बिरजू अम्मा से मिलने के लिए रसोई घर की तरफ बड़ा। 'अम्मा ठीक है तो..मैं जा रहा हूं...आप अपना ध्यान रखना। यशोधा के पैर छूते हुए बिरजू ने कहा।

जिंवदा रे ! यशोधा ने बिरजू के सर पर हाथ फेरते हुए कहा। ज्यादा कुछ नहीं बोल सकी.. बोलती तो फिर खुद को रोक नहीं पाती।

अपना ध्यान रखना बिरजूवा.. रोटी की पोटली को बढ़ाते हुए यशोधा बोली।

तेरा सफर लंबा है..रास्ते में दोस्तों के साथ खा लेना..बिरजू ने पोटली को लिया और आंगन की तरफ बढ़ चला ।

यशोधा दरवाजे तक आ चुकी थी। बिरजू ने दहलीज पर खड़ी यशोधा के अंतिम बार पाँव छुए। यशोधा कुछ नहीं बोली ।

गोलू और पिंकू ने दोनों हाथों में थैले पकड़ लिए थे ।जल्दी चल बिरजू! बस निकल जाएगी। पिंकू बोला।

दहलीज पर खड़ी यशोधा नंगे पांव ही आंगन में दौड़ पड़ी। एक मन कह रहा था कि आवाज देकर बिरजू को वापस बुला ले.. उसको यूं जाने ना दे.. मगर न जाने क्यों चुप रही। यशोधा के पाँव ठंड से सुन्न होने लगे थे। आंगन के पत्थर किसी ग्लेशियर की तरह ठंडे लग रहे थे। मगर यशोधा को जैसे कुछ भी महसूस ही नहीं हो रहा था। उसकी आंखों से आंसुओं की धार उसके कपोलों से गुजरती एक लंबी रेखा बना रही थी। आखिर क्यों नहीं रोका बिरजू को? क्यों जाने दिया उसको? क्या खुशहाल जीवन जीना गुनाह है?

बिरजू ने संदूक सर पर उठाया एक हाथ में थैला लिया एक नजर यशोधा को देखा और साथियों के पीछे पीछे चलने लगा।

दहलीज पर खड़ी यशोधा नंगे पांव ही आंगन में दौड़ पड़ी। एक मन कह रहा था कि आवाज देकर बिरजू को वापस बुला ले.. उसको यूं जाने ना दे.. मगर न जाने क्यों चुप रही। यशोधा के पाँव ठंड से सुन्न होने लगे थे। आंगन के पत्थर किसी ग्लेशियर की तरह ठंडे लग रहे थे। मगर यशोधा को जैसे कुछ भी महसूस ही नहीं हो रहा था। उसकी आंखों से आंसुओं की धार उसके कपोलों से गुजरती एक लंबी रेखा बना रही थी।

आखिर क्यों नहीं रोका बिरजू को? क्यों जाने दिया उसको? क्या खुशहाल जीवन जीना गुनाह है?

जितने तीव्र वेग से यशोधा के मन में विचार कौंध रहे थे उतनी ही तेजी से आँसू निकलने लगे थे। वह सोचने लगी कि देवता ने भी इंसाफ नहीं किया उसके साथ.. उसकी भक्ति में आखिर क्या कमी रह गई थी?

आज यशोधा देवता से मानो कुछ सवाल करना चाहती थी। बहुत रुष्ट थी देवता से ,नाराज थी।

यशोधा ने दरवाजे के पास पड़ी चप्पल पहनी..घर के दरवाजों पर सांकणी लगाई और कुलदेव के मंदिर की ओर बढ़ गई मानो जैसे वह देवता को सामने बिठाकर अपने लिए इंसाफ मांगना चाहती हो।

दूसरी तरफ बिरजू साथियों संग बस अड्डे की ओर बढ़ तो रहा था मगर मन अभी भी पीछे रह गया था। आंसुओं से उसकी आंखें भर आई थी।

सोच रहा था कि क्या वह यूँ ही खानाबदोश जिंदगी जीता रहेगा? क्या यूं ही गुजर जाएगा उस का पूरा जीवन?

अपने आंसू पोंछते हुए यशोधा ने ध्यान दिया कि देव प्रतिमा के पास एक पोटली में बादाम, एक में पिस्ता, एक में छुआरे, एक में किशमिश रखी है। यह बिरजू ने देवता को चढ़ावा लगाया था। उन्हें देख यशोधा फिर से रोने लगी। ओ देवा! मुझ कुल्च्छिणी को तो तू सजा दे रहा है पर उस भोले बिरजू की पुकार तो सुन लेता। देख तेरे दर पर आकर प्रार्थना करके गया है वो। उसकी फरियाद तो पूरी कर देता तू... यह क्या किया तूने देवा? यह क्या किया? यशोधा ने अपना सिर देव प्रतिमा के आगे मंदिर के फर्श पर टिका दिया। आँखों से आंसुओं की जैसे बाढ़ सी आ गई थी। यशोधा ने इसी बीच पाया कि जैसे किसी ने उसके कंधे को छुआ।

उसे लग रहा था जैसे भगवान ने सारे जमाने के दुख उसी के भाग्य में लिख दिए हों। जैसे भगवान खुद कितना असंवेदनशील और लाचार हो गया हो..

उधर यशोधा मंदिर की चढ़ाई चढ़ने लगी थी । वह जल्द से जल्द मंदिर पहुंचना चाहती थी। विचारों की उधेड़बुन में फंसी यशोधा तेजी से मंदिर तक की चढ़ाई चढ़ गई।

मंदिर परिसर में कोई नहीं था इतनी सुबह होता भी कौन। यशोधा ने मंदिर परिसर की सबसे निचली सीढ़ी पर चप्पल उतार दिए। परिसर के एक कोने में बनी पानी की टंकी से नल खोलकर हाथ धोए। कुछ छींटें खुद को डालकर पवित्र किया। सर पर दुपट्टा आगे बढ़ा लिया।

वर्गाकार भूखंड पर बना हुआ मंदिर। चारों ओर का नजारा साफ दिख रहा था। मंदिर परिसर के ठीक मध्य में देवता का वास स्थान। मंदिर की घंटी बजाकर यशोधा देव प्रतिमा के ठीक सामने आकर बैठ गई। कुछ देर देव प्रतिमा को एकटक देखती रही। चेहरे से भावशून्य, न कोई शिकन न कोई हावभाव। फिर अचानक फूट-फूटकर रोने लगी।

देवा ! मेरे साथ ऐसा क्यों किया तूने? क्यों किया देवा? पहले मुझसे मेरे परिवार को छीना। आज तक मुझे उनकी कोई खबर नहीं है। क्या पता जिंदा है भी या नहीं......

देवा ! मुझ अभागिन पर ऐसा जुल्म क्यों ? क्या कमी रह गई थी मेरी भक्ति में देवा?

हर साजी को तेरी पूजा करती हूँ। फसल के आने पर सबसे पहले तुझे भोग लगाती हूँ। हर रोज तेरे नाम का दीपक जलाती हूँ.. तुझे तो पता है ना देवा कि मेरे मन में कोई खोट नहीं । क्या कमी रह गई थी मेरी ममता में कि तूने बिरजू को भी मुझसे छीन लिया?

यशोधा के प्रश्न एक के बाद एक निकलते जा रहे थे। ऐसे प्रश्न कि कोई सुनता तो उसका दिल भी पसीज जाता। उसकी दारुण्य हालत देख कर कोई भी पलकें भीगो देता ।

अपने आंसू पोंछते हुए यशोधा ने ध्यान दिया कि देव प्रतिमा के पास एक पोटली में बादाम, एक में पिस्ता, एक में छुआरे, एक में किशमिश रखी है। यह बिरजू ने देवता को चढ़ावा लगाया था । उन्हें देख यशोधा फिर से रोने लगी। ओ देवा! मुझ कुल्च्छिणी को तो तू सजा दे रहा है पर उस भोले बिरजू की पुकार तो सुन लेता। देख तेरे दर पर आकर प्रार्थना करके गया है वो। उसकी फरियाद तो पूरी कर देता तू... यह क्या किया तूने देवा? यह क्या किया?

यशोधा ने अपना सिर देव प्रतिमा के आगे मंदिर के फर्श पर टिका दिया। आँखों से आंसुओं की जैसे बाढ़ सी आ गई थी।

यशोधा ने इसी बीच पाया कि जैसे किसी ने उसके कंधे को छुआ। खुद को संभालते हुए , आँसू पोंछे। पीछे मुड़कर देखा तो बिरजू खड़ा था।

अम्मा !...मुझे नहीं जाना है कहीं ....तेरे पास रहना है...तेरे साथ रहना है...तेरी सेवा करनी है..तेरे हर काम में हाथ बंटाना है...तेरे हाथ की बनी रोटी खानी है... मुझे अपना ले अम्मा... मुझे अपने पास अपना नौकर रख ले....

बिरजू रोते-रोते एक ही सांस में सब कह गया।

कविता

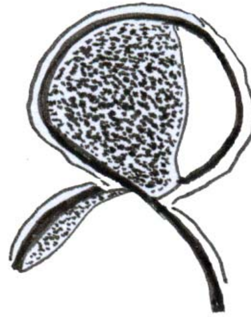
ब्याही बेटी

मनोज चौहान

वर्षों पहले
पास के गाँव में
ब्याही बेटी
रहती है फिक्रमंद आज भी
बूढी माँ के लिए
जबकि वह खुद भी
बन चुकी है अब
दादी और नानी ।

अक्सर गुजरती
मायके के साथ लगती सड़क से
खिंची चली आती है
आँगन में बैठी
बूढी माँ के पास ।

वह चुरा लेती है कुछ पल
माँ की सेवा के लिए
अपने भरे पूरे परिवार की
जिम्मेदारियों के बीच भी ।



पानी गर्म कर
नहलाती है माँ को
धोती है उसके कपड़े-लत्ते
संवारती है सलीके से
सिर पर उलझी हुई चांदी को
शायद वैसे ही
जैसे करती होगी माँ
जब वह छोटी थी ।

बूढी माँ देखती रहती है
टुकर-टुकर
विस्मृत हुई स्मृतियाँ
बेटी के बचपन की
लगाती हैं छलांग अवचेतन से ।

फेरती है हाथ प्यार से
बेटी के सिर पर
भावनाएं छलक पड़ती हैं
जीर्ण नेत्रों से
न चाहकर भी ।

द्रवित हुई बेटी चाहती है दिखाना
मजबूत खुद को
बंधाती है ढांढस माँ को
उम्र की इस अवस्था में
अब बेटी
हो जाना चाहती है माँ !

**सेट नं. 20, ब्लॉक नंब. 4, टाइप-बी,
एसजेवीएन कॉलोनी, दत्तनगर, जिला शिमला,
हिमाचल प्रदेश-172 001, मो. 0 94180 36526**

मेरे बच्चे....मेरे बिरजू....तू नहीं जाएगा कहीं भी....मेरे पास रहेगा तू...मेरे साथ रहेगा..मेरा नौकर नहीं पगले मेरा बेटा बनकर. ..तू मेरा मंगलू है...मेरा बच्चा है तू...कहते कहते यशोधा ने बिरजू को गले से लगा लिया और ममतावश उसके चेहरे को न जाने कितनी बार चूम लिया।

मानो जैसे उसका मंगलू वापस आ गया हो। मानो जैसे देवा ने उन दोनों को अपने ही दर पर मिला कर उनकी भक्ति और साफदिली का सुफल दिया हो।

कुछ देर दोनों सुबकते रहे, एकदूसरे के आँसू पोंछते रहे।

अम्मा! यह लो गेहूँ के दाने, चंदन की धूपणी और फूल आज साजी है ना.. तू देवा को चढ़ावा चढ़ाना भूल गई थी। बिरजू ने एक पोटली यशोदा को थमाते हुए कहा।

यशोधा ने देवता को चढ़ावा चढ़ाया। दोनों ने देव प्रतिमा के समक्ष घुटनों के बल झुककर माथा टेका ..देवता का धन्यवाद किया और मंदिर की सीढ़िया उतरने लगे।

दूर पहाड़ी पर आसमान सुर्ख लाल होने लगा था। सूरज उदय होने वाला था। गाँव में हलचल होने लगी थी। सूर्य की पावन किरणों ने गांव के साथ-साथ बिरजू और यशोधा के जीवन में भी प्रकाश कर दिया था।

गांव लोअर घियाल, पत्रालय नम्होल, तहसील सदर, जिला बिलासपुर, हिमाचल प्रदेश-174 032, मो. 0 94596 63050

क्षेत्रीय शब्दों के अर्थ :

1. बिन्ना : एक तरह की चट्टाई जिसे रसोईघर में बैठने के लिए प्रयोग किया जाता है।
2. त्रिड़ा : रसोईघर में बर्तन आदि रखने के लिए कपड़े या किसी धातु का गोला जिससे बर्तनों को रगड़ लगने से व फर्श गंदा होने से बचाया जाता है।
3. दिवाल : आँगन के एक तरफ बनी मिट्टी /पत्थरों की छोटी सी दीवार
4. भाड़ू : दाल आदि बनाने के लिए प्रयोग किया जाने वाला बर्तन जिसे चूल्हे पर ही अधिकांश इस्तेमाल किया जाता था।
5. चूल्हे का आंवदा : चूल्हे का वह भाग जिस पर बर्तन रखकर आंच लगाई जाती है।
6. टोकणी : धातु का घड़ानुमा बर्तन जिसे पानी लाने व संग्रहित करने के लिए प्रयोग किया जाता है।
7. पाखला : अजनबी
8. सांकणी : दरवाजे को बंद करने के लिए उस पर लगा संगल।

कहानी

दहलीज

◆ डॉ. जय करण

नया गाँव, नए लोग, नयी गलियां, नए रास्ते .... नयी ससुराल। निशा का मन कहीं भी लग नहीं रहा था। उसका मन समुद्र के जहाज पर बैठे पंछी सा अन्यत्र ठिकाना न पा कर फिर जहाज पर पहुँच जाता था।

कॉलेज के दिनों में रवि से उसका मिलन और फिर दोनों का वैवाहिक सूत्र में बंध जाना जैसी पूर्व की स्मृतियां उसे विचलित कर रही थी।

पहली शादी हुए अभी केवल एक साल ही तो बीता था और आज वह फिर दूसरी बार दुल्हन की पोशाक में...?

रंगारंग रोशनियों से जगमगाते आँगन, मेहँदी, उबटन, हवन की खुशबुओं से महकते ससुराल की दहलीज पर आज जब उसने कदम रखा था तो वह आत्मविभोर हो उठी थी। ननदों ने भी डोली से उतारती बार सोने की अंगूठी पहना कर, नई नवेली दुल्हन का आरती बेड़ा उतार कर प्रशंसनीय स्वागत किया था।

बैंड बाजे वालों ने बैंड के शोर शराबे की ध्वनि से सारा आँगन हिला कर रख दिया था। दूल्हे को पालकी में बिठा कर झुलाया जा रहा था। दूल्हे के पिता तो पालकी में बैठने से भागते फिर रहे थे। परन्तु जब भीड़ के बीच में से किसी ने कहा कि शगुन के लिए तो बैठना ही पड़ेगा। तब जा कर कहीं वह राजी हुए। उसके बाद दूल्हे के मामा, दादा, भाई, पुरोहित सभी को बारी-बारी पालकी में बिठा कर झुलाया जाने लगा।

लहंगा चोली में डोली से उतार कर चारपाई पर बिठाई गई गौरवर्णा,जेवरों से लदी निशा घूंघट ओढ़े पति से अपना चेहरा छुपाती फिर रही थी। कुछ ही दूरी पर बारातियों को सेंकने के लिए लकड़ियों का घ्याना (अलाव) जलाया गया था। अनगिनत लोग बारातियों के स्वागत में खड़े थे।

कुछ लड़के हर एक मेहमान को गिलास आगे बढ़ा कर चाय बांटने में व्यस्त थे। बैंड बजाने वाले शायद थक चुके थे। उन्होंने अब बैंड बजाना बंद कर दिया था। शायद वे कहीं एक कोने में जाकर चाय-पान व आराम करने बैठ गए थे।

अब डैक पर बजती नॉन स्टॉप पहाड़ी नाटियों, पंजाबी व फिल्मी गीतों के साथ नाच का दौर शुरू हुआ। लड़के-लड़कियां मस्ती में झूम रहे थे। काफी देर तक नाच-गाने का यह दौर चलता रहा। आँगन में एक साथ असंख्य सीटियों की ध्वनि गूँज उठी थी।

अचानक डैक बंद होते ही चारों ओर शांति का सा माहौल हो गया था। सामने भीड़ में से पंडित जी आते हुए दिखाई दिए। चारपाई पर बैठे दूल्हा-दुल्हन की ओर इशारा करते हुए बोले, “वासनी (वधु प्रवेश) का समय हो गया है। चलो, चलो लड़कियों दुल्हन को फ्री कर दो। ये काम मुहूर्त के होते हैं। यदि मुहूर्त हाथ से निकल गया तो बड़ी मुश्किल खड़ी हो जायेगी। दुल्हन से तो तुम कल के बाद मिलती ही रहोगी। बड़ी मुशिकल से तो डैक बंद करवा कर आया हूँ।”

सिर को हाथ से पीटते हुए पंडित जी ने कहा, “क्या जमाना आ गया है। बैंड बाजे पर खर्च करने की जरूरत ही नहीं रह गई। आज लोग डैक सुनना ही पसंद करते है। जबकि शादी, विवाह, गृहप्रवेश ,जनेऊ जैसे मांगलिक अवसरों पर ढोल, नगाड़े, शहनाई की गूँज शुभ मानी जाती थी। लेकिन आज के पढ़े लिखे युवा यह सारी रिवाजें मानते कहाँ है? शादी ब्याह की तो छोड़ो जन्मदिन, रिटायरमेंट जैसे सादे समारोह भी डैक के बिना फीके नजर आते हैं। शादी के अवसर पर इतने शोर शराबे में तीन चार दिन काटने मुश्किल हो जाते हैं। इतने अधिक शोर शराबे में एक दूसरे को सुनना-सुनाना मुश्किल हो जाता है। अब वह पट्यारी[1] वाला कहाँ चला गया होगा ?” बात पलटते हुए पंडित जी ने कहा था। परन्तु उनकी बातों पर किसी ने भी ध्यान देने की आवश्यकता नहीं समझी।

और सामने खड़े युवक के कंधे पर हाथ रखते हुए बोले ,” तुम जाकर जल्दी से बैंड वालों को इधर-उधर से ढूंढ कर लाओ। न जाने किस कोने में खा,पी.....होंगे? उनसे कहो भाई थकावट मिट गई हो तो अब बजाना शुरू कर दो। मुहूर्त निकला जा रहा है। मैं तब तक पट्यारी वाले को कहीं ढूंढ़ता हूँ। कोई भी आदमी अपनी जिम्मेदारी ढंग से नहीं निभाता।

पट्यारी में कितनी महंगी और जरुरी वस्तुएं होती है ? इन्हें लावारिस छोड़ कर खुद घंटों से गायब है। शादी ब्याह में पट्यारी

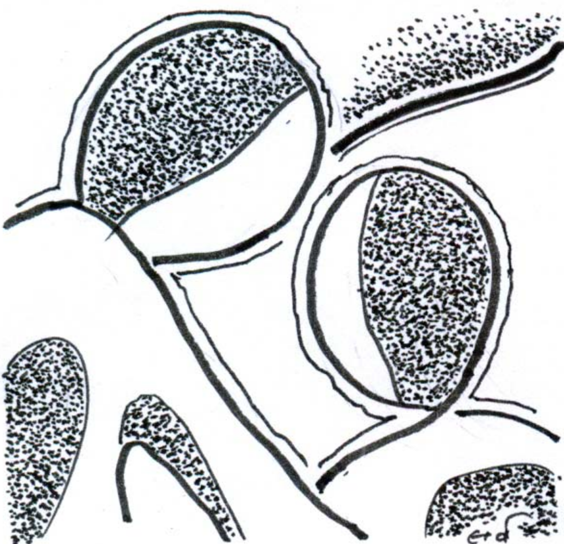
की क्या महत्ता होती है? यदि कभी भुगतना पड़ा तभी कहीं होश ठिकाने आएंगे।" सिर पर बंधी टोपी सीधी करते हुए पंडित जी कह रहे थे।

ननदें दोनों हाथों में छैल थामें सामने खड़ी थी। सारी व्यवस्था हो जाने के बाद पंडित जी ने आगे दुल्हन को चलने का निर्देश दिया। पीछे दूल्हा तलवार की नोक से छैल को ऊँचा उठाये वासनी की रस्म पूरी करने घर की दहलीज की ओर कदम बढ़ा रहे थे। बैंड वालों को डैक की वजह से थोड़ी देर का आराम मिल गया था। अब उन्होंने फिर से पूरी ताकत के साथ बैंड बजाना शुरू कर दिया था। दहलीज पूजन के बाद वर के साथ वधु को ससुराल में वधु प्रवेश करवाया गया। घर के अंदर बनी बेदी के सामने हवन पूजन हुआ।

हवन समाप्त होते ही पंडित जी ने दूल्हे की माँ को सम्बोधित करते हुए आवाज लगाई। उनके नजदीक आते ही पंडित जी ने उनसे अपना आँचल आगे बढ़ाने के लिए कहा।

और दूल्हे के सिर से सेहरा उतार कर माँ के आँचल में रखते हुए बोले। "इस बात का ध्यान रहे कि दूल्हा यह सेहरा आज के बाद दोबारा न देखे। इसे किसी मंदिर में दे देना या फिर कुल पुरोहित ही ले जाए फिर भी अच्छी बात है, जैसा आप उचित समझें।"

उसके बाद दुल्हन की ओर घूमते हुए पंडित जी बोले, " बेटा तुमने नाक में जो नथ पहन रखी है यदि चाहो तो आज इसी समय बेदी पर उतार सकती हो। नहीं तो एक वर्ष तक फिर तुम इसे नहीं उतार पाओगी, जैसी तुम्हारी इच्छा। कह कर पंडित जी ने अपनी बात पूरी की।



इतनी बड़ी नथ का भार एक वर्ष तक झेलने का ख्याल मन में आते ही निशा सासु माँ की ओर देखने लगी। सासु माँ ने स्नेहिल भाव से निशा के भाव को भांपा। शायद वह समझ गई थी कि मैं दुविधा में हूँ।

'बेटा आज उतारना ठीक रहेगा। कहाँ साल भर इसे सहेजती फिरोगी?' और निशा ने बिना देरी किये नथ उतार कर सासु माँ को सौंप दी।

पंडित जी नई नवेली दुल्हन द्वारा सास -ससुर,जेठ-जेठानी, ननद-नंदोई के पाँव छू कर आशीर्वाद लेने की अगली रस्म पूरी करवाने की तैयारी करने लग गए।

"दुल्हन के साथ कोई बड़ा बुजुर्ग भी आया है कि नहीं?"

पंडित जी ने चारों ओर एक उड़ती सी नजर दौड़ाई। "सूने हाथों माथा नहीं टेका जाता। शगुन के लिए कुछ वस्त्र या पैसे देने होते है।"

निशा के साथ आये उसके मामा के लड़के ने आशीर्वाद की रस्म पूरी करवाई।

"आज का काम इतना ही था। सुंदर सुशील बहू लक्ष्मी के रूप में आप के घर में आई है। भगवान दोनों की झोली खुशियों से भरी रखे। अन्न, धन, दूध-पूत से इनका दामन सदा भरा रहे।" पंडित जी अपना सामान समेटते जा रहे थे और दूल्हा-दुल्हन एवं परिवार वालों को आशीर्वाद भी देते जा रहे थे।

"कल सुबह मैं साढ़े दस बजे तक पहुँच जाऊंगा। आगे का काम कल होगा।" दूल्हे के पिता को अगले कल उनके आने तक कुछ जरूरी तैयारियां करवा कर रखने के निर्देश देते हुए पंडित जी ने चश्मा उतार कर जेब में रख दिया था।

'पंडित जी आज दिन भर की दौड़ धूप के कारण थकावट भी बहुत ज्यादा हो गयी होगी। अब चल कर खाना खा लेते हैं। पेट में चूहे दौड़ने लग गए हैं।" दूल्हे के पिता जी पंडित जी से बोल रहे थे।

"आज परिवार के सभी लोगों को नए लाड़ा -लाड़ी(दूल्हा -दुल्हन)के साथ बाहर पंगत में इकट्ठे बैठ कर खाना, खाना होगा।' पंडित जी ने सबकी ओर संकेत भरे शब्दों में कहा था। पंडित जी के शब्दों के साथ ही कमरे में एकत्रित भीड़ छंट गयी थी।

आँगन में अब फिर से जोर-जोर से डैक बजना शुरू हो गया था। नाच-गान की वही प्रक्रिया फिर से शुरू हो गयी थी। परन्तु अब लड़कों की अपेक्षा लड़कियां कम ही नाचती नजर आ रही थी। शायद वे थक गयी थी या खाना खाने गयी होंगी।

आँगन में गिने चुने लोग ही रह गए थे। अब तक काफी लोग अपने-अपने घरों को लौट गए थे। परिवार के सभी सदस्यों ने खेत में लगी पंगत में एक साथ बैठ कर खाना खाया था।

उस दिन सारी रात हल्की नींद में सोते- जागते अतीत की गहराइयों में उतरती निशा अपने कॉलेज के दिनों में पहुँच गई थी।

रवि और निशा ने एक साथ ही इंजीनिरिंग कॉलेज से बी-टैक की पढ़ाई पूरी की थी। वह कॉलेज के दिनों से ही रवि को पसंद करती थी। और रवि निशा के लिए कुछ भी कर सकता था। धीरे-धीरे वे एक दूसरे की जिंदगी का हिस्सा बन गए थे। दिन भर साथ-साथ रहने से कुछ पल अलग होने पर उन्हें ऐसा प्रतीत होता, मानों वे एक दूसरे के बिना अधूरे हों। समय ने रुख बदला और दोनों ने साथ जीने मरने की कसमें खा ली।

निशा के माता-पिता ने उसके लिए पहले से ही लड़का तलाश कर रखा था। वे निशा के प्रेम विवाह के निर्णय से बिलकुल असंतुष्ट थे। उनके खानदान में दूर-दूर तक किसी ने भी आज तक प्रेम विवाह नहीं रचाया था। इसलिए वह किसी भी कीमत पर यह शादी नहीं होने देना चाहते थे।

परन्तु मीरा की तरह रवि को पाने के लिए निशा ने परिवार की समस्त विषपान आपदाओं को आत्मसात कर लिया था। वह रवि को अपना पति मान चुकी थी।

रवि अपने माता-पिता की इकलौती संतान थी। पिता सेन्ट्रल गवर्नमेंट में उच्चाधिकारी रह चुके थे। बच्चे कहीं उलटा-सीधा कदम न उठा ले , इसी बात को ध्यान में रखते हुए उन्होंने निशा के माता-पिता से बातचीत करना उचित समझा। परन्तु उनसे सकारात्मक उत्तर न पा कर उन्होंने निशा की इच्छा जाननी चाही। निशा का निर्णय सुन कर उन्होंने बेटे की पसंद को अपने घर की बहू बनाने में कोई आपत्ति नहीं जताई।

निशा के माता-पिता के विरोध के बाद उन्होंने निशा के मामा को भरोसे में ले लिया। और जल्द ही दोनों का विवाह करवाने में समझदारी दिखाई थी। बाद में निशा के माता-पिता भी उस शादी में शामिल हुए थे।

आज बार-बार रवि का सूर्य मुख सा खिला चेहरा, जो सुबह नहा-धो, नाश्ता कर ऑफिस के काम से घर से लुधियाना के लिए निकला था और रास्ते में सड़क दुर्घटना में मृत्यु की गोद में सो गया था,आँखों के सामने आता-लहराता रहा था। उसने यह तो कभी स्वप्न में भी नहीं सोचा था कि वह जीवन में दूसरी बार दुल्हन का जोड़ा पहनेगी।

भारतीय नारी अपने सुहाग का केवल एक बार ही वरण करती है। मैं भी एक भारतीय नारी हूँ। मैंने अपने सुहाग के रूप में रवि का वरण किया था।अब तो मेरे लिए मरण (मृत्यु) का वरण करना ही अत्यधिक श्रेष्ठ होगा।

भाग्य ने आज उसे ये कैसे मोड़ पर ला कर खड़ा कर दिया है ? रवि उसे कभी माफ नहीं करेगा। कितना प्यार करता था वह उससे।सोचते -सोचते वह कई बार बिस्तर पर से ऊपर उठती रही। उसे लगने लगा जैसे रवि उसे धिक्कार रहा हो। सोना चाह कर भी आज वह सो नहीं पा रही थी। करवटें बदलते -बदलते रात काफी बीत चुकी थी। नींद कोसों दूर भागी जा रही थी। सारी रात वह खुली हुई किताब के पन्नों की तरह फड़फड़ाती रही।

अचानक उसे ख्याल आया कि उसके पास उसकी दोनों ननदें भी सोई हैं। यदि उनको थोड़ी भी भनक लग गयी कि भाभी सो नहीं रही है तो, वे कहीं... क्या बात है भाभी? भैया, के बगैर नींद नहीं आ रही क्या ?" जैसे गलत- फलत मतलब निकाल कर शोर न मचा दे। और मन में व्याप्त भय के कारण वह चुपचाप रजाई से मुंह ढँक लेती है। एक बार फिर से सोने का यत्न करने लगती है। वह एक बार फिर अपने निर्णय के चक्रव्यूह को सुलझाने का प्रयत्न करती है।

रवि अपने माँ -बाप की इकलौती संतान था। फिर वृद्धों को क्यों मैं दुःखों की भट्टी में सुलग-सुलग कर मरने के लिए झोंक आई ? मैं देवतुल्य आत्माओं की हत्या नहीं कर सकती।उनकी हत्या करना मानवीय आदर्शों की हत्या करना है। मेरे जीवन में आकर्षण नाम की कोई वस्तु शेष नहीं रह गई।त्रिमता के सहारे कितने दिनों जिया जा सकता है? परन्तु मैं करती भी क्या? उन्होंने ही तो मुझे दोबारा विवाह करने को विवश किया है।

"नहीं समधी जी निशा की अभी उम्र ही क्या है ? सारी उम्र हम इसे सफेद कपड़ों में विधवा का जीवन जीने का अभिशाप नहीं भोगने देंगे। आप इसके माता -पिता थे, अब निशा हमारे घर की बहू है।आप से ज्यादा इस पर अब हमारा अधिकार है। भले ही रवि हमारा इकलौता वारिस था। अगर आज वह इस दुनिया में नहीं रहा तो क्या आपकी बेटी से भी हमारा रिश्ता खत्म हो गया? नहीं ऐसा बिलकुल नहीं हो सकता ।

आप लोग थोड़ी देर के लिए हमारी जगह पर आ कर सोचें। भगवान न करे यदि रवि के स्थान पर निशा को कुछ हो गया होता तो क्या सारी उम्र रवि निशा के लिए मातम मनाता फिरता ? नहीं न।

सारे नाते-रिश्तेदार उस पर दबाव बनाते, रवि बेटा तेरे आगे सारी उम्र पड़ी है जो होना था सो हो गया। फलां जगह से रिश्ता आ रहा है, फलां जगह से। सब उसके दिमाग से निशा की याद कुछ ही महीनों में निकाल फेंकने की भरपूर कोशिश करते। फिर निशा के जीवन को हम सब नजर अंदाज क्यों कर रहे हैं ? क्यों उसे नर्क से भी बदतर जीवन जीने को विवश कर रहे हैं? क्या वह इंसान नहीं ? क्या उसकी कोई भावनाए नहीं? या फिर औरत होने के नाते उसे स्वतन्त्र जीवन जीने की आजादी नहीं? जीवन में सुख भोगने की आजादी नहीं।' घर पर बुलाए मेरे माता -पिता से रवि के पिता ने कहा था।

"ऐसी बात नहीं है समधी जी। हिन्दू समाज में औरत जीवन में एक बार ही विवाह करती है। कौन विधवा को अपने घर की बहू स्वीकार करने को तैयार होगा ? पिता जी ने भावुक होते हुए कहा था।

"आज के बाद निशा की सारी जिम्मेदारी आप हम पर छोड़

दें। निशा का कन्यादान हम स्वयं करेंगे। लोग अपने आँगन से कन्या दान करने के लिए तुलसी विवाह, गरीब कन्याओं का विवाह, न जाने क्या क्या उपक्रम करते है ? फिर भगवान ने तो हमें ऐसा सुअवसर प्रदान किया है, इसे हम हाथ से नहीं जाने देंगे।'

"परन्तु कौन लड़का शादी करेगा विधवा से...?'

"समधी जी आप हमारी बहू को बार-बार अबला-विधवा कह कर अपमानित न करें। निशा को ऐसे शब्द कह कर आप हमे बेइज्जत कर रहे हैं। यदि आप उसे केवल निशा कह कर सम्बोधित करें तो हम आपके आभारी होंगे।" रवि के पिता ने हाथ जोड़ते हुए मेरे पिता जी से कहा था।

रवि के पिता के मुंह से यह शब्द सुन कर पिता जी की आँखों से बहती आंसुओं की धारा रुकने का नाम नहीं ले रही थी। आज शायद वह अपनी उस गलती पर शर्मिंदा थे जब उन्होंने रवि के हाथों मेरा हाथ न देने की जिद्द पकड़ी थी। उस समय शायद वे हमारे प्रेम विवाह से नाखुश रहे होंगे।

"मेरा एक जिगरी दोस्त है। जिनकी दो बेटियां और एक बेटा है। बेटियों का विवाह वह कर चुके हैं। दोनों बेटियां अपने-अपने परिवार के साथ सुखी हैं। बेटा जम्मू में नवोदय स्कूल में टीचर है। पढ़ी लिखी व मॉडर्न फेमिली है। रूढ़िवादी विचारों से ऊपर उठे लोग हैं। हम दोनों एक ही दफ्तर में साथ काम कर चुके हैं। मैं उन्हें अच्छी तरह जानता हूँ। वह मेरी बात नहीं टालेंगे।बस आप से बातचीत करने का इंतजार था उसके बाद ही आगे उनसे बात कर पाता।" पिता ससुर ने गहरी सांस लेते हुए कहा था।

'लेकिन लड़के वालों से आगे की बात फाइनल करने से पहले निशा से भी हमें उसकी इच्छा जान लेनी चाहिए।' मेरे माता -पिता ने कहा था।

सासु माँ और पिता ससुर ने एक साथ कहा था, 'निशा समझदार बेटी है। घर के हालात जानती है। रवि को एक बरस हो रहा है। महीने बाद उसकी बरसी है। हर रोज कोई न कोई घर पर आता -जाता रहता है। हम तो रवि के माँ -बाप हैं ताउम्र पुत्र शोक में डूबे रहना होगा। मैं पैंसठ वर्ष की उम्र पूरी कर चूका हूँ और द्रोपती भी साठ को पहुँच गयी है। दोनों में से पहले किसको बुलावा आ जाये कौन जाने ? निशा अभी बच्ची है। पच्चीस वर्ष की उम्र होती ही क्या है ? तीस -बतीस वर्ष की उम्र हो जाने तक लड़के -लड़कियां आज के जमाने में शादियां नहीं करते। क्या वह उम्र भर इस घर की विधवा बन पूरा जीवन चार दीवारी में कब तक घिरी,. ... ?

नहीं, नहीं ! यह हरगिज नहीं हो सकता। निशा का इस घर में बहू , बेटी दोनों ही रूपों में बराबर का अधिकार है। भले ही यह तीन महीनों से ज्यादा रवि के साथ वैवाहिक जीवन का सुख न भोग पायी हो। इसने जिस दिन इस घर की दहलीज पर कदम रखा उसी दिन से यह हमारी ओर से इस घर, परिवार, सम्पति में बराबर की हकदार है। यह जब चाहे अपना हक ले सकती है।

"निशा तू हमारी बेटी है, हम पर बोझ नहीं।" मेरे सर पर स्नेह भाव से हाथ फेरते हुए पिता ससुर ने कहा था।

"तू हमारे जिगर का टुकड़ा है। हमारे पिछले जन्म के कर्मों का फल है। जिसे इस जन्म में हंसी खुशी तेरा कन्या दान कर हम निभाएंगे।' कहते हुए उनकी आँखों में आंसू भर आये थे।

माता-पिता और सासु माँ-पिता ससुर के निर्णय से मैं बिलकुल भी संतुष्ट नहीं थी। मैंने पुरजोर उनके इस निर्णय का विरोध करना चाहा था। परन्तु चारों ओर से बढ़ते दबाव के आगे मुझे मजबूरन घुटने टेकने पड़े थे। बीती बातों को याद कर रो-रोकर मेरी हालत काफी बिगड़ चुकी थी।

मैंने जब मुंह पर से रजाई उठा कर देखा तो घर फिर से चहल-पहल से भर गया था। ननदे न जाने कब की मेरे पास से उठ कर बाहर चली गयी थी। डेक पर भजन बजने शुरू हो गए थे। मैंने बिस्तर इकट्ठा किया और बाहर आँगन में आ गयी। रात भर ढंग से सो न पाने के कारण मेरा शरीर टूट रहा था। सूर्य की लालिमा पूर्व दिशा में चोटियों पर छाने लगी थी।

प्याज के छिलकों की तरह दिन निकलते गए। प्रकाश को विवाह के लिए स्कूल से एक महीने की छुट्टियां मिली थी। इस दौरान हम दोनों दो बार रवि के माँ -बाप के घर तथा एक बार मायके जा कर आये थे। प्रकाश की छुट्टियां खत्म हो चुकी थी। जाती बार उन्होंने मुझ से केवल इतना ही कहा था, "अंकल जैसे सदाचारी, हितैषी महापुरुष इस सृष्टि पर बहुत कम है। जितना मैंने उन्हें जाना है वह मनुष्य के रूप में देवता हैं। कल मुझे ड्यूटी ज्वाइन करनी है। देखो निशा तुम अपने मायके जा पाओ या न, परन्तु बीच बीच में रवि के बूढ़े माँ -बाप की खबर लेने जरूर जाया करना।

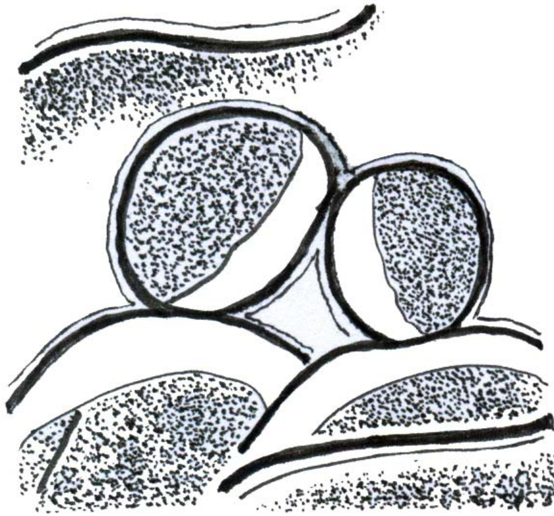
पांच मार्च से बोर्ड कक्षाओं की वार्षिक परीक्षाएं शुरू हो रही है। पेपर खत्म होते ही कुछ दिनों के लिए तुम्हें साथ ले जाने के लिए आऊंगा।'

और साथ ही सामने दीवार के साथ खड़ी अलमारी की ओर इशारा करते हुए कहा, 'इसमें मेरी कुछ किताबें पड़ी हुई है। जिनमे कुछ जी.के. की व अधिकतर धार्मिक हैं। तुम्हें जो भी अच्छी लगे उन्हें पढ़ती रहा करना। अकेलेपन से छुटकारा मिलेगा और तुम्हारा मन भी लगा रहेगा।"

"आप भी धार्मिक पुस्तकों में.........?'

"हाँ हमारे परिवार में दादा- दादी के समय से ही माँ आज भी दोनों वक्त सुबह -शाम रामचरित मानस व श्रीमद्भागवत गीता का पाठ करती है। धीरे-धीरे तुम भी सब सीख जाओगी।"

और आज एक महीने के बाद मेरी सासु माँ अपनी जेठानी से कहते नहीं थकती थी, देख दीदी, "मेरी बहूरानी ने कुछ ही दिनों में कैसे खुशी-खुशी घर की सारी जिम्मेदारियों को अपने नाजुक



कन्धों पर उठा लिया है। गुणों की पोटली है मेरी बहू। बड़ी स्वाद साग, सब्जियां बनाती है। और मक्की की रोटी के तो क्या कहने? हर काम इतनी निपुणता से करती है कि मैं भी देख कर दंग रह जाती हूँ।'

लोग कहते हैं अपना चाहा कभी और कहीं नहीं मिलता। लेकिन यहाँ दूसरी ब्याहता होते हुए भी उसे वह सब कुछ मिला जिसकी उसने कभी स्वप्न में भी कल्पना नहीं की थीं। उसकी आँखों में सौ सितारे चमक उठे थे। चार सदस्यों का छोटा परिवार, इस हरे भरे परिवार में आने पर उसे लगने लगा जैसे इस परिवार से उसका जन्म -जन्मांतर का सम्बन्ध रहा हो। इस परिवार में तो जैसे उसे आना ही था।

परीक्षा के बाद स्कूल कुछ दिनों के लिए बंद हुए थे। छुट्टियां बिताने प्रकाश घर आया हुआ था। दोपहर का भोजन करने बैठे निशा और प्रकाश को माँ ने बतया, "बेटा आज पड़ोस में दीदी के पोते का जन्म दिन है। सभी को डिन्नर पर बुलाया गया है।'

निशा को पड़ोस की सासु माँ कतई अच्छी नहीं लगती थी। निशा को देखते ही अकसर वह बात-बात पर कोई न कोई ताना सुनाया करती थी। जिसे राह चलते वह नहीं सुहाती फिर घर बुला कर कहाँ वह उसे माल्यार्पण करेगी? निशा ने अपनी सासु माँ से कई बार पड़ोस की चाची सास के अशोभनीय व्यवहार का जिक्र किया था।

"बेटा यह दीदी प्रकाश का रिश्ता अपने दूर के रिश्तेदार की बेटी के साथ करवाना चाहती थी। लेकिन प्रकाश को वह लड़की बिलकुल भी नहीं सुहाई। बस तभी से वह हमारे परिवार के सदस्यों को कदम-कदम पर लज्जित करने का अवसर नहीं चूकती। ऐसों के मुंह ज्यादा नहीं लगते बहू। अपने आपको अपने काम में व्यस्त रखा करो। बाकी किसी की क्या मजाल जो तुम्हें कोई कुछ कहे या तुम्हारे ऊपर ऊँगली भी उठाये। तुम अपने घर में रानी की तरह रहो।"

"मैं भी देखूंगी जब प्रकाश अप्सरा को बहू बना कर लाएगा? कितनी सुंदर सुशील लड़की ढूंढी थी मैंने इसके लिए। परन्तु इस लड़के के तो नखरे ही न्यारे हैं। लेकिन हीरों की परख भी अच्छा जौहरी ही कर सकता है।"

"बेटा ऐसे कड़वे व्यंग्य वाण छोड़ा करती थी यह दीदी" माँ ने नम आँखों से कहा था।

निशा अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करती इतने में प्रकाश बोल पड़ा, ठीक है माँ, क्यों निशा क्या ख्याल है ? वैसे भी जब मैं छुट्टियाँ बिताने घर आता हूँ चाची अकसर बुलाती रहती है। चाची के पोते की बर्थ दे पार्टी भी अटेंड हो जाएगी और उनकी मेहमानी भी।' प्रकश ने बात पूरी करते हुए कहा था। न चाहते हुए भी निशा जाने को मना नहीं कर पायी थी।

शाम को पूरा परिवार अच्छे कपड़े पहन हाथ में गिफ्ट उठाये जन्म दिन की पार्टी में शामिल होने पड़ोसी के घर पर पहुँच गया था। घर को बनावटी फूलों, गुब्बारों से सजाया गया था। पूरा घर मेहमानों से भरा हुआ था। जन्म दिन के अवसर पर सुंदर पोशाक पहने छोटा बच्चा एक साथ इतने सारे गिफ्टों को देख फुला न समा रहा था। डैक पर म्यूजिक बज रहा था। बहुत सारे बच्चे डांस कर रहे थे। मेहमानों को पानी,चाय,बिस्कुट,नमकीन प्लेटों में सर्व किया जा रहा था। कमरे में बैठे सारे मेहमान इस पार्टी को इंजॉय कर रहे थे।

अभी डिन्नर शुरू भी नहीं हुआ था कि चाची ने छाती पीटनी शुरू कर दी, 'हाय किसी ने मेरे पोते का गिफ्ट पैक्ट यहाँ से उठा लिया है। कुछ देर पहले ही तो डाकिया गिफ्ट पार्सल मुझे थमा कर लौटा है। लेकिन अब वह गिफ्ट मुझे कहीं दिखाई नहीं दे रहा है। मैंने उसे खोलकर भी देखा और अपने हाथों उसे यहीं टेबल पर रखा था। इसकी मासी ने पोतु के जन्मदिन के अवसर पर बड़े लाड़ प्यार से उसमें एक सुंदर घड़ी भेजी थी। न जाने किसे बच्चे का वह गिफ्ट पसंद आ गया।"

चाची की बात सुनते ही कमरे में एक दम सन्नाटा छा गया। डैक बजना भी बंद हो गया था। सारे मेहमान हैरानी से एक दूसरे के चेहरों की ओर ताकने लगे थे।

'आप को किसी पर शक है?' बीच में से एक मेहमान ने कहा।

किस पर शक करूँ यहाँ सभी तो अपने हैं। परन्तु बच्चे की भावनाओं का क्या करूँ? इसे जब पता चलेगा की मासी द्वारा भेजी घड़ी किसी ने चुरा ली है तो कितना दुःखी होगा बेचारा।"

संयोगवश निशा पति, सास-ससुर सहित उसी कोने में लगी कुर्सियों पर बैठी थी जिस ओर मेहमानो द्वारा दिए गए गिफ्ट रखे

जा रहे थे। निशा भयभीत होकर कांपने लगी थी। कहीं चाची का मकसद मुझे बदनाम करने का तो नहीं ? नहीं, नहीं ऐसा नहीं हो सकता। इतना तुच्छ आरोप चाचीसास मुझ पर नहीं लगा सकती। फिर मैं कौनसी अकेली यहां बैठी हूँ ? प्रकाश, सास-ससुर भी तो यहीं साथ बैठे हुए हैं बैठे हैं। फिर कमरे में इतने बल्ब जल रहे हैं। किसी न किसी की नजर तो चोर पर गई ही होगी?

निशा इसी उधेड़ बुन में जुटी हुई थी कि उतने में चाचीसास ने कह दिया, 'जिस तरफ गिफ्ट रखे हुए हैं उस तरफ तो प्रकाश की लाड़ी बैठी हुई है। अब मुझे तो शर्म आ रही है... । इतने बड़े घर की बहू अगर...? कैसे किसी के सिर पर इल्जाम लगाऊं?'

प्रकाश के चीखते स्वर ने सारा वातावरण खामोश कर दिया, 'अपनी गज भर की लम्बी जुबान को लगाम दो चाची। नहीं तो सारे गांव के सामने ऐसा बेइज्जत करूँगा की कहीं मुंह दिखाने लायक नहीं रहोगी। भगवान से डरो चाची। चोरी का इल्जाम लगाने से पहले अपने गिरेबां में तो झाँका होता चाची। तलाशी ले लो हमारी। यदि तुम्हारी बात में थोड़ी सी भी सच्चाई हुई तो मेरा परिवार तभी इस घर से बाहर कदम रखेगा जब तुम्हारे नुकसान का दस गुना भरपाई करूँगा और यदि इसमें जरा भी झूठ हुआ तो आज के बाद मेरा परिवार इस घर की दहलीज भी नहीं लांघेंगे। मुझे अच्छी तरह मालूम है, निशा पर तुम यह इल्जाम क्यों लगा रही रही तुम्हारे गिफ्ट की बात तो ऐसे-ऐसे सेंकडों गिफ्ट मैं निशा के लिए न्योछावर करने को तैयार हूँ।

निशा ने आह भर कर एक ठंडी साँस ली। आँखें पोंछी और प्रकाश के साथ कदम मिलती हुई घर की ओर चल पड़ी। आज प्रकाश ने उसे स्नेह और सम्मान की ऊंचाई पर पहुंचा दिया था। रवि और निशा का सम्बन्ध सार्थक नहीं हो सका था। लेकिन प्रकाश और निशा का मिलन निश्चित था। उन्हें कोई जुदा नहीं कर सकता था। निशा का हाथ थाम कर प्रकाश ने विधवा पुनः विवाह कर सारी परम्पराएं तोड़ डाली थी। उसने एक असहाय, विधवा नारी की जिंदगी बदल कर नई इबारत लिखी थी।

दूसरों पर लांछन लगाने से पहले अपने घर के अंदर झांक कर देखो।तुम्हारी बेटी किस तरह घर में काम करने रखे नेपाली के साथ भाग गई थी। आज दस साल होने को आये परन्तु उसके जिन्दा-मरे की कोई खबर नहीं।

निशा ने दूसरी शादी की है कोई जुर्म नहीं। कोई धोखा नहीं हुआ मेरे साथ। मेरी मर्जी से शादी हुई है। समझी ! अरे तुम्हारी बेटी से तो अच्छी है यह। यदि तुम्हारी बेटी के जीवन में ऐसा वक्त पड़ा होता तो न जाने वह क्या गुल खिलाती? इसने कम से कम अपना घर तो बसाया है।

कुछ और सुनना चाहती हो तो वह भी आज कह देता हूँ। तुम्हारे बहकावे में आने से हमारे बीच दरार पड़ने वाली नहीं। तुमने कुछ और लांछन भी लगाया होता तो शायद उसे मानने को भी मैं तैयार नहीं होता।'

"घर बुलाये मेहमानों पर चोरी का आरोप लगा कर उन्हें अपमानित करने का यह कोई अच्छा तरीका नहीं? हो सकता है गिफ्ट खुद ही कहीं इधर उधर रख दिया हो?" मेहमान आपस में फुसफुसा रहे थे।

जब वह दसवीं में पढ़ती थी 'सरोज स्मृति' उसने पढ़ी थी। जिसमे महाकवि निराला की पीड़ा एवम वेदना 'दुःख ही जीवन की गाथा रही, क्या कहूँ आज जो न कही। पंक्तियों के माध्यम से व्यक्त हुई थी। आज वही वेदना वही पीड़ा वह भी झेल रही है

भरे मन, छलकती आँखों तथा भारी कदमों के साथ निशा ने अपने घर की राह ली। "पहले पति को खा दूसरी शादी करके नए घर में बड़ी उछलती फिरती है। पहली विवाहिता होती तो जाने क्या...?' और भी न जाने क्या-क्या कड़वाहट उगल रही थी वह।

जैसे कड़वाहट भरे शब्द पडौस की चाची सास आज उसके कानों में घोल गयी थी, वह उसका कलेजा छलनी कर गए थे। पिघले सिक्के सी सारी बातें उसके कानों में धंस गई थी।

निशा के कंधे पर हाथ रखते हुए प्रकाश ने कहा, 'चलो, घर चलो ! क्यों फालतू में चिंतित होती हो? अपने घर में ठाठ से रहो। मेरे जीते जी तुम पर कोई दोषारोपण करे मैं सहन नहीं कर सकता।'

इतना विश्वास, इतना प्यार, इतना स्नेह तो एक पति ही अपनी जीवन संगनी से कर सकता है। एक बार तो उसका जी चाहा कि यहीं पूरे कुटुंब के सामने वह प्रकाश को सीने से लगा ले।

दूसरी बार दुल्हन के रूप में शादी का जोड़ा पहने डोली में बैठी निशा इस घर के लिए बड़ा अवसादित मन लिए विदा हुई थी। आज तक तरह-तरह के भ्रम इस परिवर के प्रति निशा के मन में उठते रहते थे। परन्तु आज वे ज्वार भाटा से शांत हो गए थे। इस परिवार के लिए उसके मन में अब सौ गुना आदर-सत्कार बढ़ गया था।

निशा ने आह भर कर एक ठंडी साँस ली। आँखें पोंछी और प्रकाश के साथ कदम मिलती हुई घर की ओर चल पड़ी। आज प्रकाश ने उसे स्नेह और सम्मान की ऊंचाई पर पहुंचा दिया था।

रवि और निशा का सम्बन्ध सार्थक नहीं हो सका था। लेकिन प्रकाश और निशा का मिलन निश्चित था। उन्हें कोई जुदा नहीं कर सकता था। निशा का हाथ थाम कर प्रकाश ने विधवा पुनः विवाह कर सारी परम्पराएं तोड़ डाली थी। उसने एक असहाय, विधवा नारी की जिंदगी बदल कर नई इबारत लिखी थी।

गांव व डाकघर सलाना, जिला शिमला,
हिमाचल प्रदेश, मो. 0 94599 69717

समीक्षा

परिवार की कमजोर होती बुनियाद पर गहन 'दृष्टि'

◆ **अश्वनी कुमार भमौता**

दृष्टि (लघुकथा को समर्पित अर्द्धवार्षिकी, प्रथम अंक), संपादक : अशोक जैन, संपादकीय कार्यालय : 908, सेक्टर-7 एक्सटेंशन, अरबन एस्टेट, गुड़गांव-122006 (हरियाणा), मूल्य : 200 रुपये वार्षिक, प्रकाशक : अशोक जैन द्वारा अशोक प्रिंटिंग प्रेस, चावड़ी बाजार, दिल्ली-6 से मुद्रित एवं 908/7 एक्सटेंशन, गुड़गांव-6 से प्रकाशित

लघु पत्रिकाओं का अपना अलग अनुभव संसार है जिसमें रहते हुए वे साहित्यिक रचनात्मकता का निर्माण करती हैं। अपने दायरे को बढ़ाती चली जाती हैं- देश, समाज व परिवार हित में। इसी परिपाटी को ध्यान में रखते हुए 'दृष्टि' लघु पत्रिका ने परिवार को आधार बनाकर लघुकथा विशेषांक पाठकों को समर्पित किया है। 'दृष्टि' में संकलित लघुकथाओं में हर परिवार की छोटी-छोटी आशाएं हैं, उम्मीदें हैं, सपने और जरूरतें हैं। आसमान से तारे तोड़ लाने की कामना नहीं। समुद्र मंथन कर अमृत पीकर अमर होने की लालसा नहं और न ही सारी धरती को खोद कर सब कुछ हासिल कर लेने की तमन्ना या हसरत है। बस उन्हें चाहिए- हंसी-खुशी के कुछ पल जिन्हें वे भरपूर जीना कर जीवन में समेट लेना चाहते हैं।

एक अजनबी शहर में अकेली रह रही महिला को अपने छोटे बच्चे के लिए एक दादा या नाना का प्यार मिल जाए, तो एक 'आत्मसंतुष्टि' मिल जाती है। डॉ. अंजना गर्ग की लघुकथा इसी ओर इशारा करती है। उन दोनों को सहारा तो मिला ही, पड़ोसी बुजुर्ग को भी जीने का बहाना मिल गया। यह लघुकथा अपरिचितों और अजनबियों की हमारे आसपास घटित रोजमर्रा के जीवन में अप्रिय घटनाओं के प्रति अविश्वास को तोड़ती हुई प्रतीत होती है। अभाव मनुष्य को कितना बेबस और मजबूर बना देता है, यह अनिल शूर आजाद की लघु कथा 'कुलबुलाहट' में बखूबी दिखता है। घर में दूध होते हुए भी बच्चा उसे पी नहीं सकता क्योंकि मां उसे लाला को बेचकर घर का गुजर-बसर करती है। चाहे 'अंतड़ियों की कुलबुलाहट' बच्चे को सूखी रोटी खाकर ही क्यों न शांत करनी पड़े। घर-आंगन में बच्चे न हों तो पति-पत्नी के बीच पनपी मनमुटाव की स्थिति को निपटाए कौन? डॉ. अमृतलाल मदान की लघुकथा 'सपने, स्वर और ध्वनियां' में बेटी के फोन आने पर 'दो रूठे हुए हाथ टकराकर' फिर से 'झनझना' उठते हैं।

अशोक भाटिया की लघुकथा 'बेटी बड़ी हो गई है' में उसकी चॉकलेट भाई द्वारा छीनकर खा लेने पर भी संतोष के भाव नजर आते हैं। मां-बाप बच्चों के साथ दोस्ताना संबंध बनाए रख कर उनके भीतर छिपे डर को निकाल सकते हैं। इनकी लघुकथा 'पापा जब बच्चे थे' में एक बाप अपनी बेटी को बड़े ही अच्छे तरीके से समझाकर फोन के गुम होने पर उभर आए डर को खत्म करते हुए मन से अपने बचपन के बोझ को भी उतार कर रख देता है।

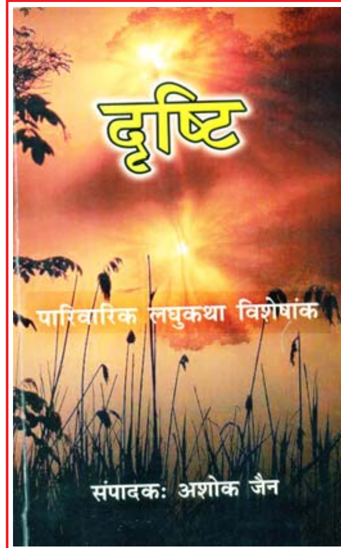
मां-बाप अपनी महत्त्वाकांक्षाओं की उड़ान भरने के लिए बच्चों को वाहन के रूप में इस्तेमाल करते हैं। डॉ. उपमा शर्मा की लघुकथा 'आकांक्षा' यही दिखाने का प्रयास करती दिखती है। आशा खत्री 'लता' की लघुकथा 'प्रतिकार' दोहरे चरित्र को उद्घाटित करती हुई प्रतीत होती है। पात्र एक पत्नी के रहते दूसरी शादी कर लेता है और अपनों की नाराजगी को दूर करने के लिए 'मां की पूजा' रखवाकर सभी रिश्तेदारों को आमंत्रित करता है। लेकिन एक नारी होने के नाते इस लघु कथा की पात्रा यह कहकर प्रतिकारस्वरूप वहां जाने से इनकार करती है कि 'मां का जगराता और नारी शोषण दोनों एक साथ नहीं हो सकते।' उसका यह निर्णय नारी जाति के सम्मान एवं सशक्तीकरण को दर्शाता है।

डॉ. कमल चोपड़ा की लघुकथा उन लोगों पर करारा प्रहार और कटाक्ष है जो पूरी दुनिया को एक गांव समझते हैं पर अपनों से 'इतने दूर' हो गए हैं कि उन्हें अपने 'बाबूजी' की मृत्यु का समाचार भी पड़ोसी से पता चल पाता है। इनकी 'छिपा हुआ दर्द' लघु कथा दर्शाती है कि मां-बाप भी हमारे लिए रिश्तेदारों की तरह हो गए हैं जिनके पास कभी-कभार ही जाना हो पाता है। उनका संबंध-विच्छेद इसलिए हुआ था कि अलग-अलग रहकर नया जीवन साथी तलाश करेंगे लेकिन किसी वजह से जब वे मिलते हैं, तो कांता शर्मा की 'कस्तूरी-मृग' की नायिका 'अतीत की चाह में वर्तमान से जूझती है।' मां-बाप से बढ़कर कौन-सी धन-दौलत है? इनका ऋण संतान जन्मभर नहीं उतार सकती। कुणाल शर्मा की लघुकथा एक पुत्र के अपने पिता के प्रति प्रेम-कर्तव्य को दिखाती है जिसमें वह 'कर्ज' लेकर भी बीमार पिता का इलाज करवाने की हामी भरता है। जीवन में नाटक कभी-कभी यथार्थ भी हो सकता

है। कुमार नरेंद्र की 'सेहरा' लघुकथा में मां की अंतिम इच्छापूर्ति के लिए रचाया गया स्वांग हकीकत बन गया। इन्हीं की लघुकथा 'अमृतपर्व' उन लोगों की छिपी हुई इच्छाओं का उद्घाटन है जो संपत्ति के हस्तांतरण के लिए अपने मां-बाप को मरते हुए देखने का इंतजार करते रहते हैं। समझ आने पर वही आदर्श स्थिति 'अमृत पर्व' का रूप ले सकती है।

आज हम विश्व कुटुंब की बात करते हैं लेकिन अपनों को घर से दूर करने पर तुले हैं। गोविंद शर्मा की लघुकथा 'दूर होती दुनिया' में यही कुछ होते दिखा है। एक बाप के लिए 'पहले एक गली, फिर दो, यह दुनिया कितनी गलियां दूर होगी, अभी'! कहना मुश्किल है। मां-बाप की पति-पत्नी के निजी रिश्तों में बेवजह की दखलंदाजी संबंध-विच्छेद का सबब बन गई होती। लेकिन 'आंसुओं की भाषा' को समझते हुए जज के फैसले ने घर को टूटने से बचा लिया। डॉ. चंद्रदत्त शर्मा की लघु कथा में इसी ओर इशारा है। ज्योत्स्ना सिंह की 'दंश' में जात- बिरादरी में फंसे हमारे समाज की दकियानूसी सोच झलकती है- 'विकास दिल की गहराइयों से चाहता था मुझे, पर वह जात- बिरादरी का न था। यह आपकी जात-बिरादरी के हीरे जैसे वर हैं। मुझे अब इसी हीरे की चमक में रिसना है जिंदगी भर।' बेटों के बीच बंटवारे को लेकर चिंतित मां के 'दुख के दिन' तब दूर हो गए जब बलराम अग्रवाल की लघुकथा के नायक अपना फैसला मां को सुनाते हैं। मधुकांत की लघुकथा में लालची लाला अपने 'हाथ की रोटी' को भी समान के रूप में ग्राहक को बेच देता है। घर की खस्ता हालत और बेरोजगार की दशा-व्यथा मधुदीप की लघुकथा 'एहसास' में स्पष्ट उजागर होता है। बाजारवाद और पैसे ने सोच को प्रभावित किया है। मृत्यु जैसे अंतिम सत्य को कुछ दिनों तक झुठलाए जाने की कोशिश है मुकेश शर्मा की लघुकथा 'बर्फ पर पड़ी संवेदना'। यह हमारे रिश्तों की पवित्रता को नष्ट-भ्रष्ट करती है। इन्हीं की 'फादर इंडिया' में अपनी-अपनी मजबूरियों को तरजीह देने वाले बेटे अपने बीमार पिता के उपचार के लिए बहाने ढूंढते फिरते हैं। डॉ. मिथिलेश कुमारी मिश्र की लघुकथा 'साहसिक कदम' में एक दिव्यांग से शादी को लेकर 'बेटी के चेहरे पर कई-कई गुलाब' इसलिए खिलते हैं कि उसके साथ सुखी रहने की उम्मीद की किरण जगी है। रश्मि तरिका की लघुकथा 'दुर्गा' में परिवार में स्थापित मर्यादित संबंधों में नाजायज संबंध बनाने की फिराक में रहने वालों को सबक सिखाने की कोशिश है।

राजपाल सिंह गुलिया की लघुकथा 'प्रयोजन' में संभ्रांत मालिक की झूठी दरियादिली और संकुचित सोच तब खुलकर सामने आती है जब वह अपने नौकर को पर्यटन स्थल पर घुमाने के लिए कुली के तौर पर ले जाता है। इसी प्रकार राजेंद्रमोहन त्रिवेदी 'बंधु' की लघुकथा में बहू को नौकर का 'विकल्प' ससुर के रूप में मिलता है। इस सोच और स्थिति में घर के बुजुर्ग की हैसियत समझ आती है जहां नौकर और ससुर को एक ही नजर से देखा जाता है। रेणु चंद्रा माथुर की लघुकथा 'ऋण-मुक्त' में रिश्तों में प्यार और श्रद्धा रखने वालों के मुंह पर दौलत का तमाचा जड़ने वालों की सोच को रेखांकित किया गया है। राजनीतिक सोच और महत्त्वाकांक्षा पालने वाले घर के ही सदस्य जब विधवा बहू के पुनर्विवाह को हामी भरते हैं, तो ललिता भाटिया की लघुकथा 'पीली कोठी का सच' प्रकट होता है। जीते-जी अपनों को खाने-पीने के बारे न पूछा हो लेकिन श्राद्ध के दौरान खूब आवभगत और अच्छे-अच्छे पकवान बनाए जाते हैं, यह दिखावा विनय कुमार सिंह की 'श्राद्ध' कहानी बयान करती है।



परिवारों में बड़े-बुजुर्ग कितने उपयोगी हैं? इस लिहाज़ से 'दृष्टि' ने अपनी दूरदर्शिता का परिचय दिया है। शुरू और अंत में वरिष्ठ कथाकारों की लघुकथाएं संकलित कर यह दिखाने का प्रयास किया है कि बड़े-बुजुर्गों की घर-आंगन और जीवन की किसी भी अवस्था में अहमियत से इनकार नहीं किया जा सकता। ये घर-परिवार के सदा चमकने वाले आभूषण हैं जिनकी 'कृपादृष्टि' और 'आशीषदृष्टि' सब पर बनी रहे। यह जरूरी है कि घर के बड़े-बुजुर्गों का आदर-सम्मान हो। उन्हें समय दिया जाए ताकि वे बची हुई उम्र को हंसते-हंसते बिता सकें। इस उम्र में सहारे की जरूरत होती है, अपनेपन और देखभाल की भी। लेकिन हम घंटों सोशल मीडिया पर बिता सकते हैं, संवेदनात्मक और भावनात्मक संदेश, प्रेरक प्रसंग आदि साझा कर सकते हैं लेकिन घर के अपनों के लिए फुर्सत के कुछ क्षण नहीं दे पाते, न ही कोई संवेदना, भावना या प्यार या लगाव दर्शा पाते हैं। लगता है परिवार की संवेदनाएं भी घर-आंगन से गौरैया की तरह गुम हो गई हैं, कहीं लापता-सी हैं जिन्हें वापस बुलाने/लाने की नितांत आवश्यकता है- परिवार हित में। हमारे मिट्टी के घर तो पक्के बन गए हैं लेकिन रिश्तों के धागे कमजोर व कच्चे होते जा रहे हैं। जब घर कच्चे थे, मिट्टी-गारे से बने थे, तब परिवारों में रिश्तों की डोर मजबूत और टिकाऊ थी। लेकिन अब न गौरैया इन पक्के घरों के आस-पास घोंसला बना सकती है और न ही उनमें रिश्तों के लिए कोई जगह बची रह गई है। यह भी दिखता है कि अब एक कमरे के चारों कोनों में चार परिवार पल रहे हैं, अपनी दुनिया में मग्न हैं जो एक कमरे में रहते हुए भी

अकसर कम ही बातचीत करते हैं। कारण यह कि उनके परिवार उनसे दूर हैं, जो स्मार्टफोन के जरिए उनसे जुड़ते हैं। आपसी संवाद और एक दूसरे से दुःख-सुख साझा करते हैं। इसी तरह और भी अनेक तरह के परिवार बन रहे हैं।

देर-सवेर हमें अपनी सोच में बदलाव लाना होगा। एकल परिवार संस्कृति के बढ़ते/घटते प्रभाव को देखते हुए यह स्वीकार करना होगा कि आने वाले समय में वृद्ध आश्रम हमारा बिना खून के रिश्ते का परिवार हो सकता है और उसमें रहने वाले हमारे अपने होंगे। यह कड़वा जरूर है लेकिन यथार्थ है जिसे पीकर हम 'नीलकंठ' न बन पाएं मगर मरेंगे भी नहीं। यह बदलाव का हिस्सा है। वर्तमान में परिवार का स्वरूप बिलकुल बदल गया है। अब एकल संतान के कारण, उसकी शिक्षा-दीक्षा के बदलते ढांचे और रोजगार की तलाश ने भी परिवार को प्रभावित किया है। बच्चों को अपने मां-बाप छोड़कर अपने भविष्य के लिए गांव से शहर, शहर से महानगर और वहां से विदेशों तक का सफर तय करना पड़ रहा है जिस कारण उनके मां-बाप अपने घर/स्थान पर अकेले रह जाने को विवश हैं और किसी तरह अपनी दिनचर्या काट रहे हैं। हाशिए और बेरुखी का दंश हमारे बुजुर्ग ही झेल रहे हैं। जीवन के आखिरी पड़ाव का सूनापन और उनकी पीड़ा बच्चों के सहारे ही दूर हो सकती है। चाहे डॉ. श्याम सुंदर दीप्ति की लघुकथा 'लैपटॉप' हो या शेख शहज़ाद उस्मानी की 'कुछ तुम बदलो, कुछ हम' या फिर सुधीर द्विवेदी की 'पुनर्चक्रण'। इनमें उन मां-बाप की आंखों में सूनापन झलकता है जिनके बच्चे उनसे दूर रहते हैं। 'लैपटॉप' में, 'मैं कई बार सोचता हूं कोमल, हमने इंटेलिजेंट बच्चे पैदा करके क्या गलती कर ली! बेटी बंबई, बेटा बंगलौर। ...सचमुच, लैपटॉप ने काम नहीं आना।' में उनके दर्द को महसूस किया/समझा जा सकता है। दूसरी ओर 'पुनर्चक्रण' में अपने बेटे के चले जाने के बाद और दूसरे के भी ऐसा करने के डर से सूनेपन को दूर करने के लिए पति-पत्नी अपने मां-बाप के पास जाने का फैसला कर लेते हैं- 'हम वापस चलें ...अपने गांव अपने मां-बाप के पास। एक बार, फिर से उनके बच्चे बनकर...।'

चिड़िया के बच्चे पंख आने पर जब उड़ाने भरते हैं फिर वापस मां-बाप के पास नीड़ में नहीं आते, बल्कि अपनी दुनिया में मस्त हो जाते हैं। सब अच्छा लगने लगता है और पिछला भूल जाता है। सुरेंद्र गोयल की 'टूटे क्षितिज' में उसने मां-बाप के मरने के बाद घर-परिवार की सारी जिम्मेदारियों का बोझ उठाया/ढोया लेकिन एक-एक करके सभी अपना स्वार्थ सिद्ध हो जाने पर उसे भूलते गए। उसकी खुशियों, उसके अरमानों को किसी ने नहीं समझा। आज वह अकेली जीने को विवश है। कहना न होगा कि परिवारों ने 'इतनी दूर'[1] से 'दूर होती दुनिया'[2] तक का सफर तय कर लिया है जहां 'कर्ज'[3] लेकर 'अमृतपर्व'[4] मनाने के अवसर कम होते जा रहे हैं। लेकिन 'दलदल'[5] में धंसते जा रहे परिवारों की 'बुनियाद'[6] और 'ढहती दीवारें'[7] बचाने के लिए 'लगाव'[8], 'संस्कार'[9], 'प्यार'[10] का लेप लगाकर 'रिश्ते'[11] की मजबूती को 'आत्मिक बंधन'[12] में बांधने को आगे आकर 'आत्मनिर्णय'[13] से 'फैसला'[14] ले सकने में हम सक्षम हैं ही।

'दृष्टि' की लघुकथाएं पढ़ने में बेशक, छोटी हैं, कुछ पंक्तियों में सिमटी हुई हैं लेकिन इनका मंतव्य गंभीर और सटीक है। अपने आसपास के परिवारों में घटित हो रही घटनाओं के परिप्रेक्ष्य में कई सवालात करती हैं जिनका जवाब और समाधान हम सबके बीच ही मौजूद है। परिवार के सदस्यों के पास ही है। जरूरत है तो बस, अपने आपको समझने और अपने परिवार की रुचियों, अभिरुचियों, दुख-तकलीफ-खुशी को मिल-बांटकर हल करते रहने की। इन सबके बावजूद, लघुकथा को अपनी धार को और भी तेज करना होगा। इसलिए कि यह समय लघुकथा का ही है। कहानी, उपन्यास पढ़ने की फुर्सत किसी के पास नहीं। सोशल मीडिया के प्रचलन में आ रहीं नीति कथाओं, लघुकथाओं और प्रेरक प्रसंगों से मुकाबले के लिए तैयार रहना होगा। पारिवारिक पृष्ठभूमि में ओझल हो रहे झरोखों और कोनों को तलाशना बेहतर होगा। बदलते परिवेश और बदलते समय के साथ परिवार भी बदलते जा रहे हैं। बहुत कुछ अनकहा-अनछुआ रह गया है।

'दृष्टि' के इस अंक में लघु कथाओं का शिल्प न अधपका है और न ही अधकच्चा, बल्कि पूर्णतया पका हुआ है। सुग्राह्य है जिसे पकाने के लिए विषैले रसायनों का प्रयोग नहीं हुआ है और न ही रंगत के लिए अतिरिक्त कृत्रिम रंगों को ही ढाल बनाकर परोसा गया है। सहज पके सो मीठा होय की कहावत पूर्ण चरितार्थ होती है। भरपूर आस्वादन है। भाषा ठीक-ठाक है। कथनानुसार यहां-वहां इसका सही प्रयोग है। वाक्य विन्यास भी समय और प्रसंगानुसार है। लघुकथाकार को अपनी बात बड़े कम शब्दों में रखनी होती है। छोटे-छोटे वाक्यों का प्रयोग इस बात को रेखांकित करता है। यही लघुकथा की खासियत है। रचना को सुगठित, पठ्य बनाने का भी एक तरीका है। यहां यह लिखना प्रासंगिक होगा कि 'दृष्टि' ने जो मेहनत इस अंक को समेटने में की है, अगर उसका सही-सही वितरण ज्यादा-से-ज्यादा पाठकों तक हो पाए, तभी रचनाकार के कर्म को प्रशंसा के साथ-साथ अहमियत और सम्मान भी मिलेगा। कुछेक सौ प्रतियां छाप कर सिर्फ इनके लेखकों तक पहुंचा कर अपने कर्म की इतिश्री मान लेना, सुखद एहसास नहीं करवा सकता।

द्वारा भारद्वाज भवन, रामनगर, शिमला,
हिमाचल प्रदेश-171 004, मो. 0 98162 85095

1-14 'दृष्टि' के इसी अंक में प्रकाशित क्रमशः डॉ. कमल चोपड़ा, गोविंद शर्मा, कुणाल शर्मा, कुमार नरेंद्र, दुलीचंद कालीरमन, डॉ. नीरज सुधांशु, शशि बांसल, बलराम अग्रवाल, मधु जैन, डॉ. वीरेंद्र कुमार भारद्वाज, श्याम सुंदर अग्रवाल, डॉ. सतीशराज पुष्करणा और अशोक जैन की लघुकथाएं।



"यह 69 वर्ष विकास और खुशहाली के साक्षी रहे हैं। मेरी सरकार ने सदा यह प्रयास किया कि विकास के लाभ सभी तक पहुँचें और सभी स्वावलम्बन की राह पर आगे बढ़ें। आंकड़े गवाह हैं, हमने वायदों से अधिक निभाया। भविष्य में भी प्रदेश सरकार पारदर्शिता और ईमानदारी से अपना कर्तव्य निभाती रहेगी। आप सबके सहयोग के लिए आभार और हिमाचल दिवस की पुनः बधाई।"

आपका अपना,

(वीरभद्र सिंह)
मुख्यमंत्री, हिमाचल प्रदेश

वायदों से अधिक निभाया

	वर्ष 2012-2013	वर्ष 2017-2018
सामाजिक सुरक्षा पैंशन	₹450	₹700
80 वर्ष से अधिक आयु के व्यक्तियों की पैंशन	₹800	₹1250
दिहाड़ीदारों की दिहाड़ी	₹150	₹210
आंगनवाड़ी कार्यकर्त्ताओं का मानदेय	₹300	₹1450
गृह रक्षकों का दैनिक मानदेय	₹225	₹571
पंचायत चौकीदारों का मानदेय	₹1650	₹2550
सिलाई अध्यापिकाओं का मानदेय	₹1600	₹2600
विभिन्न कल्याण योजनाओं का लाभ प्राप्त करने की आय सीमा	₹20,000	₹35,000
आवास कल्याण योजनाओं की उपदान राशि	₹48,500	₹1,30,000

सूचना एवं जन सम्पर्क विभाग, हि.प्र. द्वारा जारी

पंजीकरण संख्या : 845/1957 अप्रैल, 2017 एच.पी./79 एस.एम.एल. 2015–17



पर्यटन को उड़ान : रज्जू मार्ग से जुड़ा जाखू मंदिर शिमला छाया : विनोद

आर.एस. नेगी निदेशक, सूचना एवं जन सम्पर्क विभाग, हिमाचल प्रदेश द्वारा प्रकाशित तथा डॉ. डी. के. गुप्ता, नियंत्रक, मुद्रण एवं लेखन सामग्री विभाग द्वारा हिमाचल प्रदेश सरकार के लिए राजकीय प्रेस, शिमला–171005 से मुद्रित करवाकर शिमला से प्रकाशित। सम्पादक वेद प्रकाश।

ISSN 2454-972X

हिमप्रस्थ

मई, 2017





मुख्य मंत्री श्री वीरभद्र सिंह शिमला के ऐतिहासिक रिज मैदान पर मंडी जनपद की संस्कृति पर आधारित शोभा–यात्रा में शिरकत करते हुए।

ISSN : 2454-972X

हिमप्रस्थ

वर्ष : 62 मई, 2017 अंक : 2

सम्पादकीय कार्यालय: हि. प्र. प्रिंटिंग प्रेस परिसर, घोड़ा चौकी, शिमला-5

वार्षिक शुल्क : 150 रुपये, एक प्रति : 15 रुपये

E-Mail : himprasthahp@gmail.com
Tell: 0177 2633145, 2830374
Website: himachalpr.gov.in/himprastha.asp

ज्ञान सागर

रिश्ता, दोस्ती और प्रेम उसी के साथ रखना जो तुम्हारी हंसी के पीछे का दर्द व गुस्से में छिपे का प्यार और मौन के पीछे की वजह समझ सके।

- अज्ञात

इस अंक में

अपनी बात

हिमाचल प्रदेश की सुरम्य वादियों में इन दिनों पर्यटन मौसम अपने चरम पर है। राज्य के प्रसिद्ध सैरगाह/धार्मिक स्थल सैलानियों व श्रद्धालुओं की आमद से गुलजार हैं। कुदरत ने हिमाचल प्रदेश को असीम प्राकृतिक सौंदर्य प्रदान किया है। प्रकृति के विविध रूपों एवं मनमोहक छटाओं का लुत्फ उठाने के इच्छुक सैलानियों के लिए देशभर में हिमाचल से बेहतर शायद ही कोई अन्य गंतव्य हो। प्रदेश के मैदानी इलाकों से लेकर सुदूर जनजातीय क्षेत्रों तक सभी आय वर्ग के सैलानियों के लिए पर्यटन के पर्याप्त आकर्षण मौजूद हैं। प्रदेश की स्वास्थ्यवर्धक जलवायु, सुंदर वादियों में कल-कल बहते नदी-नाले, मनभावन दृश्यवलियां, धार्मिक महत्त्व के श्रद्धास्थल, समृद्ध ऐतिहासिक धरोहर को संजोए प्राचीन भवन व किले, कला के अनुपम भंडार, संग्रहालय, आर्ट गैलरियां व कला दीर्घाएं जहां पर्यटकों को आकर्षित करती हैं, वहीं साहसिक पर्यटन में पर्वतारोहण, पैराग्लाइडिंग, रिवर राफ्टिंग व जलक्रीड़ा जैसे आकर्षण हर वर्ष देश-विदेश के लाखों सैलानियों को हिमाचल भ्रमण के लिए लालायित करते हैं। सांख्यिकी आंकड़ों के अनुसार प्रदेश की लगभग 68 लाख आबादी से तीन गुणा अधिक पर्यटक हर साल यहां सैर-सपाटे के लिए आते हैं। वर्ष 2016 में प्रदेश में 1.84 करोड़ पर्यटक विभिन्न पर्यटक स्थलों पर पहुंचे जबकि इस साल मार्च माह तक 40 लाख पर्यटक आ चुके हैं। हर साल पर्यटकों की संख्या में 5 प्रतिशत की वृद्धि हो रही है। प्रदेश के आर्थिक विकास में महत्त्वपूर्ण इस क्षेत्र को प्रदेश सरकार विशेष प्राथमिकता प्रदान कर रही है। हिमप्रस्थ भी हिमाचल के विविध रंगों व जानकारियों को पाठकों तक साझा करता आ रहा है। इस अंक में पाठकों को शिमला, कांगड़ा, मंडी तथा कुल्लू जिलों से संबंधित पर्यटन जानकारियों व रोचक तथ्यों से रू-ब-रू करवाने का प्रयास किया गया है। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में पर्यटन के मायने ही बदल गए हैं। संस्कृति, खानपान, परंपराएं, बागबानी-कृषि भी पर्यटन का हिस्सा बनकर उभरे हैं। आर्थिक संपन्नता में पर्यटन के योगदान को नकारा नहीं जा सकता। प्रदेश सरकार ने नई पहल करते हुए सेब बहुल क्षेत्रों में सैलानियों को आकर्षित करने के लिए विभिन्न टुअर पैकेज उपलब्ध करवाए जा रहे हैं। इससे पर्यटकों को हिमाचल की प्रमुख बागबानी फसल सेब के बागानों तक ले जाने के साथ-साथ उन्हें स्थानीय लोक संस्कृति एवं खान-पान से रू-ब-रू होने का भी अवसर मिल रहा है। राज्य के बेरोजगार युवाओं को पर्यटन में स्वरोजगार के अवसर मुहैया करवाने के लिए उन्हें पर्यटन के साथ साहसिक खेलों, ट्रैकिंग गाइड तथा इससे जुड़ी अन्य गतिविधियों में प्रशिक्षण दिया जा रहा है। हाल ही में केंद्र सरकार द्वारा शिमला से आरंभ की गई हवाई सेवा 'उड़ान' योजना से प्रदेश में पर्यटन गतिविधियों को भी प्रोत्साहन मिलेगा। प्रदेश की राजधानी शिमला का प्रसिद्ध जाखू मंदिर रज्जू मार्ग से जुड़ जाने से पहाड़ों की रानी के आकर्षण में एक और अध्याय जुड़ गया है जिससे यहां पर्यटकों की चहल-पहल और भी बढ़ गई है। आशा है सुधि पाठकगण भी नवीन जानकारियों से राज्य की सैरगाहों में प्रकृति का आनंद लेने अवश्य आएंगे। आपके आगमन के लिए 'अतिथि देवो भवः' का संदेश लिए हर नागरिक तैयार खड़ा है।

संपादक

पर्यटन

लो आई पर्यटन की रुत

◆ विनोद भारद्वाज



भारत छह ऋतुओं का देश है। हर ऋतु का अपना एक अलग महत्त्व है। प्रकृति द्वारा प्रदत्त इन उपहारों के साथ हमारी संस्कृति, परंपराओं, जीवन का अटूट संबंध है। इन उपहारों से जीवन की निरंतरता को बनाए रखने तथा नीरसता को दूर करने का सुअवसर मिलता है। इन ऋतुओं को नया रूप देने में संगीत, नृत्य तथा मेले, त्योहार, उत्सव भी नया रंग भरते हैं। हिमालय की गोद में बसे इस प्रदेश की छटा निराली है। मैदानों से लेकर उत्तुंग शिखरों तक हर मोड़ पर दृश्य बदल जाते हैं।

पहाड़ों के प्रति आकर्षण की भावना मानव में सदियों से रही है। कोई यहां की वादियों को निहारने आया, कोई शांति की खोज में। अनेक पहाड़ों को निहारने आए और यहीं के होकर रह गए। हमारे ऋषि-मुनियों ने अनेक पौराणिक ग्रंथों का सृजन इन एकांत स्थलों में रहकर किया। इनके नाम से आज भी अनेक स्थल जुड़े हैं। पौराणिक कथाओं में यहां के स्थलों का वर्णन आता है।

जलप्लावन की समाप्ति के उपरांत के प्रारंभिक दिनों में मनु महाराज हिमाचल प्रदेश के कुल्लू जिले के मनाली नामक स्थान पर रहे। मनु महर्षि या मनु महाराज के भारतवर्ष में अनेक पूजनीय स्थल हैं, लेकिन उनका प्रधान स्थान मनाली माना जाता है। यह मनु का आलय 'मन्वालय' अर्थात् मनु के घर के रूप में जाना जाता है।

मनाली में मनु महाराज का प्राचीन मंदिर अवस्थित है। इस मंदिर में स्थापित मूर्ति गांव के बीच के घर की पशुशाला से प्राप्त हुई थी। अथर्ववेद में उल्लेख है कि हिमवत पर्वत के जिस शिखर पर मनु की नाव उतारी गई, वहां अमृत के तुल्य कुठ नामक

औषधि होती थी :-

यत्र नावप्रभंशनं यत्र हिमवतः शिरः
तत्रामृतस्य चक्षणं ततः कुष्ठो अजायत ॥

पौराणिक ग्रंथों में उल्लेख मिलता है कि इस आरंभिक काल के उपरांत अन्य ऋषि-मुनियों, योगियों ने इस जनपद में आकर सनातन आध्यात्मिक और सांस्कृतिक मूल्यों की दिशा में कार्य किया। मनु स्मृति के प्रवक्ता भृगु ऋषि का पावन स्थान वशिष्ठ गांव के पीछे भृगु सौर (भृगु सरोवर) इसके अतिरिक्त कुल्लू में मार्कंडेय, शृंगी, शक्ति, पराशर, ब्यास, शुकदेव, नारद, दुर्वासा, गगाचार्य, परशुराम, लोमश, शांडिल्य, विभाण्डक, च्यवन, पुण्डरीक, कपिल, शौनक, याज्ञवल्क्य, धौम्य आदि ऋषि-मुनियों के देवस्थल हैं। कुल्लू में वैष्णव संस्कृति के प्रादुर्भाव का सबसे बड़ा उदाहरण कुल्लू दशहरा महोत्सव है। यह पहाड़ की संस्कृति को मैदानों की संस्कृति से जोड़ता है। इस पर्व में अयोध्या तथा कुल्लू के इतिहास के जुड़ाव को देखा जा सकता है।

मंडी जिला मांडव्य ऋषि की तपोस्थली है। मंडी शहर को छोटी काशी की संज्ञा दी गई है। इस जनपद में पराशर ऋषि, देव कमरूनाग, शिकारी देवी सहित करसोग में स्थित ममेल व कमाक्षा मंदिर हमारी समृद्ध पुरातन संस्कृति के जीते-जागते उदाहरण हैं। रियासत काल में भी जनपद में अनेक मंदिरों का निर्माण हुआ। सुकेत की राजधानी पांगणा में देवी का मंदिर, मंडी, सुंदरनगर के मंदिरों की स्थापना ने हमारी संस्कृति के प्रचार-प्रसार को बढ़ावा दिया।

बिलासपुर जिले की पहचान ब्यास ऋषि तथा मार्कंडेय ऋषि से जुड़ी है। यहां नयना देवी में मां नयना देवी का मंदिर पहाड़ी तथा मैदानी इलाकों के लोगों के लिए आस्था का प्रमुख केंद्र है। धार्मिक पर्यटन के साथ-साथ जिले में मानव-निर्मित गोविंद सागर झील व इसमें डूबी संस्कृति भी पर्यटकों के आकर्षण का केंद्र है।

सोलन जनपद की अनूठी संस्कृति तथा यहां अनेक पर्यटन स्थल जैसे बड़ोग, डगशाई, सुपाटू, कसौली, चायल हैं। जिले की छावनियों का इतिहास अंग्रेजों से जुड़ा है। कसौली की मैदानों से निकटता के कारण यहां वर्षभर सैलानियों का तांता लगा रहता है। महान लेखक खुशवंत सिंह का कसौली से नाता होने के कारण अब यहां आयोजित होने वाला साहित्यिक सम्मेलन ने इस स्थल को अंतर्राष्ट्रीय पहचान दिलाई है। आजादी के उपरांत यहां अनेक और दर्शनीय स्थल उभर कर आए हैं - इनमें सलोगड़ा स्थित हैरिटेज केंद्र, चायल से छह किलोमीटर की दूरी पर स्थित काली टिब्बा व सोलन से चार किलोमीटर की दूरी पर स्थित जौणाजी शिव मंदिर प्रमुख हैं।

कांगड़ा का संपूर्ण जनपद त्रिगर्त के नाम से जाना जाता है। यहां के देवालय, शक्तिपीठ संपूर्ण भारतीयों को अपनी ओर आकर्षित करते हैं। मां चामुंडा, वज्रेश्वरी माता मंदिर व ज्वालाजी के अतिरिक्त धर्मशाला में कुनाल पत्थरी, भागसूनाथ मंदिर, बैजनाथ का शिव मंदिर व महाकाल मंदिर प्रसिद्ध हैं। पालमपुर की संपूर्ण घाटी चाय के बागानों की सुंदरता, धौलाधार की छटा पर्यटन को चार चांद लगाती है। जनपद से गुजरने वाली छोटी रेल की यात्रा रोमांचकारी है।

ऊना हालांकि प्रदेश का छोटा सा जिला है लेकिन इस जिले में पहाड़ी तथा मैदानी इलाकों की मिश्रित संस्कृति के साक्षात् दर्शन होते हैं। मां चिंतपूर्णी मंदिर सहित बाबा बड़भाग सिंह की स्थली एक दर्शनीय स्थल है। हमीरपुर भी राज्य के सुंदरतम जिलों में से एक है। यहां के पुरातन किले,

विदेशी पर्यटकों का पसंदीदा स्थल

सूचना प्रौद्योगिक के इस युग में हिमाचल की वादियों में विदेशी पर्यटकों को प्रकृति का नज़ारा लेते तथा पुरातत्त्व व धार्मिक महत्त्व के स्थलों ऐतिहासिक धरोहरों पर बहुतायत में देखा जा सकता है। राज्य के अनछुए स्थल व जनजातीय क्षेत्र विदेशियों की पहली पसंद बने हैं।

वर्ष-दर-वर्ष हिमाचल आने वाले विदेशी पर्यटकों का आंकड़ा बढ़ता ही जा रहा है। हिमाचल के अनेक स्थानों जैसे राजधानी शिमला, धर्मशाला, डलहौजी, सपाटू, डगशाई इत्यादि से ब्रिटेन के नागरिकों का नाता-रिश्ता रहा है। वे आज भी अपने पुरखों की जड़ें तथा इनकी स्मृति में यहां आते हैं। शिमला, धर्मशला के नगर निगम में उपलब्ध जन्म-मृत्यु दस्तावेजों से भी वे जानकारियां हासिल करते हैं।

इस वर्ष जनवरी से मार्च तक 92 हजार से अधिक विदेशी पर्यटक हिमाचल की वादियों का लुत्फ उठाने के लिए आए हैं। इनमें सबसे अधिक इंग्लैंड के हैं। विदेशी पर्यटकों में सभी आयु वर्ग के पर्यटक शामिल हैं। वर्ष 2016 के दौरान इस अवधि में 83 हजार के करीब विदेशी पर्यटक आए थे। संपूर्ण वर्ष के दौरान विदेशी पर्यटकों की संख्या 4.52 लाख के करीब थी। विदेशी पर्यटकों के आने से राज्य की आर्थिकी को भी बल मिल रहा है। विदेशियों को शिमला तथा मनाली की वादियां अत्यधिक आकर्षित करती हैं। शिमला में 42 हजार के करीब व कुल्लू में 18 हजार के करीब पर्यटक आए। पिछले वर्ष शिमला में 1,65,476 व कुल्लू मनाली में 1,22,064 विदेशी पर्यटक घूमने आए थे। सरकार द्वारा भी विदेशी पर्यटकों को आकर्षित करने के लिए आकर्षक योजनाएं बनाई जा रही हैं।

गांव तक पर्यटन का विस्तार

मानव की जीवनभर यह प्रवृत्ति रहती है कि वे नए-नए क्षेत्रों को देखे, उनका अवलोकन अपने नेत्रों से करे। अपने मन-मस्तिष्क पर नई जगहों का चित्र उकेरे। वहां के निवासियों के साथ आपसी मेल-मिलाप बढ़ाए, वहां के जीवन, संस्कृति, परंपराओं को जाने व समझे। सैर, सैलानी तथा सैरगाह ऐसे शब्द हैं जो अपने भीतर पर्यटन की परिभाषा को समाहित किए हुए हैं।

सैलानी सदैव नए स्थलों पर जाकर उनसे साक्षात्कार करना चाहता है। हिमाचल का चप्पा-चप्पा या यू कहें हर मोड़ पर नए दृश्य देखने को मिलते हैं। हर गांव का अपना एक अलग इतिहास, संस्कृति है। गांवों के समूह से पंचायत बनती है। हिमाचल सरकार ने पर्यटन का मुख पंचायतों की ओर मोड़ने का निर्णय लिया है। ये एक नवीन प्रयास है। इससे जहां गांव-गांव तक पर्यटन गतिविधियों का विस्तार होगा, वहीं राज्य की धार्मिक, सांस्कृतिक तथा समृद्धतम परंपराओं की जानकारी मिलेगी।

ये प्रयास उन यायावरों के लिए हैं जो हमारी संस्कृति तथा प्रकृति का आनंद लेने के इच्छुक हैं। हिमाचल 'अतिथि देवो भव' की भावना को लेकर पर्यटन गतिविधियों को आगे बढ़ा रहा है।

राज्य में एशियन विकास बैंक द्वारा 628 करोड़ रुपये की वित्त पोषित योजना पर्यटन विकास के लिए कार्यान्वित की गई है। इस योजना के तहत 19 पंचायतों में पर्यटन गतिविधियों को बढ़ावा दिया जाएगा। इन पंचायतों में शिमला की नालदेहरा, बल्देहां, सराहन व घणाहूटटी, सोलन की माही, माकड़ी, मारकण्डेय, जुखाला व नोहाड़ा, कुल्लू की बड़ाग्रां व कड़ीधार पंचायत, कांगड़ा की रजियाणा गांव अंद्रेटा (महान चित्रकार सोभा सिंह की कर्मस्थली), बंदला, पद्दर, नगरोटा सूरियां व चंबा की उदयपुर व मैहला, मंडी की पांगणा, बांदी व नोहाड़ा पंचायतें हैं।

ये पंचायतें धार्मिक एवं साहसिक पर्यटन गतिविधियों से सराबोर हैं। शिमला की नालदेहरा, बल्देहां पंचायत में स्थित अंग्रेजों के वक्त में बना गोल्फ कोर्स, नाग देवता का मंदिर, इसके समीप कौल बांध जलाशय, सराहन में भीमाकाली का मंदिर, प्राकृतिक सुंदरता से परिपूर्ण सैरगाहें हैं। सोलन जिले में ऐतिहासिक स्थल मारकण्डेय ऋषि की तपोस्थली, मंडी जिले में सुकेत की राजधानी पांगणा व यहां स्थित देवी का मंदिर, कुल्लू के बड़ाग्रां व कंडीधार की सुंदरतम वादियां, कांगड़ा में विश्वविख्यात चित्रकार सोभा सिंह का गांव तथा चंबा में उदयपुर के अलौकिक सौंदर्य स्थलों पर पर्यटकों के लिए सुविधाओं के विस्तार से पर्यटन के नए स्थल उभरेंगे।

पर्यटन के साथ-साथ स्थानीय उत्पादों, स्थानीय व्यंजनों के बाजार व लोक संस्कृति को बढ़ावा मिलेगा। यहां से युवाओं के लिए रोजगार के नए अवसर पैदा होंगे। युवाओं को होम स्टे योजना में सफाई व्यवस्था, कुकिंग, साहसिक पर्यटन का प्रशिक्षण, हस्तशिल्प, प्रशिक्षण का प्रदान किया जाएगा। राज्य सरकार की इस नई पहल से पर्यटन को नए पंख लगेंगे।

देवालय दर्शनीय हैं। बाबा बालक नाथ, टौणी देवी की थाप, सुजानपुर का किला व मंदिर सहित वर्तमान में राष्ट्रीय प्रौद्योगिकी संस्थान आकर्षण के केंद्र हैं। चील के जंगलों से बहने वाली ठंडी हवा मेहमानों को सुकून प्रदान करती है।

चंबा जनपद तो अपने भीतर अथाह इतिहास व समृद्ध संस्कृति का खजाना संजोए हुए है। चंबा शहर जिसने अपनी स्थापना के एक हजार साल पूर्ण किए हैं, में स्थित मंदिर कलात्मक भवन, राजमहल, चौगान की सुंदरता देखते ही बनती है। चंबा के समीप डलहौजी, खजियार तथा मंदिरों की नगीर। भरमौर को जो एक बार देखता है, उसकी इच्छा इसे बार-बार देखने को करती है। चंबा की पांगी घाटी जनजातीय संस्कृति का अंबार है। चंबा का भूरि सिंह संग्रहालय, यहां की कला, कसीदाकारी विश्व प्रसिद्ध हैं।

शिमला का नाम आते ही एक सुंदर शहर की तस्वीर नज़र आती है। शिमला के ऐतिहासिक भवनों तथा अंग्रेजों के वक्त इसका विकास/विस्तार अपने आपमें एक कहानी है। शिमला तक आने वाली छोटी रेल का सफर पुराने वक्त की याद को तरोताजा करता है। शिमला से बाहर निकल कर जिले में कुफरी, हाटकोटी, सराहन, खदराला, चांशल घाटी, डोडरा क्वार, रोहडू, जुब्बल-कोटखाई, थानाधार, कोटगढ़ की सुंदर वादियां हैं। हाल ही में नारकंडा से छह किलोमीटर दूर स्थित हाटू मंदिर पर्यटकों के लिए एक नई पहचान बना है। सेब बहुल क्षेत्रों की यात्रा अविस्मरणीय रहती है। यहीं से देवालय प्राचीनतम एवं काष्ठ कला के अनूठे नमूने हैं। राज्य के जनजातीय क्षेत्र लाहौल-स्पीति व किन्नौर में हिंदू तथा बौद्ध संस्कृति के दर्शन होते हैं। किन्नौर का कल्पा शहर ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को लिए है। इन जिलों के गोंपा तथा हिमालय की अजंता के नाम से मशहूर ताबो मठ विश्वप्रसिद्ध हैं।

पर्यटन का सीधा संबंध आज आर्थिकी से जुड़ा है। राज्य के सकल घरेलू उत्पाद में पर्यटन का योगदान लगभग 7 प्रतिशत के करीब है। यहां की आबादी 70 लाख से तीन गुणा पर्यटक हर वर्ष राज्य का भ्रमण करने के लिए आते हैं।

इससे स्वतः ही अंदाजा लगाया जा सकता है कि हिमाचल स्वर्ग से भी सुंदर है।

आलेख

मंडी की वादियों में घुमक्कड़ी के साथ आध्यात्मिक शांति

◆ हेमंत शर्मा

नदी घाटी के बीच हरे-भरे लहलहाते खेत, हिमाच्छादित ऊंची चोटियां, देवदार, कायल व बान के घने जंगलों से गुजरती पगडंडियां, एक ओर नदियों की कल-कल करती उच्छृंखल लहरों की सवारी, दूसरी तरफ झील की शीतलता और गहराई के बीच एक अनूठी आध्यात्मिक शांति की चाह, सभी कुछ एक साथ जीने की हसरत पाले हैं तो मंडी जिला आपके स्वागत में बाहें फैलाए इंतजार में है। आइए, और यहां की वादियों का लुत्फ उठाएं।

छोटी काशी के उपनाम से विख्यात मंडी शहर के सदियों पुराने मंदिर हों या फिर यहां की सुरम्य वादियों में गहरे तक समाहित देव संस्कृति, ग्रामीण परिवेश में एक रात बिताने का अनुभव और पत्थरीली संकरी राहों से ट्रैकिंग करते प्रकृति को बेहद नजदीक से जानने-समझने का अवसर, सभी तरह के रोमांच यहां आपके लिए उपलब्ध हैं।

हिमाचल प्रदेश के केंद्र में स्थित मंडी जिला प्राकृतिक सौंदर्य से परिपूर्ण है। राजधानी शिमला से लगभग डेढ़ सौ किलोमीटर की दूरी पर स्थित जिला मुख्यालय मंडी धार्मिक पर्यटन की दृष्टि से विशेष महत्त्व रखता है। पड़ोसी राज्यों पंजाब व हरियाणा के चंडीगढ़ तथा पठानकोट की ओर से सीधी बस सेवा से यह जुड़ा हुआ है और पठानकोट से कांगड़ा घाटी को लांघते हुए जोगेंद्रनगर तक रेल सेवा भी उपलब्ध है। हवाई सफर भुंतर तक उपलब्ध है जो कि साथ लगते कुल्लू जिला व मंडी की सीमा पर ही स्थित है।

यहां के मंदिरों की प्राचीन महत्ता, उनकी निर्माण शैली और लोगों की शैव, वैष्णव व शक्ति मत में गहरी आस्था इस नगर को खास बनाती है। अर्ध-नारीश्वर मंदिर शिव-पार्वती के शिव-शक्ति स्वरूप को एक साथ प्रतिबिंबित करता शायद उत्तरी भारत का एकमात्र मंदिर है। मंडी शहर के बीचोंबीच बाबा भूतनाथ मंदिर स्थित है जिसके निर्माण काल से आधुनिक मंडी नगर की स्थापना मानी जाती है और इस मंदिर का जुड़ाव सर्दियों के अंतिम दौर में आयोजित होने वाले अंतरराष्ट्रीय शिवरात्री महोत्सव से काफी गहरा है। मंडी की देव संस्कृति व लोक कला से रू-ब-रू होने का यह सबसे बेहतर समय होता है जब सैंकड़ों ग्रामीण देवी-देवताओं के दर्शनों का अवसर हमें मेले के दौरान प्राप्त होता है। ब्यास नदी


शिकारी देवी मंदिर घाटी का मनोरम दृश्य

के दाएं किनारे पर स्थित त्रिलोकीनाथ व उसके ठीक सामने नदी के बाएं किनारे पर स्थित पंचवक्त मंदिर अपनी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि व उत्कृष्ट निर्माण शैली से इतिहासवेताओं व इसी प्रकार की रुचि रखने वालों के लिए मंडी भ्रमण का एक बहाना बन जाते हैं।

यहां का प्रसिद्ध टारना माता मंदिर एक छोटी पहाड़ी पर स्थित है जहां से ब्यास नदी के दोनों किनारों पर बसे इस पूरे नगर का विहंगम दृश्य हर किसी को आकर्षित करता है। विशेषतौर पर बरसात के मौसम में इसकी नयनाभिराम छटा देखते ही बनती है। मंदिर तक रियासतकालीन सीढ़ियों से पहुंचने का अलग ही आनंद है और यहां बच्चों के मनोरंजन के लिए हरा-भरा पार्क भी स्थित है। ब्यास नदी के दाहिने छोर पर स्थित भीमाकाली मंदिर परिसर भी विहंगम दृश्यावली से घिरा हुआ है और उसके सामने गुरूद्वारा सिक्ख धर्म की आस्था का प्रमुख केंद्र है। नीलकंठ महादेव, महामृत्युंजय, एकादश रुद्र मंदिर, ब्यास के घाट और वहां प्रत्येक पूर्णमासी को ब्यास आरती इस नगर को सचमुच में छोटी काशी निरूपित करती है।

मंडी शहर में घूमने का मन है तो यहां की इंदिरा मार्केट परिसर में आप बेफिक्र अंदाज में इसका मजा ले सकते हैं। चारों ओर मार्केट और बीचोबीच हरा-भरा पार्क आपको यहां कुछ देर रूकने को मजबूर कर देता है। मंडी में ठहरने के लिए अच्छे होटल व विश्राम गृह उपलब्ध हैं और जिला मुख्यालय से यहां के सभी प्रमुख दर्शनीय स्थलों के लिए टैक्सी व बस सेवा भी उपलब्ध है।

cjksV :- समुद्र तल से लगभग 1,835 मीटर की ऊंचाई पर ऊहल नदी के किनारे स्थित बरोट एक रमणीय पर्यटन स्थल है। मत्स्य पालन विभाग द्वारा संचालित ट्राऊट मछली फार्म के लिए यह विख्यात है। अंग्रेजों द्वारा शानन विद्युत परियोजना के लिए ऊहल नदी पर निर्मित सरोवर यहां की सुंदरता को चार चांद लगाता है। बरोट नारगू वन्य प्राणी अभयारण्य के लिए प्रवेश द्वार भी है जो कि लगभग 278 वर्ग किलोमीटर में फैला हुआ है और मोनाल, जंगली बिल्लियों व काले भालू जैसे पशु-पक्षियों का बसेरा है। बरोट जाते समय घटासनी से पांच किलोमीटर दूर देवदार के घने जंगलों से चारों ओर से घिरा झटींगरी स्थित है जो कि एक समय मंडी रियासत की राजधानी रहा है।

बरोट के समीप चौहार घाटी के अन्य रमणीय स्थलों में भुभुजोत के ठीक सामने शिल्हबुधाणी लंबे-लंबे पेड़ों के घने जंगल में ठहरने के अनूठे अनुभव, हिमरी गंगा बीस भादों के पवित्र स्नान, हुरंग नारायण मंदिर काहिका उत्सव के लिए प्रसिद्ध है। यहीं समीप में टिक्कन गांव में देव ढांक, घोघड़धार से हिमाच्छादित धौलाधार पर्वतमाला की दृश्यावली व उगते-ढलते सूरज का नयनाभिराम नजारा तथा डायना पार्क में पिकनिक का मजा कुछ अलग ही है।

कैसे पहुंचें बरोट :

मंडी से लगभग 68 किलोमीटर व जोगेंद्रनगर से 39 किलोमीटर दूर। वाया घोघरधार यात्रा बेहद रोमांचक। बस व टैक्सी सेवा दोनों ही स्थानों से उपलब्ध।

ट्रैक रूट्स :

1. बरोट-लपास-थल्टुखोड़-शिल्हबुधाणी-सुधार-बल्हरोपा लगभग 18 कि.मी.

2. झटींगरी-फुलाधार-नकटी देवी, विंच कैंप-देवीदड़-चेना टॉप-बिलिंग 22 कि.मी.

3. थल्टुखोड़-रिचु नाला-फुंगनी टॉप-लांघा-सरी जोत-डैहनासर 20 कि.मी.

4. नागचला-डिगली-नकटी देवी-काओ-बरोट 9 कि.मी.

5. शिल्ह बुधाणी- भुभूजोत-दालीघाट 9 कि.मी.

6. बरोट-म्योट-राजगुंध-चेना टॉप-हनुमान चोटी-उत्तराला-संसाल 18 कि.मी.

कहां ठहरे : लोक निर्माण विभाग का विश्राम गृह, निजी विश्राम गृह व छोटे होटल। होम स्टे इकाइयों में।

पराशर : शांत-सुरम्य वादियों में प्रकृति के बीच कुछ यादगार लम्हें बिताने हों तो पराशर जरूर आएं। समुद्रतल से लगभग 2,730 मीटर की ऊंचाई पर स्थित पराशर हरी-भरी चरागाहों, मौसम के अनुरूप रंग बदलती झील व उसमें तैरते टापू, घने जंगलों और धौलाधार की बर्फीली चोटियों के नयनाभिराम नजारों के लिए प्रसिद्ध है। किंवदंती है कि इस झील का निर्माण ऋषि पराशर द्वारा गुर्ज का वार करने से उत्पन्न जल से हुआ और उनकी याद में यहां मंडी के राजा बाणसेन द्वारा लगभग आठ सौ वर्ष पूर्व पैगोड़ा शैली में निर्मित मंदिर झील के किनारे स्थित है। यह भी कहा जाता है कि इस मंदिर का निर्माण केवल एक देवदार के पेड़ की लकड़ी से 12 साल में किया गया। झील के किनारे चहलकदमी औलोकिक आनंद की अनुभूति प्रदान करती है। यहां पर विभिन्न कैंपिंग स्थल भी स्थित हैं और ट्रैक्कर के लिए कई ट्रैकिंग रूट भी हैं।

कैसे पहुंचे

मंडी से 50 कि.मी. दूर (मंडी-कटौला-बागी-पराशर सड़क मार्ग) और भुंतर से 45 कि.मी. दूर (भुंतर-बजौरा-कांडी-बाग-पराशर सड़क मार्ग)

ट्रैक रूट्स : बागी-पराशर 5 कि.मी., ज्वालापुर-पराशर 7 कि.मी., शिवाबदार (पंडोह के समीप)- थट्टा- पराशर 7 कि.मी., पराशर-तुंगामाता 6 कि.मी., हणोगी-बांधी-पराशर 15 कि.मी.।

कहां ठहरे : लोक निर्माण विभाग व वन विभाग के विश्राम गृह तथा मंदिर सराय।

रिवालसर : तीन धर्मों हिंदू, सिक्ख व बौद्ध की आस्था का केंद्र रिवालसर प्राकृतिक झील व इसमें स्थित मछलियों के लिए


पराशर झील

विख्यात है। लोमश ऋषि ने भगवान शिव की अराधना यहीं पर की थी। झील किनारे ऋषि के मंदिर के अतिरिक्त यहां भगवान शिव व कृष्ण के मंदिर भी स्थित हैं। यहां झील के पूर्व की ओर स्थित गुरुद्वारा का संबंध सिक्खों के दसवें गुरु, गुरु गोबिंद सिंह से जोड़ा जाता है जो मुगलों के खिलाफ पहाड़ी रियासतों को एकजुट करने के दौरान यहां पहुंचे थे।

बौद्ध धर्म गुरु पदमसंभव का यहां से जुड़ाव रहा है और उनकी विशालकाय प्रतिमा झील के पश्चिम की ओर स्थापित है। तीन बौद्ध गोम्पा भी यहां स्थित हैं। बैसाखी पर्व पर सभी धर्मों के श्रद्धालु झील में पवित्र स्नान करते हैं। बच्चों के लिए आकर्षण का केंद्र एक छोटा चिड़ियाघर भी है। समुद्रतल से 1,750 मीटर की ऊंचाई पर स्थित कुंतभ्यो झील तथा इसके छह अन्य सरोवर व उससे थोड़ा ऊपर स्थित नैणा माता मंदिर भी दर्शनीय हैं।

कैसे पहुंचे : मंडी जिला मुख्यालय से 25 कि.मी. दूर। बस व टैक्सी सेवा उपलब्ध।

ट्रैक : रिवालसर-डोह-नैणा देवी 6 कि.मी.।

कहां ठहरे : पर्यटन विभाग का होटल, लोक निर्माण व वन विभाग के विश्राम गृह, मंदिर सरायं व छोटे निजी होटल।

शिकारी देवी

एक ऐसा मंदिर जिसकी छत नहीं टिकती और नीले आसमान के नीचे स्थित देवी के स्थल पर एक दायरे में कई फीट बर्फबारी के बावजूद बर्फ नहीं टिक पाती। यही शिकारी देवी की विशेषता है। समुद्रतल से लगभग 3,359 मीटर की ऊंचाई पर स्थित शिकारी देवी को मंडी का ताज भी कहा जाता है। दूर-दूर तक फैली चरागाहें, आकर्षित करते सूर्योदय व सूर्यास्त के नजारे, चारों ओर हिमाच्छादित चोटियों के विहंगम दृश्य, घने जंगल के बीच पगडंडियों का सफर इसे प्रकृति प्रेमियों का पसंदीदा स्थल बना देते हैं। शिकारी चोटी पर माता शिकारी का बिना छत का मंदिर पांडवों द्वारा निर्मित माना जाता है और ऐसा भी कहा जाता है कि यहां पर ऋषि मार्कंडेय ने वर्षों तक तपस्या की थी।

कैसे पहुंचे : मंडी जिला मुख्यालय से लगभग 120 कि.मी. दूर। करसोग से 50 किलोमीटर की दूरी पर।

सुंदरनगर से 101 कि.मी. दूर (सुंदरनगर-डडौर-जंजैहली-शिकारी) जंजैहली तक बस सेवा व वहां से टैक्सी उपलब्ध। करसोग से होकर भी यहां जाया जा सकता है। वर्षा ऋतु में यह मार्ग बंद हो जाता है।

ट्रैक रूट्स : शिकारी-रायगढ़-शंकर देहरा 15 कि.मी., शिकारी-बखरोट-चिंडी 15 कि.मी., शिकारी-कमरूनाग 16 कि.मी।

कहां ठहरे : जंजैहली में लोक निर्माण विभाग का विश्राम गृह, पर्यटन हट व निजी होटल, शिकारी देवी में सराय।

जंजैहली घाटी

समुद्रतल से 2,150 मीटर की ऊंचाई पर स्थित जंजैहली घाटी अपनी अनुपम छटा, ढलानदार खेतों, हरी-भरी वादियों व सेब बागानों के लिए विख्यात है। नदी-नालों का स्वच्छ व निर्मल जल व छोटे झरने यहां की सुंदरता और भी बढ़ा देते हैं। तोष व देवदार के घने ऊंचे पेड़ों के बीच पैदल चलने का आनंद ही कुछ और है। जंजैहली घुमक्कड़ों की पहली पसंद है। सर्दियों में भारी बर्फबारी यहां होती है। कला प्रेमियों के लिए भी यहां लकड़ी व धातु की पारंपरिक नक्काशी सहित काफी कुछ रूचि अनुसार उपलब्ध है।

कैसे पहुंचे : मंडी से लगभग 100 किलो मीटर व सुंदरनगर से 85 कि.मी. दूर (सुंदरनगर-डडौर-चौलचौक-जंजैहली)। बस व

टैक्सी सेवा उपलब्ध।

ट्रैक रूट्स : जंजैहली-शिकारी देवी वाया बुढ़ा केदार 10 कि.मी., जंजैहली- मगरू गला 8 कि.मी., जंजैहली-बुलाह-रायगढ़ 12 कि.मी., जंजैहली-शिकारी देवी-देवीदहड़-कमरूनाग 28 कि. मी.।

कहां ठहरे : लोक निर्माण विभाग का विश्राम गृह, पर्यटन व निजी हट तथा छोटे होटल।

कमरूनाग झील

एक ऐसी झील जिसके अंक में लाखों की धन संपदा छिपी है और इसे बढ़ाने में यहां पहुंचने वाले श्रद्धालु हमेशा तत्पर रहते हैं। महाभारत काल के पांडवों द्वारा पूजित यक्ष यहां देव कमरूनाग के रूप में अवस्थित हैं और झील के किनारे पेंट रूफ शैली में निर्मित उनका मंदिर देवदार के घने पेड़ों से घिरा हुआ है। मान्यता है कि मन्नत पूरी होने पर श्रद्धालुओं द्वारा सोने-चांदी के आभूषण व सिक्के झील में चढ़ाए जाते हैं।

समुद्रतल से 3,334 मीटर की ऊंचाई पर स्थित कमरूनाग की यात्रा प्रकृति प्रेमियों को स्वार्गिक आनंद की अनुभूति देती है। बरसात पूर्व बौछारों के बीच जून के मध्य में यहां सरानाहुली मेले के दौरान हजारों की संख्या में श्रद्धालु पहुंचते हैं।

कैसे पहुंचे : जिला मुख्यालय से लगभग 55 कि.मी., सुंदरनगर से 35 कि.मी. दूर (सुंदरनगर-जैदेवी-रोहांडा)

ट्रैक रूट्स : रोहांडा से कमरूनाग 6 कि.मी., कमरूनाग-शिकारी देवी 16 कि.मी.।

कहां ठहरे : रोहांडा में विश्राम गृह व कमरूनाग में सरायं की व्यवस्था।

करसोग

करसोग घाटी अपने लहलहाते ढलानदार खेतों, घने जंगलों व सुरम्य वादियों के लिए प्रसिद्ध है और सालभर सुहावना मौसम इसे सभी ऋतुओं में एक बेहतरीन पर्यटन स्थल बना देता है। समुद्रतल से लगभग 2,100 मीटर की ऊंचाई पर स्थित करसोग सुंदर नजारों के साथ ही धार्मिक स्थलों के लिए भी विख्यात है। ममेल में प्राचीन ममलेश्वर महादेव मंदिर उत्कृष्ट नक्काशी, प्राचीन वस्तुओं व मूर्तियों तथा निरंतर जलते रहने वाले अलाव के लिए जाना जाता है। कमल पर स्थित गौरी-शंकर की मूर्ति विशेष दर्शनीय है।

मंदिर परिसर में स्थित दो पैगोड़ा शैली के मंदिर लकड़ी की नक्काशी का बेहतरीन नमूना पेश करते हैं। भुंडा यज्ञ जिसे नर बलि से जोड़ा जाता है, में प्रयुक्त होने वाली लगभग चार ईंच मोटी प्राचीन रस्सी यहां अभी भी देखी जा सकती है। लगभग 250 ग्राम वजनी गेहूं का दाना और भेखल झाड़ी का बना ढोल भी मंदिर में स्थित हैं। करसोग से लगभग 8 कि.मी. दूर काओ गांव में कामाक्षा देवी का मंदिर भी दर्शनीय है। समीप ही माहुनाग व चिंडी भी सैर के लिए बेहतरीन स्थल हैं।

कैसे पहुंचे : मंडी से करसोग 120 कि.मी., शिमला से करसोग 106 कि.मी., सुंदरनगर (धनोटू) से करसोग 100 कि.मी। बस व टैक्सी सेवा उपलब्ध।

ट्रैक रूट्स : सनारली-रायगढ़-शिकारी देवी 18 कि.मी., महावन-धमून चोटी 6 कि.मी., स्यांज बगड़ा-धमून चोटी 6 कि.मी.।

कहां ठहरे : विश्राम गृह व होटल उपलब्ध।

टारना मंदिर : मंडी

चिंडी

करसोग घाटी के एकदम ऊपर स्थित चिंडी की समुद्रतल से ऊंचाई 1,825 मीटर है। यहां से करसोग घाटी व बर्फ से ढकी अन्य चोटियों को निहारना अच्छा अनुभव है। सेब बागान, देवदार व तोष के घने जंगलों के बीच से पगडंडियों पर चलने का भी आनंद लिया जा सकता है। पहाड़ी शैली में निर्मित माता चंडिका का मंदिर लकड़ी की नक्काशी का उत्कृष्ट नमूना है। लगभग 13 कि.मी. दूर पांगणा में महामाया भुवनेश्वरी मंदिर तथा लगभग 1,850 मीटर की ऊंचाई पर बाखरी स्थित मूल माहूंनाग मंदिर भी दर्शनीय हैं। लगभग पांच सौ वर्ष पुराने इस मंदिर का नाता महाभारत के कर्ण से जोड़ा जाता है।

कैसे पहुंचे : मंडी से चिंडी 90 कि.मी., शिमला से चिंडी 85 कि.मी., करसोग-शिमला सड़क मार्ग पर 11 कि.मी. दूर।

ट्रैक रूट्स : चिंडी-बखरोट-शिकारी देवी 18 कि.मी.।

कहां ठहरे : लोक निर्माण विभाग का विश्राम गृह।

जिला लोक सम्पर्क अधिकारी, मण्डी

हिमाचल की शान

हिमाचल में ऐसे अनेक स्थल हैं जिनका ऐतिहासिक एवं पौराणिक पृष्ठभूमि है। पौराणिक काल से लेकर 21वीं शताब्दी तक इनकी अपनी शान व पहचान है। ये सदैव यायावरों, पर्यटकों तथा शोधकर्ताओं के लिए आकर्षण का केंद्र रहे हैं। पाठकों के लिए हम कुछ ऐसे तथ्य प्रस्तुत कर रहे हैं, जिनका अपनी अलग पहचान व शान है।

बिना छत का मंदिर

शिकारी देवी मंडी से 110 किलोमीटर दूर घाटी से गुजरकर मां शिकारी देवी का मंदिर है, जिस पर छत नहीं है। मां खुले आसमान तले रहना पसंद करती है। सराज घाटी में स्थित इस मंदिर के दर्शन करने लाखों की संख्या में यात्री आते हैं। करसोग घाटी से भी यहां पहुंचा जा सकता है। सर्द ऋतु में बर्फबारी के दौरान मंदिर दो-तीन माह बंद रहता है।



खजाने वाली झील

शिकारी देवी के समीप ही देव कमरू नाग का मंदिर है। इस मंदिर के सामने झील है। लोगों की मान्यता है कि इस झील में देव कमरू नाग का करोड़ों का खजाना हीरे-जवाहरात/सोना-चांदी रूप में है। नौ हजार फुट की ऊंचाई पर स्थित इस झील में श्रद्धालु अपनी मन्नत मांगने या पूरी होने पर सिक्के या सोना चांदी चढ़ाते हैं।



आषाढ़ माह में यहां सारानाहुली मेला लगता है। घने देवदार के जंगल में स्थित देवस्थल हाल ही के वर्षों में पर्यटकों का भी आकर्षण का केंद्र बना है।

तैरते भूखंड

मंडी से 40 किलोमीटर की दूरी पर स्थित रिवालसर हिंदू, बौद्ध तथा सिखों की साझा संस्कृति का प्रतीक स्थल है। कस्बे के मध्य में पवित्र झील में भूखंड तैरते नज़र आते हैं। बैसाखी के अवसर पर यहां मेले का आयोजन होता है। बौद्ध अनुयायी को यह पवित्र स्थली है। लोसर पर्व यहां धूमधाम से मनाया जाता है। विदेशी पर्यटकों के मध्य यह स्थल अधिक लोकप्रिय है। इसी तरह पराशर मंदिर की अपनी अनूठी स्थापत्य कला व यहां स्थित पवित्र झील के लिए देशभर में मशहूर है।



250 ग्राम का गेहूं का दाना

पांडवों के वक्त में बने इस मंदिर में लाखों वर्षो से धूना जल रहा है। मंदिर का इतिहास परशुराम से भी जुड़ा है। मंदिर प्रांगण में अनेक प्राचीन मूर्तियां अवस्थित हैं। मंदिर के भंडार गृह में रखा 250 ग्राम का गेहूं का दाना आकर्षण का केंद्र है। इसे मंदिर के साथ अन्नपूर्णा मंदिर के समीप खोजा गया है। यहां बेखल झाड़ी से बना ढोल भी प्राचीन समृद्धता को दर्शाता है। इसे भीम के ढोल के नाम से जाना जाता है। ऐसा ही ढोल ममेल मंदिर वे तीन किलोमीटर की दूरी पर स्थित कामाक्षा मंदिर से भी है।



कोल बांध जलाशय

मंडी जनपद में प्रसिद्ध धार्मिक स्थल तत्तापानी में गर्म पानी के चश्में आकर्षण का केंद्र रहे हैं। कोल बांध के निर्माण से बने जलाशय के कारण यहां के चश्में जलाशय में डूब गए हैं लेकिन सरकार इनको अन्यत्र विकसित कर दिया है ताकि इस स्थल की



धार्मिक आस्था यथावत बनी रहे। 800 मेगावाट कोल बांध परियोजना के निर्माण से यहां मानव निर्मित झील बनी है जो कि पर्यटकों के लिए आकर्षण का केंद्र है। इस झील में नौकायन व रीवर राफ्टिंग का लुत्फ पर्यटक उठा रहे हैं। कोल बांध परियोजना जलाशय में साहसिक खेल गतिविधियों को बढ़ावा दिया जाएगा जिसके तहत जलाशय में नोकायन व इसके समीप स्थलों पर पर्वतारोहण एवं ट्रेकिंग जैसे कार्यक्रम आयोजित होंगे। साहसिक खेल गतिविधियों से स्थानीय युवाओं को रोजगार के अवसर भी मुहैया होंगे।

रोरिक आर्ट गैलरी

यह स्थान कुल्लू के ऐतिहासिक क्षेत्र नग्गर से 3 कि.मी. ऊपर है, जो आज एक विकसित पर्यटन स्थल तो है ही, कला साधकों के लिए मंदिर से कम नहीं। कुल्लू को विश्व मानचित्र पर पहचान दिलाने का श्रेय रूसी चित्रकार एवं साहित्यकारों निकोलस रोरिक कोभी जाता है। उन्होंने अपनी तूलिका से पहाड़ों को एक नया रूप दिया और हिमालयी सभ्यता को ऐसे उकेरा कि वह दुनिया भर में लोकप्रिय हो गई। नग्गर स्थित यह हॉल एस्टेट, जिसमें रोरिक रहा करते थे, आज आर्ट गैलरी में तब्दील हो गया है। यहां उनकी हजारों पेंटिंग्स को बखूबी सहेज कर रखा गया है। यहां एक संग्रहालय और ओपन थिएटर भी है। ऐसा ही एक मंदिर कांगड़ा के अंद्रेटा में है। यह स्थल महान चित्रकार सोभा सिंह व शिल्पकार नोरा रिचर्ड की कर्मस्थली रहा है। यहां सोभा सिंह की कृतियों का संग्रहालय भी मौजूद है।

प्राचीन लोकतंत्र

कुल्लू में मणिकर्ण घाटी के 'मलाणा' गांव को विश्व का सबसे पुराना लोकतंत्र है। माना जाता है कि इसका संचालन यहां के



देवता 'जमलू' करते हैं। इस गांव में सदियों से ग्राम स्वराज प्रणाली चल रही है। इसके लिए परिषद का गठन किया जाता है, जिसमें 11 सदस्य होते हैं। चार वार्डों से सदस्यों का चुनाव होता है। प्रशाएसनिक कार्रवाई के लिए दो सदन बनाए गए हैं। गांववासियों के विवाद को इन्हीं सदनों में निपटाया जाता है। फिर भी समस्या हो तो देवता जमलू की अदालत में निर्णय होता है, जो सर्वमानरू होता है। आज भी यह परंपरा है।

हिडिंबा मंदिर

मां हिडिंबा का मंदिर पर्यटन नगरी मनाली से लगभग तीन किलोमीटर दूर पुरानी मनाली में देवदारों के घने जंगल के बीच स्थित है। यह पैगोडा



शैली में बना काष्ठकला का उत्कृष्ट नमूना है। मंदिर के गर्भगृह में माता की पाषाण मूर्ति है। मान्यता है कि जब पांडव वनवास में थे, उस दौरान भीम ने हिडिंबा के राक्षस भाई को मारकर क्षेत्र को उसके आतंक से मुक्ति दिलाई थी। इसके बाद हिडिंबा ने उनसे विवाह कर लिया। कहते हैं कुल्लू राज परिवार के पहले शासक विहंगमणिपाल को माता ने ही यहां का राजकाज बख्शा था।

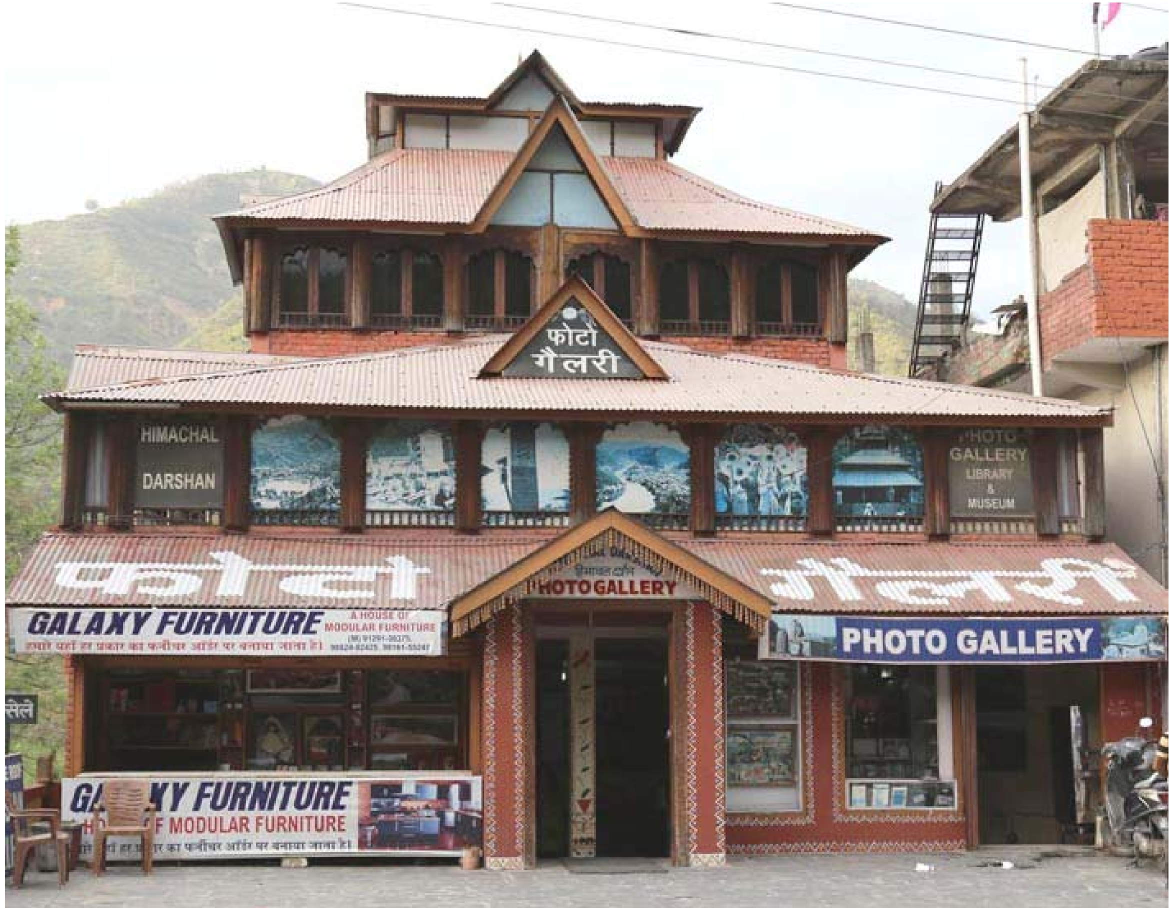
सांस्कृतिक धरोहर कुल्लू दशहरा

17वीं शताब्दी में कुल्लू के राजपरिवार द्वारा देव-मिलन से शुरू हुआ महापर्व दशहरा आज भी घाटी की देव संस्कृति कोजिंदा रखने का महत्त्वपूर्ण प्रयास है। यह पर्व जहां कुल्लू के लोगों के भाईचारे का मिलाप है, वहीं घाटी में कृषि व बागबानी कार्य समाप्त होने के बाद ग्रामीणों की खरीदारी का भी प्रमुख पर्व है। यह



दशहरा केवल कुल्लू व हिमाचल का मेला नहीं, बल्कि प्राचीन संस्कृति और विविधता में एकता का अध्ययन एवं शोध करने वालों के लिए बड़ा अवसर है। इसमें न रामलीला होती है, न रावण-कुंभकर्ण- मेघनाद के पुतले जलाए जाते हैं। इसकी अलग सांस्कृजिक पहचान है। वर्ष 2015 में दशहरे के दौरान पारंपरिक परिधानों में सजी लगभग 13 हजार महिलाओं ने कुल्लवी नाटी प्रस्तुत की थी, जिसे 'गिन्नीज बुक ऑफ वर्ल्ड रिकॉर्ड्स' में शामिल किया गया था।

संकलन : विवेक शर्मा



आलेख

एक छत के नीचे हिमाचल दर्शन

◆ मुरारी शर्मा

हिमाचल प्रदेश को समग्र रूप से देखना हो तो शिमला, कुल्लू-मनाली, खजियार और डलहौजी का सफर काफी नहीं है। इसके लिए पहाड़ की पगडंडियों, घाटियों, कंदराओं तक पहुंचने के लिए मीलों पैदल सफर करना होगा। यह केवल एक यात्रा से भी संभव नहीं है। बल्कि एक उम्र भी कम है। घबराइए नहीं आप एक ही छत के नीचे संपूर्ण हिमाचल के दर्शन कर अपनी यात्रा को यादगार बना सकते हैं। मंडी-मनाली हाईवे पर मंडी से मात्र चार किलो मीटर की दूरी पर हिमाचल दर्शन फोटो गैलरी में हिमाचल की भौगोलिक विविधता, जनजीवन, लैंड स्केप, झीलें, किलों, मेले-त्योहार, लोकनृत्यों, लोक नाट्यों, ग्रामीण जीवन, वेशभूषा आदि से साक्षात्कार कर सकते हैं। वैसे भी किसी रचनाकार के लिए पहाड़ प्रेरणा के स्रोत रहे हैं। पहाड़ का सौंदर्य हर मौसम में आकर्षित करता है। यायावरों को आकर्षित करते पहाड़ों का जीवन सदैव कठिन रहा है। हिमाचल के मशहूर छायाकार बीरबल शर्मा ने कैमरे की आंख से हिमाचल की वादियों, परंपराओं, जनजीवन, सौंदर्य और लोक परंपराओं को सहेजने का अनूठा प्रयास किया है। पिछले तीस सालों से लगातार वे हिमाचल के बीहड़ों की यात्राएं करके दुर्लभ छायाचित्रों का संग्रहण कर

हिमाचल दर्शन फोटो गैलरी के माध्यम से प्रदर्शित कर रहे हैं। बीरबल शर्मा ने हिमाचल के हर जिले के दर्शनीय एवं दूरदराज के क्षेत्रों को अपने कदमों से नापा हैं।

उनके कदम चंबा से लेकर सिरमौर, लाहुल-स्पीति, किन्नौर, सोलन, कांगड़ा, बिलासपुर, हमीरपुर, ऊना, मंडी, कुल्लू के जनजातीय इलाकों तक पहुंचे हैं।

हिमाचल दर्शन फोटो गैलरी

छायाकार बीरबल शर्मा ने हिमाचल दर्शन फोटो गैलरी की स्थापना 24 अप्रैल 1997 में की थी। सीमित संसाधनों के चलते हुए इस गैलरी में आरंभिक चरण में बीरबल शर्मा ने अपने 50 हजार छायाचित्रों के संग्रह में से 300 छायाचित्र यहां पर लगाए थे तथा इनका संक्षिप्त विवरण भी साथ में दिया गया है। इसमें पुराने छायाचित्रों का भी एक कॉलम जोड़ा गया है जो दूसरे तल पर है और यह सबसे अधिक लोकप्रिय रहा है। अब यह फोटो गैलरी देश के कुल 569 संग्रहालयों में शामिल हो चुकी है। इसका संचालन पुरातत्व चेतना संघ संस्था की ओर से किया जाता है। अब तक यहां पर देश विदेश से करीब चार लाख से भी अधिक लोग आ चुके हैं। जिनमें पर्यटकों के अलावा कई मुख्यमंत्री, राज्यपाल, कई म्यूजियमों के कुरेटर, कलाकार, साहित्यकार एवं गणमान्य लोग भी शामिल हैं।

यह फोटो गैलरी देश के कुल 569 संग्रहालयों में शामिल हो चुकी है। इसका संचालन पुरातत्व चेतना संघ संस्था की ओर से किया जाता है। अब तक यहां पर देश विदेश से करीब चार लाख से भी अधिक लोग आ चुके हैं। जिनमें पर्यटकों के अलावा कई मुख्यमंत्री, राज्यपाल, कई म्यूजियमों के कुरेटर, कलाकार, साहित्यकार एवं गणमान्य लोग भी शामिल हैं।

हजारों किलोमीटर के सफर का परिणाम

हिमाचल दर्शन फोटो गैलरी के संस्थापक बीरबल शर्मा का कहना है कि 55673 वर्ग किलोमीटर के दायरे में फैले कठिन भौगोलिक परिस्थितियों वाले प्रदेश का पैदल सफर जोखिम पूर्ण है। बीरबल शर्मा जो पिछले 35 सालों से प्रदेश के कोने कोने का भ्रमण कर रहे हैं, प्रदेश के हर क्षेत्र में जाकर वहां की संस्कृति, ऐतिहासिक मंदिरों, किलों, मेलों, त्योहारों, रीति रिवाजों, कठिन एवं उल्लासमय जनजीवन, बेपनाह कुदरती सौंदर्य, भौगोलिक दृश्यावलियों,झीलों, नदियों, बर्फ से लदी पर्वतमालाओं, विकास व अनूठेपन को अपने कैमरे में कैद करके समूचे हिमाचल प्रदेश को एक छत के नीचे दिखाने का काम करते आ रहे हैं। 1988 में इनकी सबसे पहली छायाचित्र प्रदर्शनी गांधी भवन मंडी में , मंडी जिला की सांस्कृतिक गरिमा, के नाम से लगाई गई जिसे लोगों ने बेहद सराहा और फिर समूचे हिमाचल को छायाचित्रों के माध्यम से एक छत के नीचे लाने की मुहिम शुरू हुई। इसके बाद मंडी, हमीरपुर, नाहन, समेत पूरे प्रदेश में जगह जगह प्रदर्शनियां लगाई जाती रही। कई साल तक प्रदेश में जगह जगह छायाचित्र प्रदर्शनियां लगाते रहे हैं, ताकि एक ही स्थान पर हर समय एक छत के नीचे हिमाचल दर्शन उपलब्ध होता रहे, कुछ ही घंटों में पूरे हिमाचल को देश विदेश व प्रदेश के लोग देख सकें। 1996 में गांधी भवन में हिमाचल दर्शन के नाम से एक बड़ी प्रदर्शनी लगाई गई जो सात दिन के लिए थी मगर दर्शकों के आग्रह पर इसे 15 दिन तक चलाना पड़ा और उस समय इसे 70 हजार दर्शकों ने देखा। उसी समय यह निर्णय लिया गया कि यदि समूचे हिमाचल को देश और दुनिया के लोगों को एक छत के नीचे स्थाई रूप से व्यवस्था करके दिखाया जाए तो इससे प्रदेश के पर्यटन को बहुत लाभ होगा और साथ में अनछुआ हिमाचल भी लोग देख सकेंगे। इसी मंशा से बिंदरावणी में 24 अप्रैल 1997 को इस फोटो गैलरी की स्थापना की थी।

गैलरी की दर्शक टिप्पणी पुस्तिकाओं में दर्ज दर्शकों की टिप्पणियां इस बात का साक्षात प्रमाण है कि उतरी भारत में अपनी तरह की यह पहली गैलरी हिमाचल प्रदेश के बारे में वह सब कुछ बताने में सफल रही है जो अभी तक देश विदेश के लोगों को मालूम नहीं था। अनछुए सौंदर्य व ऐतिहासिक स्थलों के बारे में लोगों को यहां आकर जानकारी मिली तो यह मिथक भी टूट गया कि हिमाचल प्रदेश शिमला, मनाली या डलहौजी में ही नहीं बल्कि कहीं और भी बसता है। गैलरी के सबसे उपरी भाग में एक पुस्तकालय व मध्य में एक म्युजिम भी बीच में जोड़ा गया है । एक बहुउदेशीय हाल भी गैलरी में बनाया गया है जहां पर पुरातत्व व लोक संस्कृति पर चर्चा के लिए गोष्ठियां की जा सकती हैं, जहां पर साहित्यकार, कलाकार या शोधकर्ता आकर अध्ययन व शोध कार्य कर सकते हैं और यहां ठहर भी सकते हैं। हिमाचल दर्शन फोटो गैलरी इंटरनेट पर भी आ चुकी है और इसकी वेबसाइट भी शुरू हो चुकी है।

डब्लयूडब्ल्यूडब्ल्यू हिमाचल दर्शन फोटो गैलरी डॉट इन के नाम से यह गैलरी अब पूरी दुनिया में उपलब्ध है। बीरबल शर्मा का कहना ह कि इस गैलरी के निर्माण से लेकर इसे आगे बढ़ाने के लिए हजारों सहयोगी मित्र शामिल रहे हैं, क्योंकि इस तरह का कोई भी काम अकेले नहीं हो सकता है, हमें इन सब का धन्यवाद करना है। क्योंकि वर्तमान में इस तरह के संस्थानों जो बिना किसी सरकारी मदद या आमदन से चल रहे हैं, का प्रचार प्रसार कर पाना आसान नहीं है। उनका कहना है कि अब यह गैलरी फोरलेन में आ चुकी है। जिसे अब सरकार शिमला में स्थापित करने में मदद करे तो पर्यटकों और शोधार्थियों के लिए आकर्षण का केंद्र बनेगी।

133/7 मोती बाजार मंडी-175 001

आलेख

मनाली–रोहतांग से आगे जहां और भी है...

◆ अनिल गुलेरिया

कुल्लू जिला अपने अद्भुत प्राकृतिक सौंदर्य और शांत वादियों के लिए विश्व भर में प्रसिद्ध है और यहां हर साल देश-विदेश से लाखों की संख्या में पर्यटक आते हैं। पर्यटन नगरी मनाली और इसके आस-पास वशिष्ठ, सोलंगनाला, गुलाबा, मढ़ी, रोहतांग और नग्गर जैसे सुंदर स्थल सैलानियों की पसंदीदा सैरगाहों में शुमार हो चुके हैं। पार्वती घाटी में मणिकर्ण और कसोल जैसे पर्यटक स्थल भी अपनी अलग पहचान बना चुके हैं। यही कारण है कि कुल्लू जिले में आने वाले सभी पर्यटकों की प्राथमिकता इन सुंदर स्थानों पर जाने की रहती है और इन स्थलों पर देसी-विदेशी पर्यटकों की भीड़ लगी रहती है। बड़ी संख्या में सैलानियों की आवाजाही से इन स्थलों का पर्यावरण प्रभावित हो रहा है तथा यहां पर्यटन उद्योग के विस्तार की संभावनाएं सीमित होती जा रही हैं। आम जनजीवन की भाग-दौड़ और शहरों के शोर से दूर शांत वादियों में सुकून भरे पल बिताने के इच्छुक पर्यटक अब चुनिंदा मशहूर पर्यटक स्थलों के बजाय कुल्लू जिला के अन्य खूबसूरत, शांत व अनछुए स्थलों को तरजीह देने लगे हैं।

कुदरत के कई खूबसूरत रंगों से रंगे कुल्लू जिला में ऐसी खूबसूरत, शांत और सुकून भरी वादियों की कमी नहीं है। जिला की छोटी-छोटी घाटियों, ऊंची-ऊंची पहाड़ियों और हरी-भरी वादियों में पर्यटन की अपार संभावनाएं मौजूद हैं। यहां का हर गांव अपने आप में पर्यटकों के लिए कौतूहल का विषय है। इसलिए यह कहने में कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी कि मनाली-रोहतांग ही क्यों, कुल्लू जिला में तो 'इनसे आगे जहां और भी हैं।' हाल ही के वर्षों में कुल्लू जिला में मनाली-रोहतांग, नग्गर और मणिकर्ण के अलावा हामटा, जाणा, बिजली महादेव, खीरगंगा, तीर्थन घाटी, ग्रेट हिमालयन नेशनल पार्क, जलोड़ी दर्रा, सरयोलसर झील और कई अन्य अनछुए स्थलों ने भी पर्यटन मानचित्र पर अपनी उपस्थिति दर्ज की है।

मनाली के निकटवर्ती गांव प्रीणी के ठीक ऊपर हामटा की सुंदर पहाड़ियां हमेशा ही सैलानियों को आमंत्रण देती प्रतीत होती

ब्यास का उद्‌गम स्थल : रोहतांग

कुल्लू घाटी में अनेक दर्रे हैं लेकिन आज भी पर्यटकों व ट्रैकिंग अभियान दलों के लिए 13,400 फुट की ऊंचाई पर स्थित रोहतांग दर्रा सबसे लोकप्रिय दर्रा है। यह देश तथा विदेश के पर्यटकों के लिए आकर्षण का मुख्य केन्द्र है। अंग्रेज ों के जमाने से यह ट्रैकिंग करने के लिए सबसे उपयुक्त स्थल था। इसमें सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह थी कि इसके रास्ते में अनेक विश्राम गृह थे। रोहतांग का मार्ग, व्यापार का भी मुख्य रास्ता था यहां से अमृतसर, होशियारपुर तथा अन्य मैदानी इलाकों के शहरों से होते हुए व्यापारिक काफिले लाहौल, लद्दाख तथा मध्य एशिया के देशों को गुज रते थे। इस रास्ते पर खच्चरें, घोड़ों के काफिले गुज रते थे। लद्दाख की सीमा तक इस खच्चर मार्ग का रखरखाव लोक निर्माण विभाग करता था। यह रास्ता हालांकि सदियों पुराना था लेकिन इस सड़क को वर्ष 1870-71 में कुल्लू के तत्कालीन जिला इंजीनियर श्री टयोडोर (Tyeodore) ने बनवाया था।

ट्रैकिंग अभियान मनाली से आरम्भ होकर कोठी विश्राम गृह पहुंचते थे जो सात मील का सफर था। इसके अतिरिक्त कोठी से दो मील की दूरी पर राहला में एक और विश्राम गृह है। ब्यास नदी का उद्‌गम स्थल रोहतांग दर्रे से है। एक छोर से झरने से आरम्भ होने वाली यह नदी पर्वतों से नीचे उतरते ही एक बड़ी नदी का रूप इख्तियार कर लेती है। राहला पहुंचते ही यह नदी का आकार ले लेती है।

रोहतांग दर्रे में पर्यावरण को बनाए रखने के लिए अनेक प्रयास किए जा रहे हैं। रोहतांग सुरंग के बन जाने से यह रास्ता एक इतिहास बन जाएगा लेकिन सदियों से ही इस पर लाखों श्रद्धालुओं, साहसिक प्रेमियों तथा यायावरों के कदम पड़ते रहे हैं। उनके कदमों की आहट अब शायद सुनाई नहीं देगी लेकिन जो रास्ते यात्रियों, घोड़ों, खच्चरों से गुलज ार हुए थे, वे इतिहास का हिस्सा बन जाएंगे।


कुल्लू सराहन : आउटर सिराज

हैं। कुछ वर्ष पूर्व ही सड़क से जुड़ने के बाद हामटा में पर्यटन उद्योग की संभावनाएं काफी बलवती हुई हैं। एलाइन-दुहांगन जलविद्युत परियोजना क्षेत्र होने के कारण हामटा में पर्यटकों की आवाजाही बंद थी लेकिन अब प्रदेश सरकार ने इस क्षेत्र को पर्यटकों के लिए खोल दिया है। आने वाले वर्षों में हामटा एक बड़े पर्यटक स्थल के रूप में तेजी से विकसित होगा।

नग्गर के निकट जाणा फॉल में भी पर्यटकों की चहलकदमी लगातार बढ़ती जा रही है। जाणा से आगे सड़क मार्ग से ही बिजली महादेव तक भी पहुंचा जा सकता है। बिजली महादेव से समूची कुल्लू घाटी का नजारा देखते ही बनता है।

पार्वती घाटी की चर्चा करें तो यहां मणिकर्ण-कसोल के अलावा ट्रैकरों के लिए कई बेहद खूबसूरत ट्रैक रूट हैं। इनमें से खीरगंगा का ट्रैक रूट काफी मशहूर हो चुका है। यहां आम ट्रैकर भी बड़ी आसानी से पहुंच सकता है।

सैंज घाटी में शांघड़, देहुरी व अन्य दूरदराज क्षेत्रों में सड़कों के निर्माण से वहां पर्यटन की संभावनाओं को बल मिला है। सड़कों से न जुड़े होने के कारण सैंज घाटी के ये खूबसूरत गांव बाहरी दुनिया की पहुंच से दूर थे लेकिन अब सड़क निर्माण के बाद इन अनछुए क्षेत्रों में भी आसानी से पहुंचा जा सकता है। अब वह दिन दूर नहीं हैं जब जलविद्युत परियोजनाओं वाली सैंज घाटी में भी बड़ी संख्या में देसी-विदेशी पर्यटकों की चहलकदमी देखने को मिलेगी। घाटी के युवा पर्यटन विभाग की होम स्टे योजना और कैंपिंग व ट्रैकिंग को स्वरोजगार के रूप में अपना सकते हैं।

सैंज घाटी से आगे अगर हम तीर्थन घाटी, ग्रेट हिमालयन नेशनल पार्क, बंजार और जलोड़ी दर्रे का रुख करें तो यहां के कई इलाके पहले ही देश-विदेश के पर्यटकों व प्रकृति के प्रेमियों के आकर्षण का केंद्र बन चुके हैं। विशेषकर तीर्थन घाटी और ग्रेट हिमालयन नेशनल पार्क के आस-पास काफी संख्या में होम स्टे योजना के तहत गेस्ट हाउस चल रहे हैं। गर्मियों में ये गेस्ट हाउस पर्यटकों से पैक रहते हैं। तीर्थन घाटी के पर्यावरण के संरक्षण और यहां की वादियों को प्रदूषण मुक्त बनाए रखने के लिए प्रदेश सरकार ने तीर्थन नदी व इसके सहायक नालों पर जलविद्युत परियोजनाओं के निर्माण पर पूर्णतयः पाबंदी लगा रखी है। ट्राउट मछली की उपलब्धता के कारण तीर्थन नदी में मत्स्य आखेट की भी अच्छी संभावनाएं है। साथ लगते ग्रेट हिमालयन नेशनल पार्क को यूनेस्को की विश्व धरोहर का दर्जा मिलने के बाद तीर्थन घाटी व बंजार को एक वैश्विक पहचान मिली है और अब यहां के शुद्ध व शांत वातावरण की ओर देश-विदेश के पर्यटक खिंचे चले आएंगे।

बंजार से जलोड़ी दर्रे की ओर आगे बढ़ने पर जिभी, घियागी, सौझा और कई अन्य ऐसे छोटे-छोटे सुंदर स्थल हैं जोकि गर्मियों में सैलानियों से गुलजार रहते हैं। यहां वन विभाग के विश्राम गृहों के अलावा छोटे-छोटे होम स्टे गैस्ट हाउसों में पर्यटकों के ठहरने की अच्छी व्यवस्था है। बंजार कस्बे के ठीक ऊपर हरी-भरी वादियों में शृंगा ऋषि का भव्य मंदिर, ऐतिहासिक चैहणी कोठी और सकीर्ण जोत की पहाड़ियों का नजारा भी देखते ही बनता है। बंजार से जिभी, घियागी और सौझा होते हुए लगभग 3120 मीटर ऊंचे जलोड़ी दर्रे पर पहुंचने पर चारों ओर के भव्य नजारे सैलानियों को

बहुत ही अद्‌भुत व अविस्मरणीय अनुभव प्रदान करते हैं।

जलोड़ी दर्रे के एक छोर पर रघुपुर की पहाड़ियां हैं जो सर्दियों में बर्फ से ढकी रहती हैं और गर्मियों में अपने हरित आवरण से सभी का मन मोह लेती हैं। लगभग एक घंटे की ट्रैकिंग के बाद रघुपुर की चोटियों पर पहुंचा जा सकता है। गर्मियों व बरसात में इन पर बिछी हरी चादर पर पर्यटक खूब मस्ती करते नजर आते हैं। जलोड़ी के दूसरे छोर पर भी कई सुंदर स्थल हैं। इनमें से प्रमुख है सरयोलसर झील। दर्रे से करीब एक घंटे की पैदल यात्रा के बाद सरयोलसर झील तक पहुंचने का अलग ही आनंद है। पहाड़ियों व पेड़ों से घिरी सरयोलसर झील का स्वच्छ जल और यहां की शांत वादियां यहां आने वाले लोगों को प्रकृति से सीधे साक्षात्कार का अहसास करवाती हैं।

जलोड़ी से नीचे आउटर सिराज यानि आनी की तरफ खनाग, टकरासी और पनेउ आदि गांवों को भी कुदरत ने अपने खूबसूरत रंगों से नवाजा है। यहां आज भी अंग्रेजों के जमाने के विश्राम गृह मौजूद हैं, जिनका संचालन अब वन विभाग कर रहा है। आउटर सिराज में आनी और निरमंड विकास खंडों में चवाई, दलाश, नित्थर, बागीपुल, बागा सराहन और कई अन्य ऐसे अनछुए स्थल हैं जिन्हें पर्यटन की दृष्टि से विकसित किया जा सकता है।

इस प्रकार कुल्लू जिला में अगर हम पर्यटन उद्योग के विस्तार की चर्चा करें तो यहां के विश्व प्रसिद्ध पर्यटक स्थलों के अलावा भी कई ऐसे स्थान हैं जहां पर्यटन की अपार संभावनाएं मौजूद हैं।

मनाली भारत का तीसरा सबसे दर्शनीय पर्यटक स्थल

मनु की नगरी मनाली स्वदेशी व विदेशी पर्यटकों के लिए पसंदीदा स्थल है। मनाली की वादियों में पर्यटक बार-बार आना पसंद करता है। ब्यास का शीतल जल, उत्तुंग पहाड़ियां, बर्फ से ढके पहाड़ों का आकर्षण देखते ही बनता है। मनाली के आकर्षण की सत्यता का बखान हाल ही में गूगल इंडिया रिपोर्ट में हुआ है। भारत में मनाली तीसरा सबसे दर्शनीय पर्यटक स्थल है। पहले तथा दूसरे स्थान पर क्रमशः गोवा और अंडमान व निकोबार और मनाली तीसरे स्थान पर है। इन स्थलों के बारे में जानने की उत्सुकता सबसे अधिक देखी गई है।

गूगल इंडिया रिपोर्ट ने मौजूदा साल में फरवरी से अप्रैल माह से लोगों द्वारा इन स्थलों की गई सर्च के आधार पर आंकड़े जारी किए हैं। रिपोर्ट में उजागर हुआ है कि महानगरों की अपेक्षा छोटे शहरों के निवासी यात्रा संबंधी जानकारी को लेकर ज्यादा सवाल करते हैं। इनकी तादाद 70 प्रतिशत है।

इस जानकारी को हासिल करने में 96 प्रतिशत लोग मोबाइल का इस्तेमाल करते हैं। ये आंकड़े प्रदेश में बढ़ते पर्यटन उद्योग की तसवीर को दर्शाते हैं।

ग्रेट हिमालयन नेशनल पार्क

ग्रेट हिमालयन नेशनल पार्क की स्थापना 1 मार्च 1981 ई. को हुई थी। यद्यपि इसका 754 वर्ग किलोमीटर क्षेत्रफल तीर्थन, सैंज, पार्वती और गड़सा घाटी में फैला हुआ है। परन्तु इसके सबसे सुन्दर और दर्शनीय स्थल रोहला, शिल्ह व ढेला तीर्थन घाटी में ही पड़ते हैं। इन स्थानों में पहुंचकर वन्य प्राणियों तथा असंख्य जड़ी-बूटियों को देखना रोमांचकारी है। ग्रेट हिमालयन नेशनल पार्क में घूमने के लिए निदेशक वन्य प्राणी एवं ग्रेट हिमालयन नेशनल पार्क के शमशी स्थित कार्यालय से अनुमति लेनी पड़ती है। वे पार्क में घूमने के लिए गाइड भी मुहैया करवाते हैं। तीर्थन घाटी के देउरी से पार्क में जाने का रास्ता है। देउरी से कलवारी तक वाहन योग्य सड़क है। कलवारी से श्रीकोट होते हुए रोहला, शिल्ह व ढेला को पैदल ही जाना पड़ता है। इस पार्क का सारा क्षेत्र समुद्री तल से 3100 मीटर से 6100 मीटर की उंचाई पर स्थित है। परन्तु आधे से ज्यादा भाग 4100 मीटर ऊंचाई क्षेत्र का है। यह पार्क वन्य प्राणियों में कस्तूरी मृग, कौर्थ या थार बकरी, घोरल, टंगरोल अर्थात् आईवैक्स, काला भालू, लाल भालू, एम्बरू अर्थात् एंटीलोप, मियांटू अर्थात् भराल, कक्क्ड़ अर्थात् हिरन, चीता, पहाड़ी तेंदुआ, गूणी अर्थात् लंगूर, शियाण अर्थात् स्नो लैपर्ड, बाघ, हिमबाघ, वनविडाल, पहाड़ी भेड़िया, वन्य सूअर, बनसोकर आदि जंगली जानवरों का घर है। पक्षियों में यहां जुजुराना और मोनाल के अतिरिक्त खुआकटा अर्थात् कोकता, करड़ी अर्थात् मादा मोनाल, कलोश अर्थात् कालिज, चमन अर्थात् चीर, जंगली मुर्गा, वनतीतर, चकोर, सफेद चकोर, घुघु अर्थात् ग्रीन पिज़न, हिम कबूतर, भुजली, शीण, बाज़, बागरपोक, ईल या इलण, पुहाल चीड़ी, आदि पक्षी निवास करते हैं। वन्य पशुओं की तरह यहां की वनस्पति, वनौषधियां और जड़ी-बूटियां अमूल्य निधि हैं। यहां के निचले क्षेत्रों में मिगुई, अतीस, कुटकी, सालमपंजा, टुम्बलमुंही, गुग्गल, बेठर, धूप, बनककड़ी, दारूहलदी, सुगन्धवाला, घुघती फूल, पिरपिरी, कटारी आदि मिलती हैं। ऊपरी क्षेत्रों में ककड़ सिंगी, हरड़ हरीतिकी, तेजफल, नीलकण्ठी, वनमिसरी, मंजीठ, ममीरा, शठजलाड़ी, सोमलता, रत्नजोत, रेबन्दचीनी, कुइकड़ू, पतीश, ओशतली आदि जड़ी बूटियां पाई जाती हैं।

आलेख

प्रकृति प्रेमियों का स्वर्ग : कांगड़ा घाटी

◆ सचिन संगर

धौलाधार पर्वत शृंखला के आंचल में बसे धर्मकोट और मैकलोडगंज पहुंचते हुए जब कभी रास्ते में रुक कर यहां के रहस्यमयी शांति ओढ़े बर्फीले पर्वतों और नयनाभिराम वादियों को निहारते हैं तो मन बरबस ही वर्ष 1967 की एक हिंदी फिल्म 'बूंद जो बन गई मोती' का भरत व्यास का लिखा गीत 'ये कौन चित्रकार है' गुनगुनाने लगता है-

'हरी-भरी वसुंधरा पर नीला-नीला ये गगन,
के जिस पे बादलों की पालकी उड़ा रहा पवन,
दिशाएं देखो रंग भरी, चमक रही उमंग भरी,
ये किस ने फूल-फूल पे किया सिंगार है, ये कौन चित्रकार है-ये कौन चित्रकार है।'

गर्मियों के मौसम में जब तपते मैदान आग उगल रहे हैं, हिमाचल के ठंडे पहाड़ सहज ही सुकून के तलबगारों का पसंदीदा ठिकाना बन जाते हैं। संभव है परम घुमक्कड़ महापंडित राहुल सांकृत्यायन ने भी ऐसे ही किसी मौसम में मैदान से पहाड़ों का रुख किया हो। यह स्वाभाविक ही है क्योंकि यहां के सुंदर गांव, ठंडी छांव, शीतल-स्वच्छ आबोहवा और शांत मनोरम वादियां घुमक्कड़ी के शौकीनों को बरबस ही अपनी ओर खींचती हैं। फिर गर्मियों की छुट्टियों का इससे बेहतर गंतव्य और क्या हो सकता है।

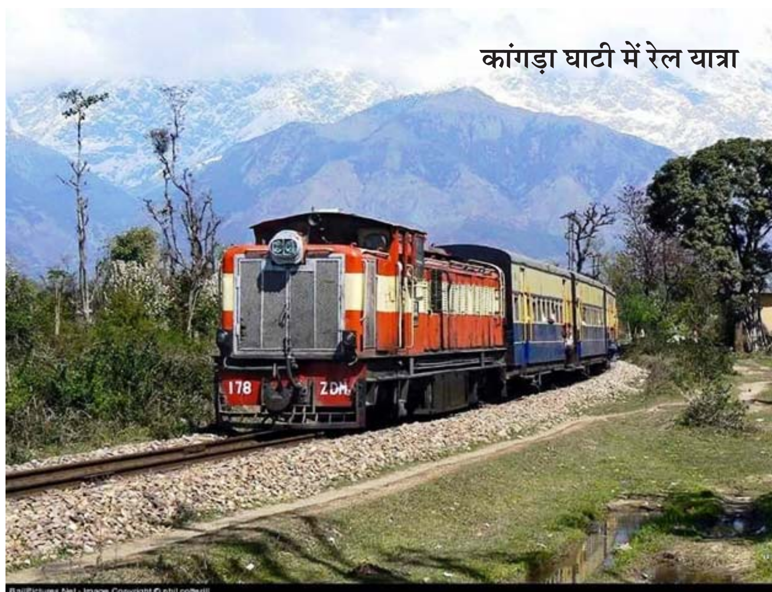
यूं तो पूरे हिमाचल का हर ओर-छोर घूमने, देखने और महसूसने जैसा है, लेकिन चित्ताकर्षक धौलाधार पर्वतमाला के अंतस से उपजे प्रेम के अंकुर सरीखे कांगड़ा जिले की बात ही कुछ और है। यहां की सबसे बड़ी खासियत ये है कि यहां हर वर्ग के पर्यटक के लिए आनंद और रोमांच के अनेकों साधन मौजूद हैं। कह सकते हैं कांगड़ा जिला अपने आप में पर्यटन का संपूर्ण पैकेज है। इतिहास के पन्नों में त्रिगर्त के नाम से दर्ज कांगड़ा का रोम रोम प्रकृति, कला-संस्कृति, इतिहास और धर्म के विविध आख्यानों से सराबोर है।

प्रकृति प्रेमियों का स्वर्ग

धौलाधार के उत्तुंग शिखरों पर ठिठकी बर्फ, बारहमासी जल से इठलाती नदियां, झरने, झीलें, मनोहर वादियां और हरे भरे पहाड़ों व मैदानों के नजारे जहां सहज ही प्रकृति प्रेमियों को अपने आकर्षण के पाश में बांध लेते हैं, वहीं साहसिक पर्यटन के शौकीनों को भी भरपूर मौजमस्ती के मौके उपलब्ध करवाते हैं।

पैराग्लाइडर्ज का मक्का बनी बीड़ बिलिंग घाटी पर्यटकों की आसमान से गलबहियां करने की ख्वाहिश को पूरा करती है। पैराग्लाइडिंग की राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय प्रतियोगिताओं के सफल आयोजनों से विश्व मानचित्र पर खास पहचान बना चुकी इस घाटी में सैलानी बिलिंग पहुंचकर सामान्य दामों पर लाइसेंसधारी पायलट के साथ टैंडम फलाइट का मजा ले सकते हैं।

बिलिंग से आगे राजगुंधा ट्रैक घूमने फिरने वालों के लिए सौ फीसद रोमांचक सफर की



कांगड़ा घाटी में रेल यात्रा

गारंटी है। वहीं मैकलोडगंज के समीप का त्रियुंड ट्रैक, इंद्रहार पास, मुलथान और बड़ा भंगाल जैसे स्थल ट्रैकिंग के शौकीनों का स्वर्ग हैं जहां पर्यटक कैंपिंग का भी मजा लेते हैं।

फिर जलीय खेलों के रोमांच में रुचि रखने वालों के लिए ब्यास नदी पर बना महाराणा प्रताप सागर जो पौंग डैम झील के नाम से मशहूर है, किसी जन्नत से कम नहीं है। ये झील प्रवासी पक्षियों के विश्राम का भी पसंदीदा ठिकाना है और सर्दियों के मौसम में यहां आने पर दुनियाभर के विभिन्न प्रजातियों के पक्षियों के दीदार का अनुभव अपने आप में अद्भुत होता है। ये झील रेंसर टापू के सौंदर्य और बाथू की लड़ी जैसे सुंदर नक्काशी वाले मंदिरों को अपनी आगोश में समेटे हुए है। गर्मियों के दौरान पानी उतरने पर जलमग्न मंदिर झील में प्रकट होते हैं और इन खूबसूरत भवनों को देखने के लिए पर्यटक दूर दूर से आते हैं।

मैकलोडगंज की डल और करेरी झील का आकर्षण भी सैलानियों पर जादू करता है। फिर चारों ओर से पहाड़ों से घिरे भागसूनाग वाटर फॉल में नहाकर तरोताजा होने की चाह भी पर्यटकों को उत्साह से भर देती है। तो मिनि इजराइल के तौर पर विख्यात धर्मकोट और डल झील से आगे सुंदर नजारे निहारने की बेहतरीन साइट नड्डी पर्यटकों को प्रकृति से आलिंगन सरीखा एहसास करवाते हैं।

वन्य जीवों को नजदीक से खेलते कूदते देखने की इच्छा लिए अनेक पर्यटक रोजाना गोपालपुर के चिड़ियाघर में आकर आनंदित होते हैं। इसे धौलाधार प्रकृति उद्यान के नाम भी जाना जाता है। धर्मशाला से करीब 20 किलामीटर पर नगरी वाले रास्ते से पालमपुर मार्ग पर स्थित इस चिड़ियाघर में पर्यटक वन्यजीव पर्यटन के रोमांच को करीब से महसूस कर सकते हैं। यहां का नैसर्गिक सौंदर्य एवं दुलर्भ वन्य प्राणियों की आश्रयस्थली होने के चलते ये पर्यटकों को बरबस ही अपनी ओर खींच लेता है।



बाबा बडोह जिला कांगड़ा

वहीं चाय के बागीचों से उठती भीनी भीनी महक पालमपुर घाटी में विचरने वाले हर शख्स को मदहोश कर देती है और दूर दूर तक फैले इन बागीचों के दृश्य मन को अतीव शांति से भर देते हैं। फिर मन में गुणकारी कांगड़ा चाय की चुस्कियों की तलब उठना स्वाभाविक ही है। चामुंडा जी से नगरी होते हुए पालमपुर जाने वाले मार्ग पर अनेक जगहों पर सैलानियों को कांगड़ा चाय पीने और खरीदने के मनभावन ठिकाने मिल जाएंगे। इसके अलावा भी पालमपुर, धर्मशाला सहित सभी मुख्य बाजारों में कांगड़ा चाय खरीदी जा सकती है।

इतिहास एवं संस्कृति के विविध रंग

इतिहास में रूचि रखने वाले पर्यटकों को कांगड़ा किले की भव्यता ही मंत्रमुग्ध करने के लिए पर्याप्त है। कांगड़ा शहर से बस 2 किलोमीटर की दूरी पर बाणगंगा और मांझी खड्ड के संगम पर तिकोनी पहाड़ी के शीर्ष पर खड़ा यह किला नगरकोट के नाम से भी प्रसिद्ध है। महाभारत काल से लेकर मुगल सल्लतनत तक की महागाथाओं का गवाह कांगड़ा किला अपने में अतीत की अनगिनत कहानियों को समेटे हुए है। किले में कटोच राजवंश की कुलदेवी अंबिका माता का सुंदर मंदिर भी स्थित है।

फिर मैकलोडगंज का सेंट जॉन चर्च, नूरपुर और हरिपुर गुलेर के किले और परागपुर का हैरीटेज गांव पर्यटकों से इतिहास की अनेक दास्तानें बयान करते हैं। वहीं मसरूर का शिलोत्कीर्ण मंदिर अपने अनूठे शिल्प और पांडवों से जुड़े इतिहास की कथाएं सुनाकर सैलानियों को रिझाता सा लगता है। बलुआ चट्टानों को तराश कर बनाए गए इस मंदिर को हिमाचल की एलोरा भी कहा जाता है।

कला संस्कृति के अनुरागियों के लिए अंद्रेटा की सोभा सिंह आर्ट गैलरी और नोरा रिचर्ड का घरौंदा किसी तीर्थ से कम नहीं हैं।

यहां इन महान कलाकारों के जीवन को नजदीक से महसूस करने का अवसर मिलता है। वहीं धर्मशाला बस अड्डे के पास स्थित कांगड़ा कला संग्रहालय अपने यहां कांगड़ा कलम के बेजोड़ चित्रों को सहेजे हुए है। इसके अलावा पर्यटक यहां कांगड़ा शैली की अन्य कलाएं, वस्त्र और प्राचीन औजार, अस्त्र-शस्त्र भी देख सकते हैं।

धार्मिक पर्यटकों की तीर्थस्थली

धार्मिक पर्यटन के आस्थावानों के लिए पूरा कांगड़ा जिला ही मानो किसी तीर्थ समान है। बड़ी संख्या में श्रद्धालु विश्व प्रसिद्ध शक्तिपीठों एवं धर्मस्थलों की यात्रा पर आते हैं। बैजनाथ का शिवधाम, माता ज्वाला जी, माता चामुंडा और कांगड़ा का माता वज्रेशवरी मंदिर तथा देहरा का महाकाल मंदिर लोगों की श्रद्धा का केंद्र हैं। चामुंडा जी के समाने की पहाड़ी पर स्थित माता आदि हिमानी चामुंडा मंदिर बेहद खूबसूरत दर्शनीय स्थल है। चामुंडा के पास जिया गांव से करीब 12 किलोमीटर की पैदल यात्रा के अलावा यहां जाने के लिए गर्मियों के मौसम में डाढ़ से हैलीटैक्सी की सुविधा भी उपलब्ध रहती है।

देहरा के वनखंडी के पास माता बगलामुखी धाम, कांगड़ा किले के सामने की पहाड़ी पर स्थित माता जयंती देवी मंदिर, इंदौरा का काठगढ़ शिव मंदिर और नूरपुर का मीरा-कृष्ण मंदिर धार्मिक पर्यटन के अद्भुत स्थल हैं।

वहीं भागसूनाग का शिव मंदिर, नगरोटा बगवां से कोई बीस किलोमीटर पर बाबा बड़ोह मंदिर, जयसिंहपुर के आलमपुर के पास बाबा बालकरूपी मंदिर, धर्मशाला के खन्यारा में स्थित अघंजर महादेव मंदिर और इसकी पास वाली पहाड़ी पर बाबा इंद्रूनाग मंदिर, बैजनाथ का महाकाल मंदिर, कोटला का त्रिलोकनाथ मंदिर, पंचरूखी के पास माता आशापुरी मंदिर, कांगड़ा का अच्छरकुंड, धर्मशाला परिधि गृह के समीप माता कुनाल पत्थरी मंदिर, पालमपुर के बंदला में माता विंध्यवासिनी मंदिर और चंदपुर का जखनी माता मंदिर तथा शाहपुर के दरीणी के समीप टल माता मंदिर भक्तों की आस्था के साथ साथ सुंदर दर्शनीय स्थल भी हैं।

मिनी ल्हासा कहे जाने वाले धर्मशाला में मुख्य शहर से महज 10 किलोमीटर दूर स्थित मैकलोडगंज, जहां निर्वासित तिब्बती सरकार का मुख्यालय भी है, का दलाई लामा मंदिर विश्वभर के बौद्ध अनुयायियों के लिए आस्था का केंद्र है। इसके अलावा मैकलोडगंज तिब्बती और चाइनीज व्यंजनों का लुप्त लेने के लिए बड़ी मुफीद जगह है। बैजनाथ के भट्टू, धर्मशाला के सिद्धबाड़ी में नौरबलिंगा जैसे बौद्ध मठ पूजा-अर्चना के साथ साथ तिब्बती शिल्पकला के नायाब नमूने हैं। फिर मैकलोडगंज में धर्मगुरु दलाई लामा के दर्शन और उनसे मिलने की चाहत तो खैर सब ही धर्मों के मानने वालों को यहां खींच लाती है।

वीर सैनिकों की भूमि

देश की स्वतंत्रता और सुरक्षा में कांगड़ा जिला के वीर सपूतों एवं वीरांगनाओं का बड़ा योगदान है। धर्मशाला के शहीद स्मारक, पालमपुर के सौरभ वन विहार, धर्मशाला के दाड़ी में स्थित मेजर दुर्गामल दल बहादुर वाटिका आकर पर्यटक शहीद वीरों के सम्मान में सिर भी झुकाते हैं और उनके बलिदानों को याद कर अपने जीवन के लिए प्रेरणा भी पाते हैं। अब धर्मशाला में युद्ध संग्रहालय का निर्माण कार्य जोरों पर चल रहा है, इसे एक ऐसे स्थल के तौर पर विकसित किया जा रहा है जहां लोग सैनिकों और राष्ट्र की सुरक्षा में उनके असाधारण प्रयासों के प्रति सम्मान व्यक्त कर सकें।

कैसे पहुंचें

कांगड़ा का जिला मुख्यालय धर्मशाला है। हवाई मार्ग से यहां आने के लिए मुख्यालय से लगभग 10 किलोमीटर पर गग्गल में एयरपोर्ट है। धर्मशाला से सबसे नजदीकी रेवले स्टेशन पठानकोट है जो यहां से करीब 100 किलोमीटर है। पठानकोट से मण्डी के जोगिन्द्रनगर के लिए भी रेल कनेक्टिविटी है तथा कांगड़ा घाटी देखने की इच्छा रखने वाले पर्यटक इसका भी आनंद उठा सकते हैं।


ज्वालाजी धाम

इसके अलावा सड़क मार्ग से भी यहां आसानी से पहुंचा जा सकता है। धर्मशाला सहित जिले के सभी क्षेत्रों से हिमाचल पथ परिवहन निगम की वातानुकूलित और सामान्य बसें जिले एवं प्रदेश के भीतर और बाहरी राज्यों के लिए चलती हैं। यहां से चंडीगढ़ और दिल्ली सहित उत्तर भारत के अन्य महत्त्वपूर्ण शहरों के लिए सीधी बस सेवा उपलब्ध है। पर्याप्त पार्किंग सुविधा के चलते अपने वाहन अथवा टैक्सी से भी यहां आसानी से पहुंचा जा सकता है।

आलेख

बाग व पर्यटन का बेजोड़ मेल

◆ योगराज शर्मा

सेब और हिमाचल प्रदेश को बेझिझक एक-दूसरे का पर्याय कहा जा सकता है। हिमाचल का नाम आते ही आंखों के सामने लाल सेबों की तस्वीर कौंधती है। सेब ने हिमाचल प्रदेश को मजबूत आर्थिक आधार भी दिया है। राज्य में इस में समय करीब डेढ़ लाख से अधिक बागबान सेब बागबानी से सीधे तौर पर जुड़े हैं। सेब के अलावा नाशपाती, आड़ू, पल्म, बादाम, व नींबू वर्गीय फलों के साथ-साथ आम व अमरूद से भी प्रदेश के हजारों बागबानों की रोजी चल रही है। लेकिन मौसम में हो रहे बदलावों के चलते कई बार बागबानी का सीजन ठीक नहीं रहता। ऐसी स्थिति के लिए तैयार रहने के लिए सेब कारोबार से जुड़े बागबानों को वैकल्पिक उपायों पर सोचने के लिए मजबूर होना पड़ा है। इसके लिए सेब व पर्यटन एक ऐसा विकल्प उभर कर सामने आया है जो फसल खराब रहने की स्थिति में भी बागबानों को फायदा पहुंचा सकता है। इसके लिए बागबानों के व्यक्तिगत प्रयासों के साथ-साथ पर्यटन विकास निगम भी आगे आया है। हिमाचल में सेब की खेती का इतिहास 100 वर्ष पुराना है। वर्ष 1916 में सेब के हिमाचल में जनक सैम्यूल स्टोक्स ने थानाधार में सेब का पहला बाग लगाया था। इससे पूर्व कुल्लू में कैप्टन ला... ने भी सेब का पौधा लगाया था। लेकिन वह सेब की खट्टी प्रजाति थी जबकि जो स्टोक्स ने सेब लगाए, वे रसदार प्रजाति के हैं।

राज्य का सेब उत्पादक क्षेत्र पर्यटन से आय और रोजगार पैदा करने का एक बहुत बड़ा साधन है क्योंकि इन क्षेत्रों में न केवल वनस्पति और जीव जगत के मामले अव्वल हैं बल्कि यहां जैव विविधता भी भरपूर है। प्रदेश के इन पहाड़ी क्षेत्रें में विभिन्न आर्थिक संसाधनों का खजाना है। समृद्ध सांस्कृतिक विरासत के कारण प्रदेश के ये क्षेत्र पर्यटकों के लिए हॉटसपॉट बनते जा रहे हैं। इसके अलावा यहां की शुद्ध आबोहवा व पर्यटकों को घर जैसा माहौल प्रदान करने के लिए चलाई जा रही होम स्टे इकाइयां आकर्षण का मुख्य केन्द्र हैं।

हिमाचल प्रदेश पर्यटन निगम ने भी सेब बागान टूरिज्म को बढ़ावा देने के लिए एप्पल ब्लोसम पैकेज शुरू किया है। इसमें पर्यटकों को सेब के बागीचों में ले जाकर प्रकृति का वास्तविक अहसास करवाने की कोशिश की जाती है। ग्रामीण पर्यटन को बढ़ावा देने के लिए यह एक नई पहल है।

पर्यटन व्यवसाय से जुड़े लोगों का मानना है कि सेब बागान पर्यटन में सेब उत्पादक क्षेत्र के युवा बागवानों के लिए पर्यटन व्यवसाय से जुड़ने की असीम संभावनाएं हैं। राज्य के पहाड़ी क्षेत्रों में बेहतरीन सड़क नेटवर्क ग्रामीण पर्यटन को चार चांद लगा रहा


कोटगढ़-कुमारसेन सेब बहुल क्षेत्र

है। साथ ही प्रदेश की हसीन वादियों का लुत्फ उठाने आने वाले देशी व विदेशी पर्यटकों को भी अब पुराने पर्यटक स्थल शिमला शहर की बजाय अपनी छुट्टियां हरे भरे, स्वच्छ व सेब की खुशबू के बीच व्यतीत करना पसंद कर रहे हैं। इसके लिए शिमला जिले के थानाधार, कोटगढ़, रतनाड़ी नारकंड़ा व फागू में होम स्टे इकाइयां स्थानीय बागबानों ने स्थापित की हैं। इससे सेब उत्पादक क्षेत्रों में सेब बागान टूरिज्म प्रसिद्ध हो रहा है।

सेब उत्पादक क्षेत्रें में होम स्टे इकाइयों के संचालक भी मानते हैं कि उनके पास प्रकृति प्रेमी पर्यटकों की आमद लगातार बढ़ रही है। ऐसे पर्यटक मौन हरियाली व शांति को तरजीह देते हैं। ऐसे संचालकों द्वारा पर्यटकों को ऑन लाइन बुकिंग सुविधा भी प्रदान की जा रही है।

उल्लेखनीय है कि सेब पहाड़ी फलों का राजा है और शीतोष्ण जलवायु में ही पैदा होता है। इस फल की सफल बागबानी के लिए सर्दियों के मौसम में 1000 से अधिक चीलिंग ऑवर की जरूरत रहती है। प्रदेश के उंचाई वाले क्षेत्र जहां ठंड के मौसम में बर्फवारी होती है, में सेब की खेती सफलतापूर्वक की जाती है। इन पहाड़ी क्षेत्रें में लगाए गए सेब के बागीचों में जब फूल व फल लगते हैं तो नजारा देखते ही बनता है। इसी का सुखद अहसास करवाने के लिए स्थानीय बागबानों व हिमाचल प्रदेश पर्यटन निगम के सांझा प्रयासों से सेब पर्यटन की यह नई अवधारणा धीरे-धीरे लोकप्रिय हो रही है। पर्यटकों को आकर्षित करने के लिए एप्पल फैस्टीवल का आयोजन भी प्रदेश की सेब बेल्ट में निरंतर करवाए जा रहे है। साथ ही बेहतरीन सड़क नेटवर्क व यातायात के अन्य साधनों के विकास के चलते प्रदेश में घूमने आने वाले पर्यटकों की तादाद लगातार बढ़ रही है।

सेब बहुल क्षेत्रों थानाधार, कोटगढ़, कुम्हारसैन, जुब्बल, कोटखाई, रोहड़ू में आज बागबानों विशेषकर प्रगतिशील किसानों द्वारा खोली गई 'होम स्टे' इकाइयों के बाहर संपूर्ण देश से आए पर्यटकों को पहाड़ी जनजीवन को निहारते तथा प्रकृति का आनंद लेते देखा जा सकता है।

ऐसे में यही उम्मीद जताई जा रही है कि सेब और पर्यटन का यह बेजोड़ मेल आने वाले वर्षों में प्रदेश के बागबानों की आर्थिक संपन्नता को और अधिक सुदृढ़ता प्रदान करेगा। आज राज्य में सेब का सालाना कारोबार 4000 करोड़ रुपये का है। पर्यटन के साथ जुड़ने से इस कारोबार को नए पंख लगेंगे। इससे राज्य के युवाओं को भी रोजगार के वैकल्पिक अवसर प्राप्त हो सकेंगे।

पर्यटन की उड़ान

हिमाचल में पर्यटन को नई उड़ान प्रदान करने के लिए राजधानी शिमला के लिए सस्ती हवाई उड़ान सेवा का शुभारंभ किया गया है। शिमला-जुब्बड़हट्टी हवाई अड्डे तक आने वाली इस उड़ान का शुभारंभ प्रधान मंत्री श्री नरेंद्र मोदी ने मुख्य मंत्री श्री वीरभद्र सिंह की उपस्थिति में 27 अप्रैल, 2017 को किया। गौरतलब है कि शिमला हवाई अड्डे का निर्माण वर्ष 1989 में तत्कालीन मुख्य मंत्री श्री वीरभद्र सिंह के कार्यकाल में किय गया था। प्रदेश सरकार इस हवाई अड्डे के लिए नियमित उड़ानें आरंभ करने के लिए मुद्दा बार-बार केंद्रीय उड्डयन मंत्रालय तथा प्रधान मंत्री के समक्ष उठाती रही हैं। अंततः इस हवाई सेवा के विस्तार से राज्य में पर्यटन गतिविधियों को पंख लगेंगे। राजधानी में इसके अलावा शहर की सबसे ऊंची चोटी जाखू शिखर, जहां भगवान हनुमान का प्राचीन मंदिर स्थित है, तक रज्जू मार्ग को आरंभ कर राजधानी आने पर्यटकों के लिए एक नया तोहफा दिया है। इस रज्जू मार्ग से यात्रा सुगम तथा यात्रा के दौरान संपूर्ण शहर का अनुपम दृश्य देखने का लुत्फ पर्यटक उठा रहे हैं।

पर्यटकों के लिए नया पड़ाव

शिमला आने वाले पर्यटकों के लिए माल रोड, ऐतिहासिक रिज मैदान, गिरजाघर, वायसरिगल लॉज (उच्च अध्ययन संस्थान), जाखू मंदिर सहित अनेक ऐतिहासिक व धार्मिक स्थल हैं। शिमला शहर का शांत वातावरण देशी व विदेशी पर्यटकों को दो सौ वर्षो से आकर्षित कर रहा है। सैर के उपरांत हर कोई एक ऐसा एकांत चाहता है जहां कुछ पल ठहर कर सुकून से आनंद ले सकें। ऐसा ही पड़ाव पर्यटन विभाग तथा जेल विभाग के संयुक्त प्रयास से ऐतिहासिक रिज के साथ उभर कर सामने आया है। यह है राजधानी का 'पहला बुक कैफे' यहां आप नाश्ते के साथ पुस्तकों का आनंद भी ले सकते हैं। इसका संचालन कैथू जेल के कैदी जय चंद व योगराज द्वारा किया जा रहा है। इन्हें सहयोग करते हैं राम लाल व राजकुमार।

आतिथ्य संस्कार तथा कैफे संचालन का प्रशिक्षण इन्हें शिमला के मशहूर होटल रेडिसन में दिया गया है। कैफे में प्रसिद्ध लेखकों की पुस्तकें उपलब्ध हैं।

पहाड़ों की खूबसूरती का आनंद लेने के लिए यह एक मशहूर स्थल बनाई है। यह मानव की विचारधाराओं व अनुभवों का एक नया पड़ाव है। कुछ ही माह में यह पर्यटकों के लिए आकर्षण का केंद्र बन गया है। लंदन से आए जॉन से जब कॉफी/बिस्कुट के साथ पुस्तकों का आनंद लेते पूछा गया तो उनके मुंह से बरबस ही निकला ' यह शिमला का सबसे उपयोगी स्थल है'। मुझे पठन- पाठन के साथ जो सुकून मिला है, वह सदैव मुझे याद रहेगा।

कुदरत के सान्निध्य में सुकून के लम्हें

◆ संतोष उत्सुक

हिमाचल प्रदेश का नाहन शहर खूबसूरत तो है मगर पर्यटन की दृष्टि से मशहूर नहीं हो पाया। यहां भीड़ बढ़ती जा रही है। ट्रैफिक की भगदड़ यहां भी खूब है। नाहन के आस-पास बहुत से स्थल ऐसे हैं जो प्राकृतिक रूप से खूबसूरत होने के साथ-साथ भीड़-भाड़ से भी अलग हैं। ऐसे स्थलों में से एक है बनेठी।

तो चलिए आज बनेठी चलते हैं। कई दशकों से सुन रखा था वहां एक बढ़िया रेस्ट हाउस है। कभी जा नहीं पाए। नाहन में चीड़ के दरखत विला राउंड में बहुत हैं मगर शहर में मकानों के भेड़नुमां झुंड हैं। खैर। बनेठी नाहन से अठारह किलोमीटर दूर है। शहर से शिमला रोड पर उजाड़ शांति संगम के ऊपर से निकलते ही चीड़ के वृक्ष मिलने शुरू हो जाते हैं। सड़क का बिरोजा फैक्ट्री तक तो खस्ता हाल है आगे बढ़िया है। अब तो चाय व खाने के लिए बहुतेरी जगह हैं। बनेठी की कुछ दुकानें सड़क पर ही हैं मुख्य सड़क से दाएं तरफ जाती सड़क से बनेठी पहुंचते हैं। सड़क के बाएं तरफ छोटा सी बिल्डिंग में स्कूल है। चंद दुकानें हैं जहां रोज मर्रा की चीजें उपलब्ध हैं। यहां से बाएं तरफ जरा सी चढ़ाई चढ़ कर फोरेस्ट रेस्ट हाउस है। यह तारीफ के काबिल है कि हिमाचल प्रदेश में अधिकांश फोरेस्ट व पी डब्ल्यू डी रेस्ट हाउस बहुत सुंदर लोकेशन्स पर बने हैं।



पुराने नए, मोटे पतले लंबे, दिलकश व शानदार चीड़ के दरख्तों के पड़ोस में बनाया गया है, 1323 फुट उंचाई पर बनेठी फोरेस्ट रेस्ट हाउस। लगभग 112 साल पुराने रेस्ट हाउस की वास्तुकला अंग्रेजों के जमाने की है, वही टीन की नालीदार चादरों वाली, हरे रंग से पुती छत अच्छी लगी। इस छत के नीचे मात्र दो सेट हैं। एक वीआईपी दूसरा आम लोगों के लिए। रेस्ट हाउस के चारों तरफ अहाता संभवतः बाद में बनाया गया है जो 1905 में बनी इस ऐतिहासिक बिल्डिंग को विस्तार, सुरक्षा देते हुए इसकी खूबसूरती में इजाफा करता है। विशेष कर इसकी बाहरी तरफ प्रयोग किए पत्थर जिन्हें छेनी से बड़ी मेहनत से टांका गया है और सीमेंट में चिना गया है। इन पत्थरों की खूबसूरती इन पर सीमेंट न करने के कारण बची हुई है। अर्ध गोलाकार दरवाजे कलात्मक लगते हैं और आर्च में लगे पत्थर और भी दिलकश। वैसे आज के समय में किसी को भी इन चीजों की कद्र नहीं है। यहां आसपास बहुत खुली जगह है तभी काफी देर चहल कदमी की। चीड़ के पेड़ के नीचे बैठ कर, खड़े होकर फोटो खिंचवाने में मजा आ गया। चीड़ के पेड़ की छाल फोटोज में आकर्षक लगती है। यहां पर्यावरण में चीड़ की नोकीली पत्तियों की स्वास्थ्यवर्धक गंध नाक को अच्छी लगती है। धूप सेंकते हुए चाय या कॉफी की चुसकियां लेने के लिए लाजवाब जगह है बनेठी का फोरेस्ट रेस्ट हाउस। रोमांटिक गीत मन स्वतः गुनगुनाना शुरू कर देता है और रोमांस झट से लौट आता है जिंदगी में। कोई भीड़ नहीं, पक्की सड़कें नहीं ठीक वैसे रास्ते और पगडंडियाँ जैसी गुलजार की फिल्मों में। यहां की राहों पर चलते चलते उनकी खास फिल्म मौसम का गीत मेरी जुबान पर आ गया, 'दिल ढूंढता है फिर वही फुरसत के रात दिन , बैठे रहे तस्व्वुरे जाना किए हुए'। मेरी पत्नी ने जी भर के कैमरे का प्रयोग किया और रास्तों के आस पास जहां चाहे वहां फेंके नान ग्रेडेबल कचरे का बुरा माना। यहां आस पास सब हरा भरा है क्योंकि जंगल है और सच है तभी तो मंगल है। यहां कुदरत की गोद में एकांत है सो आप चाहें तो काफी देर तक खुद से भी मिल सकते हैं। छोटा सा मंदिर भी है बनेठी में और पार्किंग वो भी सिरदर्द रहित। चाहें तो चौकीदार से गुजारिश कर सादा खाना भी मिल सकता है। बनेठी की आराम गाह में रुकना हो तो जिला वन अधिकारी नाहन कार्यालय से बुकिंग करानी होगी। बनेठी से आगे जाना चाहें तो हिमाचल के यशस्वी मुख्य मंत्री डॉ. परमार की गृहस्थली बागथन, नाहन को जल देने वाले स्त्रोत नहर सवार, प्रसिद्ध गुरुद्वारा व स्कूल बडू साहिब या फिर स्वादिष्ट आडू व सेब के लिए मशहूर राजगढ़ भी निकल सकते हैं। इधर रेस्ट हाउस के पास से कच्चे रास्ते से निकाल कर कला प्रेमी अजय बहादुर सिंह द्वारा निर्मित जैतक फोर्ट होते हुए नौणी पहुंच सकते हैं।

हमने तो नाहन लौटना था। रास्ते में भी चीड़ के पेड़ों ने खूब लुभाया। पुराने गीत बजते रहे और हम पति-पत्नी यही बात करते रहे कि ऐसी छोटी जगहों को जैसी हैं वैसी रखी जाए, थोड़ी जहमत उठाकर नियमित रूप से साफसुथरा रखें तो ये कुदरती मंदिर कितना सुकून दे सकते हैं। बनेठी फिर जाना पड़ेगा।

गुलिस्तान ए साथी, पक्का तालाब, नाहन 173001 हि.प्र.
0 98162 44402

पर्यटन के इंद्रधनुषीय रंग बिखेरती पुस्तक

◆ डॉ. राजेश के. शर्मा

पर्यटन घर से बाहर निकल कर घूमना मात्र नहीं है। इसके अनेक स्वरूप तथा रूप हैं। पर्यटन अपने आपमें व्यापकता को लिए हुए है। मानव ने सर्वप्रथम पृथ्वी के भूगोल को जानने के लिए अपने कदम बढ़ाए। भूगोल की जानकारी होने पर उसने क्षेत्र की भौगोलिक परिस्थितियों, वहां के निवासियों, भाषा, संस्कृति, परंपराओं, साहित्य, समृद्धता एवं उनकी विभिन्न विधाओं में दक्षता व आय-व्यय के साधनों का आकलन किया।

भारत में पर्यटन 'अतिथि देवो भवः' के सिद्धांत पर आधारित है। इसमें अतिथि तथा उसके पास आने वाले व्यक्ति के मध्य एक अनूठा रिश्ता कायम होता है। संपूर्ण भारत भूमि की अपनी एक समृद्धतम संस्कृति, परंपराएं हैं। हमारी सभ्यता को बाहर से आए लोगों ने भी और अधिक समृद्ध किया है। प्राचीन भारत में आने वाले यात्री तथा व्यापारियों को यहां की समृद्धता व आध्यात्मिकता ने आकर्षित किया। भारत में प्रथम आने वाले यात्री यहां पर व्यापारी, दार्शनिक या विद्वान छात्र के रूप में आए व्यापारी धन कमाने, दर्शनीय धर्म संस्कृति का ज्ञान लेने तथा विद्वान हमारे प्राचीन ग्रंथों के अध्ययन करने तथा छात्र शिक्षा ग्रहण करने आते रहे। चीनी यात्री ह्वेन सांग का उदाहरण हमारे पास है जो शिक्षा ग्रहण कर यहां के ग्रंथों को भी अपने देश ले गया। इन यायावरों ने कठिन भौगोलिक परिस्थितियों को पार कर अपने लक्ष्यों को प्राप्त किया। पैदल, घोड़े, खच्चरों, बैलगाड़ियों, ऊंटों पर यात्राएं की। समुद्री रास्ते से भी यात्रियों ने आने का साहस किया। इन व्यक्तियों ने अपनी यात्राओं के वृतांत लिखे। दुनिया ने भारत को जाना व पहचाना। जल तथा थल के माध्यम से व्यापारिक रास्तों के खुलने से व्यापारिक गतिविधियों व पर्यटन का उदय हुआ।

पर्यटन आज दुनिया भर में आर्थिक उत्थान का कारण माना जा रहा है। यह क्षेत्र देश के सकल घरेलू उत्पाद में अहम भागीदार बन रहा है। इस क्षेत्र से रोजगार के प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप में अनेक अवसर खुले हैं। पर्यटन की बढ़ती ताकत को देश सहित सभी राज्यों ने पहचाना है।

आधुनिकता के इस युग में कंप्यूटर पर आज जानकारियों का भंडार मौजूद है। एक बटन के दबाने पर हजारों पृष्ठों की जानकारियां उपलब्ध हो जाती हैं। इसके बावजूद पुस्तकों में समाहित ज्ञान की अभी भी आवश्यकता रहती है। डॉ. वी. के. शर्मा जो प्रदेश के जाने माने बागबानी विशेषज्ञ व साहित्यकार हैं, ने पर्यटन के पड़ावों, पर्यटन क्षेत्र की व्यापकता तथा पर्यटन क्षेत्र की जानकारियों पर आधारित 182 पृष्ठों का एक मोनोग्राफ प्रकाशित कर नवीन पहल की है। 'डिफरेंट स्टोक्स ऑफ टूरिज्म' पुस्तक में जाने-माने 14 लेखकों ने अपने अनुभव तथा ज्ञान से पर्यटन पर लेख लिखे हैं।

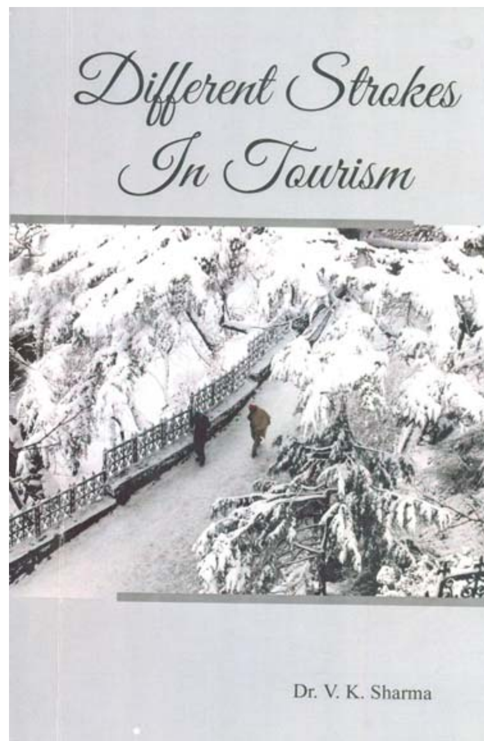
भारतीयों की धार्मिक स्थलों की यात्रा, उनके जीवन का अभिन्न अंग है। व्यक्ति अपनी मान्यता तथा धार्मिक वृत्ति के कारण इन स्थलों की यात्रा करता है। धार्मिक पर्यटन इसी कड़ी का हिस्सा है। हिमाचल में भी आने वाले एक चौथाई पर्यटक धार्मिक यात्रा के लिए आते हैं। प्रदेशवासी भी अपने-अपने इष्ट देवताओं मे मंदिरों की यात्रा पर जाते हैं। कर्नल के.एल. नोते, जो घुमक्कड़ जीवन जीने में विश्वास रखते हैं, ने पुस्तक में अमरनाथ यात्रा पर एक ज्ञानवर्द्धक तथा इसकी ऐतिहासिकता, रास्ते की कठिनाइयों, ठहराव पर विस्तृत जानकारी पाठकों को दी है।

भारतीय प्रशासनिक सेवा से सेवानिवृत्त अधिकारी श्री के. आर. भारती, जो राज्य के प्रबुद्ध साहित्यकारों में से एक हैं, ने अपने कार्यकाल के दौरान हिमाचल को बारीकी से जाना व पहचाना है। अपने लेख 'सतत् पर्यटन विकास आज की जरूरत' में भारत सरकार द्वारा पर्यटन क्षेत्र को दी जा रही सुविधाएं तथा प्रोत्साहनों पर एक सारगर्भित लेख लिखा है। यह पर्यटन क्षेत्र के सतत विकास पर एक शोध लेख की श्रेणी में खरा उतरता है। इस लेख में हिमाचल से लेकर समुद्रतल तक पर्यटन की संभावनाओं सहित पुरातात्त्विक महत्त्व के क्षेत्रों की जानकारी है। पर्यटन के सतत् विकास के उनके सुझावों पर अमल कर इस क्षेत्र को विकसित किया जा सकता है।

पुस्तक के संपादकीय भार को वहन करने वाले डॉ. वी.के.

शर्मा ने सुरम्य घाटियों, पहाड़ों मैदानों में पर विद्यमान पवित्र स्थलों को धार्मिक महत्ता के रूप में तो देखा है लेकिन बागबानी तथा पर्यावरण के साथ एक लंबा नाता रिश्ता होने के कारण इसे जैव विविधता का खजाना माना है। हमारे पुरखों ने इन प्राचीन देवस्थलों के इर्दगिर्द पर्यावरण, जड़ी-बूटियों को यथावत तथा संरक्षित रखा है। आज देश में ऐसे पवित्र स्थलों की संख्या एक लाख से लेकर 1.50 लाख के करीब है। लेखक ने प्रमुख राज्यों में स्थित ऐसे स्थलों का जानकारी के साथ आस्था, परंपराओं का उल्लेख किया है।

पर्यटन मानचित्र पर यह निगाह डालते ही शिमला का नाम ध्रुव तारे के रूप में उभरता है। शिमला शहर के इतिहास, विस्तार, दर्शनीय स्थल तथा इसके विकास पर डॉ. पवन बंसल का लेख 'शिमला ओवर टाइम' में पाठकों को इस हिल स्टेशन की गौरवमयी इतिहास का चित्रण मिलता है।



बागबानी तथा पर्यटन एक नया क्षेत्र है। हिमाचल देशभर में बागबानी का सिरमौर माना जाता है। पर्यटकों को बागबानी की ओर आकर्षित करने की दिशा में हिमाचल ने पहल की है। हिमाचल वानिकी एवं बागबानी विश्वविद्यालय के पूर्व कुलपति व बागबानी विशेषज्ञ डॉ. विजय सिंह ठाकुर ने इस नए क्षेत्र बारे नवीनतम जानकारी तथा इसके तीव्र विकास के लिए सार्थक सुझाव दिए हैं।

भारतीय प्रशासनिक सेवा से सेवानिवृत्त अधिकारी श्री एस.एन. जोशी, जो लेखन की हर विधा में सिद्धहस्त हैं, ने रोहड़ू क्षेत्र की पब्बर घाटी तथा डोडरा क्वार के अपने यात्रा वृतांत में पाठकों के लिए एक नई पठनीय सामग्री उपलब्ध करवाई है। उनकी लेखन शैली तथा स्थलों का चित्रण पढ़ते ही बनता है।

हिमाचल की कुल्लू घाटी तथा कांगड़ा का पौंग बांध क्षेत्र साहसिक पर्यटन गतिविधियों का पड़ाव है। कुल्लू के हिमालयन नेशनल पार्क की सैर तथा सामुदायिक आधारित इको पर्यटन पर डॉ. अंकित सूद शोध लेख पर्यटन क्षेत्र की व्यापकता को दर्शाता है। पर्यटन क्षेत्र के विकास में इंटरनेट की भूमिका पर रेडियो से लंबे समय से जुड़े डॉ. इंद्रजीत सिंह दुग्गल के लेख में नई जानकारियां मिलती हैं। यात्रा से संबंधित जानकारियों के सुलभ होने से पर्यटन व्यवसाय को नई दिशा मिलने की संभावना सदैव रहती है। आम जन के लिए कंप्यूटर पर जानकारियां हासिल करने के उनके सुझाव प्रशंसनीय हैं।

मानव संसाधन प्रबंधन में समन्वयक डॉ. सुचि शर्मा का 'भारत में पर्यटन को बढ़ावा देने बारे लिखा शोध लेख पर्यटक स्थलों की पहुंच हर वर्ग के लिए कैसे हो, पर विस्तृत जानकारियों का भंडार है।

आस्ट्रेलिया की डॉ. अदिति शर्मा ने पर्यटन से नए क्षेत्र मेडिकल पर्यटन पर प्रकाश डाला है। कृषि वैज्ञानिक श्री रितेश गुप्ता जिन्होंने कृषि अनुसंधान के लिए विभिन्न क्षेत्रों का दौरा किया है, ने कृषि तथा पर्यटन के समन्वय को जोड़ा है। उन्होंने अपने अनुभवों पर आधारित लेख में आम आदमी को पर्यटन के लाभ का उल्लेख किया है।

प्रो. मनोरमा शर्मा ने डिफरेंट स्टोक्स ऑफ टूरिज्म लेख में पर्यटकों तथा योजनाकारों का ध्यान आकर्षित करने का प्रयास किया है। आज के बाजार में पर्यटन को किस प्रकार विकसित किया जा सकता है, यह उनकी सोच का हिस्सा है।

जनजातीय पर्यटन संभावनाओं पर श्री अशोक मिश्र का लेख भारतीय दर्शन, अध्यात्म, जनजातीय जीवन शैली, संस्कृति पर आधारित है।

अमेरिका के पैनसैलविनिया की निवासी श्रीमती कमला शर्मा ने हवाई द्वीप की यात्रा वृतांत का सुंदर चित्रण कर पर्यटन पर आधारित इस पुस्तक की इस यात्रा को पढ़ कर हर किसी का मन यहां जाने को अवश्य करेगा।

पर्यटन पर वर्ष 2016 में प्रकाशित यह प्रथम संस्मरण का प्रकाशन ऐज केयर इंडिया के हिमाचल चैप्टर ने किया है। पुस्तक का मूल्य 300 रुपये है। इसका प्रकाशन महाजन प्रिंटिंग प्रेस संजौली, शिमला से करवाया गया है।

वर्तमान में पुस्तकों की उपयोगिता तब बनती है जब इसमें लेख के साथ रंगीन चित्र भी हो। पुस्तक में एक लेख हिमाचल में पर्यटन विकास पर होता तो पुस्तक और अधिक पठनीय बननी थी। हालांकि एक अनुभव प्राप्त संपादक, अनुभवी लेखकों का यह संकलन पर्यटकों, शोधकर्ताओं के लिए उपयोगी सिद्ध होगी।

संपादक, निदेशालय, सूचना एवं जन संपर्क विभाग,
शिमला, हिमाचल प्रदेश-171 002

आलेख

हिमाचल निर्माता डॉ. परमार की संघर्ष गाथा

◆ श्याम सिंह रावत



हिमाचल निर्माता डॉ. वाई. एस. परमार ऐसी विभूतियों में शुमार हैं जिन्होंने देश-काल, धर्म, जाति तथा विधाओं व कर्म क्षेत्र को कभी भी सीमाओं में बांध कर नहीं रखा। स्वतंत्र विचारों के धनी डॉ. परमार का स्वाधीनता प्राप्ति के साथ-साथ हिमाचल के मौजूदा स्वरूप को बनाने में अहम योगदान रहा है। पहाड़ी लोगों को उनकी अस्मिता का बोध कराने और भाषा-संस्कृति की पहचान कराकर प्रदेश को राष्ट्र के सम्मुख एक सम्मानजनक स्थान दिलाना उनका मुख्य ध्येय रहा। पहाड़ों के आर्थिक विकास को लेकर जो दिशाएं उन्होंने अपने विचारों के माध्यम से दीं, उसी के परिणामस्वरूप आज हिमाचल पहाड़ी राज्यों में विकास का आदर्श बनकर उभरा है। प्रदेश की आर्थिक उन्नति के मसीहा के रूप में उन्हें सदैव याद किया जाता रहेगा। अगस्त, 1906 के दिन सिरमौर रियासत के पच्छाद क्षेत्र में ग्राम चन्हालग निवासी शिवानन्द सिंह परमार के घर जन्मे बालक यशवंत ने आगे चलकर अपने सुकृतों के बूते अपने नाम को सार्थक किया। स्नातक (ऑनर्स), फिर स्नातकोत्तर तथा विधि स्नातक जैसी उच्च शिक्षा उत्तीर्ण करने के अलावा लखनऊ विवि से समाज शास्त्र में 1944 ई. में पी.एचडी. की प्रतिष्ठित उपाधि ग्रहण की। इसी बीच इन्हें सिरमौर रियासत के सब-जज और बाद में जिला एवं सत्र न्यायाधीश के पद पर पदोन्नति मिल गई; लेकिन रियासत के विरुद्ध ही एक क्रांतिकारी तथा निर्भीक निर्णय पारित करने के कारण 1941 में सात वर्ष के लिए निष्कासित कर दिये गये। निष्कासन की समाप्ति के बाद शिमला में वकालत करते हुए रियासती शासन के विरुद्ध प्रजामंडल आन्दोलन में सक्रिय भागीदारी करने लगे। इन्हें अपनी राजनैतिक सूझबूझ, वाकपटुता, कर्मठता और दूरदृष्टि के कारण मार्च 1947 में 'हिमालयन हिल स्टेट्स रीजनल काउन्सिल (HHSRC) का प्रधान चुना गया। डॉ. परमार जब हिमाचल के राजनैतिक क्षितिज पर उभरे, तब यहां का समाज 31 छोटी-छोटी रियासतों में बंटा हुआ था और इन सभी रियासतों का सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक तथा भौतिक विकास अत्यंत दयनीय दशा में था। 15 अगस्त, 1947 को देश तो आजाद हुआ परन्तु पंजाब हिल स्टेट के तहत पड़ने वाली पाँच बड़ी रियासतों-चंबा, मंडी, बिलासपुर, सिरमौर और सुकेत के अलावा शिमला हिल स्टेट के नाम से जानी जाने वाली 27 छोटी रियासतों में परतंत्रता का घना अंधकार पूर्ववत् बना रहा। डॉ. यशवंतसिंह परमार तथा उनके सहयोगियों के लगातार अथक प्रयास से 15 अप्रैल, 1948 को 30 रियासतों को मिलाकर हिमाचल राज्य का गठन हुआ। तब इसे मंडी, महासू, चंबा और सिरमौर चार जिलों में बांट कर प्रशासनिक कार्यभार एक मुख्य आयुक्त को सौंपा गया। बाद में इसे 'ग' वर्ग का राज्य बनाया गया।

वर्ष 1952 के आम चुनाव में 36 सदस्यीय विधानसभा में 28 कांग्रेस के और 8 निर्दलीय विधायकों के निर्वाचित होने के बाद 24 मार्च को डॉ. परमार को मुख्यमंत्री बनाया गया। राजा आनन्द चंद के अधीन बिलासपुर अभी भी एक स्वतंत्र रियासत थी जबकि प्रजा इसे हिमाचल में शामिल करने को आंदोलित थी। अंततः 1 जुलाई, 1954 के दिन इसका विलय हिमाचल में कर दिया गया।

1956 में गठित राज्य पुनर्गठन आयोग द्वारा हिमाचल को पंजाब राज्य में मिलाने की सिफारिश करने के उपरांत इसका दर्जा 'ग' से घटाकर इसे केन्द्र शासित प्रदेश बनाया गया और यहाँ 1 नवंबर, 1956 को उप-राज्यपाल की नियुक्ति के साथ ही 'हिमाचल टैरिटोरियल काउन्सिल' गठित कर दी गई। इसके विरोध में प्रदेश के मंत्रिमंडल सहित मुख्यमंत्री डॉ. परमार ने त्यागपत्र दे दिया और यहाँ लोकतंत्र की बहाली का अभियान जनसभाओं, प्रदर्शनों, ज्ञापनों आदि के माध्यम से जारी रखा। लंबे संघर्ष के बाद 1963 में तत्कालीन गृहमंत्री लालबहादुर शास्त्री ने लोकसभा में एक वक्तव्य में कहा- ''निरुत्साहित मन से कोई कार्यवाही करने से बेहतर है कि जनप्रतिनिधियों को अपनी सरकार चलाने के लिए जो भी शक्तियां हम प्रदान करना चाहते हैं, वे दे दें।'' फलस्वरूप हिमाचल टैरिटोरियल काउन्सिल को विधानसभा

में परिवर्तित कर दिया गया और 1 जुलाई, 1963 को डॉ. यशवंत सिंह परमार के मुख्यमंत्रित्व में हिमाचल सरकार का गठन हुआ।

मुख्यमंत्री बनने के बाद डॉ. परमार ने हिमाचल के चहुँमुखी विकास के लिए दिन-रात एक कर दिया। उठते-बैठते, सोते-जागते उन्हें इस पर्वतीय क्षेत्र को आधुनिक सुविधाओं से सुसज्जित करने के साथ ही इसे एक सुदृढ़ रूप-आकार देने की धुन सवार रहती थी। इसी क्रम में उन्हें अपने ही प्रदेश के चम्बा जिला और महासू जिले के सोलन क्षेत्र में जाने के लिए दूसरे प्रदेश से होकर जाने की मजबूरी बहुत पीड़ा देती थी। इसके अतिरिक्त वे पंजाब के कांगड़ा, कुल्लू, लाहौल, स्पीति, शिमला तथा पहाड़ी भाषी पर्वतीय क्षेत्रों के अपूर्ण विकास के प्रति भी अत्यधिक चिन्तित रहते थे। जहाँ चाह हो वहाँ राह न निकले, यह नहीं हो सकता। फलस्वरूप 1965 में हिमाचल तथा पंजाब के पर्वतीय क्षेत्रों का एकीकरण करते हुए पंजाब राज्य पुनर्गठन का प्रस्ताव लाया गया, लेकिन पंजाब के तत्कालीन मुख्यमंत्री प्रतापसिंह कैरों किसी भी दशा में पंजाब के पर्वतीय क्षेत्र को हिमाचल में शामिल किये जाने के विरुद्ध थे। वे हिमाचल का विलीनीकरण कर महापंजाब या वि ााल पंजाब बनाना चाहते थे। उनकी इस अव्यावहारिक सोच तथा घोर विरोध के कारण डॉ. परमार और कैरों के बीच काफी कड़वाहट तक की नौबत भी आई। अंततः पंजाब राज्य पुनर्गठन आयोग की सिफारिशों के आधार पर 1 नवंबर, 1966 को पंजाब राज्य का पुनर्गठन हुआ जिसके अनुसार पंजाब के कांगड़ा, कुल्लू, शिमला और लाहौल-स्पीति जिलों के साथ ही अंबाला जिले का नालागढ़ उप-मंडल, जिला होशियारपुर की ऊना तहसील का कुछ भाग और जिला गुरुदासपुर के डलहौजी व बकलोह क्षेत्र को हिमाचल में शामिल कर दिया गया।

शिमला हिल स्टेट्स की स्थापना

वर्ष 1945 तक प्रदेश भर में प्रजा-मंडलों का गठन हो चुका था और 1946 में सभी प्रजा-मंडलों को एचएचएसआरसी. में शामिल करके मुख्यालय मंडी में स्थापित किया गया। मंडी के स्वामी पूर्णानंद को अध्यक्ष, पदमदेव को सचिव तथा शिवानंद रमौल (सिरमौर) को संयुक्त सचिव नियुक्त किया गया। एचएचएसआरसी. के नाहन में 1946 ई. में चुनाव हुए, जिसमें डॉ. यशवंत सिंह परमार को अध्यक्ष चुना गया। जनवरी, 1947 ई. में राजा दुर्गाचंद (बघाट) की अध्यक्षता में शिमला हिल्स स्टेट्स यूनियन की स्थापना की गई। इसका सम्मेलन जनवरी, 1948 में सोलन में हुआ। इसी सम्मेलन में हिमाचल प्रदेश के निर्माण की घोषणा की गई। दूसरी तरफ प्रजा-मंडल के नेताओं का शिमला में सम्मेलन हुआ, जिसमें डॉ. यशवंत सिंह परमार ने इस बात पर जोर दिया कि हिमाचल प्रदेश का निर्माण तभी संभव है, जब प्रदेश की जनता तथा राज्य के हाथों में शक्ति सौंप दी जाए। शिवानंद रमौल की अध्यक्षता में हिमालयन प्लांट गर्वनमेंट की स्थापना की गई, जिसका मुख्यालय शिमला में था। दो मार्च, 1948 ई. को शिमला हिल स्टेट के राजाओं का सम्मेलन दिल्ली में हुआ। राजाओं की अगुवाई मंडी के राजा जोगेंद्र सेन कर रहे थे। इन राजाओं ने हिमाचल प्रदेश में शामिल होने के लिए 8 मार्च, 1948 को एक समझौते पर हस्ताक्षर किये। 15 अप्रैल, 1948 को हिमाचल प्रदेश राज्य का निर्माण किया गया। उस समय प्रदेश को चार जिलों में बांटा गया। इसमें 1948 ई. में सोलन की नालागढ़ रियासत को भी शामिल कर दिया गया। अप्रैल 1948 में इस क्षेत्र की 27,018 वर्ग किमी. में फैली लगभग 30 रियासतों को मिलाकर इस राज्य को केंद्र शासित प्रदेश बनाया गया।

1950 में प्रदेश का पुनर्गठन

1950 ई. में हिमाचल प्रदेश को केन्द्र शासित प्रदेश बनाने के अलावा इसकी सीमाओं का पुनर्गठन किया गया। कोटखाई को उप-तहसील का दर्जा देकर इसमें खनेटी, दरकोटी, कुमारसैन उप-तहसील के कुछ क्षेत्र तथा बलसन के कुछ क्षेत्र शामिल किए गए। जबकि कोटगढ़ को कुमारसैन उप-तहसील में मिलाया गया। उत्तर प्रदेश के दो गाँव संगोस और भांदर जुब्बल तहसील में शामिल कर दिए गये।

भाखड़ा-बांध परियोजना का कार्य चलने के कारण बिलासपुर रियासत को 1948 ई. में इस प्रदेश से अलग रखा गया था। एक जुलाई, 1954 ई. को कहलूर रियासत को हिमाचल प्रदेश में शामिल करके प्रदेश का पाँचवाँ जिला बिलासपुर नाम से बनाया गया। तब बिलासपुर तथा घुमारवीं नामक दो तहसीलें बनाई गईं। रियासत बिलासपुर को इसमें मिलाने पर इसका क्षेत्रफल बढ़कर 28,241 वर्ग किमी. हो गया।

एक मई, 1960 को छठे जिले के रूप में किन्नौर का निर्माण किया गया। इसमें महासू जिले की चीनी तहसील तथा रामपुर तहसील के 14 गाँव शामिल किये गये। इसकी तीन तहसीलें कल्पा, निचार और पूह बनाई गईं। उधर, 'पंजाब हिल स्टेट्स' कहलाने वाली पूर्वी पंजाब की आठ रियासतों को मिलाकर नया राज्य बनाया गया जिसे पटियाला और पूर्वी पंजाब राज्य संघ (PEPSU) नाम देते हुए इसकी राजधानी पटियाला बनाई गई। और फिर सन 1956 में इस पेप्सू को पंजाब में मिला दिया गया।

पंजाबी सूबा आंदोलन के कारण 1966 में पंजाब का पुनर्गठन करके पंजाब व हरियाणा दो राज्य बनाने के साथ ही पहाड़ी भाषी पर्वतीय क्षेत्र पंजाब से लेकर हिमाचल प्रदेश में शामिल कर दिए गये। इसके अलावा पेप्सू का छबरोट क्षेत्र कुसुम्पटी तहसील में मिला दिया गया। शिमला के नजदीक कुसुम्पटी, भराड़ी, संजौली, वाक्ना, भारी, काटो, रामपुर तथा पंजाब के नालागढ़ के सात गाँव जो पहले पंजाब में थे, पुनः हिमाचल प्रदेश की सोलन तहसील में शामिल किये गये। पंजाब के इन पहाड़ी क्षेत्रों को मिलाकर इसका क्षेत्रफल बढ़कर 55,673 वर्ग

किमी. हो गया। इसके बाद शुरू हुआ भिन्न-भिन्न राजनैतिक दलों से बनी 'पहाड़ी एकीकरण समिति' के ध्वज तले हिमाचल को पूर्ण राज्य का दर्जा दिलाने का अभियान, जिसका नेतृत्व डॉ. परमार ने किया। फिर जुलाई, 1970 में प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी ने हिमाचल को पूर्ण राज्य का दर्जा देने की घोषणा की और तदनंतर दिसंबर, 1970 को संसद ने इस आशय का बिल पारित कर दिया। फलतः हिमाचल प्रदेश को पूर्ण राज्य का दर्जा 25 जनवरी, 1971 को मिला। इसे हिमाचल प्रदेश राज्य अधिनियम 1971 के अंतर्गत 25 जून, 1971 को भारत का अठारहवाँ राज्य घोषित किया गया। अभी हिमाचल को उन्नति के कई सोपान चढ़ने शेष थे और डॉ. परमार अहर्निश इस लक्ष्य की प्राप्ति में एक कर्मयोगी की भांति पहले से भी अधिक सक्रियतापूर्वक निरंतर जुटे हुए थे। उन्होंने शीघ्र ही प्रदेशवासियों को अपनी प्रशासनिक दक्षता, क्षमता, दृढ़ इच्छाशक्ति और दूरदृष्टि का परिचय देना प्रारंभ कर दिया। उन्होंने 1 नवम्बर, 1972 को कांगड़ा जिले को विभाजित कर तीन नये जिले कांगड़ा, ऊना तथा हमीरपुर बना दिये और महासू जिले को विभाजित कर सोलन जिला बनाया।

किसी विचारक का यह कथन कि असाधारण व विलक्षण व्यक्तित्व के धनी भूतकाल की सच्ची धरोहर, वर्तमान के लाड़ले और भविष्य के द्रष्टा हुआ करते हैं, डॉ. यशवंत सिंह परमार पर सटीक बैठता है। उन्होंने मुख्यमंत्री का पदभार ग्रहण करते ही अपनी सर्वोच्च वरीयता में सड़क, बागबानी, वन-संपदा और पनबिजली को रखा। पर्वतीय क्षेत्रों के सीधे, सच्चे, सरलमना तथा प्रकृति की गोद में पले आमजन के प्रति डॉ. परमार की निष्ठा, लगन, समर्पण और सेवाभाव इतना उच्चस्तरीय था कि तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी भी अभिभूत होकर कह उठी थीं- ''डॉ. परमार की हिमाचल और पहाड़ी लोगों के लिए चिंतित एक समर्पण की कहानी भी है और यह दूसरों के लिए एक प्रेरणादायक उदाहरण भी है।'' डॉ. यशवंत सिंह परमार आयुपर्यंत सदैव निजी स्वार्थों से ऊपर उठकर दूसरों के लिए संघर्ष करते रहे, उन्होंने 'अपने तथा अपनों' की स्वार्थपूर्ति के लिए कभी नहीं सोचा। इसका प्रमाण रहा, उनके अपने घर-गाँव जाने का ऊबड़ खाबड़ रास्ता और खंडहर में तब्दील होता उनका अपना घर। जिसे देखकर एक बार विधायक जालिमसिंह ने उसे ठीक करवाने की बात कही, तो डॉ. परमार ने उत्तर दिया- ''जितना वेतन मिलता है, उतने में गुजारा करता हूँ, मकान की मरम्मत कहाँ से करवाऊँ।'' वर्ष 1966 के अंतिम दो-तीन महीने देश में भारी राजनैतिक उथल-पुथल के थे और इसी से प्रभावित होकर डॉ. परमार ने अकस्मात 24 जनवरी, 1977 को मुख्यमंत्री पद से त्यागपत्र दे दिया। तब इसका रहस्य कोई नहीं समझ पाया।

अप्रैल 1948 में केवल 27,018 वर्ग किमी. वाले हिमाचल को दोगुने से भी अधिक 55,673 वर्ग किमी. वाले शुद्ध तथा एकीकृत पर्वतीय राज्य के रूप में सुदृढ़ बनाकर अपने सक्रिय राजनैतिक जीवन का पटाक्षेप करने वाले डॉ. यशवंतसिंह परमार को समस्त हिमाचलवासी आज भी बड़ी श्रद्धा तथा आदरपूर्वक 'हिमाचल का निर्माता' मानते हैं। यदि हिमाचल के गठन से लेकर इसकी उन्नति की कहीं चर्चा हो तो डॉ. परमार की सूझबूझ तथा कुशल नेतृत्व का उल्लेख सहज आ जाता है। डॉ. यशवंत सिंह परमार का व्यक्तित्व बहुमुखी प्रतिभा का प्रत्यक्ष प्रमाण था। यद्यपि उन्होंने हिमाचल को केन्द्र में रखते हुए अनेक पुस्तकें लिखीं लेकिन 1944 में उनके लखनऊ विवि. से पी.एचडी. के शोध प्रबंध 'हिमालय में बहुपति प्रथा की सामाजिक एवं आर्थिक पृष्ठभूमि' के वृहत्तर स्वरूप-'पोलिएण्ड्री इन हिमालयाज' को अत्यधिक सराहना मिली। इसके अतिरिक्त उनकी 'स्ट्रेटेजी फॉर डेवलेपमेंट ऑफ हिल एरियाज' को हिमालयी विकास की दृष्टि से मील का पत्थर माना जाता है। हिमाचल विश्वविद्यालय के प्रथम कुलपति रहे डॉ. आरके. सिंह 45 वर्षों तक डॉ. परमार के घनिष्ठ मित्र रहे, उनका कहना था- ''डॉ. परमार कभी समृद्ध नहीं रहे। वे 18 वर्ष तक मुख्यमंत्री तथा 8 साल तक प्रदेश कांग्रेस कमेटी अध्यक्ष रहे, परंतु उन्होंने कभी अपने पद का दुरुपयोग नहीं किया। उन्होंने अपने किसी पुत्र, पुत्री या बहुओं तथा सम्बंधियों को तनिक भी लाभ उठाने की परंपरा नहीं डाली। वे स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद ऐसे दुर्लभ राजनेता थे जिन्होंने निर्धनता को चुना।'' वर्तमान समय में देश-दुनिया में ऐसा एक भी राजनैतिक नेता आपको ढूंढे नहीं मिलेगा जिसने राजनीति को अपनी स्वार्थपूर्ति का साधन न बना लिया हो, परन्तु 2 मई, 1981 के दिन हिमाचलवासियों के लिए अपनी ईमानदारी, लगन, निष्ठा, अथक परिश्रम और पवित्र सेवाभाव से एकत्र की हुई अकूत सार्वजनिक विरासत छोड़कर इस दुनिया को अलविदा कहने वाले डॉ. परमार के बैंक खाते में मात्र 563 रु 30 पैसे थे। अपने जीवनकाल में उन्होंने हिमाचल को एकीकृत करने, सजाने-सँवारने और उन्नत करने की दिशा में जो भी प्रयत्न किये, उनकी प्रशंसा न केवल हिमाचल में बल्कि सारे भारत में हुई। यह उनके सेवाभाव, कर्मनिष्ठा, लगन, तप-त्याग तथा ईमानदारी की मिसाल है।

राष्ट्रीय पुनर्निर्माण के कार्य में पर्वतीय क्षेत्रों के योगदान पर जब भी कहीं विचार होता है तो हिमाचल की भूमिका रेखांकित होती है जिसका सारा श्रेय डॉ. परमार को जाता है क्योंकि यह कैसे हो सकता है कि केवल शरीर की बात हो और प्राण की ओर ध्यान न जाये। यह सत्य है कि डॉ. परमार के प्राण हिमाचल के आमजन में बसते थे और हिमाचल की जनता के मन-प्राणों में आज भी बसते हैं-अपना यशवर्द्धन करने वाले डॉ. यशवंत सिंह परमार।

देवभूमि के इस अनन्य तथा सरलहृदय तपस्वी को प्रणाम।

संजयनगर-3, बिन्दुखत्ता, पो-लालकुआं
जनपद-नैनीताल (उत्तराखण्ड) 262402

आलेख

अंधेरे में निहित जीवन के विविध आयाम

◆ डॉ. सत्यनारायण स्नेही

श्रीनिवास श्रीकान्त हिमाचल की हिन्दी कविता में एक ऐसा नाम हैं जो इस भूखण्ड में लिखी जा रही कविता के प्रारम्भिक काल से आज तक लगातार सृजनरत हैं। श्रीनिवास श्रीकान्त की कविता यात्रा सन् 1975 में 'नियति इतिहास और जरायु' के प्रकाशन से आरम्भ होती है जो 'बात करती हवा', 'घर एक यात्रा', 'हर तरफ समन्दर है', 'चट्टान पर लड़की' और सन् 2014 में 'आदमी की दुनिया का दिन' के प्रकाशन के साथ विभिन्न पड़ावों को पार करते हुए निरन्तर आगे बढ़ रही है।

कविवर मुक्तिबोध की पंक्तियां हैं- मुझे कदम-कदम पर/ चौराहे मिलते हैं बांहें फैलाये/ एक पैर रखता हूं/ कि सौ राहें फूटतीं हैं/ मैं उन सब पर से गुज़रना चाहता हूं। एक कवि के लिए इस संसार में कविता के दरवाजे हमेशा खुले रहते हैं। कविता की विषय वस्तु की कोई अन्तिम परिधि नहीं है। वह अनंतिम है। उसकी बांहे सब कुछ समेट लेने के लिए खुली हुई हैं- मनुष्य का गुस्सा, उसका प्रेम, उसके स्वप्न, उसकी भूख-प्यास, नींद-थकान, उसका साहस और संघर्ष सब कुछ यहां दर्ज होता चलता है। एकान्त श्रीवास्तव के शब्दों में आधुनिक विकास की चकाचौंध में मनुष्य-साधारण मनुष्य-भौतिक और नैतिक दोनों दृष्टियों से विपन्न होता चला गया है। मनुष्य और समाज के विकास का यह अन्तर्विरोध सम्भवतः आज की कविता का केन्द्रीय विषय है।[1]श्रीनिवास श्रीकान्त की कविताएं काव्य-जगत् के विस्तृत-फलक और मनुष्य के अन्तर्विरोध की परिणति है जिसमें रचनाकार की अभिव्यंजना मानवीय परिवेश के अवमूल्यन, ब्रहमाण्डीय शक्तियों के प्रति उसकी जवाबदेही और रहस्यमय गूढ़ तत्वों के प्रति उसकी चिंताएं रेखांकित की गई हैं। 'आदमी की दुनिया का दिन' संग्रह की प्रतिनिधि कविता है 'अंधेरे' जिसमें कवि ने समकालीन जीवन के विविध आयामों को 10 खण्डो में रेखांकित किया है। कविता का पहला अंश है -

फैला सब ओर आदिम अंधेरा
वह है दिगम्बर अनन्त और रहस्यमय
अन्तरिक्ष के सभी आसमानों में तहाया हुआ
उसकी ही छाती पर रची गई
ब्रह्मा की सृष्टि[2]

आम आदमी के लिए अंधेरा होने का मतलब है रात होना, दिन-भर की थकावट के बाद विश्राम करना सो जाना गहरी नींद में। लेकिन कवि के मत में रोशनी का महत्व तभी है, जब अंधेरा है। इस समग्र सृष्टि का सृजन अंधेरे का प्रतिफल है। इस संसार में जितनी भी बड़ी-बड़ी घटनाएं हुई हैं, मानव के इतिहास में जिसका उल्लेख किया जाता है, उसका सारा ताना-बाना अंधेरे में बुना गया है। रोशनी में वही परिलक्षित होता है, वही चमकता है जिसकी बुनियाद अंधेरे में रखी जाती है। उपनिषदों में जहां 'तमसो मां ज्योतिर्गमय' का उल्लेख किया गया है उससे हट कर कवि रोशनी की परिकल्पना का मूल आधार अंधेरे को मानता है। कवि के शब्दों में-

रौशनी है उसकी अदम्य शक्ति
जिसे वह देख सकता है
आदमी की दुनिया में गहरे
बहुत गहरे
और अन्दर तक[3]

इसमें कोई दो राय नहीं कि मनुष्य जीवन का आधा समय अंधेरे में गुजरता है, अर्थात् दिन और रात प्रकृति का नियम है। वास्तविकता ये है कि आदमी के दिन भर की समग्र गतिविधियों का खाका अंधेरे में ही बुना जाता है। आदमी अंधेरे में ही अपने आपको महसूस करता है, चिंतन करता है। हर आदमी के भीतर अंधेरा है जिसमें चेतना है, आदमी अपनी अस्मिता, अस्तित्व और अपने होने का अहसास अंधेरे में ही करता है। यथा -

अंधेरे में होता आदमी
अपने से रूबरू वह है एक तिलस्मी आईना
जिसमें वह देख सकता है
अपना प्रतिबिम्ब
आदमी है अंधेरे में अपने वजूद को महसूस करता हुआ
एक जीव[4]

कवि आगे कहता है-

एकाकीपन में भी अंधेरा
हमें देता है सुकून
किये-अनकिए के सुख-दुख सा
वह हरकत करता हृदय में उतर कर[5]

समूचे परिवेश में अंधेरा प्रकृति का संतुलन बनाए रखता है। वह निर्विकार, निराकार सारे वातावरण में समाया हुआ है। अपने बहुरूप में मौजूद अंधेरा सभी जीव-जन्तुओं को आराम और राहत प्रदान करता है। मनुष्य से लेकर पशु-पक्षियों तक अधिकांश जीव ऐसे हैं, जो रोशनी में लगातार गतिमान रहते हैं और अंधेरे में ही विश्राम करते हैं।

अंधेरा कविता के खण्ड चार में कवि संकेत करता है कि महानगरीय जीवन की समग्र कार्य विधियां अंधेरे में ही तैयार की जाती है, वह चाहे कम्प्यूटर और टैक्नोलॉजी द्वारा नेटवर्किंग है, चाहे रेवपार्टी, डिनरपार्टी में सुनियोजित ढंग से रची जा रही साजिश या षड्यन्त्र हो। जितनी भी योजनाएं क्रियान्वित होती हैं वह चाहे राजनीतिक हों या व्यावसायिक उसका खाका अंधेरे में ही तैयार किया जाता है-

कैसे बनाया है यह महानगर
अंधे मानवीय इतिहास के योजनाकारों ने
भाग रहे सब बेहतर
नींद के स्वापक अंधेरे में
भाग रहे लगातार
फरेबी सड़कों, राजमार्गों पर
मायावी भौतिक वस्तुएं फैलाती हैं
अपने सम्मोहन का जाल
अंधेरा बराबर पीछा कर रहा
इस नए आदमी का जो बन गया है
अब यंत्रवत पशु'[6]

देश के विकास एवं संचालन की सभी योजनाएं सरकार और संसद द्वारा बनाई जाती हैं। जो रूप सामने आता है वह चाहे संसद या विधानसभा का हो या राजनेताओं के कारनामे, ऐशोआराम या जनता के समक्ष उनका तथाकथित सेवा रूप, उसकी पूरी रूपरेखा पर्दे के पीछे अंधेरे की आगोश में घड़ी जाती हैं। वर्तमान राजनीतिक तंत्र में तभी तो एक कहावत प्रचलित है कि राजनेता जैसे दिखते हैं वैसे होते नहीं हैं। संदर्भ में यह कवितांश अवलोकनीय हैं-

उनके पास है अंधेरे के सांचे
अंधेरे के खांचे
वे बना रहे उजाले के भौतिक शहर
अंधेरे के ईंट गारे से
बना रहे अंधेरे फ्लाइओवर
और तरक्की के लिए अंधेरे की सीढ़ियां
भूमिगत मंत्रणा गृह भी है उनके पास
जहां है नीम बाज अंधेरा[7]

सर्वव्यापक अंधेरा वहां भी है, जहां बड़े-बड़े महानगरों में चौंधियाती रोशनी में बहुराष्ट्रीय कम्पनियों ने पूरे उपभोक्ता संसार को अपनी चपेट में ले लिया है।

जहां दुनिया भर के बाज़ार हीरों की चमक बिखेर रहे हैं। टैक्नोलॉजी के चरमोत्कर्ष ने विपणन के तौर-तरीके बदल दिये हैं। आदमी इस चकाचौंध में अपनी अस्मिता को भूलकर मायावी दुनिया में भटक रहा है। कवि कहता है -

वहां भी है अंधेरा
जहां सीमेण्ट, कंकरीट और अटूट कांच की
बहुमंजिला पूंजी कम्पनियों में
देश के युवा में धाएं दिन-रात कर रहीं
ब्राण्डेड वस्तुओं का विनिमय[8]

देश के विकास की सारी योजनाओं के क्रियान्वयन का प्रारूप तैयार होता है प्रशासनिक स्तर पर। सभी विभागों के कार्यालयों में विकास कार्यों के प्रारूप तैयार कर फाईलों के ढेर लगे हैं। एक हस्ताक्षर बदल देता है व्यवस्था का स्वरूप। सरकारी कार्यालयों के अंधेरे में बनते-बिगड़ते हैं क्रियान्वयन के समीकरण। जिसमें देखा जा सकता है छद्म प्रजातंत्र का सारा कथावृत सरकारी भ्रष्टाचार का सम्पूर्ण महाकाव्य लिखा जाता है इसी अंधेरे में -

कागज़ों पर रचा जा रहा
देश की बबुआ संस्कृति का इतिहास
फाईलों की हरी-टिप्पणियों में
लगातार दर्ज हो रहीं
शासन और प्रशासन की
बुर्जुआ तफसीलें[9]

श्रीनिवास कवि के लिए अंधेरा धरती पर मानवीय और मानवेतर समग्र गतिविधियों में तो व्याप्त है ही, ब्रहमाण्ड में भी अंधेरा पूर्ण रूप से छाया हुआ है। अन्तरिक्ष के अन्वेषण में जितने भी अनुसंधान किये जा रहे हैं स्काई स्केप अंधेरे में ही तैयार हो रहा है। विज्ञान और तकनीक की रोशनी में उसका विश्लेषण किया जा रहा है।

पृथ्वी पर मनाया जाएगा मंगल
एक नये आदमी की दुनिया में
बौना खोल रहा आसमान की परतें
अंधेरे में गाहें हैं उसने

सौर मण्डल के कुछ बेहतरीन
स्काईस्केप
देखे हैं चन्द्रमा, मंगल
लिये पीताम्बर बृहस्पति के
कुछ नायाब चित्र [10]

अंधेरे के खगोलीय अनुभव के बाद नवें खण्ड में कवि स्वीकार करता है कि मानव की चिन्ता और चिन्तन का आधार अंधेरा है। अंधकार में जब कुछ भी नजर नहीं आता, आदमी तभी सोचता है अपने बारे में, महसूस करता है अपने आपको। उजाला उसे उलझाए रखता है रंग-बिरंगी दुनिया में। मानव मस्तिष्क से जितने भी उदात विचार और ख्याल निकलते हैं वह अंधेरे का ही परिणाम है। जीवन के गहन रहस्य की पहचान आदमी अंधेरे में ही करता है। नींद, सपने, स्मृतियों और आराम के साथ हर सुबह जिंदगी को फिर से आरम्भ करने का साहस अंधेरा ही देता है, कविता की ये बानगी द्रष्टव्य है-

अंधेरे में रहता हूं
इस लिए सुखी हूं
सुख सांसारिक नहीं
अंधेरे की तरह अनमिट है।
जो सदा उजाले में जीते हैं
अंधेरे को नहीं देख सकते
न अनुभव कर सकते हैं
उसकी बहुधा खुबियां
अंधेरा उसे देता है
गहन चिन्तन का समय
अंधेरा है जीवन का एहसास
मृत्यु का अभुक्त डर
वह है जीवन का आद्य
वह है जीवन का अंत [11]

अंधेरे के आखिरी खण्ड में कवि सांय काल के उस बिम्ब को उभारते हैं जब सूर्यास्त के उपरान्त आहिस्ता-आहिस्ता प्रकृति अदृश्य हो जाती है चंहू ओर अंधेरा छा जाता है। प्रकृति का ये नियम है उजाले के बाद अंधेरा और अंधेरे के बाद ही उजाला होगा। जो लोग रोशनी में रहते हैं वह अंधेरे को महसूस नहीं कर पाते, पर जो अंधेरे में अपने आप को पहचानते हैं उन्हें बाह्य रोशनी की आवश्यकता नहीं होती।

वास्तव में यह कवि श्रीनिवास श्रीकांत की बहुआयामी वैचारिकता का ही परिणाम है और उनके कवित्व की उत्कृष्टता कि इस धरती से अन्तरिक्ष तक व्याप्त अंधेरे को मानवीय धरातल पर रेखांकित किया है। मनुष्य जीवन की समग्रता में छाये इस अंधेरे का इतनी विविधता के साथ चित्रण करना, कवि की सुदीर्घ काव्य-यात्रा का परिचायक है एक व्यक्ति के अन्तःकरण से लेकर देश-दुनिया और ब्रह्माण्ड तक के अनुभवों और प्रतिक्रियाओं को कवि ने अपनी कविताओं में बानगी दी है। श्रीनिवास की कविता-यात्रा की एक विशिष्टता रही है, विषय की विविधता। इनकी कविताओं में वर्ण्य विषय का अदभुत विस्तार हुआ। उसमें अपार वैविध्य और व्यापकत्व आया है। आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने 'कवि कर्तव्य' निबन्ध में लिखा है कि चींटी से लेकर हाथी पर्यन्त पशु, भिक्षुक से लेकर राजा पर्यन्त मनुष्य बिन्दु से लेकर समुद्र पर्यन्त जल, अनन्त आकाश, अनन्त पृथ्वी, अनन्त पर्वत, सभी पर कविता हो सकती है।[12] इस कवि ने द्विवेदी के इस कथन को चरितार्थ किया है। इनकी कविताओं में जीवन और जगत के सभी दृश्य कविता के विषय बने हैं। श्रीनिवास श्रीकांत हिन्दी कविता के उन कतिपय कवियों में से एक कवि हैं जो एक विषय के अन्दर कई विषय बना देते हैं और अनेक विषय को एक विषय-वस्तु में समा देते हैं। कवि की 'अंधेरा' कविता इसका जीवन्त उदाहरण है। जिसके माध्यम से श्रीनिवास श्रीकान्त के कविता संसार की व्यापकता का अन्दाजा सहजता से लगाया जा सकता है।

विभागाध्यक्ष हिन्दी, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय
रामपुर बुशहर, जिला शिमला, हि. प्र.-171201

संदर्भ :-

1 एकांत श्रीवास्तव, कविता का आत्मपक्ष, पृ. 12
2 श्रीनिवास श्रीकांत, आदमी की दुनिया का दिन, पृ. 9
3 वही, पृ. 11
4 वही, पृ. 12
5 वही, पृ. 13
6 वही, पृ. 15-16
7 वही, पृ. 16
8 वही, पृ. 18
9 वही, पृ. 20
10 वही, पृ. 22
11 वही, पृ. 24
12 नगेन्द्र (सं), हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृ. 634

आलेख

हिंदी सिनेमा में साहित्य समायोजन

◆ डॉ. देवकन्या ठाकुर

दुनियाभर में फिल्मकारों ने महान साहित्यकारों के साहित्य से प्रेरित होकर कई बेहतरीन फिल्में बनाई हैं। हमारे देश में फिल्म उद्योग जितना पुराना है उतना ही पुराना है पुस्तकों से प्रेरित होकर फिल्मों के निर्माण का इतिहास। भारतीय सिनेमा शेक्सपीयर, शरतचंद्र चट्टोपाध्याय, रविन्द्रनाथ टैगोर तथा बकिंम चैटर्जी से लेकर रूस्किन बाण्ड तक के साहित्य से प्रेरित रहा है। यहां तक कि भारत की पहली मूक फीचर फिल्म 'राजा हरीशचन्द्र' पौराणिक ग्रंथ से प्रेरित फिल्म थी। तब से लेकर आज तक भारतीय सिनेमा में कई फिल्में पौराणिक व अन्य ग्रन्थों एवं साहित्य से प्रेरणा लेकर बनीं हैं। फिल्म का स्क्रीनप्ले लेखन और किसी पुस्तक/किताब को लिखने में बहुत अन्तर है। फिर भी कुछ फिल्मकार हैं जिन्होंने पुस्तक प्रेमियों और सिनेमा के चाहने वालों को एक ही प्लेटफॉर्म पर लाने की सफल कोशिश की है।

किसी उपन्यास को दो-तीन घण्टे की फिल्म में रूपांतरित करना अपने आप में जोखिम भरी चुनौती है। कई बार निर्धारित समय-सीमा में कहानी को समायोजित करने में अगर चूक हो जाए तो कहानी की मौलिकता में गड़बड़ी हो सकती है और बहुत जल्दी अच्छी कहानी पर बनी फिल्म फ्लॉप हो सकती है। अधिकतर को तो उपन्यास पढ़ने से ज्यादा आसान और रुचिकर उस पर आधारित बनी फिल्म को देखना लगता है। लेकिन उस कहानी को स्पेस, टाईम और फिल्म की निरन्तरता में समायोजत करना एक फिल्मकार या निदेशक के लिए चुनौतीपूर्ण कार्य होता है।

अगर वह उसमें सफल हो जाता है तो वह ऐतिहासिक फिल्म बनती है। साहित्य से सिनेमा में रूपान्तरित कई बेहतरीन फिल्मों में से 'स्लमडॉग मिलिनेयर' भारतीय पृष्ठभूमि पर लिखे विकास के स्वरूप के उपन्यास ' फ ो' ने ऑस्कर जीता था। हालांकि फिल्म के लेखक ने स्क्रीनप्ले में मौलिक रचना में कई बड़े बदलाव किए थे। वर्ष 2002 में बुकर प्राइज से सम्मानित पेन मार्टल का उपन्यास 'लाइफ ऑफ पाई' पर अमेरिकन निदेशक एंग ली ने इसी नाम से फिल्म बनाई जिसे एकेडमी अवॉर्ड से सम्मानित किया गया। इस फिल्म में मुख्य भूमिका भारतीय कलाकार सूरज शर्मा, इरफान पठान और तब्बू ने निभाई थी। यहां तक कि स्वतन्त्र फिल्मकार मीरा नायर ने भी उपन्यास पर आधारित फिल्में बनाई और उनकी फिल्में दुनियाभर में सराही गईं। मीरा नायर ने इंडियन-अमेरिकन लेखिका झुम्पा लहरी के पहले उपन्यास 'द नेमसेक' पर इसी नाम से फिल्म बनाई। यह एक ऐसे बंगाली दम्पत्ति की कहानी है जो अमेरिका के लाइफ स्टॉइल से सामंजस्य बिठाने के लिए संघर्ष करते हैं। इस फिल्म में मुख्य भूमिका तब्बू और इरफान खान ने निभाई थी। दीपा महता की 'मिड नाइट चिल्डरन', सलमान रुशदी के ऐतिहासिक उपन्यास 'सीक्रेट डॉटर' से रूपांतरित फिल्म है। यह उपन्यास मुम्बई और सेनफ्रेंसिस्को में रहने वाले दो परिवारों की कहानी है जो विभिन्न सांस्कृतिक पृष्टभूमि से सम्बंध रखते हैं। भारतीय पृष्ठ भूमि पर लिखे उपन्यासों पर आधारित इन फिल्मों ने अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर ख्याति हासिल की। अगर हम भारतीय सिनेमा की बात करें तो कई फिल्मकारों ने साहित्य से प्रेरित होकर अनेक ब्लॉकबस्टर फिल्में बनाईं हैं।

महान फिल्मकार सत्यजीत रे की पाथेर पंचाली, अपूर संसार, शतरंज के खिलाड़ी और गुलशन नंदा की कटी पतंग, नील कमल, खिलौना, शर्मीली ऐसी फिल्में है जो साहित्य से रूपातंरित हैं। 1962 में गुरुदत्त की फिल्म 'साहिब बीबी और गुलाम' बंगाली लेखक विमल मित्र के उपन्यास पर आधारित सफल फिल्म थी। यह फिल्म हिन्दी सिनेमा के इतिहास की बेहतरीन एवं क्लासिक फिल्मों में गिनी जाती है।

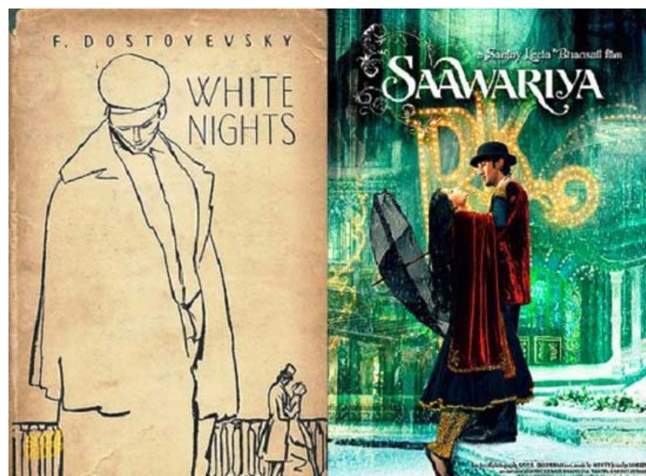
ऐ.जे. क्रोनिन के उपन्यास 'द सिटाडेल' पर बनी फिल्म 'तेरे मेरे सपने', विजय आनन्द द्वारा निर्देशित सफल फिल्म थी। मेडिकल ऐथिक्स (नीति) पर आधारित इस फिल्म में मुख्य भूमिका में देवानन्द और मुमताज थे। 'याद है मैं नशा करता हूं, नशे में याद करता हूं', यह डायलॉग उस जमाने में दर्शकों की जुबां पर चढ़ गया था। मुंशी प्रेमचन्द के उपन्यास 'शतरंज के खिलाड़ी' पर इसी नाम से सत्यजीत रे ने मास्टरपीस बनाया।

लखनऊ की तवायफों पर आधारित 'उमराव जान' को जो सफलता और शौहरत मिली वह बालीवुड में आज भी याद की जाती है। इस फिल्म की मुख्य नायिका रेखा को जब बड़े पर्दे पर देखा तो दर्शकों ने उन्हें सिर आंखों पर बिठा लिया। पदम विभूषण से सम्मानित आर. के. नारायण ने दुनिया को न केवल मालगुड़ी

शहर अपनी लेखनी के जरिए दिया बल्कि 'गाइड' जैसा क्लासिक उपन्यास भी उन्होंने अपने पाठकों को दिया। इस उपन्यास पर बनी फिल्म गाइड में देवानन्द और वहीदा रहमान ने अपने समय से पहले ही आज के ज्वलंत विषय को बड़े परदे पर जीवन्त कर दिया। एक विवाहित स्त्री का एक गाइड से प्रेम, फिर उस गाइड का जेल जाना और उसको आत्म-ज्ञान होना निश्चय ही साहित्य की बेहतरीन रचना को दर्शकों के समक्ष प्रस्तुत करना निश्चय ही चुनौती पूर्ण कार्य था।

वर्ष 2004 में अमृता प्रितम के उपन्यास 'पिंजर' पर डायरेक्टर चन्द्र प्रकाश द्विवेद्वी ने इसी नाम से फिल्म बनाई। भारत विभाजन के दौरान हिन्दु मुस्लिम साम्प्रदायिकता पर बनी इस फिल्म में उर्मिला मातोंडकर, मनोज वाजपेयी और संजय सूरी ने मुख्य भूमिका निभाई थी। वर्ष 1950 में लिखे उपन्यास पिंजर पर वर्ष 1959 में पाकिस्तान में भी पंजाबी फिल्म 'करतार सिंह' बनी थी। साहित्य अकादमी से सम्मानित पिंजर उपन्यास पर इसी नाम से बनी फिल्म को राष्ट्रीय पुरस्कार से भी सम्मानित किया जा चुका है। वर्ष 2006 में बनी फिल्म ओंकारा का लंगड़ा त्यागी और केशुभाई दर्शकों को खूब भाया। नेगेटिव रोल में सैफ अली खान को इस फिल्म में काफी सराहा गया था।

शेक्सपियर के 17वीं शताब्दी में लिखे नाटक 'ओथेलो' से प्रेरित यह फिल्म विशाल भारद्वाज द्वारा निर्देशित थी। विशाल भारद्वाज द्वारा निर्देशित एक अन्य फिल्म 'हैदर' विलियम शेक्सपियर के नाटक 'हेमलेट' का रुपांतरण थी। शेक्सपियर के ही एक अन्य नाटक मैकबेथ पर आधारित मकबूल फिल्म विशाल भारद्वाज ने बनाई। इस फिल्म में तब्बू, शाहिद कपूर और श्रद्धा कपूर ने मुख्य भूमिकाएं निभाईं थी। इन फिल्मों की सफलता सिनेमा में साहित्य के समायोजन को एक सफल प्रयोग साबित करती हैं। 'औ हैनरी' की कहानी 'द लस्ट लीफ' पर बनी फिल्म 'लुटेरा' में रणवीर कपूर और सोनाक्षी सिन्हा ने मुख्य भूमिकांए निभाईं थी। विक्रम आदित्य मोटवानी की यह फिल्म काफी सराही गई थी। वर्ष 1914 में शरतचन्द्र चट्टोपाध्याय के बंगाली उपन्यास परिणिता पर प्रदीप सरकार के निर्देशन में बनी सैफ अली खान और विद्या बालन की भूमिकाओं में सफल फिल्म बनी। शरतचन्द्र चट्टोपाध्याय के क्लासिक उपन्यास 'देवदास' पर अलग-अलग समय में अनेक फिल्में बनीं। 1935 में पी.सी.वस्य ने देवदास बनाई। इसके बाद 1955 में विमल रॉय ने भी देवदास बनाई। फिर संजय लीला भंसाली ने माधुरी दीक्षित, ऐश्वर्या राय और शारुख खान को लेकर देवदास बनाई। और इन सब में देवदास से प्रेरित आधुनिक रुपांतरण 'देवडी' के रूप में सामने आया। मसूरी में रहने वाले लेखक रुस्किन बांड को कौन नहीं जानता। 'सात खून माफ' और ब्लू अंबरेला' फिल्में उनके उपन्यास पर आधारित हैं। रुस्किन बांड के ही एक अन्य उपन्यास 'ए फाइट फॉर पीजियन' पर आधारित वर्ष 1978 में श्याम बेनेगल ने जुनून फिल्म बनाई। भारत में वर्तमान में युवाओं के सबसे पसंदीदा लेखक चेतन भगत के उपन्यास 'वन नाइट एट कॉल सेन्टर' पर हैलो, फाइव पवाइंट समवन उपन्यास पर थ्री इडियट, थ्री मिस्टेक आफ माई लाइफ पर 'काई पोचे' और 'द स्टोरी आफ माई मैरिज' पर आधारित 'टू स्ट्टेस' ब्लॉकबर्स्ट' साबित हुई। हिन्दी सिनेमा की कई अन्य सफल फिल्में साहित्य से रूपांतरित हुई हैं। अगर हम क्षेत्रीय सिनेमा की बात करें तो बंगाल का साहित्य यूं भी बहुत समृद्ध है जिसने बंगाली सिनेमा को भी समृद्ध किया है। अगर हम रविन्द्रनाथ टैगोर की बात करें तो उनके साहित्य पर कई बड़े डायरेक्टरों ने फिल्में बनाई। 'घरे बाहिरे, चोखरे बाली, चारुलता, उपहार, काबुलिवाला, अतिथि, डाकघर, मिलन, चतुरंग और 'लेकिन' जैसी कई फिल्में रविन्द्रनाथ टैगोर के साहित्य से रूपांतरित की गई हैं। बंगाली डायरेक्टर रितुपर्णा घोष की फिल्म चाखेरे वाली में ऐश्वर्या राय ने अपने बालीवुड के ग्लैमरस रोल से हटकर एक बंगाली विधवा स्त्री का किरदार निभाया है। सत्यजी रे निर्देशित 'चारुलता' बंगाली सिनेमा की बेहतरीन क्लासिकल फिल्म में गिनी जाती है और कई फिल्म संस्थानों की फिल्म स्टडी में चारूलता पढ़ाई जा रही है। मराठी, मलयाली, तेलगु और तमिल सिनेमा भी अपने साहित्य से प्रेरित रहा है। इसी तरह अगर हम पंजाबी सिनेमा की बात करें तो वर्ष 2011 में पंजाबी डायरेक्टर गुरिन्दर सिंह की 'अन्हे घोड़े दा दान' नेशनल फिल्म डवेल्पमेंट कारपोरेशन द्वारा प्रोडयूस की गई। इस फिल्म को राष्ट्रीय पुरस्कार से भी सम्मानित किया गया और यह फिल्म पंजाबी लेखक गुरदयाल सिंह के उपन्यास पर आधारित थी।



अगर हम हिमाचल के साहित्य की बात करें तो वर्ष 1915 में पंडित चन्द्रधर शर्मा गुलेरी की कहानी 'उसने कहा था' सरस्वती पत्रिका में प्रकाशित हुई थी। इस कहानी पर डायरेक्टर मोनी भट्टाचार्य ने वर्ष

कविता

अब कोई चिट्ठी आए

◆ तेज राम शर्मा

चिट्ठी
दूर देश से चलते हुए
रेल की कूक के साथ-साथ
सपनों में देती थी दस्तक
रात दिन तेज रफ्तार लिए
फिसलती थी चट्टानों पर
ऊंचाइयां पर हांफती
घने जंगलों गहरी खाइयों में
मछली कांटे जैसी झाड़ियों की रक्तिम खरोंच लिए
घुप अंधेरे समय में
लालटेन की रोशनी चलती थी उसके साथ
साथ चलता भाले पर घुंघरुओं का संगीत
नए इंद्रधनुषी सपने
और तार सप्तकों की लय के साथ
रोशनी लिए आती थी तुम तक

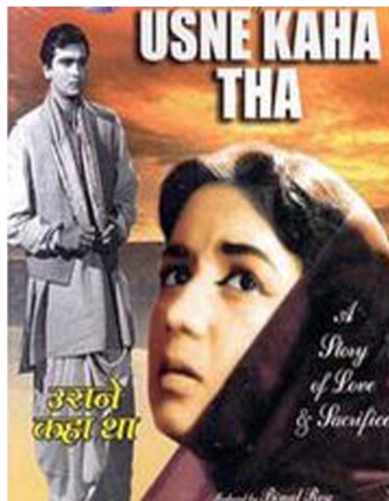
चिट्ठीरसाँ के बैग में
सुनाई देती थी खिलखिलाहट
कहीं लज्जाई लाली की आभा
झलकती थी घूंघट से
आंखों से ओस-सी नमी
कहीं अमावस में जल उठते थे दीपक
और जब छाती पीटने की दहाड़ सुनाई देती थी
तो नीचा सिर किए
अपनी राह चल देता था चिट्ठीरसाँ

सिरहाने के नीचे
चिट्ठी की सिलवटें
कभी रेत की सिलवटों की तरह
खो जाती थीं मरुस्थल में
कहीं शांत नदी की
सिलवटों-सी देती रहती थी थपकियां
मनोहर सपनों में

दूर सीमा से मां
के नाम आती थी
उसकी चिट्ठी
देश के नाम
आती थी उसकी लाश।

**श्रीरामकृष्ण भवन, अनाडेल, शिमला,
हिमाचल प्रदेश-171 003, मो. 0 94180 73611**

1960 में सुनील दत्त और नंदा को लेकर इसी नाम से फिल्म बनाई थी। अमृतसर की पृष्टभूमि पर लिखी गई यह कहानी लोकप्रिय थी और इस पर बनी फिल्म भी सफल रही थी। 'तेरी कुड़माई हो गई' का संवाद आज भी दर्शकों के जहन में फिल्म के दृश्यों को यादगार और अमृतसर की गलियों को जीवन्त बना देता है। हिमाचल में लोक साहित्य पर गिनी-चुनी फिल्में ही बनी हैं। क्षेत्रीय सिनेमा अभी तक भी यहां पनप नहीं पाया है। इसके लिए उदासीनता, दर्शकों का बॉलीवुड की ओर रुझान और क्षेत्रीय सिनेमा में प्रशिक्षित लोगों की कमी मुख्य कारण है। धर्मशाला के संजीव रत्न की पनचक्की लोक साहित्य से प्रेरित फिल्म है जिसे राष्ट्रीय पुरस्कार भी मिल चुका है। इसी तरह कुंजू-चंचलो फिल्म और इससे पहले दो-तीन और फिल्में लोक साहित्य से ही प्रेरित हैं। हाल ही में



प्रदर्शित पवन शर्मा की 'ब्रीणा', अजय सकलानी की सांझ और नठ भज में बेशक पृष्ठभूमि हिमाचल की है लेकिन यह बालीवुड की तर्ज पर बनी फिल्में हैं जो भविष्य में हिमाचल में क्षेत्रीय सिनेमा के उद्‌भव में अहम कड़ी साबित होंगी। हाल ही में मेरी (लेखिका) की फिल्म 'लाल होता दरख्त' भी आई जो कि हिमाचल के मशहूर लेखक एस आर हरनोट की कहानी पर आधारित है। यह कहानी हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय सहित देश के कई अन्य विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रमों में पढ़ाई जा रही है। वास्तव में हिमाचल में साहित्य और सिनेमा पर ज्यादा कुछ कहा नहीं जा सकता। बेशक यहां का साहित्य बहुत समृद्ध रहा है जिसमें सिनेमा को करने की बहुत सम्भावनांए हैं।

**एम.आई.जी. हाउस न.18 हाउसिंग बोर्ड कॉलोनी संजौली,
शिमला, हिमाचल प्रदेश-171 006**

शोध लेख

तीन चरित नायकों का अपूर्व संगम 'त्रिवेणी'

◆ प्रोमिला

लोक कथाओं को आज के समय और समाज से जोड़कर प्रस्तुत करने की कला में माहिर सुप्रसिद्ध विजयदान देथा का 'त्रिवेणी' उपन्यास पढ़ना, अनुभवों की नई दुनिया से गुज़रने की तरह है। त्रिवेणी में तीन उपन्यासिकाओं 'तीडाराव' 'इस्टूखाँ' और 'भगवान की मौत' का संकलन है। त्रिवेणी में तीन नायकों को माध्यम बनाकर कथा कही है। इन तीनों कथाओं को इस कदर प्रस्तुत किया गया है कि वे तीन कथानक भी हैं और व्यक्तित्त्व के तीन रूप भी। तीनों कथाओं के तीनों चरित नायक संयोगों के हिचकोले खाते हैं। 'तीडाराव' और 'भगवान की मौत' के चरित नायक के नाम भी एक ही हैं और उनके साथ घटित संयोग भी एक समान हैं। नाम व संयोग एक समान होने के बावजूद भी दोनों चरित नायकों में ज़मीन-आसमान का फ़र्क है। जिस प्रकार संसार के मनुष्यों में भगवान के दिए हुए अवयवों जैसे नाक, कान, आँख इत्यादि के समान होते हुए भी कोई ऐसा अन्तर अवश्य होता है जो एक मनुष्य को अन्य से अलग करता है। 'इस्टूखाँ' का चरित नायक इस्टूखाँ तो खुद जिन्दगी गढ़ता है। उसके घटित संयोग उसके लिए आफत को हरदम बुलावा देता हुआ नज़र आता है। संयोग तीनों के साथ घटित होता है परन्तु तीनों पात्रों की इन संयोगों के प्रति जो प्रतिक्रिया होती है वह इन सबको अर्थात् तीनों के चरित्र को अलग करती है। तीनों उपन्यासिकाओं का आधार संयोग है परन्तु 'तीडाराव' और 'भगवान की मौत' में संयोग के साथ अंधविश्वास भी जुड़ा हुआ है।

'तीडाराव' का तीडा परिहार व गरीब परिवार से सम्बन्ध रखता है। तीडा के पुरखे बेगार के साथ-साथ बेजा बुनने का कार्य करते हैं। तीडा रूपवान और श्रेठ भजनिया है। उसे कोई रैदास भगत और कोई रामदेव बाबा का अवतार मानते हैं। तीडा का पिता ठाकुर की घुड़साल से लीद उठाने का कार्य करता है। किसी कारणवश उसे मुर्गा बनाकर बेंते लगवाई जाती है। इससे तीडा आन्दोलित हो जाता है और भक्ति की ओट में अपने अस्तित्व को बचाने की चेष्टा करता है। उसके साथ अनजाने में कई ऐसे-ऐसे संयोग घटित होते हैं जो उसे चमत्कारी पुरुष साबित करते हैं।

एक बार वह अपने ससुराल जाता है तो उसके चमत्कारों की चर्चा वहाँ भी फैल जाती है। हालांकि वह बार-बार कहता रहता है कि, "मैं तो फकत अपने जी की शान्ति के लिए माला जपता हूँ,"[1] किन्तु अवसर आने पर उसका फायदा उठाने में भी उसे संकोच नहीं होता है। यहाँ तक कि वह अपना महत्त्व बनाए रखने के लिए झूठ और छल का सहारा भी लेता है। कुम्हार के खोए गधे का पता बताना, राजा के घर में चोरी हुए नौलखा हार को खोज निकालना, ठाकुर साहब के लोटे में बन्द टिड्डे के बारे में बता देना, बिना लड़े ही बुद्धि-बल से पड़ोसी राजा की सेना को पराजित कर देना और फिर वहाँ की राजकन्या से शादी। सब कुछ संयोगों पर निर्भर है, परन्तु माना जाता है तीडा का चमत्कार।

इन घटनाओं के होने-न-होने से उसका कोई सम्बन्ध नहीं है, न उसका कोई हाथ है, परन्तु उसके व्यवहार और वाणी के कारण इन सब के पीछे उसका चमत्कार ही माना जाता है। सुरेन्द्र तिवारी के शब्दों में, "तीडा का चरित्र अनायास ही आज के बाबाओं, संतों की याद दिला देता है, जो झूठे चमत्कारों के बल पर समाज और सत्ता पर प्रभाव जमाए बैठे हैं और अपने आपको 'भगवान' घोषित कर चुके हैं।"[2] तीडाराव का चरित्र दुहरे व्यक्तित्व जीने वाले और अपनी महानता का दम्भ भरने वाले स्वार्थी लोगों की कलई खोलकर उनकी कुत्सित ऐषणाओं और उनके छल प्रपंच को उद्घाटित करता है। ऐसे चरित्रों को उभारने के लिए ही शायद तीडाराव को 'कलियुगी अवतार' के रूप में प्रस्तुत किया है।

'भगवान की मौत' का नायक तीडा ब्राह्मण है और गोबर माटी से लीपी हुई झोंपड़ी में रहता है। नित्तान्त भोला और अधबावला-सा वह भूखे पेट भी मुस्कुराता है और भरे पेट भी मुस्कुराता है। इसके साथ भी 'तीडाराव' के तीडा जैसे संयोग घटित होते हैं। कुम्हार के गधे किधर गये हैं यह बता देता, घर में बने सोगरों की संख्या बता देता है, सेठ का खोया नौलखा हार सेठानी उसके सिरहाने से पाती है। इनाम स्वरूप प्राप्त ग्यारह सौ मोहरें वह लौटा देता है, ठाकुर साहब के लोटे में बन्द टिड्डे के बारे में बता देता है। सब कुछ अनायास अप्रत्याशित संयोग से, मुँह से निकले शब्दों के कारण घटित होता है। इन सबके पीछे उसका कोई हाथ नहीं, फिर भी लोग उसे चमत्कारी पुरुष यहाँ तक कि भगवान् का अवतार मानकर उसकी जयजयकार करते हैं। वह इस असहाय भगवानबाजी से इतना पीड़ित हो जाता है कि तंग आकर बन्द की हुई आँख फिर कभी नहीं खोलता।

आँख बन्द करने से पहले वह कहता है, "मैं तो अपनी

विपदा की आँच में ही सुलग रहा था कि झूठे यश के इस जीवन की बजाय मरना बेहतर है।"[3] इस प्रकार सीधा और सच्चा इन्सान बनकर जीने वाले तीडा को जीवन से हाथ धोना पड़ता है। सच और झूठ, असली और नकली आज की दुनिया में किस ठिकाने पहुँचते हैं, इसकी मिसाल हैं ये दो तीडा प्रसंग।

प्रभाकर श्रोत्रिय के शब्दों में, "यह निर्लोभ, सरल, झूठी प्रशंसा और सम्मान से परेशान व्यक्ति देवतुल्य तो था ही इसकी मौत को 'भगवान की मौत' कहना सांकेतिक है कि इस जमाने में सीधे-सच्चे इन्सान की मौत ही है।"[4] सच्चा और भोला तीडा इन सबमें लिप्त होकर नहीं जी सकता। झूठी प्रशंसा से त्रस्त होकर वह मृत्यु का वरण कर लेता है। देवेन्द्र नाथ ठाकुर के शब्दों में, "कथाकार यह प्रदर्शित करना चाहता है कि सच्चाई के ऊपर झूठ का बोलबाला है। 'भगवान की मौत' सच्चाई की मौत है।"[5] एक भोले-भाले नेक इंसान की मौत से हमारे समय का भी एक चेहरा दिखता है।

'इस्टूखाँ' का चरित नायक है इस्टूखाँ। जिसे हम त्याग की मूर्ति कह सकते हैं। अपनी मेहनत और सच्चाई के बल पर जीने वाले एक आदमी की जो छवि हम बनाते हैं, इस्टूखाँ उस छवि से बढ़कर भी त्यागी, निर्लोभी, स्वावलंबी और कपटहीन आदमी है। एक आदर्श मनुष्य। वह बड़े-से-बड़े लोभ को, धन-दौलत को इस तरह ठुकराता है कि आज के सांसारिक मनुष्य के लिए वह अविश्वसनीय हो जाता है। जिस दौलत को पाने के लिए बड़े-बड़े राजा-महाराजा और बादशाह तरसते हैं, खून-खराबा करते हैं, इस्टूखाँ के लिए वह सब कंकड-पत्थर के समान है। उसके मन में कहीं भी दिखावा नहीं है बल्कि सच्चे मन से वह ऐसे प्रलोभनों को ठुकराता रहता है। इस्टूखाँ की मान्यता है कि, "लोभ का ज़हर साँप के जहर से हज़ार गुना ज्यादा ज़हरीला होता है।"[6] इस्टूखाँ सांसारिक रूप से भले ही निर्धन है, जंगल से लकड़ियाँ काट-काट कर लोगों के घर-घर पहुँचाने वाला, परन्तु अन्दर से बहुत ही धनवान भरा-पूरा। उसे पशु-पक्षियों से प्रेम है यहाँ तक कि चींटियाँ भी उसकी आज्ञा मानती हैं।

सुरेन्द्र तिवारी के अनुसार, "प्रकृति के साथ मनुष्य के जुड़ाव को किस तरह सार्थक रूप दिया जा सकता है, प्राकृतिक धन-सम्पदा और पर्यावरण की सुरक्षा की जा सकती है, इस्टूखाँ के व्यवहार और जीवन क्रम के माध्यम से लेखक ने इसे प्रकट किया है।"[7] इस्टूखाँ सदाचरण, प्रेम, सहानुभूति, त्याग, सेवा आदि को चित्रित करता है क्योंकि इन मानवतावादी मूल्यों की अवहेलना करके यथार्थोन्वेषी भौतिकवाद कभी भी सफलता प्राप्त नहीं कर सकता है। इस्टूखाँ को यह संस्कार उसे उसके पिता से मिले हैं।

इसी धर्म, ईमानदारी, निर्लोभता के कारण इस्टूखाँ को दिल्ली की शहज़ादी मिलती है और वह दिल्ली का बादशाह बन जाता है। बादशाह बनने के बाद वह घोषणा करता है, "मेरा कोई मजहब या धर्म नहीं है। इन्सान के रूप में पैदा हुआ और आजीवन इन्सान बना रहकर ही जिन्दगी बसर करूँ। मनुष्य के लिए सबसे बड़ा कर्म और धर्म यही है। यही ईश्वर और यही खुदा है।"[8] इन्सानियत को अत्यधिक महत्त्व दिया गया है। इस्टूखाँ में मानवीय मूल्यों की अनुगूंज दृष्टव्य होता है।

'त्रिवेणी' का 'तीडाराव' सुखान्त होते हुए भी हमारे सामने मूल्यों की पराजय को दिखाता है। तीडाराव को अन्त में राजकुमारी व राज्य मिलता है परन्तु इससे आदर्श राज्य और आदर्श समाज की परिकल्पना नहीं की जा सकती है। तीडा परिहार झूठा, आडम्बरी सन्त और संयोग को भुनाने में पटु है, इसलिए उसकी उपलब्धि में भी खोट है। समाज का अंधविश्वास झूठ के अन्दर छिपे सच को देख नहीं पाता है और अपनी आस्था तथा विश्वास के कारण झूठे सन्तों पर विश्वास करता है। लोक आस्था और विश्वास के कारण ही तीडाराव सत्य और असत्य के बीच बँटता हुआ नज़र आता है।

'त्रिवेणी' आज के समय का चेहरा और उसके मजे को चित्रित करती है। आज के युग संदर्भ में जो समय के साथ चलने में सक्षम है केवल उनका ही अस्तित्व मान्य होता है। यह हमारे समाज का, आज के समय का कड़वा सच है क्योंकि आज वही मनुष्य सफलता की सीढ़ियाँ चढ़ सकता है जो तिकड़मों के सहारे लोगों को बेवकूफ बना सकता है। आज सच के ऊपर झूठ का बोलबाला है। तात्कालिक मनुष्य को सच्ची बात हमेशा कड़वी और अविश्वसनीय प्रतीत होती है, जबकि झूठ पर तो सहज ही विश्वास कर लेता है। झूठ भी समय की चाशनी से सच में तब्दील हो जाता है। अगर कोई सच्चा है तो वह आज के युग में जी नहीं सकता है क्योंकि लालची व स्वार्थी मनुष्यों के बीच ऐसे लोगों का अस्तित्व टिक ही नहीं सकता है। निष्कर्षतः कह सकते हैं कि तीन चरित नायकों का अपूर्व संगम है 'त्रिवेणी'। तीनों चरित नायक जीवन के तीन पक्षों को लगभग एक-सी अतिकाल्पनिक संयोग-प्रधान भूमि पर उजागर करते हैं।

हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय शिक्षक आवास,
समरहिल, शिमला-171005

सन्दर्भ सूची :

1. विजयदान देथा, त्रिवेणी, (नई दिल्ली : भारतीय ज्ञानपीठ, 2006) पृ. 35.
2. अरुण प्रकाश, समकालीन भारतीय साहित्य पत्रिका (नई दिल्ली : जुलाई-अगस्त, 2004) पृ. 171.
3. विजयदान देथा, त्रिवेणी, पृ. 290.
4. विजयदान देथा, त्रिवेणी, पृ. 11.
5. प्रवीण उपाध्याय, आजकल पत्रिका (सी0जी0ओ0 कॉम्पलैक्स, नई दिल्ली, सितम्बर, 2006) पृ. 46.
6. विजयदान देथा, त्रिवेणी, पृ. 167.
7. अरुण प्रकाश, समकालीन भारतीय साहित्य, पृ. 172.
8. विजयदान देथा, त्रिवेणी, 269.

शोध लेख

भारतीय समाज में लोकगीतों का महत्त्व

◆ तिलक राज शर्मा

भारतीय हिन्दु समाज में लोकगीतों का अत्यधिक एवं विशेष महत्त्व है। लोकगीत रचनात्मक, संगीतात्मक, गेयात्मक एवं लयात्मक रचनाएं हैं। लोकगीतों में मानव जीवन की सभी महत्त्वपूर्ण प्रमुखताएं परिलक्षित होती हैं। लोकगीतों की महता पर प्रकाश डालते हुए डा. हजारी प्रसाद द्विवेदी जी लिखते हैं कि लोकगीत की एक-एक बहु के चित्रण पर रीतिकाल की सौ-सौ मुग्धाएंजीवन, खण्डिताएं, और धाराएं भी न्योछावर की जा सकती हैं, क्योंकि वह निरलंकार होने पर भी प्राणमयी और वे अंलकार से लदी होकर भी निष्प्राण हैं। रसों से सुसज्जित लोकगीत युगों-युगों से स्वच्छन्द पवन की वायुमण्डल में विचरण कर रहे हैं । लोकगीतों का महत्व इस आधार पर भी परिलक्षित होता है कि ये मानव को एक सही सामाजिकता के पथ पर ले जाते हैं। लोकगीत हमें परम्पराओं, रीति रिवाज़ों के अटूट सम्बन्ध में संजोकर रखते हैं। मानव की आदि अवस्था से ही लोकगीतों का प्रचलन माना गया है। यदि हमें मानवता को पुनर्जीवित करना है तो गीत को पहचानना होगा। लोकमानस की तंरगों को अपनाना होगा। ''लोकगीतों की मूल परम्परा मौखिक है, इसलिए शास्त्रीय दृष्टि से इसके शैल्पिक गठन का कोई प्रारूप नहीं बन पाया है। इसके बावजूद सह सर्वाधिक जीवन्त और हरियाली विधा है, जिसमें हजारों वर्षों से हमारी संस्कृति सुरक्षित है। इन्हीं के कारण परम्पराएं व संस्कार आज भी हमारा मार्गदर्शन करते हैं ये गीत आस्था, विश्वास, एकता का आलोक आचरण हैं।''[1] लोकगीत वस्तुतः मन और आत्मा का सुर-सन्धान हैं, जिनके माध्यम से न केवल सामाजिक-राजनैतिक, राष्ट्रीय, सांस्कृतिक, धार्मिक-आर्थिक परिस्थितियों -प्रवृतियों का लेखा-जोखा मिलता है। ये गीत भाषा भण्डार की समृद्धि हैं। इसी तरह लोकगीतों का सूक्ष्म अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि ''भाषा भेद होते हुए भी गीतों में व्याप्त मानन उदय उसके सुख-दुःख की अनुभूति उसकी आशा निराशा एक जैसी ही होती है। प्रकृति का भी लोकगीतों से विशेष महत्त्व हैं। प्रकृति के गान में मनुष्य इस प्रकार प्रतिबिम्ब होता है। जैसे कविता में कवि क्षमा में मनोबल और तपस्या में त्याग प्रकृति संगीतमयी है। झरनों का अविराम नाद, पत्तों की मरमर ध्वनि, चंचल जल का कलकल नाद, मेघ का गर्जन, पानी का झमाझम बरसना, आंधी का हाहाकार, कलियों का चटकना, विक्षुब्ध समुद्र का गहराव, मनुष्य की विभिन्न भाषाएं और विचित्र उच्चारण, खग-पशु-कीट -पंतग आदि की बोलियां ये सब उसी संगीत के मन्त्रताल स्वर और लय हैं । ग्राम गीत प्रकृति के उसी महासंगीत के अंश है।''[2] लोकगीतों का महत्त्व इस प्रकार भी परिभाषित होता है कि ये मनुष्य जीवन के विकास को सुविधाजनक बना देते हैं। प्राचीन काल से ही लोकगीत हिन्दु संस्कृति में गाए जाते हैं चाहे उन गीतों का सम्बन्ध, जनपद गीतों से हो या प्रदेश के गीतों से हो बल्कि लोकगीतों की प्राचीनता भारतीय समाज से विशेष महत्त्व है कि इनमें जनता के अनुभव, मनोभावों, सत्य, सादगी और सत्यनिष्ठ उद्‌गार परिलक्षित होते हैं। ग्रामीण दिन भर परिश्रम करने के उपरान्त थकान दूर करने के लिए सांय के समय इन गीतों को गाकर जीवन के लिए विशेष महत्त्व है। डा. श्याम परमार के अनुसार लोकगीतों में विज्ञान की तराशा नहीं, मानव संस्कृति का सारल्य और व्यापक भावों का उभार है लोकगीत शब्द का पर्यायवाची है। सामान्य रूप से लोक में प्रचलित लोक द्वारा रचित एवं लोक के लिए लिखे गए गीत को लोकगीत कहा जाता है लोकगीतों का मनुष्य जीवन से लोकवासी को प्रवाहित करने वाला महत्त्वपूर्ण सम्बन्ध है। शोध के अनुसार लोकगीतों की विशेषताओं पर भी गहन अध्ययन से मन्थन व चिन्तन किया गया है।

लोकगीतों की विशेषताएं

लोकगीतों की विशेषता के विषय में अनेक लोक साहित्यकारों ने प्रकाश डाला है। श्याम परमार के अनुसार लोकगीत समूह द्वारा निर्मित माना जाता है। इसलिए व्यक्तित्व का अभाव और समूह अथवा जातीय विशेषताओं के लक्षण उनमें मिलते हैं। अकृत्रिमता, सामूहिक भाव भूमि, परम्परात्मकता, मौखिक परम्परा के गुण, रूढ़ अतिशयोक्ति, संगीतात्मकता आदि गीतों की विशेषताएं हैं। लोकगीतों का रचयिता अज्ञात होता है। व्यक्ति विशेष की रचनाएं भी सामूहिक भावनाओं में ढलकर सामान्य हरे जाती है लोकगीतों में मानव सभ्यता एवं संस्कृति के विभिन्न चित्र अंकित रहते हैं । लोकगीतों से मनोरंजन भी होता है। ''मोहन लाल बाबुलकर ने लोकगीतों की विशेषताओं का उल्लेख करते हुए कहा है कि गीत परम्परा से सिंचित निधियां हैं

इनमें संगीत एवं गेयता होती है। देश काल की सीमा का बन्धन इनके साथ नहीं होता है। इनमें मानव संस्कृति का सारल्य और भावों का व्यापक उभार होता है।''[3] इन लोकगीतों की अनेक विशेषताएं हैं। ये लोकगीत सब लोगों के जीवन का आधार बन गए हैं। वैसे तो सभी प्रदेशों के लोकगीत होते हैं लेकिन हिमाचल प्रदेश तो लोकगीतों की धरती है। हिमाचल प्रदेश को प्रकृति ने मुक्त हृदय से सौन्दर्य प्रदान किया है। लोकगीतों में अद्भुत रस ललिता है। यहां के पत्थर भी गाते हैं ग्रामीण हो या शहरी सभी लोकगीत गाना तथा सुनना पसन्द करते हैं जो लोग गावों में रहते हैं वे तो बड़े चाव से लोकगीत गाते और सुनते हैं। लोकगीतों की निम्नानुसार और भी विशेषताएं हैं। जैसे :-

किसी भी क्षेत्र की संस्कृति व रीति-रिवाज़ों को वहाँ के लोकगीतों में सम्पूर्ण संस्कारों के सजीव चित्र होते हैं। लोकगीत मानव के सहज एवं सरल उद्गार हैं। लोकगीत प्रकृति के सहज और कोमल उद्गार हैं तथा कृत्रिम सजावट से दूर पारदर्शी और विशेष की तरह स्वच्छ होते हैं।

लोकगीत मनुष्य को अन्धकारमय पथ से प्रकाश की ओर ले जाकर विशेष आनन्दानुभूति प्रदान करते हैं। लोकगीत अनपढ़ ग्रामीण लोगों के भावुक तथा संवेदनशील दिल की स्वाभाविक, स्वतन्त्र एवं सरल भावनाएं हैं लोकगीतों में मानवीय मूलभूत भावनाओं का समावेश किया जाता हैं। लोकगीतों की विशेषताएं सर्वजन सुखाय या सर्वजन हिताय के लिए है।

सपुत्र श्री रोशन लाल शर्मा
गांव-कैहरवीं, डा. बलोह, तहसील भोरंज
ज़िला हमीरपुर (हि.प्र.) - 177029

सन्दर्भ

1. डा. सुरेश गौतम लोक साहित्य अर्थ और व्याप्ति, संजय प्रकाशन अंसारी रोड़, दरियागंज, नई दिल्ली 110002
2. डा. महेश गुप्त, लोक साहित्य का शास्त्रीय अनुशीलन'
3. डा. श्री राम शर्मा, लोक साहित्य स्वरूप और मूल्यांकन', निर्मल पब्लिकेशन्स कबीर नगर शाहदरा दिल्ली-94

कविताएं

बरगद की छंय्या

◆ **वीणा विज 'उदित'**

सदियों से पुरातनता की चादर ओढ़े है बरगद
रेंगते सर्पों के बिल, उड़ती चिड़ियों के घर
फुदकते वानरों की शैया, भूतों-पिशाचों के डर
छांव में चैन पाते हैं थके-हारे भटके मुसाफिर।

द्वापर की बंसी की तानें सुनी होंगी इसने
त्रेता में सूर्यवंशी ने थक विश्राम किया होगा नीचे इसके
बुधं शरणं गच्छामि के स्वर उच्चरित हुए होंगे छांव में इसके
विद्यार्थी शांति निकेतन के मनन करते होंगे नीचे इसके।

अम्मा से रूठ मुनिया भी छिपी होगी इसके पीछे
सखियों संग आंख मिचौली खेली होगी आंखें मीचे
दबे पांव सधे होंगे पंछियों पर निशाने गुलेले खींचे
जान बचाने टहनियों पर पंछी छिपे होंगे पत्तों के पीछे।

सजनी का आंचल लहराया, साजन की बाहों में तने के पीछे
बूढ़ी काया पीठ टेकती, जमघट लगता चौपाल पे इसके
लहराता झुरमुट आया बच्चों का बेर इमली खरीदने
पैसा, टका, आना दो आना ले बरगद की छैंय्या के नीचे।

पानी का रेला

ज़िंदगी ठहरे कुएं से भी बदतर हो चली थी
और ठहरती तो इस पर काई की पर्तें जम जातीं
जिनसे भीतर की उथल-पुथल कभी भी न दिखती
सड़ी बदबू कभी किसी को पास न आने देती।
कौन देख पाता काई के नीचे निर्मल जल
प्यासी जिंदगियों को ज़िंदगी देने वाला जल
भटकी आत्माओं को किनारा देने वाला जल
अंधेरे कुएं की गहराइयों में छिपा बैठा जल।
अचानक इक रेला आया पानी का
ठहर कर जमती काई को धकेलता ले चला
हट गया ठहरी जमती काई का आंचल
चमक उठा भीतर का छिपा पावन जल।

469-आर, मॉडल टाऊन, जालंधर, पंजाब-144 003,
मो. 0 94643 34114

यात्रा संस्मरण

पाताल भुवनेश्वर

◆ स्नेह लता

प्रकृति का हर रूप रहस्य से भरा है। मानव ने चाहे विज्ञान की कितनी ही प्रगति कर ली है पर प्रकृति के रहस्य को समझ पाना आज भी उसके लिए अनबूझ पहेली है। विज्ञान की शाखाएं हर पल में विस्तृत करने के बावजूद वे प्रकृति निर्मित रहस्यों से पर्दा उठाने में अक्षम है और यहीं पर विज्ञान की सीमा समाप्त होकर अध्यात्म की सीमा प्रारम्भ होती है। मनुष्य को यह मानने पर मजबूर होना पड़ता है कि हाँ यह ईश्वरीय सत्ता का एक अंग है। ऐसे ही चमत्कृत रूप का वर्णन मैंने कई बार लोगों से सुना था। स्वयं मेरे बेटे सुबोध ने मुझे बताया था कि वह अपने मामा के साथ कैसे पाताल भुवनेश्वर गया था। मगर मुझे यह सौभाग्य काफी समय बाद प्राप्त हुआ। जुलाई 2010 में जब मैं कैलास मानसरोवर के दर्शन करके लौट रही थी तब हमारा जत्था जागेश्वर में रुका। हमारे लायजन अधिकारी श्री मनीष ने कहा कि हम लोग जागेश्वर से अल्मोड़ा जाने के रास्ते में बेरीनाग पर रुककर पाताल भुवनेश्वर के दर्शन कर अल्मोडा जाएंगे। शाम के पाँच बजे हम लोग जागेश्वर पहुँचे। हम लोग जागेश्वर में कुमाऊँ गढ़वाल मंडल के होटल में रुके।

प्रातः 6 बजे उठकर सबसे पहले जागेश्वर के मंदिर के दर्शन करने गए। यह मंदिर हमारे होटल के पास ही था। यह शिव के बारह ज्योर्तिलिंगों में गिना जाता है ऐसी कुछ शास्त्रों में मान्यता है। जागेश्वर से लगभग दस किलोमीटर दूर चलकर हम लोग पाताल भुवनेश्वर स्थित उत्तराखण्ड के पर्यटन विभाग के कार्यालय पहुँचे। कार्यालय के बाहर एक सुन्दर छोटा सा लॉन था जिसमें सुन्दर रंग बिरंगे फूल खिले हुए थे। वहाँ हम लोगों के लिए चाय तथा नाश्ते का सुन्दर प्रबन्ध किया हुआ था। लॉन में कुछ देर रुक कर हम सभी लोग पाताल भुवनेश्वर के दर्शन करने चले। हमारे दल में अड़तालीस यात्री थे। हम लोग सुन्दर चीड़ और देवदार से ढंके पहाड़ी रास्ते से नीचे उतरने लगे। दूर दूर तक चीड़ के जंगल में सरसराती पत्तियों की हवा थी। ऐसे सुरम्य ढालू रास्ते पर चलते हुए हमें मुश्किल से दस मिनट हुए होंगे कि हमारे गाइड ने कहा कि हम लोग पाताल भुवनेश्वर पहुँच चुके हैं , आप सब लोग लाइन बना लें क्योंकि आगे का रास्ता बहुत संकरा है। उसमें एक एक यात्री करके ही जाया जा सकता है। वहाँ के पुजारी ने हमें गुफा में प्रवेश करने से पहले पाताल भुवनेश्वर के संबंध में एक पौराणिक कथा सुनाई।

पाताल भुवनेश्वर कुमाऊँ मण्डल के गंगोलीहाट जिले के उत्तर में स्थित है। इस गुफा के बारे में कहा जाता है कि यहाँ तैंतीस करोड़ देवी देवता निवास करते हैं तथा स्वयं महादेव यहाँ रहकर तपस्या करते हैं। महादेव का कैलास पर्वत पर जाने का एक रास्ता पाताल भुवनेश्वर से भी जाता है। इस गुफा की खोज के बारे में बताया कि महाभारत में व्यास जी ने कथा सुनाई थी कि द्वापर युग में सूर्यवंशी राजा ऋतुपर्ण थे जो एक सुअर का शिकार करते करते यहाँ तक पहुँचे वह सुअर कहीं छिप गया। वहाँ शिव के रक्षक गणेश नाग ने कहा राजा तुम यदि मेरे प्रश्नों का सही उत्तर दो तो तुम्हारा कल्याण होगा। मैं तुम्हें मार्ग बता सकता हूँ।

शेषनाग ने पूछा- इस भूमण्डल पर मुनिजन, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र किस देव के उपासक हैं ? तुम सूर्यवंशी तथा अन्य राजगण किस देव का पूजन कर राजलक्ष्मी का उपभोग करते हो?

राजा ने उत्तर दिया - पृथ्वी पर सभी वर्णों के लोग शिव की आराधना करते हैं। सभी वशों के राजा शैव हैं।

शेषनाग ने फिर पूछा - क्या तुम इस गुफा से परिचित हो ? क्या तुम्हें पता है यहाँ शंकर का आवास है ?

राजा ने उत्तर दिया- नहीं। मैं इस गुफा से परिचित नहीं हूँ। कृपा करके गुफा के दर्शन कराएं तथा मुझे भगवान शिव के दर्शन कराएं।

शेषनाग ने कहा - इस गुफा में पाताल भुवऩेवर विद्यमान हैं साथ ही तैंतीस करोड़ देवता भगवान शंकर की सेवार्थ निवास करते हैं। यहाँ पर भगवान शंकर की गुप्त गुफाएं भी हैं । स्मर, स्मेरू तथा सुधामा नाम की गुफा में स्वयं भगवान जागरूक रहते हैं।

तब शेषनाग ने राजा को दिव्य चक्षु प्रदान किए। तब राजा ने स्वयं देवताओं के दर्शन किए। ऐसी गुफा देखने की हमें भी

गुफा के अन्दर बहुत अंधेरा था। दरवाजे के अन्दर यात्रियों की सुविधा के लिए एक छोटा बल्ब लगा था। उतरने के लिए छोटी सी लोहे की सीढ़ी लगी थी। तथा पकड़ने के लिए एक मोटी सी लोहे की जंजीर लगी थी। किसी तरह डरते डरते हम लोग एक एक कदम सावधानी से रखते हुए नीचे उतरे। नीचे की सीढ़ी पर पहुँचते पहुँचते चिकने पत्थर थे जिनसे फिसलने का डर था। किसी तरह पत्थर पकड़ पकड़ कर नीचे उतरे।

लालसा थी। फिर हम लोग पाताल भुवनेश्वर की गुफा देखने के लिए आगे बढ़े। एक छोटे से बरामदे में छोटा सा लोहे का जंगला लगा था जिसके अन्दर एक लकड़ी का दरवाजा लगा था। पुजारी ने दरवाजे की सांकल हटाई और हम लोगों को एक एक करके सावधानी से उतरने को कहा।

गुफा के अन्दर बहुत अंधेरा था। दरवाजे के अन्दर यात्रियों की सुविधा के लिए एक छोटा बल्ब लगा था। उतरने के लिए छोटी सी लोहे की सीढ़ी लगी थी। तथा पकड़ने के लिए एक मोटी सी लोहे की जंजीर लगी थी। किसी तरह डरते डरते हम लोग एक एक कदम सावधानी से रखते हुए नीचे उतरे। नीचे की सीढ़ी पर पहुँचते पहुँचते चिकने पत्थर थे जिनसे फिसलने का डर था। किसी तरह पत्थर पकड़ पकड़ कर नीचे उतरे।

नीचे पहुँचकर हमारे आश्चर्य ठिकाना न रहा क्योंकि नीचे का भाग बहुत बड़ा तथा खुला था। इसमें ऊपर दिखाई देने वाले पेड़ों की न कोई जड़ें या शाखाएं थीं न किसी तरह जंगल का कोई चिन्ह। पक्के पत्थरों की बनी बड़ी सी गुफा थी जिसमें काफी रोशनी तथा हवा थी। किसी प्रकार का कोई अंधेरा घुटन या सीलन नहीं थी। एकदम साफ सुथरी और खुली खुली। जिसमें सौ से ज्यादा लोग एक साथ आ सकते थे। पुजारी ने हमें बताया कि गुफा में उतरने के लिए 82 सीढ़ियाँ हैं। गुफा की कुल लम्बाई 390 मीटर जिसमें सीढ़ियों तक की लम्बाई 90 मीटर है। गुफा के अन्दर हमने सबसे पहले सीढ़ियों के बीच में विष्णु भगवान के अवतार नरसिंह भगवान का फुटलिंग शोभित देखा।

नीचे पहुँचते ही गाइड ने दाहिनी ओर शेषनाग की फन फैलाए मूर्ति दिखाई जिसने अपने फन पर सम्पूर्ण पृथ्वी को धारण कर रखा है। इसके आगे एक हवनकुण्ड दिखाया और बताया कि राजा जनमेजय ने अपने पिता परीक्षित के उद्धार के लिए उलंग ऋषि के निर्देशानुसार इसी हवन कुण्ड में सर्प यज्ञ किया था। कुण्ड के ऊपर तक्षक नाग बना हुआ है जिसने राजा परीक्षित को काट लिया था ।

इसी के साथ साथ हम लोग गुफा में आगे बढ़े। गुफा की जमीन टेढ़े मेढ़े पत्थर की बनी हुई थी गाइड ने कहा यह शेषनाग की रीढ़ की हड्डी है फिर उन्होंने हमें शेषनाग के फन, दांत और विष की पोटली भी दिखाई।

गुफा में आगे बढ़ने पर छत की ओर एक कमल की सी आकृति बनी थी जिससे जल की बूंदे टपक रही थीं नीचे एक गणेश की सी आकृति थी। पुजारी जी ने कहा यह सहस्र कमल है इसके ही जल की बूंदों से गणेश जी के सिर को उनके धड़ से अलग कटने पर जीवित रखा गया था बाद में उनके हाथी का सिर लगाया गया था। ऐसी पौराणिक मान्यता है।

गणेश जी के सामने चारधाम, केदारनाथ, बद्रीनाथ तथा अमरनाथ लिंगों के रूप में विराजमान हैं। इन लिंगों के बगल में एक गुफा जैसी आकृति थी जिससे एक जीभ जैसी आकृति लटकती दिखाई दे रही थी। पुजारी जी ने कहा कि यह शिव का काल भैरव रूप है जिसमें उनकी जीभ दिखाई दे रही है। यह जो गुफा जैसी दिखाई दे रही है उसे ब्रह्मलोक का मार्ग माना जाता है यदि कोई व्यक्ति मुँह से प्रवेश कर पूंछ तक पहुँच जाता है तो उसे मोक्ष की प्राप्ति होती है परन्तु गर्भ और पूंछ का मार्ग अत्यन्त कठिन है।

इन्हीं काल भैरव के सामने भगवान शंकर का आसन लटकता हुआ दिखाई दे रहा था हमें कहा गया कि इस पर मुण्डमालाधारी पातालचंडी तथा उनका वाहन शेर दिखाई देता है। यहाँ सभी आकृतियाँ प्राकृतिक हैं जिन्हें कल्पना से ही रूप दिया गया है परन्तु पुजारी जी जैसा बता रहे थे। वह आकृतियाँ हमें उनमें उभरी प्रतीत हो रही थीं इसलिए हमें उस आश्चर्य मिश्रित सत्य को स्वीकार करना ही था।

इसके बाद हमें चार द्वार दिखाए गए और बताया कि तीन द्वार अब तक बन्द हो चुके हैं यह सतयुग, द्वापर, त्रेता युग की समाप्ति पर बन्द हो चुके हैं। मात्र कलियुग का द्वार कलियुग की समाप्ति पर बन्द होगा। जो व्यक्ति मोक्षद्वार में प्रवेश कर लेता है वह सांसारिकता से मुक्ति पा जाता है। मोक्षद्वार के आगे खुला हुआ हिस्सा था वहाँ दीवार पर ऐसा लग रहा था जैसे कोई वृक्ष की आकृति हो जिस पर फूलों के गुच्छे लगे हों। पुजारी ने कहा यह पारिजात का वृक्ष है जिसे भगवान कृष्ण इन्द्र की अमरावती पुरी से पृथ्वी लोक में लाए थे। इसके बाद हम एक संकरे रास्ते पर चले पुजारी जी ने कहा यह कदली वन मार्ग है यहाँ त्रेता युग में हनुमान अहिरावण संग्राम हुआ था और हनुमान जी ने पाताल विध्वंस किया था। रास्ते में छोटी छोटी कई गुफाएं थीं। जिन्हें मार्कण्डेय ऋषि तथा सप्तर्षि की गुफा के नाम से लोग जानते हैं।

इसके ऊपर ब्रह्माजी के सिर दिखाए जहाँ कामधेनु गाय के

थन से दूध की धार बह रही थी। आज भी कुछ लोग यहाँ पितरों का तर्पण करते हैं। गुफा के बीच में एक छोटा सा कुण्ड बना था जिसमें जल भरा था इसे सप्तकुण्ड कहते हैं। इस कुण्ड की एक रोचक कथा सुनाई -

ऐसा कहा जाता है कि इस कुण्ड का जल केवल सर्प ग्रहण कर सकते थे। ब्रह्माजी ने अपने हंस को इस कुण्ड के पहरेदार के रूप में रखा और कहा कि वह भी इस कुण्ड का जल न पिए परन्तु हंस को लालच आ गया और उसने जल पी लिया। ब्रह्माजी को क्रोध आ गया उन्होंने हंस को शाप दे दिया जिससे हंस का मुँह टेढ़ा हो गया। छत की ओर देखने पर एक बड़ी सी सुन्दर आकृति ऐसी सजीव प्रतीत होती है मानों सचमुच गर्दन टेढ़ी करके हंस बैठा है। इसके बगल में विशाल सफेद रंग की सी छत से नीचे लटकती आकृतियाँ दिखाईं जो सचमुच शिव की जटाओं जैसी लग रही थीं इसके पास से निकली जल की धार है जो शिव की जटाओं से निकलती हुई गंगा है। तैंतीस करोड़ देवी देवता एक बड़ी चट्टान पर उभरे हुए बिन्दुओं से दिखाई देते हैं और रात में आकाश गंगा के तारों जैसे लगते हैं। इसके बगल में नंदी और विश्वकर्मा कुण्ड हैं। सप्तकुण्ड का जल श्रद्धालु अपने साथ प्रसाद स्वरूप भी ले जाते हैं।

गुफा के अंदर ताम्रपत्र जड़ित लिंग त्रिमूर्ति बनी थी जिस पर किसी श्रद्धालु ने पूजा अर्चना भी की थी। ऐसा कहा जाता है कि यह मूर्ति आदि गुरु शंकराचार्य ने आठवीं शताब्दी में स्थापित की थी इसमें ब्रह्म, विष्णु , महेश की आकृतियाँ बनी हैं। गुफा के लगभग सम्पूर्ण मार्ग पर पत्थर की ऐसी आकृति बनी है मानों शेषनाग की रीढ़ हो ।

कुछ आगे चढ़ाई के लिए दो चार सीढ़ियाँ बनी थीं जहाँ चौपड़ खेलते शिव पार्वती तथा गोद में बैठे गणेश की सी काल्पनिक आकृति पुजारी जी ने दिखाई। वहीं बैठे पांडवों की मूर्तियाँ भी पुजारी ने बताई। कहा जाता है कि वनवास के समय पाण्डवों ने यहीं शिव की जटाओं के नीचे बैठकर तपस्या की थी। गुफा आगे चलकर दो भागों में बंट गई थी इसी के समानान्तर सेतुबन्ध रामेश्वर की गुफा दिखाई दी जिसपर चलकर दोनों रास्ते एक हो गए और हम वापस गुफा के मुख्य द्वार पर पहुँच गए। ऊपर जाने वाली सीढ़ियों से दाईं ओर गुफा में नीचे की ओर ऐसा लग रहा था जैसा सैकड़ों खंभे की जैसी आकृतियाँ हैं। पुजारी जी बताया कि यह इन्द्र के ऐरावत हाथी के हजारों पाँव हैं और बगल में भगवान शंकर का कमण्डल हवा में लटका हुआ सा प्रतीत हो रहा था।

इस प्रकार लगभग एक घंटे गुफा में रहकर हम वापस उन्हीं सीढ़ियों के पास पहुँच गए जिनसे उतरकर हम गुफा के अन्दर आए थे। प्रकृति द्वारा निर्मित इस रहस्यमयी गुफा को देखकर हम सचमुच आश्चर्य चकित थे क्योंकि पुजारी जी ने जैसा बताया था उनमें से अधिकतर आकृतियाँ उकेरी हुई सी लग रही थीं। जैसे ब्रह्मा का हंस, ऐरावत हाथी के पांव, शिव का कमण्डल, शिव की जटाएं, पारिजात वृक्ष कामधेनु गाय का थन, कालभैरव की जीभ, तथा शेषनाग की रीढ़ आदि।

गुफा के बाहर चीड़ और देवदार के जंगल से ढंके पहाड़ थे वहीं गुफा के अन्दर पहाड़ों का कहीं नामों निशान तक नहीं था। जो जगह बाहर से दिखाई तक नहीं देती थी वह अन्दर बहुत खुली और साफ सुथरी थी। प्रकृति के इस अनुपम रहस्य से हमारा मन अभिभूत था। हमें स्वीकार करना पड़ा कि विज्ञान से आगे अध्यात्म है हम पुनः शिव के इस घर को प्रणाम करके अपनी वापस दिल्ली के लिए चल पड़े परन्तु पाताल भुवनेश्वर की यह कथा हमारी मन में सजीव थी ।

1 / 309 विकास नगर , लखनऊ, उत्तर प्रदेश-226022 ,
मो. 0 94506 39976

कविता

कलियुग भाई बड़ा भयंकर

◆ **डॉ. जयपाल ठाकुर**

बादल गरजे
बिजली चमके
पल में आंधी
पल में तूफान
पल में अंधेरा
पल में बादल छू-मंतर
कलियुग भाई बड़ा भयंकर।

खेत सूखे
खलिहान सूखे
फसल हुई तबाह
किसान बैठे खेत किनारे
दया करो इंद्र प्यारे
दुनिया वर्षा को तरसे
बादल जाए बिना बरसे
सूख गई नदियां चंचल
कलियुग भाई बड़ा भयंकर।

देश तरक्की
भागम-भाग
एक-दूसरे से आगे
हर कोई रचे पीछे करने का षड्यंत्र
कलियुग भाई बड़ा भयंकर।

चारों तरफ चीखो पुकार
पाप-संताप-अत्याचार
घर-घर में दुखों का डेरा
आदमी को मुसीबतों ने घेरा
अस्पताल मरीजों का जमघट
मंदिर-मस्जिद तंत्र-मंत्र
बाबे बने मस्त-कलंदर
कलियुग भाई बड़ा भयंकर।

माता-पिता की कद्र नहीं
भाई-बहन के रिश्ते तार-तार
गुरु-शिष्य की हम परंपरा भूले
त्रेता-द्वापर के गुरु-शिष्य से
आज के गुरु-शिष्य में काफी अंतर
कलियुग भाई बड़ा भयंकर।

गांव मियांपुर, डाकघर पंजैहरा, तहसील नालागढ़, जिला सोलन, हि. प्र.-174 101,
मो. 0 94187 44841

कहानी

प्यार की परछाइयां

◆ श्याम सिंह घुना

सावन का महीना था। लगातार बूंदाबांदी हो रही थी। महीन-महीन बूंदें हमारे अधलेटे, तपती युवा शरीरों पर गिर-गिर कर भाप बन जातीं और कोहरा उसे समेटता चला जा रहा था। बीच-बीच में उस पार की धूप जब चिलचिलाती तो आकाश से आने वाली वर्षा के कण सहसा ही चमक उठते। अजर व अमर, वेगवती शालवी नदी बाढ़ के प्रकोप में रह-रहकर तरंगित हो रही थीं। मानो उसे सरोज के अल्हड़ यौवन से ईर्ष्या हो रही हो। उस दिन मैंने इंद्रधनुष पहली बार ध्यान से देखा और उसे आज तक नहीं भूला हूं।

नदी-पार के भू-विस्तार पर हरियाली, मदमाते श्रृंगार में मदहोश थी। पर्वत-श्रृंखला की ग्रीवा से लिपटा इंद्रधनुष उस पार के दृश्य को अतिरिक्त सौंदर्य प्रदान कर रहा था। किंतु सारे साज-श्रृंगार के उपरांत भी प्रकृति का यह अनुपम सौंदर्य सरोज के सौंदर्य से छोटा ही पड़ गया था। यहां पर सड़क के दो मोड़ थे। दोनों मोड़ों के मध्य एक ढलान पर मैं और सरोज एक दूसरे से गुत्थमगुत्था हो रहे थे। यहां से गंवार-पाठे वाले मोड़ तक- सड़क नज़र आती थी। यह गंवार-पाठे अपने-चौड़े, मोटे व कठोर पत्तों पर लंबे-लंबे कांटों सहित सड़क किनारे के खेतों की रक्षा पशुओं से बड़ी मुस्तैदी से रात-दिन किया करते थे। इस ढलान पर जहां हम छीना-झपटी कर रहे थे, यहां भू-स्खलन से सड़क बुरी तरह क्षतिग्रस्त हो गई थी। सड़क का नामोनिशान भी शेष न रह गया था। कंकड़-पत्थर निकल- निकल कर ढांक से ढलान पर होते हुए नदी की ओर नीचे क्यार तक खिसकते चले जा रहे थे। आज तो वह संकरा-सा खच्चर मार्ग एक चौड़े से पक्के मोटर मार्ग में भी परिवर्तित हो गया है और बात बहुत पुरानी हो गई है। लेकिन लगता है कि जैसे कल की ही बात हो। इस स्थान पर पहुंचते ही पूर्वभव हो जाता है। चितवन और वह समूचा दृश्य मेरी आंखों के सदृश साकार हो उठता है।

सरोज हांफ रही थी। उसकी गर्म-गर्म सांसें रह-रह कर मुझसे टकरा रही थीं। मांसल छातियां रह-रह कर उठ और गिर रही थीं। वह हांफती सी लगती थी। मानो जवानी के बोझ को तत्काल कम करना चाहती हो। छीना-झपटी में उससे मैं लिपट ही तो गया था। उसके बाएं हाथ को अपनी दायीं बगल में जकड़ कर मैं उसके दाएं हाथ को वश में करना चाहता था। वह येनकेन प्रकारेण उसे बचाए हुए थी। हमारे प्रयास आपस में लड़ रहे थे। ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार वर्षों तक हमें एक दूसरे के समीप लाने के लिए वह परस्पर टकराते रहे थे।

मैं सरोज से कुछ छीनने का प्रयत्न कर रहा था। इस गुत्थम-गुत्थी में वह मुझसे सट गई थी। मैं उससे चिपक गया था। किंतु हमने तो मानो एक दूसरे के मदमाते सौंदर्य और अल्हड़ जवानी से कुछ लेना ही न था। मैं यह जानना चाहता था कि उसके हाथ में वह फोटो किसकी थी जिसे वह मुझे दिखाना नहीं चाहती थी। वह उसे छुड़ाते-छिपाते हुए बार-बार कह रही थी -

"मैं एक ही लड़के को चाहती हूं और वह भी इतना कि पढ़ाई समाप्त करते ही उससे विवाह कर लूंगी।"

मैं उससे आग्रह कर रहा था -

"फिर भी दिखाओ तो, यह फोटो किसकी है?"

किंतु लाख मिन्नत करने पर भी वह उस फोटो को मुझे दिखा नहीं रही थी, न ही उसका नाम बात रही थी और अपने-अपने कारणों से हम जूझ रहे थे। एक दूसरे से बुरी तरह उत्सुकता की पीड़ा से ग्रस्त जब मैं अत्यंत ही उत्तेजित हो उठा तो मुझे अपनी मर्दानगी याद आ गई और मैं अल्हड़ जवानी से लदी सरोज पर टूट पड़ा। हमारे बस्ते दूर छिटक गए और हम मिट्टी पानी में लथपथ हो गए। अपनी फूटती जवानी का बोझ उठाना उसे कठिन हो रहा था, ऊपर से मैं पिल पड़ा था। आखिर वह टूट गई और मैं फोटो छीनने में सफल हो गया।

अब वह फोटो मेरे हाथ में थी। वह उसे बार-बार मांग रही थी। किंतु मैं एक हाथ से उसे रोक रहा था और दूसरे में फोटो पकड़े गहरी सोच में पड़ गया था। वह कांपने लगी थी। किसी उत्तेजनावश या क्रुद्ध होकर और फोटो को अपनी जेब में डाल कर न जाने मैं क्या देखता रहा था उसके कांपते बदन में।

तब वह आठवीं में पढ़ा करती थी। मैं दसवीं में। हम लोग एक साथ पाठशाला जाते, वापिस आते और राहगीरों से छेड़छाड़ का संयुक्त आनंद उठाते। खच्चर वालों से दोस्ती गांठ कर साथ-साथ सवारी करते सड़क के किनारे लगे फलों की मिल कर चोरी करते। खच्चरों पर लदे गुड़ पर डाका डालते। सहचर्य का पूर्ण

आनंद उठाते। कितने ही बचकाना खेल-तमाशों में हमारा बचपन एक-दूसरे के संग बीता था। विद्यार्थी जीवन के यह संयुक्त छह आठ वर्ष हमने देखते-देखते फलांग लिए थे। ऐसा मालूम पड़ता मानो सदियों से इकट्ठा खेलते-खेलते हम जवां हो गए हों। 'सदियों' के बचपन में उसने कुछ भी मुझसे न छिपाया था। न मैंने ही उससे कुछ बात गुप्त रखी थी। हमारा जीवन एक दूसरे के लिए खुली किताब के समान था। शाम को हम अलग होते। सुबह फिर मिलते। किसने क्या खाया, क्या पीया, क्या सोचा- हम एक दूसरे को बता देते यहां तक कि हम अपने सपने तक एक दूसरे को बयान कर दिया करते थे। न वह मुझसे कुछ छिपाती थी और न मैं उससे। जवानी की दहलीज पर कदम रखते ही यह क्या हो गया था हमें एकाएक आज? वह मुझसे अपने प्रेमी का फोटो छिपाना चाहती थी और मैं उसे जाने बगैर न रह सकता था। क्यों छिपाना चाहती थी वह फोटो मुझसे?



मैं उसे बहुत चाहता था। फिर यह कैसे सह सकता था कि वह किसी अन्य लड़के की फोटो अपनी जेब में रखती फिरे। यह फोटो अमर की थी। हां अमर की। उसने पिछले वर्ष ही मैट्रिक की थी। अब वह कॉलेज में पढ़ रहा था। एक बहुत बड़े जमींदार का इकलौता बेटा। दो-तीन जागीरों का मालिक था अमर।

मैंने उसे कुछ न कहा। अपनी जेब से फोटो निकाल कर चुपचाप उसे लौटा दी। और मौन मग्न अपने घर की ओर चल दिया। पता नहीं क्यों अब उसके हावभाव बदल गए थे। उसका अंग-अंग ढीला पड़ गया जान पड़ता था और आंखें बोझिल। मैंने कुछ कदम बाद उसकी ओर मुड़कर देखा तो अनुनयभरी आंखों से वह मुझे देख रही थी। जैसे कोई पालतू जानवर अपनी गलती होने पर कान और दुम झुकाकर याचना भरी निगाहों से आपकी ओर देखता है।

मैंने गंवार-पाठे का मोड़ पार किया तो वह भी अनमनी-सी अपने घर की ओर चल पड़ी। पीठ पर अपना बस्ता छलकाते हुए उसे मैं तब तक हसरतभरी निगाहों से देखता रहा था जब तक पगडंडी पर चलते-चलते वह ओझल न हो गई। उसके कदम बता रहे थे कि वह भी मेरी तरह ही उदास थी। अपने दीर्घ संबंधों की गहरी घनिष्ठता की उसे भी शायद आज ही एकाएक अनुभूति हुई थी। वह अमर को भूल गई थी शायद उस वक्त और मैं उसके प्रेमी से ईर्ष्या करने लगा था। तो क्या इसी को कहते हैं प्यार? आज स्पष्ट हो गया था कि मैं और सरोज जवान हो गए हैं। आज से शुरू हो गई थी हमारे बीच की दूरियां। ये दूरियां दिनोदिन बढ़ती रही। सालोसाल चौड़ी होती रहीं।

"किंतु अब क्या हो सकता है अमर से सरोज के विवाह की बात कभी भी पक्की हो सकती है", मैं चलता और सोचता जाता था।

मैं अमर के पांव की धूल भी न था। कहां अमर एक परगने का मालिक और कहां मैं.... जब तक मैं घर नहीं पहुंचा और उसके बाद दिन और रात जब तक स्कूली तालीम से मैं निवृत्त न हो गया, मेरे बचकाना विचार हर क्षण मेरे साथ ही अपनी राह पर भटकते रहे। फिर एक दिन आया जब अमर की संपत्ति के भय से सरोज को मैं धीरे-धीरे भूल गया। किंतु बचपन में लगा वह घाव हरा ही रहा। उस घाव पर और घाव बने। उसी वर्ष मेरे पिता का अचानक देहांत हो गया। उन घावों का दर्द सदैव मेरे साथ रहा। किंतु यदि यह दर्द न होता तो दवा की तलाश में आजीवन प्रयत्नशील मैं कैसे बन पाता। प्रयत्न किसे कहते हैं? क्या होता है वह? मैं कैसे जान पाता। जीवन संघर्ष चलायमान रहा और मैं लड़ता रहा अपने से ही केवल अपने लिए।

समय ने करवट ली। अमर ने बी.ए. किया और फिर उसके माता-पिता ने उसका विवाह कहीं अन्यत्र करवा दिया। बचपन का ख्वाब था, एक दिवास्वप्न था, बचकाना कल्पना थी, यह सब सरोज को तिलमिलाता छोड़ कर समय के क्षितिज पर अपनी परंपरानुसार अस्त हो गया।

वह बड़े बाप की बेटी थी। घर भी बड़ा था। बड़ों की बातें भी बड़ी। मैट्रिक पास करके सरोज कॉलेज चली गई। मुझे जीवन- निर्वाह के लिए नौकरी का सहारा लेना पड़ा। हमारे बीच अंतर बढ़ता गया। किंतु अमर के विवाह के बाद सरोज को हासिल करने की आशा पुनःजीवित हो उठी। मैं हार मानने वाला नहीं था। किसी प्रकार आगे पढ़ने की ठानी। अच्छी शिक्षा पाकर ही उसे पाया जा सकता था। वह शायद मुझे भूल गई थी। परंतु मैं जहां कहीं भी होता उसके परीक्षा परिणामों को जानने के लिए आए वर्ष यूनिवर्सिटी-गैजेट तक पहुंच जाता। उत्सुकतापूर्वक उसमें उसका नाम खोजता। सहसा एक बार उसका नाम गैजेट में नहीं मिला।

"फिर सरोज कहां गई। विवाह तो नहीं हो गया उसका?" मैंने अपने से ही प्रश्न किया।

यह विचार आते ही मेरी आशा के पंख फड़फड़ा उठे। मैं उड़ना चाहता था लेकिन पंखों ने जवाब दे दिया लगता था। मात्र उसे पाने की इच्छा ने मुझे पढ़ाई-लिखाई में लगाया था। अब यह काम मुझे व्यर्थ लगने लगा। मैं कुछ भी नहीं करना चाहता था।

तथापि अनासक्त भाव से ही सही मैं बढ़ता रहा साहिल की ओर। हवाएं तो उठीं थीं किंतु मैं कैसे विश्वास कर लेता कि तूफान आने से पूर्व ही नौका सागर की लहरों में खो जाएगी। मैं अपनी नाव के चप्पू चलाता रहा। एक और वर्ष मेरे पैरों तले से निकल गया और आशा के विपरीत जीवन की भागमगभाग एक बार फिर मुझे उसके समीप ले आई।

स्थानांतरित होकर मैं शिमला आ गया था। अभी मुझे इस नयनाभिराम शहर में एक मास भी न हुआ था कि एक दिन स्कैंडल प्वाइंट पर मुझे सरोज दिख गई। वह रेलिंग के सहारे खड़ी हो कर बड़ी मायूसी से मेरी ओर देख रही थी। मुझसे नजरें मिलते ही उसका चेहरा खुशी से चमक उठा। वह उमर में मुझसे छोटी थी। पलभर के लिए मैंने प्रतीक्षा की कि वह मुझे विश करेगी। किंतु उसने ऐसा नहीं किया। मुझे देखती ही रही। मैं भी मौन हो उसके आगे से गुज़रता हुआ अपने रास्ते चल दिया। एक थका-हारा बोझिल मन कैसे कर सकता था उसका सामना। एक बड़े बाप की बेटी का।

मुझसे भूल हो गई थी। उम्र के अंतर को विश करने के चक्कर में डाल दिया। मैं उस समय छोटा न बना। फर्क क्या पड़ता यदि मैं ही पहले 'हैलो' कह देता- न जाने क्यों मैं इतना संकुचित बन गया था। मैं वह संग्राम सिंह नहीं रहा था जो स्कूल में हुआ करता था। निर्मल और निडर। समय की मार ने मुझे निर्बल और भीरू बना दिया था। उस दिन मैं 'हैलो' कर देता तो कम से कम बोलचाल तो आरंभ हो जाती। पुनर्निलन की नूतन आशा में अंकुर निकल आते। परंतु उस दिन मुझसे भूल हो ही गई थी। इस घटना की कटु स्मृतियां मुझे एक दीर्घकाल तक डसती रहीं। मेरे पुराने घाव हरे हो गए थे।

शिमला। जाड़े की शाम थी। मैं और मेरा दोस्त किशन अपने-अपने घरों को लौट रहे थे। बहुत ठंड थी। दोनों ने पेंट की जेबों में हाथ डाल रखे थे और दांतों को किटकिटाते और छपकते हुए चले जा रहे थे। किशन मेडिकल कॉलेज का छात्र था। कोटखाई के एक संपन्न परिवार से था। हमारी दोस्ती काफी पुरानी थी किंतु मैंने कभी उसे अपनी और सरोज की कहानी नहीं सुनाई थी। मैं नहीं चाहता था कि बेचारी सरोज व्यर्थ ही ज़लील समाज की कटु आलोचना का शिकार बने। मुझे ज्ञात ही न था कि वह किसी अन्य की सरोज बनकर पहले ही समाज की आंखों का कांटा बन चुकी है। यह बात मुझे तब ज्ञात हुई जब किशन ने एकाएक सरोज की चर्चा छेड़ दी थी। हम अकसर लड़कियों की बातें किया करते और उसके पास इस विषय में अनेक जानकारियां हुआ करती थीं। जब मैंने उसे बताया कि मैं सरोज को जानता हूं और हम एक ही स्कूल में पढ़े हैं तो वह एकदम चुप हो गया। उसने ध्यान से मेरी ओर देखा और फिर पूछ लिया-

"तेरी लगती तो नहीं कुछ?"

हम वन-सीमा में 'मैडीकोज़' के होस्टल को जाने वाली सड़क के पास पहुंच चुके थे। यहां से मैं संजौली जाने के लिए उससे अलग हो जाता था। कभी-कभी ऊपर वाली सड़क से भी उसके साथ होस्टल में टेबल-टैनिस खेलने चला जाता या यूं ही जिन दिन हम बहुत ज्यादा जवानी के नशे में होते। घूमने चला जाता। कभी वह भी संजौली तक मेरे साथ आ जाता और फिर संजौली चक्कर के पास कलकत्ता-टी-स्टाल में बाली के ढाबे में हम चाय पीने के बाद अलग हो जाते। आज सरोज पर सहसा ही वार्तालाप चल पड़ने से मेरी उत्सुकता जाग उठी। मैं उसे खींचता हुआ बाजू से पकड़ कर संजौली की ओर ले चला। 'हवा-घर' तक पहुंचते-पहुंचते हम पुनः सामान्य हो गए और उसने अपना प्रश्न दोहराया-

"हां, मैं पूछ रहा था कि सरोज लगती तो नहीं तेरी कुछ?"

"तेरे साथ स्कूल में पढ़ने वाली सारी लड़कियां तेरी क्या लगती हैं?" मैंने उस पर मजाक में प्रतिप्रश्न किया?

उसने फिर पूछा -

"कुछ लगती है तो बता दे।"

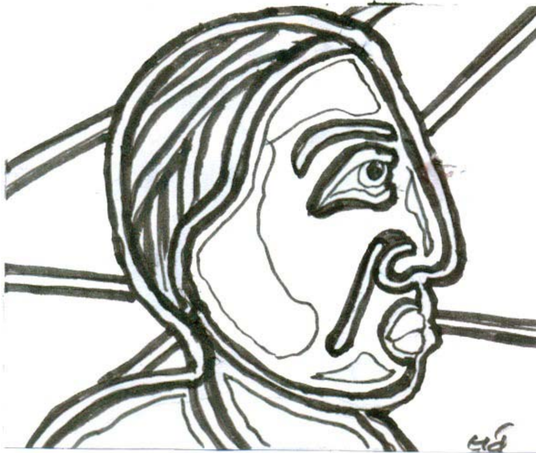
"ओ नहीं यार, कुछ नहीं लगती। अब बता तो सही क्या बात है?" मैंने जोर देकर अपनी बात दोहराई।

अब हमने बोथ-वैल लॉग का इलाका पीछे छोड़ दिया था और कोर्टशीरा कॉलेज के गेट के पास पहुंच गए थे। मेरी उत्सकुता भीतर ही भीतर धैर्य की सीमा पार कर चुकी थी और मैं उसे बताते-बताते रुक गया था कि सरोज मेरी माशूका लगती है। फिर किशन ने सरोज और डॉ. विनोद की प्रणय-कथा से लेकर उनके अवैध संबंधों तक की सारी कहानी बता दी। डॉ. विनोद किशन का सीनियर था। सरोज के पिता का किराएदार था। सारा किस्सा सुनते-सुनते मेरे पांव तले की धरती खिसकती सी प्रतीत हुई। शरीर में रक्त संचार बंद हो गया जान पड़ता था। कोर्टशीरा के आगे वाले मोड़ पर बैंचों पर बैठ कर मैंने किशन से यह सारा वृतांत सुना तो मेरी नज़रें शून्य में ही लटकी हुई रह गईं। अंधेरा हो चला था। कहानी समाप्त हो गई थी। इससे पहले कि किशन को सिर्फ मेरी सांसें सुनाई पड़ें और उसे मेरे सदमे का अहसास हो, मैंने उठते हुए कहा -

"किशन, यार तू भी बड़ी चीज है, पता नहीं इतने सारे लड़के-लड़कियों के किस्से तुम्हारे पास कहां से आ जाते हैं, चलो, अब चलें भी।"

वह उठा और हम सड़क पर आ कर संजौली की ओर चल दिए।

संजौली से किशन मेडिकल होस्टल चला गया और मैं अपने कमरे पहुंचा। मुझे यही पता नहीं चल पा रहा था कि मैं ठंड से कांप रहा हूं या सनसनी से। अपने अतीत का खयाल किया तो लगा कि सरोज हर बार मिल कर भी मुझे नहीं मिल सकी थी। उस भोली भाली ग्रामीण छोकरी को जवानी के उद्वेलन ने, उसके काल्पनिक



स्वप्नों ने एकाएक छल दिया था उसे शायद। सारी रात मैं सो न सका था। रह-रहकर किशन की चूहलभरी बातें कानों में गूंज रही थीं। कभी गंवार पाठे वाले मोड़ की वह बचकानी घटना स्मरण हो आती तो कभी स्कें‌डल-प्वाइंट पर सहकारी बैंक के सामने जंगले के सहारे खड़ी मुरझाई सी सरोज।

पहले अमर की संपत्ति के भय से और अब समाज की कटु आलोचना के डर से मैंने एक बार फिर सरोज को भूल जाने का प्रयत्न आरंभ कर दिया। इधर मुझे यह भी ज्ञात हुआ कि उसकी सगाई हो गई है। यह सुनकर मुझे इतनी ही प्रसन्नता हुई जितनी विनोद के साथ उसकी प्रणय-चर्चा को सुनकर हुई थी। किंतु अब मैं उसे भूलने में असमर्थ था, परिस्थितियां ही ऐसी थीं। विगत आठ वर्षों में अपने दिल के वीरान खेत पर एक पौधा प्रेम का इतनी मेहनत से, इतने प्रयासों से, लगन और एकाग्रचितवन से हराभरा बनाया था और जिसकी उम्मीद पर मैंने अपने को विकटतम परिस्थितियों में भी यहां तक पहुंचाया था, उस पौधे को, उस उम्मीद को, उस प्रेरणास्रोत को, अब कैसे इस प्रकार सहसा ही त्याग सकता था। कैसे इस बात के लिए अपने को तैयार कर सकता था। वह कभी न कभी, कहीं न कहीं नजर आ ही जाती थी और उस भोले व अल्हड़ बचपन की ओर इशारा करती हुई माल रोड की उत्तेजनापूर्ण भीड़ अथवा लोअर बाजार की धक्कमपेल में अदृश्य हो जाती। मैं उस हरे भरे स्वस्थ पौधे को अब उखाड़ नहीं सकता था।

एक दिन वह पुनः वहीं पर सहकारी बैंक के सामने 'स्कें‌डल' पर एक महिला के साथ खड़ी दिखाई पड़ी। मैं अपनी ड्यूटी पर जा रहा था। वहीं खड़ा होकर उसे जी भर कर देखना चाहा। किंतु दिल दबाकर आगे बढ़ गया। अभी उसने मुझे नहीं देखा था। मैं कुछ कदम दूर ही गया होगा कि मेरा पुराना सखा किशन मिल गया। वह मुझे खींच कर वापिस ले आया। जी तो मेरा भी जाने को न कर रहा था। किसी प्रकार सरोज से आंखें चार करने का भीतर ही भीतर बहाना ढूंढ रहा था। किशन के मिलने ने मेरी दुविधा और मुश्किल को समाप्त कर दिया। किशन को बैंक में काम था। कहने लगा साथ चलेंगे। थोड़ी देर में दफ्तर को उसका रास्ता भी कालीबाड़ी से ही था। सरोज अभी भी उसी महिला के साथ वहीं खड़ी थी। किंतु अब वह पहले की भांति नीचे माल रोड पर नहीं देख रही थी। बल्कि डाकखाने के मुख्यद्वार पर लोगों की आमद-जामद का अवलोकन कर रही थी। देखते ही देखते न मालूम क्या हुआ कि वह जंगले के सहारे धीरे से बैठ गई और फिर बेहोश हो कर गिर पड़ी। मानो कोई पौधा जड़पट हो कर एकाएक धीरे से उलट गया हो। वह महिला सरोज को बाजू पर सिरहाने की तरह ऊंचा करके अपने दुपट्टे से हवा करने लगी। मैंने और किशन ने इधर-उधर देखा। पास में कोई सहायतार्थ नज़र नहीं आया। फिर हम समीप पहुंचे। वह महिला अब अपने पांव पर बैठ गई थी और सरोज का सिर गोद में लेकर दुपट्टे से पंखा कर रही थी। वह कभी पंखा करती तो कभी उसके गालों को थपथपाती। कुछ देर बाद उसे होश आया। उसने पानी मांगा। पास कोई नल न था। मैं सामने प्रदेश सहकारी बैंक में घुसा। शीघ्रता से एक गिलास पानी उपलब्ध किया और उसे लेकर लौट आया। अब वह लगभग पूरे होश में थी। उसने पानी पीने के पश्चात् खाली गिलास मुझे लौटा दिया और 'थैंक्यू' कहा। किंतु इस 'थैंक्यू' में तनिक भी अपनापन न था। एक अपरिचितपने का बोध होता था। ध्वनि के उत्स में जो भाव होता है वह शब्दों के भावार्थ की विवेचना करता है। उसके मुंह से केवल शब्द 'थैंक्यू' निकला था और मुझे अनुभूति हुई कि उसके इस शब्द के पीछे उपेक्षित गरिमा नहीं थी बल्कि अनपेक्षित ठंडापन था। मैं इतने वर्षों के उपरांत उसके इतना समीप था और कुछ सहज, सरस, गरिमापूर्ण, प्यारभरे शब्दों को सुनने हेतु लालायित हो रहा था किंतु उसके मुख से निकला था एक विदेशी शब्द, 'थैंक्यू'। पहली मर्तबा सुना था मैंने उसके मुंह से यह शब्द और वह भी एक अजनबी लहज़े में। वह उठी और अपने कपड़े आदि ठीक करके, रूमाल से मुंह पोंछती हुई, अपनी साथी महिला के साथ स्कें‌डल-प्वाइंट की ओर घूम, धीरे-धीरे माल रोड की ओर चली गई। मैं हाथ में गिलास थामे संज्ञाशून्य सा वहीं खड़ा रह गया होता यदि किशन ने मुझे गिलास बैंक में जाकर वापिस देने को न चेताया होता। मैं किशन के सम्मुख अपने इस विचित्र व्यवहार पर शर्मा से पानी-पानी हो गया था। प्यार की परछाइयां आधा जीवन समेट कर कब तक मेरे साथ चलेंगी, मैं सोचता हुआ बैंक के द्वार के भीतर चला गया और सरोज भविष्य के फर्श पर कदम बढ़ाती हुई वर्तमान को जीने हेतु माल रोड की गहमागहमी में खो गई थी।

गांव लिंगाह डाकघर झिकनीपुल, तहसील चौपाल, जिला शिमला, हिमाचल प्रदेश-171 211, मो. 0 94187 98467

कहानी

विवशता

◆ सुशांत सुप्रिय

जब सुबह झुनिया वहाँ पहुँची तो बंगला रात की उमस में लिपटा हुआ गर्मी में उबल रहा था। सुबह सात बजे की धूप में तल्खी थी। वह तल्खी उसे मेम साहब की तल्ख ज़बान की याद दिला रही थी।

बाहरी गेट खोल कर वह जैसे ही अहाते में आई, भीतर से कुत्ते के भौंकने की भारी-भरकम आवाज ने उसके कानों में जैसे पिघला सीसा डाल दिया। उँगलियों से कानों को मलते हुए वह बंगले के दरवाजे पर पहुँची। घंटी बजाने से पहले ही दरवाजा खुल चुका था।

'तुम रोज देर से आ रही हो। ऐसे नहीं चलेगा।' सुबह बिना मेक-अप के मेम-साहब का चेहरा उनकी चेतावनी जैसा ही भयावह लगता था।

'बच्ची बीमार थी ...।' उसने अपनी विवश आवाज को छिपकली की कटी-पूँछ-सी तड़पते हुए देखा।

'रोज एक नया बहाना !' मेम साहब ने उसकी विवश आवाज को ठोकर मार कर परे फेंक दिया। वह वहीं किनारे पड़ी काँपती रही।

'सारे बर्तन गंदे पड़े हैं। कमरों की सफाई होनी है। कपड़े धुलने हैं। हम लोग क्या तुम्हारे इंतजार में बैठे रहें कि कब महारानी जी प्रकट होंगी और कब काम शुरू होगा ! हुँह् ! 'मेम साहब की नुकीली आवाज ने उसके कान छलनी कर दिए।

वह चुपचाप रसोई की ओर बढ़ी। पर वह मेम साहब की कँटीली निगाहों का अपनी पीठ में चुभना महसूस कर रही थी। जैसे वे मारक निगाहें उसकी खाल चीरकर उसके भीतर जा चुभेंगी।

जल्दी ही वह जूठे बर्तनों के अंबार से जूझने लगी।

'सुन झुनिया !' मेम साहब की आवाज ड्राइंग रूम को पार करके रसोई तक पहुँची और वहाँ उसने एक कोने में दम तोड़ दिया। जूठे बर्तनों के अंबार के बीच उसने उस आवाज की ओर कोई ध्यान नहीं दिया।

अरे, बहरी हो गई है क्या ?'

जी, मेम साहब।'

ध्यान से बर्तन धोया कर। क्राकरी बहुत महँगी है। कुछ भी टूटना नहीं चाहिए। कुछ भी टूटा तो तेरी पगार से पैसे काट लूँगी , समझी ?' उसे मेम साहब की आवाज किसी कटहे कुत्ते के भौंकने जैसी लगी।

जी, मेम साहब।'

ये बड़े लोग थे। साहब लोग थे। कुछ भी कह सकते थे। उसने कुछ कहा तो उसे नौकरी से निकाल सकते थे। उसकी पगार काट सकते थे -- उसने सोचा।

क्या बड़े लोगों को दया नहीं आती ? क्या बड़े लोगों के पास दिल नाम की चीज नहीं होती ? क्या बड़े लोगों से कभी गलती नहीं होती ?

बर्तन साफ कर लेने के बाद उसने फूल झाड़ू उठा लिया ताकि कमरों में झाड़ू लगा सके। बच्चे के कमरे में उसने जमीन पर पड़ा खिलौना उठा कर मेज पर रख दिया। तभी एक नुकीली , नकचढ़ी आवाज उसकी छाती में आ धँसी -- 'तूने मेरा खिलौना क्यों छुआ, डर्टी डम्बो ? मोरोन !' यह मेम साहब का बिगड़ा हुआ आठ साल का बेटा जोजो था। वह हमेशा या तो मोबाइल पर गेम्स खेलता रहता या टी.वी. पर कार्टून देखता रहता। मेम साहब या साहब के पास उसके लिए समय नहीं था, इसलिए वे उसे सारी सुविधाएँ दे देते थे। वह ए.सी. बस में बैठ कर किसी महँगे 'इंटरनेशनल' स्कूल में पढ़ने जाता था। कभी-कभी देर हो जाने पर मेम साहब का ड्राइवर उसे मर्सिडीज गाड़ी में स्कूल छोड़ने जाता था।

झुनिया का बेटा मुन्ना जोजो के स्कूल में नहीं पढ़ता था। वह सरकारी स्कूल में पढ़ता था। हालाँकि मुन्ना अपना भारी बस्ता उठाए पैदल ही स्कूल जाता था, उसका चेहरा किसी खिले हुए फूल-सा था। जब वह हँसता तो झुनिया की दुनिया आबाद हो जाती -- पेड़ों की डालियों पर चिड़ियाँ चहचहाने लगतीं, आकाश में इंद्रधनुष उग आता , फूलों की क्यारियों में तितलियाँ उड़ने लगती, कंक्रीट-जंगल में हरियाली छा जाती। मुन्ना एक समझदार लड़का था। वह हमेशा माँ की मदद करने के लिए तैयार रहता . ..

हाथ में झाड़ू लिए हुए झुनिया ने दरवाजे पर दस्तक दी और साहब के कमरे में प्रवेश किया। साहब रात में देर से घर आते थे और सुबह देर तक सोते रहते थे। महीने में ज्यादातर वे काम के

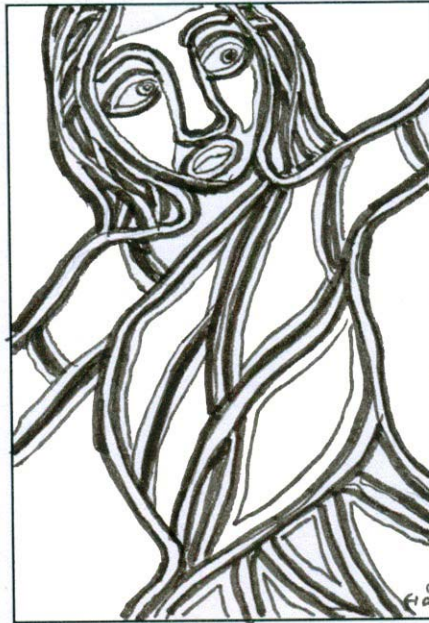
सिलसिले में शहर से बाहर ही रहते थे। झुनिया की छठी इन्द्रिय जान गई थी कि साहब ठीक आदमी नहीं थे। एक बार मेम साहब घर से बाहर गई थीं तो साहब ने आँख मार कर उससे कहा था -- 'जरा देह दबा दे। पैसे दूँगा।' झुनिया को वह किसी आदमी की नहीं, किसी नरभक्षी की आवाज लगी थी। साहब के शब्दों से शराब की बू आ रही थी। उनकी आँखों में वासना के डोरे उभर आए थे। उसने मना कर दिया था और कमरे से बाहर चली गई थी। पर उसकी हिम्मत नहीं हुई थी कि वह मेम साहब को यह बता पाती। कहीं मेम साहब उसी को नौकरी से निकाल देतीं तो ? यह बात उसने अपने रिक्शा-चालक पति को भी नहीं बताई थी। वह उसे बहुत प्यार करता था। यह सब सुन कर उसका दिल दुखता ... लेकिन इस महँगाई के जमाने में अकेले उसकी कमाई से घर नहीं चल सकता था। इसलिए वह साहब लोगों के यहाँ झाड़ू-पोंछा करने के लिए विवश थी।

झाड़ू मारना खत्म करके अब वह पोंछा मार रही थी।

ए, इतना गीला पोंछा क्यों मार रही है ? कोई गिर गया तो? 'मेम साहब की आवाज किसी आदमखोर जानवर-सी घात लगाए बैठी होती। उससे जरा-सी गलती होते ही वह उस पर टूट पड़ती और उसे नोच डालती।

अब गंदे कपड़ों का एक बहुत बड़ा गट्ठर उसके सामने था।

कपड़े बहुत गंदे धुल रहे हैं आजकल।' यह साहब थे। दबे पाँव उठ कर दृश्य के अंदर आ गए थे। उसने सोचा, अगर उस दिन उसने साहब की देह दबा दी होती तो भी क्या साहब आज यही कहते ? यह सोचते ही उसके मुँह में एक कसैला स्वाद भर गया।



'ये लोग होते ही कामचोर हैं।' मेम-साहब का उससे जैसे पिछले जन्म का बैर था। 'बर्तन भी गंदे धोती है ! ठीक से काम कर वर्ना पैसे काट लूँगी !' यह आवाज नहीं थी, धमकी का जंगली पंजा था जो उसका मुँह नोच लेना चाहता था।

झुनिया के भीतर विद्रोह की एक लहर-सी उठी। वह चीखना-चिल्लाना चाहती थी। वह इन साहब लोगों को बताना चाहती थी कि वह पूरी ईमानदारी से, ठीक से काम करती है। वह कामचोर नहीं है। वह झूठे इल्जाम लगाने के लिए मेम साहब का मुँह नोच लेना चाहती थी। लेकिन वह चुप रह गई ...

एक चूहा मेम साहब की निगाहों से बच कर कमरे के एक कोने से दूसरे कोने की ओर तेजी से भागा। लेकिन झुनिया ने उसे देख लिया। अगर रात में सोते समय यह चूहा मेम साहब की उँगली में काट ले तो कितना मजा आएगा -- उसने सोचा। मेम साहब चूहे को नहीं डाँट सकती, उसकी पगार नहीं काट सकती, उसे नौकरी से नहीं निकाल सकती ! इस खयाल ने उसे खुश कर दिया। जिंदगी की छोटी-छोटी चीजों में अपनी खुशी खुद ही ढूँढनी होती है -- उसने सोचा।

'सुन, मैं जरा बाजार जा रही हूँ। काम ठीक से खत्म करके जाना, समझी?' मेम साहब ने अपनी गुस्सैल आवाज का हथगोला उसकी ओर फेंकते हुए कहा।' सुनो जी, देख लेना जरा।' यह सलाह साहब के लिए थी।

मेम साहब के जाते ही साहब अखबार पढ़ने के बहाने मुस्तैदी से ड्राइंग-रूम में जम गए। वह ड्राइंग-रूम के दूसरे कोने में पोंछा मार रही थी। उसने पाया कि साहब उसकी मुड़ी देह के उतार-चढ़ावों को गंदी निगाहों से घूर रहे थे। सकुचा कर वह अपना काम जल्दी-जल्दी खत्म करने लगी। अभी इस बड़े से मकान के कई कमरों में पोंछा मारना बचा था।

तभी दरवाजे की घंटी बजी। साहब लपक कर दरवाजे पर पहुँचे। सामने खाना बनाने वाली मेड मीना खड़ी थी। साहब उसके अंगों को भी ताड़ने लगे। साहब के बगल से निकल कर मीना जल्दी से रसोई में घुस गई। साहब भी चलते हुए रसोई के दरवाजे तक पहुँच गए।

'सुनो, तुम बहुत अच्छा खाना बनाती हो ! जल्दी से कुछ बढ़िया-सा बना दो।' अब साहब की वासना भरी आवाज रसोई के बर्तनों से टकरा कर गूँज रही थी। उनके मुँह से जैसे लार चू रही थी। उनकी लाल आँखें जैसे मीना की देह से लिपट गई थीं। वह खाना बनाने के लिए अपनी चुन्नी उतार कर कोने में रख चुकी थी। साहब की ओछी हरकतों की वजह से बिना चुन्नी के वह बेहद असहज महसूस कर रही थी। साहब कुछ देर मीना की देह को घूरते रहे। फिर लौट कर अपनी जगह पर बैठ गए और टी . वी . चला कर न जाने कौन-से चौनल पर अधनंगी हीरोइनों का नाच-गाना देखने लगे।

तभी दरवाजे की घंटी एक बार फिर बजी। साहब उतावले-से हो कर दरवाजे तक गए। बाहर कपड़े इस्तरी करने वाले की चौदह साल की बेटी मुन्नी खड़ी थी। इस्तरी करने के लिए कपड़े माँगने आई थी। पर साहब फिर अपनी नीचता पर उतारू हो गए।

'कितना घटिया आदमी है यह ! छोटी बच्ची को भी नहीं

छोड़ता।' उसने सोचा। ऐसे राक्षस को तो पुलिस में दे देना चाहिए। पर वह जानती थी कि साहब बड़े आदमी थे। वे माल-मत्ते वाले थे। रसूख वाले थे। ऐसे लोग कुछ ले-दे कर कानून के शिकंजे से भी बच जाते थे।

ड्राइंग रूम में पोंछा मारना खत्म करके वह भीतर के बचे कमरों की ओर मुड़ी। उसने पाया कि साहब भी अपनी जगह से उठकर उसके पीछे-पीछे आ रहे हैं।

'सुनो झुनिया। कभी जरूरत हो तो मुझसे रुपये-पैसे उधार ले लेना !' साहब ने कोशिश करके स्वर को कोमल बना कर कहा। लेकिन साहब की आँखों में वासना भरी हुई थी। वह समझ गई कि कसाई शिकार फँसाने के लिए लालच दे रहा है। चारा डाल रहा है। उसने साहब की बात का कोई जवाब नहीं दिया और चुपचाप कमरे में पोंछा मारती रही। साहब फिर बोले, 'तुमसे कहा तो था, कभी-कभी देह दबा दिया करो। खुश कर दूँगा।' तभी बाहर दरवाजे की घंटी बजने की आवाज आई। साहब ने एक मोटी-सी गाली दी। न चाहते हुए भी उन्हें दरवाजा खोलने के लिए जाना पड़ा। झुनिया ने चैन की साँस ली। एक ओर मेम साहब थी जो कटहे कुत्ते-सी काटने को दौड़ती थी। दूसरी ओर यह कामुक साहब हद पार करने को तैयार खड़े थे। क्या मुसीबत थी।

काम खत्म करके वह चलने लगी तो उसने देखा कि ड्राइंग रूम के दरवाजे के पास खड़े साहब फिर से उसकी देह को गंदी निगाहों से घूर रहे हैं। सकुचा कर उसने अपनी साड़ी का पल्लू और कस कर अपनी छाती पर लपेट लिया और बाहर अहाते में निकल आई। वह समझ गई कि आज साहब ने सुबह-सुबह पी रखी है क्योंकि साहब के बगल से निकलते हुए उसके नथुनों में शराब का बदबूदार भभका घुसा। वह तेज कदमों से बाहर की ओर भागी। पर उसे लगा जैसे साहब की वासना भरी आँखें उसकी पीठ से चिपक गई हैं। उसे घिन महसूस हुई।

'सुनो, शाम को जल्दी आ जाना, और मुझ से अपनी पगार ले जाना।'

साहब की वासना भरी आवाज जैसे उसकी देह से लिपट जाना चाहती थी। उसे लगा जैसे यह घर नहीं, किसी अँधेरे कुएँ का तल था। जैसे उसकी देह पर सैकड़ों तिलचट्टे रेंग रहे हों। उसका मन किया कि वह यहाँ से कहीं बहुत दूर भाग जाए और फिर कभी यहाँ नहीं आए। लेकिन तभी उसे अपनी बीमार बच्ची याद आ गई, उसकी महँगी दवाइयाँ याद आ गईं, और रसोई में पड़े खाली डिब्बे याद आ गए ...

I-5001, गौड़ ग्रीन सिटी, वैभव खंड,
इंदिरापुरम, गाजियाबाद, उ. प्र.-201014
(उ. प्र.), मो : 8512070086

कविता

पगडंडी

◆ एल. आर. शर्मा

मैं एक पगडंडी हूं
संकरीली, पथरीली सी
खेतों और चरागाहों के बीच
चट्टानों और झरनों के बीच
वृक्षों की घनी कतारों के बीच
कभी लकीर जैसी
कभी सांप और लहरदार
सदियों से पथिकों को
मंज़िल तक पहुंचाती आई हूं।

चलते-चलते थक जाने पर
किनारे की चट्टानों पर
जब पथिक सुस्ताने बैठते हैं
और झरने के पानी से
गले की प्यास बुझाते हैं
तो मेरा मूक हृदय
असीम सुख से लबालब हो जाता है।

आज के युग के पथिक
मुझ पर सड़क बनाने की बात करते हैं
क्योंकि मैं
संकीर्ण हूं
गति अवरोधक हूं
और मूक हूं

मेरी चट्टानों को तोड़ कर
मेरे वृक्षों को काट कर
मेरे झरनों को मेरे वक्ष से हटा कर
काली सड़क बना दी जाएगी
जिसके मील के पत्थर बोलेंगे
द्रुत गतिमान गाड़ियां दौड़ेंगी
किसी को रुकने की फुर्सत नहीं होगी
चट्टानें और झरने किसी का दुःख बांट न सकेंगे
मैं सदियों पहले भी थी मौन

अब भी मौन हूं।

42/5, हरिपुर, सुंदरनगर, जिला मंडी,
हिमाचल प्रदेश-175 016

कहानी

बुझरू

◆ संदीप शर्मा

हम बच्चों को उसका बड़ा इंतजार रहता था, वह साल में वैसे भी एक-दो बार ही आता है, पर जब वह आता है तो नई-नई बातें हर किसी को सुनने को मिलती है। पिछली बार जब वह बुझरू आया था तो हम सब मिलकर पूरा गांव घूमे थे ,उसके साथ। मेरी हाथों की लकीरें देखकर तो उसने साफ कह दिया था कि ये लड़का तो पूरे परिवार का नाम रोशन करेगा,सूर्य है इसके भाग्य में, वकील बनेगा यह बड़ा होकर।

पांचवीं क्लास में पढ़ते बच्चे को अगर वकील बनने का दिव्य स्वप्न कोई अगर पहले ही दिखा दे तो फिर किसे अच्छा नहीं लगेगा? अम्मा की नजरों में उसने मुझे हीरो बना दिया था। उसके बाद अम्मा ने मुझे कभी नहीं रोका, ओबरी से चोरी छिपे दूध से मलाई चुराते हुए। अम्मा ने उसको छड़ोलू भरकर दाने दिए थे और साथ में और भी बहुत कुछ। फिर उसके साथ-साथ पूरे गांव में हम बच्चों ने चक्कर लगाया था। पड़ोस वाले चाचू के बेटे राजू को उसने मास्टर बनाया था। वहां भी उसे खूब अनाज मिला था। पूरे गांव में हर किसी के माथे व हाथों की लकीरों को पढ़कर उसने शाम तक अपना बोरू पूरा भर लिया था। पता नहीं ! कितने ही मास्टर! इंजीनियर, ड्राईवर उसने बना डाले थे। पूरे गांव के बच्चों की मांएं व दादियां उस दिन खुश थी कि उनके बच्चे बड़े होनहार है, जो इतने बड़े-बड़े सरकारी नौकर बनेंगे।

सरकारी नौकर बने या कुछ और पर हमें वह पंसद बहुत था। उसकी वजह से हमारी इज्जत बनती थी पूरे परिवार में। हम उसके पीछे - पीछे जब भागते और उसको बोलते, बुझरू ! हमें कुछ और बता दो। तो वह कहता, भाग जाओ ! अपने घर, नहीं तो तुम्हारे लिए काली कलूटी पत्नी डाल दूंगा तुम्हारी लकीरों में।'' हमें उस वक्त उसकी बातों पर बड़ा मजा आता । काली क्लूटी के नाम पर हम डर तो जाते पर फिर उसके पीछे लग जाते। हम में से कोई बोलता, अच्छा! यह तो बता दो कि हम पेपरों में कितने नम्बर लेगें? तो वह बोलता, ''अरे! मैं चाहूं तो पूरे के पूरे दिलवा सकता हूं, पर मेरी विद्या हर कोई नहीं सीख सकता।'' बड़ा मजेदार बुझरू था वह ! दो-चार दिन उसके जाने के बाद न अम्मा से डांट पड़ती थी न मां से और न ही दादा से ।

उसके आने का एक और फायदा हुआ कि मुझे नई किताबें पेपरों के बाद मिल गईं, वर्ना हमें एक- दूसरे की पुरानी किताबें ही पढ़नी पड़ती पूरा साल। गली सड़ी किताबों से कई पेज या तो आगे से गायब होते या फिर पीछे से। कई एम.बी.डी. में तो बीच में से मुख्य उत्तर ही गायब होते। किसी ने पर्चीयां बनाने के लिए ब्लेड से काट दिए होते। ऐसी किताबों की पहले ही बुकिंग करवानी पड़ती। जिससे लेनी है उसके घर के दो - चार चक्कर लगाने पड़ते या फिर उस होनहार विद्यार्थी को स्कूल में साथ लगती दुकान से आलू- छोले खिलाने पड़ते। जो सबसे अच्छा विद्यार्थी होता उसके पास तो बुकिंग करवाने वालों की सबसे ज्यादा भीड़ रहती। बस कुछ दिन आलू-चने खिला दिए और उसकी पुरानी किताबें मिल गई। चाहे उसने भी किसी को चने खिला कर ली हुई हो पिछले साल।

खैर अब जब मुझे वकील बनने की बात वह बुझरू पिछली बार कह गया था तो मैंने भी जिद्द पकड़ ली थी कि मैं इस साल तो नई किताबें ही खरीदूंगा। अतः मुझे नई किताबें मिल ही गई। नई किताबों के चमचपाते कवर देखकर मन इतनी खुशी से भरा था कि वह खुाी कोई दूसरा महसूस नहीं कर सकता है। जब से उसने मेरे वकील बनने की बात कही थी, तब से मैंने और अधिक पड़ना शुरू कर दिया था। इस साल मैं कक्षा में तीसरे नम्बर पर आया था। पहले पर भी आ सकता था लेकिन जो विद्यार्थी पहले व दूसरे स्थान पर आए है उनमें से एक तो स्कूल में ही लगे एक अध्यापक का भतीजा था और दूसरा उस अध्यापक के गांव का। इसलिए दो-तीन इधर-उधर करने पर मैं तीसरे नंबर पर खिसक आया था जबकि पहले वाले प्राइमरी स्कूल में मैं हमेशा प्रथम या द्वितीय ही आता था। वे लड़के भी थे उस क्लास में, पर वहां उनका कोई रिश्तेदार अध्यापक नहीं था। ऊपर से मुझे अब पढ़ाने वाला भी कोई नहीं है वही बच्चे कहते हैं कि वे दोनों अपने चाचू के पास शाम को पढ़ने भी जाते हैं। वे दूसरे गांव के बच्चे थे।

खैर अब बुझरू के फिर से आने का इंतजार हम बच्चों को था। अब अगर उस दिन हमें छुट्टी होती, तब तो हमरे मजे लग जाते और कहीं हमारे स्कूल के वक्त वह आ जाए तो फिर हम उदास हो जाते कि वह आया भी और हम बच्चे उससे मिले नहीं। क्योंकि जितनी खुशी हमें उससे मिलने से होती है उतनी ही शायद

उसको भी होती होगी क्योंकि उसको भी तो हमारे ग्रह पढ़ने और देखने की चिंता होती होगी। वह बंदा ही ऐसा है जो कोई हाथ लेकर उसके सामने बैठा नहीं कि उसने हाथों की लकीरों के बारे में सब कुछ बताया नहीं। वह माथे पर भी कई कुछ ढूंढता रहता।

हम तो अचम्भे के साथ उसकी उन बातों को सुनते जो हमारे फायदे के बारे में होती और ग्रह वगैरा के बारे में तो हम कुछ नहीं सुन पाते, हां! अम्मा या मां बड़े ध्यान से सुनती। वह ग्रहों के अच्छे व बुरे प्रभावों के बारे में बताता और साथ में उनके प्रभाव से बचने के तरीके भी बताता। जो उपाय वह बताता वह सब उसको कोई न कोई चीज दान करने के बारे में होते। वह कभी कहता कि शनि भारी है तो वह लोहे की कीलें दान करने को कहता। दान देने के लिए कहीं ओर जाने की जरूरत नहीं होती। बस उसे ही दान दे दो ओर ग्रह शांत। अगर किसी का वृहस्पति नीच होता तो वह किसी दाल को दान करने को कहता। अगर मंगल ठीक न होता तो वह गुड़ दान करने को कहता। मतलब लगभग वह हर सामान वह अपनी जरूरत या फिर ग्रहों को शांत करने के लिए मेरी अम्मा से इकट्ठा कर लेता।

पिछली बार तो उसने यही किया था। साथ में उसने एक ग्रह शायद राहु के बारे में कहा था, '' चोट का भय है ! वृक्ष या किसी और ऊंची चीज पर इस लड़के को मत चढ़ाना।'' साथ में उसने भी केतू ग्रह के प्रभाव के बारे में भी बताया था और साथ में उसके उपाय के बारे में भी। इस बार पेपरों के नतीजे के बाद हमें कुछ छुटिट्यां थी।

अभी गेहूं के काटने का काम भी शुरू नहीं हुआ था। हां! गन्ने से गुड़ निकालकर शक्कर निकालने का काम शुरू हो चुका था। हम पूरा दिन बेलने पर बैलों को हांकते रहते या बेलने में गन्ने डालते रहते या फिर बीच में भाग कर गुड़ के पेड़े मांग कर रफूचक्कर हो जाते और आम के नीचे वाले मैदान में गिल्ली-डंडा खेलते रहते। वैसे हमें किसी ने बताया था कि वह बुझरू और उसके जैसे और लोगों की टोली शहर से आई है और खड्ड में उन्होंने झोपड़ी बनाकर रहना शुरू कर दिया है।



अब पता नहीं कब हमारे गांव का नंबर आएगा? इन छुटिट्यों में ही आ जाए तो बस मजा आ जाए। दोपहर के 1-2 बज रहे होंगे कि हमें पता चला कि वह बुझरू गांव में आ गया है। हम अपने बैलों को हांकने का काम छोड़कर दादा जी को बिना बताए उसकी तलाश को निकल चुके थे। वह तब तक गांव के कुछ घरों में घूम चुका था। लेकिन अभी तो पूरा गांव बाकी था हम उसके पीछे - पीछे हो लिए । वह राजू , गोपी, मंगल, श्याम और बाकी सब बच्चों के घर गया। हर बच्चे के बारे में उसने फिर से कोई खास बात बताई जिसे सुनकर बच्चे व उसकी दादी या उसकी मां को बड़ा अच्छा लगा। उसका बोरू भरता जा रहा था, अलग-अलग खाने पीने की चीज़ों से।

अब सब घरों से होते हुए वह हमारे घर पहुंच चुका था। मैंने जल्दी से अम्मा को रसोई से बुलाया और अपने हाथ धोकर उसके सामने बैठ गया था। जैसे ही मैंने अपने हाथ उसके आगे किए और वह शुरू हो गया। अम्मा अंदर से आकर सब कुछ सुनने लग पड़ी थी। अम्मा मेरी टीप (टेवा) भी ले आई थी, कहीं से निकालकर। उसने टेवा भी देखा और साथ में मेरे हाथों को देखता रहा। वह बोला, ''ग्रह बदल रहे है अपनी स्थिति। यह लड़का अब पढ़ाई में और अच्छे नंबर लेगा। अम्मा ही थी उस वक्त घर में। वह बड़े ध्यान से सुन रही थी। उसने फिर बोलना शुरू किया, अब ग्रहों ने जब चाल बदल दी है तो फिर यह लड़का तो सरकारी नौकरी ही करेगा। मैंने बीच में उसे टोक दिया, बुझरू ताऊ, पिछली बार तो आपने मुझे वकील बनने की बात की थी। वह थोड़ा हंसा और बोला, बच्चा ! यह ग्रह बड़े शक्तिशाली है, कुछ भी कर सकते है, इन्होंने अपनी चाल बदल दी है। सूर्य की दृष्टि वृहस्पति पर पड़ रही है, अब तो सरकारी नौकरी पक्की। हां ! थोड़ा राहु और मंगल के बुरे प्रभाव है उसके लिए में अभी बता देता हूं। उसके बाद उसने दान की कुछ चीज़ें बता दी।

फिर अम्मा अंदर से मेरे सभी चाचूओं के टेवे भी ले आई थी। उसने बारी-बारी सब के सब टेवे देखने शुरू किए। बड़े चाचू के टेवे को देखते ही वह बोला, ''शनि नीच है, लोहे का बड़ा दान करना होगा।'' माई अंदर से लोहे की कोई चीजें जैसे लुहालू; हल को लगने वाला लोहे का औजार, जो मिट्टी को खोदता जाता है लम्बी-लम्बी कीलें ले आओ। राहू-केतू भी सही घरों में नहीं है, इसके लिए कुछ रस्सियां व सण (जिससे रस्सियां बनती हो) ले आओ। दूसरे चाचू का टेवा देखकर वह बोला, ''ग्रह तो कुछ ठीक है हां, मंगल के उपाय के लिए पांच-छह किलो शक्कर दान करने से उपाय हो जाएगा। तीसरे चाचू का टेवा देखकर भी ऐसे ही कई ग्रहों के बारे में बताता रहा। चौथे चाचू के टेवे में भी उसने कई ग्रहों के बुरे प्रभाव के बारे में बताया।

अम्मा अंदर से सब कुछ लाकर बाहर उसके सामने रखती जा रही थी और वह कुछ न कुछ बताता जा रहा था। अब तक, वह लगभग वह सब कुछ अपने सामने रखवा चुका था जो ग्रहों को

शांत करने या ग्रहों के प्रभाव को टालने के लिए काफी था। यह सब कुछ था, गेहूं की बोरी, आटा, चावल, शक्कर, माह, चने, मुंगी की दाले, कीलें, लुहालू, सण रस्सियां इत्यादि। सब चीजें उसके इर्द-गिर्द रखी जा चुकी थी। वह अभी कुछ मंत्र पढ़ने जा रहा था कि तभी दादा जी बैलों को बेलने से लाते हुए एकदम आंगन में आ गए। दादा ने जल्दी में बैलों को खुंडों में बांधा और बरामदे की ओर को हुए। अम्मा जल्दी से दादा को पानी लाने को हुई।

दादा की नज़र बुझरू पर पड़ी। बुझरू के सामने इतनी सारी चीज़ें भरी पड़ी थी। दादा ने पानी पीते ही अपनी परैण (बैलों को हांकने वाला डंडा) बुझरू की ओर करते ही बुझरू की ओर देखने लगे। दादा जी एकदम झुके और लुहालू को उठाकर बोल पड़े, अरे यह किसने इस बुझरू के सामने रख दिया। अभी तो लुहार से तीखा करके लाया हूं। तभी बुझरू बोल पड़ा, जी ! यजमान जी ! यह ग्रह को शांत करने के लिए मैंने मांगा है। दादा ने पानी खत्म किया। इतने में बुझरू फिर बोल पड़ा, ''यजमान जी दो-चार चिल्में तंबाकू की मिल जाए तो सारे ग्रहों का हिसाब हो जाएगा। कच्चा तंबाकू मतलब हरी पत्तियां तो पहले ही अम्मा ने बुझरू के सामने रख दी थी।

पहले तंबाकू का नाम सुनकर और उस लुहालू को देखकर दादा को पता नहीं एकदम क्या हुआ कि एकदम से परैण का पटाका बुझरू की पीठ पर पड़ चुका था। बुझरू चिल्ला उठा और दादा जी गालियां देने शुरू हो गए, वो ! तू खड्ड में बसा है न ! तेरे परिवार के लोग भी उधर ही बसे हैं न ! तुम लोगों ने कोहले के खेतों से (खड्ड के किनारे वाली उपजाऊ जमीन) से सब्जियां चुराना शुरू कर दिया है और साथ में खड्ड के किनारे के ऊपर धार से खेरों के मोटे पेड़ काट कर अपने लिए झोपड़ी के लिए लगाए है न? और अब तू यहां से सारा सामान अपनी झोपड़ी को ठीक करने से संबंधित इकट्ठा कर रहा है और साथ में अपने खाने-पीने का सामान भी ।

सटाक से दूसरा पटाका बुझरू की पीठ पर फिर पड़ चुका था। वह फिर चिल्ला उठा। तब तक अम्मा भी बाहर आ चुकी थी। दादा की परैण अब भी हाथों में ही थी और वह बुझरू दादा के पैरों में पड़ा था। अम्मा के साथ-साथ हम भी हैरान हो गए। वह रोता हुआ बोल रहा था, गलती हो गई यजमान जी! मैंने यह सारा सामान अपनी नई झोपड़ी के लिए ही इकट्ठा करना चाहा था, पुरानी झोपड़ी में गुजारा नहीं हो रहा था। और भी लोग आए हैं खडड् में रहने। हमारा तो किता ही यही है कि जिस चीज की जरूरत पड़े, वह ग्रहों के नाम पर मांग लो।

दादा थोड़ा शांत हुए ,''अरे बुझरूआ! हम यहां इतनी मेहनत कर रहे हैं, सुबह शाम और तुम लोगों को ठगते फिर रहे हो! अगर मांगना है तो सीधा मांगों, ग्रहों के नाम पर क्यों लूट रहे हो लोगों को। कल सब को बोल देना। कमांदी लगी है आजकल काम करने वालों की बहुत जरूरत है शाम तक तुम्हें तुम्हारी मेहनत मिल जाएगी और अब तुम लोगों ने कोहले से कुछ चुराया तो तुम्हें खड्ड में आकर भगाएंगे समझ गए न।'' वह बुझरू तब तक लुहालू और बाकी सामान बांधने लगा और बोला, ''जी यजमान जी !''

लुहालू को देखते ही दादा जी फिर भड़क उठे। बस उसके इतना बोलने की देर थी कि उसके बाद दो-तीन परैण के पटाके बुझरू की पीठ पर और पड़ गए। वह चिल्लाता हुआ बाहर की ओर भागा और दादा ने तब तक दो-चार और गालियां बुझरू के नसीब में शामिल कर दी थी। वह सारा सामान वहीं छोड़ कर भाग निकला था। इसके बाद दादा ने अम्मा को समझाया, ''ऐसे ही न बांट दिया कर सब कुछ, कोई ढंग का आदमी हो तो.! उसके बाद दादा लुहालू को उठाकर अंदर रख रहे थे और अम्मा ने बुझे मन से सारा सामान फिर से अंदर रखना शुरू कर दिया। दादा बैलों को पानी पिलाने लग पड़े। हमने देखा कि वह बुझरू दूर खेतों में अपनी पीठ को मलता हुआ भागा जा रहा था। उसके बाद वह बुझरू कभी हमारे घर नहीं आया! हां कभी-कभार पंडित तो हमारी जन्म पत्री देकर देखकर कुछ-न-कुछ बताते रहते हैं। पर एक बात है जितना मजा उस बुझरू से हाथ दिखा कर हम बच्चों को आता था, वह मजा आज तक फिर से नहीं आया है। आज याद आता है कि पूरे गांव में उस बुझरू ने जिस-जिसको जो बनाया था, वह कोई भी इंजीनियर, डॉक्टर या मास्टर नहीं बना है।

लुहालू को देखते ही दादा जी फिर भड़क उठे। बस उसके इतना बोलने की देर थी कि उसके बाद दो-तीन परैण के पटाके बुझरू की पीठ पर और पड़ गए। वह चिल्लाता हुआ बाहर की ओर भागा और दादा ने तब तक दो-चार और गालियां बुझरू के नसीब में शामिल कर दी थी। वह सारा सामान वहीं छोड़ कर भाग निकला था। इसके बाद दादा ने अम्मा को समझाया, ''ऐसे ही न बांट दिया कर सब कुछ, कोई ढंग का आदमी हो तो!' उसके बाद दादा लुहालू को उठाकर अंदर रख रहे थे और अम्मा ने बुझे मन से सारा सामान फिर से अंदर रखना शुरू कर दिया।

मैं आज भी सोचता हूं कि उस बुझरू ने मुझे सरकारी नौकरी की भविष्यवाणी की थी। चाहे उसने अपने लालच को पूरा करने के बारे में कहा हो, पर शायद उसने कुछ तो विद्या सीखी थी ज्योतिष की। उसी विद्या के दम पर मेरे हाथों की लकीरों में सरकारी नौकरी आ जाए। मैं अभी तक यही उम्मीद लगा कर उस बुझरू की बातों पर विश्वास करने की कोशिश कर रहा हूं।

मकान नं. 618, वार्ड नं. 1,
कृष्णा नगर, हमीरपुर, हिमाचल प्रदेश।
मो. 0 94181-78176

साक्षात्कार

साहित्य जगत का चर्चित चेहरा नरेश कुमार 'उदास'

◆ सुमन शेखर

नरेश कुमार 'उदास' आज साहित्य जगत का जाना-माना चर्चित चेहरा है। साहित्य की सभी विधाओं में सहजता से लिखने में निपुण श्री उदास जी की रचनाओं में सामाजिक सरोकारों विशेषकर सामाजिक विसंगतियां, बदलते मानवीय मूल्यों का क्षरण तथा आधुनिकता से उपजे पारिवारिक विघटन को विशेष रूप से देखा जा सकता है। ग्रामीण परिवेश से जुड़ी उनकी कहानी 'मां गांव नहीं छोड़ना चाहती' के लिए उन्हें जम्मू-कश्मीर कला, भाषा एवं संस्कृति अकादमी द्वारा सम्मानित किया गया है। साहित्यिक क्षेत्र में उनकी रचनाओं की स्वीकार्यता का इस बात से पता चलता है कि उनकी रचनाओं का अनुवाद मराठी, ओड़िया, पंजाबी, डोगरी तथा पहाड़ी भाषाओं में प्रचुर मात्रा में हुआ है और प्रकाशित भी हुआ है जो किसी साहित्यकार के लिए गर्व की बात है। प्रस्तुत है साहित्यकार नरेश कुमार 'उदास' से कवयित्री सुमन शेखर की बातचीत के मुख्य अंश।

सुमन शेखर : 'उदास' जी आपने लिखना कब शुरू किया और आपकी पहली प्रकाशित रचना कौन-सी थी?

नरेश कुमार 'उदास' : लेखन यात्रा कब आरंभ हुई, इसके बारे में कोई निश्चित तिथि तो नहीं बता पाऊंगा। लेकिन यह बात वर्ष 1976 की है, जब मैंने कविताओं के सृजन से अपनी लेखन यात्रा का शुभारंभ किया था। तब शायद मैं दसवीं कक्षा का छात्र था। मेरी प्रकाशित प्रथम रचना एक कहानी थी, जिसका शीर्षक था, 'एक और नई जिंदगी' यह कहानी दिल्ली से प्रकाशित 'जगत' मासिक पत्रिका में 1976 में छपी थी।

सुमन शेखर : आप साहित्य की किन-किन विधाओं से पहले जुड़े। आपकी सर्वप्रथम किस विधा में पुस्तक थी।

नरेश कुमार 'उदास' : मेरी प्रथम कृति एक काव्यकृति है, जिसका नाम 'ठंडा सूरज' है। यह काव्यकृति सन् 1996 में छपी थी। यहां मैं यह भी बता देना अपना दायित्व समझता हूं कि इस कृति को प्रकाशित करवाने में प्रख्यात साहित्यकार श्री रामकुमार आत्रेय जी से मुझे आर्थिक सहयोग भी मिला था। मैंने साहित्यिक सफर की शुरुआत कविता से की थी। कुछ दिनों के बाद कहानियां भी लिखने लगा, फिर एक उपन्यास भी लिखा लेकिन मैंने उसे आज तक प्रकाशित नहीं करवाया। हां, इस कृति ने मुझे बाद में उपन्यास विधा से जोड़ा अवश्य था। उसके बाद मैंने कविताओं, कहानियों के साथ-साथ लघुकथाएं भी लिखीं। बाद में फिर मैंने क्षणिकाएं भी लिखीं। गीत भी लिखे जो पुस्तकाकार रूप में छपे भी हैं। मैं एक समीक्षक आलोचक का कर्म भी निभा रहा हूं। मेरी लिखी कई पुस्तकों की समीक्षाएं छपी हैं, तथा छपेंगी भी।

सुमन शेखर : आप स्वयं को किस विधा में सृजनार्थ सहज पाते हैं?

नरेश कुमार 'उदास' : जब एक लेखक लिखने लगता है, सृजनरत होता है, तो वह पूर्व में यह निर्णय लेता है कि किस विषय पर उसे लिखना है, जब वह उस विषय को लेकर चिंतन-मनन कर रहा होता है, तो उसे स्वयं ही ज्ञात हो जाता है कि इस विषय को किस विधा में बांधना, लिखना बेहतर रहेगा। बस वही पल महत्त्वपूर्ण होता है। सहजता स्वयं बनने लगती है। कैनवास बड़ा

होगा तो विधा भी उसी तरह की होनी चाहिए अन्यथा लेखक रचना से न्याय नहीं कर पाएगा। क्योंकि साहित्य सृजन में जल्दबाजी ज्यादातर लेखक को संघर्षधर्मी बनने में रुकावट डालने का काम ही करेगी। अतः मैं जिस विधा में भी सृजन करता हूं, मैं स्वयं को उसी विधा में सहज पाता हूं।

सुमन शेखर : यूं तो लेखक को अपनी सभी रचनाएं प्रिय होती हैं, लेकिन फिर भी जो रचनाएं आपको ज्यादा प्रिय हैं, उनके बारे में थोड़ा बताएं? आपकी रचनाओं के अनुवाद भी छपे हैं, कृपया वह भी बताने की कृपा करें?

नरेश कुमार 'उदास' : लेखक जब किसी रचना को जन्म देता है तो वह वैसी ही प्रसवपीड़ा से गुजरता है, जैसे एक गर्भवती स्त्री, पीड़ा भोगती सहती है। लेकिन इस पीड़ा में भी एक आनंद की लहर छिपी है। हां, यह जरूर होता है कि लेखक की कुछ रचनाएं उसके अपने जीवन काल से जुड़ी होती हैं। चाहे उसमें दुख या सुख का भाव निहित हो। लेखक अपनी जवाबदेह रचनाएं पढ़ता है तो अतीत की खट्टी-मीठी यादों में खो अवश्य जाता है। कई बार उसे कुछ रचनाएं अच्छी लगती हैं तथा तब उसकी मनःस्थिति कुछ और होती है, जब वह उन्हें पढ़ता है तो वही रचनाएं उसे जंचती नहीं। वैसे लेखक ने अपनी सभी रचनाओं पर खूब मेहनत की होती है। मेरी रचनाओं के अनुवाद ओड़िया, मराठी, पंजाबी, डोगरी तथा पहाड़ी भाषा में छपे हैं।

सुमन शेखर : आपको 'मां गांव नहीं छोड़ना चाहती' कथाकृति पर जम्मू-कश्मीर कला, संस्कृति एवं भाषा अकादमी ने श्रेष्ठ कृति पुरस्कार से सम्मानित किया है। क्या इस कथा-संग्रह की कहानियों के बारे में कुछ कहना चाहेंगे?

नरेश कुमार 'उदास' : मैंने प्रथम बार अपनी किसी साहित्यिक कृति को पुरस्कारार्थ दिया था। प्रथम बार ही मुझे यह पुरस्कार भी मिल गया। मेरी 17 किताबें छप चुकी हैं। मैंने पूर्व कोई भी कृति भेजने का मन ही नहीं बनाया था। यह कृति भी मैंने शीराजा की पूर्व संपादिका श्रीमती नीरू शर्मा जी के कहने पर ही भेजी थी। मेरी कहानियों की पृष्ठभूमि सामाजिक स्तर से जुड़ी विसंगतियां हैं। बदलते मानवीय मूल्यों का क्षरण तथा इस आधुनिकता से उपजी कई परेशानियों में जीते लोगों (परिवार वालों) की पीड़ा को इन कहानियों में उकेरा है। भौतिकवादिता, छलकपट, स्वार्थ, लालच आज समाज में व्याप्त है। लोग रुपयों के लिए अंधी दौड़ दौड़ रहे हैं। रिश्ते टूट रहे हैं। गांव में कोई रहना नहीं चाहता। सब शहर की ओर दौड़ते चले जा रहे हैं। हमें इन विघटनकारी चीजों के प्रति अति सजग रहकर सृजन करना होगा। मैंने ऐसे ही कुछ मुद्दे इन कहानियों में उठाए हैं। ग्रामीण अंचल के परिवेश से जुड़ी कहानी 'मां गांव नहीं छोड़ना चाहती' पाठकों ने बेहद पसंद की है।

सुमन शेखर : आप एक लेखक के रूप में किन रचनाकारों से प्रभावित हैं?

नरेश कुमार 'उदास' : प्रारंभ के दिनों में जब लिखना शुरू किया था, तब जो मिल जाता था, पढ़ लेता था। तब चुनाव करने की कोई बात नहीं थी। ज्यों-ज्यों आगे बढ़ता चला गया तब लगा, कि स्तरीय लेखकों को पढ़ना चाहिए। लेकिन गांव में कोई लाइब्रेरी नहीं होती थी। पुस्तकें मिलती भी नहीं थीं तब। बाद में मैं, बहुत लेखकों से प्रभावित रहा, जिनमें से कुछ नाम हैं- मुंशी प्रेमचंद, निराला, भीष्म साहनी, मोहन राकेश, हिमांशु जोशी, अमरकांत, विष्णु प्रभाकर, फणीश्वरनाथ रेणु, अभिमन्यु अनंत (मारिशिश), रूसी लेखकों में अन्तोन चेखव, मस्मि गोर्की, लियो तालस्ताय, निकोलाई अमोसोव इत्यादि।

सुमन शेखर : इंटरनेट के आ जाने से क्या साहित्य के पाठक (पुस्तक प्रेमी) कम हुए हैं? आप इस बारे में क्या सोचते हैं? क्या इससे पुस्तक प्रकाशन में फर्क पड़ेगा?

नरेश कुमार 'उदास' : इंटरनेट का यह प्रचलन कुछ वर्षों से हमारे भारत में हुआ है। आज कितने लोगों के पास इंटरनेट की सुविधा है? भारत एक विकासशील देश है। अभी भी कई लोग भूख-कुपोषण, गरीबी से जूझ रहे हैं। यहां उच्च एवं मध्यवर्ग के लोग ही इंटरनेट पर जुटी सामग्री का रसास्वादन कर पा रहे हैं। यहां कई लोगों ने अपने-अपने 'ब्लॉग' बना लिए हैं। जो नियमित (स्क्रीन) इंटरनेट पर दिखते हैं। यह रोजमर्रा की डायरी लिखने समान ही तो है। कुछ अंतरजाल पत्रिकाएं भी इंटरनेट पर पढ़ने को मिलती हैं। फिर भी मैं इतना अवश्य कहना चाहूंगा कि

पुस्तक पढ़ने का अपना एक अलग आनंद है। यह भले थोड़ा कम हुआ हो? लेकिन निराशाजनक कोई बात नहीं। लाखों-करोड़ों लोग अभी भी पुस्तकें पढ़ते हैं। प्रकाश तक भी सैकड़ों पुस्तकें धड़ल्ले से छाप रहे हैं। उनका व्यवसाय खूब फल-फूल रहा है। भले हिंदी के लेखक को रॉयल्टी न मिलती हो?

सुमन शेखर : आजकल आप सेवानिवृत्त हैं? क्या कोई योजना बनाई है? समय कैसे बिताते हैं?

नरेश कुमार 'उदास' : फिलहाल पिछले तीन-चार महीनों से मेरा लिखना न लिखने के बराबर ही है। सेवानिवृत्त होने के बाद, जब से जम्मू अपने निवास स्थान में लौटा हूं, तब से मात्र वह पुस्तकें पढ़ रहा हूं जो मैंने खरीद कर रख ली थीं। लेकिन उनको पढ़ नहीं पाया था। अब अपने निजी पुस्तकालय से निकाल- निकालकर उन्हें पढ़ रहा हूं। हाल ही में मैंने आठवें दशक के 'सारिका' के कई अंक पढ़ डाले हैं। 'अंधेरे बंद कमरे' मोहन राकेश का उपन्यास पुनः पढ़ा तथा उनकी तीसरी धर्मपत्नी अमिता राकेश का लिखा 'चंद सतरें' और भी पढ़कर अभी-अभी हटा हूं। कई पत्रिकाएं भी आती हैं। मेरे पास, उन्हें भी देखता हूं। लिखने की कोई विशेष योजना तो मैंने नहीं बनाई पर मेरा मन कर रहा है, कि निकट भविष्य में कोई बच्चों की कहानिहयों की किताब या फिर कोई उपन्यास लिखूं।

सुमन शेखर : नवोदित लेखकों के लिए कोई संदेश देना चाहेंगे? वह साहित्यपथ पर कैसे आगे बढ़ें?

नरेश कुमार 'उदास' : मैं नवोदित रचनाकारों को बस यही कहना चाहता हूं कि परिश्रम से मन न चुराएं। साहित्य में शार्टकट रास्ता कोई नहीं होता। खूब पढ़ें। चिंतन-मनन करें। संघर्षशीलत-नित्य लेखन की आदत डालें। स्तरीय लिखें। किसी अन्य लेखक की शैली से प्रभावित होकर उसकी शैली की नकल न करें। जीवन में मानवीय मूल्यों के प्रति अडिग रहें। अपने लेखन के प्रति सच्ची निष्ठा-लगन से जुटे रहें। कठोर परिश्रम करें। पहले अपनी लिखी रचनाओं को बार-बार पढ़ें। उनमें सुधार करें। फिर संतुष्ट हो जाने पर उन्हें विभिन्न पत्रिकाओं को भेजें जिनमें उनकी छपने की संभावना हो। जब इधर-उधर अधिकतर रचनाएं छपने लग जाएं तो अपने संग्रह (पुस्तक संग्रह) के लिए सोचें। तब तक वह परिपक्वता को पा चुके होंगे। हो सके, या वह चाहें तो किसी वरिष्ठ साहित्यकार से भी पुस्तक प्रकाशन से पूर्व सलाह मशविरा कर सकते हैं। मात्र छपास की भूख मिटाने के लिए अपनी धनराशि से पुस्तकें छपवाकर अपनी पीठ न ठोकें। वह यह क्यों भूल जाते हैं कि भारत के पुराने लेखक पहले खूब पत्रिकाओं में छपते थे। नए लेखकों को संयम से काम लेना होगा। संपादक के द्वारा उनकी रचनाओं के प्रकाशन से उनके भीतर आत्मसंतुष्टि का भाव जागता है, जो श्रेष्ठ लेखक के लिए हमेशा प्रेरणादायी साबित हुआ है।

सुमन शेखर : उदास जी, अपने जीवन में बहुत कुछ पाया है और पिछले वर्षों में खोया भी बहुत। आप मेरा आशय समझ गए होंगे। ऐसी पीड़ादायक स्थिति में भी आपने लेखन कार्य नहीं छोड़ा?

नरेश कुमार 'उदास' : सच्चाई से मुंह जो मोड़ता है, वह जीवन में सफल नहीं हो सकता कभी। मैंने संघर्षधर्मी जीवन जिया है। लेकिन अपने मानवीय मूल्यों को आज तक कभी छोड़ा नहीं। चाहे इसके लिए मुझे कितना ही नुकसान क्यों न उठाना पड़ा हो। मैंने हार नहीं मानी। मैंने वास्तव में नुकसान उठाया भी है। लेकिन मैं झुका नहीं। मैंने हार नहीं मानी। कई त्याग भी करने पड़े। रिश्तों को छोड़ना भी पड़ा था मुझे। अब बात करूं अपने दिल के जख्म की तो सुमन जी, मेरे एकमात्र जवान 28 वर्षीय पुत्र आकाशदीप का आकस्मिक निधन हो गया था। वह बैंक में सेवारत था। मैंने उस त्रासद-पीड़ा को झेला है। मुझे इस साहित्य ने, मेरे लेखन ने इस पीड़ा को झेलने में मेरा साथ दिया। मैं शब्दों का साधक हूं। मैंने इन्हीं शब्दों को अपने जीवन में ढाल बनाकर अपने भीतर के असीम दुख से मुक्ति पाने का भरसक प्रयास किया है।

निकट पेट्रोल पंप
गांव व डाकघर ठाकुरद्वारा, तहसील पालमपुर जिला कांगड़ा
हिमाचल प्रदेश-176 061, मो. 0 94182 39187

संपर्क : नरेश कुमार 'उदास'
आकाश-कविता निवास,
म. नं. 54, गली नं. 3, लक्ष्मीपुरम, सेक्टर ठ.1 चनौर,
पो. बनतलाब, जम्मू-181 123, मो. 0 94197 68718

शबनम शर्मा की लघु कथाएं

वह युवक

हम पिछले सप्ताह ट्रेन में सफर कर रहे थे, हमें नीचे की दो सीटें मिली थी और सामने वाली में एक छोटा सा परिवार बैठा था। पति-पत्नी और नन्हीं सी बालिका। देहरादून से गया तक वो भी हमारे हमसफर थे। बच्ची 2-2) साल की थी। कभी अपनी वाली खिड़की में तो कभी मेरे वाली। जिस तरफ भी प्लेटफार्म आता वो उसी तरफ आ जाती और खिड़की से झांक-झांक कर छोटी-छोटी चीजों की डिमान्ड करती। उसके पापा ने एक बार भी उसकी इच्छा को नहीं नकारा। वह भरसक प्रयत्न कर उसे हर चीज लाकर दे रहे थे। उसे गोदी में बिठा खिला-पिला रहे थे। जहां गाड़ी कुछ लम्बे समय के लिये रूकी, वो उसे घुमा भी लाये। इसके अलावा बाकी सारे काम अपने, पत्नी के व बच्ची के वह खुशी-खुशी कर रहे थे। मुझे उन्हें देखकर कई बार काफी अचम्भा भी हुआ। भारत में पैतृक व पुरुष प्रधान समाज में ऐसा सुलझा इन्सान देखकर हैरानी होनी कोई बड़ी बात न थी। रात का खाना हमने इक्ट्ठा आर्डर किया और साथ में ही खाया। उसने सबकी प्लेटें फटाफट समेटी और बाहर फेंक आए। मुझसे रहा न गया। पूछ ही बैठी, ''बेटा, इतनी क्या जल्दी थी हम खुद कर लेते।'' वह बोला, ''नहीं आप भी मेरे माता-पिता के समान हैं इसमें क्या फर्क पड़ता है। दो अपनी और दो आपकी। दुआ ही तो मिलेगी।'' ''ये तो है।'' मैंने कहा। ''पर आजकल ऐसे प्यारे बच्चे कहाँ?'' उसके चेहरे के भाव बदल से गये। मैंने कहा, ''मैं कल शाम से तुम्हें देख रही हूँ, तुम लगातार काम किये जा रहे हो, थके नहीं।'' उसने जवाब दिया, ''आँटी, जब मैं 6 साल का था मेरी माँ मर गई, मेरा भाई तीन साल का था। लोगों ने पापा को दूसरी शादी करने को कहा। उन्होंने की नहीं। वह घर का सारा काम जैसे-तैसे करते और ड्यूटी पर भी जाते। मैं भी उनकी मदद करता। करते-करते आज ये वक्त आ गया।... और आँटी बिन माँ के बच्चे खुद ही सीख जाते हैं सारी जिम्मेदारियाँ निभाना।'' कहते-कहते उसकी आँखें भर आईं और हम सब शाँत से हो गये।





वो सम्मान

पिछले माह मुझे एक कार्यक्रम में जाने का मौका मिला। मेरी एक परिचिता मुझे ले गई। उसने बताया कि यहाँ के महिला मंडल ने उन जोड़ों को सम्मानित करने के लिये बुलाया है जिन्होंने जीवन के 50 साल बिताए हैं। कार्यक्रम शहर के एक हॉल में था। करीब 70-80 दम्पति जोड़े बैठे थे। मासूम बुजुर्ग चेहरे। बोलती आँखें, शाँत चेहरे और एक ठहरा सा जीवन। सब एक-दूसरे को दयनीय नजरों से देख रहे थे। कार्यक्रम शुरू हुआ। सूची में लिखे नामों के साथ सबको मंच पर आमंत्रित किया गया। शॉल पहनाकर, स्मृति चिन्ह लेकर सब अपने- अपने स्थान पर आ गये। यकीन मानिये पूरे हॉल में एक अजीब सा सन्नाटा था। मेरी परिचिता ने मुझे कुछ शब्द बोलने को मंच पर आमंत्रित किया। उनके लिये हार्दिक अभिवादन के सिवा दिल में और क्या हो सकता है। वो लोग मेरे सामने थे जिन्होंने अपने माता-पिता, अपने बच्चों और फिर अपने नाती-पोतों को पाला था, आज यहाँ निचुड़ी सी देह लिये बैठे हैं। सोचा मन की शंका मिटा ही लूँ। 4-5 लाइनें उनके स्वागत, उनकी सेहत और उनके भविष्य की उज्जवल कामना करके पूछ ही बैठी, ''कृपया आज वो लोग हाथ उठायें, जो अपने बच्चों के साथ रह रहे हैं और खुश हैं।'' सब लोग एक-दूसरे की ओर ताकने लगे जैसे मैंने कोई कितना बड़ा गलत प्रश्न पूछ लिया हो। सबके हाथ बंध गये, एक भी हाथ ऊपर नहीं उठा। मंच की ओर थी टकटकी बाँधे अनेक प्रश्नों को समेटे शून्य में ताकती आँखें।

अनमोल कुंज, पुलिस चौकी के पीछे, मेन बाजार, माजरा,
तह. पांवटा साहिब, जिला सिरमौर, हि.प्र - 173021
मो : 0 98168 38909

लघु कथा

मैं युग हूं

◆ सुनीता देवी

"लोग समझते हैं कि मैं शायद मर चुका हूं, लेकिन मैं अमर हूँ, एक नए युग का आरम्भ करने जा रहा हूं। मैं 'युग' हूं परमात्मा ने मुझे किसी विशेष उद्देश्य की पूर्ति के लिए भेजा है और वह भी ऐसे समय पर जब मनुष्य अन्याय, अत्याचार, संवेदनहीनता व जघन्य अपराध की सभी सीमाएं लांघ चुका है।'

मुझे याद है जून 2014 का वह दिन जब मुझे मेरे ही परिचित पड़ोसी ने बहला फुसलाकर मेरे अपनों से अगवा कर लिया। एक बच्चे के लिए मां-बाप, भाई-बहन, अपने प्रिय दोस्त व पड़ोसी ही अपना सारा संसार होते हैं लेकिन मेरा (युग) परिचय तो उन्होंने एक ऐसी यातनाओं के संसार से करवाया जिन्हें शब्दों में बयान करना मुश्किल है।

मैं यह नहीं समझ पा रहा था कि जिस के साथ मैं प्रतिदिन खेलता था, उठता था , बैठता था वह मेरे साथ ऐसा घिनौना व्यवहार क्यों कर रहे हैं। मुझे डराया धमकाया जाता रहा। कई बार मुझे शराब पिलाई गई तथा बैड बॉक्स में बन्द कर दिया जाता था। कभी जब मुझे चेतना आती थी तो अपने बंधे हुए मुंह से स्वयं से यही पूछता था कि मेरा क्या दोष है, मुझे किस बात की सजा दी जा रही है, मुझे इस तरह क्यों रखा जा रहा है, क्या मेरे परिवार वालों को मेरे बारे में पता होगा? वे मेरे बारे में क्या सोचते होंगे ?

यातनाएं देकर मुझे शारीरिक रूप से जितना अधिक कमजोर बनाया जा रहा था वहीं मैं आत्मिक रूप से दिन-प्रतिदिन शक्तिशाली बनता जा रहा था। मैं कई बार परमेश्वर से प्रार्थना करता था- हे प्रभु ये मेरे साथ क्या हो रहा है, आप मेरी सहायता क्यों नहीं करते? मैने तो सुना था कि बच्चे भगवान का रूप होते हैं फिर क्यों उन्हें मुझ बच्चे पर तरस नहीं आ रहा है।

फिर एक दिन मुझे मालूम हुआ कि मेरा अपहरण कर लिया गया है तथा मुझे छोड़ने के लिए मेरे परिवार से पैसों की फिरौती मांगी जा रही है। अपहरणकर्ता इतने शातिर है कि उन्होंने मेरे पूरे घर-परिवार वालों को तथा मुझे ढूंढने वालों को विश्वास में लिया हुआ है तथा मेरे परिवार वालों के साथ विश्वासघात कर रहा है। वास्तव में उन्होंने मुझे कुछ दिन जीवित रखा लेकिन मैं रोज मरता था मुझे लगता था कि मेरी मृत्यु निश्चित है। मैं उनका असली चेहरा अपने परिवार वालों के सामने लाना चाहता था लेकिन मैं बेबस था। और इसी बेबसी में मेरी आत्मा कब मेरे शरीर से निकल गई मुझे मालूम ही नहीं हुआ। अब मैं केवल एक दिव्य प्रकाश हूं जो परमात्मा में विलीन हो चुका है। लेकिन मेरी आत्मा मुझे न्याय दिलाने के लिए प्रयासरत है।

भले ही आज मेरी मौत हो चुकी है लेकिन मुझे इस बात का संतोष है कि दोषियों का असली चेहरा सामने आ चुका है और मेरे परिवार वाले जो इतने समय से मेरे लिए व्याकुल थे वह सब कुछ जान चुके हैं। मैं आत्मिक रूप से हमेशा उनके साथ रहूंगा। मैं परमेश्वर का धन्यवादी हूं कि उसने मेरे गुनाहगारों का असली चेहरा समाज के सामने लाया।

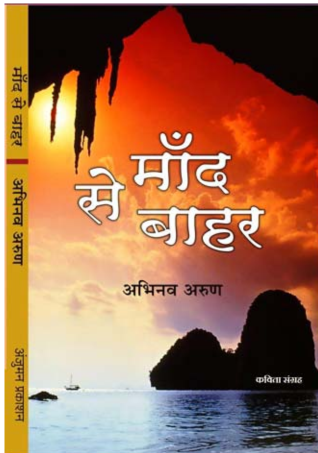
मुझे नहीं मालूम कि मेरे हत्यारों को उचित सजा मिल भी पाएगी कि नहीं क्योंकि यहां अन्याय,अत्याचार व भ्रष्टाचार अपनी चरम सीमा पर है। भाई-भतीजावाद के क्या कहने । हर जगह जिसकी चलती है वह मौज करता है। गरीब, जरूरतमंद व मेहनत करने वाले व्यक्ति को हर जगह टीस सहनी पड़ती है ।........... लेकिन यह भी सच है कि परमेश्वर हर व्यक्ति के अच्छे व बुरे कर्मों का फल जरूर देते हैं और हर व्यक्ति के कृत्यों का पूरा हिसाब-किताब रखते हैं।

एक माता-पिता या परिवार वालों के लिए सबसे दुखद समय वह होता है जब उन्हें अपने प्रिय बच्चे के बारे में पता ही न हो कि वह कहां है, कैसी हालत में है, जीवित है भी या नहीं। इस दौरान वह कैसे रहे होंगें, यह उनसे बेहतर कोई नहीं जानता । ऐसी हालात में मेरे हत्यारों को पकड़ने में दिन-रात मेहनत करने वाले प्रत्येक व्यक्ति विशेष रूप से धन्यवादी हैं तथा परमेश्वर उनके जीवन में सफलता दें तथा उनके नेक कार्यों को प्रोत्साहित करता रहे। साथ ही मेरे माता-पिता व परिवार जन यह समझ लें कि मेरा उनके साथ इतना ही सम्बन्ध था। वे यह समझ लें कि मेरी आत्मा परमात्मा में विलीन हो चुकी है। मैं परमात्मा के दिव्य प्रकाश के साथ मिलकर एक तारे की तरह हमेशा चमकता रहूंगा।

कमरा नं. 410ए, हिमाचल प्रदेश सचिवालय,
शिमला, हिमाचल प्रदेश-171 002

विचारोत्तेजक संग्रह 'माँद से बाहर'

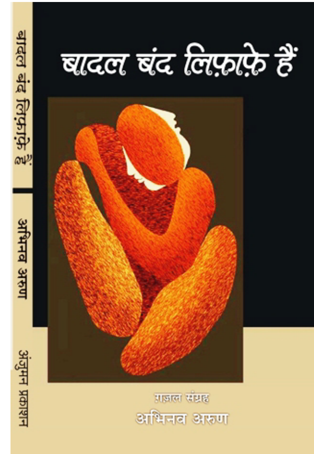
मीडिया में ढाई दशक से सक्रिय, विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहने वाले कवि अभिनव अरुण की सौ से अधिक कविताओं का संग्रह है 'माँद से बाहर'। अथ से इति तक सबकुछ ठीक ठाक होने की कामना और प्रयास की उपज हैं अभिनव अरुण की कविताएं। सामाजिक असामनता, छीजते जीवन मूल्य, बाजार और इंसान का संघर्ष संग्रह की कविताओं का मुख्य स्वर है। बड़ी बात ये भी है की कवि ने उम्मीद का दामन नहीं छोड़ा है 'चट्टानों को तोड़ते हुए टूटते जाते हों हम भले ही / पर जुड़ते जाते हैं हाथ से हाथ / बनती जाती हैं मानव शृंखलाएं /निश्चित ही सूरज के जागने तक / कायम रहेगा यह सिलसिला" या "हाथ के ग्लेशियर पिघलेंगे / नुकीले हिमखंडों से टकराना सीखा है हमने। अभिनव कविता को ही कविता की पूर्व पीठिका मानते हैं उन्होंने समालोचना की दीवार बंद कर रखी है, वे कहते हैं, "मैंने कविताएं लिखीं / अपने नाखूनों को कलम / बदन को दवात/ और लहू को सियाही बनाकर , 'मुझे प्रशस्ति नहीं / समालोचना नहीं / चाहिए तो बस एक और / कविता की पूर्व पीठिका" / कबीर की काशी में सक्रिय नयी पीढ़ी के रचनाकारों में अभिनव अरुण जिस तरह अपनी गजलों में रवां हैं उसी तरह कविताओं में भी प्रभावी हैं। खरी खरी बात बड़े सलीके से कहते हैं, "ये केंचुल अब उतारो / फेंक भी दो / दिखाओ दांत अपने / जहर वाले " वे चिंतित हैं "हमने एक नदी को बांधा / और अब करते हैं / रेत की पुजैया / किनारे रुकी / नाव की लाश पर '/ अपने सटीक स्वरों के गंभीर उद्घोषक के साथ अभिनव की कवितायेँ 'मांद से बाहर' हैं। संग्रह पठनीय और विचारोत्तेजक है।



पुस्तक : माँद से बाहर (कविता संग्रह), रचनाकार : अभिनव अरुण, प्रकाशक : अंजुमन प्रकाशन, 942 आर्य कन्या चौराहा, मुट्ठीगंज, इलाहाबाद – 211003, मूल्य : 140 रुपये, पृष्ठ : 160

संक्षिप्त पुस्तक परिचय

मानवीय मूल्यों के प्रति समर्पित 'बादल बंद लिफाफे हैं'



तीन वर्ष पूर्व प्रकाशित 'सच का परचम' गजल संग्रह के पश्चात वाराणसी निवासी शायर अभिनव अरुण का दूसरा गजल संग्रह है "बादल बंद लिफाफे हैं"। सामाजिक सरोकार एवं मानवीय मूल्यों के प्रति समर्पण से लबरेज 105 गजलें संग्रह में शामिल हैं। गजल आज कल्पना के आकाश से उतरकर यथार्थ के धरातल पर विचरण कर रही हैं । अभिनव इसी परम्परा के शायर हैं। 'जब भी खुद को निचोड़ देता हूँ, इक गजल और जोड़ देता हूँ" कहने वाले इस शायर ने संग्रह की गजलों में तमाम विसंगतियों के बावजूद उम्मीद का दामन नहीं छोड़ा है वे कहते हैं "सबकी नजरों में सुनहरी भोर होनी चाहिए, एक कोशिश रोशनी की और होनी चाहिए"। बहुत कुछ होता देख शायर दुआ करता है "मेरे इस ख्वाब की ताबीर हो जाती तो अच्छा था, यहाँ हर हाथ में शमशीर हो जाती तो अच्छा था"। तीज, त्यौहार, पर्यावरण, सियासत, बाजार, रिश्ते नाते, गाँव शहर प्रायः हर विषय अभिनव अरुण की गजलों में समाहित है। वे शाइरी और मंच के रिश्ते पर भी तंज कसते हैं "मंच पर शाइर की है दरकार क्या, मसखरी ही मसखरी होने लगी "। माँ पर कहे उनके ढेरों शेर मुनव्वर राणा की याद दिलाते हैं "दुआ माँ की निकल आती हैं पहले, मैं जब घर से निकलना चाहता हूँ", "उसके सर पर दुआएं माँ की हैं, कदमों में आसमान भी तय ह" या फिर "लाख मुश्किल हो ध्यान रखता हूँ, बा अदब ये जुबान रखता हूँ। मेरे सर पर दुआएं माँ की हैं कदमों में आसमान रखता हूँ।" कुल मिलाकर समकालीन गजल के चाहने वालों के लिए संग्रह पठनीय है।

पुस्तक : बादल बंद लिफाफे हैं (गजल संग्रह), शायर – अभिनव अरुण, प्रकाशक अंजुमन प्रकाशन, 942 आर्य कन्या चौराहा, मुट्ठीगंज, इलाहाबाद –211003, मूल्य : 140 रुपये, पृष्ठ : 160





हिमाचल की समृद्ध संस्कृति, परंपरा तथा कला को आम जन विशेषकर पर्यटकों में लोकप्रिय बनाने के लिए राजधानी शिमला में 'मेस्मराइजिंग मंडी' के अवसर पर आयोजित समारोह में प्रदर्शित कलाकृतियां।

पंजीकरण संख्या : 845/1957 मई, 2017 एच.पी./79 एस.एम.एल. 2015–17



आर.एस. नेगी निदेशक, सूचना एवं जन सम्पर्क विभाग, हिमाचल प्रदेश द्वारा प्रकाशित तथा डॉ. डी. के. गुप्ता, नियंत्रक, मुद्रण एवं लेखन सामग्री विभाग द्वारा हिमाचल प्रदेश सरकार के लिए राजकीय प्रेस, शिमला–171005 से मुद्रित करवाकर शिमला से प्रकाशित। सम्पादक वेद प्रकाश।

ISSN 2454-972X

हिमप्रस्थ

जून, 2017





मुख्य मंत्री श्री वीरभद्र सिंह शिमला जिले की तहसील ननखड़ी के गांव खमाडी में देव पालकी के समक्ष पूजा–अर्चना करते हुए

ISSN : 2454-972X

हिमप्रस्थ

वर्ष : 62 जून, 2017 अंक : 3

प्रधान सम्पादक
आर. एस. नेगी

वरिष्ठ सम्पादक
विनोद भारद्वाज

सम्पादक
वेद प्रकाश

सहायक सम्पादक
सतपाल

उप सम्पादक
योगराज शर्मा

कम्पोजिंग एवं पृष्ठ सज्जा : **अश्वनी**

सम्पादकीय कार्यालय : हि. प्र. प्रिंटिंग प्रेस परिसर, घोड़ा चौकी, शिमला-5

वार्षिक शुल्क : 150 रुपये, एक प्रति : 15 रुपये

E-Mail : himprasthahp@gmail.com
Tell: 0177 2633145, 2830374
Website: himachalpr.gov.in/himprastha.asp

ज्ञान सागर

किसी चीज में यकीन करना और उसे न जीना बेईमानी है।

– महात्मा गांधी

आवरण एवं अंतिम पृष्ठ चित्र : **विनोद भारद्वाज**
रेखांकन : **सर्वजीत**

इस अंक में

लेख

कहानी

शोध लेख

श्रद्धांजलि

समीक्षात्मक लेख

लघुकथा

कविता/ग़ज़ल

व्यंग्य

समीक्षा

अपनी बात

आज हम आधुनिकता के जिस दौर में रह रहे हैं, वह वैचारिक दृष्टि से उथल-पुथल भरा प्रतीत होता है। सूचना प्रौद्योगिकी में आए क्रांतिकारी परिवर्तन के बाद तो जैसे दुनिया को देखने का हमारा नजरिया ही बदल गया है। टीवी, कम्प्यूटर, इंटरनेट के बाद न्यू मीडिया और इसमें भी सोशल मीडिया का प्रचलन इतना बढ़ गया है कि इससे समाज का हर वर्ग और जीवन का हर क्षेत्र प्रभावित हुआ है विशेषकर हमारी युवा पीढ़ी तो इसकी 'एडिक्ट' हो गई है। सूचनाओं का संप्रेषण इतनी द्रुत गति से वायरल हो जाता है कि कई बार इनके अपुष्ट होने की स्थिति में भी इस पर नियंत्रण रख पाना असंभव हो जाता है। यह दोधारी तलवार की तरह है जिसका इस्तेमाल बड़ी सतर्कता एवं सूझबूझ के साथ ही किया जाना चाहिए। सोशल मीडिया पर वायरल होती सूचनाओं का सोर्स कितना प्रामाणिक व विश्वसनीय है, इसकी कोई गारंटी नहीं होती है। सत्य और तथ्य के अभाव में गलत सूचनाएं अकसर अफवाहों की तरह फैलती हैं जिन पर कई बार लोग बिना सोचे-समझे विश्वास कर बैठते हैं। इससे लोगों की भावनाओं के भड़कने का पूरा अंदेशा बना रहता है। जहां तक सूचनाओं के संप्रेषण के माध्यम से अपनी बात या संदेश अधिक-से-अधिक लोगों तक पहुंचाने का प्रश्न है, तो शायद इससे अधिक तीव्र माध्यम और कोई नहीं हो सकता। इसके माध्यम से कोई भी सूचना पलक झपकते ही दुनिया के हर कोने में पहुंच जाती है। सोशल मीडिया के अलावा बहुत से और भी कारक हैं जो आज हमारे समाज विशेषकर युवा पीढ़ी को प्रभावित कर रहे हैं। बेरोजगारी की विकट होती समस्या के कारण कुछ युवा गुमराह होकर नशे जैसी कुरीतियों के चंगुल में फंस जाते हैं। इससे वे स्वयं को तो नुकसान पहुंचाते ही हैं, साथ ही उनके परिवारों को भी अनेक प्रकार की परेशानियों से दो-चार होना पड़ता है। समाज में पनप रही कुरीतियों के कारण नैतिक मूल्यों का ह्रास हो रहा है और चिरस्थापित परंपराएं टूटती सी दिखती हैं। लोग संवेदनशून्य होते जा रहे हैं, यहां तक कि स्कूली बच्चे-किशोर भी अपवाद नहीं। छोटी-छोटी बातों पर ये अपना-आपा खोने लगे हैं और अनैतिक कार्य कर बैठते हैं। हालांकि ऐसी घटनाएं छुट-पुट ही होती हैं लेकिन समाज पर इनका गहरा प्रभाव पड़ता है। ऐसे माहौल में अपने करीबियों तक को भी सलाह देने से संकोच होता है। वैचारिक दृष्टि से आज हमारा समाज जिस दिशा में अग्रसर है, उस पर गहन चिंतन-मनन की जरूरत है। ऐसे में हमें उस दौर का स्मरण हो उठता है जब सामाजिक ताना-बाना सौहार्दपूर्ण एवं आपसी मेल-मिलाप का था। एक-दूसरे की भावनाओं की कद्र थी। विचारों को सुना-समझा जाता था। मानवता सर्वोपरि थी। इसमें अतिशयोक्ति नहीं कि उस समय भारतवर्ष आध्यात्मिक शक्ति के साथ ज्ञानयुक्त था। संत कबीर भक्तिकाल के पहले ऐसे समाज सुधारक थे जिन्होंने आम आदमी के बीच रहकर उन्हीं की भाषा में संपूर्ण मानवता के लिए आवाज उठाई। निरक्षर होते हुए भी वह परम-ज्ञानी थे और उन्हें संपूर्ण भारतीय दर्शन एवं आध्यात्मिक विमर्श के मूल तत्त्वों का ज्ञान था। उनकी वाणी कभी सीधी तो कभी कठोर होते हुए भी हमेशा सत्यनिष्ठ होती थी। उन्होंने समाज में अज्ञानतावश व्याप्त अनेक सामाजिक बुराइयों-कुरीतियों के साथ-साथ धार्मिक आडंबरों-पाखंडों का जोरदार ढंग से विरोध किया। अपनी कठोर वाणी के माध्यम से इस प्रकार कटाक्ष करना, शायद आज के लोकतांत्रिक दौर के साधु-संतों और समाज-सुधारकों के लिए भी आसान नहीं है। विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के इस युग में ऐसे महापुरुषों एवं समाज सुधारकों की जरूरत है जो भारत की आध्यात्मिक शक्ति को आधुनिक विज्ञान की प्रगति के साथ जोड़कर समाज के साथ-साथ पूरी दुनिया को मानवता की नई राह दिखा सकें।

– **संपादक**

आलेख

बाकी जिंदगी पर भारी पड़ते हैं आवेश के कुछ क्षण

● अजय पाराशर

"सर, आवेश के कुछ क्षण बाकी जिन्दगी पर भारी पड़ते हैं। मैंने कब सोचा था कि मेरी जिन्दगी के बेहतरीन दस साल जेल में गुजरेंगे। मेरे बूढ़े माँ-बाप, पत्नी और दो छोटे मासूम बच्चों को इस समय मेरी जरूरत है और मैं अपनी करनी की वजह से सलाखों के पीछे वक्त काटने पर मजबूर हूँ।", कहते-कहते संजय (परिवर्तित नाम) अपने अतीत में खो गए।

"सर, इस जिला जेल और मुक्त कारागार में करीब-करीब 95 प्रतिशत कैदी उस गुनाह की सजा काट रहे हैं जो उनसे आवेश के क्षणों में हुआ है या उन्होंने किया है। कुछ ऐसे भी हैं जो किसी और के जुर्म की सजा काट रहे हैं। हिमाचल में बमुश्किल पाँच फीसदी लोग ही आदतन आपराधिक प्रवृत्ति के होंगे, जो जान-बूझकर अपराध में संलग्न होते हैं। बाकी के लोग तो ऐन मौके पर क्रोध में अपनी बुद्धि के हरे जाने की सजा भुगतते हैं। लेकिन अपराध तो अपराध है, करने पर सजा तो भुगतनी ही पड़ेगी। अगर ऐसा न हो तो समाज में अफरा-तफरी मच जाएगी। बस मैं तो सबसे यही कहूँगा कि होश में जीना सीखें।", अपनी आँखें पोंछते हुए उसने कहा।

संजय की बातें सुनकर मेरी आँखें भी नम हो आईं। लेकिन मैंने चर्चा को दूसरी ओर मोड़ते हुए उनसे पूछा कि यहाँ कांगड़ा जिला के जेल और मुक्त कारागार में जेल प्रशासन द्वारा चलाई जा रही उद्यमी और रोजगारोन्मुखी गतिविधियों में शामिल होने पर उनके अनुभव क्या रहे हैं? क्या वह इन गतिविधियों से सन्तुष्ट है? मेरे प्रश्न के समाप्त होने से पहले ही उनका जवाब हाजिर था, "जेल प्रशासन का यह प्रयास वास्तव में सराहनीय है। प्रशासन द्वारा चलाई जा रही उद्यमी गतिविधियों से यहाँ रहने वाले सजायाफ्ता तथा अभियोगाधीन कैदियों को अपनी ऊर्जा को सही दिशा देने में मदद मिलती है। यहाँ रहने वाले लगभग सभी लोग अनुशासन में जीते हैं। वास्तविकता यह भी है कि उनका पहले का जीवन भी बुरा नहीं था। लेकिन कहते हैं न बद अच्छा, बदनाम बुरा। एक बार लगा कंलक आसानी से नहीं धुलता।"

धर्मशाला की पुलिस लाईन्स में बने लगभग सौ साल से अधिक पुराने कारागार को अब जिला एवं मुक्त कारागार के नाम से जाना जाता है। यहाँ आजकल कुल 267 लोग या तो सजा काट रहे हैं या विचाराधीन हैं। इनमें से 40 कैदी ओपन एअर श्रेणी के हैं। जेल प्रशासन यहाँ रहने वाले सभी कैदियों को विभिन्न उद्यमी गतिविधियों में शामिल होने के लिए प्रोत्साहित करता है। इससे उनकी ऊर्जा को सकारात्मक एवम् रचनात्मक दिशा में आगे बढ़ाने में तो मदद मिलती ही है, साथ ही अनुशासन बनाए रखने में मदद मिलती है। जेल अधीक्षक सुशील ठाकुर बताते हैं कि यहाँ रहने वाले प्रायः सभी निवासी अनुशासनप्रिय और शान्त हैं। उनके इस व्यवहार से हमें उन्हें रचनात्मक गतिविधियों में संलग्न करने में मदद मिलती है। लेकिन इन पर पूरा भरोसा करना दोधारी तलवार मांजने जैसा है। अगर कोई कैदी भाग खड़ा हो तो लेने के देने पड़ जाते हैं। फिर भी हम उन पर यह सोचकर पूर्ण विश्वास करते हैं कि अगर उनका अच्छा होना या करना हमारे खाते में लिखा जाता है तो बुरा भी हमारे खाते में ही आएगा। फिर विश्वास पर ही तो दुनिया कायम है। वह कहते हैं कि यह सारा कार्य विशेषज्ञ सेवाओं में आता है और इसके लिए बड़ा धैर्य, संयम और अध्ययन दरकार होता है।

वह बताते हैं कि जेल प्रशासन द्वारा वर्तमान में जिन उद्यमी गतिविधियों में तमाम कैदियों को शामिल किया जाता है उनमें उनके द्वारा हिमाचल प्रदेश की विभिन्न जेलों में बनाए गए उत्पादों को अपने विक्रय केन्द्र में बेचना, सैलून, बेकरी, कैंटीन, दर्जीगिरी, बढ़ई, डेयरी, कृषि, बागवानी, मोबाईल कैंटीन, वस्त्र तथा गाड़ी धुलाई आदि शामिल हैं। यहाँ काम करने वाले सभी कैदियों को सरकार द्वारा निर्धारित न्यूनतम दिहाड़ी चुकाई जाती है, जो सीधे उन्हें न देकर उनके बचत खाते में डाल दी जाती है। जेल अधीक्षक सुशील ठाकुर बताते हैं कि कैदियों की मेहनत का अन्दाजा इसी बात से लगाया जा सकता है कि पिछले वित्त वर्ष में उन्होंने विभिन्न उत्पादन एवं संलग्न गतिविधियों में 63,18,245 रुपये का कारोबार कर कुल 13,50,323 रुपये का लाभ कमाया। इन गतिविधियों पर कुल 43,56,401 रुपये व्यय हुए जबकि इनमें



शामिल कैदियों को 6,11,521 रुपये पारिश्रमिक के रूप में अदा किये गए।

जिला एवं मुक्त कारागार के प्रवेश द्वार से पहले जेल परिसर में बाईं ओर निर्मित विक्रय केन्द्र के बेकरी एवं कैंटीन ऑऊटलैट में विभिन्न बेकरी उत्पाद के अतिरिक्त चाय तथा रोजमर्रा जरूरत की अन्य वस्तुएं उपलब्ध हैं। बेकरी ने पिछले वित्त वर्ष के दौरान 8,21,418 रुपये का कारोबार कर कुल 2,22,945 रुपये का लाभ कमाया। इसमें कुल 4,99,728 रुपये का व्यय हुआ और कैदियों को कुल 1,09,745 की दिहाड़ी का भुगतान किया गया। बेकरी यूनिट में कुल पाँच लोग कार्य करते हैं जो ब्रैड, बिस्किट, केक, कचौरी, बन्द आदि बनाते हैं। यह सामान जेल परिसर में स्थापित स्टोर 'पहल' के अलावा बाजार में भी बेचा जाता है। कैंटीन में 50 रुपये में मिलने वाली कारा थाली में चावल, दो चपाती, दाल तथा कढ़ी का लुत्फ उठाया जा सकता है। कैंटीन ने पिछले साल कुल 12,96,134 रुपये की राशि अर्जित की, जिसमें 10,90,981 रुपये व्यय हुए और 68,510 रुपये दिहाड़ी के रूप में अदा किए गए।

सैलून में कार्यरत कैदी श्रमिक ने कुल 31,680 रुपये कमाए, जिसमें से उसे 22,173 रुपये बतौर दिहाड़ी अदा किए गए। 'पहल' में जैकेट, मफलर, स्टॉल, शॉल, कंबल, जुराबें, बच्चों के गर्म कपड़े, मर्दाना कोट, तौलिए इत्यादि सामान बेचने के लिए रखा गया है। इसके अतिरिक्त यहाँ पर कैदियों द्वारा ही निर्मित लकड़ी के बने मन्दिर, घर की सज्जा का सामान, जूस, जैम, आचार, चटनी, सॉस आदि उत्पाद भी बिक्री के लिए उपलब्ध हैं।

दर्जी शाखा में कुल तीन लोग काम करते हैं जो पुलिस कर्मियों की ड्रैस के अलावा बाहर के लोगों के वस्त्र भी सिलते हैं। इस अनुभाग ने पिछले साल कुल 1,14,701 रुपये का कारोबार किया, जिसमें 48,458 रुपये का व्यय हुआ और 46,811 रुपये की दिहाड़ी देने के बाद 19,432 रुपये का मुनाफा अर्जित किया। इसी तरह बढ़ई शाखा ने 3,48,633 रुपये के उत्पाद बनाए, जिन पर कुल 2,56,945 रुपये व्यय हुए। कुल 44,915 रुपये की मजदूरी के भुगतान के बाद प्रशासन को कुल 46,773 रुपये का लाभ हुआ। यहाँ सभी तरह के फर्नीचर के निर्माण और मरम्मत के अलावा स्टील वैल्डिंग, चेयर केनिंग, लकड़ी की अल्मारियाँ, पुलिस पैटर्न के बैड बनाए जाते हैं।

मोबाईल कैंटीन ने धर्मशाला तथा आस-पास के इलाकों में सब्जी की बिक्री से इसी अवधि में सर्वाधिक 26,87,742 रुपये कमाए। इसमें कुल 21,15,664 रुपये व्यय के रूप में तथा 53,720 रुपये की मजदूरी के भुगतान के बाद कुल 5,18,358 रुपये का लाभ अर्जित किया गया। कार वॉशिंग यूनिट में पाँच लोग गाड़ी धुलाई का तसल्लीबक्श काम करते हैं, जिसके चलते यहाँ सुबह से शाम तक गाडियों की लाईन लगी रहती है। यहाँ गाड़ी धुलाई की दरें बाजार से कम हैं। इस यूनिट ने पिछले साल 5,48,500 रुपये कमाए, जिसमें से 68,131 रुपये सामान बगैरह पर खर्च हुए और 1,78,048 रुपये की मजदूरी का भुगतान करने के बाद कुल 3,02,321 रुपये का लाभ हुआ।

गौशाला में छह गाय, पाँच बछिया और दो बछड़े हैं। यहाँ पर दो कैदी श्रमिक कार्यरत हैं जो रोजाना कम से कम चालीस लीटर दूध बाजार में बेचते हैं। डेयरी गतिविधियों से पिछले वित्त वर्ष में 71,496 रुपये का लाभ अर्जित किया गया। दूध की बिक्री से कुल 3,80,770 रुपये कमाए गए, जिसमें से 2,46,774 रुपये चारे आदि पर खर्च हुए और कुल 62,500 रुपये दिहाड़ी के रूप में वितरित किए गए।

वस्त्र धुलाई गत वर्ष जून माह में आरंभ की गई थी। कुल दस महीनों में इस शाखा ने 88,667 रुपये का व्यापार किया, जिसमें से 29,720 रुपये धुलाई पाऊडर तथा अन्य सामान पर व्यय हुए और 25,099 रुपये दिहाड़ी के रूप में चुकाने के बाद 33,848 का शुद्ध लाभ कमाया गया।

बेकरी पर पेस्ट्री का आनन्द ले रहे एक व्यक्ति से जब पूछा गया कि क्या उसे कैदियों के मध्य पेस्ट्री खाते हुए डर नहीं लग रहा है तो उसका जवाब था, "अरे साहिब! मैं तो पिछले कई महीनों से इन्हीं की बेकरी का सामान इस्तेमाल कर रहा हूँ, जिसमें बिस्किट, ब्रैड, बन्द आदि सब शामिल हैं। जिस दिन बीवी मायके गई होती है उस दिन कैंटीन में खाने का लुत्फ भी उठाता हूँ। सारे भले लोग हैं। आपने शायद यहाँ कभी भीड़ लगी नहीं देखी होगी। मैं ही नहीं



चंद शेर

जो लोग करते हैं खुदा पर भरोसा वह दुआ नहीं करते
खुद के सजाए सपने कभी सच नहीं हुआ करते
उनकी किसी भी बात पर हमें नहीं गिला
बेवफाई हो जिनके दिल में वह कभी वफा नहीं करते
वो आए मेरी कब्र पर सर झुका कर चल दिए
दिए में जितना तेल था सिर पर लगा कर चल दिए।

खुशी से ज़हर पी लेना मगर फ़रियाद मत करना
बड़ी नयामत है खुद्दारी इसे बरबाद मत करना
सर झुकाने से नमाज़े तो अदा होती हैं
दिल झुकाना भी जरूरी है इबादत के लिए

जिंदगी रो-रो के गुज़ारी है मैंने अब तक
जिसकी जिंदगी में गम न हो वह बदनसीब सा लगता है।

शिकवा उन लोगों से
जिनके साथ मैंने वफा की
मगर आप से कोई गिला नहीं
उन लोगों का ये अच्छा
जमीन आसमान एक हो जाए
ये मुमकिन है।

अनाम कैदी,
कैथू कारागार, 1997

'क्षितिज के उस पार हाशिए पर लटका भविष्य' से साभार
संपादन एवं संकलन : सरोज वशिष्ठ

शहर के तमाम लोग इनके बेकरी उत्पादों का आनन्द लेने के अलावा फर्नीचर और सामान भी अपने घरों में सजा रहे हैं। अपने किए की सजा जो ये लोग काट ही रहे हैं। अगर हम इन्हें प्रोत्साहित नहीं करेंगे तो ये कहाँ जाएंगे? किसी के माथे पर तो कुछ नहीं लिखा होता है न।"

उप-अधीक्षक जेल विनोद कुमार चंबियाल कैदियों के पुनर्वास को एक चुनौती बताते हुए कहते हैं कि सजायाफ्ता और विचाराधीन कैदियों को उनकी पसन्द का कार्य करने की अनुमति देने के अलावा जेल प्रशासन उनके विचारों को सही दिशा प्रदान करने के लिए समय-समय पर योग शिविरों के अलावा ध्यान तथा आध्यात्मिक शिविरों का आयोजन करता है। जिला सूचना एवं जन संपर्क, कांगड़ा के कलाकार उनके मनोरंजन के लिए निर्धारित अवधि के बाद सांस्कृतिक कार्यक्रम प्रस्तुत करते हैं जबकि तकनीकी कर्मी सोद्देश्य फिल्में दिखाते हैं। जेल प्रशासन उनके लिए प्रेरणादायक वार्ताओं का आयोजन भी करवाता रहा है।

विनोद कुमार चंबियाल कहते हैं कि बेहतर होता कि जेल परिसर के भीतर ही कोई औद्योगिक खंड होता। लेकिन जगह के अभाव के कारण इस जिला एवं मुक्त कारागार के बाहर यह सारी





इकाइयाँ कार्य रही हैं। इसके चलते उद्यमी गतिविधियों में संलग्न कैदियों पर भरोसा के अलावा कोई चारा नहीं क्योंकि हमारा उद्देश्य उन्हें सुधारने के अतिरिक्त उनका पुनर्वास करना भी है। यह एक ऐसी चुनौती है जिसमें जोखिम ही जोखिम है। अगर कोई कैदी भाग जाए सीधे जवाबदेही हमारी ही होती है। आखिर कैदी भी तो इन्सान है और आदमी के मनोविज्ञान को समझना आसान काम नहीं। कुछ महीने पहले दो कैदी भाग गए थे। पता नहीं किस दबाव में यह लोग ऐसा कर बैठते हैं। ऐसा कर्मियों की पर्याप्त संख्या में अभाव के कारण भी होता है और जरूरत से ज्यादा भरोसे कारण भी। एहतियात तो बरतनी पड़ती है क्योंकि हमारा उद्देश्य केवल सजा पूरी करवाना ही नहीं, कैदियों को सुधारना और उन्हें समाज का अंग भी बनाना है।

उप निदेशक, सूचना एवं जन संपर्क विभाग,
क्षेत्रीय कार्यालय, धर्मशाला, जिला-कांगड़ा, हि. प्र-176215

छायाचित्र : अनिल शर्मा और कमल किशोर

आलेख

चारदीवारी में आत्मसम्मान व पुनर्वास की नई पहल

• लुभित सिंह

भारत क्षमा तथा सुधार करने की संस्कृति के लिए जाना जाता है। हिमाचल प्रदेश ने भी भारत की इस परम्परा में अपना बहुमूल्य योगदान दिया है। भारत में सदैव आश्रय मांगने वालों को शरण दी जाती रही है। प्रतिकूल व विषम परिस्थितियों में भी मानवता के मूल्यों को न छोड़ना तथा लोगों को सुधार का मौका देना इस प्रदेश की विशेषता है। इस पर हर भारतीय को गर्व होना स्वाभाविक है।

जेल या कारागार वह स्थान है जहां लोगों को अपने किए गए कृत्यों को सुधार कर एक नया जीवन जीने के लिए तैयार किया जाता है। भारत का कारागार प्रबंधन तंत्र बहुत पुराने समय से चला आ रहा है। प्रायः अपराधियों को समाज से बहिष्कृत कर दिया जाता है लेकिन भारत में अपराधियों को पश्चाताप के माध्यम से सुधार लाने तथा अपने सम्मान को पुनः अर्जित करने का मार्ग दिखाया जाता है। कैदियों को जेल में तथा रिहाई उपरांत अपना जीवन पुनः शुरू करने का एक अवसर प्रदान किया जाता है।

भारतीय संविधान के सातवें अनुच्छेद की दूसरी सूची के अनुसार 'कारागार' राज्य के विषय के अन्तर्गत आता है। कारागार का प्रबंधन राज्य सरकारों का दायित्व है तथा इसे कारागार अधिनियम,1894 व सम्बन्धित राज्य के कारागार नियमों के अनुसार संचालित किया जाता है।

कारागार वर्तमान में सामाजिक नियंत्रण तथा वैध दण्ड का एक संस्थान है जहां पारम्परिक, आदर्श, मानवीय तथा कल्याणकारी तरीके से कैदियों को नया जीवन शुरू करने के लिए तैयार किया जाता है। कोई भी समाज अपने कैदियों के प्रति किए गए व्यवहार से पहचाना जाता है। राज्य जेल के माध्यम से कैदियों के जीवन में सामाजिक-आर्थिक विकास के लिए नए अवसर सृजित करता है। आधुनिक दंडशास्त्र के ज्ञाता अमानवीय व उद्देश्यहीन सज़ा में विश्वास न रखते हुए अपराधी को एक रोगी मानते हैं जिसे मानवीय तौर से सुधारा जाना चाहिए। कैदियों के स्थानांतरण अधिनियम, 1950 के अंतर्गत उन्हें पुनर्वास या व्यावसायिक प्रशिक्षण के लिए एक स्थान से दूसरे स्थान पर हस्तांतरित करने की सुविधा प्रदान की जाती है।

महिला कैदियों के पुनर्वास के लिए उन्हें रोजगार प्रशिक्षण व आर्थिक रूप से सक्षम बनाने के अवसर प्रदान करना कारागार कल्याणकारी गतिविधियों में से प्रमुख है। कारागार में कैदियों के सुधार कार्य तथा कारावास की अवधि समाप्त करने के उपरान्त उन्हें नया जीवन जीने की शिक्षा देने के लिए अनुकूल परिस्थितियां एवं वातावरण सुनिश्चित किया जाता है।

राज्य द्वारा तैयार किए गए कारागार सुधार संतुलित आहार, स्वच्छता व अनुकूल परिस्थितियों में कैदियों को रखने पर बल देते हैं। कारागार में कैदियों तथा उनके परिजनों, मित्रों व वैध सलाहकारों के बीच संचार सुनिश्चित करने के लिए सुविधाओं का प्रबंध भी किया जाता है। राज्य ने कारागार सुधार से संबंधित विभिन्न पक्षों में गतिशील तथा सृजनात्मक भूमिका अदा की है। राज्य सरकार कैदियों की उचित देखभाल के अतिरिक्त उन्हें चिकित्सा सुविधा भी सुनिश्चित करवाती है।

भारतीय न्यायपालिका ने कैदियों के अधिकार, सुधार व पुनर्वास संस्थानों की कार्य पद्धति में परिवर्तन के लिए एक अहम भूमिका अदा की है। इसका अनुसरण

राज्य सरकार द्वारा कारागार कल्याण निधि भी बनाई गई है, जिसके माध्यम से कैदियों के लिए विभिन्न गतिविधियों तथा सुविधाओं का प्रबंध किया जाता है। कैदियों को आत्मनिर्भर बनाने के लिए बुनाई, सिलाई-कढ़ाई, बढ़ई, सफाई कार्य, धोबी तथा नाई का कार्य भी सिखाया जाता है। राज्य में वित्त वर्ष 2016-17 के दौरान राज्य की जेलों के कुल 2837 कैदियों ने इस प्रकार की कारागार गतिविधियों में भाग लिया, जिन्हें 82,58,454 रुपये पारिश्रमिक के रूप में दिए गए। इस अवधि के दौरान 55,47,072 रुपये लाभांश अर्जित किया गया, जिसे कारागार कल्याण गतिविधियों में पुनः उपयोग किया जा रहा है।

करते हुए प्रदेश के कंडा व नाहन कारागारों में आधुनिक केन्द्रीय कारागार स्थापित किए है, जबकि धर्मशाला, चम्बा, मण्डी, कुल्लू, कैथू (शिमला), सोलन, ऊना तथा हमीरपुर में जिला कारागार स्थापित किए गए हैं। इसके अतिरिक्त नूरपुर में एक उप-कारागार भी स्थापित किया गया है। जिला बिलासपुर के जबली (रघुनाथपुरा) मे खुली जेल भी बनाई गई है, जिसमें अपने कारावास की एक सीमित अवधि में अच्छा व्यवहार करने वाले कैदियों को ही रखा जाता है।

राज्य सरकार द्वारा कारागार कल्याण निधि भी बनाई गई है, जिसके माध्यम से कैदियों के लिए विभिन्न गतिविधियों तथा सुविधाओं का प्रबंध किया जाता है। कैदियों को आत्मनिर्भर बनाने के लिए बुनाई, सिलाई-कढ़ाई, बढ़ई, सफाई कार्य, धोबी तथा नाई का कार्य भी सिखाया जाता है। राज्य में वित्त वर्ष 2016-17 के दौरान राज्य की जेलों के कुल 2837 कैदियों ने इस प्रकार की कारागार गतिविधियों में भाग लिया, जिन्हें 82,58,454 रूपये पारिश्रमिक के रूप में दिए गए। इस अवधि के दौरान 55,47,072 रूपये लाभांश अर्जित किया गया, जिसे कारागार कल्याण गतिविधियों में पुनः उपयोग किया जा रहा है।



छायाचित्र : अनिल शर्मा और कमल किशोर

राज्य सरकार तथा कारागार विभाग ने संयुक्त रूप से शिमला के टका बैंच में 'बुक कैफे' की स्थापना की है, जिसे राज्य पर्यटन विभाग संचालित कर रहा है। इस कैफे में कैथू जेल के कैदी कार्य कर रहे हैं। मोबाईल कैंटीन द्वारा कैदी शिमला के इंदिरा गांधी मैडिकल कालेज तथा हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय में उचित मूल्यों पर खाना उपलब्ध करवाते हैं। कैथू जेल की बेकरी द्वारा तैयार विभिन्न उत्पाद 'बुक कैफे' शिमला में बिक्री हेतु उपलब्ध करवाए जा रहे हैं। इसके अतिरिक्त हाल ही में कैदियों द्वारा बनाए गए रैक व गमलों के स्टैंड शिमला के गेयटी थियेटर में प्रदर्शनी के माध्यम से लोगों तक पहुंचाए गए। कैदियों द्वारा संचालित डेयरी के माध्यम से जेल की दुग्ध आपूर्ति भी पूरी की जाती है। कैदियों द्वारा जेल में ऊनी उत्पाद भी तैयार किये जा रहे हैं। इसके लिये धर्मशाला, नाहन तथा शिमला में 'पहल' कार्यक्रम के तहत तीन बिक्री केन्द्र खोले गये हैं। इन उत्पादों को इंटरनेट के माध्यम से बेचने के लिये भी जेल प्रशासन ने एक वेबसाइट बनाई है। कैदियों द्वारा मफलर पर निर्मित राज्य पक्षी जुजुराना की खरीद ऑनलाइन सबसे अधिक हो रही है।

सोलन स्थित केंचुआ खाद संयंत्र में कैदियों की सहायता से किसानों तथा बागबानों को गुणात्मक जैविक खाद उपलब्ध करवाई जा रही है। इसी तरह के दो और संयंत्र नाहन तथा धर्मशाला में भी बनाए जा रहे हैं। धर्मशाला जेल में कैदियों द्वारा कार धुलाई तथा ड्राईक्लीनिंग का कार्य भी किया जाता है। अंत में यह प्रदर्शित होता है कि कारागार न्याय तथा कैदियों का पुनर्वास व्यापक सामाजिक उत्थान का केवल एक हिस्सा मात्र है। राज्य के कारागार स्वयंसेवी संस्थाओं तथा सक्रिय सामाजिक समूहों के सहयोग से कैदियों के पुनर्वास तथा सुधार में अहम भूमिका निभा रहे हैं।

• • •

कविताएं

तुम्हारी सरपरस्ती में जले कितने घर सोचो
कटे हैं कितनों के सिर इसका तुम्हें अहसास
बहा लो सड़कों पर खून तुम, मगर इतना तो सोचो
वतन जब लहू मांगे तो तुम्हारे पास क्या होगा?

सागर
कैथू जेल, 15 अगस्त, 1996

धूप में जो साथ चले थे
वह अपने साए थे
दिन ढलते ही पाया
सफर में हम अकेले थे
बारिश की हर बूंद में खुशबू थी तेरी
हवा में हर झोंके में था मेरा पैगाम
जो तुम आ जाते ऐसे मौसम में तो
बेचैन दिल को मेरे आ जाता आराम।

मुनीर हुस्सैन
कैथू जेल, 15 अगस्त, 2000

'क्षितिज के उस पार हाशिए पर लटका भविष्य' से साभार

संपादन एवं संकलन : सरोज वशिष्ठ

आलेख

बंदियों की ममतामयी मां

● विनोद भारद्वाज



जीवन में कुछ शख्सीयतें ऐसी होती हैं, जिनके आगमन से वातावरण गुलजार हो जाता है। उनकी उपस्थिति माहौल को खुशनुमा बना देती है। उनका समर्पण भाव से कार्य करना तथा समाज के लिए कुछ करने की इच्छा ही उन्हें भीड़ से अलग करती है। इस लोक से जाने के बाद भी उनकी आहट तथा उपस्थिति बनी रहती है। साहित्य, रंगमंच, कविता तथा कला के माध्यम से जेल की चारदीवारी के भीतर रह रहे, कैदियों के जीवन में मुस्कान लाने में सरोज वशिष्ठ के प्रयास काबिलेतारीफ थे। आज सरोज वशिष्ठ हमारे मध्य नहीं हैं लेकिन जब भी जेल सुधार व कैदियों को आत्मनिर्भर बनाने व उनमें छुपी भावनाओं को समाज के समक्ष लाने की बात होती है तो उनका व्यक्तित्व चारदीवारी, बंद दरवाजों, सलाखों से भी ऊंचा दिखाई देता है। छोटे-नाटे कद की महिला जिनके गले में रुद्राक्ष सहित मोटी-मोटी मालाएं, हाथ में अंगुठियां सजी होती थीं व चश्मा गले में लटका रहता था, को देखते ही एक बात जहन में निकलती थी, बहुत हिम्मती महिला है। कैदियों के साथ रहकर उन्हें नई राह पर ले जाने का कार्य कर रही है। 'कैदियों की मां' के नाम से विख्यात सरोज जी ने मई 1993 से दिसंबर 1995 तक तिहाड़ जेल में और मई 1996 से कैथू जेल शिमला में साहित्य, रंगमंच, कविता तथा कला के माध्यम से सजायाफ्ता या सजा काट चुके कैदियों को एक नई राह दिखाने का अभिनव प्रयास था। ऐसी ही गतिविधियां कांगड़ा, चंबा, नाहन तथा बिलासपुर जेलों में चलाई। हिमाचल के बंदियों द्वारा रचित कविताओं का संकलन 'क्षितिज के उस पार हाशिए पर लटका भविष्य' पुस्तक का संपादन कर एक अनुकरणीय उदाहरण प्रस्तुत किया।

डॉ. कुसुम अंसल के शब्दों में, "सरोज में है वह जिगर, वह साहस, वह उत्साह जो उसका जुनून बन गया है। सरोज में ही है वह दम कि वह कारागार की सारी अभेद्य दीवारों, नियम, निषेध फर्लांग कर उस पार पहुंच गई, वहां, जहां कैदी अपनी अभिशप्त योनि से निकल कर साधारण मनुष्य हो जाते हैं- जीते जागते लगते मनुष्य जिनके पास सपने थे, अरमान थे और खुले आकाश को देखने की दृष्टि। वह सरोज के सान्निध्य में 'मॉम' के स्नेहिल ममत्व भरे आंचल की छांव में पिघलकर अपनी नई परिभाषा गढ़ते हैं तथा अपने दबे कुचले अतीत को उखाड़ कर कागज के पन्नों पर उतारते हैं। सरोज वशिष्ठ ने किरण बेदी के साथ मिलकर जेल को आश्रम में बदलने का प्रयास किया है। दिल्ली के तिहाड़ जेल से लेकर हिमाचल के कारागारों में एक उम्र गुजार दी उसने अपनी इस सेवा, लगन, निष्ठा की खातिर।" सरोज वशिष्ठ ने तिहाड़ कारागार के कैदियों की रचनाओं के दो संग्रह 'दुख्तरे हिंद' और 'तन्हाइयों के वे जंगल' प्रकाशित करवाए। हिमाचल में 'क्षितिज के उस पार लटका हाशिए पर भविष्य' शीर्षक से पुस्तक का प्रकाशन किया।

सरोज वशिष्ठ ने 1996 में शिमला की कैथू जेल में पहली लाइब्रेरी की स्थापना की। उन्होंने तिहाड़ जेल में सृजन कर इस मूक आंदोलन को पहाड़ों तक लाया। राज्य की जेलों में सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन, रंगमकर्म कार्यशाला, नृत्य, गायन, कविता पाठ जैसे कार्यक्रमों का आयोजन उनके जीवन का हिस्सा थे। उन्होंने इनके माध्यम से दीवारों के बीच जीवन जी रहे अभागों के जीवन में नई खुशी, उत्साह का संचार किया। आदर्श कंडा जेल में भी पुस्तकालय की स्थापना में सरोज के प्रयास सराहनीय रहे। सरोज जी के प्रयासों से डॉ. कुसुम अंसल, माधवी मल्होत्रा, खुशवंत सिंह, डॉ. महीप सिंह, डॉ. किरण बेदी, एस.आर. हरनोट, सुशील तनवर, राजकमल तथा हिंद पॉकेट बुक्स ने दिल खोल कर पुस्तकें दान दीं। 12 अगस्त 2000 को कंडा आदर्श कारावास के उद्घाटन अवसर पर तत्कालीन राज्यपाल श्रीयुत विष्णुकांत शास्त्री ने पुस्तक खरीद के लिए 10 हजार रुपये दान दिए।

सरोज वशिष्ठ का बचपन लाहौर में बीता। लाहौर में सर

चारदीवारी से जीवन की नई उड़ान

खुली हवा में उड़ते पंछी को देखकर हर व्यक्ति को उड़ने का मन करता है। उसकी उन्मुक्त उड़ान पर हवा में तैरते हुए उसका दृश्य सभी को भा जाता है। लेकिन पिंजरे में बंद पक्षी कितना भी सुंदर क्यों न हो, उसे देखकर सभी के मन में एक ही भाव आता है कि इसे स्वतंत्रता कहां? इसका जीवन तो बस पिंजरे तक ही सीमित रह गया है, चाहे उसे समय पर खाना-सोना मिले, पर फिर भी जीवन में आजादी नहीं रहती। पंख होने के बावजूद गगन की ऊंचाइयों का आभास नहीं हो पाता। सजायाफ्ता व्यक्ति का जीवन भी पिंजरे के पंछी के समान हो जाता है। जेल की दीवारें, अहाता, सलाखें नियम पर कार्य तथा मेहनत, कभी कभार परिवार जनों से भेंट व चिट्ठी पत्री। ऐसा व्यक्ति अपनी भावनाओं तथा विचारों को सलाखों के पीछे उधेड़ता/बुनता रहता है। सजा का अभिप्राय उसे उसके कृत्य का आभास दुनिया से काट कर करवाना होता है। जेल सुधार की दिशा में हुए कार्यों से हिमाचल में सजायाफ्ता कैदियों के जीवन में बदलाव तथा उन्हें सम्मानजनक जीवनयापन के लिए सराहनीय प्रयास हुए हैं। कैदियों द्वारा निर्मित उत्पादों को बाजार मिला है। धर्मशाला जेल के कैदियों द्वारा निर्मित उत्पादों की बिक्री के लिए ऑनलाइन सुविधा आरंभ हुई है। नाहन केंद्रीय कारावास के समीप इन उत्पादों की बिक्री के लिए केंद्र खोला गया है। नाहन जेल के कैदियों का एक बैंक स्थापित हुआ है। शिमला की कैथू जेल से कैदी राजधानी में विश्वविद्यालय परिसर व इंदिरा गांधी मेडिकल कॉलेज में सचल कैंटीन संचालित कर रहे हैं। कैथू कारावास में चार लाख की लागत से बिस्कुट तथा अन्य बेकरी उत्पादन तैयार करने का आधुनिक संयंत्र स्थापित किया गया है। इसकी बिक्री भी शिमला में दो-तीन स्थानों पर की जा रही है। आईजीएमसी के समीप श्रीराम सिंह रोजाना छह हजार रुपये तक के बेकरी उत्पादों की बिक्री कर रहे हैं। शिमला नगर निगम द्वारा ऐतिहासिक रिज मैदान के समीप स्थापित प्रदेश के पहले 'बुक कैफे' का संचालन भी कैदियों द्वारा किया जा रहा है। इन्हें शिमला स्थित तीन सितारा होटल से बाकायदा प्रशिक्षण दिलाया गया है। खुली हवा में अपना कारोबार कर इन व्यक्तियों का मनोबल तथा आत्मविश्वास बढ़ा है। उनके चेहरे पर एक नई खुशी का आभास मिलता है। उनके शब्दों में, "दिनभर कारोबार कर जब हम चारदीवारी की दहलीज पर पहुंचते हैं तभी हमें जेल का आभास होता है। अब तो यह दिनचर्या बन गई है। इसके लिए हम प्रदेश के जेल प्रशासन विशेषकर पुलिस महानिदेशक सुमेश गोयल जी के आभारी हैं, जिन्होंने हमें नया जीवन तथा खुले वातावरण में विचरने का सुनहरा अवसर प्रदान किया है।

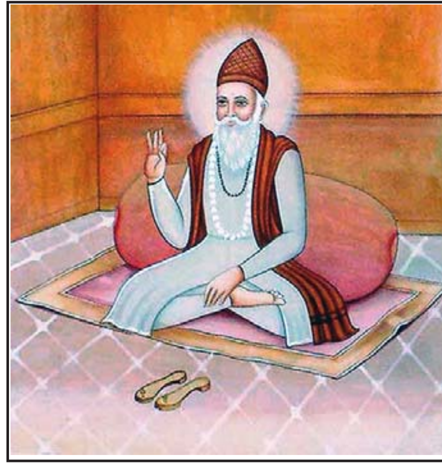
गंगाराम स्कूल में अभिनय करने का मौका मिला। आजादी के दौर को पास से देखा। बंटवारे को देखते हुए जून-जुलाई 1947 में शिमला आ गए। सतीश से विवाह होने के बाद सरोज आकाशवाणी दिल्ली से जुड़ गईं। वर्ष 1960 में वहां उद्घोषिका के रूप में काम आरंभ किया। फिर अनुवादन का कार्य शुरू किया। कुल 29 वर्ष तक आकाशवाणी में सेवाएं दीं। फ्रेंच तथा जापानी भाषाओं में सरोज वशिष्ठ को महारत हासिल थी। नाटकों की समीक्षा तथा अनुवाद को जीवन का अंग बनाया। फिर कैदियों के बीच उल्लेखनीय कार्य किया। तिहाड़ जेल के बाद शिमला में कैथू तथा कंडा जेल में साहित्य, कला, रंगमंच से कैदियों की जीवनधारा को मोड़ा। प्रदेश में वरिष्ठ साहित्यकार एस.आर. हरनोट के अनुसार सरोज वशिष्ठ समाज के ऐसे लोगों जो किसी वजह से चारदीवारी के पीछे रहने को मजबूर थे, के लिए वह ममता रूपी मां का रूप थीं। साहित्य के प्रति उनकी सोच तथा व्यक्ति के भीतर छुपी संवेदनाओं को पहचानने की उनमें प्रखर शक्ति थी। उन्होंने अनेक विदेशी कथाओं की रचनाओं का हिंदी व भारतीय लेखकों की रचनाओं का अंग्रेजी भाषा में अनुवाद किया। साहित्य अकादमी के लिए नोबेल पुरस्कार विजेता यासुनारी कावाबाट के उपन्यास हजार सारस का हिंदी अनुवाद डॉ. किरण बेदी की 'आई डेयर' का हिंदी अनुवाद हिम्मत, कुसुल अंसल व डॉ. महीप सिंह के दो उपन्यासों का अंग्रेजी अनुवाद। एस.आर. हरनोट के कहानी संग्रह 'माफिया' का अंग्रेजी अनुवाद प्रमुख हैं।

लाहौर में बचपन बीता, 1947 में शिमला आईं। फिर नई दिल्ली को अपनी कर्मभूमि बनाया। सेवानिवृत्ति उपरांत शिमला को अपना बसेरा बनाया। शिमला में ब्लॉक नं. सी-तीन फ्लोर नंबर 20-विकास नगर, शिमला उनका स्थायी पता था। कैदियों के जीवन में उजाला लाना उनके भीतर छुपी भावनाओं को लेखन, रंगमंच, कला के माध्यम से उजागर करने का सरोज वशिष्ट में एक साहस व उत्साह व जुनून था। भाग्य की विडंबना देखो जो मां समाज सेवा में दिन-रात तत्पर रहीं, 6 दिसंबर, 2015 को उनके घर में हुए अग्निकांड में इस धरा को छोड़कर चली गईं। उनके देहावसान पर एक मां उन अभागों को छोड़कर अनंत की यात्रा पर निकल पड़ी। उनके जाने से एक बात सच साबित हुई कि इस धरा पर भगवान ने मां को इसलिए बनाया कि वह हर जगह हर समय उपलब्ध नहीं हो सकता। हिमाचल प्रदेश के कारावासों से निकली कविताओं का संकलन 'क्षितिज के उस पार हाशिए पर लटका भविष्य' में सजायाफ्ता कैदियों के दर्द, भूतकाल, भविष्य पीड़ा को पढ़कर उस काल की याद तरोताजा हो जाती है जब सरोज वशिष्ठ जेलों के दरवाजे खुलवाकर, जेल की डियोढ़ी पार का उन अभागों से मिलती थीं। उनकी भेंट हर शख्स के जीवन में नई उमंग का संचार करती थीं। जिन व्यक्तियों/स्त्रियों से उनका नाता-रिश्ता रहा, वे उस मां को आज भी ढूंढ रहे हैं।

आलेख

कबीर का समाज, विचार एवं आचार दर्शन

● डॉ. रमेश सोबती



भक्ति शब्द सर्वप्रथम उपनिषदों में प्रयुक्त हुआ है। ऋग्वेद सहिंता में भक्त तथा आभक्त शब्द आते हैं पर इनका अर्थ सायण से सेवामान तथा असेवामान अर्थात् पूजने वाला व न पूजने वाला लिया है। इसमें कोई संदेह नहीं कि वैदिक तथा गीता के भक्तों का स्वरूप एक नहीं है। लेकिन भगवान् श्री कृष्ण गीता में कहते हैं, -वैदिक भक्तों को पाप मुक्त होकर यज्ञ द्वारा ब्रह्मोपासना द्वारा स्वर्ग लोक को प्राप्त हुए बताया गया है। क्योंकि वे ऐसी कामना करते हैं तथा विशाल स्वर्ग लोक का आनन्द प्राप्त करने के पश्चात पुण्य समाप्त होने के बाद पुनः मृत्यु लोक को प्राप्त होते हैं, लेकिन भगवान् श्री कृष्ण अपने भक्तों को अनन्य भाव से सदा अध्यवसाय पूर्वक उनका चिंतन करते हैं, स्वयं अपने में मिला लेते हैं। एवालिन अंडरहिल लिखते हैं कि भक्ति के स्त्रोत हिन्दू धर्म की अपनी परंपरा में निहित हैं और श्रीमदभागवत गीता के अनेक श्लोकों में इसका उल्लेख मिलता है। फिर भी भक्ति के इस मध्याकालीन पुनरुत्थान में अनेक विरोधी तत्त्वों का सामंजस्य दिखाई देता है। कहा जाता है, रामानंद कबीर के गुरु थे तथा यह चेतना कबीर को उन्हीं से प्राप्त हुई। रामानंद जी व्यापक धार्मिक स्वभाव के व्यक्ति थे और उनमें धर्म प्रचारकों जैसा उत्साह था। वे जिस युग में रह रहे थे उसमें अत्तार, सादी, जलाबुद्दीन, रूमी - जैसे पारसी रहस्यवादियों की आवेगपूर्ण कविता और गहन गंभीर दर्शन भारतीय धार्मिक चिन्तन को गंभीर रूप से प्रभावित कर रहे थे। उनका स्वप्न था कि वे इस गहन और वैयक्तिक मुस्लिम रहस्यवाद का परम्परागत ब्राह्मणवादी धर्म दर्शन से सामंजस्य स्थापित करें। रामानंद तथा रूमी दोनों धार्मिक नेता मसीही जीवन और चिंतन से प्रभावित थे। उनके उपदेशों में गहन आध्यात्मिक संस्कृति की दो या तीन परस्पर विरोधी धाराएं थीं। जैसे कि आरंभिक मसीही धर्म में यहूदी और युनानी चिंतन की धाराएं आपस में मिलती हैं। इसीलिए रामानन्द के शिष्य कबीर की प्रतिभा की यह एक महत्त्वपूर्ण विशेषता है कि उनकी कविताओं में तीनों धाराएं मिलकर एकाकार हो जाती हैं। यह सर्वविदित है कि कबीर एक महान धर्म सुधारक थे। लेकिन वे एक पंथ के प्रतिष्ठापक भी थे। उनकी ख्याति एक रहस्यवादी कवि के रूप में हुई है। उनकी नियति यथार्थ का रहस्योद्घाटन करने वाले अनेक साधकों जैसी है। धार्मिक बहिष्कार से उन्हें घृणा थी। वे मानव-मात्र की समानता के पक्षधर थे और सभी मनुष्यों को स्वतंत्रता के ऐसे लोक में ले जाने की ओर प्रयत्नशील थे जहां उन्हें ईश्वर की संतान के रूप में मान्यता प्राप्त हो।

कबीर का शाब्दिक अर्थ होता है श्रेष्ठ। जहाँ श्रेष्ठता है वहां सभ्यता है, संस्कृति है और संस्कृति का अर्थ है सुधरी हुई अथवा अच्छी स्थिति, लेकिन व्यवहार में संस्कृति का तात्पर्य मानव मन की उस उन्नत अवस्था से है जिस में मनुष्य की मानसिक वृत्तियों के संतुलन, उसके विचारों की उत्कृष्टता, भावों की उदारता, आचार की पवित्रता और व्यवहार की शिष्टता का ज्ञान होता है। मानवता का बोध ही संस्कृति एवं मूल सिद्धांत है। मानव ही निखिल सृष्टि में श्रेष्ठ से श्रेष्ठ आचार विचार धारण करने का सामर्थ्य रखता है। यही मानवोपार्जित श्रेष्ठ आचार विचार परंपरा-संस्कृति और सभ्यता की उपादान हो जाती है। श्रेष्ठ आचार-परंपरा से संस्कृति का और श्रेष्ठ सृजन होता है। जिस प्रकार आचार-विचार का आपस में घनिष्ठ संबंध है। संस्कृति का संबंध अन्तरूकरण की शुद्धता से है और सभ्यता का संबंध व्यावहारिक जगत् से है अतः संस्कृति अभ्यन्तर और सभ्यता बाह्य तत्व है। संस्कृति में भौतिक आवश्यकताओं को गौण स्थान दिया जाता है जबकि सभ्यता में प्रधान स्थान। संस्कृति जीवन व्यापिनी चेतना है और सभ्यता शरीर पर धारण आभूषण। कबीर का अर्थ

है श्रेष्ठता यानी कि संस्कृति, सभ्यता एवं भक्ति का सामंजस्य, जहां भक्ति है वहाँ ईश्वर की सत्ता है एवं सृष्टिकर्ता है। कबीर एक साधारण एवं श्रेष्ठ व्यक्तित्व, ब्राह्मवाद के घोर विरोधी, नब्जशनास, इह-लोक-परलोक की बातें करने वाला, युग-प्रवर्तक एवं युगांतरी थे। कबीर सही मायने में जगत-गुरु थे, जिनका ज्ञान किसी व्यक्ति विशेष या धर्म के लिए नहीं था। वे आम आदमी तक आम भाषा में गूढ़ से गूढ़ ज्ञान को व्यक्त करते और हर आदमी को अंतर्मुखी होने की प्रेरणा देते थे। उनकी वाणी से लोगों के मन और मस्तिष्क के तार अनायास झंकृत हो उठते थे। वे कभी पुराने इसलिए नहीं हुए क्योंकि उनकी वाणी कभी सीधी कभी कठोर परन्तु हमेशा सत्य से भरी होती थी। वे सच्चे मानवता के मसीहा थे। उन्होंने अध्यात्मिकता का प्रयोग मानवता के ही लिए किया। वे आजीवन हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच एकता स्थापित करने एवं बीच फैलती खाई को पाटने का अथक प्रयास करते रहे। वे निरक्षर अवश्य थे पर अशिक्षित नहीं थे। उन्हें सम्पूर्ण भारतीय दर्शन एवं आध्यात्मिक विमर्श के तत्त्वों का पूरा ज्ञान था। वे आध्यात्मिकता को जीवन की कसौटी मानते थे। वे जानते थे यदि आध्यात्म जीवन में आ जाए वही धर्म हो जाएगा। धर्म पशु को परमेश्वर, नर को नारायण, कंकर को तीर्थंकर शैतान को सज्जन और जीव को शिव बना देता है। वे आगे कहते हैं कि वस्तु का स्वभाव ही धर्म है तथा जब तक आत्मा का स्वभाव है स्वभाव में रमण करना। धर्म जीवन में तभी घटित होता है जब आत्मा निजगुणों में रमण करे, निज गुणों में रमण करना ही अध्यात्म है तथा वही आध्यात्म के रस को प्राप्त कर सकता है। महात्मा बुद्ध के बाद कबीर ने ही इस तथ्य की स्पष्ट रूप से व्याख्या की। वे ही पहले व्यक्ति थे जिन्होंने आम आदमी के बीच रहकर उन्हीं की भाषा में संपूर्ण मानवता के लिए आवाज उठाई। कबीर को यदि ईश्वर का अवतार मान भी लिया जाए तो कोई अत्योक्ति नहीं है। ईश्वर को अवतार कहने का अभिप्राय अलौकिक शक्तियों में से एक शक्ति का पृथ्वी पर अवतरित होना है, सम्वत 1455 ज्येष्ठ पूर्णिमा सोमवार को ब्रह्म मुहूर्त में काशी के पास लहरतारा गांव के तालाब तट पर स्वामी श्री रामानन्द जी आचार्य के शिष्य अष्टानन्द जी जब ध्यान में बैठे हुए थे तो अकस्मात उन्होंने देखा कि आकाश मंडल से एक अति दिव्य प्रकाश-ज्योति तालाब के कमल पुष्प पर उतरी और देखते ही वह ज्योति एक मनोहर छवि वाले बालक के रूप में प्रकट हो गयी। यही बालक बड़े होकर सद्‌गुरु कबीर दास जी के नाम से विश्व में प्रसिद्ध हुए।

गुरु शब्द ब्रह्म की भांति बड़ा गूढ़, गहन और गम्भीर होता है। आचार्य बटुक जी गुरु की व्याख्या करते हुए कहते हैं गुरु संत, भक्त, मास्टर, आचार्य अथवा अध्यापक का पर्याय नहीं है। किसी संकुचित अर्थ के बन्धन में गुरु अथवा गुरुवाणी को समझा ही नहीं जा सकता। संतों ने गुरु के गूढ़ गहन गम्भीर विस्तृत अर्थ को पहचाना था और वे गुरु के कार्यक्षेत्र से भी प्रभावित थे। इसलिए उन्होंने गुरु के लिए सिकलीगर, साह, सुनार, चन्दन, चिन्तामणि, भृगी, वैद्य, हंस एवं पारिख जैसे अनेकानेक शब्दों का प्रयोग किया था जिससे गुरू की गुरुता का, उनके गुरुतम कार्यक्षेत्र का पता चलता है। कबीर साहिब ने अपने समय के अधूरे और पाखण्डी गुरुओं की आलोचना की है और कहा है कि आज के गुरु लोभवश शिष्यों को लूटते हैं। उनके शिष्य भी अपने स्वार्थ के लिए ऐसे ही गुरुओं के साथ लगे रहते हैं। ऐसे तथाकथित गुरुओं को कैसे शान्ति मिल सकती है? वे कहते हैं कि ऐसे गुरु पैसे के पचास मिलते हैं, वे राम नाम को बेचकर उसे अपनी कमाई का साधन बनाते हैं और ऐसे धन से शिष्यों की गिनती बढ़ाने की आशा करते हैं : कबीर पूरे गुरु बिना, पूरा शिष न होय

गुरु लोभी शिष लालची, दूनी दाझन होय
गुरु तो सस्ता भया, पैसा केर पचास
राम नाम को बेचि के, करे शिष की आस।

कबीर साहिब ने गुरु तथा शिष्य दोनों के लिए बहुत ऊंचा आदर्श स्थापित किया। उन्होंने कहा कि शिष्य को चाहिए कि अपना सब कुछ गुरु को अर्पण कर दे, अर्थात् सब कुछ गुरु का समझकर इस्तेमाल करे, परन्तु गुरु को भी चाहिए कि शिष्य की सूई तक को भी हाथ न लगाए।

शिष तो ऐसा चाहिए, गुरु को सब कुछ देय,
गुरु तो ऐसा चाहिए, शिष से कुछ न लेय।

कबीर जी स्पष्ट कहते हैं कि महात्मा अपने शिष्यों का धन साधसंगत की सेवा या परोपकार में अवश्य खर्च करवा दें ताकि उनकी कमाई सार्थक हो तथा आध्यात्मिक साधना में सहायक बने। परन्तु संत महात्मा निजी आवश्कताओं या निजी लाभ के लिए शिष्यों से कभी एक पाई भी न लें;

मर जाऊँ माँगू नहीं, अपने तन की काज
परमार्थ के कारन, मोहि न आवे लाज।

जैसा कि सर्वविदित है कि कबीर जी ने जीवन भर कपड़ा बुनने का कार्य करके अंपना और अपने परिवार का पालन किया। वे जब भी संतमत के प्रचार या सत्संग के लिए बाहर जाते तो अपना करघा साथ ले जाते थे। संत, सतगुरुओं के पास नाम-भक्ति का अटूट भण्डार होता है। वे भौतिक वस्तुओं की ओर अपनी दृष्टि उठा कर भी नहीं देखते। वे शिष्यों से अपने गुजारे के लिए कुछ भी नहीं लेते। हाँ परमार्थ के लिए अपने शिष्यों से परोपकार अवश्य करवाते। उनका पूरा जीवन एक प्रेरणादायक उदाहरण रहा।

गुरु, संत महात्मा चाहे किसी जाति, धर्म, देश या समय में क्यों न आए हों सब का एक ही संदेश और एक ही अनुभव होता है। वे संसार में जाति और धर्म की स्थापना करने के लिए नहीं आते और न ही हमें एक दूसरे से लड़ना-भिड़ना सिखाते हैं। बल्कि

वे हमारे भीतर अपनी अलौकिक शक्तियों के माध्यम से ईश्वर की भक्ति उजागर करने और इस नश्वर देह को बंधनों से मुक्त करके, उस महान आत्मा में विलीन करने का प्रयास करते हैं। कबीर भी सगाज को रूढ़ियों से मुक्त करना चाहते थे। उन्होंने पहले पहल इस देश के उपेक्षितों-दलितों को ईश्वर दिया, वे अध्ययन एवं चिंतन की दृष्टि से हमेशा सीमान्त पर रहे। वे परंपराभंजक होने के साथ ही नर विकल्पों के सृजनकर्मी थे। उनमें निर्भीक समाज सुधारक के तत्त्व थे। उनके साहित्य की समाजशास्त्रीय विवेचना से पता चलता है कि वे समाज को रूढ़ियों से मुक्त करना चाहते थे। वे अपने जीवनानुभव के साक्ष्य पर आधारित तर्कों से पंडितों, मुल्लाओं, धार्मिक मठाधीशों, योगियों और अवधूतों को निरुत्तर कर देते थे। धार्मिक-कर्मकांड और बाह्य आडंबरों की धजियाँ उड़ा देते थे। उनकी तर्क प्रणाली की शक्ति सशक्त थी। भाषा पर कबीर का जबरदस्त अधिकार था। वाणी के डिक्टेटर थे। जिस बात को जिस रूप में कहना चाहते थे उसी रूप में अपनी भाषा से व्यक्त कर दिया करते थे। उन्होंने हिन्दुओं तथा मुसलमानों के समन्वय के द्वारा राष्ट्र की एकता में भी अपना विशेष योगदान दिया था। उन्होंने दोनों धर्मों में व्याप्त आडंबरों की निंदा करते हुए हृदय को सहज मार्ग का प्रतिपादन किया। वे कहते हैं, - याहन पूजे हरि मिले तो में पूजू पहार। उस समय जाति-पाति के भेदभाव ने समाज को ऊँच-नीच के खानों में बांट रखा था। कबीर ने स्वयं इस पीड़ा को भोगा था। इसलिए वे आक्रोशपूर्वक पूछते हैं जो तू बाभन बभनी जाया, आन बाट हवें क्यों नहीं आया। केवल जन्म के आधार पर किसी को बड़ा मान कर समाज की एकता को खण्डित करने का अधिकार नहीं है। मुसलमानों के विषय में वे कहते हैं- कांकर पाथर जोरि के मस्जिद लयी चुनाय, तां चढ़ि मुल्ला बांग दे, क्या बहरा हुआ खुदाया कबीर साहिब का मत था कि भक्ति और बाह्याडम्बर का संबंध सूर्य एवं अंधकार का-सा है। एक साथ दोनों रह नहीं सकते। ईश्वर पूजा की उन भिन्न भिन्न बाहरी विधियों पर से ध्यान हटा कर जिनके कारण धर्म में भेदभाव फैला हुआ था। कबीर जी शुद्ध ईश्वर प्रेम और सात्विक जीवन का प्रचार करना चाहते थे। कबीर का यह प्रयत्न राष्ट्रीय महत्त्वपूर्ण एकता और अखण्डता की दृष्टि से था।

गुरु, संत महात्मा चाहे किसी जाति, धर्म, देश या समय में क्यों न आए हों सबका एक ही संदेश और एक ही अनुभव होता है। वे हमारे भीतर अपनी अलौकिक शक्तियों के माध्यम से ईश्वर की भक्ति उजागर करने और इस नश्वर देह के बंधनों से मुक्त करके उस महान आत्मा में विलीन करने का प्रयास करते हैं। कबीर भी समाज को रूढ़ियों से मुक्त करना चाहते थे।

उपनिषद् से ज्ञान का प्रकाश होता है और ज्ञान में भक्ति है। भक्ति में प्रेम और प्रेम एक दूसरे को समझाने और समीप लाने की एक प्रमुख क्रिया है। हमारे जीवन की प्रत्येक किरण से प्रेम, करुणा तथा परोपकार की भावना टपकनी चाहिए। संत कवि चाहे तुलसीदास जी हो, सूरदास हो, मीरा हो या कबीर ये सभी निम्न वर्ग से आए और इन्होंने अपने ही बीच के लोगों को जागृत किया, बोलने की कूब्बत प्रदान की। ईश्वर हमारे बीच है, हम से बाहर नहीं। ईश्वर को भक्ति के माध्यम से प्राप्त किया जा सकता है। भक्ति स्वतन्त्र है। वह जाति-पाति, मन्दिर-मस्जिद, जादूटोना, लिखने-पढ़ने या हिन्दू-मुस्लमान के अधीन नहीं है। मान लो यदि मथुरा, काशी, द्वारिका या मक्कामदीना जाना ही भक्ति है तो जो किसी भी कारण वहां नहीं जा सके वह तो भक्ति से रह गया। भक्ति स्वतंत्र कहां रही? अपनी आद्यत रचनाओं में यही समझाने का उन्होंने प्रयास किया। दुलहन गावहु मंगलचार, हम धरि आये हो राजा राम भरतार। कबीर राम के चार रूपों को अपने साहित्य में आत्मसात करते हैं। दशरथ पुत्र राम, घटघट में व्याप्त राम, बीज रूप में बसे राम तथा जगत से न्यारा राजा राम। कबीर ने बीजक नामक ग्रन्थ की रचना की। उनकी विचित्रताओं के अवलोकन से ज्ञान होता है कि कबीर जी प्राणी मात्र को भेद से अभेद अवस्था की तरफ ले जाना चाहते थे। परमतत्त्व प्रत्येक प्राणी में आत्मा के रूप में व्याप्त है। परमतत्व की सत्ता अक्षय एवं अनश्वर है। आत्मा में भी यही गुण है। गीता में भी इसकी रोचक मीमांसा की गयी है। कबीर को स्वयं में निहित परमतत्त्व का बोध (ज्ञान) हो चुका था। भौतिक मायाजाल से विरक्त होकर अदम्य ईश्वर तत्त्व का अनुभव उन्हें था। वे जन्म मरण के अस्तित्व को अपना शत्रु मानते थे। आत्मबोध से उद्घाटित आत्म-विश्वास को मनुष्य के सर्वांगीण विकास को मूल मानते थे। कबीर को अपने गुरु से आर्यावर्त के महान चिंतकों की मानवीय दृष्टि से परिचय प्राप्त हो चुका था और परम तत्त्व से रू-ब-रू और आत्मविश्वासी बन गए थे। कबीर की कविता आत्मबोध एवं आत्मशोध की संभावनाओं की खोज से गहरी जुड़ी हुई है। कविता की तरह विचार की अनंतता की भाषा कबीर के होने का सच है और अर्थ भी है। उनका काल और कालातीत के निरंतर द्वंद्व में देखती भाषा है। आत्ममुग्धता की भाषा, भक्तिभाव की कविता से अपनी ईश्वर के प्रति प्रेमप्रीति का वृतान्त लिखते हुए कबीर ने उस काव्य की एक नई परंपरा के रूप में रूपांतरित किया है। कबीर की कविता इतने वर्षों बाद भी इसलिए पठनीय एवं मानवीय बनी हुई है कि अनुभूति की सत्यता लेखन के आधार में रहकर उसे कालजयी बना गयी। साहित्य सुन्दर की रचना है और अनुभूतियों की सौन्दर्यात्मक अभिव्यक्ति में अस्तित्व से ही समस्त समाज का निर्माण होता है, जो कबीर की कविता में छलकता है, आस्था एवं विश्वास पैदा करता है, पुरुषार्थ उद्दीप्त करता है। उनकी कविता में निहित उनकी ऊर्जास्वित समूची चेतना को देखा जा सकता है।

अपने आत्मदीप्त और ओजस्वी रूप में हमारी चेतना से संवाद करते दृष्टिगोचर होते हैं। कबीर की कविताएं नैतिक और आध्यात्मिक संस्कृति की अभिवृद्धि करती है और चिर प्रताड़ित दलित शोषित शक्तियों के प्रतीक कबीर धर्मचेतना को समर्पित हैं। प्रसिद्ध लेखक पुरुषोत्तम अग्रवाल लिखते हैं- कबीर की कविता जब सहज रूप से पढ़ता हूं पहले से तय किए बिना कि किस प्रोजेक्ट में उसे खींच लाना है तो मन अनायास ही ऐसी अन्तर्गुम्फित अनुभूति पाता है जिस में उल्लास भी है वेदना भी है। सामाजिक कर्म के प्रति अदम्य उत्साह भी है। सब कुछ नश्वरता का अपरिहार्य बोध भी, जिसमें आस्था की जरूरत भी है और स्वयं इस जरूरत पर संदेह भी, जिसमें सबको साथ होने की ललक भी है और खुद के अकेलेपन का अहसास भी। जिसमें सतत् मिलन का राग रंग भी है और शाश्वत विरह का भुजंग भी। जिस में जीवन का मोह भी है, और मृत्यु का स्वागत भी। असंभव है एक दूसरे का अलगाव पाना। अपरिहार्य है इस अन्तर्गुंफन की अनुभूति और नियति को ही धारण करने का साहस जुटाना। ऐसे साहस की स्रोतस्विनी है कबीर की कविता।[4] भक्ति काल के प्रणय-काव्य में कबीर ने अपनी मान्यताओं के अनुसार प्रणय को एक अनिवार्य जीवन मूल्य के रूप में भी मान्यता प्रदान की है। वे प्रेम को ही समस्त ज्ञान का सार रूप स्वीकार करते हुए कहते हैं -

पोथी पढ़ पढ़ जग मुआ, पंडित भया न कोय। ढाई आखर प्रेम का, पढ़े सो पंडित होय।

कबीर ने प्रणय सम्बंधों में स्वयं को नारी और परमात्मा को पुरुष रूप माना और जीव परमात्मा के रूप में प्रणय-सम्बंधों को स्वीकृति दी। इस कारण उन्होंने लौकिक धरातल पर प्रणय सम्बंध अस्वीकार किए और नर से नारी को दूर रखा, उनके नारी-निन्दापरक प्रसंग इस तथ्य के साक्षी हैं। कबीर ने प्रणय को जीव में आवश्यक मानव-मूल्य बताया पर उन्होंने नैतिक स्तर पर प्रणय का तिरस्कार नहीं किया। उन्होंने लौकिक प्रणय संबंधों से पारलौकिक प्रणय-संबंधों की प्राप्ति का सूत्र दिया और नारी को ही परमात्मा स्वरूप में स्वीकार किया। गोस्वामी तुलसीदास ने मर्यादित प्रणय सम्बन्धों में नारी को पुरुष की सहचरी निरुपित किया है किन्तु उनका आग्रह नारी के अनुचरी रूप के प्रति अधिक है। यहां प्रणय सम्बन्ध सामाजिक व्यवस्था के सुगठन और लोक कल्याण के लिए है जिनमें शोषित-उपेक्षित, दीन-दलित सभी प्रकार के लोगों की सुरक्षा व कल्याण का भाव निहित है। कबीर मानव जीवन के वास्तविक आनंद में बाधक अकर्म के विरोधी रहे। बाधक कर्म चाहे पुरुष वर्ग का हो अथवा स्त्री देह का, उनकी दृष्टि दांपत्य जीवन का सुख देह अंत तक स्वीकार न था, बल्कि दोनों देहों के घिनौने षड्यंत्र कष्टप्रिय असफल प्रयास, अतृप्त दुर्व्यसन और अनावश्यक वासना शक्ति दुर्लभ देहों की मुक्ति में बाधक थे। सद्‌गुरु कबीर विवेकी गुण श्रेष्ठ समस्त मानव जाति को मुक्ति सहायक सद्‌आचरणों से जोड़ना चाहते थे। मानव जीवन की सार्थकता यही है कि मानव कामेच्छा, धनेच्छा की अतृप्त अभिलाषा से मुक्त रहे। समस्त देहों का सुरंग इसी में समाहित है कि वह मुक्तिदायक भक्ति साधनाओं से प्रेम करें।

शतपथ के अनुसार यह संसार मृत्यु-संयुत है और मृत्यु सौ प्रकार की होती है जिस से बचने का प्रयास करना चाहिए, किन्तु जरावस्था के पश्चात् की शरीरिक-मृत्यु स्वाभाविक है क्योंकि आत्मा तो अमर है। यज्ञ के द्वारा याचक मृत्यु से ऊपर उठ जाता है। उसे मृत्यु भय नहीं सताता। कबीर को मृत्यु का जरा भी भय नहीं था। उनकी साधना यज्ञ के समान थी। वे साधना से स्वयं मृत्यु-रूप होकर मृत्यु से ऊपर उठ गए अर्थात् वे अभिनिवेषरूपी क्लेश से मुक्त हो गए। देवों ने भी यज्ञ एवं साधना द्वारा ही अमरत्व एवं मोक्ष की प्राप्ति की थी। ब्राह्मण वाङ्मय में आधुनिक अवधारणा के रूप में मोक्ष अथवा मुक्ति संबंधी विचारों का आभाव है। किन्तु अमरत्व के अनेक विचारों में मोक्ष की भावना का सूत्रपात दिखाई देता है। शतपथ देह और आत्मा का भेद बाह्य और आंतरिक का भेद मानता है, इस आंतरिक आत्मा को बाह्य देह से मुक्ति दिलाने की विचारधारा का प्रारम्भ यहाँ परिलक्षित होता है जो मोक्ष की प्रथमावस्था मानी जाती है अतरू कबीर का शायद मानना था कि आत्मजयी व्यक्ति की आत्मा अहिमर्त्य-शरीर को केंचुलवत् छोड़ कर मुक्त हो जाती है, इसलिए कबीर निर्भय होकर सामाजिक पाखंड-मंडित परिवेश को परिष्कार के लिए चल पड़े। उन्होंने अपनी ज्ञान एवं साधनामयी दृष्टि से इस मायिक संसार की नश्वरता को देख लिया था और जीवन की सत्यता का ज्ञान हो चुका था। स्वामी विवेकानन्द एवं स्वामी दयानन्द की तरह उनकी वाणी में इतना ओज एवं सार्थकता थी कि दुनिया ने उनका अनुगमन करना आरम्भ कर दिया क्योंकि उन्होंने कबीर की दिव्यदृष्टि, आध्यात्मिकता एवं भक्ति और लनके व्यक्तित्व की सशक्तता को आत्मसात कर लिया था। कबीर का मुखमंडल अपूर्व प्रभा से प्रोजवल रहता था और दिव्यज्योति की किरणें फूटती रहती थीं. और मन आत्मविश्वास से भरा रहता था मानो राम, कृष्ण और शिव एक ही पुरुष में अधिष्ठित हो गए हों।

एन.आर. आई. एवेन्यू, सुखचौन रोड, फगवाड़ा, पंजाब 144 401, मो. 0 98153 85535

सन्दर्भ ग्रन्थानुक्रमनिणका

1. गुरु गोविन्द सिंह के साहित्य में हिन्दू-संस्कृति : (आचार्य पं. विशअवप्रकाश दीक्षित बटुक)
2. कबीर की सामाजिक एवं क्रान्ति चेतना (आलेख रू डॉ. कुमार विमल)
3. डा. हजारीप्रसाद द्विवेदी (एक आलेख से)
4. कबीर का पुनराविष्कार : (आलेख : प्रभात त्रिपाठी)
5. कबिरन भक्ति बिगारिया : (आलेख : शिवराम सुमन)
6. वैदिक साहित्य में अर्थ-पुरुषार्थ : (डॉ. अमरनाथ राणा)

आलेख

पहाड़ी भाषा का व्यावहारिक अवलोकन

● राजीव त्रिगर्ती

भाषा की उत्पत्ति के विषय में भले ही अब तक किसी सर्वमान्य निष्कर्ष तक नहीं पहुंचा जा सका हो परन्तु जीवन में भाषा के महत्त्व पर तो किसी प्रकार का कोई प्रश्न ही नहीं उठता। मानव सभ्यता के चहुंमुखी विकास के साथ-साथ भाषा का महत्त्व भी दिन प्रतिदिन बढ़ता ही जा रहा है। भाषा मात्र विचारों के आदान-प्रदान का साधन ही न होकर मानव जीवन के लिए तो आधार स्तम्भ ही है। भाषा राष्ट्रीय चेतना की संवर्धक होने के साथ-साथ जातीय संगठन को भी दृढ़ करती है। इसके माध्यम से मनुष्य के सांस्कृतिक और सामाजिक विकास तथा ऐतिहासिक पृष्ठभूमि के बारे में भी सरलता से जाना जा सकता है। इन्हीं समस्त कारणों से भाषा न केवल बोलचाल के माध्यम के रूप में ही अपितु सभ्यता विकास क्रम के अनेक पहलुओं और आधुनिक जीवन के प्रत्येक विषय के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध बनाए हुए है।

पूरे संसार में लगभग चार हजार भाषाओं के प्रयोग को देखते हुए भाषाविदों ने इनके अनेक प्रकार के वर्गीकरण प्रस्तुत किए, जिनमें सबसे महत्त्वपूर्ण वर्गीकरण पारिवारिक वर्गीकरण है। इस पारिवारिक वर्गीकरण में सांस्कृतिक, सामाजिक, साहित्यिक तथा ऐतिहासिक इन समस्त दृष्टियों से भारोपीय परिवार बड़ा महत्त्वपूर्ण है। भारोपीय परिवार की ग्रीक, लैटिन और संस्कृत जैसी तीन भाषाओं का अपना विशिष्ट महत्त्व है। इनमें से भारतीय भाषाओं के सम्बन्ध में संस्कृत की भूमिका बड़ी ही महत्त्वपूर्ण है। भारोपीय परिवार से सम्बधित समस्त आधुनिक भारतीय भाषाएं संस्कृत निसृत हैं। संस्कृत से आधुनिक भारतीय भाषाओं तक पहुंचने में इस श्रृंखला को प्राकृत और अपभ्रंश से होकर गुजरना पड़ा है। इसी कड़ी में कुछ भाषाएं मागधी से निकलीं, कुछ अर्धमागधी से, कुछ महाराष्ट्री से, कुछ शौरसेनी से तो कुछ पैशाची से निकलीं।

भारत की भाषाओं के सन्दर्भ में सर्वप्रथम जो सफल सर्वेक्षणात्मक कार्य हुआ, वह जार्ज अब्राहम ग्रियर्सन द्वारा 'भारत का भाषा-सर्वेक्षण' नाम से किया गया। इस बात को साफ तौर पर स्वीकारने में किसी प्रकार की हिचक नहीं होनी चाहिए कि यह कार्य एक नींव मात्र है और इसमें दिए गए निष्कर्षों को अन्तिम नहीं मानना चाहिए परन्तु यह एक ऐसा कार्य है जिसके परिणामस्वरूप हम भारत में प्रयुक्त न केवल आर्य परिवार की भाषाओं के सन्दर्भ में ही जानकारी प्राप्त करने में सफल होते हैं अपितु हमें अन्य परिवारों की भारत में प्रयुक्त भाषाओं के विषय में भी एक हद तक पर्याप्त जानकारी मिलती है।

हिमाचल में भाषाओं के सन्दर्भ में जार्ज अब्राहम ग्रियर्सन द्वारा लिखित 'भारत का भाषा-सर्वेक्षण, खण्ड-1, भाग-1' में पहाड़ी भाषाओं के अन्तर्गत पहाड़ी को तीन श्रेणियों में विभक्त किया- पूर्वी पहाड़ी, मध्य पहाड़ी तथा पश्चिमी पहाड़ी। पूर्वी पहाड़ी को नेपाली नाम दिया गया और अपनी कुछ बोलियों के साथ एक परिनिष्ठित रूप में यह नेपाल के साथ-साथ भारत के भी नेपाली बहुल क्षेत्रों में व्यवहृत होती है। मध्य पहाड़ी के रूप में नैनीताल के पहाड़ी क्षेत्र में बोली जाने वाली कुमायुंनी तथा गढ़वाल और मसूरी के पहाड़ी प्रदेश के निकटवर्ती क्षेत्र में प्रयुक्त होने वाली गढ़वाली ये दो रूप हैं। पश्चिमी पहाड़ी के क्षेत्र के सम्बन्ध में बताते हुए ग्रियर्सन लिखते हैं - 'उत्तर प्रदेश के जौनसार बावर प्रदेश से लेकर पंजाब की सिरमौर रियासत, शिमला की पहाड़ियों, कुल्लू तथा मंडी एवं चम्बा की रियासतों और काश्मीर की भद्रवाह जागीर तक प्रसरित है। इस भाषा की बहुसंख्यक बोलियां हैं। ये सब एक दूसरी से काफी भिन्न हैं, किन्तु इतने पर भी इनमें अनेक समानताएं हैं।'

सुविधानुसार इन्हें नौ शीर्षकों के अन्तर्गत विभक्त किया गया है -

1. जौनसारी, 2. सिरमौरी, 3. बघाटी, 4. क्योंथली, 5. सतलुज वर्ग (शिमला की बोलियां), 6. कुल्लू वर्ग, 7. मंडी वर्ग, 8. चम्बावर्ग (चमेयाळी,गादी, पंगवाळी), 9. भद्रवाह वर्ग(भद्रवाही, भळेसी, पाडरी)।

यहां पर जिला कांगड़ा ((कांगड़ा, हमीरपुर और ऊना) तथा कहलूरी (बिलासपुरी) का उल्लेख नहीं है। 'भारत का भाषा सर्वेक्षण, भाग 9-पंजाबी' में ग्रियर्सन ने डोगरी को पंजाबी की बोली माना है तथा कांगड़ी और भटेआली का उल्लेख डोगरी की उपबोलियों के रूप में किया गया है। भटेआली के सम्बन्ध में लिखा है कि चम्बा रियासत के पश्चिम में जम्मू की ओर भटेआली बोली

जाती है। यह डोगरी का एक भेद है, किन्तु कांगड़ी की तरह एक मिश्रित प्रकार की भाषा है। कांगड़ी के विषय में लिखा है कि यह बोली अत्यन्त महत्त्वपूर्ण बातों में डोगरी के समान है। साथ ही कांगड़ी की पाण्डुलिपि भी मुद्रित की गयी है जिसके सम्बन्ध में पृष्ठ 190 पर स्पष्ट उल्लेख है कि यह पाण्डुलिपि कांगड़ा के निवासी द्वारा नहीं लिखी गयी।

'भारत का भाषा सर्वेक्षण' के इसी भाग में पृष्ठ 105 पर कहलूरी((बिलासपुरी) के बारे में उल्लेख है कि कहलूर होशियारपुर जिले के तुरन्त पूर्व में पड़ता है। उस जिले के संलग्न पहाड़ी भाग में एक बोली बोली जाती है जिसका स्थानीय नाम मात्र पहाड़ी है। यह कहलूरी ही है। कहलूरी को अब तक पश्चिम पहाड़ी का एक रूप कहा जाता रहा है किन्तु नमूने का परीक्षण करने से लगता है कि ऐसा नहीं है। यह केवल अनगढ़ पंजाबी ही है, होशियारपुर में बोली जाने वाली भाषा के समान।

इन उल्लेखों से स्पष्ट है कि आधुनिक हिमाचल में भारोपीय परिवार की बोलियां ग्रियर्सन के सर्वेक्षण के अनुसार अलग-अलग श्रेणियों में विभक्त प्राप्त होती हैं। कुछ को पहाड़ी की पश्चिमी शाखा में परिगणित किया है और कुछ को पंजाबी की बोलियों के रूप में रखा है। ग्रियर्सन का वर्गीकरण कितना सही है और कितने ठोस प्रमाणों पर आधारित है, इस विषय में पहले तो इतना ही कहा जा सकता है कि यदि डोगरी पंजाबी की बोली है तो कांगड़ी का उल्लेख डोगरी की बोली के रूप में किस आधार पर किया गया। उसे स्वतन्त्र रूप से पंजाबी की बोली स्वीकार करने में ग्रियर्सन को कहां कठिनाई आयी होगी। दोनों पंजाबी से समान रूप से दूर हैं और कांगड़ी के विकास को डोगरी के माध्यम से प्रदर्शित करना इस सर्वेक्षण की एक बहुत बड़ी भूल है। व्यापक और वास्तविक विवरणों की कमी के कारण ही ऐसी स्थिति हुई जिससे हर बोली और भाषा को न तो उचित स्थान प्राप्त हुआ और न ही सही मूल्यांकन ही सामने आ सका। इतना होने पर भी डॉ. ग्रियर्सन का प्रयास स्तुत्य है और व्यापक स्तर पर भाषा सर्वेक्षण में अपनी तरह का प्रथम प्रयास होने से इस तरह की कमी का रह जाना मायने नहीं रखता।

इस बात को और अधिक स्पष्ट रूप से जानने के लिए डॉ. मौलूराम ठाकुर के मत को देखना अत्यावश्यक है। उनके द्वारा स्थिति को और भी स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है। 'पहाड़ी रचनासार' नामक पुस्तक की भूमिका में ये स्पष्ट करते हैं- 'कांगड़ी की अपेक्षा चम्बयाली न केवल डोगरी के अधिक निकट है, अपितु जब ग्रियर्सन कांगड़ी को डोगरी की बोली मान चुके होते तो पंजाबी से अधिक घिरी हुई भी होती। अतः कांगड़ा की अपेक्षा चम्बयाली को डोगरी-पंजाबी की बोली होना चाहिए था। परन्तु डॉ. ग्रियर्सन ने चम्बयाली को डोगरी की बोली नहीं कहा क्योंकि चम्बयाली का उनके पास न कोई ठीक अनुवाद उपलब्ध था, बल्कि साथ ही डॉ. ग्राह्म बैली की पर्याप्त सामग्री भी अध्ययनार्थ प्राप्त थी। स्पष्ट है यदि डॉ. ग्रियर्सन को कांगड़ी का वास्तविक नमूना मिलता तो वे संदिग्ध निर्णय देने के लिए मजबूर न होते। कांगड़ी बोली डोगरी की अपेक्षा चम्बयाली और मंडियाली के समीप है गठन के आधार पर ही नहीं अपितु भौगोलिक स्थिति के बिना पर भी कांगड़ी बोली चम्बयाली और मंडियाली के समीप है और उपर्युक्त दोनों बोलियां डॉ. ग्रियर्सन के अनुसार और वस्तुस्थिति के मुताबिक पहाड़ी की विशुद्ध बोलियां हैं।'

अतः पहाड़ी के नौ वर्ग डॉ. ग्रियर्सन के अनुसार प्रस्तुत किए गए और डॉ. ग्रियर्सन तथा आधुनिक समय में पहाड़ी भाषा की बोलियों पर किए गए शोध-कार्यों तथा उनके प्रयोग क्षेत्रों के आधार पर डॉ. मौलूराम ठाकुर ने भी 'पहाड़ी रचनासार' की भूमिका में पहाड़ी भाषा को नौ वर्गों में ही विभाजित किया परन्तु उनके विभाजन में कांगड़ी और कहलूरी भी सम्मिलित हैं। इनके अनुसार ये वर्ग इस प्रकार हैं- 1. जौनसारी, 2. सिरमौरी, 3. बघाटी, 4. महासूई, 5. कुलुई, 6. मंडियाली बिलासपुरी, 7. कांगड़ी, 8. चम्बयाली (चमेयाळी, गादी, चुराही, (पंगवाळी), 9. भद्रवाही(भद्रवाही, भळेसी, पाडरी)।

इन समस्त वर्गों की अपनी-अपनी विषेषताएं हैं और ये विषेषताएं ही इन्हें एक दूसरे से अलग करती हैं। इस सन्दर्भ में भौगोलिक संरचना भी एक मुख्य आधार है। डॉ. मौलूराम ठाकुर इस आधार को विस्तार के साथ प्रस्तुत करते हुए पहाड़ी की स्पष्टतः दो उपशाखाएं स्वीकारते हैं। हिमाचल प्रदेश के मानचित्र पर जरा ध्यान दिया जाए तो इसकी स्थलाकृति के मुख्यतः दो भाग हैं - एक भाग मध्य हिमालय में पड़ता है जिस में पूर्व-दक्षिण से उत्तर-पश्चिम की ओर क्रमशः किन्नौर जिला, लाहुल-स्पीति जिला के पूर्ण क्षेत्र और चम्बा जिला का चम्बा-लाहुल इलाका शामिल है। भाषाशास्त्रियों ने इस क्षेत्र की भाषा को तिब्बती-बर्मी नाम दिया है और यह भारतीय आर्यभाषा परिवार में नहीं आती। इस क्षेत्र से आगे बाह्य हिमालय पड़ता है। बाह्य हिमालय क्षेत्र के भी ठीक इसी

पहाड़ी के नौ वर्ग डॉ. ग्रियर्सन के अनुसार प्रस्तुत किए गए और डॉ. ग्रियर्सन तथा आधुनिक समय में पहाड़ी भाषा की बोलियों पर किए गए शोध -कार्यों तथा उनके प्रयोग क्षेत्रों के आधार पर डॉ. मौलूराम ठाकुर ने भी 'पहाड़ी रचनासार' की भूमिका में पहाड़ी भाषा को नौ वर्गों में ही विभाजित किया परन्तु उनके विभाजन में कांगड़ी और कहलूरी भी सम्मिलित हैं। इनके अनुसार ये वर्ग इस प्रकार हैं- 1. जौनसारी, 2. सिरमौरी, 3. बघाटी, 4. महासूई, 5. कुलुई, 6. मंडियाली बिलासपुरी, 7. कांगड़ी, 8. चम्बयाली (चमेयाळी, गादी, चुराही, (पंगवाळी), 9. भद्रवाही) भद्रवाही, भळेसी, पाडरी)।

दिशा में अर्थात् पूर्व-दक्षिण से उत्तर-पश्चिम की ओर दो भूभाग हैं भीतरी भाग और बाहरी भाग। भीतरी भाग में हिमाचल के सिरमौर-सोलन-शिमला-कुल्लू जिले, कांगड़ा का उत्तरी पर्वतीय गादी भाषी क्षेत्र तथा चम्बा का चुराही और पंगवाली क्षेत्र पड़ते हैं। शेष समस्त क्षेत्र बाहरी भाग में पड़ता है। भीतरी भाग पहाड़ी भाषा की भीतरी उपशाखा का क्षेत्र है जिसमें भाषायी दृष्टि से देहरादून का जौनसारी बाबर और जम्मू-कश्मीर का भद्रवाही क्षेत्र भी पड़ता है। बाहरी उपशाखा में मुख्यतः बिलासपुर, मंडी, हमीरपुर, ऊना, कांगड़ा और चम्बा जिले पड़ते हैं। मूलरूप से दोनों उपशाखाओं में वे सभी गुण विद्यमान हैं जो पहाड़ी की मुख्य विशेषताएं हैं तथा जिनके आधार पर पहाड़ी भाषा भाषावैज्ञानिक दृष्टि से पड़ोसी भाषाओं से भिन्न और स्वतंत्र है।

स्वतंत्रता के उपरान्त भौगोलिकता के आधार पर कुछ क्षेत्र इकट्ठे होते-होते राजनीतिक रूप से हिमाचल के नाम से संगठित हुए और धीरे-धीरे डॉ. ग्रियर्सन द्वारा प्रदर्शित पश्चिमी पहाड़ी और पंजाबी के अन्तर्गत प्रदर्शित कांगड़ी, कहलूरी तथा चंबयाली आदि को पहाड़ी नाम के साथ एक सांचे में प्रदर्शित करने के प्रयत्न जोरों पर हो गए। डॉ. मौलूराम ठाकुर के अनुसार पश्चिमी पहाड़ी के ही बाह्य हिमालय क्षेत्र के श्रेणी-विभाजन के उपरान्त भीतरी उपशाखा और बाहरी उपशाखा नाम से दो भाग हैं। विगत कुछ वर्षों से पहाड़ी भाषा को संविधान की आठवीं अनुसूची में शामिल करने हेतु निरन्तर प्रयास किए जा रहे हैं। इस कार्य में न केवल साहित्य-संस्कृति से जुड़ा बुद्धिजीवीवर्ग प्रयासरत है अपितु प्रशासनिक और राजनीतिक भागीदारी के साथ-साथ हिमाचल का जनसमुदाय भी अपनी भाषायी पहचान को बनाए रखने हेतु प्रयासरत है।

शब्दकोश के सम्बन्ध में हिमाचल कला संस्कृति एवं भाषा अकादमी द्वारा सन् 1989 में एक प्रयास किया गया था जिसके अन्तर्गत 'पहाड़ी हिन्दी शब्दकोश' का निर्माण किया गया उसमें भारतीय आर्यभाषा परिवार की बोलियों के शब्दों को एकत्रित किया गया और उन शब्दों के साथ उन जिलों के नाम भी दिए गए जिनमें इन शब्दों का प्रयोग सामान्यतः किया जाता है। परिशिष्ट भाग में लाहुल-स्पीति तथा किन्नौर की बोलियों पर आधारित शब्दकोष को भी जोड़ा गया है परन्तु यह प्रयास इतना उच्चकोटि का नहीं है जितना कि पहाड़ी भाषा हेतु अपेक्षित है। एक तो इसमें बहुत से शब्दों का उल्लेख नहीं है और दूसरा शब्दों के साथ जिलों का उल्लेख होने से भाषा के प्रति समर्पण की कमी झलकती है। शब्दों के साथ जिलों का उल्लेख होने से बोलियों का महत्त्व झलकता है तथा उनके आपस में भेदों की ओर ध्यान जाता है न कि पहाड़ी भाषा की एकरूपता के प्रति। वर्तनीगत साम्यता होने पर भी ऐसे शब्दों की संख्या कम ही है जो भीतरी और बाहरी उपशाखा के जिलों में बिना किसी उच्चारण भेद के प्रयुक्त होते हों। और तो और एक उपशाखा की बोलियों में भी उच्चारण साम्य नहीं मिलता।

जहां तक व्याकरण का प्रश्न है, यह कार्य शब्दकोश की अपेक्षा अधिक जटिल है। व्याकरण में ध्वनिगत, शब्दगत, पदगत और वाक्यगत विविधताएं कदम-कदम पर सामने आती हैं। व्याकरणिक कोटियों को भी एकरूपता में प्रस्तुत नहीं किया जा सकता क्योंकि भीतरी उपशाखा और बाहरी उपशाखा में साम्य कहीं भी उस पराकाष्ठा तक नहीं दिखता जहां दोनों को एक भाषा के अन्तर्गत स्वीकार किया जाए। और तो और भीतरी उपशाखा और बाहरी उपशाखा की महासुवी और कांगड़ी जैसी बोलियों में काफी अन्तर दिखता है। इसके पीछे दो कारणों की संभावना पर विचार किया जा सकता है। एक तो यह कि ये बोलियां इतनी विकसित हो चुकी हैं कि अब अपने आप को भाषा के रूप में स्थापित करने का सामर्थ्य रखती हैं और दूसरा कि भीतरी उपशाखा की पहाड़ी मध्य पहाड़ी से निकट रही हो और बाहरी उपशाखा की बोलियों पर सीमावर्ती पंजाबी का प्रभाव हो। यही नहीं कहीं-कहीं तो एक उपशाखा की दो बोलियां भी एक दूसरे से काफी पृथक् प्रतीत होती हैं। अब कोई एक दूसरी बोली को समझने की हामी भरे तो बिना ज्ञान के उसे एक हद तक ही समझा जा सकता है और एक हद तक तो भोजपुरी, राजस्थानी भी समझ आ जाती है और डोगरी जैसी पड़ोसी भाषा तो हिमाचल की बोलियों से कहीं ज़्यादा अच्छी तरह समझी-बोली जा सकती है यदि वक्ता कांगड़ी या चंबयाळी का वास्तविक वक्ता या जानने वाला हो।

व्यावहारिक रूप में भले ही अनेक बोलियों को सामूहिक रूप से एक ही नाम से संबोधित किया जा रहा हो परन्तु स्वरूपगत विविधताएं संविधान की आठवीं अनुसूची में स्थान प्राप्त करने के मार्ग में बाधाएं हैं। राजनीतिक या अन्य दृष्टिकोणों से हटकर भाषा-वैज्ञानिक दृष्टिकोण से विचार करना ही पहाड़ी के हित में है। कुछ पहाड़ी बोलियां भाषा-वैज्ञानिक दृष्टिकोण से इतनी समृद्ध हैं कि उन्हें भाषा का दर्जा दिया ही जाना चाहिए परन्तु जिस रूप में चाहा जा रहा है उस रूप में किसी कारण से संभव हो जाने पर भी यह लाभप्रद नहीं है। इस प्रश्न को सुलझाने के लिए निष्पक्ष भाव से समस्त पहलुओं पर बात करना, गूढ़ विचार करते हुए हर तर्क को कसौटी पर कसना भी अनिवार्य है। कोई भी भाषा अपने स्वरूप के चलते वैज्ञानिक पद्धति पर आश्रित होने के कारण उस पर विचार एक विशुद्ध शास्त्रीय विषय है और इसे नितान्त भावुकता से जोड़कर देखना कदापि युक्तिसंगत नहीं।

भाषा का स्वरूप किसी कार्यशाला या विद्वद्‌गोष्ठी में निर्धारित नहीं किया जा सकता। अनर्थक नियमों में आबद्ध भाषा जीवित नहीं रह सकती। भाषा के व्यक्तिगत रूप के आधार पर तो भाषाएं अनन्त हैं। क्षेत्रीय बोलियां अपने प्रभाव के कारण भाषा के रूप में मान्यता प्राप्त करती हैं। कुछ बोलियां अपने आस-पड़ोस

की बोलियों को दबाकर अपने भाषायी अस्तित्व को प्रकट करती हैं। इनके परिणामस्वरूप कुछ बोलियां कालान्तर में अपने स्वरूप को या तो उस बोली में विलीन कर देती हैं या बोली के रूप में अपने अस्तित्व को बचाए रखने की सफलता के साथ स्वयं को भाषा के रूप में स्थापित करने हेतु प्रयत्नशील हो जाती हैं। इस प्रकार से मध्य पहाड़ी की कुमायुंनी तथा गढ़वाली की तरह ही पश्चिमी पहाड़ी की अनेक बोलियां भी बोली के स्थान से उठकर भाषा के रूप में स्थापित होने के निकट हैं। निजी तौर पर यदि ये बोलियां भाषा के मानकों को यदि पूरा कर लें तो इन्हें भाषा के रूप में स्वीकारने में किसी को भी किसी प्रकार की कोई हिचक नहीं होगी। किसी भी बोली के उत्कृष्ट साहित्य के साथ-साथ यदि अपना मौलिक व्याकरण तथा शब्दकोश हो तो उसे भाषा के रूप में स्वीकारने में कोई संकोच दिखायी नहीं देता।

अतः हिमाचल की बोलियों को मिलाकर एक मानक भाषा तैयार करना या हिमाचल के आर्यभाषी दो भौगोलिक वर्गों के आधार पर दो भाषाओं को विकसित करना या किसी एक या कुछ महत्त्वपूर्ण बोलियों को मानक भाषा का दर्जा देना यदि कहीं संभव है तो यह असंभव उससे भी अधिक है। दूसरे और तीसरे रूप में कहीं न कहीं एक दूसरे से बढ़ते क्रम में संभावनाएं नजर भी आती हैं परन्तु पहले रूप को साकार करना जटिल है। पहले रूप के लिए जो सबसे पहली आवश्यकता है वह है बोलियों का आपसी मिलन, एक-दूसरी में निस्वार्थ गुंफन। यह एक लम्बी प्रक्रिया है। परिणामस्वरूप कुछ खोना भी पड़ सकता है। जो इस स्वप्न को जल्दी से जल्दी साकार होता देखना चाहते है, ऐसा लगता नहीं कि उनके पास भावनात्मकता के अतिरिक्त कोई ठोस तर्क मौजूद है। इन बोलियों को मिलाकर एक मानक भाषा बनाना यदि इतना ही सरल होता तो शायद यह आज तक हो भी गया होता क्योंकि भाषा स्वतः अपना रूप ग्रहण करती है और भाषा का मानक स्वरूप होने के उपरान्त ही आठवीं अनुसूची में शामिल करने की मांग करना उचित है।

कहा जा सकता है कि पहाड़ी को राष्ट्रीय-स्तर की संस्थाएं एक स्थान प्रदान करवाती हुई पहाड़ी के कविता-कहानी संग्रहों को छापने में उत्सुकता दिखा रही हैं। पहाड़ी में योगदान हेतु राष्ट्रीय-स्तर पर पुरस्कृत भी किया जाने लगा है। ऐसी स्थिति में पहाड़ी के मानक रूप पर किसी प्रकार के संदेह का प्रश्न ही नहीं उठता। वास्तव में यह स्थिति और भी भयावह है और पहाड़ी के विकास को और भी जटिल बना देगी क्योंकि सामान्य रूप से तो एक भाषा के साहित्य को दूसरी भाषा का वास्तविक वक्ता तभी पढ़ता है जब वह उसको जानता हो। दूसरी स्थिति में उस भाषा से लगाव होने पर ही व्यक्ति उसे जानने की इच्छा रखता है। तीसरी स्थिति में महत्त्वपूर्ण लेखन भी भाषा को सीखने के प्रति ललक पैदा करने वाला होता है। कुछ हद तक अनुवाद के निमित्त भी दूसरी भाषा का अध्ययन किया जाता है ताकि अच्छी रचनाओं को अनूदित करके अन्य भाषाभाषियों तक उन्हें पहुंचाया जा सके। बिना किसी प्रकार के रोजगार की संभावना से मात्र अनुवाद के निमित्त कोई नई भाषा सीखे यह तो उस भाषा की रचनाओं की श्रेष्ठता पर ही निर्भर करता है। हां, भाषाषास्त्रीय अध्ययन हेतु किसी भी भाषा या बोली को लिया जा सकता है। ऐसी स्थिति में जब पहाड़ी को लिया जाएगा तब एक ही भाषा के अन्तर्गत अनेक रूप सामने आएंगे। एक ही पद के प्रयोग में क्षेत्रीय विविधता पाए जाने पर या क्रियागत वैविध्य के कारण, किसी भी मानक स्वरूप के उपस्थित न हो पाने की स्थिति में भाषा का किस तरह का अध्ययन सामने आएगा। कालक्रम से भाषा के स्वरूप में परिवर्तन होना स्वाभाविक है। इसे भाषा का गुण ही कहा जाता है क्योंकि भाषा सतत् प्रवाह से युक्त होती है। इसके विपरीत एक ही समय में भाषा के एक ही अर्थ के लिए प्रयुक्त होने वाले एक ही पद के अलग-अलग उच्चरित और लिखित रूपों का होना भी भाषा की विशेषता ही होती है परन्तु यदि यह स्थिति अनेक स्थलों पर 'एक ही अर्थ के लिए प्रयुक्त होने वाले एक ही पद के अलग- अलग उच्चारण के लिए' दोइरायी जाए तब इसमें एक भाषा के नहीं अपितु अनेक भाषाओं के लक्षण कहे जाएंगे। पदगत विविधताओं के चलते अध्येता द्वारा उसे एक भाषा कह देना इतना आसान नहीं होगा। ऐसी स्थिति में भाषा का जो रूप सामने आएगा वह साहित्य, लेखक और सामान्य वक्ता में से किसी के लिए भी सम्मानजनक नहीं होगा। भाषा सीखने वालों के लिए भी यह जटिल होगा। आने वाले समय में भी यह हिमाचल के भाषार्थ आन्दोलन को तहस-नहस कर देगा।

हिमाचली शब्द के फलस्वरूप इस बात की आहट स्पष्ट सुनी जा सकती है कि हम हिमाचली के वास्तविक वक्ता नहीं हैं अतः हिमाचल की प्रशासनिक इकाई से हमें किसी प्रकार का कोई संबन्ध मान्य नहीं। हिमाचल को हिमाचल रखने के लिहाज से भी यह आवश्यक है कि पहाड़ी को पहाड़ी रहने दिया जाए। लाहुल-स्पीति और किन्नौर के बिना न केवल हिमाचल अधूरा है अपितु दूर-दराज के इन विशुद्ध हिमालयी क्षेत्रों की सांस्कृतिक, सामाजिक और धार्मिक विरासत के बिना हिमाचल के अस्तित्व को ही स्वीकारा नहीं जा सकता। वैसे भी भाषा के आधार पर प्रान्त की बात तो काफी हद तक स्वतंत्रता के बाद अनेक भारतीय प्रान्तों के गठन को सामने रखकर स्वीकारी जा सकती है परन्तु प्रान्त को आधार मान कर भाषा का नामकरण हो, यह उसी स्थिति में संभव है जब भाषा का एक मानक रूप हो और वह सबको स्वीकार्य हो।

सबको एक साथ लेकर चलना है तो पहाड़ी को पहाड़ी ही रहने दिया जाए। ऐसी स्थिति में किसी भी कीमत पर तथाकथित हिमाचली शब्द का त्याग करना ही होगा जिसका वैसे भी पहाड़ी शब्द के आगे कोई महत्त्व नहीं। पहाड़ी के यदि दो मानकरूप भी

लघु कथा

सहानुभूति

● हरिंदर सिंह गोगना

वह बूढ़ी औरत आफिस में दाखिल हुई और दोनों हाथ जोड़ कर विनम्रता से बोली, "मेरा इकलौता बेटा अस्पताल में है। डॉक्टर उसका इलाज कर रहे हैं। कुछ पैसे जमा हो गए हैं। अभी भी दो हजार कम पड़ रहा है। अगर मेरी मदद कर देते तो...।" कहते ही उसने आशा भरी नजरों से आगे बढ़ते हुए हर एक कर्मचारी को डॉक्टर द्वारा लिखी दवाइयों की पर्ची दिखाई। सबने परस्पर देखा और फिर काम में लग गए। एक महिला कर्मचारी बुदबुदाई, "आजकल लोगों ने यह नया धंधा बना लिया।"



"सब धोखा है... बूढ़िया झूठ बोल रही है।" बड़े बाबू चश्मे से झांक कर सहयोगी के कान में बोले।

"भिखारन तो गलती नहीं...।" एक और बोला। तभी कमरे में बॉस आए और बोले, "सुनो यह औरत गरीब और लाचार है। इसकी मदद करो भाई।" सबने फिर परस्पर देखा और अपनी-अपनी जेब से पैसे निकाल कर बूढ़ी औरत को देने लगे।

"माई घबराओ नहीं आपका बेटा जल्दी ठीक हो जाएगा...।"

"यहां बैठो मां... मैं सबसे पैसे एकत्र कर आपको देता हूं।"

"अरे भाई गर्मी है... माता जी को पानी पिलाओ।"

अब सिर पर बड़े बॉस को खुश करने की कोशिश में सभी कर्मचारी बूढ़ी औरत से सहानुभूति दिखा रहे थे।

परीक्षा शाखा, पंजाबी विश्वविद्यालय, पटियाला, पंजाब,
मो. 0 98723 25960

सामने आते हैं तो पहाड़ी के साथ शब्द विशेष लगाकर दोनों को व्यक्त किया जा सकता है। पहाड़ी को पहाड़ी ही रहने दिया जाए, हिमाचली पहाड़ी बनाकर उसे तथाकथित जो संकीर्ण रूप देने की कोशिश की जा रही है उससे तो अपने पैरों पर कुल्हाड़ी मारने वाली बात ही हो रही है। वैसे भी भाषा से प्रान्त बनते हैं प्रान्तों के नामों पर भाषा का निर्माण या नामकरण नहीं होता। कहीं एक-आध हो तो वह आधार नहीं होता। भाषा चोंचलेपूर्ण नामों की मोहताज नहीं होती बल्कि उसकी पहचान उसकी विशिष्टताओं से होती है। उत्कृष्ट साहित्य लिखा जाना चाहिए न कि नाम का अड़ंगा लगाना चाहिए। पहाड़ी को दो भाषाओं के रूप में देखने की स्थिति में पहाड़ी के साथ ही उनके नामों के लिए कुछ जोड़ा जा सकता है। उत्कृष्ट साहित्य ही शैक्षणिक वातावरण के लिए भी सबसे महत्त्वपूर्ण आवश्यकता है।

रही बात भाषा की आवश्यकता की तो भाषा कोई थोपी जाने वाली चीज नहीं है यह तो एक सतत् प्रवाह है और इससे स्वयं को अलग करने की सोचना अपनी ही जड़ों को काटना है। तीज-त्योहार, मेले-उत्सव, विवाह-अन्त्येष्टि आदि समस्त संस्कारों में सुख-दुःख, उत्थान-पतन में कहीं पहाड़ी नहीं है। शताब्दियों से जीवन के ताप को इसके सिवा किसने वहन किया। साहित्य, संस्कृति और कला से विहीन जीवन जीवन नहीं। अतीत की जड़ें पुरातत्त्व के बाद भाषा में ही तलाशी जाती हैं और हर सभ्य और सम्पन्न समाज में भाषा के प्रति ललक का होना एक अनिवार्य विशेषता है। आधुनिक सुख-सुविधाओं से तथा आर्थिक सम्पन्नता से प्रेम-भाईचारा नहीं बढ़ता परन्तु भाषा से बढ़ता है। भाषा का मतलब जन-सामान्य से ही होता है न कि सरकारी कार्यालयों से। सरकारी कार्यालयों में तो राजभाषा का दर्जा प्राप्त हिन्दी ही कहां पहुंची है और इतने वर्षों में पहाड़ी को ही कहां पहुंचाया गया है, यह कोई बताने की बात नहीं है। जहां तक राष्ट्रीय स्तर पर महत्त्व ही बात है, वह पहाड़ी का हक है और न केवल पहाड़ी का अपितु उन बोलियों का भी जो दूर-दराज की क्षेत्रीय संस्कृति, साहित्य को निरन्तर पोस रही हैं। इसके लिए कुछ तो है जो मन से करना अभी बाकी है।

गांव लंघू, डा. गांधीग्राम, वाया बैजनाथ, जिला कांगड़ा,
हि.प्र.-176125, मो. 0 94181 93024

सहायक पुस्तकें :

1. भारत का भाषा-सर्वेक्षण (खण्ड-1, भाग-1) उ. प्र. हिन्दी संस्थान (हिन्दी समिति प्रभाग) लखनऊ (तृ. सं.1979)
2. भारत का भाषा सर्वेक्षण (भाग 9-पंजाबी) हिन्दी समिति, सूचना विभाग, उ. प्र., लखनऊ (प्र. सं. 1970)
3. पहाड़ी रचनासार, हिमाचल कला संस्कृति और भाषा अकादमी, शिमला (प्र. सं. 1982)
4. भाषाविज्ञान एवं भाषाशास्त्र (डॉ. कपिलदेव द्विवेदी) विश्वविद्यालय प्रकाशन, चौक, वाराणसी (पांचवां सं. 1998)
5. हिमाचल-मित्र, अंकः 5-13

आलेख

मीडिया के युग में पुस्तकों की प्रासंगिकता

• श्रीनिवास जोशी

हम सब जी रहे हैं - एक अभूतपूर्व तरीक़े से बदलते हुए और तीव्र वृद्धि के युग में। इलैक्ट्रॉनिक मीडिया के युग में इस हो रही वृद्धि से उत्पन्न चुनौतियां 'वेब 2.0' और 'सामाजिक मीडिया' के लिए अद्वितीय नहीं हैं। यह मीडिया हर नई चुनौती का सामना नई तकनीक और नई सोच से कर रहा है। एक मीडिया गुरु हैं - टिम ओ'रिले - उन्होंने सन् 2004 में 'वेब 2.0' अभिव्यक्ति को जनप्रिय किया था। 'वेब 2.0' में विस्तृत तकनीक, जैसे ऑटोमैटिक टेक्स्ट, विकीज़, ब्लॉग्ज़, गूगल, आईपॉड्स, लिंक्डइन, फ़ेसबुक, ट्विटर, एसएमएस, मोबाइल फ़ोटो आदि शामिल हैं। सामाजिक मीडिया 'वेब 2.0' का ही अंश है। मानव संसाधन से जुड़े लोगों का कथन है कि इस मीडिया के तकनीकी होने के बावजूद इसका असर मानवोचित सुलभता है। जैसे जैसे हम इसे अपनाते हैं; वैसे वैसे हमारी व्यक्तिगत, उपभोक्तावादी या व्यवसायिक ज़िन्दगी में सार्थक बदलाव साफ़ नज़र आता है। क्या मीडिया आम पुस्तकों के संसार को हिला रहा है? आइए, हम दोनों पक्षों के जमा और मनफ़ी को तोलें और अपने अपने निर्णय पर पहुंचें।

ग्राहम और क्रिंगसले ने अपने सर्वेक्षण में बताया है कि आज का पश्चिमी युवा औसतन साढ़े तीन घंटे टीवी और वीडियो देखने में बिताता है, डेढ़ घंटे वह संगीत सुनता है, एक घंटा कम्प्यूटर में, पौन घंटा वह वीडियो गेम्ज़ खेलता है, एक चौथाई घंटा वह फ़िल्म देखने में व्यस्त रहता है और केवल 43 मिनट ही पढ़ने में व्यतीत करता है। तकनीक उस पर इस क़दर हावी हो गई है कि पुस्तक पढ़ने का उसके पास बहुत थोड़ा समय रह गया है। भारतीय शहरी युवा अपना अधिकतर समय टीवी देखने और सोशल मीडिया में व्यतीत कर देता है और सिलेबस की पुस्तकों के अतिरिक्त साईंस फ़िक्शन या स्वप्नचित्र जैसी पुस्तकें पढ़ने में लगाता है। ग्रामीण युवा की पहुंच अभी सोशल मीडिया के साधनों पर कम है पर टीवी देखने का शौक उसके भी सिर पर चढ़ कर बोलता है हालांकि हमारे ऋषि-मुनि पुस्तकों के माध्यम से ''असतो मा सद्गमय/ तमसो मा ज्योर्तिगमय/ मृत्योर्मा अमृतगमय'' को चरितार्थ करने की बात करते आए हैं। मानो पुस्तक कह रही हो, ''हे मानव! मेरी शरण में आ और चल मेरे साथ असत्य से सत्य की ओर, अंधेरे से प्रकाश की ओर, मृत्यु से अमरत्व की ओर। मैं ही राह दिखाने वाली हूं।''

महान युनानी दार्शनिक सिसरो ने कहा था कि वह कमरा जिसमें पुस्तकें न हों उस शरीर की भांति होता है जिसमें आत्मा न हो। मैं समझता हूं कि सोशल मीडिया समय को अनुत्पादक ढंग से प्रयोग करने जैसा है क्योंकि यह मनोरंजन तो करता है पर गहन विचारों के लिए कोई मानसिक सामग्री प्रदान नहीं करता है। इसके प्रयोग के बजाय पुस्तकें पढ़ कर कहीं अधिक ज्ञान अर्जित होता है। इसके इस्तेमाल में व्यक्ति संकेताक्षरों की एक नई भाषा का आविष्कार कर लेता है जिसमें स्पैलिंग्स आदि का कोई ध्यान नहीं होता, इसलिए 'भाषा पर अधिकार' को गहरी चोट पहुंचती है और लिखते समय ग़लतियां होती हैं। वेबसाइट परिवर्तनशील है - निरन्तर बदलती रहती है जिससे व्यक्ति की एकाग्रता-अवधि घटती चली जाती है। इस कारण उसकी ध्यान केन्द्रित करने की क्षमता कम हो जाती है। दूसरी ओर पुस्तक पढ़ने से उसकी समझ और सोच, दोनों बढ़ती हैं। यही कारण हैं कि 85 प्रतिशत भारतीय अभिभावक आज चाह रहे हैं कि उनके प्रतिपाल्य अधिक से अधिक पुस्तकें पढ़ें। अनेक घरों में माता-पिता ने अपने बच्चों के लिए सोशल मीडिया प्रयोग करने की एक समय-सीमा तय कर दी है।

एक बात माननी होगी। जिस घर में मां-बाप या कोई अभिभावक पढ़ता है; जहां पुस्तक पढ़ना उनकी आदत बन चुकी है, वहां बच्चा स्वयं पढ़ने लगता है। अनेक सर्वेक्षण इस बात की गवाही देते हैं। स्कॉलिस्टिक पब्लिशिंग हाऊस तथा यू-गव के सर्वेक्षण से भी यही तथ्य उभर कर सामने आए हैं। इस सर्वेक्षण ने कुछ महत्पपूर्ण जानकारी भारत भर के 6 से 17 वर्ष तक के बच्चों के बारे में दी हैं। सोशल मीडिया का प्रयोग करते हुए भी 32 प्रतिशत बच्चे साल भर में 24 पुस्तकें सिलेबस में नियत पुस्तकों के अतिरिक्त पढ़ते हैं। 50 प्रतिशत विद्यार्थी अवकाश वाले दिनों को छोड़कर बाकी दिन अपने कोर्स की पुस्तकें पढ़ते हैं। 70 प्रतिशत बच्चों ने स्वीकार किया कि उन्हें वे पुस्तकें अच्छी लगतीं हैं जो उनमें गुदगुदी पैदा कर दें या उन्हें हंसाएं। हर बच्चे ने कहा

कि वह उन पुस्तकों को पढ़ना चाहेगा जिन्हें वह स्वयं चुने। इसलिए उस उम्र के पाठक पर पुस्तक थोपना सही न होगा। बच्चा स्वयं सोशल मीडिया में अधिक समय न लगा कर पुस्तक पढ़ेगा और अपने देश का स्वस्थ नागरिक बनेगा। अमरीका में बुक बड़ी का चलन है। एक स्कूल के बच्चे को एक बुक बड़ी बनाना होता है जो उससे दो क्लास आगे हो। बुक बड़ी अपने स्कूल की लायब्रेरी से किताबें लेता है, उन्हें पढ़ता है और अपने से दो कक्षा जूनियर बुक बड़ी को पढ़ी गई पुस्तकों में से कुछ पुस्तकों को पढ़ने की सिफ़ारिश करता है। पढ़ लेने के उपरान्त दोनों अपनी अपनी बुद्धि अनुसार उन पुस्तकों पर चर्चा करते हैं। एक स्कूल के बाहर जो नारा मैंने देखा था और जिसने मुझे प्रभावित किया था, वह था : Today a Reader :Tomorrow a Leader.

यह सब तथ्य द्योतक हैं इस बात के कि सोशल मीडिया का चक्रवात पुस्तक को डिगाने में असफल रहा है। सोशल मीडिया कभी कभी पढ़ने की आदत को बढ़ावा भी देता है। किसी पुस्तक की समीक्षा या वर्णन जब आप सोशल मीडिया के किसी अवयव पर देखते या पढ़ते हैं तब आप उस पुस्तक को पढ़ने का मन बना लेते हैं। जब इलैक्ट्रॉनिक मीडिया के द्वारा भीष्म साहनी के 'तमस' का प्रसारण हुआ तब जाने कितने लोगों ने 'तमस' पुस्तक ख़रीद कर पढ़ी थी। अंग्रेज़ी के दो उपन्यास फ़िफटी शेड्स ऑव ग्रे (Fifty shades of Grey) vkSj dDdwt+ कॉलिंग (Cuckoo's Calling) पहले सोशल मीडिया में वाइरल हुए थे। लोगों ने इन्हें इतना पढ़ा कि यह पुस्तकें उत्तम बिक्री वाली बनीं। मैंने स्वयं विन्सटन ग्रूम का उपन्यास Forrest Gump, Tom Hank द्वारा अभीनीत इसी नाम की फ़िल्म देखने के बाद पढ़ा था। भारत के लिए सन् 2014 ने एक चौंकाने वाला समाचार दिया था कि ई-रीडर के आने के बाद भारत में पुस्तकों की बिक्री में 3.3 का इज़ाफ़ा हुआ है और ऐसे ही एक सर्वेक्षण के अनुसार एक औसत भारतीय संसार के अन्य देशों के नागरिकों की तुलना में सबसे अधिक पढ़ता है। वह एक सप्ताह में 10 घंटे पढ़ता है जबकि ब्रिटेन का नागरिक केवल पांच घंटे ही पढ़ता है। हम पढ़ने के मामले में चीन और अमरीका से भी आगे हैं। क्या कहेंगे आप? सोशल मीडिया क्या कभी पुस्तक पठन-पाठन पर लगाम लगा सकेगा?

कुछ भी हो यह आवश्यक है कि हमें इस बात के लिए सचेत रहना होगा कि सोशल मीडिया कहीं पुस्तक पढ़ने की आदत पर हावी न हो जाए। फ़ैयाज़ अहमद लोन जो कश्मीर विश्वविद्यालय में प्रोफ़ेसर हैं पुस्तक पढ़ने के गुणों का बखान करते हुए कहते हैं कि मानव के जन्म से मृत्यु तक उसके व्यक्तित्व विकास के लिए निरपेक्ष पठन बहुत आवश्यक है। यह नज़रों में एक नई रोशनी और दिमाग़ में ताज़गी भर देता है। इससे एक गूंगा संचारक बन जाता है और लंगड़ा पहाड़ पार कर सकता है। लेकिन आज के इस बहुमीडिया युग में इन्टरनेट और सोशल मीडिया पढ़ने की इस आदत को पीछे धकेल रहे हैं। तकनीक के यह नए उपकरण बच्चों को, युवाओं को प्रलोभन दे रहे हैं और वे इन 'वक्त-भक्षण यन्त्रों' को अपना रहे हैं। हेस्टिंग्स और हेनरी की एक रिपोर्ट के अनुसार आज 85 प्रतिशत बच्चे पढ़ने के बजाए टेलिविजन देखना पसन्द करते हैं। कैनेडियन न्यूज़पेपर एसोसिएशन के अनुसार आज का युवा 9 घंटे प्रतिदिन मीडिया के उपयोग में लगाता है और केवल 2.8 घंटे पढ़ने में जिसमें से 1.3 घंटे में वह समाचार पत्र तथा अन्य पत्रिका पढ़ता है।

पर सनद रहे, आज के युग में तकनीक और प्रौद्योगिकी इतनी तेज़ी से बदल रही है कि ज्ञान एक साल में ही पहले से दुगना हो जाता है। परिवर्तन आज का नियम है। हमारे जितने भी यंत्र हैं, युद्ध कौशल के तरीक़े हैं, समाज के प्रबन्धन के प्रश्न हैं, वह सब आज वही नहीं रह गए हैं जो कल थे। सूचना, शिक्षा और संचार का माध्यम आज सोशल मीडिया है जो घर घर का द्वार खटखटा रहा है। आज के ज़माने में जब मानव के पास जानने को बहुत कुछ है पर समय का अभाव है तब पुस्तक नहीं अपितु सोशल मीडिया काम आता है।

एक सर्वेक्षण से पता चलता है कि पिछले एक साल में सोशल मीडिया का प्रयोग करने वालों की संख्या में बहुत अधिक वृद्धि हुई है। हमारे प्रधानमन्त्री भी इस का प्रयोग करते हैं तथा सदा इसके बढ़ावे की बात करते हैं। पर यह भी तो सत्य है कि किसी नई विधा के आ जाने से कोई पुरानी विधा समाप्त नहीं हो जाती। क्या कैमरा के आविष्कार से चित्रकला समाप्त हो गई? क्या टीवी के प्रचलन से फ़िल्मों का बनना और देखना ख़त्म हो गया? नहीं न? सन् 2013 में लगभग साढ़े चार लाख पुस्तकें चीन में छपीं जबकि अमरीका में तीन लाख से ऊपर; ब्रिटेन में लगभग दो लाख; रूस में एक लाख से अधिक और भारत में नब्बे हज़ार। भारत पुस्तक छापने के मामले में विश्व में पांचवे स्थान पर है। इन 90000 पुस्तकों में से 25 प्रतिशत हिन्दी में छपीं, 20 प्रतिशत अंग्रेज़ी में और बाकी अन्य भाषाओं में। पर पुस्तक बिक्री में हिन्दी की पुस्तकें पिछड़ गईं - केवल 35 प्रतिशत हिन्दी पुस्तकें अंग्रेज़ी की 55 प्रतिशत की तुलना में बिकीं। मेरा विषय भाषा से नहीं है, पुस्तकों से है अतः मैं दृष्टि दे रहा हूं, पुस्तकों की

कुछ भी हो यह आवश्यक है कि हमें इस बात के लिए सचेत रहना होगा कि सोशल मीडिया कहीं पुस्तक पढ़ने की आदत पर हावी न हो जाए। फ़ैयाज़ अहमद लोन जो कश्मीर विश्वविद्यालय में प्रोफेसर हैं पुस्तक पढ़ने के गुणों का बखान करते हुए कहते हैं कि मानव के जन्म से मृत्यु तक उसके व्यक्तित्व विकास के लिए निरपेक्ष पठन बहुत आवश्यक है। यह नज़रों में एक नई रोशनी और दिमाग़ में ताज़गी भर देता है।

बिक्री पर। अमरीका जैसे मुल्क में जहां सोशल मीडिया छाया हुआ है तीन लाख से अधिक पुस्तकें छपीं जो इस बात का द्योतक है कि कितना ही बड़ा चक्रवात सोशल मीडिया का क्यों न हो, पुस्तकों का छपना और पढ़ना जारी रहेगा।

कई लोग कहते हैं कि हाथ में ले कर पढ़ने वाली पुस्तकों का वजूद नहीं रहा अब। अब लोगों का ध्यान ई-पुस्तक की ओर अधिक है। हवाई जहाज़ या रेल यात्रा करते समय लोग ई-पुस्तक को पढ़ते दिखाई देते हैं। पीटर जेम्स ने 1993 में जब 'होस्ट' नामक उपन्यास की दो फ्लोपीज़ निकालीं थीं तब लोगों ने उसे नकारते हुए कहा था कि यह प्रयास कभी सफल नहीं होगा। समाचार पत्रों ने तब उसे 'एक उपन्यास की हत्या' शीर्षक दिया था। जेम्स ने तब भविष्यवाणी की थी कि आने वाला युग ई-पुस्तक का युग होगा। कुछ पाठक तो यहां तक कहने लगे हैं कि दो दशक बाद आज विश्व इस बात को मान रहा है कि हाथों में लेकर पढ़ने वाली पुस्तकें अब बीता सपना होने जा रही हैं।

इस बात में कोई दो राय नहीं हैं कि ई-पुस्तक का चलन बढ़ा है पर अभी भी हाथों में लेकर पढ़ी जाने वाली पुस्तकों की प्रतिशतता कहीं अधिक है। सन् 2015 के एक अध्ययन से पता चलता है कि यदि कुल पठन की प्रतिशतता 75 हो तो 28 प्रतिशत ई-पुस्तक और 10 प्रतिशत ऑडियो-पुस्तक होती हैं। भारत में कराए गए एक हाल के अध्ययन से पता चलता है कि औसत ई-पुस्तक पढ़ने वाला भारतीय पुस्तक बिक्री पर कोई प्रभाव नहीं डालता। एक अन्य अध्ययन के अनुसार दिल्ली को भारत में पुस्तक पठन-पाठन के लिए सर्वोपरि माना गया है और वहीं के एक प्रमुख प्रकाशक का कथन है कि केवल एक प्रतिशत बिक्री ई-पुस्तक से होती है।

फ्रांसिस बेकन, महान निबन्ध लेखक, कहते हैं कि कुछ पुस्तकें स्वाद चखने के लिए होतीं हैं कुछ निगल जाने के लिए होतीं हैं कुछ हज़्म करने के लिए होतीं हैं। अर्थात कुछ पुस्तकें मानव अपने आनन्द के लिए पढ़ता है - पढ़ो, चटख़ारे लो और भूल जाओ। कुछ पुस्तकें उसकी भाषा को सुधारतीं हैं, उसकी शैली को परिष्कृत करतीं हैं, उसे व्याकरण के भीतर रहना सिखातीं हैं, कुछ उसे जीवन में आगे बढ़ने की राह दिखातीं हैं- उसे दानव से मानव बनातीं हैं।

पर्यावरणविद 'गो ग्रीन विद बुक्स' नारा लगाते हैं। कहते हैं कि एक पुस्तक को छापने के लिए कई पेड़ों को काटा जाता है जिनसे काग़ज़ बनता है। दूसरी ओर, ई-पुस्तक के माध्यम से आवश्यक ज्ञान तो लोगों तक पहुंचेगा ही पर धरा भी हरी भरी रहेगी। पेड़ों को कोई नुकसान न होगा। जब हम अपने कार्यालयों को पेपरलैस की ओर ले जा रहे हैं तो क्यों न अपने पुस्तकालयों को भी ई-पुस्तक की ओर ले जाएं। कुछ विद्वान इसका भी संकेत देते हैं कि अब छोटे मकानों के कारण उनमें इतना स्थान नहीं होता कि पुस्तकें उनमें समाहित हो सकें।

मेरा विचार है कि ई-पुस्तक का चलन बढ़ा है तो वयस्कों के कारण, जिनकी आंखें कमज़ोर हो चुकीं हैं। अधिकतर ई-पुस्तक के पाठक वे हैं जो 60 वर्ष से अधिक आयु के हैं। वे अपने स्क्रीन पर फ़ॉन्ट को बड़ा कर आसानी से लिखित शब्द को पढ़ लेते हैं। परन्तु भारत में स्क्रीन में पढ़ना भी कितनों को आता है? पुस्तकों के साथ हमारी भावुकता जुड़ी होती है। गीता, रामायण, महाभारत, कुरानशरीफ़, गुरु ग्रन्थ साहिब, बाइबल - इन सब पुस्तकों को हम पवित्र और श्रद्धेय मानते हैं और देवगृह में स्थान देते हैं। उन्हें पूजते हैं। क्या ऐसा हम ई-पुस्तक के साथ कर पाएंगे? डिजिटल मीडिया की अपनी अड़चनें हैं, उसकी कॉपीराईट की समस्या है। ई-पुस्तक आप पढ़ सकते हो अमूमन तब, जब घर में बिजली हो पर आम पुस्तक आप पढ़ सकते हो जब बिजली हो या न हो। और अगर डिजिटल मीडिया का आपका साधन वायरस की लपेट में आया तो सब ई-पुस्तक समूल नष्ट हो सकतीं हैं। कई बार ई-पुस्तक के पुराने संस्करण नए सॉफ्टवेयर सिस्टम के अनुकूल नहीं होते तब वे पुस्तकें पढ़ी ही नहीं जा सकतीं।

यह सही है कि ज्यों-ज्यों तकनीक परिष्कृत होती जा रही है और सोशल मीडिया जन जन पर हावी होता जा रहा है त्यों-त्यों पढ़ने में रुचि कम होती जा रही है ख़ास कर युवाओं में। आज अधिकतर शहरी युवा अपना 86 प्रतिशत कार्य स्मार्टफ़ोन से कर लेते हैं। कहते हैं, उन्हें पुस्तक पढ़ने की क्या ज़रूरत जब उनके सारे कार्य स्मार्टफ़ोन से हो जाते हैं। पटना के एक पुस्तक विक्रेता ने माना है कि उसकी बिक्री पिछले कुछ सालों में 60 प्रतिशत घटी है। शिमला के एक पुस्तक विक्रेता तो यहां के लोगों की पुस्तक पढ़ने की न के बराबर आदत से इतने खिन्न थे कि जब मैंने एक अध्यापिका को उसके जन्मदिन के अवसर पर कोई उचित पुस्तक देने की बात कही तो उन्होंने मुझसे कहा, "पुस्तक तो मैं दे दूंगा पर आप उनको उनके जन्मदिन पर एक छाता भी दें।" मैं हैरान हो गया और पूछा, "छाता? छाता क्यों?" उन्होंने उत्तर दिया, "छाता कभी खुलेगा तो सही।"

सन् 2015 में लोगों की पढ़ने की आदत पर एक सर्वेक्षण किया गया था जिसमें पाया था कि साल भर में 30 से 99 पुस्तकें पढ़ने वाले लोग कुल पढ़ने वालों का 95 प्रतिशत हैं और पाठकों में से 17 प्रतिशत तो ऐसे हैं जो वर्ष में 150 से 199 पुस्तकें तक पढ़ डालते हैं। इन्हीं के बलबूते पर हम कह सकते हैं कि सोशल मीडिया के चक्रवात को रोकने में पुस्तकें डट कर मुक़ाबला कर रहीं हैं। मुझे याद आ रहा है 1956 में आई फ़िल्म 'तूफ़ान और दीया' का वह गीत "निर्बल से लड़ाई है बलवान की, यह कहानी है दीए और तूफ़ान की"। अन्त में तूफ़ान हार जाता है और दीया जलता

कविताएं

सेल्फी

● रमेश कुमार सोनी

अपने पसीना भर ताकत से
पत्थरों को चूर करते
वह रेत हुए जा रही है,
हथोड़े की हर चोट दस्तक होती है
पत्थरों की दुनिया में
जिंदगी की तलाश की।
क्रशर उद्योगों से
दम भर लड़ रही है वह
इसी में मिलता है उसे -
रेत हो जाने का संगीत,
उसे आदत हो गई है -
पत्थरों संग सड़कों में बिछ जाने की
उसे रौंदे जाने का
कोई फर्क नहीं पड़ता क्योंकि -
यह उसके लिए
कोई नई बात नहीं रही।
वह बेच रही है अपनी ताकत
सिर्फ बीस रुपये घमेला
जैसे बेच देते हैं लोग -
अपना दूध और अपनी गर्भ !!
मॉल संस्कृति के गुजरते लोग
उसकी रेत होती जिंदगी के साथ
सेल्फी लेकर
ऑनलाईन कमेंट्स चाहते हैं।
वह सेल्फी बनी हुई
पत्थरों की दुनिया में घूम रही है
भूख की ब्रांडिंग देखने,
कमेंट्स आ रहे हैं -
पथराए जिस्म पर चमकते पसीने की बूंदें
जिंदगी की सुंदर सेल्फी है,
कभी कोई इनके मन की
अतल गहराइयों की सेल्फी खींचता तो
शायद दिख जाता कांक्रीट और सड़कों का
शोषण,
हवेलियों का बौनापन और
तिजौरियों की गरीबी
किस कदर भूखी-नंगी होती है।

कुछ करिए

कंबल खरीदते हुए
सोच रहा हूं कि -
इस ठिठुरती सर्दी से अकड़कर
कितने मर जाते हैं।

छाता खरीदते हुए
पढ़ पा रहा हूं कि मेरा गांव
बाढ़ में कागज की कश्ती सा
कैसे बह गया था
पानी की बोतल खरीदते
देख रहा हूं हमारी
प्याऊ सभ्यता की अर्थी
लोग मरते हुए गिन लिए जाते हैं
प्रचंड लू नहीं गिनता
पशु-पक्षियों की मौत
क्योंकि उनके पास
पानी खरीदने को पैसे नहीं हैं।
देखना, सुनना और चुप हो जाना
पहाड़ों की तरह लोग रहते हैं यहां
कोई कभी तो चाहता कि -
फिर कभी यह ना दोहराया जाए
लोग पानी नहीं बचाते
लोग पेड़ नहीं लगाते
लोग प्रदूषण करते हैं और
भीड़ बनकर नारे लगाते हुए
आदी हो चुके हैं मरते हुए जीने के लिए
अफसोस और आश्वासन खत्म होना
चाहिए
आदमी के रहते तक
सहयोग और संवेदनाओं की सभ्यता
फले-फूले
कोई अपने बूते कुछ कर दिखाए
आदमी मोबाइल की दुनिया से बाहर
निकले॥

जे.पी. रोड, किसान राईस मिल के पास, बसना,
जिला महासमुंद, छत्तीसगढ़-493 554,
मो. 0 94242 20209

रहता है- पुस्तक हाथों में लेकर पढ़ी जाती रहेगी। मीडिया ने हमें पावलोव के कुत्ते बना दिया है। पावलोव एक रूसी मनोवैज्ञानिक था जिसने पाया था कि कुत्तों की लार तब भी टपकती है जब वह उनके खाने के लिए कुछ नहीं लाया होता। सोशल मीडिया ने हमें क्या दिया है - एक टपकती लार। सवेरे बिजली न होने के कारण टीवी में समाचार नहीं देखे तो बेचैनी की लार : मोबाईल नहीं है तो मानो कटी ज़िन्दगी की लार : आज फ़ेसबुक नहीं है तो समय कैसे व्यतीत करें की टपकती लार : पावलोव के कुत्तों की तरह हमारे गले में सोशल मीडिया का कॉलर बंध चुका है।

फ्रांसिस बेकन, महान निबन्ध लेखक, कहते हैं कि कुछ पुस्तकें स्वाद चखने के लिए होतीं हैं; कुछ निगल जाने के लिए होतीं हैं; कुछ हज़्म करने के लिए होतीं हैं। अर्थात कुछ पुस्तकें मानव अपने आनन्द के लिए पढ़ता है - पढ़ो, चटख़ारे लो और भूल जाओ। कुछ पुस्तकें उसकी भाषा को सुधारतीं हैं, उसकी शैली को परिष्कृत करतीं हैं, उसे व्याकरण के भीतर रहना सिखातीं हैं, कुछ उसे जीवन में आगे बढ़ने की राह दिखातीं हैं- उसे दानव से मानव बनातीं हैं। निश्चय ही ऐसी पुस्तकें छपे हुए शब्द दे सकते हैं। सोशल मीडिया तो अपनी भूमिका स्वाद चखने वाली पुस्तकों तक ही सीमित रख सकता है।

याद रखें महात्मा गांधी के शब्द : ''जिओ, ऐसे कि तुम्हें कल मर जाना है : पढ़ो, ऐसे कि तुमने हज़ार वर्ष तक जीना है'' ज़ाप्पो हज़ार वर्ष पर चुटकी लेते हैं : ''इतनी सारी पुस्तकें और इतना छोटा समय'' बोर्जिस मर जाने पर चुटकी लेते हैं : ''क्या स्वर्ग पुस्तकालय जैसा होता है?''

पंचवटी, ग्राम कनेना, डा. भराड़ी, शिमला,
हिमाचल प्रदेश-171 001, मो. 94181 576598

आलेख

सांस्कृतिक धरोहर वीरगाथाएं 'विरुदावलि गायन'

◆ डॉ. मनोरमा शर्मा

हिंदी साहित्य के आदिकाल में विरुदावलियों की रचनाएं वीरगाथा काल के अंतर्गत प्राप्त होती हैं। इस काल में रचित गाथाएं 'रासो' नाम से प्रसिद्ध हुईं। 'पृथ्वी राज रासो' तथा 'आल्हा खंड' इसी काल की रचनाएं हैं। इन विरुदावलियों का गायन चारण अथवा भाटों के द्वारा होता था। इनके रचयिता कविगण इन विरुदावलियों को राजसभाओं में गाया करते थे। इन गीतों को गाने के ढंग में इतना ओज और सौष्ठव होता था कि कायर पुरुषों में भी वीरता का संचार उभर आता था। इस गायन परंपरा में डिंगल गीत, आल्हा और रासो आते हैं।

वास्तव में यह प्रशस्ति गायन, गौरव गायन, स्मरण और विरुद बखान के गीत हैं, जो भाटों और चारणों द्वारा राजसभाओं, युद्धक्षेत्रों और रजवाड़ों में विकसित होकर विरुदावलि गायन की शैली में धीरे-धीरे प्रचार में आए। जैसे-जैसे इस गायन शैली की लोकप्रियता बढ़ती गई, वैसे-वैसे मौखिक कथानकों का गायन विरुदावलि गायकों द्वारा होने लगा। कालांतर में स्थानीय 'अल्हैत' (आल्हा गायक), 'ढांढी' (आसा दी वार गायक), 'हारुल' (हारें और वारें गायक) आदि गायकों ने इसे एक विशेष गायन शैली के रूप में प्रस्थापित किया। ये वीर गाथाएं अथवा विरुदावलियां दो रूपों में मिलती हैं; प्रबंध काव्य के साहित्य रूप में और वीरगाथा गीतों के रूप में।

प्रबंध

प्रबंध के चार धातु और छह अंग माने गए हैं, ये छह अंग-स्वर, विरुद, पद, तेन, पाट और ताल हैं। इन अंगों को मानव शरीर के अंगों के समान ही माना गया है। इन अंगों में 'विरुद' को हाथों की संज्ञा दी गई है। हाथ से उद्‌भव और दान क्रिया होती है। इसी प्रकार पाटों का उद्‌भव हाथों से होता है। विरुद में यशगान क्रिया को हाथों से संपन्न किया जाता है इसीलिए प्रबंध में विरुद को हाथों की संज्ञा दी गई है।

विरुद

गुणनाम अर्थात् विशेषण पदों को 'विरुद' कहा गया है। संगीत रत्नाकर में पं. शार्ङ्गदेव ने विरुद को 'विरुद गुण नामस्यात', पद से परिभाषित किया है। विशेषण के द्वारा किसी व्यक्ति का यशोगान किया जाता है, जिसमें दान क्रिया है। दान हाथ से संपन्न की जाने वाली क्रिया है, अतः विरुद को मानव रूपी शरीर के हाथ के समान प्रबंध के हाथ कहा गया है।

संगीत समय सार में आचार्य पार्श्व देव ने 'विरुद' को विरुद्ध के अर्थ में लिया है। शत्रुओं का विरोध प्रकट करने के कारण यह विरुद कहलाता है। यह वीररस से संयुक्त होने पर शत्रुओं को उद्वेग देता है। वीररस से युक्त पद भी विरुद कहलाता है।

विरुद शब्द 'वि' उपसर्ग युक्त धातु से बना है। यह विशेषण या प्रशंसासूचक पद है। साहित्य दर्पण के अनुसार 'गद्यपद्यमयी' राजस्तुति विरुदमुच्यते' अर्थात् गद्य अथवा पद्य से युक्त राजस्तुति को विरुद कहा गया है।

विरुद गायन के रूप में विरुदावलि का गायन पूरे भारतवर्ष में किया जाता है। इन्हें वीरगाथाओं के रूप में भी गाया जाता है। राजाश्रित कवि अपने राजाओं के शौर्य, पराक्रम और प्रताप का वर्णन अनूठी उक्तियों के साथ किया करते थे और अपनी वीरोल्लास भरी कविताओं से वीरों को उत्साहित किया करते थे। परंपरागत मौखिक रूप इन राजाश्रित कवियों, चारणों या भाटों ने जीविका उपार्जन के विचार से अपने उत्तराधिकारियों को हस्तांतरित किया। यह परंपरा आज भी विरुदावलि गायन के रूप में समस्त उत्तर भारत में प्रचलित है। राजस्थान में 'पृथ्वीराज रासो', 'आल्हा', उत्तर प्रदेश में 'आल्हा-ऊदल' पंजाब में 'वार गायन', हिमाचल में 'हारुल', 'वारें' या 'हार' तथा जम्मू में 'कारकें' और 'वार' गायन इस परंपरा के रूप में आज भी प्रचलित हैं। आधुनिक परिवेश में यह गाथाएं आज लुप्तप्राय हैं, यद्यपि प्राचीन गायन-विधाओं के संरक्षण हेतु जो कार्य किए जा रहे हैं, उनमें विरुदावलियों के संरक्षण एवं संवर्धन का कार्य भी महत्त्वपूर्ण है।

रासो

नवीं और ग्यारहवीं शताब्दी के बीच हिंदी साहित्य के 'वीरगाथा काल' के कुछ ग्रंथ उपलब्ध हैं जिनमें 'पृथ्वीराज रासो' तथा 'बीसलदेव रासो' प्रमुख हैं। पृथ्वीराज रासो एक वृहद ग्रंथ है जिसे विभिन्न काल खंडों में पूरा किया गया है। इसमें प्राचीन समय में प्रचलित सभी छंदों का प्रयोग हुआ है, जैसे कवित्त, छप्पय, दोहा,

तोमर, त्रोटक, गाहा और आर्या। अतः यह गेय रूप में अधिक प्रचलित हुआ जो जनमानस में विरुद गायन के रूप में प्रतिध्वनित होता हुआ, अनेक परिवर्तनों के साथ अब तक चला आ रहा है। इस दीर्घ यात्रा में उसका बहुत कुछ कलेवर बदल गया है। देश और काल के अनुसार भाषा में भी परिवर्तन नहीं हुआ है, विषय वस्तु में भी बहुत अधिक परिवर्तन होता आया है। मूल रूप से रासो ग्रंथ गायन के लिए ही रचे गए थे, अतः मूल लिखित रूप में कोई प्रामाणिक रचना प्राप्त नहीं होती। जनता के बीच मौखिक रूप से इसकी गूंज बनी रही- जो केवल गूंज मात्र रही, मूल शब्द नहीं। 'रासो' काव्यों में चौहान राजाओं, विशेष रूप से पृथ्वी राज की वीरता का यशगान मिलता है। कुछ पंक्तियां इस प्रकार हैं-

बज्जिय घोर निसान रान चौहान चहौं दिस।
सकल सूर सामंत समरि बल जंत मंत्र तिस
उट्ठि राज प्रिथिराज बाग मनो लग्ग बीर नट।
कढत तेरा मनवेग लगत मनो बिजु झट्ट घट।

आल्हा : आल्हा गायन का प्रचार यूं तो सारे उत्तर भारत में है, पर बैंसवाड़ा इसका केंद्र माना जाता है। इस क्षेत्र में आल्हा गायक बहुत हैं। बुंदेल खंड में विशेषतः 'महोबा' के आस-पास भी इसका बहुत चलन है। आल्हा गीतों के समुच्चय को 'आल्हाखंड' कहते हैं, जिससे अनुमान होता है कि आल्हा संबंधित ये वीरगति कवि जगनिक द्वारा रचे गए उस बड़े काव्य के एक खंड के अंतर्गत थे जो चंदेलों की वीरता के वर्णन में लिखा गया होगा। आल्हा और ऊदल राजा परमाल के सामंत थे। जगनिक स्वयं भाट थे। उन्होंने इन दो वीरों के चरित का वर्णन एक वीरगीतात्मक काव्य ग्रंथ में लिखा जो इतना सर्वप्रिय हुआ कि उन वीरगीतों का प्रचार क्रमशः सारे उत्तर भारत में, विशेषतः उन प्रदेशों में, जो कन्नौज साम्राज्य के अंतर्गत थे- हो गया। आज भी ऐसे वीरगीत हिंदी भाषी क्षेत्रों के गांव-गांव में सुनाई पड़ते हैं। ये गीत 'आल्हा' के नाम से प्रसिद्ध हैं और बरसात में गाए जाते हैं। मेघ गर्जन के बीच किसी अल्हैत (आल्हा गायक) के ढोल के गंभीर घोष के साथ यह वीर हुंकार सुनाई दे जाती है। आल्हा खंड की कुछ पंक्तियां इस प्रकार हैं :-

पैदर के संग पैदर भिड़ गए
औ' असवारां ते असवार।
जट्ट संगरा फिरे दंगल में
जौ चुचुहाती फिरे तलवार।
झुके सिपाही महोबे वारे
राही गए डेढ़ कदम मैदान।
खेंची सिरोही लै छतरिन नई
दल में झुके बांकुरे जवान।
छमछम छमछम तेगा बाजे
बोले खटक खटक तलवार।
तीर तुपक तलवार सांगरा
ऊपर बरछिन की है मार।

आल्हा की इन पंक्तियों में युद्ध का वर्णन है। पृथ्वी राज चौहान के शासनकाल के एक युद्ध में आल्हा-ऊदल के शौर्य और वीरतापूर्ण युद्ध की गाथा का विस्तृत वर्णन इस खंड काव्य में हुआ है। विरुदावलि गायन 'आल्हा' के रूप में इस विधा को जीवंतता प्रदान करता है।

3. वार : वार का साधारण अर्थ हाथ अथवा शस्त्र से आघात पहुंचाना है। अतः इसका आशय दुश्मनों पर धावा बोलने से लिया जा सकता है। इन 'वारों' में प्रायः वीररस का समावेश पाया जाता है। देशी भाषा में रचित गीत रूप में यश गाने का नाम ही वार गायन है। युद्धों में 'ढाढी' गायक शूरवीरों के उत्साहवर्धन के लिए जो गीत गाते थे, उन्हें ही वार कहा जाता था। विद्वानों का यह भी मत है कि वारें इतिहास प्रसिद्ध व्यक्तियों के क्रिया-कलाप, विशेषकर उनके युद्ध कौशल से संबंधित थीं, अतः मूलतः ये वीररस की रचनाएं थीं।

'वारों' का गायन अतीत काल में ढाढी जाति के व्यक्तियों द्वारा किया जाता था। ढाढियों का मुख्य व्यवसाय गायन होता था और ये प्रायः रजवाड़ों और बड़े जमींदारों के यहां आश्रित प्रजा के रूप में जीवन यापन करते थे। ढाढी लोकगीत और 'वारों' के गायन में निपुण होते थे। प्रतिभाशाली ढाढी शास्त्रीय संगीत का अभ्यास भी करते थे। वार गायन के साथ 'ढड्ढ' (डफ के समान एक वाद्य) और सारंगी बजा कर वारों का गायन करते थे।

'वार' की धुन अधिकतर तार सप्तक के स्वरों में ही विस्तार पाती है। वार गायन के साथ 'ढड्ढ' पर आठ मात्रा का 'पउड़ी' ताल बजाया जाता है। ढाढी अथवा भाट गायक वारों को कंठस्थ

वार का साधारण अर्थ हाथ अथवा शस्त्र से आघात पहुंचाना है। अतः इसका आशय दुश्मनों पर धावा बोलने से लिया जा सकता है। इन 'वारों' में प्रायः वीररस का समावेश पाया जाता है। देशी भाषा में रचित गीत रूप में यश गाने का नाम ही वार गायन है। युद्धों में 'ढाढी' गायक शूरवीरों के उत्साहवर्धन के लिए जो गीत गाते थे, उन्हें ही वार कहा जाता था। विद्वानों का यह भी मत है कि वारें इतिहास प्रसिद्ध व्यक्तियों के क्रिया-कलाप, विशेषकर उनके युद्ध कौशल से संबंधित थीं, अतः मूलतः ये वीररस की रचनाएं थीं। 'वारों' का गायन अतीत काल में ढाढी जाति के व्यक्तियों द्वारा किया जाता था।

कर लेते थे और ये वारें उनके वंश में परंपरागत रूप में चलती रहती थीं। गुरु गोविंद सिंह के दरबार में नत्था और अब्दुल्ला ढाढी गायक थे। ये दोनों भाई एक साथ योद्धाओं की वारें गाया करते थे। निम्न पद से इसकी पुष्टि होती है-

नत्था ढड्ढ बजाइया, अब्दुल्ला हत्थ रबाबा
अब्दुल्ला ढाढी जस सुनाए।

गुरुवाणी के अंतर्गत वारों में अध्यात्म के मार्ग पर चलते हुए दुनिया की मोह-माया और विषय विकारों के साथ युद्ध का वर्णन भी है। पंजाबी अंचल के संगीत में वार गायन का महत्त्वपूर्ण स्थान है। वार गायन की प्राचीनता के संबंध में निश्चित रूप से कह सकना कठिन है, लेकिन इतना अवश्य कहा जा सकता है कि यह गायन विधा गुरु नानक देव जी के अवतरित होने से पूर्व भी प्रचलित थी। सिक्ख कीर्तन के अभ्युदय के साथ-साथ इस विधा को धार्मिक प्रतिष्ठा प्राप्त हुई और भक्ति संगीत के अंतर्गत गायन विशेष के रूप में समाज में लोकप्रिय हुई। गुरु ग्रंथ साहिब में 22 वारें संकलित हैं जिन्हें 17 रागों में गाए जाने का निर्देश है। वारों के लिए निश्चित राग और तालों के संकेत भी आदि श्रीगुरुग्रंथ साहिब में प्राप्त होते हैं। प्रचलित वारों में से कुछ वारों के नाम इस प्रकार हैं :-

वार मलक मुरीद तथा चंद्रहड़ा सोहियो का, टुण्डे असराजे दी वार, सिकंदर इब्राहिम दी वार, जोधे वीरे दी वार, परवाणी की वार, राणे कैलास तथा मालदे की वार, मूसे की वार, राय कमाल दी मौजूदी वार, राय महिम हसने दी वार आदि। गुरु गोविंद सिंह जी द्वारा रचित 'चंडी दी वार' वीर रस की वार गायन परंपरा के प्रतीक हैं। उदाहरण रूप में टुण्डे असराजे दी वार का अंश इस प्रकार है। इस वार को 'पउड़ी' ताल में गाया जाता है जिसका स्वरूप आठ मात्रा के कहरवा ताल के समान है, परंतु ताल के बोल और वादन क्रिया बिलकुल अलग है। पउड़ी ताल के बोल इस प्रकार हैं- पउड़ी ताल- गे तिट ता गेता । गे तिट गा ता गेता

कहरवा ताल - धा गे ना ति । ना के धि ना
टुण्डे असराजे दी वार (पउड़ी ताल)
भबकथा शेर सरदूल राए, रण मारू बज्जे
सुलतान खान वड्ड सूरमे, विच रण दे गज्जे
खत लिक्खे टुंडे असराजे नू पातशाही अज्जे
टिका सारंग (सारंक) बाप ने दित्ता भर लज्जे
फतेह पाई असराज जी, शाही घर सज्जे।

इस वार का अध्ययन मात्र करने से ही इसमें निहित वीर रस का आभास हो जाता है। टुण्डे असराजे की वार को 'आसा' राग में आने का निर्देश है। वारों में आसा दी वार को टुण्डे असराजे दी वार की धुन पर गाया जाता है। संभवतः इसी धुन के स्वरों के ताने बाने से आसा राग ने अपना स्वरूप ग्रहण किया होगा। अतः शताब्दियों पूर्व अस्तित्व में आई हुई यह धुन और उस पर आधारित राग आसा की प्राचीनता और लोकप्रियता में संदेह नहीं। कई शास्त्रीय रागों का उद्भव लोकधुनों से ही हुआ है।

लोकगीतों की स्वरमाधुरी पर गंभीरता से विचार करने पर शास्त्रीय संगीत परंपरा के अनेक मूलस्रोत इनमें सहजता से ढूंढे जा सकते हैं। अधिकांश लोकधुनें भूपाली, दुर्गा, नारायणी, पहाड़ी, आसा, मालकौंष, वृंदावनी सारंग आदि रागों पर आधारित हैं। विरुदावलि गायन में भी इन रागों की स्वरावलियों का प्रयोग परिलक्षित होता है।

4. हारें, वारें और हारुल : हिमाचल प्रदेश के वीरगाथा काव्य के अंतर्गत हारें, वारें और हारुल आते हैं। गाथाओं में गुग्गा गाथा और भर्तृहरि (भरथरी) गाथा आदि भी वीरगाथा की श्रेणी में आती है। लोक गाथाओं में वर्णित विषय लोकगीतों से भिन्न रहता है। इनमें युद्ध, वीरता, साहस, रहस्य और रोमांच का पुट अधिक पाया जाता है। विषय की दृष्टि से लोकगाथाएं खंड काव्य कही जा सकती हैं। हिमाचल प्रदेश में लोक गाथा के लिए हार, हारुल या वार शब्द प्रयुक्त होते हैं, परंतु रामायण, महाभारत, गुग्गा, भर्तृहरि अथवा जाहरपीर की गाथाओं के साथ हार या वार शब्दों का प्रयोग नहीं होता। हिमाचली वीरगाथाओं में वीरता, देशभक्ति, बलिदान तथा त्याग की अनूठी झलक देखी जा सकती है। स्थानीय जननायकों के पराक्रम, अन्याय अथवा शोषण के विरुद्ध युद्ध वर्णन आदि से जुड़ी अनेक गाथाएं हैं। सिरमौर जनपद की प्रसिद्ध 'हौंकू मियां की हार', कांगड़ा की लोकप्रिय 'रामसिंह पठानिया' की वार, सूरमा मदना की हार, वीणी की हार, ढुण्डू कमरऊ की गाथा इन जननायकों के पराक्रम और शौर्य के भावों को व्यक्त करती हैं।

बिलासपुर जनपद में इन विरुदावलि गायन को 'झेड़े' नाम से जाना जाता है। पवाड़े, भारथ, हारुल तथा हारें पर्यायवाची शब्द वीरगाथाओं से संदर्भित हैं। युद्ध में वीरतापूर्वक लड़ते-लड़ते वीरगति को प्राप्त किसी योद्धा के मारे जाने के उपरांत उसकी सेना की पराजय होने के कारण इनको स्थानीय भाषा में हार अथवा हारुल कहा जाता है। इन गाथाओं के कुछ अंश इस प्रकार हैं :-

हौंकू मियां की हार -
हो बोलो भोउ ता देणा लाशां टुडोवे मेरे पाछड़े पाई
म्हारे लागा छडेला पाई।
हो पाछड़े पाई रो बे दे लाणा पाछड़े पाई
आखरों बे चारो हौकू रो देणी आखड़े री लाई।

हौंकू योद्धा के बलिदान की यह गाथा सिरमौर जनपद में हारुल के रूप में गाई जाती है।

मदना की हार -
मोदने लाई जाई री ताम्बू दी आगो
आगो लाई मात्बू दी उड़ा धएं रा डाडा
केहरीसिंह मुगलोदिया ताम्बू दा घेरी

मोदने बालिए दी खाणे बाई
काटि दिया केहरी सिंह मांजे री बाई।
काटि दिया मोदने शावणो रा सी घासो
फेरी राखा मोदने बिजली रा शी खाण्डा
काटी दिए तुर्को राखा तीसरा बाण्डा
हेड़ि रो लाए तुर्को, दूणी री ढांणों।

अर्थात् तलवार की एक ही वार से मदना ने केहरी सिंह का सिर काट दिया। तुर्को की फौज श्रावण मास में उगी घास की तरह काट दी गई और उन्हें खदेड़ कर 'दूण' के किनारे तक भगा दिया। यह एक अत्यंत लंबी ओजपूर्ण वीरगाथा है, जिसका केवल एक अंश प्रस्तुत किया है।

अन्य वीरगाथाओं में क्योंथल के युवकों की वीरगाथा 'देशू की हार' में युद्ध का बड़ा ही ओजपूर्ण वर्णन है। एक अन्य वीरगाथा 'सामा दौलतू की हार' में नाहन के राजा ने अत्याचारों से तंग आकर सामा और दौलतू के मध्य युद्ध का वर्णन अत्यंत लंबी गाथा के रूप में हुआ है।

हारुल गाथागीतों में स्थानीय वादकों द्वारा हुड़क और ढोल पर विशेष ताल बजाय जाते हैं, जिनसे वीर रस का संचार होता है। ढोल व हुड़क वादक जब एक साथ 20 से 30 हुड़क और ढोल बजाते हैं तो धरती कांप उठने का आभास होता है।

कारकें और वारें : ओजपूर्ण गायन की विविध परंपराओं में जम्मू क्षेत्र की कारकों और वारों के गायन का बड़ा महत्त्व है। धार्मिक गाथाओं को ही डोगरी में कारकें कहते हैं। डोगरी शब्द कारक संस्कृत शब्द कारिका का तद्भव रूप है। कारिका का शब्द का अर्थ है श्लोक अथवा विशिष्ट कविता धार्मिक श्लोकों की भांति कारें पवित्र मानी जाती हैं। इन्हें किसी विशेष लोकधुन में गाया जाता है। कारकें गायन एक धार्मिक कृत्य माना जाता है। कारकें पौराणिक देवी-देवताओं की स्तुति, स्थानीय देवी-देवताओं, ग्राम देवी-देवता, कुल देवी-देवता आदि की स्तुति अथवा यशोगान के रूप में गाई जाती हैं। कारकें गायन के समय जोगी किंगरी वाद्य तथा गारढ़ी ढोल का प्रयोग करते हैं। इन्हें प्रायः देवी-देवताओं के थानों (स्थानों), संतों की समाधियों, देहरियों पर जोगियों और साधुओं द्वारा गाया जाता है। पौराणिक देव गाथाओं में शिव से संबंधित कारकें ही प्राप्त होती हैं। देवियों में वैष्णों माता की गाथा, माता कालका, सीतला माता, देवी बाला सुंदरी आदि की कारकें श्रद्धापूर्वक गाई जाती हैं।

जम्मू क्षेत्र में भी वीरों से संबंधित गाथाओं को 'वार' कहा गया है। इनमें वीर पुरुषों, राजपूतों अथवा योद्धाओं की शूरवीरता का वर्णन रहता है। यह वर्णन पद्य गाथा के रूप में गाया जाता है। 'वार' शब्द हिंदी के वीर शब्द का विकृत रूप है। डोगरी लोक साहित्य में भी वारों का वर्णन प्राप्त होता है। इन पद्य गाथाओं का विषय पराक्रम एवं साहस से संबंधित है। अतः यह वारें वीरगाथाएं कहलाती हैं। डोगरी में धार्मिक गाथाओं के लिए 'कारक' शब्द प्रचलित है। धार्मिक श्लोकों की भांति डोगरी कारकें भी पवित्र मानी जाती हैं और इन्हें एक विशेष लोकराग में गाया जाता है।

डोगरी वारें प्रायः 'दरेस' गाते हैं। दरेस शब्द उर्दू शब्द दरबेश का विकृत रूप है। वार गायन में एक विशेष वाद्य तूम्बा का प्रयोग किया जाता है। जम्मू जनपद की कुछ प्रचलित वारें इस प्रकार हैं :-

राजा जगत पठानिया की वार

यह वार कांगड़ा और जम्मू के डुग्गर क्षेत्र की सशक्त गाथा है। राजा जगत पठानिया नूरपुर का राजा था। उसने मुगलों से टक्कर ली। विजयी होने पर मुगल उसके मित्र बन गए और उसकी बहादुरी से प्रभावित होकर मुगलों ने उसे उज़्बैक के विरुद्ध लड़ने के लिए सेना देकर भेजा। जगत पठानिया शत्रु को परास्त कर विजयी ध्वज फहराता नूरपुर आ गया। इस घटना का वर्णन इस वार में किया गया है। इसका कुछ अंश इस प्रकार है :

ओ जी बाई टिक्वे काबलरे, गारे इक वी सामणे नी आया
जुद्ध मुकाणा टिक्के हारे, ओ जी फौजे डेरे लगाए।
उच्चियां टिब्बियां फौजां रे गब्बे, जगत पठानियां तंबू लगाए
हऊं इंदर हां जगत बोलेया, खड़ी कुण सकांह सामणे मेरे।

रामसिंह पठानिया की हार

1849 में नूरपुर पर अंग्रेजों का शासन था। रामसिंह पठानिया ने सिक्ख सेना गठित की और नूरपुर पर आक्रमण कर दिया। अंग्रेजों की विशाल सेना के सम्मुख वह पराजित हुआ और मारा गया; इस वीर गाथा में रामसिंह पठानिया की वीरता का अभूतपूर्व वर्णन हुआ। इस लंबी गाथा का एक अंश इस प्रकार है -

लिख परवाना रामसिंह भेजदा, मैं लड़ना फिरंगिए नाल
इन्हां ढाइयां अंग्रेजां दे नाल, मैं लड़ना फिरंगिए नाल
मैं जीणा दिहाड़े चार, मैं परखणी फौजां दे नाल
मेरी कैसी चलदी तलवार, जेहड़ी करदी ऐ मारोमार
मैं परवीण फौजां दे नाल, मैं लड़ना फिरंगिए नाल

इस प्रकार इन वीरगाथाओं के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि भारत के अनेक जनपदों में गाई जाने वाली ये विरुदावलियां हमारी सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक धरोहर हैं। समाज में इनके माध्यम से देशप्रिय, वीरता, शौर्य एवं मानव मूल्यों को प्रस्थापित करना संभव हो सकता है। इन विरुद गाथाओं के प्रलेखन द्वारा तथा सांगीतिक दृष्टि से स्वरबद्ध एवं लिपिबद्ध करके देश की इस अमूल्य धरोहर का संरक्षण और संवर्धन संभव हो सकता है। विरुद गाथाओं में छुपे अनेक रहस्यों को उजागर करने के लिए इस अनमोल विरासत का संरक्षण अति आवश्यक है, ताकि लोक संस्कृति की ये महत्त्वपूर्ण मौखिक परंपरा स्मृतिमात्र बनकर विलुप्त न हो जाए।

प्रोफेसर (संगीत) सेवानिवृत्त, शिमला-171 006

आलेख

हिंदी साहित्य में 'रासो' परंपरा

◆ शंकर लाल माहेश्वरी

आदिकाल के हिन्दी साहित्य में वीरगाथाओं की प्रमुखता रही है। उसी समय 'रासो' परम्परा का शुभारम्भ हुआ। इस काल में अनेक चरित्र काव्यों की रचना हुई। इन वीर काव्यों को रूपक, विलास प्रकाश अथवा 'रासो' आदि से नामांकित किया गया है। इन वीरगाथाओं को दो रूपों में प्रस्तुत किया गया है। प्रबन्ध काव्य तथा वीर गीतों के रूप में। चन्दवरदाई कृत पृथ्वीराज रासो सबसे प्राचीन ग्रंथ माना जाता है और वीरगीत के रूप में सबसे पुराना ग्रंथ है। वीसलदेव रासो जिसके रचयिता श्री नरपति नाल्ह है। इस समय की साहित्यिक पुस्तकों में विजयपाल रासो, हम्मीर रासो, वीसलदेव रासो और कीर्तिलता तथा कीर्ति पताका विशेष रूप से प्रस्तुत की गई है।

हिन्दी साहित्य में 'रास' या रासक का अभिप्राय 'लास्य' से लिया गया है। जो नृत्य का एक प्रकार माना जाता है। इसीलिए गीत परक रचनाए रास नाम से जानी जाती हैं। रासो या रासऊ में अडिल्ल, दूसा, कुण्डलिया, पट्टलिका आदि छन्दों की गणना होती है। इसीलिए ऐसी छन्द रचनाओं को रासो नाम से जाना जाता है।

रासो शब्द विद्वानों के लिए विवादास्पद रहा है। इस पर विद्वान मतैक्य नहीं है। अलग अलग विद्वानों ने इस शब्द की व्युत्पत्ति पर भिन्नता प्रकट की है। कुछ विद्वान रहस्य शब्द से ही रासो की उत्पत्ति मानते हैं क्योंकि यह रहस या रहस्य का प्राकृत स्वरूप प्रतीत होता है जिसका आशय गुप्त या भेद है। जैसा कि शिव रहस्य, दैवी रहस्य आदि ग्रंथों के नामों से प्रकट होता है। इसीलिए पृथ्वीराज रासो का शुद्ध नाम पृथ्वीराज रहस्य भी माना गया है जो प्राकृत में पृथ्वीराज रासो से प्रस्तुत हुआ है। श्री रामनारायण दुग्गड़ ने भी इसी तथ्य की पुष्टि की है। आचार्य शुक्ल ने तो वीसलदेव रासो, खुमाण रासो ग्रन्थों को पहले का रचा हुआ माना है जबकि दोनों ग्रंथ 15वीं शताब्दी के ही सिद्ध हो चुके हैं। मोती लाल मेनारिया के अनुसार खुमाणरासो के लेखक को रावल खुमाण (सं. 810) का समकालीन मानने को उचित नहीं ठहराते। वीसलदेव रासो के रचयिता नरपति नाल्ह को भी गुजरात के नरपति नाल्ह से भिन्न माना है जिसका समय सं. 1545 हैं। विजयपाल रासो की रचना मिश्र बन्धुओं के अनुसार सं. 1355 है। इसी प्रकार भट्ट केदार का जयचन्द्र प्रकाश सं. 1225 का है। मधुकर कवि का लिखा 'जय मंयक जस चन्द्रिका' तो संक्षिप्तता लिए हुए है। रास का संबंध सभी ने ब्रज प्रदेश से ही जोड़ा हैं अवध प्रदेश से नहीं।

डॉ. काशी प्रसाद जायसवाल और कविराज श्यामलदास के अनुसार रहस्य पद का प्राकृत स्वरूप रहस्सो बनता है। कालान्तर में उच्चारण भेद के कारण रहस्य, रहस्सो, रअस्ओ, रासो के नाम से विकसित हो गया। रामचन्द्र शुक्ल रासो की उत्पत्ति जहाँ रसायन से मानते है वहीं डॉ. उदय नारायण तिवारी रासक शब्द से रासो का उदभव स्वीकारते हैं। माना गया है कि रस से उत्पन्न काव्य रसायन है। वीसलदेव रासो में प्रयुक्त रसायन एवं रसीय शब्दो से ही रासो शब्द का जन्म हुआ। हेमचन्द ने अपने काव्य में रासो को गेय रूपक माना है। हजारी प्रसाद लिखते हैं कि पृथ्वीराज रासो चरित्र प्रधान होते हुए भी रासो या रासक नहीं है। इधर फ्रांसीसी विद्वान गारसी द तासी ने राजसूय शब्द के आधार पर रासो की उत्पत्ति व्यक्त की है। श्री हरप्रसाद शस्त्री तथा विन्द्धेश्वरी जी रासो की उत्पत्ति राजयश से स्वीकार करते हैं। जबकि रभस के अनुसार रासो की उत्पत्ति रमस शब्द से मानते हैं। संदेश शतक में उद्धृत किया गया है कि "कह बहुरु विणि बधउ रासउ आसियहीं' कई विद्वानों के मत हैं रास शब्द की व्युत्पत्ति समानार्थक शब्दों के अलावा रायसी, रायसी, रासा, रायसा, राजदेश को भी बताते है। श्री ललिता प्रसाद मुकुल रसायन को रस की निष्पत्ति का आधार मानते हैं। आशय यह है कि रासो शब्द की व्युत्पत्सि उक्त शब्दों में ही से किसी से हुई है। मुंशी देवी प्रसाद मानते हैं कि रासो का अभिप्राय कथा से है और यह शब्द एक वचन में रास और बहुवचन में रासा बन गया है। महामोपाद्याय डॉ. हर प्रसाद शास्त्री राजस्थान के भाट चारण आदि रासा शब्द से रासों का विकास हुआ बताते हैं। कहीं विवाद की स्थिति बन जाने को भी रासो कहा गया है। दूढांण में रासो का अभिप्राय रामायण हैं। " कोई रामायण है।" यह एक मुहावरे के रूप में प्रयुक्त होता हैं। कभी यह भी कहा

जाता है कि " काहीं रासो है। 'डॉ. गोरीशंकर हीराचन्द ओझा ने माना है कि रासा शब्द रास से बना है। रास का अर्थ विलास से है। यह शब्द चरित्र व इतिहास के अर्थ में भी प्रचलित है। इधर आर. डी. मंकड़ रास शब्द का अर्थ जोर से चिल्लाने से लेते हैं। श्री मथुरा प्रसाद दीक्षित रासो शब्द की उत्पत्ति राज से स्वीकार करते है। बुन्देलखण्डी संस्करण के अनुसार रासो 'राछरा' शब्द का ही स्वरुप है। कहा है "होन लगे सास बहु के राछरे'' यह सास बहु के मध्य होने वाले झगड़े को व्यक्त करता है। इस प्रकार परस्पर वाक युद्ध को राछरा कहा गया है। अतः काव्य परम्परा में रासो शब्द का प्रयोग युद्ध संबंधी कविता के लिए प्रयुक्त होता है। रासो काव्य की यह परम्परा हिन्दी साहित्य की विशेष काव्य धारा रही है जो वीरगाथा काल से चलते हुए मध्य युग तक जाती है। यही परम्परा देशी राज्यों में भी दृष्टिगत होती है। राज्याश्रित कविगण अपने आश्रय दाताओं की शूरवीरताओं का अतिशयोक्ति पूर्ण वर्णन करने में इसका प्रयोग करते थे। पृथ्वीराज रासो को रासो परम्परा का सर्वप्रथम ग्रंथ माना गया है। जैन, बौद्ध और संस्कृत साहित्य में रासक नाम की अनेक रचनाएं प्रस्तुत हुई हैं। गुर्जर और राजस्थानी वीर काव्यों में इसका प्रयोग बहुलता से हुआ है। यह सही है कि संस्कृत काव्य शास्त्रों का हिन्दी साहित्य पर अत्यधिक प्रभाव रहा है। ऋग्वेद तथा शतपथ ब्राह्मण में युद्ध तथा वीरोचित सूक्तों का समावेश है। महाभारत की पूर्णतः वीर काव्य में गणना होती है। रामायण में भी कई वीरोचित प्रासंगिक घटनाएं हैं। किरातार्जुनीय में वीरोचित उक्तियों द्वारा वीर रस का परिपाक हुआ है। उत्तर रामचरित में " एको रसः करुण एवः "को प्रतिपादित किया गया है तथा चन्द्र केतु और लव के वीररस पूर्ण संवाद निहीत है। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि हिन्दी में वीररस काव्य सृजन का शुभारम्भ संस्कृत के वीरता पूरित रचनाओं से उद्घाटित है। रासो परम्परा के दो स्वरूप हैं प्रबन्ध काव्य और वीर काव्य। पृथ्वी राज रासो प्रबन्ध काव्य हैं तो वीसलदेव रासो की गणना वीर काव्य में की गई है। जगनीक का रासो अप्राप्य होते हुए भी आल्ह खण्ड नामक रचना वीर रस रचना में मान्य है। कतिपय विद्वान पृथ्वीराज रासो और वीसलदेव रासो को 16वीं व 17वीं शताब्दी की रचना मानते है। जैन साहित्य में भी रासो, रास, रासक नाम से कई रचनाएं उपलब्ध है। इनमें संदेश रासक, भरतेश्वरी, बाहुबलीरास और कच्छतरास प्रमुख हैं। यह रासो परम्परा हिन्दी से पहले अपभ्रंश में दृष्टिगत थी बाद में हिन्दी के साथ ही गुर्जर साहित्य में भी प्रयुक्त होने लगी। अपभ्रंश में मुंजरास और संदेश रासक रचनाएं हैं। श्री हेमचन्द ने सिद्ध हेम व्याकरण में तथा मेरुतुंग के प्रबन्ध चिन्तामणि में कुछ छंद उपलब्ध हुए हैं। डॉ. माता प्रसाद गुप्त मुजरास को 1075 वि सं. और 1197 वि सं. के मध्य की रचना मानते है तथा संदेश रास को 1207 वि. सं. की मानते हैं। वस्तुत पृथ्वीराज रासो दुखान्त और वीसलदेव रासो सुखान्त कृतियां हैं। गूजर साहित्य में प्रस्तुत रासो रचनाएं छोटे आकार की हैं जिनके रचयिता जैन कवि रहे हैं। जो जैन धर्म के सिद्धान्त के अनुरूप हैं। इनमें सर्वप्रथम शालिभद्र सूरी की भरतेश्वर बहुबली रास और बुद्धिरास रचनायें भी उपलब्ध हैं। भरतेश्वर बाहुबली रास में इन दोनों के संघर्ष की कथा है जो तीर्थंकर स्वामी ऋषभदेव के पुत्र थे। रचना वीररस प्रधान हैं तथा बुद्धिरास शांत रस में उपदेश परक है। अधिकांश विद्वान रासो की उत्पत्ति रासक से ही स्वीकारते हुए प्रमाणित करते हैं कि संदेश शतक में प्रयुक्त रासड शब्द विचारणीय है जहाँ लिखा है "कह बहुरु विणि वररु रासरु भा सिपइ।" यही रासउ शब्द भाषा के संधि एवं एक ही भाव संबंधी नियमानुसार अ तथा उ की संधि हो जाने पर रासो हो गया। अतः रासो शब्द की उत्पत्ति रासउ शब्द से ही मानी जानी चाहिए।

यदि समस्त रासो काव्य कृतियों का विश्लेषण किया जाए तो इनकी काव्यगत विशेषताओं में निम्नांकित विशेषताएं प्रस्तुत हुई है।

- कई ऐसी घटनाओं का उल्लेख है जो इतिहास सम्मत नहीं मानी जाती।
- घटनागत तिथियों की प्रामाणिकता में भी विरोधाभास है। काव्य में वीर तथा शृंगार रस की प्रधानता है।
- युद्ध, शृंगार, प्रकृति, नखशिख तथा नगर आदि का विषद् वर्णन है।
- काव्य रचनाओं में मात्रिक, वर्णिक तथा मिश्रित छन्दों की बहुलता है।
- शब्दालंकार और अर्थालंकार से परिपूर्ण काव्य सृजन है।
- काव्यों में अरबी, फारसी तथा तुर्की शब्दावली का भी प्रयोग हुआ है।
- प्रकृति चित्रण संयोग और वियोग में उदीपन हेतु प्रयुक्त हुआ है।
- अधिकांश रासो काव्य राजस्थान के राज्याश्रित कवियों द्वारा ही सृजित है।

मुख्य रूप से रासो नामधारी ग्रंथ इस प्रकार है - उपदेश रसायन, भरतेश्वर बाहुबली, घोररास, बुद्धिरास, चन्दनबाला रास, स्थूलिभद्ररा, नेमिनाथ रास, रेवन्तगिरी रास, कलावती रास, माधवानल कामकन्दलापुपई रास, मरुढोला कथा रास, सुरसुन्दरी रास, मृगावती रास, पृथ्वीराज रासो, हम्मीररासो, खुमाणरासो, परमाल रासो आदि।

इस प्रकार हिन्दी साहित्य में रासो परम्परा का सूत्रपात हुआ।

पूर्व जिला शिक्षा अधिकारी, ग्राम पोस्ट- आंगूचा
जिला-भीलवाड़ा (राजस्थान)- 311029
मो. 0 92145 81610

आलेख

दुनिया के फलक पर योग दर्शन

● मनमोहन गुप्ता

सारा विश्व 21 जून को विश्व योग दिवस के रूप में मनाता है। संयुक्त राष्ट्र संघ के पारित इस प्रस्ताव से भारत की छवि योग दर्शन में विश्व के मानस पटल पर स्थापित होकर, जो डंका बजा रही है, उससे हमारे ऋषि-मुनियों के वेद का ज्ञान एक बार पुनः उभरकर चिरस्थापित हो गया है। इससे विश्व पर क्या प्रभाव पड़ेगा? पश्चिम के देशों में योग शिक्षण बाजार में क्या स्थिति स्थापित कर चुका है? इसे व्यापार बनने से बचाया जाए। इन सब महत्त्वपूर्ण बिंदुओं पर लेखक श्री मनमोहन ने बेबाक चर्चा कर, छात्रों की उपयोगिता के लिए भी ये कितना कारगर प्रमाणित होगा? राज्य सरकारों द्वारा शिक्षा विभाग में प्राथमिकता को भी स्पर्श किया है।

संयुक्त राष्ट्र संघ ने 175 देशों की सहर्ष सहमति से 21 जून को विश्व योग दिवस मनाने का प्रस्ताव पारित किया है। इससे इतना तो आभास हम सभी को हो गया है कि विश्व को हमारा योग दर्शन उसके हृदयस्थल तक अपनी छवि स्थापित कर चुका है। विश्व की भोगवादी संस्कृति में ये आतुरता के साथ प्रतिष्ठित होकर किस रूप में इसे अपने गणवेश में स्थापित करेगा? गणवेश से तात्पर्य पहनावा या पोशाक नहीं है। अपितु अपने विचारों में ये इसे किस रूप में स्थापित करेगा? ये भविष्य की गतिविधियों के गर्भ में छिपा है। पर हां इतना अवश्य है कि स्वास्थ्य के क्षेत्र में इसने योग-ऋषि रामदेव के अथक प्रयासों से जो सफलता अर्जित की है, उससे विश्व के चिकित्सकों ने योग के बढ़ते प्रचार और इसकी लोकप्रियता से असाध्य रोगों में मिली सफलता से वेदों के इस ज्ञान के आगे अपने घुटने टेक दिए हैं और योगर्षियों की इस अमूल्य निधि के आगे उसका लोह माना लिया है।

ऐसा लगता है पश्चिमी देशों को भोगवादी संस्कृति को आत्मदर्शन हो चुका है। वह शायद इस ओर दौड़ते हुए परास्त होकर अपनी बढ़ती अभिलाषाओं की पूर्ति के लिए भारत के योग दर्शन की ओर मुंह ताककर टुकुर-टुकुर लालायित दृष्टि से देखने को विवश हो गई है।

इन सब पर विचार करते हुए हमें लगता है कि ये तो अब निश्चित है कि संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा 21 जून को विश्व के 175 देशों ने स्वीकार कर, इस दिन को विश्व योग दिवस मनाने का प्रस्ताव पारित कर, भारतीय योग दर्शन से विश्व अत्यधिक प्रभावित हुआ है।

विश्व योग दिवस इस दिन मनाने के निर्णय से अब ये तो अक्षरशः निश्चित हो गया है कि ये विश्व में स्वर्णिम दिवस होगा। संयुक्त राष्ट्र संघ में एक दिन तो इस भारतीय योग दर्शन की चर्चा अवश्य होगी। इसके महत्त्व पर चर्चा होने से विश्व को स्वास्थ्य के क्षेत्र में अच्छा संदेश जाएगा। विश्व योग करने के लिए प्रेरित होगा। विश्व योग दिवस मनाए जाने से समूचे विश्व में इसके प्रति जागरूकता का प्रबल अभियान होगा। आधुनिक चिकित्सा पद्धति में असाध्य रोगों के निवारण में सफलता अर्जित कर योग दर्शन ने हमारे वेदों के इस ज्ञान को जो ऊंचाइयां प्रदान की हैं, वह सर्वविदित हैं।

प्रो. ईश्वर बसवरड्डी निदेशक, मोरारजी देसाई राष्ट्रीय योग संस्थान दिल्ली ने विश्व योग दिवस के संयुक्त राष्ट्र संघ के पारित प्रस्ताव पर अपने विचार व्यक्त करते हुए लिखा है, "विश्व में इससे सकारात्मक सोच को बल मिलेगा।"

योग क्या है?

योग केवल मात्र शारीरिक क्रियाओं और व्यायाम का नाम नहीं है। योग एक जीवन शैली है। एक दर्शन है। इसका संबंध केवल शरीर मात्र से नहीं है, वह व्यक्ति के समुचित विकास की शिक्षा और साधना है।

जब यह व्यक्ति के समुचित विकास की शिक्षा और साधना का प्रदाता है। फिर हमारे छात्र इसे दैनिक रूप में अपनाकर कितना लाभान्वित होंगे, ये सर्वविदित विचार का प्रश्न है? योग दर्शन हमारी बुद्धि को प्रखर कर स्मृति को परिपुष्ट करता है। साथ है विचारों में पवित्र भावना का प्रसार कर ब्रह्मचर्य को स्वयंमेव बल प्रदान करता है। इससे हमारे वैदिक कालीन आश्रम व्यवस्थाओं में प्रथम आयाम को कितना बल मिलेगा? ये भविष्य के सुपरिणाम देकर अनेक कुप्रवृत्तियों पर स्वतः ही प्रतिबंध लगाकर नैतिक विचारों को बल प्रदान करेगा। हमारी राज्य सरकार द्वारा शिक्षा विभाग को पाठ्यक्रम में योगदर्शन अध्ययन और प्रशिक्षण के स्वर्णिम निर्णय को प्रार्थना सभा में भी इसे सम्मिलित किए जाने का जो निर्णय लिया है, वह छात्र-हित में अत्यंत लाभप्रद

कविता

जीवन

● डॉ. आर. के. गुप्ता

सुख पाने को,
दुःख उठाना जरूरी है
कवि बनने से पहले
कल्पना में जीना जरूरी है।
सपने देखने से बचना हो अगर?
तो मन को वश में, करना जरूरी है।
अगर मन वश में हो जाए
तो मानव !
इनसान से भगवान बन जाए॥

जीवन में प्रेमरस पाना जरूरी है,
कैसे जिया जाता है,
जीवन?
यह जानना जरूरी है॥

न्यू लाईफ क्लीनिक, सुंदरनगर, जिला मंडी, हिमाचल प्रदेश-174 402

होगा। छात्रों का शारीरिक सौष्ठव तो आकर्षक होगा ही, उसके साथ-साथ वह निरोग्य भी रहेंगे। छात्रों की बौद्धिक क्षमता में इस योग दर्शन के अभ्यास से महती वृद्धि होगी। वह अपने क्षेत्र में कीर्तिमान स्थान अर्जित करेंगे। इस दृढ़ता के साथ हम पूर्ण विश्वास प्रखर आस्था के बीज अंकुरित करने जा रहे हैं।

योग दर्शन से मिलने वाले असंख्य लाभ हैं। लेकिन सभी नियमित अभ्यास चाहते हैं। इससे सभी निरोग्य होंगे। शारीरिक और मानसिक रूप से भी इसका अभ्यास सभी को रोगमुक्त करता है। संकल्पशक्ति में दृढ़ता पैदाकर ये सकारात्मक सोच को बल प्रदान करता है। जो छात्रों के लिए बहुत ही उपयोगी है। योग अभ्यास से छात्रों के राष्ट्रीय चरित्र में भी ईमानदारी और कर्मनिष्ठा के साथ देशभक्ति की भावना का पवित्र संचार होगा। जो भविष्य में राष्ट्र निर्माण में बहुत ईमानदार होकर योगदान देने की नींव का प्रस्तर प्रमाणित होगा। पतंजलि ऋषि ने योग के अष्टांग मार्ग की चर्चा की थी। जिसमें प्रथम भाग में 'यम और नियम'। यम के पांच पक्ष दृष्टव्य हैं : अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह। ठीक इसी तरह नियम के पांच पक्ष बताए गए हैं जिसमें शौच, यानि आंतरिक और बाह्य सफाई और स्वच्छता। संतोष, तपस, स्वाध्याय और ईश्वर प्राविधान। योग की समग्रता की ओर ध्यान दें तो ये निश्चित ही शारीरिक जीवन को तो रोगमुक्त करता है, साथ ही सामाजिक जीवन को भी विकार रहित कर उसमें विचारों की पवित्रता प्रवाहित करता है।

योगदर्शन से लाभ हर क्षेत्र में मिलता है। हमारे कुछ शिक्षण गणों के विचारों के परिणाम जब परिणित होकर समाज में समूची धारणा को परिवर्तित करने के लिए ललकारते हैं तो हमारी आंखें शर्म से झुक जाती हैं। किसी से आंख मिलाने लायक भी हम समाज में नहीं रह पाते हैं। ऐसी स्थिति में हम तो ये समझते हैं कि उनको भी योग का अभ्यास कराया जाएगा तो उनकी आंखों को देखने का दृष्टिकोण बदल जाएगा। पवित्र भावनाओं का निश्चित ही प्रसार होगा। उनके विचारों में विशुद्ध पवित्रता पुष्ट होगी। आए दिन की घटनाओं पर विराम लग जाएगा और राष्ट्र निर्माता की छवि स्वर्णिम शिखर पर श्रद्धा और आस्था का दीप प्रज्वलित कर शैक्षिक कर्म में वर्तमान में व्याप्त अंधेरे विनाशकारी विचार को रोशन देकर संपूर्ण शैक्षिक जगत का मार्ग प्राचीन गुरुओं की प्रणाली में स्थापित करेगा। ऐसा हमारा दृढ़ विश्वास है।

योग की लोकप्रियता विश्व में जिस प्रगति के साथ विश्व-शिखर पर आसीन हुई है, वह अपना स्थान उसी तरह बनाए रखे। क्षुद्र आर्थिक लाभ पाने के लिए इसका व्यवसायीकरण नहीं होना चाहिए। योग शिक्षकों को योग शिक्षा देने के लिए समय निकालकर पवित्र भावनाओं के राष्ट्रनिर्माण में योगदान देने की निःशुल्क धारणा दृढ़ होनी चाहिए। तब ही हमारा राष्ट्र शिक्षा का क्षेत्र हो अथवा समाज का हर क्षेत्र में राष्ट्रीय भावना के साथ संकल्पित होकर समर्पित होने की भावना होनी चाहिए। इसी में देशहित के निर्माण के स्वर्णिम बीज रोपित हैं।

इसमें दो मत नहीं कि योगदर्शन से भारत को विश्व में पहचान मिली है। असाध्य रोगों को दूर करने में योगदर्शन ने अच्छे परिणाम दिए हैं। लेकिन जो अल्पज्ञानी योगी है, वह अपने अधूरे ज्ञान को प्रदान कर समाज को भ्रमित कर अपना आर्थिक लाभ अर्जित करने में लगे हैं। वह ऐसा न करें। तब ही देश और राष्ट्रहित में उनका पुनीत योगदान होगा।

अंत में हम तो यही कहेंगे कि विश्व में बढ़ती लोकप्रियता ने हमारे योगदर्शन को जो मान सम्मान देकर 21 जून को दिवस योग दिवस घोषित किया है। इससे हमारी प्राचीन वेदों की इस योगदर्शन विद्या की प्रतिष्ठा तो बढ़ी ही है। इसके साथ-साथ केंद्र सरकार ने शिक्षा विभाग में इसके प्राथमिकता देकर छात्रों में जो नैतिकता, चरित्र निर्माण के साथ स्वस्थ रहने के लिए जो योग पाठ्यक्रम लागू किया है, उसका सभी धर्मों के शिक्षार्थियों को सम्मान करना चाहिए।

गुप्ता सदन, एस.बी.के. कन्या उ.मा. वि. के पास, भरतपुर, राजस्थान-321 001, मो. 0 99834 09454

आलेख

संपूर्ण स्वास्थ्य एवं समृद्धि का सूत्र : योगनिद्रा

● सीताराम गुप्ता

जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है योग द्वारा निद्रा की स्थिति प्राप्त करना ही योगनिद्रा है। योगनिद्रा शब्द में पहला पद है योग। योग क्या है ? योग के विषय में विस्तार से वर्णन योगसूत्र और गीता इन दोनों पुस्तकों में अनेकानेक स्थानों पर मिलता है। योगसूत्र में कहा गया है 'योगश्चित्तवृत्ति निरोधः' अर्थात् चित्तवृत्तियों अथवा मन के क्रियाकलापों पर नियंत्रण ही योग है। 'श्रीमद्भगवद्गीता' में कृष्ण अर्जुन को कहते हैं कि 'समत्वं योग उच्यते' अर्थात् मन में समता भाव की स्थापना या प्राप्ति ही योग है। जब हम मन को रागद्वेषादि विपरीत घातक विचारों से रहित कर लेते हैं तो वह शांत होकर समता में स्थित हो जाता है। उसकी चंचलता समाप्त हो जाती है तथा मन नियंत्रण में आ जाता है। नियंत्रित मन को हम जिस दिशा में चाहें मोड़ सकते हैं। अपने भावों को मनचाहा आकार प्रदान कर सकते हैं।

मन की दो अवस्थाएं समन और अमन भी मानी गई हैं। जहां मन उपस्थित होता है वह समनावस्था है और अमनावस्था वह है जहां भौतिक शरीर की अनुभूति विलुप्त सी हो जाती है। यह 'नो थॉट स्टेट' जैसी अवस्था है और यही अवस्था योगनिद्रा में हो जाती है। सुषुप्ति और जाग्रतावस्था की निद्रा में अंतर होता है। सुषुप्तावस्था की निद्रा में मन हमारे नियंत्रण में नहीं होता जबकि जाग्रतावस्था की निद्रा में मन हमारे पूर्ण नियंत्रण में रहता है। मन पर नियंत्रण का अर्थ है हम मन को अपने लाभ के लिए प्रयोग कर सकते हैं। इसी स्थिति में अपनी इच्छाओं और संकल्पनाओं को मन में फीड कर सकते हैं। मन की सकारात्मक उपयोगी विचारों के लिए कंडीशनिंग की जा सकती है। यह गहन निद्रा में प्रवेश करने से ठीक पहले की अवस्था है।

रात को सोने से ठीक पहले और प्रातः जगने के फौरन बाद उठने से पहले की स्थिति बिल्कुल यही होती है। अतः सोने से पूर्व और जगने के फौरन बाद बिस्तर में शांत-स्थिर अवस्था में लेटे रहकर मन को सकारात्मक संकल्पनाओं से ओतप्रोत कर लें। मन को उन विचारों से आप्लावित कर लें जो आप अपने वास्तविक जीवन में घटित होते देखना चाहते हैं। सुषुप्तावस्था की निद्रा में हम जो स्वप्न देखते हैं उन पर हमारा नियंत्रण नहीं होता जबकि जाग्रतावस्था की निद्रा में देखे गए स्वप्न हम स्वयं नियंत्रण कर सकते हैं। जाग्रतावस्था की निद्रा में जैसा स्वप्न होता है वही हमारे जीवन की वास्तविकता बन जाता है। योगनिद्रा के अभ्यास द्वारा ही मन को अपेक्षित दशा प्रदान कर हर प्रकार के उपचार की प्रक्रिया प्रारंभ की जा सकती है।

यदि हम किसी भी समय, कहीं भी निश्चल तथा मौन होकर चिंतन प्रक्रिया को समाप्त कर सके तो वहीं हमें योगनिद्रा के लाभ प्राप्त हो सकते हैं। शवासन अथवा अन्य कोई भी शिथिलीकरण की प्रक्रिया वास्तव में योगनिद्रा की अवस्था ही है। योगनिद्रा, शवासन अथवा अन्य कोई भी शिथिलीकरण की प्रक्रिया हो

मन की दो अवस्थाएं समन और अमन भी मानी गई हैं। जहां मन उपस्थित होता है वह समनावस्था है और अमनावस्था वह है जहां भौतिक शरीर की अनुभूति विलुप्त सी हो जाती है। यह 'नो थॉट स्टेट' जैसी अवस्था है और यही अवस्था योगनिद्रा में हो जाती है। सुषुप्ति और जाग्रतावस्था की निद्रा में अंतर होता है। सुषुप्तावस्था की निद्रा में मन हमारे नियंत्रण में नहीं होता जबकि जाग्रतावस्था की निद्रा में मन हमारे पूर्ण नियंत्रण में रहता है। मन पर नियंत्रण का अर्थ है हम मन को अपने लाभ के लिए प्रयोग कर सकते हैं। इसी स्थिति में अपनी इच्छाओं और संकल्पनाओं को मन में फीड कर सकते हैं।

बाल गीत

बरखा आई रे

● प्रभुदयाल श्रीवास्तव

खेलें कूदें धूम मचाएं
बरखा आई रे।
अखबारों की नाव चलाएं,
बरखा आई रे।

अम्मा कहती- बच्चो कपड़े,
गीले मत करना।
बस कच्छे में चलो नहाएं,
बरखा आई रे।

आसमान की ओर उठाकर
अपना मुंह रखना।
बूंदें मुखड़े पर टकराएं
बरखा आई रे।

आंगन में भर जाए पानी,
घुटनों घुटनों तक
ईश्वर से यह दुआ मनाएं
बरखा आई रे।

पानी में खेलेंगे छप छप,
थोड़ा लोटेंगे
घोर घोर रानी भी गाएं
बरखा आई रे।

बारिश के मौसम में पापा,
खाते हैं भजिये।
अम्मा शायद गरम बनाएं
बरखा आई रे।

चाट बाजारों की मत खाना,
दादी कहती हैं।
खाना खूब चबाकर खाएं,
बरखा आई रे।

304, 12, शिवम् सुंदरम् नगर, छिंदवाड़ा, मध्य प्रदेश-480 001

उसका सबसे बड़ा लाभ ये होता है कि हमारे शरीर में स्थित अंतःस्रावी ग्रंथियां इस दौरान लाभदायक रसायनों का उत्सर्जन करने लगती हैं। विशेष रूप से पीनियल तथा पिट्यूइटरी ग्रंथियां। पीनियल तथा पिट्यूइटरी ग्रंथियों के सक्रिय होने का अर्थ है चमत्कार की सृष्टि। संतुलित शारीरिक विकास ही नहीं आध्यात्मिक शक्तियों का उदय भी इन्हीं दोनों ग्रंथियों की सक्रियता से ही संभव है। मन पर नियंत्रण द्वारा भौतिक शरीर और चेतना में पूर्ण संतुलन यही संपूर्ण स्वास्थ्य है और यही आध यात्मिकता भी है। सब कुछ हार्मोन्स का खेल है। सकारात्मक अनुभूतियों के बिना उपयोगी हार्मोन्स का उत्सर्जन नहीं होता और उपयोगी हार्मोन्स के बिना सकारात्मकता की सृष्टि असंभव है। शिथिलीकरण की प्रक्रिया इस कुचक्र को तोड़ कर दोनों में उपयोगी संबंधों का निर्माण करने में सहायक होती है। जब व्यक्ति की मृत्यु हो जाती है तो उसका भौतिक शरीर और मानसिक चिंतन सब समाप्त हो जाते हैं। इस मृत्यु के उपरांत पुनः जीवित होने की कोई अवस्था है तो उसे पुनर्जन्म की संज्ञा दी गई है। योगनिद्रा के बाद की स्थिति भी पुनर्जन्म की स्थिति जैसी ही है। योगनिद्रा के अभ्यास के उपरांत हम पूर्णतः रूपांतरित अवस्था में होते हैं।

मनुष्य की हर व्याधि अथवा विकार मन की गलत कंडीशनिंग का ही परिणाम होता है। योगनिद्रा एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके माध्यम से हम विचारशून्य होकर अतीत के विकारों को अलविदा कह सकते हैं तथा व्याधियों से मुक्ति पा सकते हैं। यही वह समय है जब मन में स्थित विकारों की समाप्ति पर नए संस्कार विकसित किए जा सकते हैं। दो क्रियाएं साथ होनी चाहिएं। जब कोई गाड़ी स्टेशन पर रुकती है तो पुराने मुसाफिर उतर जाते हैं और नए उनका स्थान ले लेते हैं। लेकिन यह तभी संभव हो पाता है जब गाड़ी प्लेटफॉर्म पर आकर पूरी तरह से रुक जाती है। वह निश्चल हो जाती है। मन रूपी गाड़ी की भी यही स्थिति होती है। उसके रुकने अथवा स्थिर होने पर ही उसमें उपयोगी विचार रूपी मुसाफिरों को चढ़ने दिया जा सकता है।

मन रूपी गाड़ी के विकार रूपी समस्त मुसाफिर उतारने का प्रयास कर उनके स्थान पर सकारात्मक संकल्प या संस्कार रूपी नये मुसाफिर इसमें सवार कराने का प्रयास करें तभी कुछ लाभ भी हो सकता है। यह स्थिति बुवाई के लिए एकदम तैयार जमीन जैसी होती है जिसमें बीज बोने की देर होती है। अब जैसा बीज होगा वैसी ही फसल भी होगी। अब चाहे उसे शवासन का नाम दें या योगनिद्रा का अथवा उसे शीतनिद्रा, ध्यान, कायोत्यर्ग मेडिटेशन, मेस्मेरिज्म, हिप्नोटिज्म, समाधि या शिथिलीकरण से अभिहित करें लेकिन जब भी उपरोक्त मानसिक अवस्था में पहुंच जाएं फौरन अपनी जीवन शैली में सकारात्मक परिवर्तन व अपने उत्तम स्वास्थ्य विषयक सकारात्मक भाव रूपी बीज बोने से न चूकें। मात्र स्वास्थ्य ही नहीं भौतिक समृद्धि प्राप्त करने का भी यही सूत्र है।

ए.डी.-106-सी, पीतमपुरा, दिल्ली-110034, मो. : 0 95556 22323

श्रद्धांजलि

'शौक' मुझे झोंके बर्फानी देते रहना

● द्विजेंद्र 'द्विज'

पच्चीस मार्च 2017 को हिमाचल प्रदेश ने उर्दू शायरी के एक और स्तंभ को खो दिया। 5 अप्रैल 1938 को उनके पैतृक स्थान, प्रसिद्ध पावनस्थली ज्वालामुखी में जन्में सुरेश चन्द्र 'शौक' शिमलवी साहिब के पिता जयलाल जी शिमला में सरकारी सेवा में थे। प्रारम्भिक शिक्षा ज्वालामुखी में लेने के बाद 'शौक' साहब शिमला आ गए और एम.ए. पास करने के पश्चात उन्हें वहीं महालेखाकार पंजाब के कार्यालय में नौकरी मिल गई। हिमाचल प्रदेश शिमला से वरिष्ठ लेखा अधिकारी के पद से सेवानिवृत हुए। शायरी के सफर में उनके रहनुमा उस्ताद स्व. पंडित रतन पंडोरवी साहब थे। हिमाचल प्रदेश भाषा एवं संस्कृति विभाग की देशभर के उर्दू प्रेमियों की प्रिय पत्रिका 'जदीद फिक्रो-फन' का उनके सुयोग्य अतिथि सम्पादन में प्रकाशित प्रत्येक अंक उनकी विद्वता और उनके सम्पादकीय विवेक का प्रशंसनीय उदाहरण है जिसमें स्थापित अदीबों को छापने के साथ-साथ नवोदित लोगों की रचनाओं को प्रोत्साहन देने का भरपूर प्रयास उन्होंने किया। वे हिमाचल प्रदेश भाषा कला एवं संस्कृति अकादमी के सदस्य भी थे।



सुरेश चन्द्र "शौक" शिमलवी साहब ने सृष्टि की आत्मा की अतल गहराइयों में डूबकर और जीवन के विवेक से स्वर मिलाते हुए , विविध जीवनानुभवों और अनुभूतियों को अपनी शायरी के विस्तृत कैनवस पर उकेरा। ऐसे हर दिल अजीज शायरी की इन्द्रधनुषी शायरी में हिमाचल की प्राकृतिक छटा की भरपूर झलक देखी जा सकती है। 'शौक' साहब की शायरी को पढ़ना एक अत्यन्त भव्य उद्यान में सैर करने जैसा है जहाँ उनकी सोच की रंगबिरंगी तितलियाँ बरबस ही आपके के मन को मोह लेती हैं और अपने विभिन्न प्राकृतिक और करिश्माई रंगों को जी भर कर देख लेने को लालायित करती हैं। अनेकों रंग हैं उनकी शायरी के। हुस्नो-इश्क, महब्बत रुमानियत, तसव्वुफ, दौरे-हाजिर की अक्कासी, सियासत और न जाने कितने ही ऐसे अनुभवों के रंग जो किसी शायराना तबीयत व्यक्ति के कल्पना संसार की परिधि में आते हैं।

सुप्रसिद्ध शायर जनाब राजिन्द्र नाथ रहबर साहब ने उनके काव्य संकलन 'आँच' की भूमिका में लिखा है : 'उर्दू शायरी के तअल्लुक से अगर श्री सुरेश चन्द्र 'शौक' को हिमाचल प्रदेश की दस्तारे-फजीलत (विद्वता की पगड़ी) कहा जाए तो गलत नहीं होगा... बेशक वो हिमाचल प्रदेश की गजल की आबरू हैं।"

सदा मंद-मंद मुस्कुराते हुए बात करने वाले आकर्षक, सौम्य, स्नेहिल और सम्पूर्ण व्यक्तित्व के धनी शौक साहिब अपनी शायरी में भी व्यक्तित्व का वही आदर्श प्रस्तुत करते हैं। ऐसा ही था उनका व्यक्तित्व भी। उनके लिए उन्हीं के यह शे'र बिल्कुल सटीक हैं।

'वो लबकुशाई(बात करने के लिए होंठ खोलना) वो अंदाजे गुफ्तगू उसका फजा में चार तरफ जैसे नगमगी(संगीत) बोले"

"तेरी सूरत से झलकता है खुलूस
तेरी सीरत भी भली हो जैसे"

व्यक्तिव और कृतित्व में एकदम समानता और समरसता जो आजकल एक नितान्त दुर्लभ गुण है, 'शौक' साहब के व्यक्तित्व में भरपूर था :

"मेरा जाहिर(प्रत्यक्ष भी वही है मिरा बातिन(परोक्ष) भी वही
मत समझना कि मैं आइने से डर जाऊँगा"

स्वर्गीय सुरेश चन्द्र शौक साहिब जैसा व्यक्ति ही औरों को

आइना दिखाने वाले लेकिन खुद से शर्मसार लोगों पर पूरे नैतिक बल के साथ यह तंज करने का साहस कर सकता है :

“अजीब बात है खुद से नजर चुराता है
वो दूसरों को मगर आइना दिखाता है”

“जो समझते हैं खुद को बड़ा पारसा
उनके हाथों में शौक आइना दीजिए”

“वो शायर है यकीनन एक अच्छा
मगर धुन उसकी सरकारी बहुत है”

“शौक’ साहब ,जीवन और मानवता के सर्वोत्तम मूल्यों के पक्षधर और तमाम साहित्यिक वादों-विवादों खेमों से दूर रहने वाले जिन्दादिल इनसान थे । उनके वॉट्स ऐप स्टेटस के साथ-साथ मानो उनके चेहरे पर भी सदा यह संदेश अंकित रहता था :

“हमेशा खुश रहिए ।”

वे शे’रों में उपयुक्त स्थान पर उपयुक्त शब्द के कट्टर सन्देश वाहक थे । नस्ले-नौ (नई पीढ़ी) को उर्दू काव्य की कथ्यगत और शिल्पगत सूक्ष्मताओं को सीखने -सिखाने और अपनी निर्विवाद विद्वता के बावजूद स्वयं को सदा विद्यार्थी समझने की विनम्रता से सम्पन्न ‘शौक’ साहब हिमाचल ही नहीं समूचे देश में शायरी की दीवानी नई पीढ़ी के लिए प्रेरणा स्रोत थे । उनके समूचे व्यक्तित्व की सौम्यता उनके शेरी कलाम में प्रकट होती है । शायरी में क्या-क्या कहना है, यह तो बहुत से शायर जानते है लकिन शायरी में क्या नहीं कहना है, नहीं कह कर भी कैसे सब कुछ कह देना है, यह ‘शौक’ साहब बाखूबी जानते थे । :

“सोचता हूँ कहूँ कहूँ न कहूँ
तुझसे इक बात का गिला है मियाँ”

इन्सानियत को दरकिनार करने और पत्थरों को पूजने की प्रवृत्ति उन्हें पसन्द नहीं थी ।

“किसी मुहताज को पूछे न पूछे
मगर पत्थर को इन्साँ पूजता है”

ऐसे दौर में जहाँ मानवीय मूल्य निरन्तर हास की ओर अग्रसर हैं, ‘शौक’ साहब केवल और केवल इनसान और इन्सानियत के पुजारी थे :

“कभी जो की है परस्तिश(पूजा) तो सिर्फ इन्साँ की
न मस्जिदों, न शिवालों से मेरा साथ रहा ।”

उनके उपरोक्त शे’र की सच्चाई की पुष्टि मुझे उनके भेजे एक वॉट्स ऐप संदेश से भी होती है :

“आप यकीन नहीं करेंगे कि मुझे नहीं मालूम था कि धनतेरस किसे कहते हैं । आज और भी मैसेजिस आए और ग्रुप में भी चर्चा रहा तो बेटी से पूछा । कभी न पूजा-पाठ किया , न मंदिरों-मस्जिदों में गया (मजबूरी के इलावा) , न प्रवचन वगैरह सुने, इसलिए मशहूर त्योहारों के इलावा ऐसी तमाम रिवायती रसूमात और उनकी अहमियत से बेबह : (वंचित)हूँ । बहरहाल शुभकामनाओं के लिए शुक्रिया ।”

विसंगतियों के विश्लेषण, समसामयिक अन्वेषण और हर अहसास को अनुभव करने की संवेदना से संपन्न इस शायर की शायरी का जादू देखते ही बनता है :

“अँधेरों को मुकद्दर जानकर जो मुतमइन (संतुष्ट) हैं
जरा उन तीरा-जिह्नों (अंधकारमयी बुद्धि वाले) को जियाएँ (प्रकाश) दीजिएगा ।”

आश्वासनों पर पाली-पोसी जाने वाली और अंततः हताश, जनमानस की आकांक्षाएँ ‘शौक’ साहब के शब्दों में कुछ यूँ ढलती हैं :

“मुकद्दर ने जिन्हें काँटे ही पहनाए हमेशा
कभी उनको भी फूलों की कबाएँ (वस्त्र) दीजिएगा”

“हमें कब तक यूँ ही तपती फिजाएँ दीजिएगा,
जो गरजें और बरसें वो घटाएँ दीजिएगा ।”

रोने की इंतिहा के बाद के मंजर की ओर ‘शौक’ साहब बेहद खूबसूरती से इशारा करते हैं :

“चुप है हर वक्त का रोने वाला
कुछ न कुछ आज है होने वाला”

मुखौटों की प्रधानता के युग में जीने के हुनर पर उनका व्यंग्य उनकी उनकी शायरी के खूबसूरत फूलों में इस तरह खिलता है :

“किस तरह लगाते हैं इक चेहरे पे सौ चेहरे
इस दौर में जीना है तो यह भी हुनर रखिए”

“मुल्ला- पंडित बनकर रहना ऐशकदों (विलास महलों) में
लोगों को दरसे- रूहानी(धार्मिक उपदेश) देते रहना”

लोकतंत्र में भटके हुए यात्री को पथप्रदर्शक समझ लेने की त्रासदी देखिए कितने सशक्त शेर के माध्यम से प्रकट हुई है :

हम इक भटके हुए राही को अपना रहनुमा समझे
जो खुद मुहताजे साहिल था उसी को नाखुदा समझे

आज के दौर के खुदपरस्त खुदाओं की सियासत ने आम आदमी को असफलता के घावों के सिवा दिया ही क्या है :

"परचों में आजकल की सियासत पे थे सवाल
हम हो न सके पास किसी इम्तहान में"

"इस दौर-ए-सियासत में हर कोई खुदा ठहरा
रखिये भी किस-किस की दहलीज पे सर रखिए"

उनकी पुकार कितने ही लोगों के स्वर की गूँज बन जाती है, जब वे कहते हैं :

"अजारादार (ठेकेदार) सूरज के नहीं हैं आप तन्हा
सभी को सब के हिस्से की जियाएँ(प्रकाश) दीजिएगा"

और वो यह भी चाहते थे कि यह पुकार सुनी भी जाए, लेकिन कैसे ? :

"जो इक्तिदार(सत्ता) की कुर्सी पे जल्वाफर्मा (विराजमान) हैं
न जाने जाने क्यों उन्हें ऊँचा सुनाई देता है।"

धार्मिक कट्टरपन को उन्होंने विषैली नागिन की संज्ञा दी और वे इस विषैली नागिन को कील डालने के लिए योग्य सपेरे की तलाश के पक्ष में थे :

"कील डाले जो तअस्सुब(धार्मिक कट्टरपन) की विषैली नागिन
ढूँढ कर ला तो कहीं से वो सपेरा जोगी"

उनके शेरों में अकेलेपन, वियोग और विरह के ज्वालामुखी के ताप और आहों और अश्कों की आँच को भी अनुभव किया सकता है :

"दिल के जख्मों की जलन और बढ़ा जाती है
जब भी आती है तेरी याद रुला जाती है।"

"शाम पड़े तो एक सिरे पर आँख लगाए गुम-सुम दोनों
जाने क्या तकते रहते हैं मैं और ये सूनी पगडंडी"

"आज बहुत अहसास था मेरे सूनेपन का तन्हाई को
मुझसे लिपट कर फूट के रोई, आहों में डूबी तन्हाई"

गमे-इश्क, अश्कों और आहों को भी नेमत मानने वाले इस अनुपम शायर के ये शे'र भी नायाब हैं :

"सूरज ढलता है तो तेरी याद के दीपक जल उठते हैं
मेरे दिल के शहर की हर शब दीवाली की शब होती है"

जिक्र करूँ क्या तेरे गम का, तेरे गम को गम क्या समझूँ
तेरा गम वो नेमत है जो किस्मत वालों को मिलती है।

आपकी सूरते-जेबा(सुन्दर मुख) का फसूँ (जादू) क्या कहिये
देखने वालों के अहसास पे छा जाती है

होने लगा है रोज यह रंगीन हादसा
मुड़-मुड़ के देखता है कोई देख कर मुझे

अपनों का अजनबीपन और अजनबियों का अपनापन भी एक अजब अहसास है जो बाखूबी शौक साहब ने नज़्म किया है :

"दुश्मन वही निकले है जो अपना-सा लगे है
'शौक' अब तो खरा सिक्का भी खोटा-सा लगे है
ऐ अजनबी! कुछ जान न पहचान है तुझसे
क्या जानिये क्यों फिर भी तू अपना-सा लगे है"

स्वार्थी युग को संवेदनशून्यता से / निस्पृह होने से बचाना बहुत जरूरी है और इसके लिए और भी जरूरी है मीर-कबीर की वाणी जैसी शायरी :

"दिलवाले भी बेहिस होते जाते हैं अब
इनको मीर कबीर की बानी देते रहना"

आँसू और आहें बाँटती जीवन की तमाम कड़वी सच्चाइयों से वे मुस्कुराते हुए और कहकहों के साथ रूबरू रहे ।

"अपने अश्कों के इवज कहकहे बख्शूँगा तुझे
जिन्दगी तुझपे यह एहसान भी कर जाऊँगा"

'शौक' साहब का शिमला प्रेम उनके शेरों में यूँ झलकता है :

"मैं शिमले का बाशिंदा हूँ लू ए खाइफ
'शौक' मुझे झोंके बर्फानी देते रहना"

क्या 'शौक' तमन्ना हो मुझे खुल्दे-बरीं (स्वर्ग) की
शिमला ही मिरा मेरे लिए खुल्दे-बरीं है

संभवतः शिमला की पावन भूमि अपनी गोद में अपने इस दीवाने का अंतिम सांसें लेना बर्दाश्त न कर पाती, तभी नियति को भी यही स्वीकार हुआ और 25 मार्च 2017 को शिमलवी साहब ने अपनी अंतिम सांसें मुम्बई में लीं।

अलविदा 'शौक' साहब!

भुलाए नहीं भूलेंगे आप। जिन्दा रहेंगे अपने अमर काव्य में, अपने असंख्य प्रशंसकों के हृदयों में।

विभागाध्यक्ष, अनुप्रयुक्त विज्ञान एवं मानविकी, राजकीय पॉलीटेक्निक, कांगड़ा, हिमाचल प्रदेश-17600

शोध लेख

मोहन राकेश : व्यक्तित्व एवं कृतित्व का अंतर्संबंध

● गीता कुमारी खटीक

"**मेरी** अधिकांश कहानियाँ संबंधों की यन्त्रणा को अपने अकेलेपन में झेलते लोगों की कहानियाँ हैं, जिनमें हर इकाई के माध्यम से उनके परिवेश को अंकित करने का प्रयत्न है। यह अकेलापन समाज से कटकर व्यक्ति का अकेलापन नहीं, समाज के बीच होने का अकेलापन है और उसकी परिणति भी किसी तरह की 'सिनिसिज्म' में नहीं, झेलने की निष्ठा में है। व्यक्ति और समाज को परस्पर विरोधी, एक दूसरे से भिन्न और आपस में कटी हुई इकाइयां न मानकर यहाँ उन्हें एक ऐसी अभिन्नता से देखने का प्रयत्न है, जहाँ व्यक्ति समाज की विडंबनाओं का और समाज व्यक्ति की यन्त्रणाओं का आईना है।"[1]

ऐसे विचारों के धनी मोहन राकेश का जीवन भी अकेलेपन में बीता। उनकी कहानियों में अकेलेपन की जो वेदना दिखाई देती है। वह उनका भोगा हुआ यथार्थ है। दो विवाह करने के बाद भी उनके जीवन का अकेलापन दूर नहीं हो सका। उस अकेलेपन की वेदना उन्हें हमेशा बनी रही। उन्हीं के शब्दों में - "मुझे घर चाहिये अन्ना, घर। मुझे जिन्दगी में और सब कुछ मिला है, सिर्फ एक घर ही नहीं मिला। मैं कहाँ-कहाँ इसके लिए नहीं भटका? क्या-क्या इसके लिए नहीं किया? लेकिन पता नहीं क्यों घर नाम की चीज मुझसे हमेशा रूसवा रही। दो बार मैंने इसे पाने का अपने में विश्वास भरा और दोनों ही बार मुझे खुद ही उससे भाग जाना पड़ा. ....। क्या तुम मेरे लिए एक ऐसा घर बना सकोगी? जो मेरे, सिर्फ मेरे, अनुकूल ही हो। मैं बहुत दुःखी आदमी हूँ अन्ना। एक बहुत ही थका हुआ आदमी हूँ। मैं चाहता हूँ कि मुझे तुम सम्हाल लो, मुझे और मेरे घर को।"[2]

लगातार दो विवाह संबंधों की असफलता ने उनके जीवन में न ठहरने वाला बहाव उत्पन्न कर दिया जो उन्हें अपने साथ बहाता चलता था। राकेश जी ने कई बरसों तक खानाबदोशी की जिन्दगी बिताई। वे एक ऐसा घर और ऐसी पत्नी चाहते थे जो उन्हें वहाँ बाँधकर रख सके, और उनके जीवन का अकेलापन दूर कर सके। वे अपने असफल वैवाहिक जीवन से थक चुके थे। उन्हें एक भरे पूरे घर की तलाश थी। पहले दो असफल विवाह ने उन्हें 'घर' शब्द से ही दूर कर दिया था। ये उनके जीवन की विडंबना थी कि वे हमेशा अकेलेपन से गुजरे और इस अकेलेपन की कसक उन्हें हमेशा बनी रही।

उनके अकेलेपन की कसक उनकी कहानियों में भी दिखाई देती है। जिनमें 'एक और जिन्दगी', 'मिस पाल', 'चौगान' आदि कहानियाँ है। 'एक और जिन्दगी' कहानी उनके जीवन का प्रतिनिधित्व करती हुई दिखती है। इस कहानी के माध्यम से उन्होंने अपने पहले असफल वैवाहिक जीवन को उकेरा है। प्रकाश की पत्नी बीना व बच्चे पलाश के माध्यम से अपनी पत्नी शीला और नीत के जीवन को चित्रित किया है। शीला पढ़ी-लिखी थी, तथा वह मोहन राकेश से ज्यादा कमाती थी। उसे लगता था कि वह स्वतंत्र नारी है, हर श्रेणी में उनसे श्रेष्ठ है। अपने अहंकार के कारण मोहन राकेश को नीचा दिखाने का प्रयत्न करती थी। उसके इस व्यवहार से उनके रिश्ते में बिखराव आने लगा। एक पति-पत्नी के रिश्ते में जो स्नेह व प्रेम होता है वह स्नेह व प्रेम जुड़ नहीं पाया। वे अकेलेपन से जुझते रहे। परेशान होकर उन्होंने अपनी पत्नी शीला से तलाक चाहा तो वह अनबन के बावजूद भी तलाक देने को तैयार नहीं थी। राकेश जी लिखते हैं- "आज सवा साल बाद - बल्कि सोलह महीने के बाद इस दौरान जिन्दगी के सबसे बड़े द्वन्द्व से गुजरा हूँ - मैंने पिछले छह साल की घुटन को समाप्त करना चाहा है - जिस औरत से मैं प्यार नहीं कर सकता, उसके साथ मैं जिन्दगी किस तरह काट सकता हूँ? आज वह मुझ पर वासना से चलित और इंसानियत से गिरा हुआ होने का आरोप लगाती है - क्योंकि मैंने उससे तलाक चाहा है - क्योंकि मैं अपने अभाव की पूर्ति के लिए एक ऐसे व्यक्ति का आश्रय चाहता हूँ, जो मुझे खींच सकता है, और बांध कर रख सकता है।''[3]

मोहन राकेश और उनकी पत्नी के बीच स्नेह एवं लगाव का रिश्ता नहीं जुड़ पाया। वे पत्नी के अहंवादी होने के कारण मानसिक कुंठाओं से घिर गए। उन्हें इस रिश्ते में घुटन महसूस होने लगी। तब उन्होंने यह रिश्ता तोड़ना चाहा तो उनकी पत्नी ने उन्हें ही गिरा हुआ इंसान बताया। रिश्ते में होने के बाद भी वे अकेले हो गए। यही व्यथा उनकी कहानी 'एक और जिन्दगी' में दिखाई देती है - "ब्याह के कुछ महीने बाद से ही पति - पत्नी अलग रहने लगे थे। ब्याह के साथ जो सूत्र जुड़ना चाहिए था, वह जुड़ नहीं सका था। दोनों अलग-अलग जगह काम करते थे और

अपना-अपना ताना-बाना बुनकर जी रहे थे। लोकाचार के नाते साल-छः महीने में कभी एक बार मिल लिया करते थे। वह लोकाचार ही इस बच्चे को दुनिया में ले आया था...।"[4] कहानी में पत्नी बीना आत्म-निर्भर है इसी कारण पति-पत्नी के अहं में टकराहट होने लगती है व पति-पत्नी के वैवाहिक संबंधों में कटुता आने लगती है।

मोहन राकेश का पहला विवाह असफल होने पर उन्होंने अपने मित्र मोहन की बहन से दूसरा विवाह किया, लेकिन दूसरे विवाह के पश्चात भी वे अकेलेपन के दर्द से उभर नहीं पाए और उनका दूसरा विवाह संबंध भी टूट गया। मोहन राकेश का दूसरा विवाह संबंध टूटने पर कमलेश्वर लिखते हैं कि - "मुझे लगा कि राकेश ने दूसरी बीवी को छोड़कर बड़ी, कमीनी, हरकत की है, पर भीतर ही भीतर में स्थितियों को सुलझा रहा था, और रह-रहकर कीर्तिनगर का वह मकान मेरी आंखों के सामने घूम जाता था, जहां राकेश ने कई बार सुस्थिर तरीके से रहने और जमकर लिखने की योजना बनाई थी। उस घर में मैं उससे कई बार मिला और हर बार मुझे यही लगा कि उस घर में सुख-शान्ति नहीं, एक बेहद खौफनाक सन्नाटा रेंग रहा है।"[5]

दूसरे विवाह पश्चात उन्हें पता चला कि उनकी पत्नी पुष्पा मानसिक रूप से विक्षिप्त थी। वह हमेशा कोई-न-कोई तमाशा करती थी तथा उनके कार्यों में उलझनें पैदा करती थी। पत्नी की इस मानसिक स्थिति से उत्पन्न मानसिक तनाव से बचकर वह खुद घर छोड़कर भाग निकले तथा दर-दर की ठोकरें खाने को मजबूर हो गए। घर छोड़ने के कुछ महीने बाद कमलेश्वर जी से सारी बातें स्पष्ट करते हुए उन्होंने कहा था - "कमलेश्वर स्थिति यह थी कि मैं आत्महत्या कर लेता। चार महीने से मांग-मांगकर कपड़े पहन रहा हूँ। सचमुच मैं जान दे देता।"[6]

'एक और जिन्दगी' कहानी में प्रकाश का पहला विवाह असफल होने के पश्चात् प्रकाश अपने मित्र कृष्ण जुनेजा की बहन निर्मला से विवाह करता है। लेकिन उसे भी विवाह पश्चात पता चलता है कि उसके साथ धोखा हुआ है, निर्मला मानसिक रूप से विक्षिप्त थी। वह अजीबो-गरीब हरकतें करती थी - "तुम मेरे भाई से क्या पूछने गए थे?" वह बाल बिखेरकर 'देवी' का रूप धारण किए हुए कहती है - "तुम बीना की तरह मुझे भी तलाक देना चाहते हो? किसी तीसरी को घर में लाना चाहते हो? मगर मैं बीना नहीं हूँ। वह सती स्त्री नहीं थी। मैं सती स्त्री हूँ। तुम मुझे छोड़ने की बात मन में लाओगे तो मैं इस घर को जलाकर भस्म कर दूंगी। सारे शहर में भूचाल ले आऊंगी। लाऊं भूचाल? और बाँहें फैलाकर वह चिल्लाने लगती, आ..... भूचाल,आ-आ। मैं सती स्त्री हूँ, तो इस घर की ईंट से ईंट बजा दे। आ, आ, आ।"[7]

विवाह पश्चात पत्नी का जो सान्निध्य व स्नेह चाहिए वह उसे निर्मला से नहीं मिल पाता और अंत में वह निर्मला की मानसिक विक्षप्ति से उत्पन्न मानसिक तनाव के कारण घर छोड़ने पर मजबूर हो जाता है।

"मिस पाल' कहानी की नायिका भद्दी-काली, मोटी औरत है। उसकी यह कुरूपता उसे समाज और सहकर्मियों के बीच उपहास का पात्र बनाकर रख देती है। मिस पाल अपनी इस कुरूपता को छिपाने का प्रयत्न करती है, किंतु यह प्रयत्न उसे और भी कुरूप बना देता है। इस कारण उसके सहकर्मी उसके रंग-रूप पर कई टिप्पणी करते रहते थे- 'क्या बात है मिस पाल, आज रंग बहुत निखर रहा है।"7 आजकल मिस पाल पहले से स्लिम भी तो हो रही है।"[8] "मिस पाल, इस नई कमीज का डिजाइन बहुत अच्छा है। आज तो गजब ढा रही हो तुम"[9] मिस पाल इन सब बातों से परेशान हो जाती और वहाँ से उठकर चली जाती है। "मिस पाल को इस तरह की बातें दिल में चुभ जाती थी। जितनी देर दफ्तर में रहती, उसका चेहरा गंभीर बना रहता। दफ्तर से छुट्टी मिलने पर इस तरह मेज से उठती जैसे कई घंटे की सजा भोगने के बाद छुट्टी मिली हो। दफ्तर से उठकर वह सीधी अपने घर चली जाती और अगले दिन सुबह दफ्तर के लिए निकलने तक वही रहती।"[10]

बचपन में माता-पिता और परिवार का प्यार ना मिल पाने की वजह से वह अपना घर छोड़कर दिल्ली जैसे महानगर में अकेली नौकरी करती है। अपने सहकमियों व समाज के लोगों के व्यंग्य से परेशान होकर आत्मकेन्द्रित हो जाती है। वह अपने अकेलेपन को दूर करने के लिए संगीत और चित्रकला का सहारा लेती है, किंतु फिर भी वह अपना अकेलापन दूर नहीं कर पाती। वह अपने सहकर्मी रणजीत से बात करते हुए भी वह अकेलेपन में खोयी सी रहती है। वह कहती है - "यह सब्जी मैंने परसो बनायी थी। हर रोज तो नहीं बना पाती हूँ। रोज बनाने लँगू तो बस खाना बनाने की ही हो रहूँ। और अम्....... अ....... अपने अकेली के लिए रोज बनाने का उत्साह भी तो नहीं होता। कई बार तो मैं सप्ताह भर का खाना एक साथ बना लेती हूँ और फिर निश्चिन्त होकर खाती रहती हूँ।"[11] वह अपने अकेलेपन से परेशान हो जाती है और स्वयं को ही समाज व सहकर्मियों के खिलाफ समझाती है कि ये लोग सभ्य नहीं है, मेरा पिंकी (कुत्ता) भी इनसे ज्यादा सभ्य है। "बस चली तो मिस पाल हाथ हिलाने लगी। दोनों खाली डिब्बे वह अपने हाथो में लिए हुए थी।"[12] मिस पाल का जीवन एकाकीपन व शून्यता बोध से भर चुका है। वह दोनों खाली डिब्बों की तरह अपने जीवन के खालीपन में अपने अस्तित्व को खोजती रह जाती है। 'चौगान' कहानी का नायक हैरी विलसन अभारतीय है। वह अपनी पत्नी लिजी से संबंध विच्छेद कर लंदन से भारत में आकर बस जाता है। दस साल अकेलेपन में गुजारने के बाद उसे अपना अकेलापन कष्टदायक लगने लगा - ""तब उसने आखिरी दिन काटने के लिए बगीचे की बूढ़ी नौकरानी की लड़की संतो को

गज़ल

दुआएं

● वंदना राणा



जी भर कर जी लो इन पलों को
न जाने फिर कल क्या हो?

सवाल पूछा न करो कुछ ऐसे हमसे,
नहीं जानते, जिनका हल क्या हो?

क्यों ढोंग करते हो खुदा बनने का?
जी सकते नहीं तुम भी ग़र हवा न हो।

क्यों देते हो जख्म हमें ऐसे?
वक्त के पास भी जिनकी दवा न हो।

दुआ करो अब के बरस ऐसी
अपनों से अपना कोई जुदा न हो।

संभलता नहीं अक्सर वो शख्स गिरकर,
साथ जिसके मां की दुआ न हो।

सैट नं. 3, टाईप-3, कैडल लॉज,
लौंगवुड, शिमला, हिमाचल प्रदेश-171 001
मो. 0 94180 39685

घर में रख लिया।"[13] हेरी संतो के माध्यम से अपना अकेलापन दूर करना चाहता था,लेकिन दोनों की भाषा व उम्र में अधिक असमानता होने के कारण संतो उसके दर्द की गहराई को छू नहीं पाती। वह चाहता था कि संतो उसके बराबर हो जाए। उसकी बात समझ सके। वह उसके अकेलेपन को दूर कर सके। परन्तु जब कभी वह उसे अपने पिछले जीवन की बातें बताता "तो संतो खिलखिलाकर हँस पड़ती और वह अवाक होकर उसके चेहरे की तरफ देखता रह जाता।"[14]

हेरी विलसन संतो के माध्यम से अपना अकेलापन भूल जाना चाहता था। लेकिन संतो को 'साहब जी' के अकेलेपन की बात समझ में नहीं आती है। अतः संतो उसे अपनी देह के सिवाय और कुछ नहीं दे पाती। अपने अंतिम दिनों में यह अकेलापन उसे और भी खलता है। कभी-कभी वह फटी आँखों से सामने दीवार की तरफ देखता रहता और कभी-कभी आँसुओं से तकियाँ भिगोता रहता। "वस्तुतः यह अनुभव के अकेलेपन की कहानी है। यह अकेलापन ओढ़ा हुआ नहीं है, वरन् समाज और सामाजिकों के बीच रहते मनुष्य का अकेलापन है। जिसमें मानवीय संबंधों की सूक्ष्मता जटिलता के स्तरों को स्पष्ट करती हुई आदमी को भीतर ही भीतर से छिलती दिखाई देती है। 'हेरी विलसन' मरता तो बाद में है, किन्तु उससे पहले अकेलेपन के क्षणों में वह कितनी ही मौतें अपने भीतर जी चुका होता है।"[15]

अकेलेपन का यह दर्द आज भी जारी है। आधुनिकीकरण की होड़ सी लगी हुई है। इसी के चक्कर में व्यक्ति का जीवन यंत्र की भांति स्वयं को आधुनिक बनाने में लगा हुआ है जिससे समाज में व्यक्ति अकेला हो गया है। मानवीय संबंध टूट रहे हैं। महानगरीय जीवन में अकेलेपन की छटपटाहट में जीना आम बात बन गयी है। दिनों-दिन मानवीय संबंधों में स्नेह हीनता बढ़ती जा रही है जो आज के समकालीन समाज एवं देश के लिए एक विमर्श का विषय है।

201, 60 फीट रोड, नये आर.टी.ओ. ऑफिस के पास,
गांधीनगर, उदयपुर-313001, मो. 0 98287 42616

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. अनीता राकेश : मोहन राकेश की संपूर्ण कहानियां, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, 1984, फ्लैप से।
2. अनीता राकेश : चन्द संतरे और, राधाकृष्ण प्रकाशन, 1975, पृ. 75
3. मोहन राकेश : मोहन राकेश की डायरी, पृ. 35
4. अनीता राकेश : मोहन राकेश की संपूर्ण कहानियाँ, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, 1984, पृ. 278
5. कमलेश्वर : मेरा हमदम मेरा दोस्त, पृ. 11
6. वही
7. अनीता राकेश : मोहन राकेश की संपूर्ण कहानियाँ, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, 1984, पृ. 282
8. वही, पृ. 11,
9. वही
10. वही
11. वही, पृ. 17
12. वही, पृ. 27
13. वही, पृ. 196
14. वही
15. सुषमा अग्रवाल : मोहन राकेश व्यक्तित्व व कृतित्व, पंचशील प्रकाशन, जयपुर, 1986, पृ. 237

राजकुमार जैन 'राजन' की कविताएं

सूखे फूलों की गंध

स्नेह के अभाव में
क्यों बुझता जा रहा है
आशाओं का दीप

अभाव और विवशता की
गठरी में कुलबुलाते
तुम अपनी सारी जिम्मेदारी
मुझे सौंप कर
अपने दायित्वों से बरी हो जाना चाहते हो

रात्रि के अंधकार में
जगमगाते हुए जुगनुओं की तरह
क्यों नहीं छेड़ देते तुम
अंधेरे के खिलाफ जंग

आशाओं के रंग महल में
निकलेगा कोई नया सूरज
मन के अंदर फैले अंधकार को मिटा देगा

सूखे हुए गुलाबों की पत्तियों में भी
खुशबू बची रहती है
कोई उनके पास आकर महसूस तो करे
अपनी दिव्य दृष्टि से

उम्मीदों की रौशनी टूट नहीं सकती
चलते हुए क्षितिज के सामने
खिलो, मुस्काओ
सूखे हुए फूलों की गंध साथ है।

अंधकार के बीज

ज्योति पर्व पर
जला रहे हो पीड़ा के दीप
लील चुका है तम
परंपरा, संस्कृति और संस्कार।

ज्योति-पर्व के अस्तित्व बोध में
अंधेरे से लड़ना चाहते हो
तो आओ
जला लो अपने भीतर की मशालें
संजो लो अंतर्मन में
अस्तित्व बोध का दीप।

मन में जब जलती हैं मशालें
तब खुद-ब-खुद बदलने लगती हैं
इतिहास की इबारतें
कटने लगती हैं संवेदना की फसल
अपने अभिमान में
खंड-खंड होते आदमी हो तुम
समय के चित्र फलक पर गलत तस्वीर मत खींचो
ज्योति पर्व पर
अंधकार के बीज मत बोओ
तुम्हारे भीतर एक सरसब्ज बाग है
उसे सींचो
जो प्रकाश मौन और म्लान हुआ है
देवदूत की तरह अंधकार को काटो।

तुम पर समूचे भविष्य की आस्था है
और जिंदगी महज अभिमान में तार-तार
अंधेरे का घोषणा पत्र नहीं
रूप है, रस है, गंध है, उजास है
आदमी आत्मा का छंद है।

चित्रा 'प्रकाशन', आकोला, चितौड़गढ़, राजस्थान-312 205,
मो. 098282 19919

कहानी

कहीं यह वही तो नहीं

● डॉ. पवन कुमार खरे

दिसंबर का महीना। शाम का समय। आसमान काले बादलों से घिरता चला जा रहा है। किसानों की बस्ती से घर की ओर चला जा रहा हूँ। पानी की हल्की सी बौछार शुरू हो गई। किसानों के घरों में सारंगी बजने लगी । महावट की पहली बारिस के आसार दिखने लगे। पास ही मन्दिर में पुजारी घंटी बजाने लगा। संकरी गली जिसके दोनों तरफ कांटों की बागड़ लगी है जिसके बीच बीच में बेसरम के फूल खिले दिखाई दे रहे हैं, से होता हुआ घर की ओर तेजी से चला जा रहा हूँ। सभी किसानों के घरों में बारिस की खुशियाँ मनाई जा रही है। रात हो चुकी है। कच्ची संकरी गली में कुछ नुकीले पत्थर, कुछ काँटे पैरों के तलुओं का रक्त चूसने हेतु पड़े हैं। बाएं तरफ एक कच्चा घर जिसके अंदर किसी महिला के रोने की आवाज सुन चौंक गया हूँ। घर के सामने खड़ा होकर देखता हूँ कि एक मर्द अपनी पत्नी को गंदी-गंदी-भद्दी गालियाँ देता हुआ जूतों, लातों से बेरहमी से मार रहा है। शायद उसने शराब पी रखी है। पत्नी लहुलुहान हो चुकी है। वह कराह रही है। फिर भी वह मारे जा रहा है। उस पर वहशियानापन सवार है। उसके मुख से निकलते खून को देख मेरा हृदय मर्मांतक गहरे आघात से कांपने लगा। मैं मूर्ति-सा बनकर खड़ा हो गया हूँ। थोड़ी देर में मन में आया उसे मना करूं पर कौन झंझट में पड़े। कहीं मुझे ही गाली न देने लगे। थोड़ा रुककर चलने लगता हूँ। दस कदम चलकर देखता हूँ कि एक रिक्से वाला दिन भर का थका रिक्से को अहाते में लगाता हुआ अंदर जा रहा है। मैंने उससे पूछ ही लिया।

भईया क्या नाम है आपका ?

उसने जवाब दिया- घासी।

आप क्या करते हैं ?

घासी -रिक्सा चलाता हूँ। दादा - क्या बात है।

आप मुझे किसलिये पूछ रहे हैं ?

मैंने कहा - घासी ! एक शक्स अपनी पत्नी को बेरहमी से पीट रहा है। मुझे अच्छा नहीं लग रहा।

रिक्से वाला कहता है - अरे दादा । जाने दीजिये ! वह तो रोज ऐसा ही करता है। दारूखोर है स्याला। शराब के लिए पत्नी से रोज पैसे मांगता है। नहीं देती तो धमाल मचाता है। मारता पीटता है। गालीगलोच करता है। कमाता-धमाता कुछ नहीं। पत्नी बेचारी सब्जी बेचकर खर्च चलाती है। क्या कर सकते हैं। दारूखोर ऐसे ही होते हैं, दादा। कोई बोलता है तो दोनों कहने लगते हैं हमारे घर के मामले में आप कौन होते हो दखल देने वाले। मरने दो स्यालों को दादा।

घासी की बात सुन मन दुःखी हो गया। सोचने लगा अपनी-अपनी परेशानियों से घिरा हर इनसान कितना संकीर्ण, सेल्फ सेंटर्ड, संवेदनशील हो चुका है कि वह दूसरों की तड़पती रगों को देखना ही नहीं चाहता। दुखी दुखी घर पहुँचता हूँ। एक महीने से मेरे अन्तर्मन के कैनवास पर इस लहुलुहान महिला का अक्स मुझे बुरी तरह कुरेद रहा है।

सुबह सुबह सोकर उठा हूँ। रात भर पानी बरसता रहा। अन्तर्मन भींगता रहा। अभी भी हल्की-हल्की बारिस हो रही है। ऊपर खपरैल में टप-टप बूंदों की आवाज बिस्तर से उठने नहीं दे रही। सोच रहा हूँ। थोड़ा और ऊँघ लें। उठकर खिड़की खोलता हूँ। बारिस में नहाया ठंडी हवा का झोंका मेरे मुँह से टकराकर अंदर घुसता है। बंद कमरे में रात भर से गर्माई हवा की सारी गर्मी उतार कर पसर जाता है। तेजी से झटककर खिड़की की किबड़ियाँ बंद करता हूँ।

दरवाजे पर लगा भीगा पर्दा फड़फड़ कर रहा है। श्वासों से आती गीली हवा ने उसे भिगो दिया। उससे पानी की बूंदे टप-टप टपक रही है। दरवाजा खोलता हूँ। गीली हवा के झांके से पर्दा मेरे शरीर में लिपटता है, मैं उसे झटक देता हूँ। सामने सुभाष सर का घर है। घर के सामने लगी लोकी की बेल पूरे खपरैल पर पसर चुकी है। कुछ फूल काले खपरैल के ऊपर खिले हैं। कुछ पर तरुणाई लिये भीगी लोकियाँ जिनके ऊपर गिरता हुआ मरा-सा फूल लगा है, उससे पानी की बूंदे काले-काले खपरैल पर टपक रही हैं, पर बेजान दिखने वाला खपरैल इन सबसे बेखबर है क्योंकि उसे तो धूप, हवा, पानी, औलों, झंझावाटों से घर की रक्षा करनी है, रक्षा करते करते मरमिटना है।

कुछ लौकियाँ छज्जे से लटकती हुई हवा में झूम रही है उन्हें यह नहीं पता कि वे बहुत जल्दी घरवालों का ग्रास बनने वाली है। दरवाजा खुलते ही रात भर की बारिस में भाीगी काँपती एक कुतिया मेरे पास पूंछ हिलाती, कान चिपकाती, लड़ियाती आती है।

पूरे शरीर को कम्पायमान करती झटकती है। पानी की बूंदे उसके शरीर से छिटककर मेरे ऊपर गिरती है। मैं हट-हट छी-छी करता हूँ। वह मेरे पैरों के बीच से निकलकर चारपाई के अंदर दुबक कर बैठ जाती है। मैं उसे मारने के लिये डंडा उठाता हूँ। वह गुर्राने लगती है। मैं डर जाता हूँ। बाहर निकलकर कुछ गीले पत्थर उठाता हूँ। फैक कर मारता हूँ। वह फिर गुर्राने लगती है। भौं भाँ करती लाचारी दिखाती भागती है। सुभाष सर के छज्जे के नीचे बैठ जाती है।

बारिस रुकने का नाम नहीं ले रही। सुबह आठ बज चुके हैं। आसमान में बादल गर्जना कर रहे हैं। सुभाष सर घर का दरवाजा खोलते हैं। पानी में भीगते मेरे कमरे में आते हैं। हम दोनों चारपाई पर बैठते हैं। सुभाष की बेटी घर से चाय बनाकर लाती है। दोनों बरसते पानी में सुड़क सुड़क कर चाय पी रहे हैं।

मैं सुभाष से कहता हूँ - 30 जनवरी को मेरी बेटी सीमा का बर्थ-डे है। मैं चाहता हूँ तुम पूरे परिवार को लेकर आओ।

सुभाष- सर हम लोग अवश्य आयेंगे। आज रात भर बारिस हुई। यह महावट की पहली बारिस है। किसानों के घरों में ढोल, सारंगी बज रही है। आसमान गाँव के किसानों पर मेहरबान है।

मैं सुभाष से कहा - यह बड़ी खुशी की बात है। अन्नदाता खुशियाँ मना रहे हैं। हाँ सुभाष मैं एक जरूरी बात जो कहना चाह रहा था कि सीमा की बर्थडे में करीब सौ लोग आयेंगे। सब्जी यहाँ से ले जाऊँ तो ज्यादा अच्छा रहेगा क्योंकि शहर में सब्जी एक तो महंगी है, दूसरी तरफ तमाम प्रकार के केमिकल्स मिले रहते हैं। गाँव में सस्ती ताजी बिना केमिकल्स वाली सब्जी तो मिल जायेगी।

सुभाष ने कहा- सर, शाम को यहाँ हाट लगता है। रात्रि के करीब आठ बजे उठने लगता है। जब बाजार सुनसान होने लगता है तब कुछ ही सब्जी वाले जिनकी बची-खुची सब्जी बिक नहीं पाती घर जाने की हड़बड़ी में सस्ते दामों पर बेंच देते हैं। रात्रि के करीब आठ बजे बाद ऐसा होता है। तब हम लोग चलेंगे।

मैंने कहा ठीक है सुभाष।

रात्रि के आठ बजे हैं। गाँव के कीचड़ भरे रास्ते से बचते हुये हम दोनों सब्जी बाजार जा रहे हैं। हाट उठने जा रहा है। सुनसान होता चला जा रहा है। लोग अपना-अपना तम्बू एवं सामान उठा उठाकर रख रहे हैं। सब घर जाने की हडबड़ी में हैं कि कैसे उनकी बची खुची सब्जी बिक जाये। इसी चिंता में ओने पोने दाम में सब्जी बेचने हेतु चिल्ला रहे हैं। आपस में कम दाम में सब्जी बेचने की प्रतिस्पर्धा की आवाज तेज होती जा रही है। मैंने दो बड़े बड़े थैले ले रखे हैं। एक महिला भिण्डी को बड़ी बड़ी टोकनी में रखे जल्दी जाने की हड़बड़ी में हताशा, व्याकुलता, व्यग्रता, दुःख भरी नजरों से देख रही है। उसका चेहरा निष्प्रभ, आँखें किसी बड़े हादसे और अनहोनी की आशंका में घबड़ाई हुई है। उसके पास उसकी पाँच छह वर्ष की बेटी बैठी है। मेरे पहुँचते ही एकाएक बोली-भिण्डी ले लो दादाजी।

उसकी आवाज में कुछ-कुछ अपनापन तो था पर चेहरे पर घनीभूत पीड़ा, भय, आशंका का भाव झलक रहा था, जिसको मैं नजरअंदाज कर बैठा। टोंकनी में रखी भिंडी की तरफ इशारा करते हुये मैंने पूछा- क्या भाव लगाओगी?

उसने कहा 20 रुपये किलो।

मैंने कहा- दस रुपये किलो देना हो तो दे दो पूरी टोकनी खरीद लूँगा और आगे बढ़ने लगा।

अंतिम आया ग्राहक कहीं हाथ से न निकल जाये। इसी डर से वह मुझे रोकते हुये बोली- दादाजी दस रुपये किलो में तो मुझे ही नहीं मिली, आप चाहो तो 15 रुपये किलो में ही पूरी टोकनी खरीद लो। जिस दाम से खरीदी है, उसी दाम में ही दिये देती हूँ।



मैंने कहा- नहीं, मुझे नहीं चाहिए। देना हो तो दो और आगे बढ़ने लगा।

भिण्डी की इतनी कम कीमत सुन उसकी आँखे फटी रह गई। मन में निराशा उदासी लिये बोली-दादाजी ! दस रुपये किलो में ही खरीद लो मुझे जल्दी जाना है।

मैंने 10 रुपये किलों में 10 किलो की पूरी टोकनी खरीद ली। सौ का नोट देते हुए उसने मेरी तरफ लाचारी भरी नजरों से देखा।

उसके बगल में बैठी सब्जी वाली भिण्डी के दाम बीस रुपये किलो लगाती हुई आवाज लगा रही थी। मैंने उससे भी पूछा- क्या तुम भी दस रुपये किलो के हिसाब से दे दोगी। तुम्हारी भी पूरी टोकनी खरीद लूँगा।

उसने बुरा मुँह बनाते हुये कहा - दादाजी। मैं बीस रूपये से एक रुपये कम नहीं करूंगी। खरीदना है तो खरीदो नहीं तो आगे बढ़ो।

आगे जाकर मैंने सभी सब्जी वालों से पूछा तो पता चला कि भिण्डी बीस रुपये किलो में ही बिक रही है। तब मुझे अंदर से ऐसा आभास हुआ कि इस सब्जी वाली के साथ मैंने अच्छा नहीं किया। कहीं उसकी लाचारी, मजबूरी का फायदा उठाया है। भिण्डी लेते समय मैंने उसकी फेस रीडिंग को नजरअंदाज किया था। खुद को दोषी मानते हुये मेरा अन्तर्मन कचोटने लगा।

जब मैं लौटकर आया तो मैंने बगल की सब्जी बेचने वाली महिला से पूछा- ये कहाँ चली गई।

उसने ऊँची श्वास भरते हुये जवाब दिया- दादाजी। इसका

आदमी बीमार पड़ा है। आज हालत बड़ी सीरियस थी। टी.बी. का मरीज है। वर्षों से शराब पीता चला आ रहा था। मारता पीटता धमाल मचाता था। डाक्टर की हिदायत से शराब पीना छोड़ दी। दो महीने से खटोली पर पड़ा पड़ा खाँस रहा है। उसे अस्पताल ले जाना था । इस कारण ढाई हजार की सब्जी एक हजार में जल्दी बेच कर चली गई।

तभी अचानक अन्तर्मन के कैनवास पर उस लहूलुहान महिला का अक्स मन को कुरेदता हुआ मेरी आंखों के सामने आ गया। कहीं यह वही महिला तो नहीं।

मैंने सुभाष से कहा-सुभाष इसके घर चलना है।

सुभाष ने झिझक कर कहा - अरे छोड़ो सर। ऐसा तो होता ही रहता है। शराबियों का यही हाल होता है।

नहीं सुभाष। इसके घर तो चलना पड़ेगा। मेरे अंतःकरण ने अड़ियल भाषा में थोड़ा गम्भीर होकर जवाब दिया।

सुभाष जी की आदत रही है कि मेरी जिद के सामने वे हमेशा झुकते रहे हैं। वे चलने के लिये तैयार हो गये।

रात का समय। अंधेरा बढ़ता चला जा रहा है। थोड़ी ही देर में हम दोनों इस महिला के घर पहुँच गये। वहाँ जाकर देखा कि उसका पति पड़ा पड़ा खाँस रहा है। दर्द में बुरी तरफ तड़प रहा है। बलगम से खून निकल रहा है। हालत बड़ी सीरियस है। खक-खक की आवाज सुन सभी पड़ोसी इकट्ठे हो चुके हैं। उन्हीं में से एक दादा पलटूराम हैं। उन्होंने सलाह दी -बेटा। इसी समय अस्पताल ले जाओ। हालत बड़ी सीरियस है नहीं तो बच नहीं पायेंगे।

पलटूराम की बात सुन कमला अंदर से कांप गई। दौड़ती हुई पास ही के रिक्से वाले के घर पहुँच गई और बोली- घासी भइया। इनकी हालत बड़ी सीरियस है। अस्पताल ले जाना है। जल्दी चलो!

घासी बोला - भाभी। कितनी बार मैंने राकेश भइया को समझाया। शराब छोड़। नहीं माना। देखो आज क्या हालत कर ली। वह बोली - भइया अभी तो इनकी जान पर आ गई है। तू तो जल्दी चल।

घासी- चलता हूँ भाभी।

घासी के रिकसे पर पति को अपनी ओली में बिठाकर कमला अपनी बेटी के साथ अस्पताल चली जा रही है। मैं भी सुभाष सर के साथ उसके पीछे पीछे जा रहा हूँ। अस्पताल पहुँचकर डॉक्टर ने मरीज की सीरियस हालत देख ओ.आई.सी. में भर्ती किया ! वेन्टीलेटर पर रख दिया। दवाइयाँ इन्जेक्शन का पर्चा लिखकर कमला को देते हुये कहा- जितनी दवाइयाँ अस्पताल में है इनको छोड़कर शीघ्र ही मेडिकल शॉप से दवा लाकर दो वर्ना हालत नाजुक है।

कमला घासी के रिक्से पर बैठकर मेडिकल शॉप गई। मेडिकल वाले ने पर्चा देखकर दवाइयाँ और इंजेक्शन निकाले। दो हजार रुपये देने के लिये कहा।

कमला ने कहा - भईया एक हजार रुपये ले लो। बाकी रुपये मैं कल दे दूंगी।

मेडिकल वाला जिसका नाम फैजान अली था उसके पति को जानता था कि वह दारूखोर है। वह गुस्से में आकर बोला- पूरे दो हजार दो तभी दवाईयाँ दूंगा नहीं तो एक भी दवा नहीं दूंगा।

फैजान अली की मनाही सुन वह अंदर से कांप गई। उसके पैरों पर गिर पड़ी। बोली भईया दे दो। इनकी जान खतरे में है। जान बचानी है।

फैजान अली ने गुस्से में आकर कहा - जा। भाग यहाँ से। मर जाने दे उसको। दस वर्षों से शराब पी रहा है स्याला। तू पालपोस रही है। नाकारा शराबी कहीं का, नाली छाप। शराबी पति की खिदमत करने से क्या मिलेगा तुझे। ठीक हो जायेगा तो फिर पीना शुरू कर देगा। अपनी बेटी को पढ़ा लिखाकर काबिल बना। इसको इसी के भाग्य पर छोड़।

फैजान अली की दिल पर चोट करने वाली भितरघाती गालियाँ सुन घासी ने कहा - भईया अली। ऐसा मत बोलो कमला भाभी को । पति तो पति ही होता है। भाभी के लिए राकेश भईया भगवान का ही रूप है।

फैजान अली ने कड़क कर कहा- तो करो, अपने दारूखोर भगवान की सेवा। मैं नहीं देता दवाई। पूरे 2000 रुपये दो। घासी ने कहा- भाभी तुम्हारे पास एक हजार रुपये हैं। मैं एक हजार रुपये अभी घर से लाता हूँ। घासी शीघ्र ही रिक्शा भगाता हुआ घर गया और आ गया। एक हजार रुपये कमला को देता हुआ बोला-भाभी दे दो दो हजार रुपये अली साहब को।

कमला ने दो हजार दिये। दवा इंजेक्शन लेती हुई घासी के साथ रिक्से में बैठ अस्पताल पहुंच गई। कमला को आज भले ही दुनिया भले आदमियों से खाली लग रही थी लेकिन इस विपत्ति काल में घासी ने उसकी इस धारणा को बदल दिया।

अस्पताल पहुँचकर कमला ने पति की श्वासों से आती घर्र घर्र की आवाज को सुना। वेन्टीलेटर पर रखे पति की तड़पन को उसके चेहरे पर देखा। उसके आते ही घर्र घर्र की आवाज तेज होती चली गई। कुछ ही समय में घर्र घर्र की एक तेज आवाज के साथ अब आवाज निकलना बंद हो गई। शायद यह अंतिम आवाज थी जो उसके आने की प्रतीक्षा कर रही थी। बेचैन तड़पन भरा चेहरा शांत हो गया था ।

तभी डॉक्टर ने बंद आँख की पुतलियों को उठाकर देखा। नर्स की ओर मुँह हिलाते इशारा करते अंदर के कक्ष में चले गये।

नर्स ने वेन्टीलेटर और इंजेक्शन की नलियों को निकालना शुरू किया तभी कमला ने आंखें फाड़ते, मुंह वाते काँपती आवाज में कहा-सिस्टर ! यह आप क्या कर रही है। मैं दवा, सीरप, इलेक्शन वगैरह ले आई हूँ। आप इन्हें दीजिये।

नर्स ने उसको शांत भाव में आकर कहा - तुमने दवा लाने में देर कर दी। इन्हें ले जाओ। अब ये नहीं रहे।

नर्स की शांत आवाज ने उसकी आत्मा को दहला दिया। वह कांप गई। अविश्वास से, अपना सिर हिलाते बोली- ये नहीं हो सकता। ये मुझे छोड़कर नहीं जा सकते। घबड़ाकर पति के पैरों पर गिरकर रोने लगी।

जीवन भर शराबी पति की दहाड़ भरी गालियां, बहशियानापन, निर्दयी मार, वाहियात बातें सहने वाली ये मेरे गांव की महिला कितनी धैर्यवान कितनी सहनशील, कितनी करुणाद्र, कितनी वीर है, कितना रूढ़िवादी लगाव इसकी आत्मा में समाया हुआ है। इसको मेरे गांव का कोई भी बौद्धिक व्यक्ति अभी तक समझ नहीं पाया, सिर्फ दारूखोर पति की पत्नी समझकर ठोकर मारता रहा, तिरस्कृत करता रहा। घासी बगल में खड़ा उसे पति के पैरों से अलग कर रहा है। बेटी माँ के साथ चिल्ला-चिल्ला कर रो रही है। तभी दो जवान मुस्तंडे स्ट्रेचर लेकर आते हैं। उसे उठाकर स्ट्रेचर पर रखते हैं। माँ बेटी दोनों शव से लिपट-लिपट रोती चिल्लाती है। मुस्तंडे दोनों को शव से अलग करते हैं। कॉरीडर से होते हुये गेट के बाहर निकालते हैं। घासी शव को उठाकर रिक्शे पर रखता है। माँ बेटी शव से छीना झपटी करती है। घासी दोनों को रोता हुआ समझाया है। दोनों रिक्शे पर बैठती हैं। पति के शव को ओली में रखकर दोनों रोती चिल्लाती है। तभी बेटी पिता के कान में सिसक-सिसक कर कहती है - पापा उठो। क्या हो गया तुम्हें। मेरा आज स्कूल में एडमिशन होना है। प्राचार्य जी कह रहे थे- पापा को लाना तभी एडमिशन होगा।

मैं प्राचार्य सुभाष सर के साथ खड़ा बेटी की बात सुन रहा हूँ।

गरीबी के दल दल में डूबी इस महिला ने पति की जान बचाने के लिए मुझसे जो लाचारीवश सौदा किया उसकी इसे इतनी बड़ी कीमत चुकानी पड़ी। घासी रिक्शा चलाता दूर चला जा रहा है। रोने की आवाज धीमी होती चली जा रही है। अब रोने की आवाज सुनाई देना बंद हो चुकी है। मैं अपराध बोध सा ठगा हुआ उसे देखता चला जा रहा हूँ। तभी सुभाष सर ने कहा-सर ! क्या हो गया आपको।

मैंने कहा-कुछ नहीं सुभाष

सुभाष ने फिर पूछा- कुछ तो।

तभी मेरे मुंह से अनायास निकल गया- मैं अब बेटी का जन्म दिन नहीं मनाऊँगा।

196, शिवाजी पार्क कॉलोनी, उज्जैन, मध्य प्रदेश

लघु कथा

उपहार

● डॉ. भूपेंद्र भारद्वाज,

भारतीय संस्कृति में मेहमान को उपहार देने का प्रचलन सदियों से है। हर व्यक्ति अपनी हैसियत के हिसाब से उपहार देता आ रहा है। उपहार के पीछे प्यार तथा सम्मान की भावना निहित होती है। लोकतांत्रिक व्यवस्था में नेताओं तथा अधिकारियों को उपहार का प्रचलन आरंभ हुआ है। उपहार, खातिरदारी अच्छी हो तो नेता-अधिकारी का दौरा श्रेष्ठ माना जाता है। कार्मिक विभाग के निदेशक कुंवर साहिब का राजगढ़ का दौरा आया तो क्षेत्रीय अधिकारियों व कर्मचारियों ने साहब को चादर व टोपी भेंट करने के लिए 600 रुपये इकट्ठे किए। साहब के आगमन पर फूलों का गुलदस्ता व शॉल, टोपी भेंट की गई। साहिब तो हर माह प्रदेश के दौरे पर रहते थे। उनके कंधे पर शॉल डाली गई तो उन्हें आभास हो गया कि शॉल सस्ती है। फिर क्या था? बैठक की शुरुआत पर साहब के तेवर बदल गए। दफ्तर की सफाई, उपस्थिति, कार्यप्रणाली लेखा-जोखा पर टिप्पणी शुरू हो गई। अधिकारी-कर्मचारी सिर छुपा कर बैठे रहे।

दफ्तर के बुजुर्ग कर्मी सीताराम को अपने तजुर्बे से आभास हो गया कि उपहार सस्ता था इसलिए साहब भड़के हैं। फिर क्या था शाम को सभी ने फिर से पैसे इकट्ठे किए और पांच हजार की नई शॉल टोपी खरीदी गई। रात को डिनर में दाल के बदले मुर्गा व अंग्रेजी पेयजल रखा। सुबह जब कुंवर साहब प्रस्थान करने लगे तो क्षेत्रीय अधिकारी ने उपहार का नया लिफाफा थमाते हुए साहब से कहा, "साहब हम मैडम को तो उपहार देना भूल ही गए थे। उपहार प्राप्त कर साहब के चेहरे पर रौनक आ गई। फिर तो कुंवर साहब का रुतबा ही बदल गया। सभी को शाबासी दी। अच्छा कार्य कर रहे हो, अच्छी रिपोर्ट का वायदा किया। ऐसे मेहनती, ईमानदार कर्मी मैंने सारे राज्य में नहीं देखे। साहब की गाड़ी राजगढ़ को पीछे छोड़ते जब आगे बढ़ी तो कुंवर साहब ने लिफाफा खोल कर शॉल की प्रशंसा की। पुराना उपहार सारथी को देने की पेशकश की। "नहीं साहब, मेरे पास तो पूज्य पिता जी द्वारा दी गई एक मोटी शॉल है। मेरे जैसे छोटे आदमी के पास तो एक कमरे में मकान में रखने को भी जगह नहीं है। गर्मी में साहब कीड़ा भी लग जाता है और साथ में शॉल सफेद है। मेरे से संभाली भी नहीं जाएगी।" "कोई बात नहीं, तू ठीक बोल रहा है।"

कार्यालय के कर्मचारी व अधिकारी हैरान थे कि साहब दोनों उपहार ले गए। बुजुर्ग कर्मी बोले तभी तो रिपोर्ट अच्छी लिखी जाएगी। बस, कुछ दिन आप लोग सब्जी-दूध बच्चों के लिए कुरकुरे व चॉकलेट घर न ले कर जाना।"

हाउस नं. 4, सैक्टर-4,
हाउसिंग कॉलोनी, सपरून, सोलन, हिमाचल प्रदेश

कहानी

डबलू

• लेख राज चौहान

निक्कू शिमला शहर में ढेरों सपने संजोए नौकरी की तलाश में दर-दर भटक रहा था। गरीब घर से पढ़ाई आगे कैसे करता? एक दिन निक्कू की मेहनत रंग लाई। वह सरकारी कर्मचारी जो बन चुका था। बस फिर दिमाग में संजोए सपनों को साकार करने के लिए रकम जोड़नी शुरू कर दी थी। वह पहले घर की मुलभूत जरूरतें पूरी करता फिर कुल मिलाकर पेट काट-काट कर कुछ रकम जमा कर पाता और जब कुछ रकम हाथ में ठहरी तो पांच बजे के बाद अक्सर जमीन तलाश करने निकल जाया करता। धर्मपत्नी को सन्देश मिलता, "देखो आज मुझे देर हो जाएगी। रात का खाना समय पर खा लेना।"

ऐसे में पत्नी का जवाब भी तपाक से सुनने को मिलता, "देखो जी मैं तो खाना आपके साथ ही खाउंगी। हां बच्चों को मैं खाना खिला दूंगी। बस तुम जल्दी आने की कोशिश करना।"

सप्ताह में एक दो बार जमीन की तलाश में अकसर निक्कू निकल जाया करता था। शायद इस तलाश, दौड़ धूप में ज्यादा समय नहीं लगा था। कुछ ही महीनों में निक्कू को पाच विस्वे का प्लाट मिल चुका था। जमीन की रजिस्ट्री कुछ जमा पूंजी तथा कुछ उधार पैसों से हो पाई थी। तब तहसीलदार के प्रश्न पर जमीन मालिक के स्वर कुछ यूं उभरे थे,

"साब रकम मिल गई है और मौके पर कब्जा भी दे दिया है।"

"खरीददार कौन?"

"----जी मैं निक्कू।" तुरन्त आगे बढ़ता हाथ जोड़े, सर झूका, निक्कू नतमस्तक हुए खड़ा था।

"अच्छा तो आप है निक्कू।"

"---- जी साब।"

जमीन खरीदने पर आज निक्कू और उनकी धर्मपत्नी बहुत खुश थे। शिमला में जमीन होना निक्कू की बहुत बड़ी उपलब्धि थी।

शिमला यानि ठंडी-ठंडी हवाएं, वो वर्फ से लदी पेड़ों की टहनियां मानो आते जाते मेहमानों के आदर सत्कार में खड़ी हों। चारों तरफ धरती सफेद चांदनी औढ़े ऐसी लग रही थी मानो धरती पर स्वर्ग लोक उतर आया हो और ऐसे स्वर्ग लोक में घर बनाना निक्कू के बचपन का सपना था।

ये क्या। यकायक निक्कू मायूस हो उठा था। ऐसा लगा जैसे उससे कोई भूल हो गई हो। वह अपने आप पर तनिक क्रोधित भी हुआ था। निक्कू की भूल शायद मां को खरीदने बाली बात थी। मां यानि धरती मां। भला क्या धरती मां को भी कोई खरीद सकता है? फिर निक्कू के मन में विचार आया यह खरीद नहीं यह तो मन का भ्रम है या यूं कहें आंखों का धोखा है। राजस्व अभिलेख में जो कुछ लिखा है कल लुप्त होते देर नहीं लगेगी क्योंकि आज की तारीख में निक्कू वलद रतन, रतन वलद टेकू, टेकू वल्द साजू से आगे तो कोई नाम जमाबन्दी में दर्ज न था तो फिर नाम भी मिट गया और जिस जिस्म का घमंड है वह नहीं रहेगा न तो इसका नाम रहेगा और न जात धर्म। कहां से आए कहां गया, सब खत्म हो जाएगा।

क्षण भर के लिए इस मायाबी दुनिया से शायद निक्कू अलग हुआ पड़ा था लेकिन अभी तो निक्कू को इस संसार का बहुत कुछ देखना, झेलना या यूं कहें भोगना बाकी था।

निक्कू की पत्नी आज बहुत खुश थी। पति पर कुछ ज्यादा ही प्यार वरपा रही थी तो दूसरी तरफ बच्चे थे बेखबर। जमीन क्या मिली निक्कू और उसकी पत्नी की तो मानो भूख प्यास ही मिट गई थी। मन में खयाल आया, जिनके पास सैंकड़ों बीघा जमीन है और बैंकों में करोडों अरबों रुपये उनका क्या होता होगा। अब धन दौलत रुपये नोट तो खाने नहीं तो फिर जरूरत से ज्यादा दौलत भी किस काम की। मेरे साब के पास भी करोड़ों की सम्पति है, परन्तु दो रोटी भी खानी नसीब नहीं क्योंकि गेहूं के आटे से एलर्जी है और दूध, मीठा फ्रूट भी खा नहीं सकते, यहां तक फल फ्रूट भी कोई-कोई ही खाने को नसीब है। कुल मिलाकर अब यूं कहें भगवान ने साब की डियूटी सम्पत्ति को सम्भालने के लिए लगा रखी है। यह सब सोच कर निक्कू के रोंगटे खड़े हो गए थे और यकायक प्रभु से अर्ज कर बैठा था,

"--नहीं मालिक मुझे ज्यादा तो नहीं चाहिए बस यह छोटा सा घर बन जाए ताकि भूख भी लगती रहे और चैन की नींद भी आती रहे।"

निक्कू की सोच पर ताला तब लगा था जब यकायक बेटी



रोटी-रोटी चिल्लाई थी बस फिर क्या था अब दानों खाना बनाने में जुट चुके थे।

इस तरह तीन-चार वर्ष बीत चुके थे। कुछ रकम जुड़ी तो निक्कू ने घर बनाने की सोची, लेकिन यह सब होता कैसे ? अभी तो दोस्तों रिश्तेदारों से ली रकम मुश्किल से लौटा पाया था। इस थोडी-बहुत रकम से घर बनाना मुश्किल था। इस सूरत में अभी घर बनाना शायद सपना ही लग रहा था लेकिन सकारात्मक सोच हमेशा इन्सान को आगे बढ़ाती है, ठीक ऐसा कुछ निक्कू के साथ भी हुआ था। कुछ ही वर्षों में भगवान ने शायद निक्कू की फरियाद सुन ली थी। तत्काल सरकार ने मकान बनाने हेतु एच.बी.ए. लोन देना प्रारम्भ कर दिया था। फिर क्या था निक्कू ने लोन केस बनाने की ठान ली थी। एक दिन निक्कू कार्यालय दिवस में पटवारी के पास पहुंचा।

"न--नमस्ते जी। मुझे मेरी जमीन का ततीमा और जमाबन्दी चाहिए थी।"

नतमस्तक खड़े निक्कू के चेहरे पर घबराहट की लकीरें साफ झलक आई थी। परन्तु पटवारी की आंखों में एक अजीब सी चमक आ चुकी थी। शायद माया की खनखनाहट से कान बजने लगे थे। निक्कू की फरियाद सुनते ही पटवारी साहब के स्वर कुछ यूं गूंज उठे थे,

"देखो अभी तो मेरे पास समय नहीं है, तुम कल आना।"

फिर निक्कू की दलील अपील पटवारी साहब ने सुननी बन्द कर दी थी। निक्कू अकसर पटवारखाने जाता लेकिन हर बार की तरह कोई न कोई बहाना सुनने को मिलता। आखिर एक दिन तंग आकर, निराश पटवार खाने से बाहर निकल कर चिन्ता में डूबा बैठा था। तभी पास गए व्यकित ने उसे रास्ता सुझाया था,

"भाई साहब आपका काम ऐसे नहीं होने वाला।" इस पर निकक्‌ू ने तुरन्त मुंह खोला था,

"----तो फिर कैसे ?"

"पटवारी की जेब गर्म करके।"

आखिर थक हार कर निक्कू को भ्रष्ट तरीके का ही सहारा लेना पडा था। अब निक्कू कभी जमाबन्दी को कभी ततीमें को पलट रहा था और अन्दर ही अन्दर जेब से निकले पांच सौ रुपयों का गम भी खाए जा रहा था।

क्या समय आ गया है, आज इन्सान तो शायद शक्ल के ही रह गए हैं, यदि कोई है तो उन्हें ढूंढना शायद भगवान को पाने जैसा होगा। धर्म-कर्म शब्द तो मानों बेमानी हैं। शायद धोखा घड़ी से कमाया पैसा ही आज के इनसान की पहचान बन कर रह गई है। खैर अब निक्कू का अगला कदम था घर का नक्शा पास करवाना। ढेरों प्रमाण पत्र, शपथ पत्र महीनों की मेहनत आखिर निक्कू दस्तावेज तैयार करवाने में कामयाब हो चुका था। फिर क्या था अब दस्तावेज नगर नियोजन विभाग के कार्यालय में जमा हो चुके थे, लेकिन विभाग की आपत्ति पर आपति ने निक्कू को झंझोड़ कर रख दिया था। निक्कू भी हार मानने वालों में न था। अब एक दिन वह भी आया जब निक्कू के मकान का नक्शा पास हो चुका था। देखते ही देखते लोन की पहली किस्त ने दोनों को मकान बनाने में जुटा दिया था। सड़क से साईट पर रेत, बजरी, ईंटें ढोने का जिम्मा तो शायद दोनों ने ही ले रखा था। दोनों की मेहनत देख कर अक्सर मजदूर कहते,

"बाबू जी यदि आप जैसे मालिक सभी हो जाएं तो हम जैसे मजदूरों को तो भूखे पेट ही सोना पड़ेगा।"

समय बिना आहट किए बीतता चला गया और एक दिन वह भी आया जब निक्कू और गौरी का मकान बनकर तैयार हो गया था। घर छोटा जरूर था परन्तु, था बहुत सुन्दर।

घर तो बना लेकिन अभी सर पर बहुत देनदारियां बाकी थीं और दूसरी तरफ सेवानिवृत्ति निक्कू को अन्दर ही अन्दर डरा रही थी। बची देनदारियां, बच्चों की शादी-ब्याह शायद अब सेवानिवृत्ति पर मिलने वाली रकम पर ही निर्भर थी।

चिन्ता में डूबे एक दिन निक्कू के मन में विचार आया,

"क्यों न दो कमरे किराए पर दे दिए जाएं ?"

शायद चिन्ता को कुछ विराम तो लगता। गौरी ने भी झट से हां में सिर हिला दिया था परन्तु बच्चे इस निर्णय से खुश न थे। किराए पर मकान देना अब निक्कू की मजबूरी बन चुकी थी, लेकिन अब किराएदार कहां से कब आएगा कौन होगा, इसका अन्देशा निक्कू को न था। निक्कू का घर बाजार से लगभग 15 किलोमीटर दूर था, कोई आता भी तो कैसे ? फिर भी निक्कू नें उम्मीद बनाए रखी थी। काफी अरसा इन्तजार में बीत चुका था। अभी तक तो किसी ने भी दस्तक नहीं दी थी। मामला जान-पहचान में भी उठाया परन्तु कोई नहीं आया। रिश्तेदार, दोस्त एक कान से सुनते, दूसरे से निकाल देते। यहां किसको किसकी पड़ी।

आज का इनसान तो शायद अपना लाभ ही देखता है। दुखियों का सहारा बनते बहुत कम लोग देखे हैं। निक्कू के बारे में क्यों कोई सोचे ? दोनों थक हार चुके थे। मायूस बैठे एक दिन बेटी कहती,

"-----पापा-पापा कमरा किराए पर नहीं देना। बड़ा मकान तो हमारे पास है नहीं।"

बच्चे को क्या मालूम अभी निक्कू के सर पर कितनी देनदारियां बाकी थीं। बेटी को दिलासा देते हुए निक्कू कहता,

"बेटी तेरा भाई जब कमाने लग जाएगा तब मकान खाली करवा देंगे।"

सोचते विचारते काफी अरसा बीत चुका था। एक दिन गौरी का भी दिमाग चला,

देखो जी आप एक इश्तहार लग दो, 'मकान किराए के लिए खाली है' कोई न कोई आते-जाते जरूर पढ़ेगा।

निक्कू को भी सलाह अच्छी लगी। मकान के गेट के साथ लगती सड़क थी। निक्कू ने भी पोस्टर खिड़की के शीशे पर चिपका दिया था।

गौरी दिन भर कभी इश्तहार को देखती तो कभी एक-टक सडक पर चलते राहगीरों को। शायद कोई आए परन्तु प्रतिदिन निराशा ही हाथ लगती। ऐसे ही निक्कू भी सुबह शाम पोस्टर देखता और रोज की भांति कार्यालय यह सोच कर निकलता, शायद आज शाम कोई समाचार जरूर मिले परन्तु फिर भी ढाक के तीन पात वाली कहावत सामने आती। किराएदार तो नहीं परन्तु एक कुत्ते का गेट के पास आना अकसर शुरू हो चुका था। वह गेट के पास आता, एक टक इश्तहार को देखता जैसे मानों पढ़ रहा हो, कि मकान किराए के लिए खाली है। फिर दूसरे ही क्षण उसकी आंखें निक्कू पर टिकती। उसके रोज के आने जाने से अब निक्कू की भी दिनचर्या बन चुकी थी। वह भी कुत्ते के आते ही गेट के पास अकसर पहुंच जाया करता था। किसी दिन बदकिस्मती से यदि कुत्ता नहीं आता उस दिन निक्कू भी मायूस सा रहता। कुत्ता इतना घुल मिल चुका था कि निक्कू से प्रतिदिन सुबह गेट के पास आए बिना नहीं रहा जाता था। निक्कू अकसर रात की बची रोटी कुत्ते को देता। वह बड़े प्यार से रोटी खाता और फिर मानो निक्कू का धन्यावाद करता, इर्द-गिर्द घूमता। उछलता कूदता। गोल-गोल चककर लगता कभी गोल-गोल पूंछ हिलाता। कभी चूं-चूं करता तो कभी पांव को चाटने लगता कभी पंजे छाती तक पहुंचाता तो कभी दोनों पांव खड़े हो जाता। इस उछल-कूद में अकसर निक्कू के कपड़े भी गंदे हो जाते, तब गौरी लाल पीली हो उठती कहती,

"पता नहीं क्या हो गया है आप ने तो किस गली के कुत्ते को मुंह लग रखा है"

इस पर निक्कू तपाक से बोल उठा था, "गौरी इसे कुत्ता नहीं आज का इनसान कहो। शायद इनसान आज जानवर बन गए हैं जो एक दूसरे को नोचने में लगे हैं। इस कुत्ते का प्रेम तो निष्काम है। इसे कुछ दूं चाहे न दूं लेकिन यह मिलने जरूर आता है और हां तू घबरा मत, तुझे मैं रोटी बनाने को नहीं कहूंगा हां इसे मैं अपने हिस्से की रोटी जरूर दूंगा।"

यह सब सुनने पर गौरी ने भी गुस्से में नथुनों को ऊपर चढ़ा लिया था। गाौरी अकसर रोटी गिनकर जो पकाती थी और पूछती आज किसको कितनी रोटी खानी है ?

मुश्किल तब होती जब कोई मेहमान घर पर आता। तब गाौरी अन्दर ही अन्दर तमतमाती जलती भूनती और फिर मजबूरन मेहमानबाजी में जुट जाती।

आज फिर सुबह हुई थी। बाहर देखा तो दोस्त गेट खटखटा रहा था। निक्कू भी तुरन्त भागा उतने में गौरी की आवाज गूंजी,

"कहां जा रहे हो जी"

"पता है, फिर भी पूछ रही हो देखती नहीं गेट के पास मेरा दोस्त आया है।"

"दोस्त नहीं कुत्ता कहो।"

इस पर निक्कू गुस्से हो उठा था और फिर गाौरी पर तुरन्त बरस पड़ा था,

"कुत्ता मत कहना।। यह मेरा दोस्त डबलू है , आज के बाद नाम से पुकारना समझी।"

"ठीक है जी, गुस्सा मत करो आप। मैं समझ गई यह डबलू है"

नोक-झोंक जब खत्म हुई तो निक्कू भी अपने दोस्त डबलू के साथ उछल कूद करने में मस्त हो चुका था और किराएदार न मिलने का गम क्षण भर के लिए फिर भूल बैठा था। निक्कू का दोस्त शायद आजकल के कलयुगी इनसानों से अच्छा था। डबलू निक्कू के दुख में दुखी होता और खुशी में खुश। सदैव जैसे निक्कू का भला चाहता हो। बदले में रोटी का एक टुकडा नसीब हो या न हो। खाली पेट को अक्सर दिलासा देता और कहता, "तू चिपका रह" और सदैव मालिक को दुआ ही देता। ऐसा विचित्र था डबलू का प्यार। पता नहीं किस जन्म का सम्बन्ध था इन दोनों में। यह डबलू निक्कू का तो था नहीं फिर भी यह अकसर रोज सुबह गेट के पास आता जरूर। फिर पूंछ हिला-हिला कर हेलो हाय करता, फिर निक्कू का हाल-चाल पूछता और फिर शिमला की वादियों मे कहीं गुम हो जाता। जिस दिन डबलू न आता उस दिन निक्कू उदास हो जाता। कुल मिला कर अब डबलू को देखना, उसे रोटी देना उसके साथ खेलना-कूदना निक्कू की दिनचर्या बन गई थी। दूसरी तरफ गौरी सुबह शाम रसोई के काम में व्यस्त रहती। निक्कू कभी डबलू को देखता तो कभी आते-जाते लोगों को। शायद कोई भूला भटका किराए के लिए मकान की बात करता परन्तु ऐसा कुछ हुआ नहीं था।

सोच विचार में पडा अचानक एक सुबह निक्कू ने अपनी दुविधा डबलू से सांझा कर डाली थी। रिश्तेदार, दोस्तों को तो बहुत बार बोल बैठा था, कोई लाभ न हुआ था। अब डबलू के पंजे हाथ में पकडे निक्कू कुछ यूं बड़बड़ाया था,

"यार डबलू कोई किराएदार तो ले आ। यहां तो घर का खर्चा चलाना बहुत मुश्किल हो गया है। दोस्त मैं भी तेरी तरह सारी उम्र पेट काटता ही रह गया और मेरे भी कई ख्वाब थे, बहुत कुछ करना चाहता था। मन की वो छोटी-छोटी खुशियां भी मैं पूरी न कर सका और अब शादी के बाद तो बस बच्चों की खुशियां ओर इस मकान बनाने में हम दोनों का जीवन निकल गया। यार अब तो बच्चों की पढ़ाई , उनकी नौकरी, शादी-ब्याह तक ही सोच सिमट कर रह चुकी है लेकिन यह सब भी कैसे करूं। किराएदार पर उम्मीद टिकी थी परन्तु यहां तो कोई आ नहीं रहा है।। यार डबलू कोई रास्ता तो सुझा।"

इतने में गौरी आई और निक्कू के सारे तार झिझोडते हुए तुरन्त बोल उठी,

"ए जी, किससे बात कर रहे हो ?"

"तू देखती नहीं अपने दोस्त डबलू से।"

"तुम्हारा तो दिमाग फिर गया है, सुबह शाम डबलू-डबलू। ये कुत्ता क्या अब किराएदार लाएगा?"

"देखो मेरे दोस्त को कुत्ता मत कहो। कितनी बार मैंने तुझे टोका है।" निक्कू एक बार फिर अपनी पत्नी पर भड़क उठा था।

"ठीक है, गलती हो गई माफ कर दो यह तो आपका दोस्त डबलू है। अब तो शायद आपका दोसत ही कुछ करेगा।" और गौरी भी तमतमाती हुई रसोई की तरफ यह सोचते चली जा रही थी कि किराएदार तो कोई आया नहीं परन्तु निक्कू के कपड़े धोने का काम उसे जरूर पड़ गया था क्योंकि अकसर डबलू के पंजे कमीज में दाग धब्बे जरूर लग देते थे।

समय बिना आहट किए सरकता गया और फिर एक सुबह आई जब निक्कू की दशा दिशा शायद बदल चुकी थी। गौरी की वह वाणी शायद डबलू ने सुन ली थी, "अब तो शायद तुम्हारा नया दोस्त ही कुछ करेगा।"

गौरी का यह उलाहना निक्कू के लिए वरदान सावित हुआ था। सुबह-सुबह हैरान कर देने वाली घटना जो घटी थी।

एक आदमी हांफता-हांफता अपनी जान बचाता, गेट के अन्दर घुस आया था और जोर-जोर से बचाओ-बचाओ चिल्ला रहा था। शोर सुनते ही निक्कू भी तुरन्त बाहर आया तो देखा डबलू ने उस आदमी को भगाया हुआ था। आगे-आगे आदमी तो पीछे-पीछे डबलू। गेट के अन्दर आदमी को पहुंचाने के बाद डबलू के पांव अब थम चुके थे और अब उस आदमी की सांसे भी थमने लगीं थी। निक्कू को हालात समझने में देर न लगी थी। वह डबलू के पास आया देखते ही देखते डबलू ने निक्कू के आगे पीछे गोल-गोल चक्कर लगाने शुरू कर दिए थे। अब तक पास खड़े आदमी की जान में जान आ चुकी थी वह भी तुरन्त बोला,

"य-----ये क्या आपका कुत्ता है इसी ने मुझे आपके पास लाया है, मुझे लग यह काट देगा लेकिन इसने ऐसा कुछ नहीं किया। शायद इसका मकसद मुझे गेट के अन्दर लाना था।"

अजनबी की बात सुनते ही निक्कू के स्वर भी उभरे,

"भाई साहब आप जा कहां रहे हो ?"

"मैं तो मकान की तलाश में निकला हूं भाई। किराए पर मकान चाहिए था।"

सुनते ही निक्कू की तो मानों लॉटरी लग गई हो। आंखें चमक उठी थी वह भी तुरन्त बोल पड़ा, "मकान तो मेरे पास है, शायद इसीलिए डबलू ने तुम्हें यहां लाया है। मैंने डबलू को पिछले कल जो कहा था। डबलू बोल नहीं सकता तो क्या हुआ, समझता सबकुछ है। डबलू ने तो वो काम कर दिखाया जो मेरे दोस्त रिश्तेदार भी नहीं कर पाए।" डबलू के सर पर हाथ फेरते निक्कू के स्वर गूंज उठे थे।

"डबलू कौन डबलू ?"

"न---नहीं-नहीं तुम नहीं समझोगे भाई डबलू मेरा दोस्त है, जिसकी बजह से तुम मेरे आंगन में खड़े हो, नहीं तो शायद किसी और का दरवाजा खटखटा रहे होते।"

"अच्छा तो इस कुत्ते का नाम डबलू है।"

अब कुत्ता सुनते ही निकक भडक उठा था,

"भाई साहब कुत्ता नहीं कहना। यह मेरा दोस्त है इसी ने तो आपको मकान दिलाया है और मुझे चिन्ता से मुक्ति।"

दोनों के वार्तालाप में, देखते ही देखते अब तक उछलता-कूदता डबलू न जाने कहीं यकायक आई बारिश में शायद किसी दूसरे को छत तलाशने में कहीं गुम हो चुका था। समय बीतता गया, अब कई महीने बीत चुके थे। गौरी अपने को कोसती डबलू का अक्सर इन्तजार करती रहती लेकिन डबलू नहीं आया। एक दिन गौरी के मन में फिर विचार आया। उसने कमरे में पडे उस इश्तहार को फिर खिड़की के शीशे से चिपका दिया था। यह सब देखते तब निक्कू के स्वर उभरे थे।

"ये क्या गौरी इश्तहार क्यों चिपका दिया, कमरा तो अब है नहीं।"

"मैंने इश्तहार कमरा किराए पर देने के लिए नहीं लग्या है यह तो मैंने अपने दोस्त डबलू के लिए लगा है। शायद वह एक बार फिर आ जाए।"

निक्कू, "दोस्त। डबलू तुम्हारा दोस्त कब से हो गया ?"

"जब से मुझे मेरी भूल का अहसास हुआ है। काश वह एक बार आ जाता फिर मैं उसे पेट भर रोटी खिलाती और फिर उसे कभी जाने न देती।"

इश्तहार के समीप मायूस सी खड़ी गौरी की नजरें एक बार फिर अपलक गेट की तरफ जमी हुई थीं।

उप निदेशक/नियंत्रक,
राज्य सतर्कता भ्रष्टाचारोधी ब्यूरो, शिमला-171 002
मो. 0 94180 71740

कहानी

अंतर्नदी

● डॉ. शशि गोयल

नन्ही-नन्ही हथेलियों की छुअन अनुपमा को रोमांचित करने लगी। बहुत वर्षो बाद एक बार फिर बालपन का सुखद अहसास हो रहा था। मनु और विदुषी को तो कभी ऐसे अहसास से खिलाया ही नहीं। मनु और विदुषी का काम तो वह करती रही पर खिलाती दादी थी। आज उसी पायदान पर वह थी मातृत्व का एहसास तो तब पाया लेकिन व्यस्तता भी एकदम रहती कभी बोतलें उबालना ढेरों ढेरों नैपकिन धोना बार बार बदलना, 'अरे बहू देखो मुन्ने ने गीला कर लिया।' तब कहाँ ऐसा सुखद एहसास हो पाता था काम और काम दो साल बाद विदुषी होने पर तो खीझ भी बढ़ गई थी। बार बार कभी एक का काम कभी दूसरे का काम ऊपर से सास जी उन्हें पकड़ती उस समय घर के काम करते थक कर चूर हो जाती तब बच्चों को दुलारने को क्षण बहुत कम होते थे लेकिन अब छोटे मनु के रूप में जैसे कन्हैया उसकी गोद में खेल रहे हैं।

नहला-धुला कर दाई ने अनन्या को दिया दूध पीकर चंद देर अनुपमा की गोद में खेलकर नन्हा शिशु सो गया। अनुपमा ने अनन्या के पास उसे लिटा दिया, तब ही शिशु के चेहरे पर मुस्कराहट खिल गई वह बोली,'देखो देखो अनु विहाई माँ खिला रही है। कैसे हँस रहा है।' उसकी मुस्कान के साथ उनका अंतरतम का कोना कोना हँस उठा।

मनु आयेगा क्या? अनन्या से पूछा, 'घर जाकर नहाना धोना चाहती थी, अस्पताल में लाख नहाने को मिल जाता था अटैच बाथरूम था परंतु जैसे मन भरता नही था लगता था जैसे मैल की एक परत चढ़ गई हो। घर पर आराम से नहा लेती थी।

'पता नहीं माँ हो सकता है सीधे ऑफिस चले जाये अभी तक आये नहीं ग्यारह बज रहे है।' क्या खाया होगा, घर चली जाती तो कुछ खाना बना लाती, कल तो छुट्टी मिल ही जायेगी। अनुपमा असहज सी हो उठी, यहीं नहाना पड़ेगा, पूजा आज भी रह जायेगी कल तो सुबह ही छुट्टी मिल जायेगी फिर कोई परेशानी नहीं।

'न हो माँ ,अभी तो सो रहा है। नर्स है ही कोई परेशानी नही है आप घर हो आइये।' अनन्या की बात सुन जरा सोच में पड़ गई अनुपमा अकेले जाने का मतलब है खटरखटर रिक्शे में जाना एकतरफ के पन्द्रह रुपये ले लेगा अभी आठ दिन हुए है आये ढाई हजार रुपये खर्च हो गये, अस्पताल का खर्च तो खैर मनु ही देगा पर जरा-जरा कर कितने खर्च हो गये, बहू से या मनु से कहने का मन नहीं हुआ। एकाएक बहू को तकलीफ हो गई तो मनु घबरा उठा था, 'आज दिखाकर लाया हूँ ऑपरेशन करेंगे रिस्क नहीं लेना चाहते। बच्चे के गले में नाल लिपटी है डॉक्टर कह रही है अगर कस गई तो बच्चे को खतरा हो सकता है।' वैसे पन्द्रह दिन थे उसने कोई तैयारी भी नहीं की थी, न मेवा मंगाई न लडडू आदि बनाये थे। विदुषी पर घर छोड़ना पड़ेगा कर तो लेगी पर दिक्कत हो जायेगी, खैर यह भी जरूरी है। पति सुबोध बाबू और बेटी विदुषी को अनेकों हिदायतें देकर बहू की जांच करने आयी थी।

मन मसोसे अस्पताल में नहाकर नीचे कैंटीन में चाय पीने चली गई बहू के लिये तो खाना सब अस्पताल से ही मिलता था। कल सुबह ही टांके कट जायेगे। अपने घर चले जायेंगे, कहूँगी बहू से कुछ दिन अपनी माँ को बुला ले, कितने दिन रहूँगी। वहाँ भी परेशानी होगी। सोचती ऊपर आई तब तक मनु आ चुका था। हाथ में टिफिन था बाई ने जो कुछ भी बनाया होगा अब वो यही खाना पड़ेगा। चौंक कर कान्हा रोने लगा था उसने गीला कर लिया था, लंगोटी बदलकर उसे मनु की गोद में दे दिया।

'तूने खाना खा लिया, मुझे ले जाता मैं कुछ बना देती, पता नहीं क्या बनाकर दिया।' मनु की चिंता हमेशा रहती थी बहू पर भी उन्हें विश्वास नहीं था कि वह उसे ठीक से खिला पा रही होगी। कभी भी मनु की उसे पसंद की कोई चीज बनाती तो अनमनी हो उठती थी। मनु को बहुत पसंद है पता नहीं अनन्या कभी बनाती होगी कि नहीं। कहाँ बनाती होगी भागदौड़ तो इतनी रहती है। मना किया था क्या करेगी सर्विस करके पर पता नहीं कैरिअर-कॅरिअर का हर समय रोना। लेकिन जब स्वयं विदुषी को यह कहते पाती मम्मी मुझे तो कोई लाइन पकड़नी है तो चुप हो जाती। जब अपनी बेटी कह रही है तो सही ही होगा नये जमाने की बातें हैं।

'माँ बिलकुल चिंता मत करो मैं अच्छे से खा कर आया हूँ अभी तो ऑफिस ही जा रहा हूँ अब सुबह जल्दी आऊँगा रिलीव के पेपर शाम को ही बनवा लेना बिल सुबह भर दूँगा। जिस तेजी में मनु आया था उतनी ही तेजी में चला गया।'

'कल सुबह ही आप चली जायेंगी' सुबह से शाम वाली नर्स आया सफाई कर्मी सब आकर खड़े हो गये, माँ जी इनाम इनाम.

. अरे सुबह जायेंगे तब सुबह ही तो दूँगी। अनुपमा घबरा गई उनके पास अधिक रुपये थे नहीं, छिटपुट-छिटपुट करते ढाई हजार खर्च हो गए। पाँच हजार लेकर चली थी। सुबोध बाबू से मांगे थे तो उन्होंने कह दिया बहू बेटे कमा रहे हैं वो खर्च करेंगे तुम्हें क्या जरूरत है अरे अपनी अपनी मत चलाना। पर जरा जरा सी बातों के लिए बहू या बेटे से मांगना अच्छा नहीं लग रहा था। बहू ने कभी आगे बढ़कर नहीं कहा कि मांजी इसमें से खर्च कर लेना या अपने आप नहीं दिया अब भी चुपचाप लेटी मुस्कराती उन्हें मांगते देखती रही।

वाह! मांजी अरे पहली बार दादी बनी हो दिल खोल कर दो ऐसे ही नहीं मानेंगे' सुनकर घबरा उठी। सात लोग थे खड़े है सात आठ सुबह वाले और न जाने कितने निकल पड़ेंगे।

'अभी तो मेरे पास है नहीं, वे हकला उठी बेटा चला गया वो आयेगा' कहकर अनन्या की ओर देखा तो वह हँसते हुए बोली, 'माँ दादी आप बनी हो आप जानों मैं दादी बनूँगी तब मैं दूँगी कहकर कान्हा को चूम लिया।

'अब माँ जी कंजूसी मत दिखाओ' सारा स्टॉफ पीछे पड़ गया। पच्चीस पच्चीस रुपये सब ले लो कहते उन्होंने सौ सौ के नोट निकाले तो बुरा सा मुँह बना दिया।

'अरे मांजी पच्चीस रुपये तो गरीब गुरबा दे जाते हैं, तुम्हारे तो पहला खुशी का काम हुआ है तुम्हें क्या कमी है। कम से कम सौ सौ दे दो। ये तो हम दो के हुए' ' अच्छा चलो पचास पचास ले लो वास्तव में मेरे पास नहीं है'। देकर उन्हें टरकाया कैसे बहू से कहें कि उनके पास कहाँ से आये न सुबोध बाबू ने दिये न बेटे ने काम सब करने हैं घर पर जाकर भी यदि मेवा वगैरह मंगानी पड़ी तो उनके माथे पर पसीना छलछला आया चलो मनु से ही बात करूँगी।

सुबह शीघ्र ही सब सामान बाँध लिया। मनु के आते ही मनु पर बिल भरना छोड़ , अनन्या को ले गाड़ी में जा बैठी रात का स्टॉफ मांग रहा था। तो उन्होंने मनु की ओर इशारा कर दिया। मनु ने सबको सौ सौ रुपये दिये तो स्टॉफ दुआएँ देता चल दिया। अनन्या ने जिस ढंग से उनकी ओर देखा अंदर तक कट गई। अपमान से चेहरा उतर गया पर मुँह घुमा लिया। मन ही मन सोचने लगी। कहा था सुबोध बाबू से कुछ रुपये दे दो नहीं दिये अपने जुड़े जुड़ाये पाँच हजार डाल लाई थी। न लाती तो कितनी बेइज्जती झेलनी पड़ती। अधिकतर सुबोधबाबू से रुपये पैसे पर तकरार हो जाती थी रोज ही कभी किसी के लिये कभी किसी के लिये उन्हें पैसे मांगने पड़ते थे जिसके लिये झगड़ा होता पर उस झगड़े में कभी उन्हें अपमान महसूस नहीं हुआ।

आज पैसे भी नहीं मांगे पर अपमान महसूस किया है क्या बहू बेटे का पैसा उनका नहीं है।

दसवीं के बाद ही आगे पढ़ने होस्टल में चला गया तब से बाहर ही बाहर रहा छुट्टियों में आता तो जैसे मेहमान हो उसकी खातिर ही की थी। सुबह से शाम तक उसका मुँह ही देखती रही, कभी उसकी पसंद का खाना बना कर खिलाती कभी मनपसंद जगह घुमाती वे हफ्ता दस दिन मनुमय हो जाते थे। पढ़ते-पढ़ते ही कैम्पस इंटरव्यू होकर नौकरी पर चला गया, नौकरी पर जाने के बाद ही कभी कभी आता साल बीतते न बीतते अपनी कंपनी में काम करने वाली लड़की की फोटो उनके पास भेज दी। 'कुछ कहना बेकार है, जैसी उसकी इच्छा है करो ' सुबोध ने एक तरफ फोटो रखते हुए कहा।

'इसमें है क्या ऐसा,' क्षुब्ध सी अनुपमा ने फोटो लगभग पटकते हुए कहा। शायद शब्दों में भी कुछ कटुता आ गई थी तब ही तो मनु ने भी हंसी-हंसी में अनन्या से कह दिया था, 'अनु मम्मी तो पता है मेरे लिये बहुत सुंदर लड़की देख रही थीं तुम को तो ना पसंद कर दिया था' मनु तो हो-हो करके हंस दिया था पर अनन्या की निगाहों में जो कुछ उन्होंने देखा उन्हें भुलाना असंभव हो गया था जब तब बिजली की वह कौंध उन के मन पर गिर जाती। अनन्या के मन में एक गांठ आ गई थी। और अपना विरोध उनकी हर बात को काटने से करना शुरू कर दिया था। अगर कुछ दिन रहने जाती मनु के पास तो मन होता अपने हाथों से कुछ बना कर खिला दे जो भी बना कर रखती न खुद खाती न मनु को देती, 'मनु को मेरे हाथ के दाल-बड़े बहुत पसंद हैं, आज दाल बड़े बनायेंगे ' वो सब तैय्यारी कर के रखती, वह रसोई में ही पड़ी रह जाती, किसी न किसी काम से मनु को ले जाती, 'मम्मीजी आप खाना खा लेना जरा देर हो जायेगी जरा काम है' कहकर चली जाती। बहुत देर तक तो वे और सुबोध इंतजार करते' आ जायें तो साथ ही खालेंगे गरम गरम दाल-बड़े उतर जायेंगे। नींद हावी होने लगती तो लगता खा कर सोया जाये। अधिकतर उनका बनाया सामान अनन्या फ्रिज में रखना भूल जाती। अंदर ही अंदर प्यार पर उदासीनता की परत चढ़ती चलीं गईं।

मम्मी जी, जरा देखिये यह चुप ही नहीं हो रहा है' कहते अनन्या ने कान्हा को पकड़ाया और वह उनकी गोद में आते ही चुप हो गया तो खिसिया कर अनन्या बोली 'ये लीजिये मैं तो काट रही थी न, मिल गया लडडू जो चुप हो गया, बदमाश कहीं का' कहकर उसके गाल नोंच लिये। कान्हा ने अनन्या की ओर देखा और रोने के लिये होंठ सिकोड़ लिये

'न न न' कहकर अनुपमा ने उसका चेहरा अपनी ओर किया तो उसका रोना रुक गया और दोनों हाथ फैलाते हंस दिया।

'अब यह नहीं जाने देगा वापस अब तो दादा को भी आना पड़ेगा' कहकर अनन्या हंसी तो जैसे सारी परतें पिघल पिघल कर हटती चली गईं।

3.28 ए/2, जवाहरनगर रोड
खंदारी चौराहा, आगरा-282008

व्यंग्य

अब मैं निश्चिंत हूं

◆ अशोक गौतम

जिंदगी भर गधे की तरह दौड़ते हुए घुटनों में दर्द हो जाने तक मैंने और कुछ नोट किया हो या न, पर एक बात जरूर नोट की कि जिंदगी में किसी चीज की हमें जरूरत पड़े या न पर झूठ बोलने की जरूरत हर दूसरे कदम पर पड़ती है। और तब भगवान को हाजिर नाजिर मान पैदा होने से पहले सच की कसम खाने के बाद भी सच को गले से पकड़ जेब में डाल झूठ बोलना ही पड़ता है। सफेद झूठ बोलते हैं वे, जो ये शेखी बघारते हैं कि वे जिंदगी में सबकुछ बोलते हैं, पर अपनी लाइफ में झूठ नहीं बोलते।

अपन से जब तक झूठ बोला गया मैंने झूठ बोलने के लिए किसी की सहायता नहीं ली। वैसे एक बात कहूं, सच कहने के लिए किसी की सहायता लेने की जरूरत पड़ती भी नहीं। अकेले ही सच कहा जा सकता है। यह दूसरी बात है कि दूसरा उसे सिरे से खारिज कर दे तो कर दे और आप सच का तो सच आपका लटका मुंह देखता भर रह जाए।

कल मैं रोज की तरह झूठ बोल रहा था कि अचानक मेरे झूठ को पता नहीं क्या हुआ कि वह बेहोश होकर गिर पड़ा। पता नहीं कौन भगवान का प्यारा मेरे झूठ को बेहोशी की हालत में अस्पताल ले आया। भगवान उस देवता का भला करे। जब मेरे झूठ को होश आया तो वह अस्पताल में डॉक्टर के सामने लेटा था। पसीने से तर बतर।



डॉक्टर ने मेरे झूठ को झूठा इंजेक्शन लगाने के पांच मिनट बाद पूछा, ' अब कैसा फील कर रहे हो डियर?'

'अब - कुछ ठीक लग रहा सर! पर मुझे हुआ क्या था डॉक्टर साहब? पहले तो ऐसा कभी नहीं हुआ मेरे साथ?'मेरे झूठ ने अपने सूखे होंठों पर जीभ फेरते पूछा।

'होना क्या, तुम्हें झूठ बोलते- बोलते अब कमजोरी आ गई है। या कि उम्र का तकाजा कह लीजिए इसे।'

'पर डॉक्टर साहब..... मैं तो झूठ को ताकतवर बनाए रखने वाले सारे टॉनिक समय पर रेग्युलर लेता हूं!'

'लगातार झूठ बोलते रहने से एक उम्र के बाद टॉनिक भी बेअसर हो जाया करते हैं डियर। पर चिंता की कोई बात नहीं।'

'पर???' डॉक्टर के साथ होने पर भी झूठ परेशान हो उठा तो डॉक्टर साहब ने उसकी परेशानी को भांप कहा,' कोई बात नहीं। ये विटामिन लिख रहा हूं। झूठ को ताकत देने में अच्छा रिस्पांस है इनका। जिसने भी खाए उनका झूठ समाज में सरपट दौड़ रहा है, भले ही उनकी टांगें जवाब दे गई हों। पर मेरी हिदायत है कि अब झूठ बोलने के लिए बीच में जब हैल्प की जरूरत पड़े तो किसी की भी हैल्प ले लिया कीजिए। इसमें शर्म की कोई बात नहीं होती। झूठ के लिए अच्छा रहेगा। जब जिंदगी में झूठ के बिना गुजारा नहीं तो झूठ के लिए सहारा लेने से शरमाना क्या? सॉरी अगर मैं आपकी इगो को हर्ट कर गया हूं तो। एक डॉक्टर के नाते मेरी भी कुछ सोशल रिसपांसिबिलिटिज हैं। न चाहते हुए भी निभानी पड़ती हैं। बाकि मानना, न मानना तो पेशेंट के इगो पर डिपेंड करता है।'

और उस दिन मैंने एक बात गांठ बांध ली कि और मसले पर किसी की सहायता लूंगा या नहीं, पर जब झूठ लड़खड़ाने लगे तो गधे की सहायता लेने से भी हिचकिचाऊंगा। क्योंकि झूठ है तो लूट है।

और अचानक मुझे कल झूठ बोलते- बोलते लगा कि मेरा झूठ चक्कर सा खा रहा है, तो मैंने तत्काल पास खड़े व्यक्ति से निस्संकोच सहायता लेने के इरादे से पूछा, 'भाई

कविता

सदमे

◆ हरीश कुमार 'अमित'

होती ही रहती है ज़िंदगी में
सदमों से अचानक मुठभेड़
कोई सदमा
कब, कहां, कैसे
आ लिपटे हमसे -
कहा नहीं जा सकता
कुछ भी
लगता है शुरू--शुरू में
हरेक सदमा
बड़ा ही भयानक
बहुत ही भयावह
मगर
झेल ही लिया करते हैं हम



ज्यादतर सदमों को
किसी-न-किसी तरह
और
जीते रहते हैं
उन सदमों की चुभन और जलन को
महसूस करते हुए
हो सकता है यूं भी कि
कुछ अरसे बाद
लगने लगे हमें ऐसा कि
समझे थे हम जिन्हें सदमा
असल में
वे कोई ऐसे भयानक थे ही नहीं
था फिर
लग सकता है हमें ऐसा भी कि
लायक ही नहीं थे वे
सदमा कहलाए जाने के।

304, एम.एस. 4, केंद्रीय विहार, सेक्टर 56, गुड़गांव, हरियाणा-122 011, मो. 0 98992 21107

साहब! मुझे अपने झूठ के लिए आपके सहारे की सख्त जरूरत है इस वक्त। हैल्प मी प्लीज!' इससे पहले कि मेरे सहायता मांगने का वाक्य पूरा होता उन्होंने मेरे झूठ को पूरी सपोर्ट देते कहा,' कहो बादशाहो! अपने झूठ को किस टाइप की हैल्प चाहते हो ? एक सौ आठ को फोन करूं क्या??'

'नहीं! पर तुम गिरते झूठ को ठीक से सहारा दे लेते हो क्या?' शक सा हुआ। तो मेरे पूछने पर वे बिगड़ते बोले, 'हद है साहब! झूठ न बोलने वाले होते तो क्या आपके गिरते झूठ को गिरते देख सहारा देने आगे आता क्या? झूठ-झूठ मौसरे नहीं, सगे भाई जो ठहरे। हम सबकुछ गिरते देख सकते हैं, पर झूठ को बिलकुल नहीं। रही बात हमारी सो, हम तो पैदाइशी झूठे हैं साहब! झूठ इस तरह बोलते हैं कि सच तो सच, झूठ भी हमारा मुंह ताकता रह जाता है कि बंदा बोल गया तो क्या बोल गया? अब आप पूछ ही रहे हो तो.... अपने मुंह मियां मिट्ठू बनना मेरी आदत तो नहीं, जब बात अपने झूठ की प्रतिष्ठा की हो तो बता दूं कि अब तो मेरे झूठ पर मेरा सच भी आंखें मूंदे विश्वास करता है।'

'तो इस वक्त मेरे चक्कराते झूठ को तुम्हारे झूठ के सहारे की सख्त जरूरत आन पड़ी है बंधु!'

'तो बंदा हाजिर है बादशाहो। सोच लो मुझे भगवान ने तुम्हारे झूठ को सहारा देने ही मुझे यहां भेजा है,' कह बंदे ने बड़े प्यार से मेरे चक्कराए झूठ का सिर पकड़ा तो मैंने तो मैंने, मेरे गिरते- गिरते बाल झूठ ने मुझसे भी लंबी राहत की सांस ली।

' माफ करना डियर ! न चाहते हुए भी पूछना पड़ रहा है, तुम कितना झूठ बोल सकते हो??' सोचा, सहायता लेने से पहले बंदे का स्तर तो एक बार चैक कर लूं। ऐसा न हो कि अपने गिरते झूठ को इसका सहारा लेने की उम्मीद में इसके झूठ को ही सहारा न देना पड़ जाए कहीं।

' मेरा झूठ-झूठ की किसी भी हद तक जा सकता है सर! मैंने आज तक झूठ बोलकर बंदे तो बंदे, भगवान तक का मजे से उल्लू बनाया है। पर क्या मजाल जो आज तक मेरे झूठ पर किसी को कोई शिकायत हुई हो। आपत्तियां हुईं हों तो होती रहें। समाज में आपत्तियों को पूछता ही कौन है? चालीस साल सफल झूठ बोलने का अनुभव है मेरे पास। प्रमाणपत्र बताऊं क्या..... '

'नहीं! नहीं! मैंने तो बस यों ही पूछ लिया था मित्र! तुम्हारे हिम्मत से कहने का स्टाइल ही इस बात का सबूत है कि तुम झूठ के मामले में पहुंचे हुए सिद्ध हो , निष्णात हो, पारंगत हो.... ' उस वक्त मैं बंदे के चेहरे पर आए झूठ के नूर को देख सहम सा गया। बंदे के चेहरे पर क्या खतरनाक तेज! सच कहूं उस वक्त मेरी आंखें चौंधियाने लगीं तो मैंने झठ से अपनी आंखों पर जेब से निकाल काला चश्मा लगा लिया।

तब पहली बार फील हुआ कि मुझे आज झूठ का हाड़ मांस का बंदा नहीं, झूठ का खुदा मिल गया दोस्तो। अब मेरा झूठ कहीं भी, कभी भी गिर नहीं सकता। हारा तो वह खैर किसी से नहीं आजतक।

गौतम निवास, अप्पर सेरी रोड, नजदीक मेन वाटर टैंक, सोलन, हि. प्र.-173212, मो. 0 94180 70089

समीक्षात्मक लेख

समकालीन हिंदी कविता के असरदार हस्ताक्षर सुरेश सेन निशांत : व्यक्तित्व एवं कृतित्व

● कंचन शर्मा

समकालीन हिंदी कविता में अपनी उपस्थिति दर्ज करने वाले हिमाचल के साहित्यकारों में 'सुरेश सेन निशांत' एक ऐसे कवि हैं जिन्होंने राष्ट्रीय स्तर पर अपनी आभा बिखेरी है।


छाया : एस.आर. हरनोट

प्रफुल्ल स्मृति सम्मान, सेतू सम्मान, राष्ट्रीय सूत्र सम्मान व हिमाचल अकादमी के साहित्य पुरस्कार से सम्मानित सुरेश सेन निशांत जी की कविताओं में गहन अनुभवों का विस्तृत फलक है। अपनी सहज और सरल अभिव्यक्ति से सुरेश सेन निशांत ने समकालीन हिंदी कविता के बहुल परिदृश्य में स्वयं को असरदार तरीके से स्थापित किया है। कितने ही कवि होंगें जिन्होंने अपनी जमीन से जुड़कर कविताएं लिखी होंगी या फिर अपनी आस-पास की पीड़ाओं रूपी बीज से अंकुरित कविताओं को पुष्पित व फलित किया होगा। इनकी कविताओं में बंधे-बंधाये सैद्धांतिक विमर्श नहीं अपितु दैनिक अनुभवों का बिंव नजर

आता है। एक ओर राजेश जोशी जी कहते हैं कि निशांत की कविता हमारे समय के बड़े सवालों को उठाती है वहीं दूसरी ओर विजेन्द्र जी के कथानुसार निशांत अपनी कविता के लिए अपनी चित्त

भूमि को उसी तरह कमाते हैं। जैसे किसान

अपनी धरती को। निशांत जी की कविताएं अपने

आस-पास के परिवेश से जुड़ी होकर भी

वैश्विक प्रतीत होती हैं। उनकी कविताओं में एक बात जो मुझे बहुत अच्छी लगी है कि उन्होंने अपनी कविताओं में शब्दों की शोभा यात्रा नहीं सजाई है। यही वजह है कि इनकी कविता को सामान्य पाठक भी सहज ही समझ लेता है।

निशांत जी के दो काव्य संग्रह हैं। 'वे जो लकड़कारे नहीं हैं' और 'कुछ थे जो कवि थे'। अपने पहले काव्य संग्रह 'वे जो लकड़हारे नहीं हैं' के लिए इस वर्ष निशांत जी को हिमाचल अकादमी साहित्य पुरस्कार की घोषणा हुई है।

इस संग्रह की कविताओं के बिंब सहज है और मर्म पर सीधे असर करते हैं। ''ये जो लकड़हारे नहीं हैं'' की ये पंक्तियां यह जो स्थानीय अखबारों में / छपा है फोटू ध्वन माफिया के पकड़े हुए गुर्गों का/उन्हें नहीं पता/कहाँ जाते हैं /इन पेड़ों के कीमती जिस्म.../ वे तो बस/काटते हैं पेड़

यह कविता वन विभाग, पुलिस व खोखली न्याय प्रणाली के कड़वे सच्च को उजागर करती है। उनकी यह कविता झकझोरती है व साफगोई से अपने पाठकों से वार्तालाप करती है। यही नहीं, गरीब वन काटुओं की खामोश चीत्कार से अनेक प्रश्न उठाती है निशांत की यह कविता।

'पहाड़ की बेटियाँ' कविता में उन्होंने यह कहने की कोशिश की है कि भले ही रूपये की अंधी दौड़ में बड़े-बड़े लोग पहाड़ का हर तरह से शोषण करते हैं मगर वे बेटियां ही हैं जो 'चिपको आंदोलन' की तर्ज पर अपने श्रम से पहाड़ को रोपित करते हुए उसे हरितमान कर अपने ढंग से पर्यावरण बचाने की लड़ाई लड़ती हैं। यह अदम्य साहस पहाड़ की ही बेटियों में हो सकता है।

कविता 'गोपी ढाबे वाला' बाजारवाद पर कड़ा प्रकार करते हुए कहती है कि एक ओर जहाँ बाजारवाद ने मानवीय रिश्तों को दरकिनार करते हुए अपनी गहरी जड़े बढ़ाना शुरू की हैं वहीं दूसरी

ओर एक गरीब गोपी ढाबे वाला अभी भी मानवीय संवेदनाओं से परिपूर्ण रिश्तों को पक्का बनाए हुए है।

''खास हिदायत देकर कहा उसने/ रोटी बांटने वाले लड़के को/बाबू जी, खाना खाते हुए/पानी में नींबू लेते हैं''

और आगे चलकर 'निशांत' गोपी ढाबे वाले की इस हिदायत को माँ की भावना से जोड़ देते हैं।

''काम पर लड़की, 'पीठ' जैसी कविताएं समाज के गरीब तबके के बच्चों की पीड़ा ब्यां करती है।

''यह दस वर्ष के लड़के की पीठ है/पीठ कहां हरी दूब से सजा/खेल का मैदान है/जहाँ खेलते हैं दिन-भर छोटे-छोटे बच्चे''

गरीबी, अभाव व बदनसीबी से घिरे छोटे-से बच्चे का पीढ़ी दर पीढ़ी जीवन चित्रण दिल को झकझोर कर रख देता है।

निशांत आत्म-मुग्ध कवि नहीं बल्कि जनोन्मुखी है। वे अपने आस-पास का जन-जीवन आत्मीय भाव से देखते हैं। वे निरीह-निरन्न-निर्धन जनों के प्रति सच्ची संवेदना महसूस करते हैं। निशांत जी की कविताओं के मूल भाव में प्रेम है, करुणा है व साथ ही समाज को एक नई दिशा देने का प्रयास व अनुरोध भी।

निशांत भुटटों का जीवन भी उनके पल्लवित होने से लेकर बाज़ाार पहुँचने तक बड़ी सरलता से जी लेते हैं और भुट्टे बेचने वाली औरत के साथ उसके आठ वर्ष के बेटे की आंच में भी तप जाते हैं।

'डर' में पाठकों को आत्मबोध करवाते हुए कहते हैं कि सांप को मारने की बजाय, अगर हम अपने अन्दर बैठे डर को मारें तो जाने कितने ही सांप बच जाएगें। निशांत के मन में विषैला सांप भी निरिह प्राणी से कम नहीं।

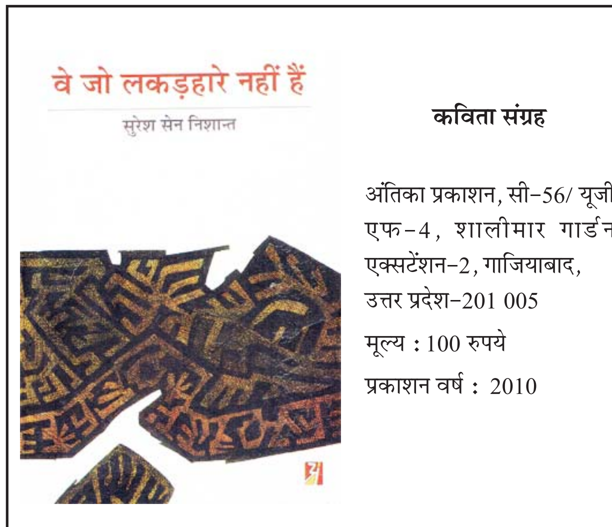
चन्द्र रेखा ढडवाल जी के कथन में निशांत ने बड़ी संवेदनशीलता से कामगीर व पहाड़ में संघर्षरत् महिला, पुरुष पर लिखा है। वे बड़ी बारीकी से औरत के घरेलू जीवन का चित्रण करके उन्हें एक ऊंची जगह स्थापित कर देते हैं।

निशांत जी की कविता 'कुछ थे जो कवि थे' दूसरे संग्रह का नाम भी इसी कविता से है। कुछ पंक्तियां सोचने पर विवश करती हैं।

''वे अमर होना चाहते थे/ इसके लिए वे प्रयत्न भी/खूब किया करते थे/वे अपनी प्रशंसा में खुद ही/बड़े-बड़े व्यक्तव्य देते/अपनी रचना को सदी की/सर्वश्रेष्ठ रचना घोषित कर देते/इस तरह की हरकतों को वे/ साहित्य में स्थापित होने के लिए/जरूरी मानते थे.....''

यह कवियों के दोहरे चरित्र को दर्शाती हुई अंतस मन की पीड़ा है जिसमें उन्हें कवि के कवित्व का भटकाव नजर आता है। यहां कवि, कविता के मूल उद्देश्य से हटकर कविता को एक ऐसे मंच की तरह मानता है जहां से वह स्वयं को कविता से भी ऊपर उठकर देखने की लालसा करता है। आज के परिदृश्य में जो लोग उलजलूल लिख रहे हैं और चर्चा में होने की चेष्टा कर रहे हैं और कहीं न कहीं पुरस्कृत भी हो रहे हैं। उन कवियों पर यह कविता स्टीक बैठती है।

इस काव्य संग्रह में औरत पर लिखी हुई निशांत जी की लगभग एक तिहाई कविताएं हैं। कविताएं चावल, तस्वीर में मां, चालीस पार जाती हुई स्त्री, मंदिर से लौटती औरतें, वह पांच पढ़ी औरत, देवी, कागज फूल बनाने वाली लड़की, वे जो थीं, बूढ़ी स्त्री, नदी पार करती लड़की, रोती हुई लड़की, पहाड़ी लड़की की हंसी निशांत जी ने ये सभी कविताएं ऐसे लिखी हैं कि कहीं कहीं पर पढ़कर मैं अवाक् रह जाती है। ऐसा लगता है मानों उस कविता के भीतर मौजूद उस औरत पात्र को उन्होंने स्वयं जिया है। वे औरत के जीवन के उस कोने पर जाकर झाँक लेते हैं जहाँ पर उसने स्वयं को समेट कर छुपा रखा है। निशांत जी औरत के खिलखिलाते हुए चेहरे के पीछे छुपी उन दर्द भरी परतों को भी उधेड़ कर पढ़ लेते हैं जहां तक वह किसी को पहुँचने ही नहीं देती।



कविता संग्रह

अंतिका प्रकाशन, सी–56/ यूजी एफ–4, शालीमार गार्डन एक्सटेंशन–2, गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश–201 005

मूल्य : 100 रुपये

प्रकाशन वर्ष : 2010

''चालीस पार जाती हुई स्त्री ने/अपनी पतंगें अपनी अल्हड़ खिलखिलाहटें/ अपने बचपन के सभी खिलौने/मन के ऐसे कोने में रख दिये हैं/जहाँ कभी-कभी ही जाती है वह/धूल बुहारने''

अपने मन के जिस कोने में एक चालीस पार जाती हुई स्त्री को भी वक्त नहीं लगता, अपने मन की अंतर्यात्रा में निशांत वहां भी बुहार लेते हैं।

नदी पार करती लड़की हमारी लचर शिक्षा व्यवस्था पर कड़ा प्रहार करती है जहाँ एक ओर तो जन-जन को शिक्षित बनाने का संकल्प लिया जाता है वहीं दूसरी ओर स्कूल जाने के लिए सुरक्षित रास्ते तक की भी व्यवस्था नहीं।

''कोक पीती लड़की' विज्ञापनों के बाजारवाद पर गहरी चोट है जहां पर जलजीरा बेचने वाले गरीब लोगों की दुकाने बंद हो रही

है।

निशांत ही की कविताएं कहीं बहुत गहरे अपने पहाड़ी अँचल में धंसी हुई है। उनमें पर्यावरण की चिंता है, पहाड़ का दर्द है और उद्योगों के चलते विस्थापितों की पीड़ा भी ''पहाड़ पर एक ओर सीमेंट फैक्ट्री लगने पर''

कविता में वे कहते हैं :-

''हम किसी ट्रक पर सेध्सीमेंट चढ़ाते या उतारते हुए मिलेंगे/ ओस की बूंदों से नहीं/सीमेंट की धूल से/भरी पड़ी होगी हमारी देहें/हम खांस रहे होंगें/डाक्टर हमारी मृत्यु का कारण/तपेदिक बतलाएगा/एक दिन''

मानव विकास की यात्रा स्वयं इनसान को कैसे लील कर रही है इसका चित्रण इस कविता में किया गया है। उसका मालिक से मजदूर हो जाना, वहाँ के वातावरण का धूसर-धूमिल होना और खास यह कि एक ओर पहाड़ जहां स्वच्छ, निर्मल वातावरण के लिए विश्व को आकर्षित करते हैं वहीं विकास की अंधी दौड़ अपने ही लोगों को अनेकों बीमारियों से ग्रस्त कर रही है। पहाड़ों के नैसर्गिक सौंदर्य को नष्ट कर रही है। पहाड़ के दर्द को निशांत ने यूँ महसूस किया है मानों वे स्वयं पहाड़ बनकर अपने साथ हुए अन्याय व अत्याचार को ब्यां कर रहे हों।

इसी तरह से निशांत कभी प्रार्थना भरे स्वर में कभी व्यंग्य में। कभी रोष में, कभी सुधार की आंकाक्षा में अपने विचारों को कविताओं की माला में सहज ही गुंथ भी लेते हैं और उन्हें सहजता से जी भी लेते हैं। छोटे-छोटे वाक्य संरचना, स्टीक शब्द चयन उनकी कविता को और भी ज्यादा पाठक के साथ जोड़ता है।

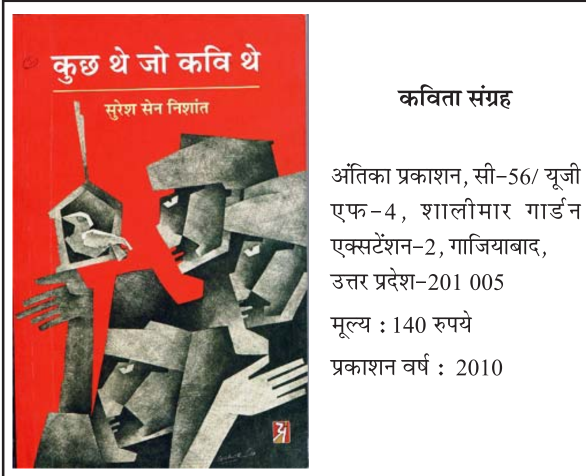
निशांत जी की कविताए अकेले होने की नहीं अपितु मित्रों के बीच जाने और मित्रों से जुड़ने की कविताएं है। राजेश जोशी जी कहते हैं कि मित्रों को याद करते हुए वह नदियों से भी बतिया सकते हैं और त्रिलोचन की कविता की सरलता की गहराई में उतरना भी सीख जाते हैं। यह मित्रता उन्हें उन बच्चों से जोड़ देती है जिनके जूते गरीबी ने चुरा लिए।

आज की टैक्नॉलजी के समय में जहाँ लोगों का पुस्तकों से मोह भंग हो रहा है। वहीं दूसरी ओर समाज का एक ऐसा वर्ग भी है, जिस वर्ग को लेकर कविताएं लिखकर पुरस्कृत हो रही हैं। उन्हें वो वर्ग पढ़ ही नहीं पाता। मगर निशांत जी की कविता तो पांच पढ़ी औरत भी पढ़ती है।

उनकी कविता ''वह पांच पढ़ी औरत' इस बात की पुष्टि करती हैं कि जिस वर्ग के लिए इनकी कविताएं लिखी जा रही हैं, उसे वो लोग पढ़ भी रहे हैं। एक ओर जहां हम उन कविताओं को बड़े-बड़े सभागार में पढ़कर बुद्धिजनों में तालियां बटोरते हैं वहीं दूसरी ओर निशांत जी कहते हैं।

''मेरे गाँव की/ उस पाँच पढ़ी औरत ने/ माँगी मुझसे मेरी कविता की किताब/किसी आलोचक को देते हुए/कभी नहीं डरा/नहीं डरा किसी कवि को भेंटते हुए/ उस पाँच पढ़ी औरत से डरा मैं/मैंने डरते-डरते दी उसे/ अपनी कविता की किताब''

सच ही है! जिन अनुभवों को उस पाँच पढ़ी औरत ने झेला है, कवि की चिन्ता और डर का कारण बनती है कि वह उन पीड़ाओं के साथ शब्दों में न्याय कर पाया है या नहीं।



कविता संग्रह

अंतिका प्रकाशन, सी-56/ यूजी एफ-4, शालीमार गार्डन एक्सटेंशन-2, गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश-201 005

मूल्य : 140 रुपये

प्रकाशन वर्ष : 2010

निशांत जी का व्यक्तित्व जितना सरल है उतनी सरल उनकी कविताएं भी हैं। उनकी भाषा किताबी नहीं बल्कि भाषाई आडम्बर से दूर जीवन को रचती हैं। उनकी कविताएं विशेष संस्कार के हेतु सचेत दिखाई पड़ती है। आम आदमी की तकलीफ, संघर्ष, बेचैनी, द्वंद्व तथा महत्त्वाकांक्षाएं निशांत के मन को गहरे छू गई हैं और वह उनकी काव्यात्मक अभिव्यक्तियों के लिए बाध्य हो जाते हैं। अहसज परिवेश में सहज होने का मार्ग निशांत भली-भांति जानते हैं। इनकी कविताएं जीवन को सुन्दर, बेहतर बनाने के लिए जागृत करती हैं। कवि आलोचक रमाकांत शर्मा के अनुसार निशांत के लिए एक अर्थ में कविता सत्य को अपनी जगह प्रतिष्ठित करने का अनवरत संघर्ष है। समकालीन राष्ट्रीय धारा में बहने वाले कवि सुरेश सेन निशांत से आज उस अमर रचना व कृति की अपेक्षा व इंतजार है जो निशांत जी को युगों-युगों तक अजर-अमर कर देगी।

सेट नं. 11, टीचर्स कॉलोनी,
समरहिल, शिमला-171 005
मो. 0 94180 58158

समीक्षा

संस्कृतियों के अपकर्ष पर कटाक्ष : शास्त्रसन्दोह

● डॉ. चेतना

पुस्तक का नाम : शास्त्रसन्दोह, लेखक : डॉ. कृष्णमोहन पाण्डेय,
प्रकाशक : समाज धर्म प्रकाशन, मैहतपुर ऊना, मूल्य : 280/- रुपये

मानव सभ्यता का अनुसन्धान करते समय जब हम विश्व के आदिम ग्रन्थ वेद एवं वैदिक वाङ्मय की ओर देखते हैं तो मानव सभ्यता किसी साँचे में ढली मूर्ति की तरह निष्कलंक दिखती है। भारतीय संस्कृति के पोषक धर्मशास्त्रीय ग्रन्थ मनुष्यों को देवता बनाने का सम्पूर्ण अभियान चलाते दिखते हैं। मानवीय सभ्यता कैसी होनी चाहिये इसका प्रत्याख्यान प्राचीन भारतीय इतिहास में पदे पदे अवगुम्फित है। विश्व के प्रत्येक पार्थिव का प्रत्युत्थान प्राच्यों का प्राथमिक प्रकल्प था। वे जहाँ उसके सांसारिक सुख सौन्दर्य के संवर्धक थे, वहीं आध्यात्मिक अभ्युन्नति के अधिष्ठाता भी थे। जीवन के प्रत्येक पक्ष पर प्रगतिशील विचारधाराओं की प्रस्तुति में नितनवीन संकल्प युक्त थे। अतः इन विचारधाराओं का पोषण करने से जिस प्रकार संसार की सभी प्रवाहमान नदियों का अन्तिम लक्ष्य समुद्र है उसी प्रकार संसार की समस्त संस्कृतियों का अन्तिम विलय भारतीय संस्कृति है। भारतीय संस्कृति सर्वत्र ही मानवीय सभ्यता के कल्याणकारी एवं अभ्युत्थान युक्त होने के कारण व्यापक और उदात्त है। मनुष्य के निरन्तर विकसनशील होने के लिए चिरन्तन उपायों का उपक्रम स्थापित करना इस प्राच्य परम्परा का परम लक्ष्य है। सभ्यता-असभ्यता, संस्कृति-अपसंस्कृति के विस्तार ने कालान्तर में अनेक प्रकार के साहित्यों को जन्म दिया है। इस दृटि से विश्व के इतिहास में ज्ञान और विज्ञान की पराकाष्ठा का उदात्त प्रतिमान संस्कृत साहित्य अप्रतिम है। इस भाषा में विचारों की और्ध्विक यात्रा लोक में जितनी उदात्त है उतनी ही विशाल भी है। आदिकाल से गतिमान समस्त सांस्कृतिक परम्परा का आमूलचूल विवरण प्रस्तुत करने वाले संस्कृत के शास्त्रों ने लोक और परलोक में सद्गति के लिए सर्वदा सन्मार्ग का ही सम्पोषण किया है। सम्पूर्ण वैदिक वाङ्मय से लेकर रामायण, महाभारत, पुराण, स्मृति, धर्मशास्त्र आदि अनेक संस्कृत के ग्रन्थ मानवता के पोषण में निरन्तर अपना योगदान देते आ रहे हैं। इन्हीं शास्त्रों के कुछ रहस्यात्मक पक्षों को आधार बनाकर शास्त्रसन्दोहः ग्रन्थ डॉ कृणामोहन पाण्डेय द्वारा लिखा गया है। हिन्दी और संस्कृत दोनों भाषाओं में लिखित इस ग्रन्थ में मुख्यरूप से संस्कृतियों में हो रहे अपकर्ष पर कटाक्ष करते हुए साम्प्रतिक युग में भारतीय संस्कृति में किन-किन कारणों से किस प्रकार परिवर्तन हो रहा है, संस्कृत के विना भारत, भारत नहीं रह पायेगा, भारतीय संस्कृति किस प्रकार परस्पर समन्वय की भावना जागृत रखने का संकल्प दिखाती है, संस्कार पशुओं को भी मानव बना देते हैं, आदि विषय संस्कृति को अपनाने के लिए प्रेरित करते हैं। इसी प्रकार 7वीं शताब्दी के महाकवि बाणभट्ट पूरे भारत में यायावरी करते हुए जो विवरण प्रस्तुत करते हैं उनके आधार पर वे अपनी नवनवोन्मेषशालिनीप्रतिभा से दिग्दिगन्तर में देदीप्यमान हैं। बाण की काव्य प्रभा अकेले ही अपना प्रकाश स्वच्छन्द भाव से विकिरण करती है। अपने शब्दगुम्फन की माधुरी से उन्होनें सदियों से संस्कृत साहित्य में उदात्त स्थान सुरक्षित रखा है। उनकी अलंकृत प्रौढ़ शैली संस्कृत गद्यकाव्य को चरमोत्कर्ष पर पहुँचाती है। भारत की सांस्कृतिक विरासत को अग्रिम पंक्ति में सुव्यवस्थित करने वाले महाकवि बाण काव्य के आवश्यक तत्त्वों का बहुत सतर्कता और सूक्ष्मता से उपस्थापन करते हैं, इसका विस्तार से यहाँ विवरण प्रस्तुत किया गया है।

विश्व के महानतम यायावर, महाभारत और पुराणों के रचयिता महाकवि कृष्णद्वैपायन व्यास सम्पूर्ण चराचर जगत् के आदिम ज्ञाता हैं। महर्षि व्यास अपने से पूर्वकालिक सम्पूर्ण भारतीय ऋषि परम्परा को अपने हाथ में रखे पिण्ड की तरह देखने वाले हैं। व्यास की और्ध्विक और भौमिक यात्रा का विस्तार यहाँ सरलता से प्रस्तुत हुआ है। उनके विषय में कहा गया है कि इतिहासपुराणानामुन्मेषों निर्मितं च यत्। भूतं भव्यं भविष्यं च त्रिविधं कालसंज्ञितम्।। जीवन के सर्वस्व अनुभवों का सार प्रस्तुत करते हुये जब वे महाभारत और पुराणों का व्याख्यान करते हैं तो उनके मुख से ऐसी गर्वोक्ति निकलती है जो आने वाली अनन्त

हाईकु

● अरुण कुमार शर्मा

रूप सुंदर
गुलाब पंखुड़ी सी
हवा में तैरी।

वानर खाते
पेड़ों पर झूलते
काफल पके।

नीला अम्बर
बादलों में ओझल
बूंदें बरसीं

जीवन रस
मिट्टी से महकते
लता पादप

पवित्र नीर
ग्रीष्म की दोपहरी
तृषा बुझाए।

वन में आग
पशु पक्षी झुलसे
कैसा विनाश।

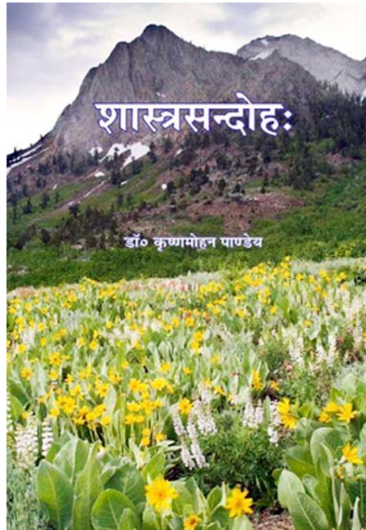
बहती धारा
सीकर कण बने
अमृत बिन्दु।

लाल टीन पे
हरे तोतों का जोड़ा
शाम की वेला।

सूर्य छिपता
बादलों में बनता
स्वर्ण मृग सा।

**(हि. प्र. से.) (से.नि.) गांव अप्पर घनेड़ी,
डॉ. शोघी, तह व जिला शिमला, हिमाचल प्रदेश**

पीढ़ियों के लिए चुनौती ही रह गयी है-'धर्मे अर्थे च कामे च मोक्षे च भरतर्षभ। यदिहास्ति तदन्यत्र यन्नेहास्ति न तद्क्वचित्। महाभारत की ये पंक्तियाँ व्यास के अपरिमित ज्ञान और अपार अनुभव का प्रत्याख्यान करती हैं। अपने विशालकाय ग्रन्थ के एक लाख श्लोकों में उन्होंने संसार की संस्कृतियों एवं अपसंस्कृतियों का जो सांगोपांग स्वरूप प्रस्तुत किया है वह युग युगान्तर तक अन्वेषणीय और अनुकरणीय है। व्यास सम्पूर्ण आदि कालीन सांस्कृतिक विरासत को सर्वसुलभ बनाना चाहते हैं। तात्कालिक भारतीय समाज में व्याप्त व्यावहारिक बर्बरता, चोरी, बेइमानी, ईर्ष्या, हिंसा, पाप, स्त्रियों के प्रति दुर्भाव, कुरीतियों और दुष्प्रवृत्तियों पर कुठाराघात करने के कोई भी उपाय व्यास ने नहीं छोडे हैं। सच्चे अर्थों में व्यास ही भारतीय इतिहास में कलंकित असभ्यताओं का उच्छेदन करके सभ्यता के मार्ग का प्रस्फुटन करने वाले प्रथम पथ प्रदर्शक हैं। 'यत्र विश्वं भवत्येकनीडम्' के परम पोषक हैं। व्यास की इन्हीं विशेषताओं पर यहाँ विस्तार से चर्चा है।



शास्त्रों की दृष्टि से सभ्यता और संस्कृति के सम्पोषण में भारत बहुत विकसित, सभ्य और सुव्यवस्थित है। समाज में उच्च आदर्श और मानवीय संस्कृति सर्वव्यापी है। अपसंस्कृतियों एवं सामाजिक बुराइयों को दूर करने के लिए स्वस्थ संगठन सर्वदा सक्रिय हैं। प्राकृतिक प्रभाव एवं परिवर्तनशील स्वभाव ने कालान्तर में मानवीय सभ्यता के अध्ययन और अनुसंधान के बल पर मनुयों के चरित्र पर अनेक प्रश्न खड़े किये हैं। सामाजिक यथार्थ की समीक्षा ने समय समय पर अनेकशः सत्य-असत्य, विश्वास-अविश्वास, अन्धविश्वास, यथार्थ और कल्पना के मध्य दिख रहे अन्तर को नापने का बहुत प्रयास किया है। इस मूल्यांकन की यात्रा में वेद शब्दशः प्रामाणिक माने गये जबकि पुराण, कथा, रामायण और महाभारत आदि अर्थशः प्रमाण हैं। भारतीय संस्कृति के सम्बल स्वरूप धर्मशास्त्रों के निकर्ष पर मानवीय सभ्यता उदात्त चरित्र का सर्वदा प्रत्याख्यान करती है। असभ्यता पर निरन्तर चोट करने वाली भारतीय सांस्कृतिक परम्परा मनुष्यों के अवमूल्यन के प्रतिरोध में किसी न किसी माध्यम से सतत सचेत रही है। मानव सभ्यता के क्रमिक विकास में भारतीय साहित्य और अध्यात्म का अवयव-अवयवी का सम्बन्ध रहा है। इसी प्रकार वैदिक काल के अपकर्ष और पौराणिक काल के उत्कर्षरुप संक्रमण काल में उत्पन्न कालिदास भारतीय संस्कृति के पोषण में अपनी सम्पूर्ण ऊर्जा समर्पित करते हैं। कालिदास के संवादों में आदर्श प्रवणता पदे पदे अवगुम्फित है। प्रत्येक पात्र अपने उत्तम व्यवहार और संवाद से आकर्षण को निरन्तरता प्रदान करते हैं। इस प्रकार संस्कृत के शास्त्रों में सभ्यता और संस्कृति के पोषक तत्वों का अनुसन्धान करके लेखक ने अनेक शीर्षकों से लेखों को एकत्रित कर यहाँ प्रस्तुत किया है।

**52, बसंत विहार कालोनी, रक्कड़, ऊना,
जिला ऊना, हिमाचल प्रदेश**



शिमला के ऐतिहासिक रिज मैदान पर किन्नौर सांस्कृतिक महोत्सव की झलक

पंजीकरण संख्या : 845/1957 जून, 2017 एच.पी./79 एस.एम.एल. 2015—17



हिमाचल प्रदेश के एक पारंपरिक गांव की कलात्मक भवन शैली

आर.एस. नेगी निदेशक, सूचना एवं जन सम्पर्क विभाग, हिमाचल प्रदेश द्वारा प्रकाशित तथा डॉ. डी. के. गुप्ता, नियंत्रक, मुद्रण एवं लेखन सामग्री विभाग द्वारा हिमाचल प्रदेश सरकार के लिए राजकीय प्रेस, शिमला—171005 से मुद्रित करवाकर शिमला से प्रकाशित। सम्पादक वेद प्रकाश।

ISSN 2454-972X

हिमप्रस्थ

जुलाई, 2017





मुख्य मंत्री श्री वीरभद्र सिंह चंबा मिंजर महोत्सव के मोके पर शोभायात्रा में भाग लेते हुए

ISSN : 2454-972X

हिमप्रस्थ

वर्ष : 62 जुलाई, 2017 अंक : 4

सम्पादकीय कार्यालय: हि. प्र. प्रिंटिंग प्रेस परिसर, घोड़ा चौकी, शिमला-5

वार्षिक शुल्क : 150 रुपये, एक प्रति : 15 रुपये

E-Mail : himprasthahp@gmail.com
Tell: 0177 2633145, 2830374
Website: himachalpr.gov.in/himprastha.asp

ज्ञान सागर

पिता यह सिखाता है कि हमें क्या बनना चाहिए और मां यह सिखाती है कि हम क्या हैं।

- पीटर डेविसन

आवरण : **पहाड़ी चित्रकला**
पद्मश्री विजय शर्मा

इस अंक में

लेख

शोध लेख

ललित निबन्ध

कहानी

लघुकथा

कविता/ग़ज़ल

समीक्षा

अपनी बात

अपनी विविध संस्कृति के लिए विख्यात भारतवर्ष को विभिन्न ऋतुओं के देश के रूप में भी जाना जाता है। हमारे देश में प्रमुख छह ऋतुएं मानी गई हैं जिनमें वसंत, ग्रीष्म, वर्षा, शरद, हेमंत व शिशिर शामिल हैं। इन सब ऋतुओं का अपना अलग-अलग महत्त्व एवं पहचान है। वसंत को ऋतुओं का राजा (ऋतुराज) कहा गया है तो वर्षा को ऋतुओं की रानी के रूप में संबोधित किया गया है। हर ऋतु मानव समाज को अलग संदेश देकर जाती है, शायद इसीलिए हर ऋतु का हमारे मनोभावों पर अलग-अलग प्रभाव पड़ता है। अगर इन्हें जीवन दर्शन के रूप में देखा जाए तो यह मानव को समय व काल का भी आभास करवाती है। वसंत ऋतु को जहां प्रकृति में नवसंचार के लिए जाना जाता है, वहीं वर्षा ऋतु हरीतिमा प्रधान है जिसे हरियाली के लिए जाना जाता है। ग्रीष्म ऋतु में सूर्यदेव की आग उगलती धूप से पैदा हुई असहनीय तपस व झुलसा देने वाली गर्मी से त्रस्त धरा की समूची वनस्पति व जीव-जंतु वर्षा ऋतु की फुहारों से तरोताजा हो उठती है। इस ऋतु के आगमन से प्रकृति में सर्वत्र नए जोश और उल्लास का संचार हो जाता है। खरीफ फसल की बुआई की आस लगाए किसान अपने खेतों की भुरभुरी मिट्टी में वर्षा की बूंदों से फैली गंध से आत्म-विभोर हो उठते हैं। वर्षा के अभाव में वीरान पड़ी जमीन बरसात की फुहारों से प्यास बुझाकर पुनः हरी-भरी होने के लिए लालायित हो उठती है। जैसे-जैसे वर्षा ऋतु बरसात से धरा को नहलाती है, वैसे-वैसे चहुं ओर हरियाली का साम्राज्य स्थापित हो जाता है। वर्षा ऋतु में प्रकृति के विविध रूपों से आनंदित होकर कवि मन भी कल्पनाओं की परवाज भरता हुआ साहित्य की विभिन्न विधाओं का सृजन करता है। महाकवि कालिदास की महान कृति 'मेघदूत' को साहित्य जगत के लिए वर्षा ऋतु की अनुपम भेंट कहा जा सकता है। हिमाचल प्रदेश के लोगों के सामाजिक-आर्थिक जीवन में इस ऋतु का विशेष महत्त्व है। प्रदेश की कृषि-बागबानी को सुदृढ़ता प्रदान करने के साथ-साथ यह ऋतु यहां हर वर्ष मनाए जाने वाले मेलों एवं त्योहारों का पैगाम भी लेकर आती है। प्रदेश के चंबा जनपद का सुप्रसिद्ध मिंजर महोत्सव वर्षा ऋतु का प्रमुख त्योहार है। महोत्सव के दौरान श्रावण मास के दूसरे रविवार से तीसरे रविवार तक मिंजर बांधी जाती है और बाद में नदी में विसर्जित कर दिया जाता है। सदियों से यह मेला हमारी कृषि आर्थिकी की समृद्धता तथा आपसी सौहार्द का परिचायक है। इस ऋतु में प्रदेश भर में सायर मेलों के आयोजन से पूरा हिमाचल उत्सवमय हो जाता है। पारंपरिक वेशभूषा में सुसज्जित प्रदेशवासी इन त्योहारों में हर्षोल्लास के साथ भाग लेते हैं। वर्षा ऋतु हमारे जनजीवन को समृद्ध करने के साथ-साथ अपने प्राकृतिक दायित्वों का निर्वहन करते हुए पृथ्वी को हरा-भरा बनाती है। हमारा भी दायित्व बनता है कि हम वर्षा के पानी का सदुपयोग कर इसे प्रकृति को समर्पित करें। इस मौसम में सरकार द्वारा चलाए जा रहे वन महोत्सव जैसे कार्यक्रमों का लाभ उठाकर हमें अधिक-से-अधिक पौधरोपण करना चाहिए। इससे वनीकरण के प्रयासों को बल मिलेगा और पर्यावरण संरक्षण एवं पारिस्थितिकीय संतुलन को बनाए रखने में सहायता मिलेगी। प्रदेश सरकार के सघन प्रयासों से हाल ही में जापान अंतर्राष्ट्रीय सहयोग एजेंसी द्वारा 800 करोड़ रुपये की 'हिमाचल प्रदेश वन इको-सिस्टम प्रबंधन एवं आजीविका परियोजना' को वित्तपोषण की स्वीकृति मिली है। इससे पौधरोपण व वनीकरण के अंतर्गत अधिक-से-अधिक क्षेत्र लाने में सहायता मिलेगी और स्थानीय लोगों की आजीविका संबंधी जरूरतें भी पूरी होंगी। वर्षा ऋतु में मनाए जा रहे वन महोत्सव के दौरान हम सब को पौधरोपण जैसे पुनीत कार्य में भाग लेकर प्रकृति के इस महायज्ञ में सहभागी बनना चाहिए ताकि हिमाचल को हरा-भरा बनाए रखा जा सके।

- संपादक

आलेख



चंबा
अतीत और वर्तमान

• सुदर्शन वशिष्ठ

चंबा एक शहर नहीं बल्कि एक ऐसा स्थल है जिसे समृद्धतम इतिहास, संस्कृति तथा परंपराओं का खजाना कहा जाए तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। चंबा शहर अपनी स्थापना के एक हजार वर्ष पूर्ण कर चुका है। इस अवधि में अनेक पीढ़ियों ने इस शहर को हर काल में कोई-न-कोई नया रूप व स्वरूप दिया है। हिमाचल प्रदेश के गौरवमय इतिहास में चंबा की पुरातन राजधानी साहिल वर्मन ने 920 ई. में बसाई थी। इससे पहले पुरानी राजधानी ब्रह्मपुर (भरमौर) में थी। इतिहास कहता है चंबा की पुरातन राजधानी राजा साहिल वर्मन (920 ई.) द्वारा बसाई गई।

'चंबा' नाम राजा साहिल वर्मन ने अपनी पुत्री चंपावती के नाम पर रखा। दूसरा मत है कि यह नाम चंपक वृक्ष से पड़ा जो आज भी यहाँ होता है और अपनी सुगंध बिखेरता है।

वोगल ने स्वीकार किया है कि चंबा की स्थापना साहिल वर्मन द्वारा ही की गई क्योंकि साहिल वर्मन के पुत्र तथा पौत्र द्वारा दो ताम्र पत्र जारी किए गए थे जो राजधानी चंबा से किए गए। इनमें चंबा को 'चंपक' लिखा गया है। चंबा की स्थापना दसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में की गई होगी। वोगल ने प्रोफेसर डेविड की इस बात को नकारा है कि अंग की राजधानी चंपा का नाम रावी के किनारे वैसी चंपा नगरी के नाम पर रखा गया था। अंगदेश में चंपा मध्य देश की प्राचीनतम नगरियों में से एक था, जिसका संस्कृत साहित्य में प्रचुर वर्णन है। किंतु रावी के किनारे चंपा का उल्लेख दसवीं शताब्दी से पहले नहीं किया गया। चंपा का सर्वप्रथम उल्लेख राजतरंगिनी में कश्मीर के राजा अनन्तदेव (1028-1063) के समय आता है। अतः जब रावी के किनारे राजा साहिल वर्मन ने 920 ई. में राज्य संभाला। चंबा गजेटियर तथा हिस्ट्री ऑफ पंजाब हिल स्टेट्स में साहिल वर्मन के समय में कुल्लू के साथ लंबे युद्ध का वर्णन है। इस युद्ध में चंबा की सेना को 'गद्दी सेना' कहा गया है। साहिल वर्मन ने निचली रावी घाटी को जीत लिया। युद्ध में चर्पटनाथ, रानी तथा राजकुमारी भी साथ थे।

चंबा के इतिहास में साहिल वर्मन एक प्रतापी राजा हुआ।

साहिल वर्मन ने रावी की निचली घाटी तक राज्य विस्तार किया। इस राजा के समय कुल्लू के साथ बारह वर्ष तक युद्ध चला और अंत में संधि हुई।

कथा है कि राजा के सिंहासनारूढ़ होने पर ब्रह्मपुर में चौरासी योगी आए। राजा ने उनका खूब आदर सत्कार किया। राजा उस समय निःसंतान था। उन्होंने राजा को दस पुत्र होने का वरदान दिया। पुत्र प्राप्ति तक राजा ने उनसे वहीं रहने का अनुरोध किया। समय आने पर राजा को दस पुत्र प्राप्त हुए। सब से बड़े पुत्र का नाम युगाकर वर्मन और पुत्री का नाम चंपावती रखा गया।

राजा ने रावी के निचले क्षेत्र तक जीत का अभियान चलाया। एक अभियान में राजा के साथ रानी, पुत्री चंपावती और योगी चर्पटनाथ थे। वे चंबा के क्षेत्र में जा पहुंचे। यह क्षेत्र उस समय एक स्थानीय राणा के अधिकार में था जिसने इस भूमि को एक ब्राह्मण को उपहार में दे रखा था। चंपावती इस सुंदर स्थान को देख कर मुग्ध हो गई और राजा से यही राजधानी बनाने का अनुरोध किया। ब्राह्मण से भूमि देने के लिए बातचीत की गई। ब्राह्मण भूमि को देने के लिए इस शर्त पर माना कि जब कभी कोई विवाह हो तो ब्राह्मण को आठ कली (ब्रह्मपुर की मुद्रा) दी जाए। राजा ने इस शर्त को स्वीकार कर भूमि ले ली और यहां राजधानी का निर्माण किया गया।

दूसरी कथा यह भी है कि इस स्थान पर चंपा के वृक्ष बहुतायत में होते थे। अतः नगरी का नाम चंपावती रखा गया।

साहिलवर्मन के पुत्र तथा पौत्र द्वारा जारी दो ताम्रपत्रों में इसे 'चंपक' कहा गया है। कल्हण की राजतरंगिनी में इसका नाम चंपापुरी है। 'चंपक' नाम से नगर का उल्लेख 1649 के लक्ष्मी नारायण मंदिर लेख में भी है। कुछ दूसरे दस्तावेजों में भी चंपक नाम लिखा गया है।

कालांतर में यह चंपा या चंपक से चंबा हो गया।

युगाकर वर्मन, साहिल वर्मन के उत्तराधिकारी पुत्र ने एक ताम्रपत्र में अपनी माता के नाम "नीनादेवी" का उल्लेख किया है, जो संभवतः यही रानी थी। सूही को लंकेश्वरी भी कहा जाता है। रानी सूही की समाधि राजा अजीतसिंह (1794-1808) की रानी शारदा ने बनवाई। चंबा के सिक्के को चकली कहा जाता था। पांच चकली का एक आना होता था। साहिल वर्मन ने इस सिक्के पर योगी का फटा हुआ कान बनवाया जो चर्पटनाथ के सम्मान में था। बाद में राजाओं ने इस में विष्णुपाद जोड़ा। राजा अस्त वर्मन द्वारा एक बार चांदी का सिक्का भी चलाया गया।

चंपा के सुगंधित वृक्षों से सुवासित रहा होगा कभी चंबा। आज भी लोक कवि 'चंबे दा फुल्ल' का वर्णन करते हैं। 'चंबे दी कली' की सुगंध पंजाब तक फैली और गीतों के बोल बनी।

चंपा के फूलों की महक दूर दूर तक फैली रहती है। इन की महक इतनी तेज होती है भंवरे पास नहीं फटकते। कवि ने कहा है :

चंपा तुझ में तीन गुण सुंदर, सुखद, सुवास।
अवगुण तुझ में एक है, भ्रमर न आवे पास॥

चंबा के लोकगीतों में भी इस फूल का वर्णन किया गया है। स्थानीय भाषा में इसे 'चंबा' कहा गया है :

फुल्लां दी भरी ए चंगेर, चंबे दी इक कली।
खंडू दी भरी ए परात, मिसरी दी इस डली।
तू मेरी चंचल जेही नार, बिसरे न इक घड़ी।

फूलों की चंगेर भरी हुई है, चंबे की एक कली है। खांड की परात भरी हुई, मिसरी की एक डली है। तू मेरी चंचल नार है जो एक घड़ी भी नहीं बिसरती। यानि फूलों की चो एक टोकरी भरी हारे, चंबे की एक कली की काफी है।

इस तरह चंपा के फूल का गुणगान कविता व लोकगीतों में बहुत बार हुआ है।

चंपा को पुरातन समय में 'चंपक' भी कहा जाता रहा है। 1839 में विगने ने चंबा की जनसंख्या चार हजार से पाँच हजार आँकी थी। वोगल ने 1911 में इसे छह हजार बताया। उस समय सबसे महत्त्वपूर्ण बिल्डिंग महल की थी जिसका सबसे पुराना भाग अठ्ठारहवीं शताब्दी के मध्य में बना।

आज इस शहर की जनसख्ंया इक्कीस हजार से ऊपर है। दूर से देखने पर महल आज भी भव्य दिखता है। लक्ष्मीनारायण मंदिर भी नजर आता है। किंतु आसपास घनी आबादी बस गई है।

चंबा शहर की जनसंख्या 1839 में चार से छह हजार के करीब थी। उस समय सबसे महत्त्वपूर्ण भवन राजमहल था।

छह मंदिरों का लक्ष्मीनारायण मंदिर समूह, जिसमें तीन विष्णु ओर तीन शिव को समर्पित हैं। चंपावती मंदिर जिसे स्थानीय भाषा में चमेसणी मंदिर कहते हैं, अद्वितीय विष्णु चतुर्मूर्ति प्रतिमा के साथ हरिराय मंदिर आज उस ऐतिहासिक वैभव की याद दिलाते हैं जो इस राजधानी के अतीत के साथ जुड़ा हुआ है। इस समय लक्ष्मीनारायण मंदिर भारतीय पुरातत्त्व सर्वेक्षण विभाग के पास है। मंदिर समूह राज्य के अधीन। चमेसणी मंदिर भारतीय पुरातात्त्विक सर्वेक्षण विभाग के पास है।

चंबा एक दुर्गम और दूरस्थ पहाड़ी राजधानी रही है। यद्यपि यहां आधुनिकता की ओर कदम बहुत उठने आरम्भ हो गए थे।

चंपा के सुगंधित वृक्षों से सुवासित रहा होगा कभी चंबा। आज भी लोक कवि 'चंबे दा फुल्ल' का वर्णन करते हैं। 'चंबे दी कली' की सुगंध पंजाब तक फैली और गीतों के बोल बनी। क्या चम्पा के फूल यहां महकते रहे होंगे! क्या यही वह चंपा का फूल था जो कालांतर में चंबा बना!.. ..हो सकता है। आज भी यहां चंपा के फूल महकते हैं। चंपा के फूलों की महक दूर दूर तक फैली रहती है। इन की महक इतनी तेज होती है भंवरे पास नहीं फटकते।

राजा श्री सिंह (1844) के समय मेजर रीड ने चंबा में महत्त्वपूर्ण सुधार कार्य आरम्भ किए। श्री सिंह पढ़ा-लखा नहीं था तथापि बुद्धिमान था। एक यूरोपीय अधिकारी के अधीन सड़कों के निर्माण के लिए लोक निर्माण विभाग खोला गया। दुर्गम क्षेत्रों में सड़कें बनाई गईं। चंबा और खजियार में डाक बंगलें बनवाए। सन् 1870-71 में राजा के लिए महल बनावाया। सन् 1863 में चंबा में एक डाकघर खोला गया और चंबा तथा डलहौजी के बीच डाक आने जाने लगी। इसी वर्ष एक प्राथमिक स्कूल खोला गया जो बाद में हाई स्कूल बना। सितम्बर 1864 में वन संपदा दोहन के लिए राजा से पट्टे पर वन ले लिए गए। वनों से बाईस हजार रूपए वार्षिक आय होने लगी। सितम्बर 1866 में चंबा में एक अस्पताल खोला गया जिसमें एक अंग्रेज डॉक्टर को तैनात किया गया। विवाह कर, व्यापार कर जैसे कर समाप्त कर दिए गए। सन् 1876 में कर्नल रीड ने भू राजस्व बंदोवस्त आरंभ किया। कर्नल रीड के बाद मि. आर.टी. बर्ने ने भरमौर तक लगभग बीस मील लंबी सड़क बनवाई। चंबा से चौरी तथा खजियार तक सड़क निर्माण किया गया। जनवरी 1887 में डाकघर इंपीरियल पोस्टल सिस्टम के अन्तर्गत आ गया और चंबा के आसपास चौंतीस डाकघर खोले गए। विधि विभाग की व्यवस्था ब्रिटिश सिस्टम के अनुसार कर दी गई। लोक निर्माण विभाग का पुनर्गठन किया गया। महल का जीर्णोद्धार किया गया। रावी के क्षतिगस्त सस्पेंशन पुल को लगभग एक लाख रूपए की लागत से पुनः बनवाया गया।

ब्रिटिश शासन के दौरान हिज हाईनेस राजा शाम सिंह को अन्य पहाड़ी राज्यों मंडी, कहलूर, सुकेत के समान ग्यारह तोपों की सलामी दी जाती थी। हिंद सरकार के विदेशी विभाग की चिट्ठी नंबर 5731 तिथि 8 फरवरी 1889 के अनुसार दरबार में तरतीबबार बैठने की फेहरिस्त में चंबा का सातवां स्थान था। यह राज्य कमिशनर लाहौर की निगरानी में रखा गया था और राज्य की वार्षिक आय तीन लाख आंकी गई थी। राज्य का क्षेत्रफल 3216 वर्गमील था और जनसंख्या 1,15,773। प्रथम नवंबर 1921 को राजा राम सिंह के समय चंबा राज्य को सीधा ब्रिटिश सरकार में मिला लिया गया। 8 दिसम्बर 1921 को टिक्का लक्ष्मण सिंह का जन्म हुआ। ब्रिटिश शासन में चंबा में स्वाधीनता के लिए विद्रोह होते रहे। राजा श्री सिंह ने अंग्रेजों के प्रति वफादारी निभाई। अतः 1857 की क्रान्ति के समय राज्य में कड़ी सुरक्षा व्यवस्था रखी गई। राजा ने डलहौजी व अन्य स्थानों में बसे अंग्रेजों को सुरक्षा दी। रावी के घाटों पर भी सैनिक तैनात कर दिए गए। राज्य ने लगभग साठ क्रांतिकारी पकड़े जिन में लगभग तीस को जेल में डाला गया। आजाद हिंद फौज में चंबा के लगभग 36 सेनानियों ने भाग लिया।

8 मार्च 1948 को पहाड़ की सत्ताईस रियासतों ने विलय पत्र पर हस्ताक्षर किए, इन में शिमला हिल स्टेट्स की अट्ठाईस रियासतों के साथ पंजाब हिल स्टेट्स की दो रियासतें चंबा तथा मंडी-सुकेत भी शामिल थीं। अतः केन्द्र शासित चीफ कमिशनर प्रोविंस में शिमला हिल स्टेट्स के जिला महासू के साथ चंबा, सिरमौर, मंडी अलग ईकाइयां बनीं। प्रथम नवम्बर 1966 को विशाल हिमाचल बनने पर चंबा प्रदेश में बारह जिलों में एक जिला बना। इस जिले का मुख्यालय चंबा नगर बनाया गया।

चंपा या वर्तमान चंबा वैदिक नदी रावी के किनारे समुद्र तल से 966 मीटर एक ऊँचे प्लेटफॉर्म पर बसा है। नीचे रावी नदी बहती है। रावी की सायं सायं चंबा चौगान से लगातार सुनाई पड़ती है। नगर के एक ओर पीर पंजाल तो दूसरी ओर धौलाधार की पर्वत शृंखलाएं हैं। ऊपर पर्वत और नीचे रावी नदी ने इसे प्राकृतिक सुरक्षा प्रदान की है। रावी या इरावती हिमाचल प्रदेश से बहने वाली पौराणिक पांच नदियों व्यास, शतद्रु, यमुना और चंद्रभागा में एक है जिस का वर्णन पौराणिक साहित्य में मिलता है।

यह नगर शिमला से 435 किलोमीटर, पठानकोट से 122 किलोमीटर सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ है। जिला कांगड़ा के गग्गल एयरपोर्ट से यह 170 किलोमीटर दूर है। 2050 मीटर की ऊंचाई पर स्थित प्रसिद्ध पर्यटक स्थल डलहौजी यहां से 53 किलामीटर दूर है और अपने नैसर्गिक सौंदर्य के जानी जाने वाली खजियार झील (1800 मीटर) 24 किलोमीटर। डलहौजी के लिए एक सड़क मार्ग खजियार से हो कर है तो दूसरा मुख्य मार्ग से बणिखेत हो कर। ब्रिटिश राज से पहले में चंबा आने जाने के लिए दाईं ओर से आते जाते थे। पठानकोट-भरमौर सड़क पर सस्पेंशन पुल बनने पर इधर से आवाजाही होने लगी।

चंबा से पुरातन राजधानी ब्रह्मपुर या भरमौर यहां से लगभग चौसठ किलोमीटर किलोमीटर है। भरमौर में शिखर शैली का शिव मंदिर (जिसे मणिमहेश मंदिर भी कहा जाता है) तथा चौरासी सिद्धों के स्थान हैं। इसी प्रांगण में लक्षणा देवी का मंदिर भी है। यहां यह बता देना उचित होगा कि इस मंदिर को ही मणिमेहश समझ लिया जाता है जब कि मणिमहेश के लिए पहला पड़ाव या बेस कैंप यहां से कुछ दूर हड़सर तक है जहां तक सड़क मार्ग है। इसके बाद तेरह हजार फुट की बुलंदी पर स्थित मणिमहेश झील के लिए एकदम खड़ी और दुर्गम चढ़ाई है।

इस पुरातन राजधानी की स्थली व बनावट बहुत कुछ वैसी ही है जैसी कुल्लू, सुजानपुर टिहरा या नाहन की है। मुख्य प्रवेशद्वार और चौगान इन राजधानियों की विशेषता है। चंबा का मुख्य द्वार अब जिस स्थान पर है, शहर के लिए प्रवेश उससे ठीक दूसरी ओर बन गया है। बस रस्सों के पुल द्वारा दूसरी ओर प्रवेश करती है। अब नए पुल का निर्माण भी हो गया है। पुराने मुख्य द्वार के साथ सुंदर चौगान है जो द्वार के सामने सड़क के कारण दो भागों में बँट गया है। यह सड़क सीधी लक्ष्मीनारायण मंदिर और महलों को जाती है। चौगान, जो कभी लंबा चौड़ा रहा होगा, सड़क के निचली ओर अभी सुरक्षित है। इसके अंतिम सिरे पर खुला मंच बना है।

मंच से आगे सड़क पार कर सर्किट हाऊस है। ऊपर का चौगान समाप्त सा हो गया है। सड़क के साथ दुकानें तथा खोखे हैं। दूसरी ओर भी बाजार है जो सर्किट हाऊस से होता हुआ बस स्टैंड तक जाता है। खोखों की लाइन में ही ऊपर की ओर अंतिम छोर में 14 सितंबर, 1908 को स्थापित भूरिसिंह संग्रहालय है, जिसे नए भवन में बदल दिया गया है जो पुरानी बिल्डिंग के साथ ही है। चंबा जिला का मुख्यालय है जिसमें पांगी और भरमौर के जनजातीय क्षेत्र शामिल हैं। यहां जिलाधीश, पुलिस अधीक्षसक तथा अन्य जिला स्तरीय कार्यालय है। चंबा में सन् 1994 से जिला परिषद् व पंचायत समितियां स्थापित हैं। मुख्य द्वार के साथ बाईं ओर पहला मंदिर है हरिराय मंदिर। यह भगवान विष्णु को समर्पित है। मंदिर में राजा सोम वर्मन द्वारा दिया गया ताम्रपत्र है। जिससे ज्ञात होता है कि मंदिर का निर्माण ग्याहरवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में लक्ष्मण वर्मन द्वारा हुआ जो राज्यपरिवार का ही सदस्य था। चौगान के दूसरी ओर बाजार के ऊपर चमेसणी माता का मंदिर है। शिखर शैली का यह मंदिर राजा साहिल वर्मन ने अपनी पुत्री चंपावती की याद में बनवाया। महल के उत्तर में एक पंक्ति में छह प्रस्तर मंदिर खड़े हैं जो इस समय चंबा की पहचान बने हुए हैं। इनमें तीन विष्णु को समर्पित है, तो तीन शिव को। सबसे पहला मंदिर लक्ष्मीनारायण का है और इसे ही मुख्य मंदिर माना जाता है। मंदिर साहिल वर्मन ने बनवाया। चंद्रगुप्त और त्रिमुख, जो शिव समर्पित हैं साहिल वर्मन द्वारा, गौरी शंकर मंदिर युगाकर वर्मन द्वारा बनवाया माना जाता है। साल घाटी में सड़क के किनारे वज्रेश्वरी मंदिर है। शिखर शैली में निर्मित यह मंदिर अपनी अद्वितीय काष्ठकला के लिए जाना जाता है।

अखण्ड चंडी महल का निर्माण राजा उमेद सिंह (1748) ने करवाया। इस राजा ने रावी घाटी से आठ मील दूर राजनगर नाम देते हुए भी महल बनवाया। रंग महल की नींव भी उमेद सिंह द्वारा ही रखी गई। रंग मंहल अब नाम का महल है जिसमें सरकारी कार्यालय हैं। तथापि अखंडचंडी महल, रंग महल जनाना महल अपनी वास्तुकला से आज भी आकर्षित करते हैं। इस समय अखंड चंडी महल में राजकीय महाविद्यालय है। जनाना महल बहुत संतुलित बना है। जनाना महल में अभी भी राजपरिवार के सदस्य रहते हैं। इन महलों की वास्तुकला में मुगल और ब्रिटिश शैली के दर्शन होते हैं। रंग महल में ब्रिटिश किलों की तरह कंगूरे बने हैं। कुछ प्रवेश द्वार आर्क शेप में हैं। महल के भीतर आकर्षक भित्ति चित्र भी थे। चंबा नगर में बंसी गोपाल व सीताराम के एतिहासिक मंदिरों के साथ एक चर्च भी है जो सन् 1907 में बना। लगभग सन् 1870 में अंग्रेज शासकों द्वारा सर्किट हाउस, श्याम सिंह अस्पताल, क्लब और पुलिस स्टेशन तथा नगरपालिका भवनों का निर्माण भी किया गया। सन् 1908 में स्थापित भूरिसिंह संग्रहालय चंबा चौगान के एक सिरे पर स्थित है। पहले यह एक पुराने भवन में स्थापित था। अब साथ ही एक नया भवन बना दिया गया है। यह संग्रहालय देश में स्थापित संग्रहालयों में चौथे स्थान पर माना जाता है। जे. पीएच. वोगेल, सुप्रिटेडेंट आर्किओलोजिकल सर्वे, नॉरदर्न सर्किल ने 9 जनवरी 1909 को भूरिसिंह संग्रहालय चंबा के केटालॉग की भूमिका को लिखा हैः

''चंबा राज्य में 1902 की गर्मियों तक जारी मेरे अन्वेषण में पत्थर व धातु दोनों में, बड़ी संख्या में संस्कृत शिलालेखों की खोज हुई। यह अब स्वाभाविक था कि इन पुरातन दस्तावेजों के संरक्षण हेतु विशेष उपाय किए जाने चाहिए थे, जिन में से अधिकांश का स्थानीय इतिहास से गहरा ताल्लुक था। और ये हिज हाईनेस सर भूरिसिंह के.सी.एस.आई. ही थे जिन्होंने सुझाव दिया कि इन थातियों के संरक्षण के लिए एकमात्र उत्तम साधन संग्रहालय ही हो सकता है। 1908 में, चौगान में एक उपयुक्त सरकारी भवन को इस उद्देश्य से को चुना गया और मैंने उन गर्मियों का एक हिस्सा कलाकृतियों के नाम लिखने व केटालॉग बनाने में समर्पित कर दिया।'' वोगेल ने लिखा है कि बहुत से शिलालेखों के क्षतिग्रस्त होने का खतरा था जो उनके पहले के दौरों के दौरान इकट्ठा किए गए थे। बहुत से ताम्रपत्र थे जिन्हें उनके मालिक संग्रहालय को देने के लिए रजामंद थे। चंबा के राजाओं की बहुत सी सनदें थीं। राजा भूरिसिंह तथा राज्य के हाकिमों द्वारा दिखाई व्यक्तिगत रुचि से बहुत योजनाएं कार्यान्वित हो पाईं। राजा भूरिसिंह ने संग्रहालय के लिए बहुत से चित्र भेंट किए। इस नये संस्थान के लिए राजा द्वारा बुद्धिमता से तैनात कैप्टन श्रीकांत ने भी बहुमूल्य संग्रह दिया जिस में चंबा रूमाल के बहुमूल्य नमूने भी थे। 4 अप्रैल के भूकम्प से पहले वोगेल राज्य कोठी भरमौर से पुरातन काष्ठ कलाएं लाने में भी सफल रहे। इस संग्रहालय का उद्घाटन 14 सितम्बर 1908 को मि0 आर.ई. यंगहसबैंड सी.एस.आई. कमिशनर लाहौर द्वारा बड़ी संख्या में उपस्थित यूरोपीय अतिथियों तथा राज्य के अधिकारियों के समक्ष किया गया। यह भी निर्णय हुआ कि इस संग्रहालय का नाम राजा भूरिसिंह के नाम पर रखा जाए जिन्होंने इस परियोजना को आरम्भ किया और सहायता की। 1985 में संग्रहालय का नया भवन बना और कलाकृतियां नये भवन में स्थानांतरित कर दी गईं। राजा साहिल वर्मन के वैष्णव हो जाने के फलस्वरूप वैष्णव मूर्तियां बनाई जाने गली थीं। संग्रहालय में नौ नागों के फन से युक्त बलराम प्रतिमा, विष्णु प्रतिमाएं, विष्णु अवतारों की प्रतिमाएं संग्रहालय में विद्यमान हैं। विष्णु का वैकुंठ रूप अधिक प्रचलित रहा। प्रतिमाओं के अतिरिक्त मॉफिट और शिलालेखों सहित पनघट शिलाएं भी यहां मौजूद हैं जो चंबा के इतिहास निर्माण में महत्त्वपूर्ण योगदान देती हैं।

'अभिनंदन' कृष्ण निवास लोअर पंथा घाटी
शिमला-171009, मो. 0 94180 85595

आलेख

चंबा है अचंभा

● विनोद भारद्वाज



चंबा एक हजार वर्ष पुराना शहर है। वर्ष 2006 में चंबा शहर के एक हजार वर्ष पूर्ण होने पर सहस्राब्दी समारोह का आयोजन किया गया था। चंबा राज्य की स्थापना राजा साहिल वर्मन (920-940 ई.) ने की थी। इससे पहले इसकी राजधानी ब्रह्मपुर (भरमौर थी) साहिल वर्मन ने जब राजगद्दी संभाली उस वक्त ब्रह्मपुर में 84 सिद्धों ने भ्रमण किया। राजा के कोई संतान न थी। सिद्धों ने उन्हें दस पुत्र उत्पन्न होने का वरदान दिया। राजा के दस पुत्र और एक पुत्री 'चंपावती' उत्पन्न हुई। राजा अपने राज्य के विस्तार में व्यस्त रहे। इस विस्तार के लिए वे अपनी रानी, पुत्री उनके गुरु सिद्ध चरपटनाथ के साथ आगे बढ़े। जिस स्थान पर आज चंबा नगर अवस्थित है, वह क्षेत्र एक राणा के प्रभाव क्षेत्र में था। ऐसी मान्यता है कि राजा की पुत्री चंपावती को यह सुंदर स्थल पसंद आ गया। राजा ने इस भूमि को हासिल कर उस स्थान पर नया नगर बसाया और नई राजधानी स्थापित की। अपनी बेटी चंपावती के नाम पर उस नगर का नाम चंपा रखा, जो बाद में चंबा कहलाया। नामकरण के संबंध में चंपा नाम के पेड़ के कारण नगर का नाम चंबा पड़ा, भी माना जाता है।

चंबा शहर की जनसंख्या वर्ष 1839 में चार से छह हजार के करीब थी। उस समय सबसे महत्त्वपूर्ण भवन राजमहल था, जिसका सबसे पुराना भाग अठारहवीं शताब्दी के मध्य बना।

भारतीय पुरातत्त्व सर्वेक्षण विभाग (उत्तरी वृत) के अधीक्षक जे.पी. एच. बोगल के अनुसार इस क्षेत्र का सर्वप्रथम उल्लेख यूरोपीय यात्री जार्ज फॉर्स्टर ने किया जो वर्ष 1783 में चंबा की पश्चिमी सीमा तक आए। मूर क्राफ्ट सन् 1820 में कांगड़ा तक आए। चंबा की पुरातात्त्विक संपदा को ख्याति दिलाने वाला प्रथम यूरोपीय अलेग्जेंडर कनिंघम ही थे जो वर्ष 1839 में ऊपरी रावी घाटी तक आए और चंबा की पुरातन राजधानी भरमौर के मंदिरों का वर्णन किया। रावी नदी के तट पर बसे चंबा शहर ने अपनी स्थापना के लिए आज तक अनेक उतार चढ़ाव देखे हैं। रावी के नीर की तरह चंबा की संस्कृति परंपराएं तथा जनजीवन विशुद्ध रूप में यहां के निवासियों ने बनाए रखी है। चंबा शहर कलकत्ता के बाद देश का दूसरा शहर था जो बिजली की रोशनी से जगमगाया था। वर्ष 1910 में चंबा में माइक्रो पॉवर प्रोजैक्ट की स्थापना हुई थी। चंबा के पुराने भवन, रंगमहल, मुहल्ले, मंदिर देखते ही बनते हैं। चंबा में इस समय नागर शैली के मंदिरों की संख्या लगभग 15 है, जिनमें लक्ष्मी नारायण मंदिर समूह प्रमुख है जो हिमाचल के नागर मंदिरों में विशालतम है। चंबा की संस्कृति, परंपराओं तथा इतिहास से जुड़ी जानकारियों को इस लेख के माध्यम से पाठकों तक पहुंचाया जा रहा है। ये जानकारियां चंबा है अचंभा की व्याख्या पर अपनी मोहर लगाती हैं।



रावी का नीर

रावी नदी चंबा की संस्कृति में रची-बसी है। इसके शीतल जल ने चंबा के जीवन, संगीत, परंपराओं तथा संस्कृति को सींचा है। रावी के जल ने जहां लोगों को शीतलता दी है, वहीं इसके जल ने खेतों को सींचा है और अब इसके जल से विद्युत उत्पादन कर इसने लोगों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति में बदलाव लाया है। रावी, चंबा के लोकगीतों में गुंथी वहीं इसके तट पर बसोआ, कुंजड़ी, मल्हार की गूंज फैली। चंबा के जनजीवन में रावी का नीर कितना समाया है, इसका अंदाजा इस बात से लगाया जा सकता है कि विभाजन के उपरांत पाकिस्तान में जा बसे लोग आज भी इस संस्कृति को जीवित रखे हुए हैं। रावी किनारे बसा चंबा आज अपनी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि के लिए दुनियाभर में प्रसिद्ध है।

चंबा का चौगान

चंबा का चौगान शहर का दिल माना जाता है। इसके इर्दगिर्द शहर की हर गतिविधि होती है। चंबा का चौगान प्राकृतिक सौंदर्य के लिए विश्वभर में विख्यात है। यह हरा-भरा मैदान नगर के सौंदर्य तथा मुहल्लों की संरचना और उससे जुड़े लोकजीवन को भी प्रभावित करता है। डॉ. जे. हचिन्सन के अनुसार नगर की रचना दो कगारों में की गई है। नीचे 'चौगान' है जो लगभग आधा मील लंबी, अस्सी गज चौड़ी घास-स्थली है। यह लोगों के लिए चहलकदमी के लिए मनोरंजन का स्थल है। रियासत काल में इसका उपयोग राज्य बरछेबाजी, खेलों व मिंजर मेले के आयोजन के लिए किया जाता रहा है। ब्रिटिश काल के दौरान इसका उपयोग क्रिकेट के मैदान के रूप में हुआ।



चंबा का रंग महल

चंबा के पांच मंजिले रंग महल का शिलान्यास चंबा नरेश उमेद सिंह (1748-1764 ई.) ने किया था। इसके उपरांत राजा राज सिंह (1764-1794 ई.) ने इसका निर्माण कार्य पूर्ण किया। राजा राज सिंह कुशल शासक, कलाप्रिय तथा वीर योद्धा था। यह विशालकाय महल मुगल शैली में निर्मित एक छोटे दुर्ग के समान है। नगर की घनी आबादी वाले दरोभी और सुगड़ा (श्रीनगर) नामक मुहल्लों से घिरा हुआ है। यह रंग महल पत्थरों तथा नानक शाही ईंटों से निर्मित है। पांच मंजिलों वाले इस रंग महल के धरातल के नीचे भूमिगत दोमंजिलों में अन्न-भंडार, शस्त्रागार और बंदीगृह था। ऊपर वाली तीन मंजिलों में बड़े-बड़े कमरे, प्रशाल (हॉल), शयन कक्ष, प्रेक्षा कक्ष, पूजा कक्ष, भोजनालय, विश्राम कक्ष, लंबे-चौड़े बरामदे, दालान तथा दीर्घाएं हैं। चंबा 18वीं-19वीं शताब्दी से ही पहाड़ी चित्रशैली का एक प्रमुख केंद्र रहा है और इस



अवधि में चंबा कलम से सुंदर लघुचित्र एवं भित्तिचित्र मंदिरों, राजमहलों तथा विशिष्ट नागरिकों के घरों में बनते थे। चंबा रंगमहल को भी सुरुचिपूर्ण एवं कलात्मक चित्रों से सजाया गया था।

चंबा का भूरी सिंह संग्रहालय

पहाड़ी क्षेत्र प्राचीनकाल के अवशेषों तथा शिलालेखों, ताम्रपत्रों का खजाना रहा है। इतिहास, कला एवं पुरातत्त्ववेत्ता अलेग्जेंडर कनिंघम ने जब 1839 में चंबा जनपद तथा भरमौर की यात्रा की तो चंबा की बहुमूल्य सांस्कृतिक धरोहरों ने उनका ध्यान आकर्षित किया। चंबा की संस्कृति, कला, इतिहास का दर्पण है। यहां का भूरी सिंह संग्रहालय। चंबा नरेश भूरी सिंह (1904-1909) द्वारा स्थापित यह संग्रहालय 14 सितंबर, 1908 को खुला था। कनिंघम के छह दशकों उपरांत डॉ. फिलिप्प, महान कला इतिहासकार और भारतीय पुरातत्त्व सर्वेक्षण विभाग (उत्तरी क्षेत्र) के अधीक्षक वर्ष 1902 से 1908 के मध्य अनेक बार चंबा आए और उन्होंने



भारी संख्या में पत्थर तथा धातु के शिलालेखों को खोजा और एकत्रित किया। उन्होंने ही राजा भूरी सिंह को संग्रहालय बनाने के लिए प्रेरित किया। इस संग्रहालय में धातु पर खुले लेख, कागज के दस्तावेज, चित्रकला, प्राचीन चित्रों, काष्ठ कला, प्राचीन शास्त्रों कशीदेदार परिधान, सिक्के, आभूषण, बर्तन तथा प्राचीन वस्तुएं संगृहित की गई हैं।



चंबा रूमाल

पद्मश्री विजय शर्मा जो पहाड़ी चित्रकला की एक जानी-पहचानी शख्सीयत हैं, के अनुसार कला संस्कृति के मामले में चंबा सबसे समृद्ध जिला है। यहां के कुशल शिल्पियों ने सबसे अधिक राष्ट्रीय पुरस्कार प्राप्त कर हिमाचल का नाम रोशन किया है। गत वर्ष गणतंत्र दिवस की परेड में चंबा रूमाल पर आधारित झांकी की धूम राजपथ पर थी। कपड़े पर सतरंगी धागों की महीन कशीदाकारी की लोक कला 'चंबा रूमाल' सदियों से इस जनपद की संस्कृति का हिस्सा रही है। 'दोरुखे टांके' का जादू दुनिया भर में फैला है। सबसे पुराना चंबा रूमाल होशियारपुर जिले के एक गुरुद्वारे में आज भी उपलब्ध है। ऐसी मान्यता है कि इस रूमाल पर सोलहवीं सदी में सिखों के प्रथम गुरु नानक देव की बहन बेबे नानकी ने कशीदाकारी की थी। महाभारत के युद्ध को प्रदर्शित करने वाली चंबा रूमाल की मौलिक कृति लंदन के विक्टोरिया एवं अल्बर्ट संग्रहालय में प्रदर्शित है। यह रूमाल चंबा के तत्कालीन राजा गोपाल सिंह ने वर्ष 1883 में ब्रिटिश सरकार को भेंट किया था।

1965 में चंबा रूमाल बनाने वाली कारीगर महेश्वरी देवी व ललिता वकील को राष्ट्रीय पुरस्कार से नवाजा गया था। इसकी खास बात है कि यह दोनों ओर से एक जैसा नजर आता है। इसकी कढ़ाई की विषय वस्तु रासलीला, रासमंडल राधाकृष्ण, गणेश, शिकार, चौपड़बाजी, रुकमणि हरण, विवाहोत्सव तथा सजावटी बेलबूटे भी चंबा रूमाल की प्रिय विषय वस्तु हैं। अष्ट नायिका और आध्यात्मिक आख्यानों पर आधारित होती है। राजा उम्मेद सिंह (1748-1764) ने चंबा रूमाल बनाने वाले कारीगरों को संरक्षण दिया था। आज चंबा रूमाल चंबा की पहचान है। संरक्षण के लिए इसे बौद्धिक संपदा अधिकार समझौता 2007 के तहत पंजीकृत कराया गया है।

चंबा चप्पल

चंबा के कारीगरों द्वारा बनाई जाने वाली चप्पलें प्रदेश में नहीं बल्कि विदेशों में भी मशहूर है। चप्पल निर्माण के पुश्तैनी व्यवसाय से जुड़े कारीगरों की हस्तशिल्प देखते ही बनती हैं। चंबा के मुख्य बाजार में चप्पल की दुकानों तथा भीतर कार्य करते हुनरमंद कारीगरों को देखकर इस निर्माण की कहानी स्वयं बयां होती है। कारीगरों द्वारा चप्पल, सैंडल, पर्स तथा बैल्ट का निर्माण विशेष तौर


Embroidered and punched Patthu


Slipper or V- Shaped


Chandani


Nok wala Patthu


Teen – Patti wali Chappal


Mojdu (a rare type)


Ek-patti wali Chappal

पर किया जाता है। ये उत्पाद इतने खूबसूरत होते हैं कि पर्यटकों का ध्यान शीघ्र ही अपनी ओर आकर्षित करते हैं। आम जन तक लोकप्रिय बनाने के प्रयास हुए। राज्य सरकार भी इस हस्तशिल्प कला के संरक्षण के प्रति कृतसंकल्प है। चंबा चप्पल के प्रतिरूप बजार में न आए इसके लिए इसके पेटेंट करवाने के प्रयास भी किए जा रहे हैं। चप्पल निर्माण के कार्य में महिलाओं की अहम भूमिका रहती है व चप्पल के ऊपर होने वाली कशीदाकारी को करती है।

चंबा की धाम

चंबा की धाम लजीज एवं स्वादिष्ट मानी जाती है। धाम को बनाने वाले पुश्तैनी खनसामे हैं, जो पीढ़ी-दर-पीढ़ी इस कार्य को आगे बढ़ा रहे हैं। सामुदायिक भोजन की व्यवस्था पर आधारित



धाम की शुरुआत चावल तथा मूंग की दाल से होती है। इसके उपरांत राजमाह का मदरा। इसके उपरांत 'बोट की कड़ी' तथा माश की दाल के साथ मीठा-खट्टा परोसा जाता है। धाम की समाप्ति मीठे से होती है। मीठा चावल का होता है, जिसमें बादाम, काजू तथा किशमिश डाली होती है। संपूर्ण चंबा जनपद के निवासियों का आहार विभिन्न तरह का है। भरमौर के गद्दी मांसाहारी भोजन पसंद करते हैं। चंबा जनपद के सभी समुदायों में एक आहार जो लोकप्रिय है, वह है राजमाह का मदरा। राजमाह के मदरे के बारे में प्रचलित है कि राजा मेरू के पुत्र राजा जयस्तंभ को कश्मीरी भोजन पंसद था। उन्होंने कश्मीर से खानसामों को बुलाकर उनसे स्थानीय उत्पाद तथा वहां पैदा होने वाले मसालों पर एक स्वादिष्ट भोज्य बनाने को कहा। उस वक्त जिले में राजमाह की खेती होती थी। खानसामों ने राजमाह का मदरा बनाया और धीरे-धीरे यह जनपद का स्वादिष्ट भोज्य बन गया। राजमाह के मदरे के अलावा चंबा के अन्य स्वादिष्ट व्यंजन हैं सिड्डू, खटटा मीठा चौस, भागजेरी, कालीदाल, आलू का पल्दा, उरीया कद्दू।

चंबा जनपद में मुसलिम समुदाय की विवाह-शदियों का प्रमुख व्यंजन मांसाहारी है। गोश्त अनेक प्रकार से पकाया जाता है। जिसमें सूखा गोश्त, पालक वाला गोश्त, कड़म वाला गोश्त, दाडू वाला गोश्त, छाह वाला गोश्त तथा तरीदार गोश्त प्रमुख है।

चंबा के ऊंचाई वाले क्षेत्रों में जंगली प्याज, लहसुन तथा हल्दी भी पाई जाती है। इन्हीं ऊंचे क्षेत्रों में काला जीरा, रत्नजोत तथा निक्क नामक घास पाई जाती है। कई वनों में दालचीनी के पेड़ भी पाए जाते हैं। ये प्राकृतिक मसाले व्यंजनों के स्वाद और पौष्टिकता को कई गुणा बढ़ा देते हैं।

चंबा की चुख

चंबा जनपद की स्थानीय उत्पादित मिर्च तथा मसालों से बनने वाली चुख का भी अपना एक अलग स्थान है। अचार के रूप में खाए जाने वाले उत्पाद की मांग देश तथा विदेशों में भी रहती है। चंबा के जनजातीय क्षेत्र में उगाई जाने वाली पारंपरिक मिर्च से चुख बनाई जाती है। इसके बनाने को स्थानीय मसाले, नींबू का तेल तथा कुछ अन्य वस्तुएं उपयोग में लाई जाती है। इस पारंपरिक खाद्य वस्तु के संरक्षण में चंबा के एक उद्यमी पंकज चौफला के प्रयास सराहनीय है। उन्हें एक उद्यम बनाकर इसका उत्पादन पारंपरिक तौर पर करना वर्ष 1989 में हिमाचल प्रदेश वित्त निगम से 12 लाख रुपये का ऋण लेकर करना आरंभ किया। आरंभिक वर्षों में तो अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। धीरे-धीरे व्यवसाय आगे बढ़ा। पिछले वर्ष चुख का व्यापार 1.7 करोड़ रुपये का हुआ है। वे आज अनेक तरह की चुख उत्पादित कर रहे हैं। इनमें हरी तथा लाल मिर्च पर आधारित चुख अत्यधिक लोकप्रिय है। इसके अलावा चंबा की जरीस भी खाद्य उत्पादों में अलग स्थान रखती है। जरीस एक प्रकार का मुख शुद्धि का मिष्ठान है, जो विशेषतः चंबा नगर में प्रसिद्ध है और इसे प्रायः भोजन के उपरांत खाया जाता है। जरीस में गरी का बुरादा, सुपारी के छोटे टुकड़े, बड़ी इलायची, कुज्जा मिस्री, सौंफ व सूखे मेवे मिलाए जाते हैं।



मिंजर महोत्सव

बरखा-बहार में सांस्कृतिक सम्मोहन

● रवि वर्मा

चंबे रे चुगाना मिंजरा लगोरी हो,
मिंजरा लगोरी ते रौणका लगोरी हो।
चल मिंजरां जो जाणा मेरी प्यारिये,
चल मिंजरा जो जाणा हो।
लिहसी जंघा पेंडा-किह्यां लाणा, मेरे प्यारुआ।
चंबे मिंजरां किह्यां जाणा हो।

मिंजर मेला चंबा जनपद की आन-बान व शान कहलाता है। यह यहां की संस्कृति, जनजीवन, परंपराओं, आपसी सौहार्द के उच्च आदर्शों को सदियों से संजोए हुए है। मेला मिंजर पर आधारित सैकड़ों लोकगीत प्रचलित हैं। सावन की फुव्वारों में इन सुमधुर लोकगीतों में सरल एवं सौम्य पहाड़ी जनवजीन का मार्मिक तथा भावपूर्ण चित्रण नृत्य तथा गायन में सुनने व देखने को मिलता है। मिंजर का मेला हजार वर्ष से भी अधिक पुराना है। यह बात एक चिरंतन सत्य है कि 'मिंजर' चंबा के आम जनजीवन एवं मानसिकता के साथ बहुत ही मजबूती के साथ जुड़ी है। समय के साथ बदलाव जरूर देखने को मिले हैं, लेकिन मेले का मूल रूप-रंग, उमंग व तरंग सब कुछ यथावत है। इस मेले की सुंदरता यह है कि इसे देखने, मनाने तथा इसमें शिरकत करने के लिए चंबा जनपद के निवासी बड़ी उत्सुकता, व्यग्रता तथा उत्कंठा से वर्षभर लंबी प्रतीक्षा करते रहते हैं। चंबा के बाहर अन्यत्र गया हुआ अथवा स्थायी व अस्थायी रूप से बाहर बसा 'चंबयाल' मिंजर को चंबा अवश्य ही पहुंचता है।



स्वतंत्रता पूर्व राजाओं के शासनकाल में मेला मिंजर को देखने पूर्वकालीन चंबा रियासत के सभी क्षेत्रों- पांगी, चुराह, भरमौर, भटियात तथा अन्य परगनों के लोग अपनी-अपनी पारंपरिक वेशभूषा में सुसज्जित होकर चंबा नगर पहुंच कर चौगान में डेरा डाले रहते थे। वर्तमान समय में मिंजर मेले का स्वरूप धार्मिक, सांस्कृतिक के साथ-साथ व्यापारिक हो गया है। देश-विदेश से आने वाले पर्यटकों के लिए भी मेला आकर्षण का केंद्र बना है।

हिमाचल प्रदेश का चंबा जनपद बीते जमाने से ही अपनी समृद्ध लोक- संस्कृति, शिल्प कला, रहन -सहन, मेलों ,त्योहारों और कुदरती खूबसूरती के लिए विश्व विख्यात रहा है। स्वतंत्रता प्राप्ति से पूर्व यहां के शासकों का प्रजा प्रेम, पराक्रम और अपनी संस्कृति एवं शिल्प कलाओं को प्रश्रय देने के उदाहरण विरले देखने को मिलते हैं। चंबा जनपद को शिव भूमि के तौर पर भी जाना जाता है। चंबा में सावन का महीना उमंग और उल्लास की एक ऐसी छटा लेकर आता है जब प्रकृति भी अपने पूरे यौवन पर होती है। किसान और बागवान अपनी अच्छी फसल की कामना के साथ मेलों और त्योहारों को पूरी शिद्दत के साथ मनाने के लिए उत्सुक रहते हैं। सावन के महीने में कभी रिमझिम बारिश तो कभी आसमान में सूरज का बादलों से लुका छिपी का खेल चलता रहता है। ऐसे ही मौसम में चंबा जनपद के लोग मनाते हैं मिंजर मेला। एक ऐसा ऐतिहासिक और सांस्कृतिक मिंजर मेला जो हर साल सावन महीने के दूसरे रविवार से शुरु होकर तीसरे रविवार तक चलता है। सदियों से चले आ रहे इस लोक मेले को अब प्रशासन आयोजित करता है। मिंजर मेले के वर्तमान स्वरूप और चंबा जनपद के जनमानस का उल्लेख करने से पहले इसके आयोजन

की पृष्ठभूमि से जुड़ी जनश्रुतियों को जानना रुचिकर रहेगा। चंबा का मिंजर मेला शायद भारत का एकमात्र ऐसा लोक उत्सव होगा जिसमें वर्तमान परिप्रेक्ष्य में भी सामुदायिक सौहार्द की अनूठी झलक देखने को मिलती है। मेले के शुभारंभ से जुड़ी ये रस्म चंबा जनपद के सामाजिक ताने-बाने को और मधुर व पुख्ता करती है। मेले का आयोजन प्रारंभ से लेकर आज तक पुरातन रस्मों के मुताबिक ही होता है।

मिंजर के आयोजन की पृष्ठभूमि से जुड़ी हैं विविध लोक मान्यताएं

ऐसा माना जाता है कि किसी समय इरावती यानी रावी नदी वर्तमान में मौजूद चौगान से होकर बहती थी। नदी के उस पार स्थित मंदिर में पूजा-अर्चना के लिए तैरकर जाना पड़ता था। राजा ने इस समस्या के निदान को लेकर एक यज्ञ का आयोजन करने को लेकर राज पुरोहितों से मंत्रणा की। फैसला हुआ कि एक ऐसे यज्ञ का आयोजन किया जाए ताकि रावी नदी अपना बहाव बदल ले। ऐसी मान्यता है कि यज्ञ के संपन्न हो जाने के बाद रावी ने अपना बहाव बदल लिया। इसी आयोजन को कालांतर में मिंजर



मेले के रूप में मनाया जाने लगा। मेले से जुड़ी एक अन्य लोक धारणा भी है। इसके मुताबिक चंबा रियासत के राजा जब पड़ोसी राज्य को जीतकर विजय पताका फहराते अपने राज्य की सीमा में पहुंचे तो प्रजा ने मकई के पौधे के सिरे पर उगने वाली मिंजर उपहार स्वरूप भेंट कर उनका स्वागत किया। इस प्रिय और मान्य भेंट को निश्चित दिन सादर विधि विधान के साथ रावी नदी में विसर्जित कर दिया गया। विजय का हर्ष तथा मंजरी के नदी में विसर्जन का पवित्र कार्य कालांतर में हर वर्ष दोहराया जाने लगा और आज का मिंजर मेला इसका विकसित तथा परिवर्तित रूप है।

डॉ. मैथिली प्रसाद भारद्वाज के मिंजर ऐतिहासिक एवं जैव परिप्रेक्ष्य में मिंजर में विवेच्य तत्त्व है।

(क) मिंजर के अवसर पर धान की बाली के प्रतीक रूप में गोटे या तिल्ले की मिंजर बांधी जाती है।

(ख) उसे विधि-विधान के साथ जल में प्रवाहित किया जाता है और इसके साथ फल-मिठाई का भी जल में समर्पण होता है।

(ग) आज से प्रायः 25/30 वर्ष पूर्व तक एक जीवित भैंसा भी रावी में मिंजर के साथ प्रवाहित किया जाता था तथा नगरवासियों की यह कामना और प्रयास रहता था कि प्रथमतः तो वह मर जाए, या कम से कम जीवित अवस्था में नदी के दूसरे तट पर ही लगे, उनकी अपनी ओर नहीं। आज भैंसे के स्थान पर नारियल की बलि दी जाती है, परंतु प्रतीकात्मक प्रयोग स्पष्ट है।

संभवतः मिंजरों से जुड़ा यह विजय पर्व ही आगे चलकर मिंजर का मेला कहलाया। अगर मिंजर के मेले के आयोजन के समय को देखें तो यह वही समय है जब मकई की फसल में मिंजर आती है। वहीं, किसान भी अच्छी फसल के प्रति आशान्वित हो उठता है। इस तथ्य से भी धारणा को बल मिलता है कि तत्कालीन राजा की विजय और खेत- खलिहानों में उगी फसलों के प्रति किसानों की उम्मीद पर यह मेला आधारित है। मेले का संबंध वरुण देवता से भी जोड़ा जाता है। मेले का समापन आकर्षक शोभायात्रा के साथ होता है जो अखंडचंडी महल से शुरू होकर रावी के तट पर जाकर समाप्त होती है। यहां मिंजर नारियल फल के साथ रावी नदी में विसर्जित की जाती है ताकि धन-धान्य में वृद्धि हो और जनपद में सुख- शांति रहे। यह इस बात का द्योतक है कि मिंजर का आयोजन वरुण देवता को प्रसन्न करने के लिए भी किया जाता है।

मिंजर के शुभारम्भ अवसर पर चंबा शहर के मुस्लिम मिर्जा परिवार की भूमिका आज भी उतनी ही महत्त्वपूर्ण है जितनी कि इस मेले के उद्भव के समय रही होगी। मिर्जा परिवार ही सर्वप्रथम भगवान रघुवीर और लक्ष्मीनाथ को अपने हाथों की कारीगरी से तैयार सुच्चि (रेशमी) मिंजर अर्पित करता आया है। वर्तमान में भी मिर्जा परिवार के एजाज मिर्जा इस रस्म को अदा कर रहे हैं। इससे पूर्व उनके बड़े भाई मरहूम टेलर मास्टर असगर बेग मिर्जा मिंजर प्रारंभ के मौके पर इस धार्मिक एवं सांस्कृतिक परम्परा को निभाते रहे। सामुदायिक सौहार्द , भाईचारे और सांस्कृतिक एकता का यह अनूठा उदाहरण उन लोगों को राह दिखाने वाला है जो इंसान और इंसानियत के सही मायनों को समझने की चेष्टा नहीं करते। एजाज मिर्जा बताते हैं। पुरानी पीढ़ी और अपने पुरखों की बात अपनी जगह पर है, पर मिर्जा परिवार की युवा पीढ़ी भी इस उत्सव के साथ आज भी जुड़ाव महसूस करती है। इस परिवार की बेटियां और पुत्र बधुएं भी रेशमी मिंजर तैयार करने में पूरा सहयोग देती है।



मिंजर मेले में जहां लोक संस्कृति और लोक जीवन के विविध रंगों की झलक देखने को मिलती है वहीं खेल स्पर्धाओं के आयोजन को भी पूरी तरजीह दी जाती है। इनमें बाहर से आई टीमें हिस्सा लेती हैं। उपायुक्त एवं अध्यक्ष मिंजर मेला आयोजन समिति सुदेश मोख्टा कहते हैं कि इस साल भी दर्शकों को न केवल बॉलीवुड कलाकारों बल्कि हिमाचली और अन्य राज्यों के लोक नर्तक दलों को सुनने व देखने का मौका मिलेगा। खेल स्पर्धाओं में एथलैटिक्स और कबड्डी को शामिल किया गया है। 'बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ' थीम के प्रति जन चेतना जागृत करने के मकसद से हाफ मैराथन भी होगी। वे कहते हैं, 'मेले में सुरक्षा और कानून व्यवस्था चाक-चौबंद रखने के निर्देश दिए गए हैं । सीसीटीवी कैमरों के जरिए भी निगाह रखी जाएगी। मेले के दौरान साफ-सफाई व स्वच्छता सुनिश्चत करने का काम एक अलग उपसमिति देखेगी।

मिंजर मेले के प्रथम दिन सुबह नगर परिषद कार्यालय परिसर से शोभायात्रा निकलती है जो भगवान भगवान लक्ष्मीनाथ मंदिर पहुंचती है जहां विधि विधान के साथ पहली मिंजर अर्पित की जाती है। इसके बाद मिंजर अखंडचंडी महल में प्रतिष्ठापित भगवान लक्ष्मीनाथ को चढ़ाई जाती है। इष्ट देवों को मिंजर अर्पण की रस्म के पूरा होते ही शोभायात्रा वापिस चौगान पहुंचती है और कूंजड़ी-मल्हार गायन के बीच मिंजर मेले का विधिवत शुभारम्भ हो जाता है ।

मिंजर विसर्जन पर भी गाया जाता है कूंजड़ी-मल्हार

मेले के प्रारंभ में मिंजर का विसर्जन भी कोई कम कोतूहलपूर्ण नहीं होता था। बताते हैं कि मिंजर विसर्जन के दौरान जिंदा सांड को रावी में धकेल दिया जाता था। सांड वापिस आए तो अपशकुन और पार पहुंचे तो शुभ समझा जाता था। अब ये प्रथा दशकों से बंद है। वर्तमान में मिंजर और नारियल फल को विसर्जित किया जाता है। मेले के समापन पर आए मुख्य अतिथि जुलूस की अगुवाई करते हुए सबसे पहले मिंजर विसर्जित करते हैं। इस मौके पर भी चंबा का पारंपरिक लोक गायन 'कूंजड़ी -मल्हार' गाया जाता है।

कूंजड़ी-मल्हार और मुसाधा से होता है सांस्कृतिक संध्याओं का आगाज'

चौगान में आयोजित किए जाने वाले सांस्कृतिक कार्यक्रम लोगों के आकर्षण का सबसे बड़ा केंद्र रहते हैं। सांस्कृतिक संध्याओं में सिने जगत के कलाकारों के अलावा हिमाचल प्रदेश और अन्य राज्यों से आने वाले कलाकार और लोक नृत्य दल अपनी प्रस्तुतियां देते हैं। सांस्कृतिक संध्या में चंबा जिला की समृद्ध लोक संस्कृति की झलक अलग से प्रस्तुत की जाती है। सभी सांस्कृतिक संस्थाओं का आगाज चंबा जिला के पारंपरिक गायन यानि कूंजड़ी- मल्हार और मुसाधा के साथ होता है।

लोक उत्सव से जुड़ गया है व्यापारिक पक्ष

मेले अब विशुद्ध मेल -मिलाप व मनोरंजन तक सीमित कहाँ रह सकते हैं। चंबा का मिंजर मेला भी व्यापारिक गतिविधियों का केंद्र रहता है। जिले के हर कोने से आए लोग करोड़ों के व्यापार का हिस्सा बनते हैं।स्थानीय हस्तशिल्प को भी पहचान और ग्राहक मिलते हैं।

चंबा का अखंड चंडी महल, हरियाला चौगान और शहर के पास से होकर बहती रावी सदियों से वर्मन वंशियों के शासनकाल और उसके बाद से लेकर मौजूदा वक्त के मूक गवाह हैं। न जाने कितनी सुखद और पीड़ा भरी घटनाओं को इन्होंने अपने अंदर समेट रखा है। सावन के महीने में मिंजर मेले से जुड़े प्रसंग जब पैदा हुए होंगे तब भी तो ये लोगों के उल्लास में शामिल रहे होंगे। बेशक, ये लोक उत्सव चंबा जनपद के समग्र स्वरूप का परिचायक था जो आज भी दृष्टिगोचर होता है। उम्मीद और कामना रहेगी कि ये आने वाली सदियों तक यूं ही बरकरार रहेगा।

जिला लोक सम्पर्क अधिकारी
चंबा, जिला चंबा,हि. प्र.-176318
मो : 94185-21112

संदर्भ :

1. हिमप्रस्थ अप्रैल, 1977, 2006
2. फ्रेजर, जे.जी. गोल्डन बौ, भाग 1 व 2 लंदन, 1957,
3. हरिच्चन, जे. तथा फोगल, जे.पी. एच. हिस्टरी ऑव द पंजाब हिल स्टेट्स लाहौर, 1933,
4. सोमसी, जुलाई-दिसंबर, 2005 अंक

आलेख

विजय शर्मा
चित्रांकन व कला का महारथी

• तुलसी रमण

कला-सौंदर्य के लिए विश्व प्रसिद्ध 'पहाड़ी लघु चित्रकला' ने अपनी सुदीर्घ परंपरा में अनेक पीढ़ियों के चित्रकारों और सौंदर्य शास्त्रियों पर अपनी अमिट छाप छोड़ी है। पहाड़ी शासकों के प्रश्रय में 17वीं से 19वीं शताब्दी तक अपने उत्कर्ष तक पहुँची इस पहाड़ी चित्रकला के अनूठे चित्र आज भी देश-विदेश के अनेक कला-संग्रहालयों की अमूल्य निधियों में शामिल हैं। उस काल के अनेक कालजयी चित्रकारों ने अपने कला-कौशल से इस चित्र विधा में अनुपम सौंदर्य की सृष्टि की है। दूसरी ओर हिमाचल भूमि के पुराने चंबा राज्य में कला-संस्कृति का स्वर्णिम इतिहास 8वीं सदी के राजा मेरु वर्मन के समय से चला आ रहा है, जब इस राज्य की राजधानी ब्रह्मपुर (भरमौर) में थी। तभी से चंबा राज्य में काष्ठ, प्रस्तर तथा वास्तुकला के अनुपम साक्ष्य मंदिरों और महलों आदि के रूप में मिलते हैं। यहाँ की धातु प्रतिमाएँ तो विश्वकला की धरोहर मानी जा रही हैं।



चंबा नगर के पहाड़ी चित्रकार विजय शर्मा आज अपनी विधा में ख्याति के शिखर पर हैं। उनके हिस्से की उल्लेखनीय बात यह है कि वह केवल चित्रकार नहीं हैं; पहाड़ी चित्रकला के इतिहासकार, समीक्षक और प्रसारक होने के साथ हिमाचल प्रदेश की पुरा-संपदा के व्याख्याता भी हैं। बहुत छोटी उम्र में पहाड़ी चित्रकला में कला गुरु का स्थान पाने वाले विजय शर्मा आज वास्तव में चंबा-कांगड़ा की बहुविध कला धरोहर की व्यापक पहचान करा रहे हैं। वह साथ ही नई पीढ़ी के अनेक चित्रकारों के मार्गदर्शक भी साबित हो रहे हैं। विजय शर्मा के कला विश्लेषण से ज्ञात होता है कि इन्होंने चित्रों के पारंपरिक विषयों के बीच गहरे उतरने की गरज से संस्कृत ग्रंथों और मध्यकालीन हिंदी काव्य का गहन अध्ययन किया है। विजय शर्मा अनुपम चित्रकार होने के साथ इस कला-विधा के इतिहास, रचना विधान और सौंदर्यबोध के गंभीर अन्वेषक भी हैं। इस तरह अपनी प्रतिभा और अभिरुचि के रहते चित्रांकन और कला मीमांसा के दोनों स्तरों पर इन्होंने महारत हासिल कर ली है।

विजय शर्मा ने कुछ अरसे तक शिमला व फिर भूरि सिंह संग्रहालय चंबा स्थानांतरित हो गए और अपनी नगरी में रच-बस गए।

विजय शर्मा ने पिछले तीन दशकों में जहाँ चित्रांकन के स्तर पर अपनी तूलिका में उत्कृष्टता पाई है, वहीं अंग्रेज़ी तथा हिंदी दोनों भाषाओं में अपने अध्ययन और अभ्यास से ऐसी योग्यता हासिल कर ली है कि वह इन भाषाओं में अधिकार के साथ समीक्षा और व्याख्यान कर सकते हैं। 12 सितंबर, 1962 को चंबा नगर में जन्मे इस कलाकार ने एम.ए. इतिहास के साथ हिंदी साहित्य में प्रभाकर की शिक्षा भी प्राप्त की है। विजय ने लघुचित्र कला का प्रशिक्षण भारत कला भवन, वाराणसी के गुरु चित्रकार शारदा प्रसाद तथा जयपुर के वेदपाल शर्मा 'बन्नू' से प्राप्त किया है। उन्होंने भारतीय पुरातत्त्व सर्वेक्षण द्वारा कर्नाटक के हम्पी में आयोजित पुरातत्त्व संरक्षण कैंप (1985) में भी प्रशिक्षण प्राप्त किया है। विजय शर्मा को लंदन (इंग्लैंड), हेमबर्ग व फ्रेंकफर्ट (जर्मनी), सिंगापुर, रीटबर्ग, ज्यूरिक (स्विटज़रलैंड), वाशिंगटन (अमेरिका) आदि के कला संग्रहालयों में पहाड़ी चित्रकला पर सोदाहरण व्याख्यान के अनेक मौके मिले हैं और इसी तरह की प्रस्तुतियाँ अहमदाबाद, वाराणसी, कोलकाता तथा मुंबई में भी इन्होंने दी है।

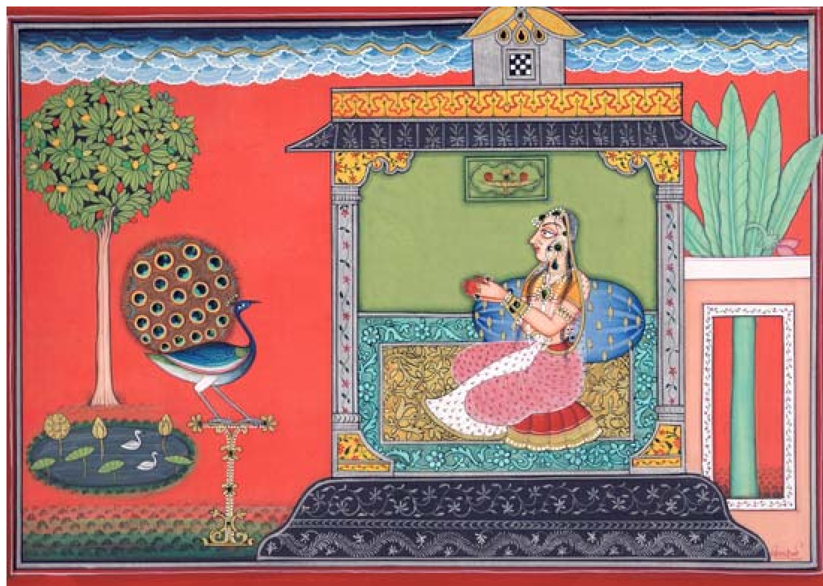
विजय शर्मा की अंग्रेज़ी तथा हिंदी में कई कला विषयक पुस्तकें पिछले वर्षों में प्रकाशित हुई हैं। इनमें *'चंबा पेंटिंग : ओरीजिन एंड डिवेलपमेंट, टेंपल ऑफ देवी कोठी* (डॉ. फिशर तथा डॉ. वी.सी. ओहरी के साथ), *हिस्टॉरीकल टाकरी डाक्युमेंटस रिलेटिंग टू द हिस्ट्री ऑफ वेस्ट्रन हिमालय* (डॉ. ओहरी के साथ),

कान्हाप्रिया तथा *द लव स्टोरी ऑफ ऊषा-अनिरुद्ध* (डॉ. हर्ष देहेजिया के साथ) तथा *कांगड़ा की चित्रांकन परंपरा* पुस्तकें प्रमुख हैं। इन्होंने *विज़न ऑफ एन एन्लाइटेंड किंग, डाइवर्स वर्ड ऑफ इंडियन पेंटिंग* (उषा भाटिया और ए.एन. खन्ना के साथ) तथा भूरिसिंह संग्रहालय सूवेनियर आदि प्रकाशनों का संपादन भी किया है। विजय शर्मा के अनेक लघुचित्र राज्य संग्रहालय शिमला, भूरिसिंह संग्रहालय-चंबा, कांगड़ा कला संग्रहालय- धर्मशाला, क्राफ्ट म्यूज़ियम-नई दिल्ली, फाईन आर्ट म्यूज़ियम पंजाब विश्वविद्यालय-चंडीगढ़, पंजाबी यूनिवर्सिटी- पटियाला, म्यूज़ियम रीटबर्ग-ज्यूरिक (स्विटज़रलैंड) विक्टोरिया एंड एल्वर्ट म्यूज़ियम-लंदन तथा आर्थुर एम. सेकलर गेलरी-वाशिंगटन डी.सी. आदि की कला निधियों में सम्मिलित हैं।

विजय शर्मा को पहाड़ी चित्रकला में उल्लेखनीय कार्य के लिए अनेक पुरस्कार प्राप्त हुए हैं। इनमें हिमाचल प्रदेश स्टेट अवार्ड (1980), सिद्ध हस्तशिल्पी का राष्ट्रीय पुरस्कार (1990), कला का आईफेक्स अवार्ड (1995) प्रमुख हैं। इस बीच विजय ने जिस सक्रियता से काम किया, उनकी शोहरत भी उतनी ही बढ़ती गई। वर्ष 2011 में विजय शर्मा को पद्मश्री पुरस्कार प्राप्त होने से उनकी कला साधना को अधिमान मिला।

चित्रकार विजय शर्मा की इस कदर सफलता को देखते हुए उनके नामी कलाकार बनने की संघर्ष भरी कहानी भी कम दिलचस्प नहीं है। विजय शर्मा का परिवार मूलतः चंबा जिला के भटियात क्षेत्र के रायपुर गाँव से संबंधित था। रायपुर ब्राह्मणों का गाँव है। कृषि योग्य भूमि के बड़े भाग के स्वामी होने के कारण उनके परिवार को गाँव में 'चौधरी' कहा जाता था। दादा का आकस्मिक देहांत होने पर विजय के पिता पाँचवीं से आगे पढ़ नहीं पाए। किशोरावस्था में मोटरगाड़ी के आकर्षण में वह चंबा चले आए और ट्रांसपोर्ट विभाग में कंडक्टर नियुक्त हो गए। कालांतर में बस ड्राईवर बने।

विजय का ननिहाल चंबा के समीप 'ककियाँ' नामक गाँव में है। मामा कुशाग्रबुद्धि के थे और 26 वर्ष की आयु में स्कूल में मुख्याध्यापक बन गए थे। किंतु तीस वर्ष की अल्पायु में उनका निधन हो गया था। विजय की माता उसे बचपन से ही मामा की बातें सुनाया करती थीं। ननिहाल में मामा पूर्ण चंद शर्मा द्वारा बनाया हनुमान जी का एक चित्र दीवार पर टंगा रहता था, जिसे विजय बड़े गौर से देखा करता था। माता हमेशा प्रेरित करती रहती थी कि मामा की भांति 'लायक' बनना है। अभी विजय तीन-चार साल का था तो पिताजी की बस का नंबर लिख लेता था। उसके सामने कुछ भी लिख दो तो उसकी हू-ब-हू नकल कर लेता था। एक बार पिताजी अपने साथ पुखरी नामक गाँव ले गए। वहाँ सरदार अजीत सिंह ड्राईंग मास्टर नियुक्त थे। उन्होंने एक कागज़ पर फारसी में कुछ लिखा। विजय ने तत्काल उसकी नकल उतार दी तो वह आश्चर्यचकित हुए। विजय जब स्कूल जाने लगा तो स्लेट पर लकीरें खींचता रहता था। पिताजी ट्रेड यूनियन के नेता थे तो सोवियत रूस से प्रकाशित बालोपयोगी पुस्तकें घर ले आते थे। उन दिनों *बाल भारती* और *राजाभैया* पत्रिकाएँ छपती थीं, सो उन्हें पढ़ा जाता रहा। इस प्रकार बचपन से पुस्तकों के प्रति प्रेम रहा। विजय थोड़ा बड़ा हुआ तो पिताजी ट्रांसपोर्ट वर्कशाप में कभी-कभार ले जाते थे। वहाँ जनकराज नामक एक पेंटर थे, जो साइन बोर्ड लिखने के अलावा पोर्ट्रेट बनाने में कुशल थे। उन्होंने चित्रकला का ककहरा सिखाया। ड्राईंग की कापी पर वह पेंसिल से रेखांकन बनाना सिखाते थे। चित्रकला में विजय की रुचि इस



विजय शर्मा द्वारा बनाया गया बसोहली कलम में चित्र

सोलहवीं सदी में हुआ पहाड़ी चित्रकला का उद्भव

पदमश्री विजय शर्मा ने पहाड़ी चित्रकला के उद्भव पर भी शोध किया है। उनके शोध से ज्ञात हुआ है कि पहाड़ी चित्रकला 16वीं शताब्दी में आरंभ हुई। मुगल काल में अकबर के कार्यकाल में लाहौर में बहुत अधिक संख्या में कलाकारों को संरक्षण मिला। अकबर की मृत्यु के उपरांत उसके पुत्र जहांगीर ने मुगल सल्तनत की राजधानी दिल्ली से आगरा स्थानांतरित कर दी तथा अपने साथ कुछ चुनिंदा ही कलाकारों को लेकर गया। बचे हुए कलाकारों को पहाड़ी राजाओं ने शरण दी और पहाड़ी लघु चित्रकला को विकसित तथा बढ़ावा मिला। कांगड़ा के राजा संसार चंद ने चित्रकला को बढ़ावा देने में बड़ा योगदान दिया तथा उसे पहाड़ी चित्रकला का महान संरक्षक माना जाता है। वर्तमान में विजय शर्मा चंबा के भूरि सिंह संग्रहालय में वरिष्ठ कलाकार के पद पर कार्यरत हैं। वे पहाड़ी चित्रकला की इस विधा को लोकप्रिय बनाने में एक साधक की तरह साधनारत हैं।

हद तक थी कि वह पाठ्य पुस्तकों में छपी महाराणा प्रताप और शिवाजी आदि की आकृतियों की नकलें उतारता रहता, जिससे सहपाठियों से दाद मिलती थी। छठी कक्षा में संस्कृत या ड्राईंग विषयों का विकल्प आया। सभी कहने लगे कि ब्राह्मण हो तो संस्कृत रखो। विजय ने घर में अपनी बड़ी बहन बीना को संस्कृत की गरदानें रटते हुए देखा था। इस रटंत विद्या के बदले उसने ड्राईंग का विषय चुना।

पिता जी अब शिमला में कार्यरत थे। इस दौरान एक बंगाली चित्रकार अचिंत्य कुमार भट्टाचार्य घूमने के लिए शिमला आया था। उससे पिता जी की मित्रता हो गई। भट्टाचार्य जलरंगों में भू-दृश्य बनाने और सामने बैठे व्यक्ति का पेंसिल से स्कैच बनाने में उस्ताद थे। जब उन्हें चंबा के बारे में बताया गया तो वह चंबा आ गए और विजय के घर में कुछ महीनों अतिथि बनकर रहे। वह जहाँ भी जाते तो वाटर कलर में चित्रांकन शुरू कर देते। विजय उनके साथ बैठकर उनका अनुसरण करता रहा। उनकी शागिर्दी में विजय के चित्रांकन में द्रुत गति से विकास होता गया। भट्टाचार्य ने वापिस जाने से पहले स्कूल के ड्राईंग मास्टर मिर्ज़ा असगर बेग से कहा कि 'इस लड़के को आपके सुपुर्द छोड़कर जा रहा हूँ।' इस प्रकार विजय मिर्ज़ा असगर बेग का प्रिय शिष्य बन गया। मिर्ज़ा साहब तैलचित्र में पोर्ट्रेट बनाने, जलरंगों में वन्य प्राणियों का चित्रांकन करने में माहिर थे। हिंदी और अंग्रेज़ी के शब्द ब्रश के साथ लिखने की कला भी उन्हीं से सीखी। फिर किसी ने सलाह दी कि चित्रों को प्रदर्शित किया जाए और भूरि सिंह संग्रहालय के अधिकारी सुरेंद्र मोहन सेठी से भी मिला दिया।

विजय तब संग्रहालय जाकर पहाड़ी शैली के चित्रों को घंटों निहारता रहता था। उन चित्रों की नकल उतारने की कोशिश करता; परंतु कला सामग्री और तकनीक का ज्ञान न होने के कारण चित्र बन नहीं पाते थे। इस बीच भरमौर क्षेत्र के कुछ युवकों से मिलना हुआ, जो कांगड़ा के रैत नामक स्थान में हस्तशिल्प निगम द्वारा संचालित 'कांगड़ा चित्रकला प्रशिक्षण केंद्र' में ट्रेनिंग ले रहे थे। उनके चित्रों में आकर्षण था। वहाँ कांगड़ा शैली के चित्रकारों के वंशज चंदुलाल रैणा गुरु के रूप में प्रशिक्षण देते थे। हस्तशिल्प निगम की ओर से दो वर्ष की अवधि के लिए वजीफा भी मिलता था और छात्रावास की सुविधा भी थी। 10वीं की परीक्षा के बाद विजय ने वहाँ जाने की ठान ली और चयन भी हो गया। 75 रुपये मासिक वजीफा मिलता था। इधर परीक्षा में असफल होने के कारण ट्रेनिंग छोड़कर वापिस चंबा जाना पड़ा।

विजय ने साईन बोर्ड से लेकर जलरंगों व तैलचित्रों में पोर्ट्रेट के अलावा पहाड़ी शैली के चित्र भी बनाए। पेंटर के रूप में दुकान भी की। उस अवधि में इतने चित्र बनाए कि उन्हें बेचकर परिवार का खर्चा चलाया। अक्तूबर, 1980 में अस्वस्थ पिताजी की नौकरी के बदले विजय को एच.आर.टी.सी. में पेंटर की नौकरी मिल गई। इन्हीं दिनों चंबा के मिंजर मेले में हिमाचल कला-संस्कृति-भाषा अकादमी का स्टाल लगा। उसमें अकादमी की पुस्तकों के अतिरिक्त पहाड़ी शैली के चित्रों को प्रदर्शित किया गया था। इन चित्रों के कलाकार ओमप्रकाश सुजानपुरी से मालूम हुआ कि उन्होंने राजस्थान के जयपुर से कला का प्रशिक्षण लिया है। कुछ समय बाद सुजानपुरी प्रवास पर चंबा आये। उन्होंने शक्ति देवी मंदिर गाँव गंड के भित्ति चित्रों की अनुकृतियाँ बनाने में विजय को अपना सहायक बनाया। उनके साथ काम करते हुए चित्रांकन संबंधी कई जानकारियाँ मिलीं। कला साधना निरंतर चलती रही और अपने हुनर से भाषा अधिकारी चंबा में संरक्षण सहायक के पद पर नियुक्ति मिली। इस तरह विजय शर्मा का भाषा-संस्कृति विभाग में प्रवेश हुआ और शिमला की नियुक्ति के बाद भूरिसिंह संग्रहालय, चंबा में चित्रकार के पद पर नियुक्ति हो गई। इस समय वहीं वरिष्ठ चित्रकार के रूप में सेवारत रहते हुए चित्रांकन, लेखन तथा समीक्षा-संपादन आदि कार्यों में सक्रिय हैं।

कला का यह साधक पहाड़ी चित्रकला को पहाड़ों से निकल कर विदेशों तक लोकप्रिय बनाने में अव्वल रहा है तथा आज भी हिमाचल को हर पल ख्याति दिलाने तथा इस कला धरोहर के संरक्षण में हर पल कार्यशील हैं। एक गरीब घर के बाल का जीवन सदा के लिए एक प्रेरणास्रोत बन गया है।

दयार-दुर्गा कालोनी, ढली,
शिमला-171 012, मो : 0 94180 86986

आलेख

समकालीन हिंदी साहित्य के विविध आयाम

● डॉ. हेमराज कौशिक

समकालीन शब्द मूल अर्थ के काण्टेम्पोरेरी (Contemporary) शब्द का समतावादी है जिसका अर्थ है उसी समय या कालखण्ड में होने वाली घटना या प्रवृत्ति या एक ही कालखण्ड में जी रहे व्यक्ति। विभिन्न कोशगत अर्थों के साक्ष्यों के बावजूद समकालीन शब्द व्यापक और लचीला अर्थ लिए हुए है। डॉ. आनंद प्रसाद दीक्षित समकालीन को कालबोध के लिए प्रयुक्त भाववाचक संज्ञा ही नहीं मानते अपितु सर्जना के धरातल पर उसे जीवंतता प्रदान करने वाली शक्ति के रूप में स्वीकार करते हैं और डॉ. रामस्वरूप् चतुर्वेदी समकालीन को काल बोधक मानते हुए आधुनिक प्रवृत्तियों से अभिप्रेरित रचनात्मकता को केन्द्र में रखते हैं। वस्तुतः समकालीन अपने काल की समस्याओं, चुनौतियों को समझना और उन्हें अभिव्यक्ति प्रदान करना है। समकालीन काल बोध के साथ-साथ काल की चेतना और गतिशीलता के भाव को अपने में समेटे हुए हैं। अपने काल की समस्याओं एवं चुनौतियों का मुकाबला करने का नाम ही समकालीनता है। समकालीनता का बोध रखने वाला रचनाकार अपने समय की घटनाओं, समस्याओं और अपने समय की गतिविधियों के प्रति सजग रहता है। उनके बारे में गहराई से सोचता है और उनके निवारण और उपचार के लिए इतिहास और अतीत को भी झांकता है। समकालीनता की प्रवृत्ति परिवर्तनशीलता से जुड़ी होती है। इसमें गतिशीलता और विकासोन्मुखता विद्यमान है। समकालीन रचनाकार में स्वचेतना, संवेदनशीलता, कालबोध की समझ, जनविरोधी शक्तियों के विरोध में सहभागिता आदि का होना आवश्यक है।

समकालीन हिंदी साहित्य की पूर्वशती के अंतिम दशक और इक्कीसवीं शती के इन दो दशकों में हिंदी साहित्य का कथ्य विराट और बहुआयामी हो चला है। इसका सबसे बड़ा कारण यह रहा है कि समाज के सभी क्षेत्रों से ऐसे रचनाकार आ रहे हैं जिनके पास अपने अनुभव क्षेत्र की अपनी अनुभव संपदा है। अपने अनुभव संपदा के कारण हिंदी साहित्य बहुआयामी हो गया है। अपने समय और समाज से जूझते हुए अनेक ज्वलंत समस्याओं, प्रश्नों पर विमर्शमूलक सृजन हुआ है। समकालीन हिंदी साहित्य के सृजन और चिंतन को लेकर विविध आयाम हैं। उन सभी पक्षों पर बात करना कदाचित संभव भी नहीं है परन्तु कुछ प्रमुख विमर्शों के संदर्भ में हिंदी साहित्य के समकालीन परिदृश्य को प्रस्तुत करने का विनम्र प्रयास है।

समकालीन हिंदी साहित्य की विविध विधाओं में दलित विमर्श की अनुगूँज वर्षों पूर्व के साहित्य की कृतियों में विद्यमान है और उन्होंने दलित वर्ग की विविध समस्याओं, उत्पीड़न और शोषण को अभिव्यक्ति प्रदान की है। परन्तु साहित्य के व्यापक परिप्रेक्ष्य में इसकी परिधि संकुचित ही रही है। इसे व्यापक रूप प्रदान करने का श्रेय दलित रचनाकारों को ही है। उन्होंने दलित लेखन को सामाजिक-सांस्कृतिक आन्दोलन का हिस्सा बनाया। दलित रचनाकारों ने कविता, कहानी, उपन्यास, आत्मकथा और आलोचना में दलित समाज की पीड़ा को व्यंजित किया है। मोहनदास नैमिशराय, ओम प्रकाश बाल्मीकि, लालचंद राही, सी. बी भारती, जय प्रकाश कर्दम, श्मौराज सिंह बेचैन, सुशील टाकमौर आदि अनेक कवियों ने दलित समाज की पीड़ा, आक्रोश और अन्याय को व्यंजित किया है। दलित साहित्यकारों ने वेदना, विद्रोह और आक्रोश के साथ-साथ वैचारिक प्रतिबद्धता को भी अपनी भाषा में प्रधानता से अपनाया है। दलित रचनाकार सामाजिक यथार्थ के प्रति सिर्फ संवेदनशील ही नहीं सजग भी हैं। दलित कविता में बिंब दलित जीवन की त्रासदी और उसके यथार्थ को व्यक्त करते हैं। दलित कविता में अंधेरा, आसपास के परिवेश की गंदगी की सड़ाँध, सीलन भरे तंग मकानों में सिसकती जिन्दगी दलित जीवन के यथार्थ हैं जो उनके जीवन के अविभाज्य घटक बन गए हैं। (ओम प्रकाश बाल्मीकि, दलित साहित्य का सौंदर्य शास्त्र पृ. 84-85)

समकालीन हिंदी उपन्यासों तथा कहानियों में दलित समस्या एक गम्भीर चिंता और सामाजिक सरोकार का विषय रहा है। काशीनाथ सिंह के 'काशी का अस्सी', रेहन पर रग्धू, रवीन्द्र वर्मा के 'आखिरी मंजिल', अजय नवारिया के 'उधर के लोग', रामधारी सिंह दिवाकर के 'अकाल संध्या', मुद्राराक्षस के 'अर्धवृत' और एस. आर हरनोट के 'हिडिम्ब' में दलित विमर्श प्रभावी रूप में आया है। काशीनाथ सिंह के 'काशी का अस्सी' में दलित की स्थिति को चुनाव के संदर्भ में विश्लेषित किया गया है। 'रेहन पर रग्धू' में दलित समस्या को कई कोणो से देखकर चिंतन किया गया है। शिक्षा के प्रसार और दलितों के आरक्षण और सवर्णों के आक्रोश की अनेक स्थितियों के ब्योरे उपन्यास में विद्यमान है।

अजय नवारिया ने 'उधर के लोग' में दलित समस्या को एक अन्य कोण से देखा है। उन्होने जातीयता की समस्या के उस पक्ष को उजागर किया हैं जिसमें स्वयं दलित समाज में भी ऊँच-नीच की दीवार विद्यमान है। रामधारी सिंह दिवाकर के 'अकाल संध्या' में प्रमुख रूप में गांव के दलित के अभ्युदय और ठकुराई को चुनौती देते अनेक तेवर विद्यमान हैं। गांव में मंडल आयोग के आरक्षण के अनंतर एक नयी जागृति दलितवर्ग में आयी है। उसका चित्रण उपन्यास में हुआ है। मुद्राराक्षस के 'अर्धवृत' में आत्मकथात्मक शैली में दलित वर्ग की व्यथा कथा को प्रस्तुत किया गया है। एस. आर. हरनोट के 'हिडिम्ब' में हिमाचल प्रदेश में आयोजित होने वाले सांस्कृतिक, धार्मिक उत्सव 'काहिका' के संदर्भ में शावणु के माध्यम से दलित समाज की पीड़ा को मुखरित किया गया है।

हिंदी दलित कहानी का समकालीन परिदृश्य आठवें दशक में तेजी से उभरता है और नये रचनाकार अपनी कहानियों के माध्यम से दलित साहित्य को सशक्त आधार देने का प्रयत्न करते हैं। दलित कहानी बदलते सामाजिक परिदृश्य में यथार्थ चित्रण की एक विशिष्ट धारा के रूप में सामने आती है। मोहनदास नैमिशराय, ओम प्रकाश बाल्मीकि, सूरजपाल चौहान, दयानंद बरोही, सुशीला टाकमौरे, रमणिका गुप्ता, जयप्रकाश कर्दम, रजतराती मीनू, कुसुम मेधववाल, श्यौराजसिंह बेचैन, एस. आर.हरनोट आदि की कहानियों में यथार्थ की संघर्षपूर्ण स्थितियों, सामाजिक विषमताओं, भेदभाव और अंतर्विरोधों की अभिव्यक्ति हुई है। इन कहानियों में भारतीय गांव में व्याप्त वर्ण व्यवस्था, सामंती व्यवस्था में पिसते दलितों का हाहाकार है, वहीं छोटे बड़े शहरों, महानगरों में बसे सरकारी नौकरियों में जीवन निर्वाह करते अधिकारियों, कलर्कों, कर्मचारियों की व्यथा कथाएं हैं तथा दलितों में उभरते आक्रोश, विरोध और संघर्ष की तीव्र चेतना विद्यमान है। एन सिंह द्वारा संपादित दलित कहानी संग्रह 'यातना की परछाइयाँ', मोहनदास नैमिशराय का 'आवाजें', सूरजपाल चौहान का 'हेरी कब आएगा' दयानंद बरोही का 'सुरंग', कफन खोर' सुशीला टाकमौरे का 'टूटता बहम', ओमप्रकाश बाल्मीकि का 'सलाम' और 'छतरी' और एस. आर. हरनोट का 'जीनकाठी तथा अन्य कहानियाँ आदि संग्रह इस दृष्टि से उल्लेखनीय हैं।

'दलित आत्मा कथाएं' दलित विमर्श की महत्वपूर्ण विधा के रूप में सक्रिय है। यह विमर्श चिंतन-मनन और सिद्धान्तों की स्थापना तक ही सीमित नहीं है अपितु इन आत्मकथाओं के माध्यम से इसे और अधिक प्रामाणिक और प्रासंगिक रूप में साहित्यिक परिदृश्य में प्रस्तुत किया जा रहा है। हिंदी में अनेक आत्मकथाएं लिखी गयी हैं। ओमप्रकाश बाल्मीकि की 'जूठन' मोहनदास नैमिशराय की 'अपने-अपने पिंजरे', श्यौराज सिंह 'बेचैन' की 'मेरा बचपन मेरे कंधो पर', सुशीला टाकमौर की 'शिकंजे का दर्द', तुलसीराम की 'मुर्दहिया' और 'मणिकर्णिका' सूरजपाल चौहान की 'तिरस्कृत' तथा मराठी से हिंदी में अनूपित ल.सी. जाघव की 'दाह' आदि कुछ महत्वपूर्ण आत्मकथाएं हैं। इन सभी आत्मकथाओं का निजी महत्व है। सभी दलित आत्मकथाओं में बहुत-सी समस्याएं हैं। एक ही जाति, समुदाय की आत्मकथाएं होने के बावजूद इनमें भिन्नता और वैशिष्ट्य है। कोई आत्मकथा किसी अन्य का विकल्प नहीं हो सकती। किसी एक आत्मकथा लेखक की स्वानुभूति किसी अन्य से कुछ सीमा तक साधारणीकृत हो दूसरे की अनुभूति का अंग बन सकती है। परन्तु स्वानुभूति किसी अन्य का विकल्प नहीं होती। इन आत्मकथाओं में अनेक जीवनानुभव की परिधि व्यक्ति से समाज की ओर उन्मुख हुई है। लेखकों ने अपने जीवन के अनेक प्रसंगों, घटनाओं के आलोक में यह प्रतिपादित किया है। वर्णव्यवस्था, जातिवाद, आर्थिक असमानता, अशिक्षा, निर्धनता, परंपरागत जड़ विश्वास आदि दलित समाज के उत्पीड़न के प्रमुख कारण हैं।

समकालीन हिंदी साहित्य का एक आयाम भूमंडलीकरण से संबंध रखता है। भूमंडलीकरण और बाजारवाद की नीतियों का व्यापक प्रभाव हिंदी साहित्य पर पड़ा है। नव उपनिवेशवाद, नवसांस्कृतिक साम्राज्यवाद, नव पूंजीवाद और नव उदारतावाद के प्रभाव से समाज और साहित्य अछूता नहीं है। इसके परिणाम स्वरूप हमारी कला, धर्म, संस्कृति, साहित्य दर्शन आदि सभी क्षेत्रों में सांस्कृतिक क्षरण से मानवीय मूल्यों का विघटन हुआ है। भूमंडलीकरण के फलस्वरूप विश्व का अर्थतंत्र और विश्व बाजार व्यवस्था का निर्माण हुआ है जिसके कारण प्रत्येक देश प्रगति और विकास के लिए इससे जुड़ा है।

समकालीन हिंदी साहित्य का एक आयाम भूमंडलीकरण से संबंध रखता है। भूमंडलीकरण और बाजारवाद की नीतियों का व्यापक प्रभाव हिंदी साहित्य पर पड़ा है। नव उपनिवेशवाद, नवसांस्कृतिक साम्राज्यवाद, नव पूंजीवाद और नव उदारतावाद के प्रभाव से समाज और साहित्य अछूता नहीं है। इसके परिणाम स्वरूप हमारी कला, धर्म, संस्कृति, साहित्य दर्शन आदि सभी क्षेत्रों में सांस्कृतिक क्षरण से मानवीय मूल्यों का विघटन हुआ है। भूमंडलीकरण के फलरूवरूप विश्व का अर्थतंत्र और विश्व बाजार व्यवस्था का निर्माण हुआ है जिसके कारण प्रत्येक देश प्रगति और विकास के लिए इससे जुड़ा है। इसके साथ-साथ भूमण्डलीकरण के प्रभाव के कारण विश्व भर की राजनीति इसी अर्थतंत्र और बाजार की जरूरतों के कारण इसी से संचालित हो रही हैं। इसके साथ-साथ कंप्यूटर, इंटरनेट और मीडिया क्रांति के जरिये संसार के समुदायों, राष्ट्रों, संस्कृतियों और व्यक्तियों के बीच उभरते तनाव, संघर्षों, मत भेदों, विरोधों को कम करना भूमण्डलीकरण

का उद्देश्य रहा है।

भूमंडलीकरण और बाजारवाद से उत्पन्न स्थितियों का निरूपण हिंदी साहित्य की विविध विधाओं में हुआ है। हिंदी रचनाकारों की चिंता का केंद्र आम आदमी और उसकी परिस्थितियाँ हैं जबकि भूमण्डलीकरण का मतलब सिर्फ अधिकाधिक लाभ से है। उसकी परिधि के इर्द-गिर्द आदमी की पहुँच नहीं है। समकालीन हिंदी कविता में बद्रीनारायण, अरुण कमल मंगलेश डबराल, राजेश जोशी, कुमार अबुंज, निलय उपाध्याय, एकांत श्रीवास्तव, ज्ञानेंद्रपति, दिनेश कुमार शुक्ल, अष्टभुजा शुक्ल, भगवत रावत आदि कवियों ने अपनी कविताओं में भूमंडलीकरण से उत्पन्न भयावह स्थितियों का चित्रण किया है। उत्तर आधुनिक समाज में निलय उपाध्याय की कविता बाजार की सुविधाओं पर वक्तव्य देती है। मकड़ी/जैसे खुद बुने जाल में दम तोड़ देती है/ सुविधाओं के पीछे पागल/ दम तोड़ देगी दुनिया/ बाजारवाद से निर्मित सुविधाएं जीवन लील रही हैं/ जीवन में घर खो गया है। राजेश जोशी की कविता 'सयुक्त परिवार' एक व्यंग्य है। सुख-दुख में भी पहले की तरह इकट्ठे नहीं होते लोग/ सब बेचैन भाग रहे हैं- बाजार ने पड़ोसी तक को अजनवी बना दिया है। कुमार अंबुज सांस्कृतिक संकट के संबंध में कहते हैं : वे चाहते हैं विस्मृत कर दूँ मैं अपना जन्म स्थान अपनी भाषा/ भूल जाऊँ अपनी नदी का नाम और उसका संगीत।

कवि ज्ञानेंद्रपति 'आजादी उर्फ गुलामी' कविता में कहते हैं : आजादी के गोल्डन जुबली साल में/ आजादी का मतलब है/ बाजार से अपनी पसंद की चीज चुनने की आजादी। और आपकी पंसद। वे तय करेंगे/ जिनके पास उपकरणों का कायाबल/ विज्ञापनों का मायाबल है/ आपकी आजादी पसंद है उन्हें/ चीजों का गुलाम बनने की आजादी/ विश्व बाजार जिनका जहर/ हमेशा उनका उठा हुआ शहर है। कवि ने वर्तमान समय के इस निर्मम सच को प्रस्तुत कविता में उद्‌घाटित किया है। आज हमें एक उपभोक्ता के रूप में देखा जा रहा है, कुछ देश ही उत्पादक हैं बाकी सब उपभोक्ता हैं।

भूमंडलीय बाजारवाद पर तीव्र कटाक्ष करते हुए मशरूम केयर ऑफ कुकुरमुत्ता में अष्टभुजा शुक्ल कहते है -

जो शौक/ सनक की हद तक थे/ वे बाजारों की जद में हैं/ सब अपने कद में हैं/ मगरूर रईसी ठाट-बाट बन गए माल्स/ काम्पलैक्स, हाट व्हाइट हाऊस।

निश्चय ही वर्तमान में भूमंडलीय पूंजीवाद ने पदार्थों का संचयन और उत्पादन को बढ़ाकर चरम तक पहुँचा दिया है। इस स्थिति में मनुष्य की चिंतन शक्ति क्षीण हो गयी है। भगवत रावत जैसे संवेदनशील कवि की ऐसे समय में यह चिंता स्वाभाविक है : वह दिन दूर नहीं जब हिमालय की बर्फीली चट्टानों पर।
बड़े बड़े अक्षरों में मिलेगें उन शीतल पेयों के नाम।
जिनके एक-एक विज्ञापन पर करोड़ों-करोड़ों।
वहा दिए जाते है। कोई यह नहीं पूछता कि कैसे, कब और क्यों।
खेतों में पानी नहीं पहुँचा। और मोबाइल पहुँच गया।
राष्ट्रीय शोक, जैसा राष्ट्रीय शर्म का विषय।
और क्या हो सकता है।

भूमंडलीय के इस दौर में विकास के शिखर पर पहुँचते हुए भी किसान क्यों आत्महत्या करने के लिए विवश है। इस ओर भी यह पंक्तियाँ संकेत करती हैं। युवा कवि प्रेमशंकर रघुवंशी इस संदर्भ में कहते हैं :

डूब को जाने बिना। नर्मदा सागर में डूब गए सैकड़ों हरसूद। भूख को जाने बिना/ सतपुड़ा के बनांचलो से/ भूखे भगाए जा रहे बनवासी जान लेने से भी कोई फर्क नहीं पड़ता बंधु/ जैसा कि पीढ़ियों से/ किसानी कर्म जान लेने के बाद भी/ खेतों की गोद में/ आत्महत्या को मजबूर/ होते जा रहे है किसान/

समकालीन हिंदी उपन्यासों में भी भूमण्डलीय संस्कृति से उत्पन्न स्थितियों, विकट समस्याओं, बढ़ते बाजारवाद की सर्वग्रासी संस्कृति के दुष्परिणामों पर चिंतन-मनन किया गया है। बीसवीं शती के अंतिम दशक से यह चिंता हिंदी के सजग उपन्यासकारों की कृतियों में दिखाई देती है। रवींद्र वर्मा, अलका सरावगी, राजू शर्मा, गिरिराज किशोर, रवींद्र कालिया, काशीनाथ सिंह, अशोक भौमिक, कुणाल सिंह, विजय शर्मा, कमल कुमार, लता शर्मा, पंकज विष्ट, गीतांजलि आदि के उपन्यासों में भूमण्डलीय अपसंस्कृति के विविध पक्षों को औपन्यासिक कथ्य का अंग बनाया गया है। रवींद्र वर्मा ने 'दस बरस का भंवर' और 'आखिरी मंजिल' में भूमंडलीकरण की प्रक्रिया को गहरे इतिहास बोध से विवेचित किया है। भूमंडलीकरण से उत्पन्न नवसाम्राज्यवाद अपने माल की खपत के लिए विश्व भर के संभावनाशील बाजारों की तलाश में है। 'दस बरस का भँवर' में रवींद्र वर्मा भूमंडलीकृत अपसंस्कृति की कलई खोलते हैं। उनकी यह चिंता है कि जो बच्चे आज पिज्जा खा रहे हैं उनके लिए रोटी जुटाना मुश्किल हो जायेगा। उपन्यासकार उस समय की कल्पना से आक्रांत है, जब नया आदमी भूमंडलीकृत होगा। अपने देश से पलायन इस अपसंस्कृति का एक अन्य दुष्परिणाम है। 'आखिरी मंजिल' में माधव के विरोध में उसकी पत्नी बेटी को यह समझाती है कि तुम खूब पढ़लिखकर लायक बनों ताकि बड़ी होकर हर साल अमेरिका जाओ और चाहो तो बस जाओ। 'उपन्यास में लेखक ने गहरी पीड़ा से भारत और भारतीयों के अमेरिकीकरण की प्रक्रिया को विश्लेषित किया है।

काशीनाथ सिंह ने 'काशी की अस्सी' में देश की व्यवस्था और राजनीति में घर कर गए भ्रष्टाचार का व्यंग्यात्मक आख्यान और भूमंडलीय संस्कृति के विमन्न पक्षों पर विमर्श प्रस्तुत किया है। पंच सितारा होटल में ईश्वर और उन्हीं सेठों की मीटिंग की

फंतासी में वर्णन करते हुए खुले बाजार की सेठाश्रित और उन्हीं के द्वारा नियंत्रित व्यवस्था पर करारी चोट की है। अलका सरावगी के 'शेष कादंबरी' और 'एक ब्रेक के बाद' अमेरिकीकरण के बढ़ते दुष्प्रभावों और भूमण्डलीय समस्याओं पर केद्रिंत है। लेखिका ने स्थान-स्थान पर अमेरिका द्वारा संचालित उस आर्थिक मॉडल की भर्त्सना की है जो पूरी दुनिया के संसाधनों का अपने हित में दोहन कर प्रत्येक देश में अमीर और गरीब के मध्य कभी न समाप्त होने वाले अंतरालों को जन्म दे रहा है। राजू शर्मा के 'विसर्जन' में बहुत विस्तार में जाकर उन आर्थिक स्थितियों का विश्लेषण किया गया है कि किस प्रकार अमेरिका की अर्थ नीतियों, वहाँ की बहुराष्ट्रीय कम्पनियों ने भारत की अर्थनीतियों का अमेरिकीकरण कर दिया है। एस. आर. हरनोट के हिडिम्ब, रणेन्द्र के 'ग्लोबल गाँव के देवता', कुणाल सिंह के 'आदिग्राम उपाख्यान', अनवर सुहैल के 'पहचान', विजय शर्मा के 'दिमाग के घोंसले', लता शर्मा के 'सही नाप के जूते', पंकज विष्ट के 'पंख वाली नाव' आदि में भूमण्डलीय संस्कृति का श्याम पक्ष उपन्यासों का प्रमुख कथ्य रहा है।

समकालीन हिंदी साहित्य में नारी विमर्श एक नये आयाम के रूप में उभरा है। हिंदी कथा लेखन में नारी स्वातंत्र्य यात्रा का प्रारंभिक पड़ाव कृष्णा सोवती के 'मित्रो मरजानी' के साथ हुआ। मित्रो की सृष्टि करके लेखिका ने नैतिकता के प्रचलित प्रतिमानों को चुनौती दी और इसे और अधिक प्रबल रूप में मृदुला गर्ग ने 'चितकोबरा' में प्रस्तुत किया। इस उपन्यास में रिचर्ड और मनु के मध्य जैवकीय संबंध बिना किसी वर्जना भाव के व्यक्त कर नैतिकता के प्रतिमानों की शृंखलाएं खंडित होती हुई दिखाई है। इक्कीसवीं सदी तक आते-आते हिंदी महिला रचनाकार वैश्विक स्तर पर चल रहे नारी आंदोलनों और स्त्री विमर्श से भली भाँति परिचित हो चुकी हैं। यही कारण है कि हिंदी महिला रचनाकारों ने स्त्री विमर्श संबंधी अनेक पुस्तकों की रचना की है। हिंदी के प्रतिष्ठित प्रकाशकों ने स्त्री विमर्श पर विपुल पुस्तकों का प्रकाशन किया है। एक लहर के रूप में लिखे इस साहित्य में बहुत-सी उत्कृष्ट कृतियाँ आई हैं और स्त्री की पक्षधरता और महिला सशक्तिकरण की दिशा में यह महत्वपूर्ण प्रयास है। मैत्रेयी पुष्पा की 'खुली खिड़कियाँ', अनामिका की 'स्त्री विमर्श की उत्तरगाथा', 'मन मांझने की जरूरत', 'शरद सिंह की 'पत्तों में कैद औरतें', 'औरत तीन तस्वीरें', गीता श्री की 'स्वप्न साजिश और स्त्री', मृदुला सिन्हा की 'मात्र देह नहीं हूँ औरत', नासिरा शर्मा की 'औरत के लिए औरत' चित्रा मुद्‌गल की 'तहखानों में बंद अक्स', मनीषा कुलश्रेष्ठ की 'पंचकन्या' आदि स्त्री विमर्श की कुछ पुस्तकें हैं।

स्त्रीविमर्श संबंधी पुस्तकों से यह सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है कि इक्कीसवीं शती में महिला कथा लेखिकाएं पूरी वैचारिक पृष्ठभूमि और तैयारी के साथ कथा साहित्य सृजन की ओर प्रवृत हुई हैं। स्त्री विमर्श की दृष्टि से अलका सरावगी का 'शेष कादंबरी' अनामिका का तिनका तिनके पास, रजनी गुप्त का 'एक न एक दिन', मृदुला गर्ग का मिल जलमन' ममता कालिया का दुक्खम सुक्खम, मधु कांकरिया का 'सेज पर संस्कृत' कमल कुमार का 'पासवर्ड', निर्मल भुराडिया का 'आब्जेक्शन मी लार्ड', लता शर्मा 'सही नाप के जूते', जयंती का 'खानवदोश ख्वाहिशें', गीतांजलि श्री का 'तिरोहित' आदि उपन्यासों में न केवल विवाह संस्था को पुनर्परिभाषित किया है अपितु स्त्री पुरुष के समस्त संबंधों को नयी दृष्टि से विश्लेषित किया है। इन उपन्यासों में विवाह संस्था, प्रेम दाम्पत्येत्तर प्रेम संबंध स्वच्छ प्रेम, उच्छृंखल प्रेम संबंधों से जुड़ी अनेक घटनाओं के माध्यम से नर-नारी संबंधों का विश्लेषण करते हुए नारी की प्रतिरोधात्मक स्थिति का निरुपण किया है। पुरुष जिस अधिकार से स्त्री को वस्तु समझता है उसके प्रति आक्रोश और विद्रोह इन उपन्यासों में सर्वत्र व्यंजित हुआ है।

समकालीन हिंदी साहित्य में कुछ स्त्रीवादी आत्मकथायें भी प्रकाश में आयी हैं जिनके माध्यम से स्त्री जीवन और स्त्री विमर्श से जुड़े अनेक प्रश्न सामने आये हैं। ज्यादातर स्त्री आत्मकथाएं हाल के ही दशकों में लिखी गई हैं। बहुत-सी स्त्री लेखिकायें ऐसी भी है जिन्होंने सीधे-सीधे आत्मकथा की प्रचलित परंपरागत विधा में न लिखकर आपबीती या आत्मकथ्य ही लिखे हैं। इनमें स्त्रियों का संपूर्ण जीवन न होकर आंशिक रूप में ही सामने आया है। गत सदी के उत्तरार्ध में कई स्त्रियों ने आत्मकथाएं लिखी हैं जिनमें चन्द्रकिरण सोनेरेक्सा की 'पिंजरे की मैना' पद्‌मा सचदेव की 'बूँद बावडी', मैत्रेयी पुष्पा की 'कस्तुरी कुण्डली बसे' और 'गुड़िया भीतर गुड़िया', प्रभा खेतान की 'अन्या से अनन्या', मन्नू भंडारी की 'एक कहानी यह भी', रमणिका गुप्ता की 'हादसे' कुसुम अंसल की 'जो कहा नहीं गया' कृष्णा अग्निहोत्री की 'लगता नहीं है दिल मेरा' आदि प्रमुख हैं। ये सभी रचनाएं स्त्रीवाद विमर्श में सहायक हैं। आत्मकथाओं में लेखिकाओं ने अपनी क्रान्तिकारी अभिव्यक्ति के माध्यम से घृणित लैंगिक स्थिति व राजनीति का खुलासा किया है। व्यक्तिगत संबंधों के बारे में बताते हुए भी पुरुष अंह उसकी नैतिक मजबूरियाँ व समाज के बनाए मर्यादा के मानदण्ड मानों सभी ध्वस्त होते हुए दिखाई देते हैं। इन आत्मकथाओं में लेखिकाएं स्त्री के भाव जगत और अंतर्जगत को खोलते हुए पितृसत्तात्मक समाज की व्यवस्था और लैंगिक राजनीति के प्रति सजग हैं।

समकालीन हिंदी साहित्य में दलित साहित्य विमर्श की भाँति आदिवासी साहित्य विमर्श की ओर साहित्यकारों का ध्यान गया है। आदिवासी साहित्य व्यवस्थागत विसंगतियों और उनके प्रति विद्रोह प्रकट करता है। वस्तुतः मानव जाति का इतिहास कथित सभ्य लोगों द्वारा आदिवासियों के विस्थापन और शोषण का इतिहास है। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में भूमण्डलीकरण, साम्प्रदायिक और जातीय हिंसा, प्रकृति और निर्मम दोहन और विनाश को अनुभव

करके आदिवासी समाज के मूल्यों और प्रकृति के साथ उनके अटूट संबंधों का क्षरण भौतिकविकास की अंधी गति से हो रहा है। समकालीन हिंदी साहित्य उनके विस्थापन, अपमान और शोषण के विविध रूपों को व्यंजित करता है। आदिवासी साहित्य जीवनवादी साहित्य है। इस साहित्य की परिकल्पना है कि आदि समूहों में वर्गरहित समाज व्यवस्था का निर्माण हो। आदिवासी साहित्य के प्रमुख स्रोत प्रकृति, संस्कृति और इतिहास है। आदिवासी जीवन संबंधी साहित्यकारों ने अपने साहित्य में वनों, जंगलों और पहाड़ों के एकांत में बसने वाले आदिवासी जीवन के विविध पक्षों को अनावृत किया है। हिंदी में अनेक उपन्यासकार, कहानीकार और कवि आदिवासी साहित्य का सृजन कर रहें हैं। राम दयाल मुण्डा, रमणिका गुप्ता, प्रकाश मिश्र, हरिराम मीणा, संजीव, महुआमाजी, रोकश कुमार सिंह, रवींद्र विनोद कुमार सिंह आदि की कृतियों में आदिवासी समुदाय की विविध समस्याएं मुखरित हुई हैं। रमणिका गुप्ता का 'सीता और मौसी' में राकेश कुमार सिंह के तीन उपन्यास 'जो इतिहास में नहीं है', 'पठार पर कोहरा' और 'हूल पहाड़िया' झारखण्ड के आदिवासी आन्दोलन पर आधारित है। रणेंद्र का उपन्यास 'ग्लोबल गाँव का देवता' झारखंड के एक खास क्षेत्र के आदिवासी जीवन में आ रहे रूपांतरण और उसके इतिहास को दिखाया है। उपन्यास में यह दिखाया गया है कि आदिवासी समुदाय बहुराष्ट्रीय कम्पनियों और उनके प्रति नकारात्मक दृष्टिकोण के कारण हिंसा का शिकार हुआ है। लेखक ने आदिवासियों के जीवन की शोषणयुक्त स्थिति और आधुनिकता और भूमण्डलीकरण के कारण प्रशासनिक अत्याचार की अनेक परतों को उपन्यास में अनावृत किया है। इसी भाँति उनके एक अन्य उपन्यास 'गायब होता देश' में भी आदिवासियों के जीवन को आधार बनाया है। 'मरंगा गोड़ा नीलकंठ हुआ' उपन्यास में महुआ माजी ने विकिरण, प्रदूषण व विस्थापना से जूझते आदिवासियों की गाथा कही है। इसमें भूमि अधिग्रहण से विस्थापित होते आदिवासियों की करुणगाथा को प्रस्तुत करते हुए लेखिका ने जंगल जीवन जीने वाले आदिवासियों के अंतरंग जीवन को प्रामाणिक, सूक्ष्म तथा विविधवर्गी ब्योरो के साथ प्रस्तुत किया है। आदिवासी कहानियों में भी आदिवासी जीवन की टीस और उनकी समस्याओं को सामाजिक, सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य में देखा है। हरिहर वैष्णव, संजीव, मेहरून्निसा परवेज, राकेश कुमार सिंह, कालेश्वर, रमणिका गुप्ता, राजेन्द्र आदि की कहानियों में आदिवासियों के जीवन के दुःखदर्द, शोषण, निर्धनता, बेवसी और लाचारी के विविध चित्र विद्यमान हैं। संजीव ने प्रेत मुक्ति, टीस, पांव तले की दूब आदि में आदिवासियों के शोषण, पिछड़ेपन, विस्थापन और अंधविश्वासों चित्रण है। हरिहर वैष्णव के 'मोहभंग', मेहरून्निसा परवेज के 'मेरी वस्तर की कहानियाँ', राकेश कुमार सिंह के 'जोड़ा हारिल की रूप कथा', कालेश्वर के 'सलाम भाट', रमणिका गुप्ता के 'बहुजुठाई' आदि में झारखंड वस्तर आदिवासियों की जमीन से बेदखली विस्थापन, अशिक्षा, स्त्रियों के शोषण, स्त्री जागरण का सामाजिक यथार्थ पूरी जटिलता से चित्रित हुआ है। राजेन्द्र के कहानी संग्रह 'रात बाकी तथा अन्य कहानियाँ' में झारखण्ड के आदिवासियों के जीवन की विडम्बनाओं और विसंगतियों को उभारा गया है।

आदिवासी जीवन पर कुछ कविता संग्रह भी प्रकाश में आए हैं। हरिराम मीणा का 'सुबह के इंतजार में', निर्मला पुतुल का 'नंगाड़े की तरह बजते शब्द' आदि कुछ काव्य संग्रह हैं जिनमें आदिवासी जीवन की समस्यायें, संघर्ष और संवेदना की अभिव्यक्ति हुई है। इस प्रकार आदिवासी साहित्य का फलक विस्तृत है और हिंदी साहित्य में यह एक चुनौती के रूप में उभर रहा है।

इक्कीसवीं शती के साहित्य में गांव प्रेमचंद, रेणु श्री लाल शुक्ल आदि के गांव से पृथक है। अस्सी के दशक के अनंतर गांव का चरित्र जितनी तेजी से बदला है, इस बदलाव की पृष्ठभूमि से जुड़े कथाकारों ने अपने कथानुभव का हिस्सा बनाया है। हिंदी के बहुत से साहित्य संजोको ने ग्रामीण जीवन की समस्याओं और आंचलिक जीवन को उभारा है। पर्वतीय जीवन की दुश्वारियाँ, विसंगतियाँ और विडम्बनाएं, भूमि अधिग्रहण से उत्पन्न स्थितियों, विस्थापना की पीड़ा को बहुत सी कथा कृतियों में मूर्तिमान किया है। श्रीनिवास श्रीकांत की सम्पादित पुस्तक 'कथा में पहाड़ में पर्वतीय जीवन को मुखर करने वाले उन्नतालीस कहानीकारों की कहानियों के पर्वतीय जीवन का वर्तमान स्वरूप सामने आया है। मोहन थपलियाल की 'एक वक्ख्त की रोटी', एस.आर हरनोट की 'बिल्लियां बतियाती है', बद्रीसिंह भाटिया की 'प्रेत संवाद', तुलसी रमण की 'गाची' शेखर जोशी की 'कोसी का घटवार', सुंदर लोहिया की 'मंगलाचारी' सुभाष पंत की 'पहाड़ की सुबह' मुरारी शर्मा की 'छिदरा', आत्माराम रंजन की 'घराटी मामा', राजकुमार राकेश की 'मिट्टी', सुदर्शन वशिष्ठ की 'फूलों की घाटी में राक्षस' सुशील कुमार फुल्ल की 'मेमना' रेखा की 'पिआनो' राजेन्द्र राजन की 'मुआवजा' आदि कहानियों में पर्वतीय जीवन, गांव की नियति, पहाड़ी समाज की आंचलिकता सांस्कृतिक विरासत, रीति रिवाज परंपराएं और विश्वास विभिन्न चरित्रों और चरित्र के द्वारा मुखरित हुए हैं। समकालीन हिंदी साहित्य के सृजन और चिंतन की दृष्टि से विविध आयाम है, जिनमें से यहाँ कुछ बिंदुओं का संकेत भर किया है। इस सीमित लेख में समकालीन हिंदी कविता, कहानी, उपन्यास, आत्मकथा, व्यंग्य, आलोचना आदि विधाओं पर स्वतंत्र रूप में विवेचन के माध्यम से ही कुछ विश्लेषण संभव हो सकता है।

गांव व डाकघर बातल, तह. अर्की,
जिला सोलन (हि. प्र.)-173208, मो. 94180-10646

ललित निबंध

मंडूक

● डॉ. दादूराम शर्मा

मैं मण्डूक हूँ- प्रकृति की नेमत, प्रकृति के जीवन के मूल स्त्रोत प्रावृट् का- वर्षा का अनथक चारण-समूह में रहकर प्रशस्तिगीत गाने वाला, स्वागत में अपने, अपने समस्त बंधुओं के साथ एकतार (तार स्वर में) जयकार करने वाला, अपने भीतर के ही नहीं, धरती के अतल अमूर्त उल्लास को मूर्त कर देने वाला, निराकार का साकार विग्रह, सृष्टि रचयिता के मन का- उसकी सृजनेच्छा-सिसृक्षा का बाहर उछल पड़कर भीतर अगाध जलराशि में डूबकर-डुबकी लगाकर उसे सहस्त्र-सहस्त्र किंवा कोटि-कोटि नहीं, नहीं, अगणित रूपों में रूपायित कर देने वाला 'मण्डूक'। 'ऋग्वेद' के मंत्रद्रष्टा ऋषि ने यही ध्वन्यात्मक नाम दिया है मुझे ! हिन्दी के 'मेंढक' का भी यही ध्वन्यात्मक अर्थ निकलता है तो अंग्रेजी के Frog का अर्थ भी विशाल सामूहिक रूप में प्रकट होकर गतिशील सृजनशीलता का प्रकटीकरण ही होता है।

कोयल प्रकृति में ऋतुराज वसंत के रूप में प्रकट बाह्य उल्लास को अपने एकाकी स्वर में कूक द्वारा प्रकट करती है, कई कोयलें उल्लसित प्रकृति के साथ एक स्वर में झूमझूमकर गा उठती हैं लेकिन अकेले-अकेले ! वे समूह में एकसाथ एक स्वर में नहीं गातीं। कोयल मंजरित सौरभ की शाखाओं में बैठकर भी गाती है और वसंत के उल्लास और मादक प्रभाव से सर्वथा अछूते सर्वदा नीरस परपीड़क परगात्रबेधक कंटकों से आवृत बबूल या करील पर भी बैठकर अपने भीतर हिल्लोलित हर्षातिरेक को अपनी कूकों से प्रकट करती है। वह औरों को क्या मिल रहा है, कितना मिल रहा है अथवा मिल भी पा रहा है या नहीं ? इसकी परवाह किए बिना अपनी ही मौज में मस्त गा उठती है अर्थात् उसके आंतरिक उल्लास का सम्बन्ध बाह्य जगत् से होता भी है और नहीं भी होता! किन्तु मैं तो तभी गाता हूँ जब निराकार सृष्टि विधाता की सृजित साकार सृष्टि का पोर-पोर जीवन से लवालव भर जाता है तभी अकेले तो बहुत कम, सबके साथ मिलकर एक साथ उल्लसित होकर उत्सव मनाते हुए गाता हूँ।

कई वर्षों से अवृष्टि या अल्पवृष्टि की पीड़ा झेल रही धरती ने इस वर्ष भरपूर वर्षा का तोहफा पाया है और परमात्मा के प्रति अपनी अशेष कृतज्ञता का प्रकटीकरण है हमारा यह समूह गान। शरद् ऋतु से लेकर वर्षभर वर्षा के लिए अपने बिलों में चुपचाप निश्चेष्ट पड़े समाधिस्थ हुए कठोर तपस्या (तपःसाधना) में लीन रहकर आषाढ़ के प्रथम दिन जैसे ही सजल जलधर अनंत आकाश में दिखाई देते हैं और उनसे झरने वाली प्रथमोदक की सुधाप्लावित बूँदें आतपतप्त धरा का संस्पर्श करती हैं, हम सब समूह में एकत्र होकर ''पर्जन्यजिन्विता (मेघों की प्रिय या मेघों को प्रिय लगने वाली) वाणी से अपने अपार जलदान से धरा को परितृप्त कर देने वाले, याचका धरा के भिक्षापात्रों- कूपों, नदी-नालों और तालाबों को लबालब = छलकते तक भर देने वाले जलधर जलदों के प्रशस्ति-गीत गा उठते हैं-

सम्बत्सरं शशयाना ब्राह्मणा व्रतचारिणः।
वाचं पर्जन्य जिन्वितां प्र मण्डूकाः अवादिषुः।।

- 'ऋग्वेद' १०/१४६१

हम वर्षा को मण्डित करने वाले (मंडति मंडयंति इति मंडिताः) धरित्री को मंडित करने के लिए- (मण्डपिकं) नवजीवन से समलंकृत करने के लिए भेजे गए सृष्टि-स्रष्टा के संकल्प के स्मारक प्रकट विग्रह हैं- मूर्त रूष्प हैं- ''एकोऽहं बहु स्याम प्रजेयम्'' के परमात्मा के- परमसत्ता के सर्जक बीज (वीर्य) को धारण करने वाली प्रकृतिरूपी महद्योनि (ब्रह्म) और परब्रह्म परमात्मा- ''तासां ब्रह्म महद्योविरहं बीजप्रदः पिता'' (गीता) से जन्मे जगत् के असंख्य जीवों के रूप में विस्तार के प्रत्यक्षीकरण को दर्शाने वाले परम पिता के अवदान के प्रति अशेष कृतज्ञता ज्ञापित करने वाले स्वर शब्द हैं सम्राटों के भी सम्राट के बिना मोल खरीदे गए चारण हैं, बिना दाम के गुलाम हैं। हम वर्षा के अलंकार हैं, उसके स्वर संभार हैं, चराचर के उल्लसित कंठहार हैं, जगत् के संचार हैं, मृतकों को भी नवजीवन देने वाली सुधाधार हैं, म्रियमाणों में भी नवजीवन के संचार हैं हम मंड हैं- सबकी खुशी के उफान (मण्ड) और इजहार हैं। अवसाद, हताशा, हतवीर्यता के वारण हैं, सर्वजीवनदायिनी वर्षा के चारण हैं।

तुलसी ने अपने विश्वविश्रुत महाकाव्य 'रामचरितमानस' में वर्षा ऋतु वर्णन प्रसंग में लिखा है-

दादुर ध्वनि चहुँ ओर सुहाई। वेद पढ़हिं जनु बटु समुदाई॥

वर्षाकाल में जलप्लावित जलाशयों में टर्राते मेंढक-समुदाय की वातावरण में- विशेष रूप से रात के सन्नाटे में नीरव-निस्तब्ध

प्रकृति को मुखर बना देने वाली समयानुकूल- अवसरानुकूल सभी के मनों को उत्फुल्ल और हृदयों को हर्षित करने वाली सुंदर-सुरीली ध्वनि 'टर्राहट' नहीं, 'सुहाइ' (अच्छी लगने वाली) 'सुहानी' ध्वनि सुनकर ऐसा प्रतीत होता है मानो प्रकृतिरूपी 'गुरुकुल' में अध्ययनरत वटुसमुदाय- उपनयन संस्कार से संस्कारित ब्रह्मचारी छात्रगण समूह में मिलकर एकस्वर में वेदपाठ कर रहे हों।

जिन्होंने 'वेद' नहीं पढ़े थे, 'ऋग्वेद' का 'मण्डूकसूक्त' नहीं देखा था, वे सोच रहे थे कि गोस्वामीजी ने हमारी हम मेंढकों की उपमा ''वेदपाठरत वटुसमुदाय'' से देकर हमें बहुमान दिया है। किन्तु हमें वैदिक युग में 'देवता' की श्रेणी में रखकर वर्षा के कारक, प्रकृति के उपकारक, वर्षा के अलंकार हमको पूर्व से ही प्राप्त सम्मान का उपमा के रूप में स्मरण किया है।

किन्तु उसी तुलसी ने अपनी उत्तरकालीन प्रौढ़ कृति 'दोहावली' (जो कि वस्तुतः एक नीतिग्रन्थ है) में- "तुलसी पावस के समय धरी कोकिलन मौन, अब तो दादुर बोलिहैं, हमें पूछिहैं कौन ?'' लिखकर हमारे परम्परा प्राप्त सम्मान पर पानी फेर दिया है ! परन्तु जरा गंभीरता से विचार कीजिए कि यह कवि की एक कथन शैली है- 'अन्योक्ति' है, जिसमें 'कोकिलन'- कोयलें- (कोकिल) सज्जनों की, सत्पुरूषों की प्रतीक हैं जिनकी समाज में संख्या बहुत थोड़ी है और वे बिखरे हैं- समुदाय में नहीं रहते और समुदाय में हों भी तो भीड़ में अकेले ही होते हैं और 'दादुर' समुदाय में मिलजुलकर एकजुट रहते हैं, एक साथ बोलते हैं- प्रतिवाद करते हैं, जयकार या धिक्कार- जिन्दावाद या मुर्दावाद- करते हैं अर्थात् जो भी करते हैं एकमतेन पूरी शक्ति और जोर लगाकर इसीलिए सभी उनकी सुनते हैं भले ही इनकी आवाज बेसुरी और कर्णकटु हो तब कोयलों को तो चुप रहना ही पड़ता है। अतः इसमें हमारे अपमान की, हमारी शान के खिलाफ गुश्ताखी करने जैसी कोई बात है ही नहीं। 'ऋग्वेद' के दशम मण्डल के चौदहवें सूक्त 'मण्डूक' के मंत्रद्रष्टा महर्षि वसिष्ठ ने हमें 'देवता' की संज्ञा दी है। 'देवता' या 'देव' की परिभाषा या व्युत्पत्ति इस तरह की गई है- 'देवो दानाद् द्योतनाद् दीपनाद्वा'- अनपेक्ष या निरपेक्ष भाव से अर्थात् बिना प्रतिदान की अपेक्षा के दूसरों को देने वाला, जैसे मेघ, पृथ्वी द्योतित या प्रकाशित होने वाला जैसे सूर्य, अग्नि और 'प्रकाशित करने वाला' जैसे सूर्य, विद्युत, अग्नि (अग्नि दीपक की लौ बनकर अंधकारित कक्ष (कमरा) को प्रकाशित करती है अँधेरे में अदृश्य वस्तुओं को दृश्य बनाती है अथवा व्यक्ति या वस्तुओं के अप्रकट या गुप्त गुणों को प्रकट करने- प्रकाश में लाने वाला 'देवता' है। मंत्रद्रष्टा महर्षि ने हमें 'देने वाला' होने के कारण 'देवता' कहा है। हम चराचर प्रकृति को- जगत् को हम नवजीवन का संदेश देते हैं, उनमें अभंग उत्साह का संचार करते हैं, उनकी 'जिजीविषा' को जगाते ही नहीं उसे परिपुष्ट भी करते हैं, 'वर्षा' के महद् अवदान से उन्हें परिचित कराते हैं, उनके अप्रकट गुणों को प्रकट करते हैं और सबसे बड़ी बात यह कि प्रचण्ड-असह्य के आतप और 'ऊष्मा' (ऊखम) उमस का- हमारे क्षेत्र की बोली में बेचौनी बढ़ाने वाली असहनीय गर्मी को 'ऊखम' जो कि 'ऊष्मा' का तद्भव रूप है, कहा जाता है- उसी तरह जैसे 'घर्म' (धूप) का तद्भव रूप 'घाम' हो गया है- "घाम हूमें चाँदनी की द्युति दमकति है'' (-'सेनापति' का शिशिर वर्णन) से अभितप्त (झुलसे हुए) अभितप्तमयोऽपि भजते मार्दवम्- अत्यधिक तपाया गया 'अयरू' लोहा, फौलाद भी 'मार्दव' ('मृदुता', कोमलता) लेता है = कालिदास) और 'संतप्त' (गर्मी से बेचैन, बेहाल, बुरी तरह तपाए गए पदार्थ या जीवित चराचर प्राणी- "संतप्तानां त्वमसि शरणं पयोद''- ('मेघदूत', कालिदास) होने के कारण मृतप्राय हुए प्रकृति के कण-कण को, पोर-पोर को 'नवजीवन' से सम्पृक्त कर देते हैं, अवसाद को अमित उल्लास में बदल देते हैं, घोर निराशा को अभंग आशा और उल्लास में रूपायित कर देते हैं। 'पर्जन्य' (मेघ, जलद) देवता द्वारा मुक्तहस्त से प्रदत्त जलराशि के संजीवन संस्पर्श से 'सूखी मसक' (चमड़े की बनने वाली 'मोट' जो कुँए से बैलों की सहायता से सिंचाई के लिए पानी निकालती है या चमड़े की बड़ी थैली, जिसमें भिश्ती पानी भरकर लाते थे और लोगों को पिलाते थे) के समान शुष्क जलाशयों में निर्जीव- जैसे पड़े हम लोगों में जैसे पुनर्जीवन का संचार हो जाता है, 'वत्सिनी' (वत्सवती- बछड़े वाली) गौएँ जैसे अपने बछड़ों के साथ रंभाती हुई अन्य सवत्सा रंभाती गायों से मिलकर हर्षोल्फुल्ल होकर उच्च तार स्वर करती हैं उसी तरह हमारा- वर्षा के स्वागत में उसके प्रशस्ति-गीत गाने हम मेंढकों का गंभीर घोष समस्त भूमंडल में परिव्याप्त हो जाता है। प्रथम वर्षेदिक-क्लिन्न (पहली सवर्षा के जल से = इसे हमारी क्षेत्रीय बोली में दोंगरा कहते हैं। मलिक मोहम्मद जायसी ने 'पदमावत' महाकाव्य में 'दवँगरा'- दृष्टि दवँगरा मेरवहु आनी' कहा है। दोंगरा से भींगे चितकबो, हो आदि 'विविधवर्णी' (विभिन्न रंगों वाले) हम मण्डूक प्रकृति को अपने-अपने 'गंभीर घोष'- वर्षा के जयनाद, वर्षा के जयगान से वायुमंडल को आपूरित कर देते हैं। हममें से कोई- 'गोमायु' (गाय जैसे 'मायु' स्वर, ध्वनि या आवाज वाला) गाय की-सी आवाज में टर्राता है, तो कोई 'अजमायु'- बकरे के-से स्वर में टर्राता है, कोई भेड़, भैंस आदि (मेषायु, महिषायु) की आवाज में टर्राते हैं। विविध ध्वनियों से अपने-अपने स्वरों को सजाते हुए यज्ञों में मंत्रोच्चारण करते हुए 'स्वाहा' के उद्घोष के साथ आहुति देने वाले होता ब्राह्मणों के स्वर की तरह हमारा



कविता

....चांद

● डॉ. रमना अग्निहोत्री

बरसाती मेघों से घिरा
ये धुंधला चांद
मल्लाह-सा ले जाता मन को
अतीत के पार द्वार।

गांव की गलियों के पथरीले रास्ते
मिट्टी की सौंधी गंध
पुआल की महक, खट्टे मीठे आमों का रस
और जामुन की मिठास
कराती चांद से जुड़े होने का अहसास।

उसके पास जाने का आकर्षण व
लौटने के बहाने बना लेती
दीमकों के घर जैसे औचक...।
वीर-बहुरियों की कतार देखना और
लांघने का मोह चांद ने ही बांधा था तब।

पलक झपकते ही चांद पर जाना
और लौट आना
कितना सहज लगता था तब।
चांद कभी गन्ने-सा मीठा
तो कभी स्वादहीन लगता
खींच तो लेता पर बांध नहीं पाता
पलकों में मेरी छवि पल भर भी।

मिट्टी के ढलवां रास्तों पर फिसलती तो
दाग़ लगने से बचाता अपने कपड़े कभी-
तरबतर हो जाता बारिश की फहार से।
मुझे देख ठहाके लगाता
साथ पाने की चाह में रपटने लगता तभी।

चांदनी रातों में रीझने लगता
काली आंखों पर
तो-
अपलक देखता रहता पांचवे पहर तक (रात्रि 6 से 9 बजे)
सोता जानकर-
कभी झुंझलाता
कभी करता जगने का लंबा इंतजार।

फिर न जाने कहां गुम हो जाता?
रूठकर क्यों चला जाता?
आंखों को गीला कर
अधूरे स्वप्न-सा तड़पाता।
अतीत की यादों में ले जाता
मेघों से घिरा धुंधला चांद !

19/1, सिद्धबाड़ी, पो. आं. दाड़ी, धर्मशाला, जिला कांगड़ा,
हिमाचल प्रदेश-176 057

धीर-गंभीर घोष निनादित हो उठता है। मंत्रद्रष्टा ऋषि हम गोमायु, अजमायु, हरिव और प्रश्न (चितकबरे) मेंढकों से अपने लिए-अपनी समस्त सृष्टि के लिए समृद्धि और विकास माँग रहा है, आरोग्यवर्धक औषधियाँ माँग रहा है, 'घटोहनी' (घड़े जैसे बड़े ओभा (औड़ी) वाली, 'ओभा' दूध की थैली, जिसमें दूध भरा रहता है, जिसे थनों से निकाला जाता है।) दुग्धवती, दुग्धस्रावी गाएँ माँग रहा है- गोमायुरदाद् अजमायुरदात् प्रश्निरदाद्धरितो नोवसूनि।

गवां मण्डूका ददतः शतानि सहस्रावे प्र तिरन्त आयुः।। - 'ऋग्वेद' १०/१४/१०

हे धरापुत्र मनुष्यों ! महर्षि वेदव्यास ने 'नहि मानुषात् श्रेष्ठतरं हि किंचित' कहकर तुम्हें त्रिलोक में विधाता की सर्वश्रेष्ठ संरचना बताया है। 'सृजन' तुम्हारी मूल प्रकृति है, निर्माण तुम्हारा स्वभाव है फिर मोहवश उसे भूलकर तुम विनाश और विध्वंस में क्यों प्रवृत्त हो गए ? 'माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः' की उद्घोषणा करके धरती में जितने भी चर-अचर या चेतन-अचेतन दृश्य-अदृश्य प्राणी हैं, सतत सृजनशील प्रकृति है, सभी को तुमने अपना सहोदर स्वीकारा है- भाई-बहन माना है। तुम्हारा ही तो आत्मीय परिवार है यह सब। यह सतत सृजनशील और नित्य नूतन श्रृंगार करने वाली प्रकृति भी तो तुम्हारी सहोदरा है। उसका निर्मम दोहन कर-करके, उससे केवल ले-लेकर किन्तु बदले में उसे कुछ न देकर तुम उसके शत्रु बन बैठे हो- तुम उसका संरक्षण, पोषण और संवर्धन करते तो वह स्वयं 'जीवनहीन' होती हुई तुमसे तुम्हारा जीवन क्यों छीनती ? क्यों अवृष्टि, अल्पवृष्टि और अनावृष्टि का तांडव होता ?- सूखा और अकाल पड़ता ! अभी भी समय है चेत जाओ मेरे बन्धुओं ! अन्यथा निरन्तर निकट आते सर्वनाश से कोई तुम्हें बचा नहीं पाएगा ? तब तो यह धरती ही कहाँ रह जाएगी ? इसलिए सतत वृक्षारोपण कर-करके इस धरती को हरी-भरी बनाओ और घनघोर वर्षा होने दो। जल संग्रहण कर-करके जलाशयों को हमारे आवास योग्य बनाओ ताकि हम जीवन के जयनाद से वायुमंडल को निनादित करते रहें।

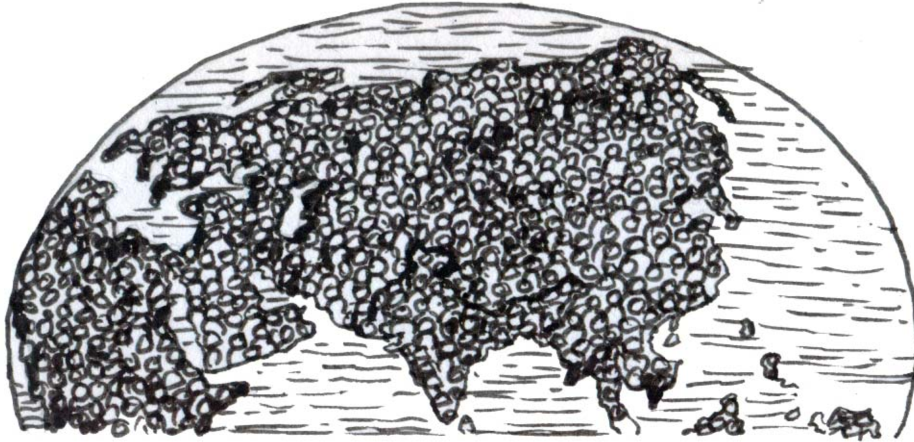
महाराज बाग, भैरवगंज
सिवनी, जिला-सिवनी (म. प्र.) 480661, मो. 0 88789 80467

आलेख

बढ़ती आबादी से गहराता संकट

• डॉ. हेमचंद्र सकलानी

ग्यारह जुलाई का दिन विश्व जनसंख्या दिवस के रूप में मनाया जाता है, या यूँ कहें मनुष्य के लिए आज का दिवस चेतावनी दिवस है। बढ़ती विशाल आबादी के परिणामों को देखते हुए संयुक्त राष्ट्र संघ ने इसे पूरे विश्व के देशों के लिए 'विश्व जनसंख्या दिवस' के रूप में मनाने का निर्णय लिया। बढ़ती आबादी के साथ मानव की आवश्यकताओं का बढ़ना स्वाभाविक प्रक्रिया रही है। आवश्यकता ही आविष्कार की जननी कही जाती है। आदिम युग से पाषाण युग तक गुजरते हुए फिर आज के युग तक पहुंचते पहुंचते यदि मानव की इच्छाओं, आवश्कताओं के अनुसार किये गये आविष्कारों को यदि गिना जाये तो शायद गिनती खत्म न हो। क्योंकि मानव की आवश्यकताएं, इच्छाएं क्षण क्षण, कदम कदम बढ़ते हुए नए नए आविष्कारों का रूप लेती रही हैं। आज तक मानव जहां जहां तक सोचता रहा, वहां वहां तक पहुंचता रहा। आज उसने अपनी हर सुख सुविधा के साधन अपनी ईच्छा के अनुसार, अनुरूप आविष्कृत कर लिये हैं और यहां तक कि जब पृथ्वी पर उसकी सीमाएं समाप्त होने लगीं तो सुदूर अंतिरिक्ष में लाखों मील दूर तक जा पहुँचा और वहां भी अपनी बस्तियां बसाने के सपने संजाने लगा। असम्भव नहीं कि यदि आवश्यकता, प्रगति की यही रफ्तार रही तो इस सदी के मध्य तक अंतरिक्ष में मानवीय बस्तियां बसाने का उसका स्वप्न साकार हो जाये। बस आवश्यकता इस बात की है कि सौर मंडल के ग्रहों में जीवन जीने के अनुकूल वातावरण मिल जाये। यद्यपि मानव की इच्छा आवश्यकता के अनुसार आविष्कारों ने उसे आदिम युग से आधुनिक युग में पहुंचा दिया, जिसे आज प्रगति, विकास, आधुनिक वैज्ञानिक युग आदि के नाम से जाना जाता है। आविष्कारों की इस दौड़ में जहां मनुष्य ने सभ्यता, संस्कृति, विकास के नये आयाम स्थापित किये, वहीं हमारी पृथ्वी का किस कदर शोषण और दोहन हुआ, सामाजिक व्यवस्था, सभ्यता, संस्कृति का कितना तीव्र गति से ह्रास हुआ, इस ओर किसी ने मुड़कर नहीं देखा। जब से मानव को आधुनिक तकनीकों से, खोजी यंत्रों से, उपग्रहों के माध्यम से ज्ञात हुआ कि पृथ्वी के गर्भ में, समुद्र के नीचे अतुल खनिज सम्पदा का भंडार छुपा हुआ है तब से उसने समुद्र का और भूगर्भ का सम्पूर्ण पोस्ट मार्टम सा कर डाला है। नई नई हजारों माइंस भूगर्भ में बना डालीं, हजारों तेल के कुओं की खुदाई पृथ्वी और सागर के नीचे कर डाली और फिर दौर शुरू हुआ पृथ्वी के दोहन का। भूगर्भ से करोड़ों बैरल तेल, करोड़ों टन खनिज पदार्थ प्रतिदिन निकाले जाने लगे जिससे पृथ्वी के नीचे की मजबूत चट्टानों का और उन तत्वों का कमजोर होना स्वााभाविक था जो प्राकृतिक रूप से पृथ्वी को मजबूत और शक्तिशाली बनाते थे। पृथ्वी का अनेक स्थानों पर धंसना, भूगर्भीय चटटानों का टूटना, निरन्तर भूकम्पों का आते रहना, ज्वालामुखियों का फूटना, पृथ्वी पर मौसम का असामान्य रूप से बदलना, वायुमंडल में परिवर्तन होना, इसका स्पष्ट उदाहरण है कि पृथ्वी शनैः शनैः अपना वास्तविक रूप खो कर कमजोर होती जा रही है। बढ़ती जनसंख्या का प्रभाव यह भी पड़ा कि शीघ्र से शीघ्र एक दूसरे से पहले कहीं भी पहुंचने की प्रवृति से, अत्यधिक वाहनों के निर्माण से तेल, ईधन की बेइंतहा खपत से, प्राकृतिक गैस के अत्यधिक उपयोग का परिणाम यह हुआ कि हमारा वायु मंडल प्रदूषित वायु मंडल में परिवर्तित होता जा रहा है। जबकि स्वच्छ, सुंदर, शुद्ध वायु मंहल, पृथ्वी पर जीवन के सुरक्षित रहने की पहली शर्त है। बढ़ती आबादी के ऊपर टेलिविजन के कार्यक्रमों ने मानव की सभ्यता, संस्कृतिक मूल्यों के विनाश के प्रचार प्रसार में अभूतपूर्व योगदान दिया। वर्तमान में टेलिविजन ने हमारे सामाजिक सम्बंधों को छिन्न भिन्न करके रख दिया एक संस्कृति, सभ्यता विहीन विशाल जनसंख्या से हम किसी अच्छाई की आशा कैसे रख सकते हैं। आज शाम होते ही, या क्रिकेट का मैच होते ही सड़कों पर कर्फ्यू जैसी स्थिति हो जाती है। लोग एक दूसरे के सुख दुख में सहयोग की भावना से कोसों दूर हो गये। मनुष्य ने फिल्मों, टेलिवीजन को आज अपना सबसे अच्छा मित्र बना लिया है। आज मारधाड़, हिंसा, चोरी, डकैती, हत्या, बलात्कार, और नयी नयी आपराधिक गतिविधियों से फिल्में भरी पड़ी रहती है जिसका गलत प्रभाव मानव, तथा बेरोगारों के मन मतिष्क पर पड़ता है। आदमी का, समाज का, उसका रिश्तेदार, उसका दोस्त आज सब कुछ टेलिवीजन बन के रह गया है। नयी पीढ़ी का मार्ग दर्शन करने के



विपरीत टेलिवीजन आज उसे दिग्भ्रमित कर रहा है। मानवीय संवेदनाओं का सत्यानाश तक कर रहा है। समाज में बढ़ती हिंसक गतिविधियां इसका जीता जागता प्रमाण हैं। जनसंख्या की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए कागजों का उपयोग तो बढ़ा जिससे पेड़ों का अंधाधुंध कटान हुआ जब इससे भी आवश्यकताएं पूरी नहीं हुईं तो बेभाव प्लास्टिक, पालिथीन का उपयोग बढ़ा, इनके आसानी से नष्ट न हो पाने के कारण इनसे बढ़ती आबादी के लिए प्रदूषण का संकट और बढ़ा। बढ़ती आबादी को रोकना आज विश्व के लिए सबसे बड़ा चुनौती भरा प्रश्न बन गया है। बढ़ती आबादी के साथ आवागमन के वाहनों की संख्या में कल्पनातीत बढ़ोतरी हुई आज इनके मलबे के ढेरों को नष्ट करना भी विश्व के सामने बड़ी समस्या हो गयी है। इनसे जो ध्वनि प्रदूषण, गैसीय प्रदूषण फैलाते करोड़ों वाहन मनुष्य के जीवन के लिए बहुत बड़ा खतरा बन गये हैं। पहले मनुष्य दूर दूर तक पैदल आया जाया करता था जिससे उसका स्वास्थ स्वस्थ रहता था आज कदम-कदम पर उसे वाहन की आवश्यकता पड़ती है, जिससे स्वास्थ पर नकारात्मक प्रभाव पड़ने से आबादी का बड़ा हिस्सा रोग ग्रस्त हो रहा है। बढ़ती जनसंख्या के कारण जमीन कम पड़ने लगी है। सूती कपड़ों से जब इतनी बड़ी आबादी के लिए कपड़ों की आपूर्ति पूरी नहीं हो पायी तो सिंथेटिक कपड़ों का आविष्कार हुआ जिन्होंने अनेक त्वचा के रोगों को जन्म दे डाला। इसके अतिरिक्त सिगरेट, तंबाकू, शराब, ड्रगस आदि की गिरफ्त में आने से विश्व की विशाल आबादी अपने को रोक नहीं पायी। बढ़ती विशाल आबादी की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए नए नए करोड़ों उद्योग धन्धे, मिलें स्थापित हुईं जिनसे निकलने वाला लाखों टन कचरा, कूड़ा मनुष्य के साथ पृथ्वी के लिए भी एक बड़ी मुसीबत हो गया है। इस कचरे को, इस गंदगी को मानव द्वारा सीधे नदियों में, तालाबों में, सागर में फेंक दिया जा रहा है। जिस कारण विश्व का अधिकांश जल पीने योग्य उपयोग के योग्य नही रहा है। इस तरह बढ़ती जनसंख्या का विकराल रूप सारी व्यवस्थाओं को ध्वस्त कर रहा है। विश्व की विशाल आबादी के लिए जब अनाज कम पड़ने लगा तो फिर रासायनिक खाद से अधिक उत्पादन के प्रयोग किये जाने लगे जो जहर का कार्य कर रहा है। इससे अनाज का, फलों, सब्जियों का आकार तो बड़ा हुआ पर उनके गुण, उनमें स्थित पौष्टिक, औषधि तत्त्व नष्ट होने लगे। इस कारण कहा जा सकता है जिस तरह आबादी बढ़ती रहेगी मनुष्य अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए पृथ्वी से, पर्यावरण से, नदियों से, जल से, सागर से, वायु मंडल से छेड़छाड़ करता रहेगा उनका दोहन करेगा जिसके उसे एक दिन गम्भीर दुष्परिणाम भुगतने पड़ेंगे। बढ़ती आबादी की जब भूख, प्यास, आवास, रोजगार की आवश्यकताएं पूरी नहीं हो पायेंगी, असमानता, अन्याय, आर्थिक विपन्नता आदि के साथ जब जाति, धर्म, भाषा, क्षेत्रवाद, वर्गवाद जुड़ेगा तब जो जनसंख्या विस्फोट उभर कर आयेगा उसका असर कई हाईड्रोजन और परमाणू बमों से कई गुना अधिक होगा। आज विश्व की सारी समस्याओं की जड़ बढ़ती आबादी है इससे कोई इनकार नही कर सकता। इसके घातक परिणाम एक न एक दिन पृथ्वी को ही नहीं, पृथ्वी पर निहित जीवन, पशु पक्षी, पेड़ पौधों, वनस्पति, नदियों, सागर समूचे ब्रह्मांड को सभी को भुगतने पड़ेंगे। मानवीय सभ्यता, संस्कृति तहस-नहस हो जायेगी, यह जरूर है कि इसके बाद एक नई सभ्यता, संस्कृति का उदय होगा। पृथ्वी को यदि बचाना है, पर्यावरण को यदि बचाना है पृथ्वी पर यदि जीवन को बचाना है तो जनसंख्या कम करना उसे बढ़ने से रोकना जीवन की पहली शर्त होगी।

सकलानी साहित्य सदन, विद्यापीठ मार्ग,
विकासनगर, देहरादून, उत्तराखंड

आलेख

हिंदी लघुकथा
संघर्षों में अस्मिता को तलाशता नारी चरित्र

● बी.एल. आच्छा

नारीत्व की प्रतिष्ठा के बावजूद आज साहित्य में उस आवाज की खोज की जा रही है, जो नारी-व्यक्तित्व और उसकी अस्मिता की समानता का दर्जा दिलवा सके। भारतीय साहित्य में वैदिक वाचक्नवी जैसी विदुषी की तर्कशीलता से लेकर नारी को दैवीय पूज्यता का आसन तो मिला, पर व्यावहारिक रूप से समाज में उसकी चुप्पी पर पितृसत्ता का पुंसवादी सोच हावी रहा है। हमारे यहाँ जेंडर की समानता नागरिक अधिकारों में उतनी बाधक नहीं बनी, जितनी कि पश्चिम में। फिर भी वह सोच दूरन्त समाज में ध्वनित होता रहा - 'जिमि स्वतंत्र होई विगरिहि नारी'। अर्थ और देह का नारीवादी परिप्रेक्ष्य पुरुषवादी समाज में चरित्र और शोषण के उन आयामों को रचता रहा, जिसमें मूल्यांकनकर्ता मर्दशैली में था।

पश्चिम में पुरुषवादी सामाजिक व्याकरण में उदारवादी पूँजीवाद ने थोड़ी सी जगह दी। फ्रेमवर्क दरका तो स्त्री की सामाजिक पड़ताल ने उसकी क्षमता और रूढ़ विश्वासों पर नये विचार रोशन किये। स्त्रियोचितता का जैविक तर्क खंडित हुआ, अच्छे-बुरे की नियंत्रणवादी मरदाना दृष्टि प्रश्नांकित हुई। उस गुलामी पर भी न केवल तीर चलाये गये, बल्कि पुरुषवादी नरमीली सहानुभूति को भी यथार्थ का आईना दिखाया गया। और यह सोच उसे अस्मिता, स्वतत्रंता, व्यक्तित्व-सम्पन्नता, स्वामित्व की समानता तक ले गया, जो 'तिरिया चरित्तर' के सामाजिक व्यंग्य में, न केवल लिंग आधारित वर्चस्व में समानता को ध्वस्त करता था, बल्कि घरेलू और राजनीतिक तानाशाही में शोषण का हथियार बनाता था। नारी के त्याग, तपस्या, समर्पण जैसे दैवीय गुणों के बावजूद उसके घरेलू श्रम को प्रतिष्ठा नहीं मिली। यश और अर्थ के पुरस्कारों से भी वह वंचित रही। नारी के लिए पुरुषवादी पाठ और पुरुष के लिए पाठ-विहीनता; यह शताब्दियों का सच है।

भारत में स्त्रीवाद और नारी स्वतंत्रता का पाठ अपने सामाजिक-सांस्कृतिक भूगोल से जुड़ा है। संस्कृति के आदर्श में उसकी पूज्यता आस्था स्वरूप है, पर उपस्थिति बहुत कुछ बायोलॉजिकल उसकी पहचान समर्पण, देह की पवित्रता, पारिवारिक त्याग और पुरुष-निर्भरता पर है। सारे प्रतीक वृक्ष और लता के हैं, कभी वे बेहद रोमानी हो जाते हैं और कहीं स्त्री को पुरुष पर लिपटी अमरबेल बना देते हैं। ऐसे अनेक मुद्दे हैं, जो संस्कृत साहित्य में भी स्त्री की पहचान के तर्क को मंडित नहीं करते और हिन्दी साहित्य में भी नारी देह को सौन्दर्य और शोषण का प्रतिमान बना लेते हैं। गोदान की 'सिलिया' एक प्रतीक है, तो कमलेश्वर की 'मॉस की दरिया' दूसरा यथार्थ और नये साहित्य में यह अस्मिता अपनी स्वतंत्रता के तर्क को पुख्ता बनाती हैं, तो घर की दीवारें टूटती नजर आती हैं। इसीलिए साहित्य में भी नारी-उत्पीड़न, दहेज-प्रथा, घरेलू-हिंसा, छेड़खानी, बाल-विवाह कन्या भ्रूण हत्या, कामकाजी महिलाओं के पारिश्रमिक में भेदभाव, महिलाओं के प्रति वस्तुवादी सोच, मजहबों-धर्मों में कसमसाती आजादी, कार्यक्षेत्र में पुरुषवादी नायकत्व, नारी-देह का बाजारवादी विज्ञापन, अपहरण और आतंक की शिकार महिलाओं की समस्याएँ, हिन्दी साहित्य में भी तर्कशील स्त्रीवादी आवाज के रूप में उभरकर आई हैं।

पर ऐसा भी नहीं कि 'स्त्री' को निर्दोष मानकर उसकी ही हिमायत की गयी है। जहाँ उसके मातृत्व भाव को प्रतिष्ठा मिली है, वहीं सास-ससुर के प्रति उपेक्षाभाव को भी प्रश्नांकित किया गया है। जहाँ देह की पवित्रता के सवाल संदेहों के मोथरेपन को दरकाते हैं, वहीं अपने भोगवाद में पारिवारिक जीवन को छिटकाती स्वतंत्रता प्रश्नांकित हुई है। जहाँ कमजोर स्त्रियों के शोषण पर तीर चलाये गये हैं, वहीं उनके व्यक्तित्व को उच्चतर समाज की स्त्रियों की अपेक्षा अधिक स्वतंत्र और अस्मितापूर्ण चरित्र के रूप में प्रतिष्ठा मिली है। निश्चय ही हिन्दी लघुकथाओं में वे आयाम उभर आये हैं, जो पुरुषवादी सोच और परिप्रेक्ष्य में नारी के यथार्थ को सामने लाते हैं और पुरुषवादी सोच से टकराकर नारी की आवाज को तलाशते ही नहीं, बल्कि उसे मुकाम पर पहुँचाते हैं। इस प्रकार के लेखन में जहाँ पुरुष-लेखन भी नारी के साथ विवेकशील तर्क को पुरजोर बनाता है, वहीं महिला लेखन में भी अस्मत और अस्मिता के सारे दंश अपने तेजाबीपन के साथ उभरे हैं। कई बार

प्रेमचन्द की लघुकथा 'देवी' में उस विधवा का चरित्र त्याग और अनासक्ति का जीवंत प्रतीक बन गया है, जो दस रुपए के सड़क पर पड़े नोट को फकीर के हाथों में बिना किसी मुखरता के दे आई है। तो ऐसा ही नारी चरित्र हिन्दी लघुकथाओं में मातृत्व की भाव साध्य पावनता में अपनी सुगंध बिखेरता है। यों 'मातृत्व' भी नारीवाद की दृष्टि में पुरुषवादी सोच है, जो उसे स्वामित्व और स्वतंत्रता की संभावना से अलग करता है।

यह कहा जाता है कि महिला लेखन में पुरुष-विरोधिता की गंध का अभाव है, मगर वास्तविकता यह है कि 'तिरिया चरित्तर' के नये रूपों में स्त्री का व्यक्तित्व संघर्षशील, अस्मितापरक और जेण्डर-समानता में पुख्ता हुआ है, चाहे वह कमजोर वर्ग की स्त्री हो या उच्चतर कामकाजी स्त्री।

प्रेमचन्द की लघुकथा 'देवी' में उस विधवा का चरित्र त्याग और अनासक्ति का जीवंत प्रतीक बन गया है, जो दस रुपए के सड़क पर पड़े नोट को फकीर के हाथों में बिना किसी मुखरता के दे आई है। तो ऐसा ही नारी चरित्र हिन्दी लघुकथाओं में मातृत्व की भाव साध्य पावनता में अपनी सुगंध बिखेरता है। यों 'मातृत्व' भी नारीवाद की दृष्टि में पुरुषवादी सोच है, जो उसे स्वामित्व और स्वतंत्रता की संभावना से अलग करता है। पर हिन्दी की लघुकथाओं में मातृत्व का यही उजला रूप संस्कारों की निधि है। यह अपनी ही रोशनी से न केवल पारिवारिक उजलेपन को बल्कि नारी की सत्ता को भी चिर-संभवी बना देता है। सुकेश साहनी की लघु कथा 'दूसरा चेहरा' में यह संरक्षण भाव सर्दी के दिनों में पिल्ले को अपनी रजाई के पायताने में पिलटा कर भाव-संवेदी बना देता है, तो सूर्यकान्त नागर की लघुकथा 'माँ' में बेटों के द्वारा अलग की गयी माँ बहू के गर्भ में पलते तीसरे बच्चे को भी जेहन में बसाये भावनामय उल्लास के साथ खाना पकी रही है। प्रतापसिंह सोढ़ी के संपादन में 'माँ' केन्द्रित लघुकथाओं का समूचा संकलन प्रकाशित हुआ है। पश्चिम की धारणा से अलग हमारे सांस्कृतिक-सामाजिक भूगोल का यह पैमाना है। सुकेश साहनी की 'ओए बबली' पानी के बाजारवादी विज्ञापनों के मोहक संसार के बीच मातृत्व के इसी गुण को बेटी बबली तक विस्तार देती है। मधुदीप की 'ममता', अशोक भाटिया की 'मोह' जैसी अनेक लघुकथाएँ इस उत्कट भाव को बुनावट देती हैं। यही नहीं, नये सामाजिक द्वन्द्वों में मातृत्व को विस्थापन, कलह और उपेक्षा में धकेलने वाले पात्र सामाजिक मूल्यांकन में खलनायक सा खिताब पाते रहे हैं। एक और परिदृश्य इन लघुकथाओं में उभर कर आया है, जहाँ नये जमाने में शिक्षा और करियर की चिंता माँ को मैडम के सख्त चेहरे में रूपांतरित कर देती है और वे अपने बच्चों में हर कमी को दूर करती और हर योग्यता को लादती नजर आती हैं। बलराम अग्रवाल की 'पीले पंखों वाली तितलियाँ' जैसी अनेक लघु कथाएँ इस धुरी पर रची गई हैं, जहाँ बच्चे के कोमल संवेग पर माँ की झन्नाटेदार थप्पड़ इसी की प्रतिक्रिया है। संतोष सुपेकर की 'उसी माँ ने', वाणी दवे की 'तेरी बदसूरत माँ' में जहाँ मातृत्व को करुणा-जल से मंडित किया गया है, वहीं कोमल वाधवानी 'प्रेरणा' की लघुकथाएँ विमाता-बोध की चुभन को 'नयी माँ' के बजाय 'माँ' के रूप में संबोधित होते देखना चाहती हैं।

नारी चरित्र का अस्मितापूर्ण व्यक्तित्व हिन्दी लघु कथा में तेजस्वी बना है। विशिष्ट बात यह है कि उनमें निम्न और कमजोर वर्ग की स्त्रियों की जबानें और स्वेच्छा का कर्मतंत्र झलकता है। कमल चोपड़ा की 'कैद बामुशक्कत में पत्नी और काम वाली के बीच बेबाक आजाद नारी के तेजस और अस्मितापूर्ण रूप की झलक देती है - 'ओ मालिक! ये चिकचिक मुझे पसंद नहीं। मैं तेरी बीवी नहीं हूँ, जी इस तरह गाली-गलौच से बात करेगा। घर की बहू नहीं, जो थप्पड़-लात खा के पड़ी रहूँगी।' एक तरह से यह पारिवारिक संस्थाओं में जड़ होती हुई औरत की प्रतिमा पर चोट है और चुनौती का स्वर भी । 'बदला' लघुकथा में बेटी अपने पिता के प्रलोभन को इसी तरह लाल आँखें दिखाती है। 'उसका एक होना' में ठाकुर को व्यंग्यात्मक रूप से कहती है - ''ठाकुर साहब, एक आपके होने की ही तो चिन्ता है।'' मधुकान्त की 'बोध' और 'शुरूआत' लघुकथा सतेज होती औरत का प्रतिमान बन जाती है। नारी निकेतन पहुँचा कर मुक्ति दिलाने वाले खद्दरधारी से कहती है - 'वहीं से तो धन्धा शुरू हुआ है।' चित्रा मुद्गल की 'बयान' लघुकथा का यह मारक, संवाद पुलिसिया चरित्र को छितरा कर रख देता है - 'न, वो मेरी बेटी है....मेरी बेटी की चलती फिरती लाश। घर आइए दरोगा साहब और उस बच्ची को गौर से देखिए। मेरी बेटी बरामद हो जाएगी।' विक्रम सोनी की 'मीलों लंबे पेंच', चित्रा मुद्गल की 'व्यावहारिकता', जगदीश कश्यप की 'गृहस्थी' नारी अस्मता के विविध पार्श्वों को बुनती लघुकथाएँ हैं। परन्तु भगीरथ की 'फूली' अपने पति भानिया को कहती है - ''सुबह पैली काम तेरा वीरजी करेगा, बता। आज तो वीरजी को भगा के ही मानूँगी।'' और भानिया के डील (शरीर) में उतरा यह - देवता-प्रेत भाव चुपचाप काम में लगा देता है।

औरतों और मर्द के विभेद पर टिका पितृसत्तात्मक सोच और सामाजिक व्यवस्था का ढाँचा केवल ऊपरी नहीं बल्कि औरत की छातियों तक सांस्कारिक जड़ता के रूप में रचा-बसा है। इस मायने में चित्रा मुद्गल की लघुकथा 'दूध' में माँ के मर्दवादी संस्कार पर बेटी ही तीखा प्रहार करती है - 'तो मेरे हिस्से का छातियों का दूध भी क्या तुमने घर के मर्दों को पिला दिया था?' यह सोच नारी को

भी पुरुष के पक्ष में खड़ा कर देती है, जो बेटे-बेटी के फर्क से गुजरते हुए कन्या भ्रूण हत्या तक झाड़ी में फिंक जाते हैं। लड़कावादी बीज यदि नारी देह में नहीं उग पाते तो सारा दोष स्त्री का ही होता है। लेकिन यही स्त्री वैज्ञानिक तर्क के साथ अशोक भाटिया की लघुकथा 'भीतर का सच' में आँख मिलाते हुए कहती है - 'औरत के पास तो सिर्फ एक्स गुण होते हैं, मर्द के पास एक्स और वाई दोनों। अगर मैं कहूँ कि आपसे सिर्फ एक्स गुण ही आए तो......।' श्याम सुन्दर अग्रवाल की लघुकथा 'आदम जात' का यह संवाद - 'ऐसी हालत में अगर पत्नी पर हावी रहो तो शर्तिया लड़का पैदा होता है। बस....।' मधुदीप की लघु कथा शासन में तो पतित्व की अकड़ बीमार पत्नी के लिए चाय बनाने के लिए भी नरमीली नहीं हो पाती। 'मर्द' की पारिभाषिकता को मुखर करने में औरत का यह संस्थागत रूप भी कारक है, जो सास के रूप में जमा हुआ है। सास-बहू के द्वन्द्व में अनेक लघुकथाएँ टकराती नजर आती है। अशोक भाटिया की 'श्राद्ध' और 'बराबरी', मधुदीप की 'अपनी अपनी जिन्दगी', बलराम की लघुकथा 'बहू का सवाल' इस विमर्श के कई कोण रेखांकित करती हैं। परन्तु रामेश्वर कांबोज हिमांशु की लघुकथा 'नव जन्मा' का जिलेसिंह लड़की पैदा होने पर घर में छाये अवसाद को ढोल के 'तिड़क-तिड़-पे-तिड़ धुम्म, तिड़क धुम्म' के जोश में बदल देता है। कन्या भ्रूण के प्रति बदलती मानसिकता सामाजिक यथार्थ के भयावह परिदृश्यों पर अपना झंडा जरूर फहराती है। अन्तरा करवड़े की 'ममता' लघुकथा में भी बेटी का व्यवहार बेटों के व्यवहार पर सवाल खड़ाकर बेटी के समर्पण को रेखांकित करता है।

पति-पत्नी के साहचर्यपूर्ण पारिवारिक जीवन में सौहार्द और खटास के कथानकों में भी नारी का समर्पण उसकी अहंता को खंडित नहीं करता। भागीरथ की 'सोते वक्त', रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु' की 'उजाला', संतोष सुपेकर की 'उसका मैन्यू', राजेन्द्र पाण्डेय की 'लंगड़ा', श्यामसुन्दर अग्रवाल की 'घर' और 'टूटी हुई ट्रे', वीरेन्द्रकुमार भारद्वाज की 'प्यार', शकुंतला किरण की 'सुहाग व्रत' जैसी लघुकथाएँ दाम्पत्य की सारी खट-पट में, अभावों-उलाहनों में भी सांस्कारिक गठबंधन को टूटने नहीं देतीं। यह अलग बात है कि यथार्थ के खुरदुरे अक्षों वाली लघुकथाएँ इस दरकते हुए पारिवारिक जीवन को सच्चाइयों तक ले जाती हैं। फिर अधिकतर लघुकथाकार इस भावनामय सांस्कारिकता के अँदरूनी संस्कारों से कथाक्रम का 'द एण्ड' करते हैं। बलराम ज्योति जैन, मीरा जैन, संतोष सुपेकर, सूर्यकांत नागर, योगेन्द्र शुक्ल आदि की लघुकथाओं में यह भाव-तत्व मुखर है।

यों तो भारतीय समाज में वाणी का लोकतंत्र असलियत के मुहावरों-कहावतों में मुखर रहा है। 'घर की मुर्गी दाल बराबर' - इसी व्यंजना को नारी की ओर ले जाता है। 'मरद' के श्रम को घी-दूध मिलता है और वंश परम्परा चलाने वाली 'औरत' को बचा-खुचा। घरेलू श्रम की पहचान को दरकिनार करना पुरुषवादी सोच हिन्दी लघुकथाओं में अनुगूंज बना है। कमल चोपड़ा की लघुकथा 'और ऊँचा पद' में कंट्रास्ट मुखर है - 'मैडम' काम से लदी आ रही है और 'कामवाली बाई' पति के कहने पर काम छोड़कर खुशी का इजहार करती है। लेकिन अशोक भाटिया की लघुकथा 'स्त्री कुछ नहीं करती' में तो बिन साँस लिए घर के लिए अनवरत खटने वाली औरत तो मशीनी यंत्र है, रात देर से सोने वाली सुबह सवेरे जल्दी उठने वाली। फिर भी उसका वजूद सिफर है। लेकिन माधव नागदा की लघुकथा 'सृजन' में पति-पत्नी के श्रम की समान पहचान प्रशस्ति पाती है। कमल चोपड़ा की 'वेल्यू' में छोरियों की वेल्यू को प्रश्नांकित किया गया है।

नारी के स्पर्श के बिना धरती की कोई चीज मनोहारी नहीं होती। इस आप्त वाक्य की उज्ज्वलता जितनी सैद्धान्तिक है, उतनी ही धुँधली भी। नारी देह का भोग्या स्वरूप सदैव ही गर्हित रहा है, परन्तु वही शोषण का यथार्थ भी है। यही नहीं, जेण्डर की विषमता का पुंसत्ववादी सोच इस शोषण में ही मर्दानापन पाता है। 'मर्द' के ढ़ाई अक्षर शोषण में 'मरद' के तीन अक्षरों में लंबायमान हुए हैं। देह और काम की स्वतंत्रता नारी का पक्ष-पोषण नहीं करती। उसके चरित्र की कसौटी भी पुरुष का नजरिया है। ऐसा नहीं कि नारी चरित्र की सात्विक प्रतिभा का लघुकथाओं में अभाव है, पर देह-शोषण के अंधेरे पक्ष लघु कथाओं का हिस्सा बने हैं। अशोक शर्मा की लघुकथा 'संस्कार' और 'समझ', कमल चोपड़ा की 'एक उसका होना', कुमार नरेन्द्र की छोटे बड़े हरे टुकड़े, प्रबोध गोविल की 'शिनाख्त', सतीश राठी की 'आटा और जिस्म', चित्रा मुद्‌गल की 'मर्द', युगल की 'औरत', सुकेश साहनी की 'नपुंसक', प्रबोध गोविल की 'शिनाख्त', प्रियंका गुप्ता की 'भेड़िया', 'सत्या शर्मा 'कीर्ति' की 'फटी चुन्नी' और 'लौट आओ माईं', सीमा सिंह की 'अंधकार', पारस दासोत की 'कामवाली बाई' मर्दानगी और 'सिन्दूर की रेखा', श्यामसुन्दर अग्रवाल की 'टूटा हुआ काँच', जैसी लघु कथाएँ नारी के देह शोषण, व्यभिचार और घर-समाज में भय के परिदृश्यों को मुखर करती है। लेकिन इन्हीं देह लोभी परिदृश्यों में रूप देवगुण की लघुकथा 'जगमगाहट' संदेहों के बीच चारित्रिक आश्वस्ति की उजली किरणें फेंकती है।

नारी के आधुनिक रूप को देह और व्यक्तित्व के स्तर भी कई कथानक मिले हैं। उनमें माँसलता के साथ सजा-संवरा आकर्षण है और देह की जैविक माँग भी। बलराम अग्रवाल की लघुकथा 'लगाव' और सुभाष नीरव की 'लाजवंती', सुकेश साहनी की 'फाल्ट' जैसी लघुकथाओं में पति-पत्नी के रिश्तों-नातों में गरम-ठण्डी सहजता है। पर सुकेश साहनी की ही लघु कथा 'आधी दुनिया' में आधुनिक युवा का फिल्मी सपना है पत्नी के बारे में। यह लघुकथा नये शिल्प में पत्नी को इतना आक्रांत करती है कि पुराने और नये सारे बंध और रूढ़ सामाजिकता युवा सोच में

लघु कथा

बिच्छू-बूटी

● डॉ. मंजु पुरी

"चलती है या नहीं।" "नहीं माँ मुझे मत मारना, भगवान के लिए मुझे छोड़ दो।" आँखों में आँसू, स्कूल की वर्दी पहने गरिमा अपनी माँ से हाथ जोड़कर विनती कर रही थी, "माँ! मुझे बिच्छू बूटी मत लगाना। मैं रोए बगैर ही स्कूल चली जाऊँगी।" मैं असमंजस में थी, ये क्या हो रहा है। छोटी-सी, प्यारी-सी लड़की, जो स्कूल की वर्दी पहने एक ही जगह पर ठिठक कर खड़ी थी, और उसकी माँ उसे लगातार गुस्सा कर रही थी, ''हम तो गंवार रह गये, मजदूरी करके पेट पाल रहे हैं। गरिमा तू फिर भी नहीं समझती, रुक जरा अभी लाती हूँ 'बिच्छू बूटी'। देखती हूँ, कैसे नहीं जाएगी 'स्कूल'।"



मुझे विश्वविद्यालय जाने के लिए विलंब हो रहा था फिर भी जिज्ञासु प्रवृत्ति होने के कारण रुका नहीं गया और मैंने पूछा, "आप इस पर गुस्सा क्यों हो रही हैं, प्यारी-सी बच्ची है, गुस्सा थूक दीजिए और प्यार से समझाइए।"

मेरी बात सुनकर ताम्र वर्णा वह युवती बोली, "मैड़म जी, आप जैसी बन जाए, पढ़-लिख जाए और दूसरों पर निर्भर न रहे, बस इसलिए ही मैं इसे बिच्छू बूटी से डरा रही थी, चाहे डर के कारण ही सही, पर यह स्कूल जाए और पढ़े-लिखे। शिक्षा के महत्त्व को समझे।"

उस युवती की बात सुनकर मैं हतप्रभ रह गयी, मैं सोच रही थी कि समय कितना परिवर्तनशील है, जहां लड़कों को लड़कियों से अधिक महत्त्व दिया जाता था, वहीं आज की मजदूर स्त्री भी अपनी बेटी को 'बिच्छू बूटी' से इसलिए डरा रही है ताकि वह शिक्षित बने। आधुनिकता की दौड़ में पीछे न रह जाए। मैं इसी उधेड़बुन में चलते-चलते विश्वविद्यालय पहुंच गई। मजदूर स्त्री की बातों का मुझ पर काफी प्रभाव हुआ और मैं मन-ही-मन उसे 'सलाम' कर रही थी। वह स्त्री रोज मुझे अपनी बेटी गरिमा के साथ मिलती है और मीठी मुस्कान के साथ मुझे रोज़ नारी जागृति का संदेश दे जाती है।

सहायक आचार्य (हिंदी), अंतर्राष्ट्रीय दूरवर्ती शिक्षा एवं
मुक्त अध्ययन केंद्र, समरहिल, शिमला-171 005,
मो. 0 8894 10597

अतिक्रामक पुरुषवाद का मुहावरा बन जाते हैं। भगीरथ की 'चेहरा' आधुनिक सोच का एक परिप्रेक्ष्य है, तो सुकेश साहनी की 'कसौटी' में बहुराष्ट्रीय कंपनियों का नारी के देहाकर्षण से बाजारवादी सोच के खुलेपन का व्यापार । ड्रिंक, डेट, मेल फ्रेंडस्, बेडरूम शेयर, किसिंग, नेट सर्फिंग, पोर्न साइट्स, चैटिंग, एडल्ट हॉट रूम्स, साइबर फ्रेण्ड्स, सीक्रेट फाइल्स, वेब केमरे उसे आधुनिकता की खुली भाषा देते हैं भूमण्डलीकरण की बाजारवादी सतह पर। यों अशोक शर्मा की 'समझ' और 'संस्कार' लघुकथाएँ देह की माँग, मांसलता और संस्कार को मूल्य देती हैं। पर सुभाष नीरव की लघुकथा जानवर में युवती देह के आकर्षण में युवा के भीतर उगे जानवर को भी पहचान कर छिटक जाती है। इस परिप्रेक्ष्य में भगीरथ की 'कन्विन्स करने की बात', रामेश्वर कंबोज की 'स्क्रीन टेस्ट' और 'अश्लीलता' प्रभावी लघुकथाएँ है। सुकेश साहनी की वायरस लघुकथा इस संक्रमित रोग के घरों-बच्चों तक अतिक्रमित होते जाने का संकेत देती है।

यों तो नारी के विविध आयामी रूपों, कमजोरियों को शक्ति बनाने वाले तेजस व्यक्तित्व, दहेज जैसी दानवी माया और पारिवारिक समाजशास्त्र के रूखेपन में संघर्षमय अस्तित्व को रोपने की ताकत, त्याग परिवार को सिंचित करने की अमोघ शक्ति, देह माँस के भुक्कड़ गिद्धों को चुनौती देने की बुद्धि और शक्ति, कामकाजी जिन्दगी में अपने व्यक्तित्व को अक्षत रखने की व्यवहार-कला, नेतृत्व की कामयाबी जैसे अनेक पक्ष हैं, जो लघुकथाओं में उभर कर आये हैं। पर उनके भीतर भावनाओं के रसायन अधिक संजीदा है और बुद्धि की समझ भी कारगर। इसीलिए अशोक शर्मा की लघुकथा 'कामधेनु' के रूप में अपने अस्तित्व की सार्थकता को जितना समझती है, उतना ही शोषण की तमाम शक्तियों से मुठभेड़ करती हुई अपनी अस्मिता और अस्तित्व की लड़ाई उस पुरुषवादी दुनिया से लड़ती है, चाहे भावनाओं के प्रगाढ़ रस से या संघर्ष की तेजोमय शक्ति से। हिन्दी लघुकथाएँ पशिचम के स्त्रीवाद से पृथक् अपने वास्तविक समाजशास्त्र और सांस्कृतिक भूगोल के केनवास पर रची गई है।

36, क्लीमेंस रोड सरवना स्टोर्स के पीछे
पुरुषवाकम् चैन्नई (टी.एन.)-600007
मो. 0 94250 83335

आलेख

समरसता के संवर्धन में भाषा की भूमिका

● शंकर लाल माहेश्वरी

''**भाषा** वह साधन है जिसके माध्यम से प्रत्येक प्राणी अपने विचारों व भावों को दूसरो पर अभिव्यक्त करता है।'' यह ऐसी दैवीय शक्ति है जो मनुष्य को मानवता प्रदान करती है। उसका सम्मान तथा यश बढ़ाती है। जिसे वाणी का वरदान प्राप्त है वह अक्षय कीर्ति का अधिकारी बन जाता है।

वस्तुतः एकता का आशय उस मूल भावना से है जो विभिन्न जातियों, वर्गो, धर्मों के अनुयायी भारतीयों को अपनी विभिन्न साम्प्रदायिक मान्यताओं के होते हुए भी अनुभूति कराती है कि हम सब भारतीय हैं। हिंदी हमारी राष्ट्र की भाषा है। हिंदी भाषा भारतीय अस्मिता की पहचान है। यह हमारे देश के जन-जन की भाषा है। बद्रीनाथ से रामेश्वरम तक और द्वारिका से पुरी तक के समस्त भूभाग में हिंदी राष्ट्रीय अस्मिता के रूप में हमारी पहचान है। यह राष्ट्रीय एकता की कुँजी बनकर भारतवंशियों के हृदयपटल को खोलकर उसमें एकता, अखंडता, सहयोग, सहिष्णुता, उदारता, न्याय, सांस्कृतिक विरासत तथा हमारी श्रेष्ठतम मान्यताओं को आत्मसात करने वाली हमारी राष्ट्र भाषा है। हमारे देश के जनजीवन में रची बसी यह भाषा हमारे गौरवमयी इतिहास की साक्षी है।

गरीब, अमीर, साधु-संत, कृषक, व्यापारी, शिक्षित, अशिक्षित, हिन्दू, मुस्लिम, सिक्ख, इसाई समस्त समुदायों को जोड़ने वाली भाषा हमारे गरिमामय अतीत के दर्शन कराने में सक्षम है। भारत की सभी अन्य भाषायें भी हिंदी की बहन बेटियों के रूप में हिंदी को सम्मान देती है। हमारी सांस्कृतिक विरासत को अक्षुण्य बनाते हुये एकता का संदेश देने वाली हिंदी भाषा उस गंगा के समान अथाह है जो समस्त भारतीयों को एकता के सूत्र में आबद्ध कर समूचे देश की भागीरथी बन गई है।

समूचे राष्ट्र के विविध धर्मावलंबियों की पूजा-अर्चना, देवी-देवताओं की वन्दना तथा धार्मिक विधि-विधान की सीढ़ियाँ बनकर उस मंजिल तक पहुँचाती है जहाँ हम सब एक है।

जन जन की वाणी है हिंदी, हिंदी देश की मान है।
राष्ट्र एकता की कुँजी है, जन गण मन की शान है।
हिंदी ही अस्मिता हमारी, हिंदी ही पहचान है।

भाषा मात्र अभिव्यक्ति का माध्यम ही नहीं है, वह अपने देश काल की संस्कृति की आत्मा होती है। भारत भूमि को विश्व पटल पर आलोकित करने में हमारे साधु-संतों तथा ऋषि-मुनियों ने अपनी वाणी के माध्यम से ही जो अमरता प्रदान की है वह स्तुत्य है। हमारी सांस्कृतिक व पारम्परिक रीति-नीतियों को अक्षुण्य बनाये रखने में तथा भावात्मक एकता को पोषण प्रदान करने में भाषा ही का विशेष योगदान रहता है। भाषा ही तो एकमात्र वह साधन है जो हमारे धर्म, संस्कृति, सभ्यता और विचार तरंगों का परस्पर सम्प्रेषण करते हुये जन-जन को एक सूत्र में पिरोकर एकता की मणिमाला के रूप में प्रस्तुत करती है।

भाषा ही आम आदमी की पहचान है जो उसके भावों का बोध कराती है। अपने स्वत्व को निर्धारित करती है। हिंदी खड़ी बोली के उन्नायक श्री भारतेंदु हरिश्चंद ने हिंदी भाषा के महत्व को प्रतिपादित करते हुये कहा है -

''निज भाषा उन्नित अहे, सब उन्नित को मूल।''

वर्तमान समय की अनिवार्यता अब हिंदी भाषा है। इसके माध्यम से ही देश-विदेश का प्रत्येक व्यक्ति एक दूसरे से जुड़ा हुआ है। भाषा पर ही जाग्रत भारत की नवीन सांस्कृतिक चेतना और पुनरुत्थान अवलंबित है।

आज के युग में आतंकवाद, नक्सलवाद और उग्रवाद का जहर जनमानस में घुलता जा रहा है। ऐसी परिस्तिथि में एकता का मूल मंत्र ही राष्ट्र की अस्मिता को सुरक्षित रख सकता है और यह कार्य संचार माध्यम के द्वारा ही सम्भव है तथा भाषा ही एकमात्र रामबाण औषध के रूप में दृष्टिगत होती है।

''हिंदी भाषा जिसकी लोक मान्यता विश्व स्तर पर है, यह भारत में भावात्मक एकता का स्रोत है। नाना विषमताओं के होते हुए भी हमारे देश में विलक्षण भावात्मक एकता दर्शनीय है। जो विभिन्न जातियों, धर्मों, समुदायों और वर्गो के भिन्न-भिन्न मान्यताओं के होते हुए भी अनुभूति कराती है कि हम सब भारतीय हैं। जो हमारी एकता का सूचक है।'' -डा. महाश्वेता चतुर्वेदी।

भाषा हमारी निजता को सुरक्षित रखते हुए एक दूसरे से नजदीकियाँ बढ़ाती है और औद्योगिक क्षेत्र के विस्तारीकरण में भी

भाषा ही का योगदान है जो एकता से संबद्ध प्रयासों का प्रतिफल है। आज के इस वैश्विक युग में जन-जन को जोड़ते हुए विकास की दिशा में अग्रसर होने के लिये भाषा का ही महत्त्वपूर्ण योगदान है। जो भाइचारे की भावना को विकसित करते हुए विकास यात्रा को सुगम व सहज बनाने में विशेष भूमिका का निर्वहन करती है। भाषा ही व्यक्ति को अपने सूक्ष्म से सूक्ष्म विचारों को अभिव्यक्त कर परस्पर स्नेह संबंधों को प्रगाढ़ता दिलाने में सहयोग करती है। भाषा हमारे माथे की बिन्दियाँ है जो जन-जन में समरसता और संवाद से सहजता का आविर्भाव कराती है तथा सभी को एक सूत्र में बाँधती है। भाषा तो उस नदी के समान है जो शीतल, मधुर और सरल वाणी रूप जल से मानव मात्र को आप्लावित करती है। सुख-दुखों में साथ निभाने का हौसला बढ़ाती है। ''राष्ट्र के एकीकरण तथा एक सूत्र में आबद्ध करने में भाषा से अधिक कोई भी तत्त्व बलवती नहीं हो सकता।'' - लोकमान्य तिलक

हिंदी सामान्यतः एकता, अखंडता, समन्वय तथा राष्ट्रीय गौरव की भाषा है। यह उदार और समृद्ध भाषा है इसीलिये यह राष्ट्रीय एकता का परिचायक है। इसी भाषा के माध्यम से राष्ट्रीय एकता, सामाजिक न्याय, बंधुत्व की भावना का विस्तार हुआ है। सभी में परस्पर मैत्री भाव पैदा करने वाली भाषा ही है। भाषा द्वारा ही राष्ट्रीय प्रेम, देशभक्ति, एकता, अखंडता, सद्व्यवहार, सहिष्णुता तथा सदाशयता का प्रसार हुआ है। यह अन्धकार से प्रकाश की ओर, असत्य से सत्य की ओर तथा घृणा से प्रेम की ओर ले जाने वाली वैतरणी है। भाषा हमारी राष्ट्रीय एकता का पर्याय है। राष्ट्र की प्राण वायु है तथा हमारी राष्ट्रीय अस्मिता है।

हिंदी सामान्यतः एकता, अखंडता, समन्वय तथा राष्ट्रीय गौरव की भाषा है। यह उदार और समृद्ध भाषा है इसीलिये यह राष्ट्रीय एकता का परिचायक है। इसी भाषाई के माध्यम से राष्ट्रीय एकता, सामाजिक न्याय, बंधुत्व की भावना का विस्तार हुआ है। सभी में परस्पर मैत्री भाव पैदा करने वाली भाषा ही है। भाषा द्वारा ही राष्ट्रीय प्रेम, देशभक्ति, एकता, अखंडता, सद्व्यवहार, सहिष्णुता तथा सदाशयता का प्रसार हुआ है। यह अंधकार से प्रकाश की ओर, असत्य से सत्य की ओर तथा घृणा से प्रेम की ओर ले जाने वाली वैतरणी है। भाषा हमारी राष्ट्रीय एकता का पर्याय है। राष्ट्र की प्राण वायु है तथा हमारी राष्ट्रीय अस्मिता है।

अंतर्राष्ट्रीय जगत में भाषा ही से परस्पर जुड़ाव संभव है। समुचे विश्व समुदाय को जोड़ने वाली तथा सामाजिक विकास एवं राष्ट्रीय समृद्धि में भाषा द्वारा ही संपन्नता संभव है।

भारत के सर्वाधिक भाग में हिंदी बनी हुई प्यार की भाषा,
भावों की संप्रेषणीयता में अति सक्षम हिंदी दुलार की भाषा,
है सद्भाव का सागर यह, नहीं रंच भी तकरार में भाषा,
चाह रहा यह हिंदी का विश्व के हिंदी हो सारे संसार की भाषा।

-अखिलेश द्विवेदी, शाश्वत

आचार्य विनोबा भावे ने कहा था ''मैं दुनिया की सब भाषाओं की इज्जत करता हूँ किन्तु मेरे देश में हिंदी की इज्जत नहीं हो यह मैं कभी नहीं मान सकता।'' इसी प्रकार हिंदी भाषा की महिमा को व्यक्त करते हुये योगीराज अरविंद का कथन है कि ''भारत के विभिन्न प्रदेशों के बीच हिंदी प्रचार के द्वारा एकता स्थापित करने वाले सच्चे भारत बन्धु है।''

''हिंदी हमारे राष्ट्र की अभिव्यक्ति का सरलतम स्रोत है।''

- सुमित्रानंदन पंत

हिंदी भाषा समूचे राष्ट्रीय स्तर पर राष्ट्रभाषा पद का प्रतिनिधित्व करते हुए भारत के हृदय प्रदेश की भाषा बन गई है। महर्षि दयानन्द ने कहा है कि- ''हिंदी के द्वारा हमारे भारत को एक सूत्र में पिरोया जा सकता है।''

इस समय हिंदी का शिक्षण लगभग एक हजार विश्वविद्यालयों में हो रहा है। प्रवासी भारतीय विदेशों के मन्दिरों में हिंदी शिक्षण के रूप में हजारों बच्चों के लिये स्वयं सक्रिय हैं। हिंदी सिखाकर आत्मीय तथा एकता के भावों का प्रचार-प्रसार करने में संलग्न हैं। जो हमारी एकता से ही संबद्ध है। हिमालय से निकली हुई हिंदी रूपी गंगा ने समस्त भारतीय भाषाओं के साथ अंग्रेजी, उर्दू, फारसी, अरबी, पुर्तगाली आदि भाषाओं की जल धाराओं को समाहित कर विशाल सागर के रूप में प्रतिष्ठापित होने का गौरव प्राप्त करने में हिंदी सक्षम है। तथा अन्य भाषायें बहिनों के रूप में सहयोग कर जनजीवन में समरसता और संवाद से भारतवासियों को एकता के सूत्र में बाँधने में सहयोगी हैं।

आज यदि हिंदी भाषा के प्रसार में आने वाले बाधक तत्त्वों का उन्मूलन हो सके तो राष्ट्र की एकता और विश्व बंधुत्व की भावना द्रुत गति से गतिमान हो सकेगी।

राष्ट्र भाषा के प्रसार में निम्नांकित तथ्य बाधक है। -

- नौकरशाहों द्वारा अपने कामकाज मे अंग्रजी का उपयोग बाधक है।
- राजनेताओं द्वारा वोटों की राजनीति का होना।
- कंप्यूटर कम्पनियों द्वारा अंग्रेजी भाषा को महत्त्व देना।
- अंग्रेजी माध्यम की शिक्षण संस्थाओं का बाहुल्य।
- क्षेत्रीय भाषावाद को बढ़ावा।
- विज्ञापनों में अंग्रेजी भाषा का उपयोग।
- कार्यालयों व मंत्रालयों में अंग्रेजी भाषा का व्यवहार।
- वैज्ञानिक व तकनीकी शब्दावली का अंग्रेजी में होना।
- पाठ्यक्रमों में अंग्रेजी भाषा की अनिवार्यता।

कविता

मौसम कहीं गुम हो गए हैं

● विमल कुमार शर्मा



मेरे देश में,
मौसम कहाँ गुम हो गए हैं,
क्या बनावटी संसार में खो गए हैं ?
आसमानी इमारतों में,
आंगन बालकॉनी हो गए हैं,
जहाँ अब हम बस,
तौलिया सुखाते हैं,
टीवी मौसम की जानकारी देता है,
पर साथ ही आता है एसी का विज्ञापन,
जो इसे झुठलाता है गर्मियों में,
थर्मोकोर्ड का विज्ञापन,
सर्दियों में,
समझ नहीं आता किसे सच मानूं।
पतझड़ के पत्ते,
अब आंगन में जूतों के नीचे,
आकर चर चर कि आवाज नहीं करते,
अब वो सड़क के किनारे,
मुनिसिपलिटी खुली नालियां ब्लाक करते हैं,
डर लगता है, बरसात से,
बड़े मैदानी शहरों में,
छोटे पहाड़ी कस्बों में,
टीवी के सामने बैठ कर,
बारिश के तांडव की,
खबरों से,
बर्बाद लोगों की आँखों में,
आंसू देखकर।
पहले तो,
मौसम सुहाने थे,
खेलने, खाने पीने और मौज के,
नये नये बहाने थे,
गर्मियों की शाम देर तक खेलते थे,
खान खा कर टहलते थे,
रात को छत पर लेटते थे,
बारिश में भीग कर,
स्कूल से घर आते थे,
मानो कपड़े पहने पहने नहाते थे,
माँ की चुन्नी से सर सुखाते थे,
सर्दियों जब आती थी,
दिन में खेलते,
शाम को गन्ने के खेत से,
गन्ने तोड़ लाते,
स्कूल से आकर सबसे पहले उन्हें ढूंढते,
फिर खाते और दोस्तों को भी खिलते थे,
मूंगफली तब चाकलेट से ज्यादा,
सुहाती थी,
क्योंकि तब तो टॉफी भी कभी कभी,
मिल पाती थी,
अब वो सब कहीं नहीं है,
जबकि हम सबके सब,
वही हैं,
पर मेरे देश में क्या हो गया है,
ईमानदारी की तरह,
मौसमों का सतरंगी एहसास भी,
कहीं खो गया है।

प्रधान प्रणाली विश्लेषक
हि. प्र. राज्य एकक, छठी मंजिल,
आर्म्सडेल भवन, हि. प्र. सचिवालय,
शिमला-171 002
मो. 0 98162 50166

- नए लेखकों द्वारा क्लिष्ठ हिंदी का प्रयोग।
- दूरदर्शन पर अंग्रेजी भाषा का विशेष प्रसारण।
- दूरसंचार व्यवस्थाओं में अंग्रेजी की महत्ता।
- बाजारीकरण में अंग्रेजी का वर्चस्व।
- हिंदी लेखन में कई लोग हीनता और संकोच का अनुभव करते हैं।
- साधन सुविधाओं की दृष्टि से अपेक्षाकृत हिंदी के लिये साधनों का अभाव है।
- हिंदी के लिये उपयुक्त वातावरण नहीं बनाया गया।
- हिंदी भाषा व लिपि की वैज्ञानिकता का प्रचार-प्रसार नहीं है।

''हिंदी जिंदगी का हिस्सा है। हिंदी किसी एक वर्ग या वर्ण या जाति या धर्म या मजहब या मार्ग या देश या संस्कृति की नहीं है। हिंदी भारत की है। हम हिंदी है, वतन है हिंदुस्तान हमारा। हिंदी हमारी वाणी मंदिर की अधिष्ठात्री है। राष्ट्र की आत्मा है हिंदी। भारत की भारती है हिंदी। हिंदी हिंद की बिंदी है। देश का दिल है। देश की दवा है। देश की दुआ है और देश की दौलत हैं हिंदी। इतिहास, साहित्य, शिक्षा और संस्कृति के संस्कार की संजीवनी है हिंदी। हिंदी साहित्य का चन्दन है। विज्ञान का वन्दन है। राजनीति का अर्चन है। धर्म, अध्यात्त और दर्शन का अभिनंदन है। कश्मीर से कन्याकुमारी और कच्छ से कलकत्ता तक के लोगों के हृदयों का स्पंदन है।'' -विद्या वाचस्पति डॉ विद्या विनोद गुप्त।

पूर्व जिला शिक्षा अधिकारी
पोस्ट-आगूचा, जिला भीलवाड़ा, राजस्थान-311022
मो. 0 92145 81610

आलेख

'तमस' में सांप्रदायिक शक्तियों का विश्लेषण

● डॉ. सुनीता

भारत में सांप्रदायिकता का जो रूप दिखाई दे रहा है, प्रत्यक्ष रूप से उस के कारणों में धर्म और राजनीति का ही प्रभाव दिखाई देता है जिससे यही दो तत्त्व सामान्यतः सामने आते हैं। मगर वास्तविकता यह है कि सांप्रदायिकता को भड़काने वाली और भी प्रेरक शक्तियाँ हमारे समाज में मौजूद हैं, जिनका निर्धारण सांप्रदायिकता के तत्त्वों के अंतर्गत ही किया जा सकता है।

धर्म भारतीय समाज में एक बहुत ही शक्तिशाली ताकत है। भारत की संस्कृति, बड़ी मजबूती से अपने धार्मिक इतिहास तथा धार्मिक परंपराओं के साथ अंतर्ग्रथित है। मूलतः राजनीति के लिए धर्म का प्रयोग ही सांप्रदायिकता का उद्भव काल माना जाता है। अंग्रेजों ने भारतीय समाज में व्याप्त धार्मिक अंतविरोधों का अपनी सत्ता को बनाए रखने हेतु राजनीतिक इस्तेमाल करने का प्रयास किया। धर्म का मूल स्वरूप किसी भी प्रकार से सांप्रदायिक नहीं कहा जा सकता, परंतु धार्मिक कट्टरता व धर्मांधता ही सांप्रदायिकता का स्वरूप धारण करती है। अतः सांप्रदायिकता के तत्त्वों की पहचान करते समय यहां धर्म प्रमुख तत्त्व के रूप में उभर कर सामने आता है।

उपन्यासकार भीष्म साहनी भारत विभाजन के समय हुए सांप्रदायिक दंगों के भुक्तभोगी रहे हैं। तथा सांप्रदायिकता में निहित तत्त्वों में वे धर्म को प्रमुख तत्त्व मानते हैं। उपन्यास का आरंभ ही धार्मिक उन्माद भड़काकर सांप्रदायिक दंगे फैलाने वाले कारणों से होता है।

उपन्यासकार भीष्म साहनी भारत विभाजन के समय हुए सांप्रदायिक दंगों के भुक्तभोगी रहे हैं। तथा सांप्रदायिकता में निहित तत्त्वों में वे धर्म को प्रमुख तत्त्व मानते हैं। उपन्यास का आरंभ ही धार्मिक उन्माद भड़काकर सांप्रदायिक दंगे फैलाने वाले कारणों से होता है। यहां नत्थू नामक एक बदरंग व कंटीले सुअर को मारने की लंबी उबाऊ और थका देने वाली प्रक्रिया में संलग्न दिखाया गया है। क्योंकि मुराद अली नामक कमेटी के कारिंदे ने पांच रुपये का एक नोट उस की जेब में ठूंसते हुए यह काम सौंपा था। " हमारे सप्लोटरी साहब को एक मरा हुआ सुअर चाहिए डॉक्टरी काम के लिए।"[1] बाद में वही मरा हुआ सुअर मस्जिद की सीढ़ी पर पाया जाता है। मस्जिद की सीढ़ी पर मरा हुआ सुअर के शव को देखकर मुसलमान भड़क उठते हैं। बख्शी के नेतृत्व में प्रभात फेरी के लिए निकली कांग्रेसी टोली जब तक सुअर का शव वहां से हटाकर मुसलमानों की उत्तेजना शांत करने का प्रयास करते हैं, तब तक देर हो चुकी होती है। तभी वह देखते हैं, "कुएं की ओर से किसी के भागते कदमों की आवाज आई। एक गाय भागी आ रही है। उसके पीछे-पीछे भागता हुआ उसे हांके लिए जा रहा था।"[2]

बाद में गाय की हत्या की सूचना भी मिलती है। एक कहवाखाने में बैठे कुछ व्यक्ति बातें कर रहे हैं, "सुना है कोई गाय भी मारी गई है। गंदे नाले के पास कोई मार कर फेंक गया है।"[3]

क्योंकि मुस्लिम धर्म में सुअर को पवित्र पशु माना गया है। अतः मस्जिद की सीढ़ी पर सुअर का शव देखकर मुसलमान की तौहीन है। तभी तो कहवाखाने के अंदर बैठा दाढ़ी वाला अधेड़ उम्र का आदमी बोलता है, "वह आदमी पकड़ा गया या नहीं जिसने मस्जिद की तौहीन की थी खंजीर का बच्चा। उसके हाथ पांव में कीड़े पड़ें।"[4]

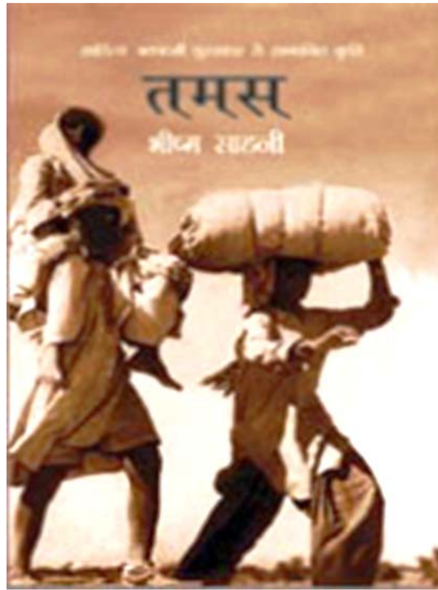
इस तरह सुअर के शव के सहारे जहां मुसलमानों में धार्मिक उन्माद पैदा होता, इस तरह गौ हत्या के कारण धार्मिक उन्माद पैदा हुआ क्योंकि हिंदू गाय को माता के समान पूजनीय मानते हैं दोनों समुदायों में भड़का यह धार्मिक उन्माद भी सांप्रदायिक दंगे के रूप में उभरता है।

धर्म के माध्यम से ही बाल-मन में सांप्रदायिकता के विष का बीज रोपण, धर्मांध समाज द्वारा कैसे किया जाता है इससे स्पष्ट होता है जब अखाड़ा संचालक मास्टर देवव्रत छोटी उम्र में रणवीर को, हिन्दुओं की वीरता के किस्से कहानियां सुनाकर उसके बोध मन में तुर्कों और मुसलमानों के प्रति घृणा को स्थायी रूप देता है। इससे उसके चेतन मन में वीरता के काल्पनिक दृश्य घूमने लगते है, "उसे कभी चेतन घोड़ा दौड़ता नजर आता है, कभी किसी चट्टान पर घोड़े की पीठ पर बैठे शिवाजी नजर आते है, दूर तुर्कों के लस्करों की ओर देखते हुए जब शिवाजी मलेच्छ सरदार से

बगलगीर हुए थे।"[5]

इस प्रकार एक भोले बालक को देवव्रत की दीक्षा पद्धति हत्यारा बना देती है और देखते ही देखते देवव्रत के बाद रणवीर के रूप में अपने जहरीले दांत के लिए एक और पीढ़ी तैयार हो जाती है। सांप्रदायिकता के इस सामूहिक उन्माद का रूप हिंदू-मुसलमान और सिक्ख सभी कौमों में एक जैसा पाया जाता है इसे स्पष्ट करते हुए उपन्यासकार बारी-बारी से सभी की स्थिति स्पष्ट करता है।

हिंदू तत्त्ववादियों के बाद उपन्यासकार ने मुस्लिम तत्त्ववादियों को भी धर्म का प्रयोग करते हुए दिखाया है। मुस्लिम तत्त्ववादियों की नजर में "हिंदू मुसलमान की अदालत पुराने जमाने से चली आ रही है। काफिर काफिर है और जब तक दीन पर ईमान नहीं लायेगा वह दुश्मन है। काफिर को मारना सवाब है।"[6] यही नहीं, मुस्लिम धर्मांधों द्वारा दंगों के दौरान एक सिक्ख युवक इकबाल को पकड़कर उससे जबरदस्ती धर्म परिवर्तन भी करवाया जाता है। धार्मिक मतांधता मनुष्यता के प्रति कितनी बर्बर हो जाती है, इसे उपन्यासकार ने मुजाहिदों की आपसी बातचीत से स्पष्ट किया है। जहां वे अपनी बहादुरी के कारनामों को सुनाते हुए इस बात की सूचना देते हैं कि वे हिंदुओं की मृत लड़की के शव से भी बलात्कार करते रहे। सिक्खों की बहादुरी की परम्परा में उन की स्त्रियों का भी महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है। स्त्रियों का यह धार्मिक उन्माद अपनी चरमसीमा पर पहुंचकर उस समय मार्मिक रूप लेता है, जब गुरूद्वारे पर मुसलमान हमला बोल रहे थे तुर्क आ गए चिल्लाती हुई वे घोषणा करती हैं कि मैं भी वहाँ जाऊँगी जहाँ मेरे सिंह वीर गए हैं। औरतें अपने नन्हे बच्चों के साथ कुएं में कूदकर जान न्यौछावर कर देती हैं।



हिंदू तत्त्ववादी वानप्रस्थी जी की भूमिका में यहां गाँव के मुखिया सरदार तेजा सिंह नजर आते हैं। जिस तरह धर्म खतरे में है, का नारा देकर वानप्रस्थी जी हिन्दुओं में मुसलमानों के विरुद्ध लड़ने के लिए जोश पैदा करते हैं, ठीक उसी तरह पंथ की दुहाई देकर सरदार तेजा सिंह उन में धार्मिक उन्माद पैदा करते हैं। अपनी कांपती भावोद्वेलित आवाज में वे कहते हैं, "आज फिर खालसा पंथ को गुरु सिंघो के खून भी जरूरत है। हमारे इम्तहान का वक्त आ गया है। हमारी आजमाईश का वक्त आ गया है। महाराज का इस वक्त एक ही हुक्म है - कुरबानी! कुरबानी! कुरबानी! अरदास पढ़ो गुरू के सिंघो अरदास पढ़ो।"[7]

इस तरह उपन्यासकार सांप्रदायिक दंगों के लिए धार्मिक उन्माद को ही मुख्य कारण मानते हुए धर्म को सांप्रदायिकता के प्रमुख तत्त्वों के रूप में निर्धारित करने में सफल रहा है। संपूर्ण उपन्यास में जलती बस्तियों और जघन्य हत्याओं के बीच, हर हर महादेव, जो बोले सो निहाल, सतश्री अकाल, 'राज करेगा खालसा', 'याकि रहे न कोए' अल्लाह हो अकबर नारा-ए-तकबीर जैसे गूंजते नारे सांप्रदायिकता के लिए धार्मिक तत्त्व की पहचान को मुखा करते चले जाते हैं। आज भी राम जन्मभूमि बाबरी मस्जिद जैसे विवाद हों या पंजाब में सिक्ख धर्म को लेकर खालिस्तान की मांग चाहे कश्मीर में हिंदू और मुस्लमान की स्थिति को लेकर झगड़ा इन सभी कारणों से सम्पूर्ण भारत में होने वाले साम्प्रदायिक दंगों में धर्म प्रमुख भूमिका निभा रहा है, जिसका वास्तविक चित्रण भीष्म साहनी ने अपने उपन्यास 'तमस' में किया।

गांव व डाकघर ढैर, तहसील आनी, जिला कुल्लू, हिमाचल प्रदेश-172 025

संदर्भ

1. भीष्म साहनी, तमस, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली 1973, पृ. 10
2. वही पृ. 64
3. वही पृ. 110
4. वही पृ. 110
5. वही पृ. 72
6. वही पृ. 199
7. वही पृ. 195

शोध लेख



हिमाचल प्रदेश की 'काष्ठकला' का ऐतिहासिक परिदृश्य

• मंजुला कुमारी

हिमाचल प्रदेश का इतिहास अत्यंत प्राचीन है। आर्यों के भारत आगमन के पश्चात ही वेदों की रचना हुई और इन्हीं वेदों में हिमाचल का भी वर्णन किया गया है। 'हिमाचल' का इतिहास वेदों से पूर्व अज्ञातकाल में मानव इतिहास के साथ आरंभ होता है। इसी तरह 'हिमाचल प्रदेश' में 'काष्ठकला' का इतिहास भी अत्यंत पुरातन रहा है। इसके अवशेष हमें अनेक पौराणिक आख्यानों में भी देखने को मिलते हैं। 'हिमाचल प्रदेश' में वनों की बहुलता होने के कारण काष्ठ निर्मित भवनों, महलों, मंदिरों का निर्माण आरंभ से ही रहा है। और शनैः शनैः काष्ठ पर उत्कीर्ण कला का विकास होता रहा। हिमाचल प्रदेश में सातवीं शताब्दी में निर्मित 'काष्ठ' की मूर्तियां, छतें व दरवाजों के अवशेष आज भी देखे जा सकते हैं। शीतप्रभावित क्षेत्र होने के कारण भी यहां काष्ठ निर्मित घरों, भवनों की अधिक्ता रही है। और इन भवनों को और अधिक सुन्दर बनाने के लिए इन पर 'काष्ठ उत्कीर्ण' का समय-समय पर कार्य होता रहा है।

हिमाचल प्रदेश के लाहौल-स्पीति के उदयपुर में बने 'मृकुला देवी' मंदिर का इतिहास सोलहवीं सदी का है। देवी का काष्ठ निर्मित यह मंदिर बाहर से बिल्कुल साधारण सा दिखता है। किन्तु इसके भीतर हुई काष्ठकला बहुत पुरानी व अद्‌भुत है। चम्बा गजेटियर में इस काष्ठकला के दसवीं शताब्दी के होने की लिखी गई है। पुरातत्ववेताओं ने इस काष्ठकला का काल निर्धारण अलग-अलग किया है। जनश्रुतियों के अनुसार लोगों की यह आस्था है कि मनाली का हिडिम्बा मंदिर कुल्लू के राजा बहादुरसिंह के समय सन् 1559 में बना था। इस मंदिर के अंदर नई-पुरानी काष्ठ कलाकृतियां आसानी से पहचानी जा सकती हैं। उस मंदिर के मण्डप में लगे चार 'काष्ठ स्तम्भ' अत्यंत प्राचीन हैं। दोनों ओर खिड़कियों के पैनल और दो आदमकद द्वारपाल अत्यंत नवीन हैं।

हिमाचल प्रदेश में 'काष्ठकला' की परम्परा अत्यंत प्राचीन रही है। यहां 'काष्ठकला' की परम्परा के प्रमाण 7वीं शताब्दी से देखने को मिलते हैं। परंतु मध्यकाल में यहां काष्ठकला अपनी चरमसीमा पर पहुंची और यहां पर अनेक मंदिरों का निर्माण किया गया। चम्बा, भरमौर, (ब्रहमपुर) और किन्नौर जनपद के काष्ठ मंदिर सम्पूर्ण भारत में अत्यंत प्राचीन माने जाते हैं। हिमाचल प्रदेश में 'काष्ठकला' की परम्परा राजा शैल वर्मन (साहिन वर्मन) के काल से आरंभ मानी जाती है। इससे पूर्व भी काष्ठ पर ही निर्माण कार्य के प्रमाण देखने को मिलते है। और इसका कारण हिमाचल में वनों का आधिक्य और लकड़ी की सुगम उपलब्धता है। हिमाचल प्रदेश में काष्ठकला परम्परा द्वारा निर्मित मंदिरों में लक्षणा

देवी मंदिर चंबा, मृकुला देवी मंदिर लाहौल, निरमण्ड कुल्लू, दखड़ी देवी का मंदिर, मंडी में मंगरू महादेव का मंदिर, शिमला जनपद में भीमाकाली मंदिर सराहन, किन्नौर जनपद में कामरूनाग मंदिर (किला) हिडिंबा देवी मंदिर (कुल्लू) बीजट महाराज मंदिर (सिरमौर) आदि प्रमुख उदाहरण है।

हिमाचल प्रदेश में ऐतिहासिक किलों में किन्नौर कामरू (किला) मुरंग किला, लबरंग किला, लाहौल गोंधला किला, कुल्लू नग्गर किला, चौहणी कोठी भवन कुल्लू और पांगणा किला मण्डी आदि प्रसिद्ध है। 'लाहौल जनपद' का गोंधला किला वहां के ठाकुरों का आवास रहा है। यह किला आकार में 'कामरू' से भी बड़ा है। यह किला एक टॉवर की भांति है। पूरे लाहौल जनपद में यह किला काष्ठ निर्मित सबसे बड़ा है। लकड़ी और पत्थर से निर्मित यह किला एक मजबूत ढांचा है। इस किले में बड़े-बड़े कमरे है, बरामदे हैं जिसमें कम से कम सौ आदमी रह सकते है। यह काष्ठ किला सात मंजिला है। इसमें एक मंजिल से दूसरी मंजिल में जाने के लिए बड़े लक्कड़ को काटकर सीढ़ियां बनाई गई हैं। किले के ऊपर काष्ठ की छत लगाई गई है। आधुनिक युग में यह किला भाषा एवं संस्कृति विभाग की धरोहर हैं।

ऐतिहासिक दृष्टि से हिमाचल के किन्नौर जनपद का 'कामरू किला' अत्यंत प्राचीन है। यह किला 12वीं सदी में निर्मित माना जाता है। 'काष्ठ और पाषाण निर्मित यह भवन 'कामरू दुर्ग' के नाम से प्रख्यात है। स्थानीय भाषा में इसे मोने प्रा तथा माने गोरेड् के नाम से पुकारते हैं। यह प्राचीन दुर्ग 'सांगला घाटी' ऊपर एक शिखर पर स्थित है। यह किला पांच मंजिला है। इसमें अलग-अलग स्थान निर्धारित है। सीढ़ी के ऊपर पहली मंजिल में रसोई गोदाम आदि है। दूसरी मंजिल में राजगद्दी तथा पूजागृह है। तीसरी मंजिल में माता भीमाकाली का स्थान है। चौथी मंजिल में दरबार, हॉल, रनिवास, आदि है। और इसी में राजा, ठाकुर आदि रहते थे। अंतिम और पांचवी मंजिल में देवता (कामरू) का निवास है। काष्ठ निर्मित इस दुर्ग में पहली मंजिल में पांच कक्ष, दूसरी मंजिल में तीन कक्ष, तीसरी में पांच कक्ष, और चौथी मंजिल में पांच कक्ष तथा पांचवी मंजिल में मात्र एक ही कक्ष है। यह दुर्ग 'काष्ठकला' और वास्तुकला की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है।





हिमाचल प्रदेश के कुल्लू जनपद में निर्मित 'नग्गर' नामक किला भी अत्यंत प्राचीन है जोकि काष्ठ निर्मित है। यह किला कुल्लू के राजाओं की प्राचीन राजधानी रही है। 'कुल्लू का काष्ठ किला 'नग्गर' ऐसी जगह पर स्थित है जहां से दूर-दूर तक नीचे दिखाई देता है। यह किला सिद्ध सिंह द्वारा (1500-46) ई. में बनाया गया था। 'नग्गर' किले के एक अन्दर छोटा सा मंदिर है। जिसे 'जगती पौट' कहा जाता है। सम्पूर्ण दुर्ग लकड़ी और पत्थर से बना हुआ है। यह किला एक टॉवर की भांति नहीं बल्कि भवन की तरह बना हुआ है।

'किन्नौर जनपद' का मूरंग किला भी काष्ठकला का एक अति उत्तम उदाहरण है। यह दुर्ग रिकांगपिओ से पूह मार्ग के बीच सतलुज के पार है। यह काष्ठ एवं गारा मिट्टी पत्थर द्वारा निर्मित है। इसमें अब देवता का निवास होता है। यह देवता अटठारह (मास्क) है अटठारह प्रबंधक है। अटठारह बाद्य है और अटठारह ही पर्व है। यह दुर्ग अज्ञातवास के समय भीम द्वारा एक ही रात में बनाया गया था। इस दुर्ग में देवदार की लकड़ी का प्रयोग किया गया है। इसके द्वारों पर काष्ठकला उकेरी गई है जोकि काष्ठकला का अदभुत उदाहरण है। 'हिमाचल प्रदेश' के मण्डी जनपद में काष्ठकला' द्वारा निर्मित 'पांगणा' किला 'काष्ठकला' का विशेष नमूना है। यह किला भी पहाड़ी किलेबंदी का अनूठा उदाहरण है। उस काष्ठ- निर्मित ऐतिहासिक दुर्ग में सीढ़ियां बाहर से न होकर भीतर से हैं। यह सीढ़ियां इतनी छोटी हैं कि बैठ बैठकर ऊपर चढ़ना पड़ता है। इस किले के बाहर माहूंनाग का मंदिर है जिसके नीचे पुराने समय में जेल की कोठरी हुआ करती थी। इस काष्ठ दुर्ग के प्रवेश द्वार के साथ देई साहिबा की समाधि है, इस समय किले की ऊपरी मंजिल में महामाया का मंदिर है। जोकि 'काष्ठकला' का सुंदर रूप है।

हिमाचल प्रदेश में काष्ठकला का इतिहास व विकास जानने के लिए भवनों को अछूता नहीं रखा जा सकता। यहां पर आज भी ऐसे महल व भवन हैं जो आज भी काष्ठकला को संजोए हुए हैं। कुल्लू जनपद का चौहणी कोठी भवन एक महत्त्वपूर्ण कोट है। यह भवन नौं मंजिला था। 1905 में भूकंप आने से पांच मंजिलें ढह गयी थीं। अब माच चार मंजिलें शेष बची हैं। यह भवन पुरातात्त्विक दृष्टि से भी अपना विशेष महत्व रखता है। यह भवन





लकड़ी और पत्थर की संयुक्त चिनाई से बनवाया गया है। इसका प्रवेश द्वार काष्ठनिर्मित है। प्रत्येक मंजिल में बाहर से तंग अंदर से खुली तथा तिरछी 'काष्ठ' खिड़कियां बनी हुई हैं।

हिमाचल प्रदेश के शिमला जनपद में 'वाईसरीगललॉज' स्थित है। इसका निर्माण 1884 ई. में प्रारंभ हुआ और चार वर्ष बाद 1888 ई. में यह बनकर तैयार हो गया था। आज यह भवन भारतीय उच्च अध्ययन संस्थान के नाम से जाना जाता है। यह इमारत तीन मंजिला काष्ठ निर्मित है जिसमें वॉयसराय का सचिवालय, सभाकक्ष, अतिथिकक्ष आदि प्रमुख हैं। इस भवन में अधिकतर देवदार निर्मित काष्ठ का प्रयोग हुआ है। इस भवन के दरवाजों-खिड़कियों, छतों में भी काष्ठकला के अद्वितीय उदाहरण देखे जा सकते हैं।



'सिरमौर जनपद' में 'बीजट देवता' का मंदिर स्थित है। बीजट महाराज का मंदिर दुर्गनुमा स्थापत्य कला का उदाहरण है। इस मंदिर प्रांगण में प्रवेश करते ही मंदिर की दो अट्टालिकाएं हैं। यह मंदिर पहाड़ी शैली में निर्मित है। इसमें देवदार काष्ठ पर महीन नक्काशी की गई है। जिसमें देवी-देवताओं, वीर-योद्धाओं बेल-बूटे आदि के चित्र शिल्पी के जादुई हुनर को प्रस्तुत करते हैं। इस मंदिर में लकड़ी की झालर पर शृंखलाबद्ध तरीके से पिरोई गई घण्टीनुमा अनगिनत खरूड़ियां है जोकि काष्ठ का उत्तम उदाहरण है।

हिमाचल प्रदेश में 'काष्ठकला' का ऐतिहासिक परिदृश्य 'हिडिंबा देवी मंदिर' मनाली के बिना अधूरा है। हिडिंबा को ढूंगरी देवी भी कहा जाता है। हिडिंबा देवी मंदिर मनाली पैगोड़ा' शैली और उत्कृष्ट काष्ठकला का एक आकर्षक उदाहरण है। मंदिर के प्रवेश द्वार तक पहुंचने के लिए सीढ़ियां बनी हुई हैं। सीढ़ियों के ऊपर समतल जगह में मंदिर निर्मित है। इस मंदिर में पैगोड़ा की तीनों ढलवां छतों पर लकड़ी लगवाई गई। 'हिडिंबा देवी की विधिवत पूजा की जाती है। इस देवी का काष्ठनिर्मित रथ भी है जो उत्सवों में सजाया जाता है। इस 'काष्ठ' से बने मंदिर का निर्माण राजा बहादुर सिंह द्वारा सन् 1553 में करवाया गया था। इस मंदिर में देवदारों के शहतीरों के भीतर पत्थर लगवाए गए है। दीवारों में मिट्टी का पलस्तर और गोबर की पुताई हुई है। निचली मंजिल में बाहर की तरफ बरामदा है। मुख्य द्वार की द्वारसाखों पर ऊपर तथा नीचे दोनों ओर सुंदर नक्काशी की गई है। द्वार के नीचले भग में एक ओर महिषासुरमर्दिनी और दूसरी ओर दुर्गा की काष्ठ पर मूर्तियां उकेरी गई है, गौरी शंकर, लक्ष्मीनारायण के चित्र भी काष्ठ पर उत्कीर्ण हैं।

अंत में हम कह सकते है कि हिमाचल प्रदेश में काष्ठकला' का ऐतिहासिक परिदृश्य यहां के मंदिरों, किलों, भवनों में द्रष्टव्य है जोकि आज भी अपने जीवंत उदाहरण के रूप में उपस्थित हैं।

पी-एच.डी. दृश्यकला एवं चित्रकला विभाग,
हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय,
शिमला-171005, मो. 0 89880 60610

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1. गोपाल दिलैक, विशाल हिमाचल, पृ. 73
2. सुदर्शन वशिष्ठ, पहाड़ी चित्रकला एवं वास्तुकला, पृ. 145
3. रूप शर्मा, अंधकार से प्रकाश की ओर, पृ. 766
4. रामलोक, शोधप्रबंध, चंबा पांगी के मंदिरों की काष्ठकला, पृ. 95
5. गौतम शर्मा व्यथित, हिमाचल प्रदेश लोकसंस्कृति और साहित्य, पृ. 140
6. नागेंद्र शर्मा, बुशहर के प्राचीन एवं ऐतिहासिक मंदिर, पृ. 36, 37
7. वैद्य किशोरी लाल, हिमाचल के मंदिर, पृ. 134

कहानी

एक मुक़दमा और एक तलाक

● मूल कथा : आइजैक बैशेविस सिंगर अनुवाद : सुशांत सुप्रिय

प्रिय पाठक, मैं आप के सामने यह स्वीकार करता हूँ कि कुत्तों से मुझे कोई लगाव नहीं है। सच्चाई यह है कि मैं उन्हें बिल्कुल पसंद नहीं करता। ईमानदारी से कहूँ तो मुझे उनसे नफरत है। जहाँ तक मेरा सम्बन्ध है, कुत्ता एक खाज-खुजली वाला कटहा जीव है। वह एक चापलूस जानवर है। वह भौंक-भौंक कर आसमान सिर पर उठा लेने वाला, बेवजह काटने वाला और तलवे चाटने वाला एक निकृष्ट जीव है। मेरे दोनों दादा भी इसी राय के थे।

और यदि मेरे मन में कुत्तों के प्रति कोई अच्छी भावना रही भी होती, तो उस मुक़दमे के बाद वह गायब हो जाती।

पिता की अदालत का दरवाजा खुला और एक लम्बा, हृष्ट-पुष्ट व्यक्ति भीतर आया। उसने एक सलेटी जैकेट, सलेटी पतलून और सलेटी टोपी पहन रखी थी। उसके कपड़ों पर आटा लगा हुआ था। उसका नाम जैनवेल था और वह हमारी गली में नानबाई था। अपनी बेकरी के आँगन में वह अक्सर एक लम्बा कच्छा, मुड़ी-तुड़ी चप्पलें और कागज की एक शंकाकार टोपी पहने चलते हुए दिख जाता था।

यूँ तो नानबाई ठीक-ठाक रकम कमा लेते हैं, पर जैनवेल अपने पिता की बेकरी में काम करता था और उसे दूसरों से अधिक वेतन मिलता था। उसकी त्वचा पीली थी और आँखें नीली थीं। उसके कंधे और उसकी गर्दन किसी मुक्केबाज की तरह गठे हुए थे। वह आटे को बहुत बड़े आकार के टुकड़ों में गूँधता था। यह एक ऐसा काम था जिसे करने वाला व्यक्ति यदि सुदृढ़ न हो, तो उसकी हालत खराब हो सकती थी।

वह पिता की मेज पर पहुँचा और मेज पर मुक्का मारते हुए बोला, 'मैं एक मुकदमा दायर करना चाहता हूँ।'

'किसके विरुद्ध?'

'अपनी पत्नी के विरुद्ध।'

'बैठो। बात क्या है ?'

'धर्म-गुरु, अब या तो कुत्ता रहेगा या मैं रहूँगा !' जैनवेल ने चीख कर कहा। 'इस घर में हम दोनों के रहने का सवाल ही नहीं उठता।'

'यह कुत्ता कौन है ?'

'यह कोई आदमी नहीं बल्कि वास्तव में एक कुत्ता है,' जैनवेल चिल्लाया।' वह घर में एक कुत्ता लाना चाहती थी -- उसका बेड़ा गर्क हो ! जब से वह उस कुत्ते को ले आई है, वह भूल ही गई है कि उसका कोई पति भी है। मेरा काम बहुत मुश्किल है और मुझे हाड़-तोड़ मेहनत करनी पड़ती है। मैं एक नानबाई हूँ, धर्म-गुरु। लोगों के खाने के लिए मैं नान, डबल-रोटी आदि बनाता हूँ। पूरी रात मैं बिना रुके बेकरी में काम करता हूँ, पर सुबह जब मैं घर पहुँचता हूँ तो पत्नी द्वारा स्वागत किए जाने की बजाए एक कुत्ता मेरी ओर दौड़ता हुआ आता है। वह मुझ पर भौंकता है और मुझ पर कूद जाता है। वे कहते हैं कि यह उसका प्यार जताने का तरीका है,

लेकिन मुझे उसका प्यार नहीं चाहिए। यदि वह एक छोटा पिल्ला होता तो मुझे इतना बुरा नहीं लगता। लेकिन यह कुत्ता किसी भालू जैसा है। एक जंगली जानवर। मैं अपने घर में एक जंगली जानवर नहीं चाहता हूँ। वह किसी शेर की तरह अपना बड़ा-सा मुँह खोलता है। वह किसी सख्त हड्डी के भी टुकड़े-टुकड़े कर सकता है। जब वह भौंकता है तो मुझे अपने कान बंद करने पड़ते हैं। वह बहुत ज्यादा शोर मचाता है और उछलता-कूदता है। मैं खुद को किस्मतवाला समझता हूँ कि वह मेरी नाक काट कर नहीं ले जाता। मुझे इस कुत्ते की क्या जरूरत है ? मेरे पिता के पास भी कोई कुत्ता नहीं था।

लोग कहते हैं कि यदि आप किसी गाँव में रहते हों तो आपके लिए कुत्ता उपयोगी होता है -- लेकिन यहाँ वारसॉ में मुझे कुत्ते की क्या जरूरत है ? यहाँ कोई मेरे यहाँ चोरी करने नहीं आएगा -- मेरे दरवाजे पर एक मजबूत ताला लगाया जाता



है। गरीब लोग मेरे घर आते थे, और मैं उन्हें जो भी संभव हो, देता था -- नान या चीनी आदि। लेकिन इस कुत्ते की वजह से अब कोई गरीब मेरे घर आने की हिम्मत नहीं करता। दीवार पर टँगे एक डिब्बे में मैं धर्मार्थ कार्यों के लिए कुछ रुपए -पैसे डाल देता था। यहूदी धर्म-स्थल पर काम करने वाला एक आदमी आ कर वह रुपए-पैसे ले जाता था। पर इस कुत्ते की वजह से उसने भी मेरे घर आना बंद कर दिया। यदि हमने इस कुत्ते को मेरे घर से नहीं भगाया तो वह किसी राहगीर की कोट का किनारा फाड़ देगा। धार्मिक-स्थलों पर काम करने वाले लोग कुत्तों से बहुत डरते हैं।'

आपकी पत्नी को कुत्ता क्यों चाहिए ?' पिता ने पूछा।

धर्म-गुरु, मुझे भी उतना ही पता है, जितना आपको पता है। मेरे परिवार में किसी के पास कुत्ता नहीं है। वह शिकायत करने लगी कि वह बहुत अकेलापन महसूस करती है। देखिये, हमारे बच्चे नहीं हैं, इसलिए वह कोई जीवित प्राणी घर में रखना चाहती थी। तब मैंने उसे कहा कि तुम एक बिल्ली या तोता पाल लो। कोई चिड़िया होगी तो कम-से-कम गाना गाएगी। तोता होगा तो कुछ बोलेगा।

लेकिन एक कुत्ता क्या करेगा ? हे धर्म-गुरु, मुझे यह कहते हुए शर्म आ रही है कि वह इस कुत्ते को चूमती है। वह उसे हमेशा चूमती रहती है। ऐसा नहीं है कि मुझे ईर्ष्या होती है। लेकिन जब मेरी पत्नी कुत्ते को चूमती है तो मैं भीतर तक आहत हो जाता हूँ। धर्म-गुरु, मैं उसके लिए घंटों तक कठिन परिश्रम करता हूँ -- लेकिन जब चुम्बन की बारी आती है तो वह एक कुत्ते को मिलता है। वह हमेशा उसे चूम रही होती है, उसके साथ लाड़ जता रही होती है, उसकी सेहत के प्रति चिंतित होती है। वह हमेशा यही कहती रहती है -- 'अरे, यह कुछ खाता ही नहीं है। यह ठीक से सोता ही नहीं है।'

धर्म-गुरु, मैंने अपनी पत्नी से कहा कि मैं सरिया लेकर कुत्ते की खोपड़ी फाड़ दूँगा। तब वह चिल्लाने लगी कि वह घर छोड़ कर चली जाएगी। धर्म-गुरु, आप सच्चा, धार्मिक फैसला करें। आप यह बताएँ कि हम दोनों में कौन ज्यादा महत्त्वपूर्ण है -- आदमी या कुत्ता।'

हे ईश्वर, यह कैसी तुलना है ? एक कुत्ते की तुलना एक आदमी से !'

उसकी पत्नी को बुलाया गया। एक हट्टी-कट्टी महिला ने प्रवेश किया। वह उठे हुए उरोजों, मजबूत बाँहों और तगड़ी पिंडलियों वाली औरत थी। उसके जूते फटे हुए थे। वह चल नहीं रही थी बल्कि अपने जूते के तल्ले को जमीन पर घसीट रही थी। वह मिसरी चूस रही थी और उसका एक लाल गाल फड़क रहा था। उसके चेहरे से ऊब टपक रही थी।

आप को कुत्ता क्यों चाहिए,' पिता ने उस महिला से पूछा।' हमारा धर्म-ग्रंथ 'टलमूड' हमें यह शिक्षा देता है कि किसी भी यहूदी को अपने घर में वहशी कुत्ता नहीं रखना चाहिए।'

'वह कुत्ता वहशी नहीं है, धर्म-गुरु। वह इस आदमी से बेहतर जीव है,'

उसने अपनी मजबूत, छोटी उँगली से अपने पति की ओर इशारा करते हुए कहा।।

यह बहस बहुत देर तक चली। उनके वाद-विवाद से मुझ जैसे छोटे बच्चे को भी यह पता चल गया कि वह महिला अपने कुत्ते से प्यार करती थी और अपने पति से उसे नफरत थी।

अंत में मेरे पिता पति और पत्नी का झगड़ा मिटा कर उनका मेल-मिलाप कराने में सफल हो गए। ऊपरी तौर से वे उस महिला को यह मनवाने में सफल हो गए कि या तो वह अपना कुत्ता बेच दे या किसी को ऐसे ही दे दे। लेकिन मुश्किल से एक महीना बीता होगा जब वह आदमी दोबारा पिता के पास लौट आया।

धर्म-गुरु, मुझे अपनी पत्नी से तलाक चाहिए।'

आप कौन हैं ?'

मैं वह नानबाई हूँ जो कुछ समय पहले भी आपके पास आया था। मेरी पत्नी के पास अब भी वह कुत्ता है। आपने धर्म-गुरु की हैसियत से उस दिन अपना फैसला दिया था कि --'

हाँ, मुझे याद आ गया।'

धर्म-गुरु, स्थिति अब भी पहले जैसी ही है। बल्कि अब तो हालात और भी खराब हो गए हैं। अब वह कुत्ता रात में उस औरत के साथ उसके बिस्तर पर सोता है। यदि मैं झूठ बोल रहा हूँ तो यहाँ, इसी पल मेरी मृत्यु हो जाए।'

पिता ने एक बार फिर उस महिला को अपनी अदालत में आने का संदेश भेजा -- और हैरानी की बात यह है कि इस बार वह अपने कुत्ते के साथ वहाँ आई। वह मोटे पैरों वाला 'पग' प्रजाति का बड़ा-सा कुत्ता था। उसकी चौड़ी आँखों और फड़कते

नथुनों से यह स्पष्ट प्रतीत हो रहा था कि उसके भीतर हर जीवित प्राणी के लिए रोष, घृणा और तिरस्कार का तीव्र भाव था। वह कुत्ता अदालत में मौजूद मेरी माँ पर भी भौंका। वह महिला तो उस कुत्ते को अदालत के भीतर लाना चाहती थी, पर मेरी माँ ने यह घोषणा की कि वहाँ 'टोराह' नाम की यहूदी धर्म की पाँच पवित्र पुस्तकें मौजूद थीं।

जैसे ही मैं रसोई में गया और मेरी निगाह उस कुत्ते पर पड़ी, भय और खुशी का एक मिला-जुला भाव मेरे मन में जगा। यह वैसा ही भाव था जैसा एक बार अपने फ्लैट में आए एक पुलिसवाले को देखकर मेरे मन में जगा था। मैंने नान का एक टुकड़ा ले कर कुत्ते की ओर फेंका। अपनी त्योरियाँ चढ़ा कर उसे सूँघते हुए उस कुत्ते ने मुझे अपनी भूरी निगाहों से ऐसे देखा जैसे कह रहा हो कि सूखे नान के टुकड़े को मैं लजीज व्यंजन नहीं मानता।

मैं उस कुत्ते की देह पर हाथ फेरना चाहता था, लेकिन उसकी गुर्राहट ने मुझे डरा दिया। यह कोई कुत्ता नहीं था बल्कि चार टाँगों वाला यहूदियों का कोई शत्रु लग रहा था। उसके हर अंग से जैसे खूँखार आक्रामकता टपक रही थी। जब पिता ने अदालत के कमरे में भौंकने की आवाज सुनी तो वे भी डर गए। उन्होंने वह पवित्र ग्रंथ बंद कर दिया जिसे वे खोलकर पढ़ रहे थे। गर्मी की वजह से वे बगल में रखी टोपी से खुद को पंखा झलने लगे।

'वह कौन है ?'

वह उसका असली 'पति' है !' नानबाई जैनवेल ने कहा।

आम तौर पर पिता दोनों विरोधी पक्षों में सुलह कराने की कोशिश करते थे, लेकिन इस बार उन्होंने नाम मात्र के लिए ही ऐसा किया। हालाँकि हमें यह अजीब लगा, पर वह औरत तलाक के लिए राजी हो गई। उसने एक कुत्ते के लिए अपने पति को त्याग दिया।

मुझे याद नहीं कि क्या उनके तलाक की रस्म हमारे घर पर हुई थी, पर उनका विवाह निरस्त कर दिया गया। महिला सारे सामान के साथ उसी घर में रहती रही। गली में इस खबर की वजह से गुस्से का माहौल था कि एक कुत्ते की वजह से एक आदमी को अपना घर छोड़ना पड़ा। गली की महिलाएँ कुत्ते वाली महिला के बारे में एक-दूसरे के कानों में भद्दी बातें करती थीं।

एक महिला यह खबर सुनते ही शर्म से लाल हो गई और बोली,' नहीं, नहीं !'

'अरे, हाँ !' दूसरी औरत ने जवाब दिया, और उसने पहली महिला के कान में एक और गुप्त बात कही।

'ओह ! यह कैसे संभव है ?'

'सब कुछ संभव है, प्यारी। वह औरत नरक की आग में जलेगी !'

और मैंने तो एक बार एक औरत के मुँह से एक संभ्रांत स्त्री की कहानी सुनी थी, जो एक घोड़े के साथ रहती थी। उनके संसर्ग से एक शिशु हुआ जो आधा इनसान और आधा घोड़ा था।'

उन्होंने उसके साथ क्या किया ?'

वह तो पैदा होते ही मर गया।'

अरे, यह सब अनर्थ बहुत ज़्यादा ऐयाशी की वजह से होता है। बहुत ज़्यादा ऐशो-आराम उनका दिमाग खराब कर देता है। उनका बेड़ा गर्क हो !'

तलाक के बाद जैनवेल का जीवन दुख और उदासी के रास्ते पर चल पड़ा। वह गम गलत करने के लिए खूब दारू पीने लगा। रात में आटे को बड़े-बड़े टुकड़ों में गूँधते हुए वह उदासी भरे गीत गाता, और उसकी आवाज पूरे आँगन में सुनाई देती। पड़ोसी शिकायत करते कि उसके त्रासद गीतों की आवाज उन्हें नींद से जगा देती है।

लोग उसके लिए दोबारा लड़की देखने लगे थे ताकि एक बार फिर उसका घर बस जाए। हर किस्म की लड़कियाँ उसके आगे-पीछे मँडराने लगी थीं, लेकिन वह उनमें से किसी को भाव नहीं देता था।

यदि एक कुत्ता मुझे मेरे घर से बाहर निकलवा सकता है तो मैं इस युग से वाकई डरता हूँ।' वह सोचता।

फिर लोगों ने अकसर उसे गली में मौजूद शराबखाने में जाते हुए देखा।

कुत्ते वाली महिला को एक और पुरुष का साथ मिल गया। वह फलों का व्यापार करता था और अफवाह थी कि जल्दी ही वह उस महिला से शादी करने वाला था। उसे कुत्ते पसंद थे। जब वह



उस महिला से मिलने जाता तो वह उसके लिए चॉकलेट और टाफियाँ और कुत्ते के लिए मांस या हड्डी का टुकड़ा ले कर जाता। यदि महिला व्यस्त होती तो फलों का व्यापारी उसके कुत्ते को पट्टे में बाँधकर घुमाने के लिए बाहर ले जाता। कभी-कभी वह अपने हाथ में पकड़ा कुत्ते का पट्टा छोड़ देता और चौकन्ना कुत्ता अपना पट्टा जमीन पर घसीटते हुए उसके पीछे-पीछे चलता रहता।

एक बार कुत्ते को घुमाने के लिए ले जाने के दौरान एक भयानक बात हो गई। उधर से नानबाई जैनवेल चला आ रहा था। वह नंगे पाँव था और उसने एक लंबा कुर्ता पहन रखा था। वह अपने सिर पर 'चीजकेक' टिकाए हुआ था। जैनवेल ने अब अपने पिता की बेकरी में आटे को बड़े-बड़े टुकड़ों में गूँधने का काम बंद कर दिया था क्योंकि उसे हर्निया हो गया था। अब वह पेस्ट्री बनाने वाले एक व्यक्ति के यहाँ काम करता था जिसने उसे एक रेस्त्रां में 'चीजकेक' देने के लिए भेजा था।

जब कुत्ते ने एक समय अपने मालिक और प्रतिद्वंद्वी रहे जैनवेल को देखा तो उसने क्रोधोन्माद में आकर जैनवेल पर हमला कर दिया। 'चीजकेक' जैनवेल के सिर से नीचे गिर गया। कुत्ते ने जैन्वेल की टाँग में जोर से काट लिया। दर्द से बिलबिलाते जैनवेल ने भी गुस्से में आ कर दोनों हाथों से कुत्ते का गला दबाकर उसका दम घोंट दिया। यह देख कर फलों के व्यापारी ने जैनवेल को चाकू घोंप दिया ...

यह सारा कांड कुछ ही मिनटों में हो गया। कुछ दूरी पर मौजूद पुलिसवाले ने सीटी बजाई। किसी ने प्राथमिक चिकित्सा दल को फोन कर दिया। जमीन पर लाल आँखों वाला कुत्ता मरा हुआ था। जमीन पर गिरा 'चीजकेक' मिट्टी में मिल गया था। और एक आदमी खून से लथपथ पड़ा था। कुत्ते की जीभ काली हो कर किसी चिथड़े की तरह उसके मुँह से बाहर निकल आई थी।

जल्दी ही घायल बेकर जैनवेल को एक स्ट्रेचर पर लेटा कर प्राथमिक चिकित्सा उपलब्ध करा रही गाड़ी में डाल दिया गया। एक चिकित्सक ने उसके पैर और कंधे में पट्टी बाँध दी जहाँ फलों के व्यापारी ने उसे चाकू घोंपा था। वहाँ मौजूद पुलिसवाले फलों के व्यापारी को हथकड़ी पहना कर थाने ले गए। एक सफाई कर्मचारी कुत्ते की लाश को वहाँ से हटा कर ले गया। नंगे पैरों वाले लड़के-लड़कियाँ और कुछ बड़े लोग भी नीचे जमीन पर गिरे 'चीजकेक' के वे हिस्से उठा कर खाने लगे जो मिट्टी में नहीं मिले थे।

जब उस कुत्ते की मालकिन को सारी बात पता चली, तो वह दौड़कर गली में गई और अपने कुत्ते की मौत पर विलाप करने लगी। शायद वह अपने प्रेमी के पुलिस द्वारा पकड़ लिए जाने की घटना से भी संतप्त थी। किंतु गली में मौजूद अन्य महिलाएँ कुत्ते वाली महिला से पहले ही खफा थीं। वे सब उस महिला पर टूट पड़ीं। उन्होंने न केवल उस महिला की खूब पिटाई की बल्कि उसके सिर से उसके बहुत सारे बाल भी नोच लिए। गली में सब का गुस्सा सातवें आसमान पर था और चारों तरफ अफरा-तफरी का माहौल था।

हे पाठकगण, शायद आप जानना चाहते होंगे कि इस कथा का अंत कैसे हुआ। मैं आप की यह इच्छा पूरी करूँगा। अंत में यह हुआ कि कुछ महीने जेल में बिताने के बाद फलों का व्यापारी वहाँ से गायब हो गया। बेकर जैनवेल दो दिनों तक अस्पताल में रहने के बाद वापस अपने घर लौट आया। वह अपनी शोक-संतप्त पूर्व -पत्नी को सांत्वना देने उसके घर गया -- और दोनों में फिर से सुलह हो गई। उन्होंने दोबारा आपस में शादी कर लेने का फैसला किया। शादी से पहले बेकर की होने वाली पत्नी ने कसम खाई कि वह फिर कभी अपने घर में कुत्ता नहीं पालेगी।

हे पाठकगण, शायद आप जानना चाहते होंगे कि इस कथा का अंत कैसे हुआ। मैं आप की यह इच्छा पूरी करूँगा। अंत में यह हुआ कि कुछ महीने जेल में बिताने के बाद फलों का व्यापारी वहाँ से गायब हो गया। बेकर जैन्वेल दो दिनों तक अस्पताल में रहने के बाद वापस अपने घर लौट आया। वह अपनी शोक-संतप्त पूर्व -पत्नी को सांत्वना देने उसके घर गया -- और दोनों में फिर से सुलह हो गई। उन्होंने दोबारा आपस में शादी कर लेने का फैसला किया। शादी से पहले बेकर की होने वाली पत्नी ने कसम खाई कि वह फिर कभी अपने घर में कुत्ता नहीं पालेगी।

कुत्ते की जगह उस महिला ने दो पीले रंग की चिड़ियाँ और एक तोता पाल लिया। बेकर जैनवेल ने दोबारा अपने पिता के यहाँ काम करना शुरू कर दिया। वह अब आटे को बड़े-बड़े टुकड़ों में गूँधने का काम नहीं करता था। इसके बदले वह अब भट्ठी में डबलरोटी डालने और निकालने का काम करता था। जैनवेल की पीली चिड़ियाँ सारा दिन चहचहाती और गीत गाती रहती थीं। तोता यिद्दिश भाषा में कुछ-न-कुछ बोलता रहता था। एक बार फिर जैनवेल का जीवन बढ़िया हो गया था। मुझे तो लगता है कि पृथ्वी-लोक और स्वर्ग-लोक, दोनों ने ही यह तय कर लिया था कि इस पूरे कांड में कुत्ता विजयी न हो। चाहे वह न्यायपूर्ण हो या अन्यायपूर्ण हो, मनुष्यों के मामले में किसी कुत्ते की दखलंदाजी नहीं होनी चाहिए ...।

I-5001, गौड़ ग्रीन सिटी, वैभव खंड, इंदिरापुरम,
गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश - 201014, मो. 0 85120 70086

कहानी

भिक्कड़ बोबो

● जीतेंद्र अवस्थी

विशाल धौलाधार की ऊंची चोटियों से तंबई धूप विदा लेने वाली थी। कुछ ही देर में इस घाटी में अंधेरा पसर जाएगा। अक्तूबर माह की ठंडक लिए हवा जिस्म को छूकर नशीला बना रही थी। आड़े-तिरछे तीखे पत्थरों से अटी संकरी गली से होते हुए भंगालिया भिक्कड़ बोबो के आंगन में जा पहुंचे। मुर्दनी छाये माहौल में शंकाओं ने उन्हें बेतरह घेर लिया।

भिक्कड़ बोबो का ठिकाना भी क्या था-कच्चे स्लेटपोश मकान की एक तरफ पीपे की छत वाला इकमंजिला कमरा। बोबो ने सारी उम्र इसी में गुजार दी। उसे किसी से कोई गिला-शिकवा नहीं-इसी में पूरी तरह संतुष्ट रही। शुक्र मनाती ऊपर वाले और भाऊ-भाभी का जिन्होंने जिंदगी काटने के लिए एक आशियां दे दिया। स्लेटों वाले घर में भाऊ का परिवार रहता था। उसके दरवाजे पर ताला लगा था।

भंगालिया ने बोबो के कमरे की सांकल खड़काई तो दरवाजा खुल गया। भीतर से महीन-सी आवाज आई-'कौण है भाई?' भंगालिया बोले-'बोबो मैं वकील, आपने क्या अंधेरा डाल रखा है?'

उन्होंने माचिस की तीली जलाई तो उसकी रोशनी में देखा-निवार के मंजे पर मैले-कुचैले बिस्तर पर गठड़ी बनी पड़ी बोबो उठने-बैठने का उपक्रम कर रही थी। बोली-'वकील साहब, यह साइड में लैंप पड़ा है, उसे जगा दो।'

लैंप की लौ हुई तो बोबो ने सबसे पहले दुपट्टा ढूंढकर सिर ढका और बिस्तर के पास पड़े स्टूल की तरफ इशारा कर भंगालिया को बैठने को कहा।

फिर बोली-'क्या बताऊं वकील जी, अपनी तो सारी उम्र ही अंधेरे में कट गई। पैदा होने के कुछ टैम उपरांत बापू चल बसा। तब मेरा भाऊ (भाई) अम्मा के पेट में था। हम लोगों पर तो दुखों का पहाड़ ही टूट पड़ा। अम्मा ने आप जैसे बड़े लोगों के घर और खेतों में काम करके गुजारा चलाया। आठ-नौ साल की उमर में मेरे हाथ पीले कर दिए जब ब्याह-शादी का मुझे इल्म तक भी नहीं था। शादीशुदा जिंदगी शुरू भी नहीं हुई थी खसम चल बसा... तबसे लेकर अब तक अंधेरों से ही तो वास्ता पड़ा है...।'

भंगालिया को पछतावा हुआ-बोबो से अंधेरा डालने वाली बात नहीं कहनी चाहिए थी। कुछ संभले तो फिर यह सवाल खड़ा हो गया कि आखिर बोबो ने उन्हें बुलाया क्यों है?

थोड़ी देर चुप्पी पसरी रही।

बोबो फिर बोली-'मैं भी कहां अपना रोना लेकर बैठ गई, बुरा मत मानना वकील जी, साठ साल की हो गई हूं। कुछ बीमारी ने भी मेरी मति भ्रष्ट कर दी है।'

भंगालिया ने गला खंखारकर बोझिल वातावरण को तोड़ने की कोशिश की-'बोबो, तुम्हें इस समय तकलीफ क्या है, दवाई तो ले रही हो न?'

बोबो ने जवाब दिया-कोई एक तकलीफ हो तो बताऊं, पूरे का पूरा जिस्म दुखता रहता है। नींद नहीं आती न भूख लगती है। अब तक किसी के आगे हाथ नहीं फैलाया-अब तो गांव वाले बारी-बारी से रोटी दे जाते हैं, उन्हीं के टुकड़ों की मोहताज हो गई हूं... कमजोरी के साथ-साथ खांसी भी पीछा नहीं छोड़ रही। ऊपरवाला भी आखिरी पड़ाव में पता नहीं कैसे-कैसे दिन दिखाने वाला है... उधर दवाई भी असर नहीं कर रही।'

भंगालिया को लगा-बोबो शायद उन्हें किसी अच्छे डाक्टर को दिखाने या कुछ रुपयों का तकाजा करने की भूमिका बांध रही है।

बोबो के बापू गांव के बड़े लोगों की जमीन काश्त करके परिवार चलाते थे। उनकी बिरादरी के बाकी लोग इसी काम से गुजर-बसर करते थे। बापू के न रहने के बाद अम्मा ने भी यही काम जारी रखा और देवर-जेठों को कहकर जमीन पर हल चलवा लेती। मालिकों का हिस्सा देकर जो बचता, उससे बोबो अपना व भाऊ का भरण-पोषण करती। घरों में और कामकाज कर लेती। पति के न रहने पर जवान ही थी लेकिन उसने दूसरी शादी नहीं की, न ही किसी मर्द के घर जा बैठी। अगर ऐसा करती तो भिक्कड़ बोबो और भाऊ का क्या बनता।

अम्मा काम पर जाती तो चार-पांच बरस की बोबो ही भाऊ को संभालती। उसने उसी समय से उसे भाऊ कहकर बुलाना क्या शुरू किया, गांव के सभी छोटे-बड़े लोग उसे इसी संबोधन से पुकारते। इसी तरह भिक्कड़ भी पूरे जगत ही की 'भिक्कड़ बोबो' बन गई।

अम्मा ने भिक्कड़ की शादी करके अपने सिर से बोझ क्या उतारा, वह दुगनी मुसीबत बनकर लौट आई। सास ने उसे खसमखाणी और मनहूस कहकर मायके ला पटका। रोती-बिलखती रही। मां के मुंह से भी यही निकला-'कुलच्छनी फिर आ धमकी मेरी जान खाने--इससे तो पैदा होते ही मर जाती. .. मनहूस कहीं की...।'

भिक्कड़ बोबो का रोते-रोते बुरा हाल था। अम्मा का यह रूप देखकर उसे यही लगा-काश! जन्म लेती ही मर जाती या घरवाले की जगह वही दम तोड़ जाती तो न अम्मा को मनहूस दिन देखने पड़ते और न ही उसे यह सब कुछ सुनना पड़ता। सासू ने घर से निकाल दिया और अम्मा अपनाने को तैयार नहीं। उसे लगा धरती फट जाए तो वह उसी में समा जाए। लेकिन ऐसी कोई सूरत न होने पर वह गिड़गिड़ाते हुए बोली- 'अम्मा, मेरा क्या दोष है? मैं कहां जाऊं-तू मुझे अपने पास रख ले, तेरे पर बोझ नहीं बनूंगी-अब कुछ कामधाम करके खुद को पाल लूंगी...।'

फसल बीजने के लिए किसान जब खेत में हल चलाता है तो मिट्टी के बड़े-बड़े ढेले निकल आते हैं। इन्हें ही भिक्कड़ कहते हैं। इन्हीं पर बोबो का नाम भी भिक्कड़ पड़ा। भाऊ बचपन से ही उसे बोबो कहकर बुलाता था, इसीलिए नाम ही 'भिक्कड़ बोबो' पड़ गया। उसकी भी क्या तकदीर कि वह भिक्कड़ भी 'रिड़क पत्थर' की तरह ठोकरें खा-खाकर जिंदगी बिताती रही।

मनहूसियत फिर भी उसका साथ नहीं छोड़ने वाली थी। जैसे-तैसे मां ने तरस खाकर उसे सहारा दिया, लोगों के घरों-खेतों में काम करना सिखाया ही था कि पांचेक बरस बाद वह भी भगवान को प्यारी हो गई। बोबो की आंखों के आगे अंधेरा छा ही गया। छोटा भाऊ स्कूल में था। उसे भी आसरा चाहिए था। बापू ने मकान तो बना दिया था-सिर ढकने को छत तो थी लेकिन अकेली बच्ची बोबो क्या करे? उसकी इस हालत में 'अपनों' ने उसे दुबारा शादी करने पर जोर दिया। कुछ 'अपने' उसे 'अपनापन' दिखाकर मौज-मस्ती करना चाहते थे। चिकनी-चुपड़ी बातों से नहीं मानी तो उसे धमकाया, डराया, पीटा भी। लेकिन बोबो तो किसी और ही मिट्टी की बनी हुई थी-टस से मस नहीं हुई। और किसी के झांसे में नहीं आई।



भंगालिया बोबो से आधी ही उमर के थे लेकिन उसकी शख्सियत का भान उन्हें पूरा था। कुछ गांववालों से सुना भी था। यह भी कि भाऊ चौदह-पंद्रह बरस का होते ही स्कूल छोड़कर गांव के एक व्यक्ति के साथ पंजाब भाग गया। बाद में पता चला कि वह किसी जमींदार के घर-परिवार का खाना बनाता था। वहीं किसी हादसे में उसकी टांग टूट गई थी और वह लंगड़ा कर चलने लगा। बोबो को उसके बारे में पता चल गया था लेकिन उसी भाऊ ने उसकी बात तक न पूछी जिसे उसने जान से प्यारा समझकर पाला-पोसा, बड़ा किया था।

बिस्तर पर बैठी-बैठी बोबो की खामोशी तोड़ते हुए भंगालिया बोले-'बोबो, इलाज के लिए कुछ पैसा-वैसा चाहिए या किसी अच्छे डाक्टर को दिखाऊं क्या...?'

बोबो ने जवाब दिया-'वकील साहब, बड़ा डाक्टर क्या कर लेगा। हमारे छोटे वैद जी माने हुए हैं, मेरी बीमारी के आगे तो वह भी हार गए। रही बात पैसे-लत्ते की तो माफ करना, बड़ी बात कह रही हूं-मैंने जबसे होश संभाली है, किसी से एक पैसा नहीं मांगा है। पैसा सगों तक को बैरी बना देता है। मैंने बहुत ही पहले तय कर लिया था कि भूखों मर जाऊंगी लेकिन किसी के आगे हाथ नहीं फैलाऊंगी। आपने पैसे के लिए पूछ लिया यह आपकी दरियादिली है, आपका शुक्रिया...।'

बोबो की बात सुनकर भंगालिया एक बार फिर लज्जित हुए।

उन्हें याद आया- वाकई भिक्कड़ बोबो ने कभी किसी से पैसा नहीं मांगा, बल्कि जरूरतमंदों की मदद ही की है। वह लोगों के खेतों में काम करती, घर के कामों में हाथ बंटाती, गांव की लड़कियों की शादी होने पर 'पचेकण' बनकर उनके साथ जाती, लेकिन जो भी बनता काम करती लेकिन मुफ्त में किसी से कुछ नहीं लेती। भंगालिया फिर हैरान-परेशान हो गए-आखिर बोबो ने उन्हें बुलाया क्यों है?

कमरे में छाई खामोशी फिर भंग करते हुए बोबो भंगालिया से मुखातिब हुई-'मैंने उमरभर मुसीबतें ही तो झेली हैं-एक मुश्किल हटती, दो और खड़ी हो जातीं। लेकिन मैंने इनका डटकर मुकाबला किया-अपना मन मजबूत बनाकर टाला। चाहती तो किसी कुंआरे,

रंडुए या बड़े-बूढ़े के यहां बैठकर, ऐश करती लेकिन मैंने किसी को अपने को छूने तक नहीं दिया। अपना चालचलन ठीक रखा। लोगों का काम ही किया, किसी से मुफ्त में कुछ नहीं खाया। यह तो बीमारी ने मुझे तोड़ दिया और गांव वालों के टुकड़ों पर पलने लगी हूं लेकिन पहले मैंने हर बंदे पर एहसान ही किया है...।'

'जी हां वकील साहब, मैंने जिस बात के लिए आपको बुलाया था, वह तो भूल ही गई। असल में मुझे वसीयत बनवानी है। इसकी फीस भी आपको दूंगी, बस यह काम कर दो...।"

भंगालिया अदालत में थे। खबर सुनकर सन्न रह गए। सहायक को सारा काम समझाया। स्कूटर उठाकर गांव में सीधे भिक्कड़ बोबो के घर पहुंचे।

आंगन में पांच-सात बुजुर्ग बैठे थे। बोबो के कमरे में चार-पांच उम्रदराज औरतें थी। सभी के चेहरे लटके हुए थे। एक तरफ भाऊ खड़ा था। बोबो की अंत्येष्टि की तैयारी चल रही थी। भंगालिया वहीं मौजूद पंचायत प्रधान के पास गए और कान में कुछ फुसफुसाए। उत्तर में प्रधान बोले 'लेकिन शवदाह के लिए तो भाऊ तैयार बैठा है...।'

दो-तीन बुजुर्ग भी भंगालिया के पास जा पहुंचे। प्रधान बोले-'यह अब वकील साहब ने नयी भसूड़ी डाल दी। बोल रहे हैं कि बोबो का अंतिम संस्कार उसका बड़ा भतीजा भेडू ही करेगा।'

एक बुजुर्ग कुछ सोचकर बोले-'यह बात तो सही है कि भेडू ने भिक्कड़ की बहुत सेवा की है लेकिन दाह-संस्कार का पहला हक तो भाऊ का ही बनता है।'

भंगालिया बोले-'आप सब ठीक कह रहे हैं लेकिन बोबो यही चाहती थी कि उसका संस्कार भेडू ही करे... उसकी आखिरी इच्छा तो पूरी करनी ही पड़ेगी।'

थोड़ी देर सभी चुप लगा गए।

भंगालिया बोले- 'बोबो ने मुझसे वसीयत बनवाई थी। उसने अपनी जितनी भी कमाई है, भेडू के नाम की है। कहती थी कि बापू-अम्मा के न रहने पर वह अकेली पड़ गई थी। भाऊ छोटा था। सारी दुनिया, सगे-संबंधी मकान, जायदाद और कुछ उस पर नजरे गड़ाये बैठे थे। तब भगवान भी उसकी नहीं सुनता था- उसने भी बेसहारा ही छोड़ दिया था। भाऊ को उसने पाला-पोसा बड़ा किया, जब उससे सहारे की उम्मीद हुई तो वह भी उसे गांव छोड़कर पंजाब भाग गया। वापस आया तो शादी की जिद करने लगा, पर हादसे के कारण लंगड़े हो गए उस से कोई ब्याह को राजी नहीं थी। तब उसने एक बेवा औरत और उसके मां-बाप को पैसे देकर भाऊ के लिए खरीदा। भाभी ने आते ही उसे मकान से निकाल कर साथ वाले कमरे में धकेल दिया और पति के साथ पंजाब चली गई। भाऊ भी जोरू का गुलाम हो गया। बोबो ने हर बीमारी-शीमारी, गरमी-सरदी में अपने हाड़ तोड़कर कमाया-न भाऊ ने उसे कुछ दिया न किसी और ने। इसीलिए वह चाहती थी कि उसकी लाश का दाह-संस्कार भेडू ही करे। उसके लिए उसने एक खिंद में सीकर कुछ रुपये भी रखे हैं। कहती थी भेडू सत्रह-अठारह बरस का होने और परिवार के लिए कमाने के बाद भी अकेला ही है...।'

प्रधान व अन्य लोगों के चेहरों पर सवाल उभर आये-'वकील साहब, यह क्या कह रहे हो?'

कुछ रुककर भंगालिया बोले- 'अब मैं आप लोगों को क्या बताऊं? वैसे बोबो कहती थी कि उसने भेडू को भी मुसीबतों से न डरने, अपने, सिर्फ अपने आप पर भरोसा रखने, किसी के आगे हाथ न फैलाने की सीख दी है। तभी वह सम्मान व संतोष के साथ जी पाएगा। नहीं तो मां ने तो उसका ख्याल उस समय ही छोड़ दिया था जब वह भाऊ के पास आ बैठी थी। भाऊ ने भी उसे लोकलाज के लिए ही अपनाए रखा है लेकिन है तो भेडू अकेला ही?'

फिर प्रश्न उभरे- 'वकील साहब, यह क्या बहकी-बहकी बातें कर रहे हो?'

भंगालिया ने गहरी सांस लेकर कहा- 'बहकी बातें नहीं, सच्चाई है। भेडू को उसकी मां दहेज में लाई थी-वह उसके पहले मर चुके खसम से है। यह सच छिपाने के लिए वह ब्याह के एकदम बाद नये पति भाऊ के साथ पंजाब चली गई थी। पांच-छह साल बाद लौटी तो कह दिया कि भाऊ और लोका दोनों ही भाऊ के बच्चे हैं। भाऊ की रजामंदी से ही भेद रखा गया। भेडू अकेला है, बेबस है। बेसहारा ही बेसहारे का दुःख-दर्द समझ सकता है। उसका सहारा बन सकता है। इसीलिए बोबो भेडू से ही अंतिम संस्कार कराना चाहती है। इसके खर्चे के लिए खिंद में सिली रकम निकालनी होगी। भाऊ का क्या पता वह भेडू को कुछ खर्चा-लत्ता दे भी या नहीं, वह कहां उसका अपना बेटा है...?'

भाऊ का सिर झुक गया और वह पैर के अंगूठे से मिट्टी कुरेदने लग गया।

भाऊ की रजामंदी से ही भेद रखा गया। भेडू अकेला है, बेबस है। बेसहारा ही बेसहारे का दुःख-दर्द समझ सकता है। उसका सहारा बन सकता है। इसीलिए बोबो भेडू से ही अंतिम संस्कार कराना चाहती है। इसके खर्चे के लिए खिंद में सिली रकम निकालनी होगी। भाऊ का क्या पता वह भेडू को कुछ खर्चा-लत्ता दे भी या नहीं, वह कहां उसका अपना बेटा है...?' भाऊ का सिर झुक गया और वह पैर के अंगूठे से मिटी कुरेदने लग गया।

1094, सेक्टर 44-बी, चंडीगढ़-160047,
मो. 098140-02184

समीक्षा

विभिन्न सामाजिक सवालों से टकराता 'दगैल'

● बद्री सिंह भाटिया

'दगैल' (उपन्यास) : रूपसिंह चन्देल, भावना प्रकाशन, 109 ।, पटपड़गंज, दिल्ली-110091
आवरण - नीरज, पृष्ठ-232, मूल्य- 500/-

पुरुष और स्त्री के अनैतिक/अवैध संबंधों पर काफी कुछ लिखा-पढ़ा गया है। समाज का यह विरूप चेहरा कालांतर ही नहीं युगों से किसी-न-किसी रूप में चलता रहा है। समाज में मानव प्रकृति ऐसी है कि सब जन एक-सा नहीं है। किसी-न-किसी में कोई गुण, अवगुण होता है जो उसकी प्रत्यक्ष व परोक्ष पहचान बन, चर्चित रहता है। गुणों का बखान प्रायः प्रत्यक्ष भी हो जाता है परंतु अवगुणों की चर्चा पीठ पीछे या फिर गप्प-शप्प में ही होती है। अपने अवगुण प्रायः कोई सुनना भी नहीं चाहता। अवगुणी का पता चेहरे से नहीं लगता। उसके सामान्य व्यवहार से भी कई बार नहीं। उसकी वाक्पटुता, कार्य-व्यवहार इतने साफ और महीन होते हैं कि जब उसके असली रूप का पता चलता है तब तक देर हो चुकी होती है। उसका यह रूप उसकी अंतःचेष्टाओं, भावनाओं और कुत्सित प्रयत्नों से प्रकट होता पराकाष्ठा को प्राप्त हो जब परिणति को प्राप्त होता है तो कहीं मन के किसी कोने से सवाल उठता है, क्या वह वास्तव में वही है? इसी सवाल की जमा, मनफी में वह आगे बढ़ता रहता है निरंतर।

कृत्य कोई भी हो विशेषकर दागदार। जब तक घने गह्वर में रहता है, आवरण पड़ा रहता है, मगर सफलता की गति कहीं-न-कहीं चूक कर जाती है और कृत्य प्रत्यक्ष हो अपनी गंध छोड़ वातावरण को दूषित कर जाता है। कई बार भीतर की उछल-कूद, ऊहा-पोह अपनी कुटिलता को त्वरित कर शीघ्र अंजाम को प्राप्त होना चाहती है। तब आस-पास की हवा उसके कृत्यों के छींटे उसी पर डाल कर दागदार बनाती है, वह दगैल बन जाता है।

वह पुरुष हो या स्त्री, पता नहीं चलता कि वह वास्तव में ऐसा है- दागदार। वह किसी भी समाज का हो, पढ़ा-लिखा, ज्ञानी या फिर किसी समाज के प्रतिष्ठित विशेष वर्ग का। शालीनता की चादर ओढ़े ऐसे पुरुष और स्त्री बहुतेरे मिल जाएंगे। इन्हीं चेहरों को बेनकाब करता उपन्यास है- 'दगैल' । रूप सिंह चंदेल ने इस पुस्तक में अध्यापन, पत्रकारिता और साहित्य के क्षेत्र के उन चेहरों को अनावृत किया है जो शालीनता, प्रतिष्ठा के पद पर आसीन चेहरे पर आवरण चढ़ा समाज में एक ऐसा गंद फैला रहे हैं, जो कतई भी पसंद नहीं किया जाता। वांछनीय नहीं होता। इनमें पुरुष अधिक हैं जबकि प्रायः ऐसा देखा गया है कि स्त्रियां भी कम नहीं। परंतु उपन्यास में पुरुषों की कुंठाओं को विस्तारपूर्वक बारीकियों के साथ पाठक वर्ग को अवगत कराया गया है।

रूप सिंह चंदेल समकालीन साहित्य के जाने-माने कथाकार, उपन्यासकार ही नहीं, बल्कि विभिन्न विधाओं के सक्रिय रचनाकार हैं। उनके रचना कर्म, विशेषकर कथा-कहानी, उपन्यास में जीवन के भीतर की कशमकश बाखूबी देखी जा सकती है। समाज की विसंगतियों की कुरूपता को वे पाठक के समक्ष मात्र मनोरंजन के लिए नहीं, बल्कि इस उद्देश्य से रखना चाहते हैं कि किसी तरह यह सूरत बदल जाए।

'दगैल' इसी सोच से उपजी पीड़ा की पेशकश है। उपन्यासकार ने स्त्री-पुरुष के संबंधों को दर्शाते हुए प्रश्न उठाया है कि पुरुष औरत के स्वाभिमान को कब तक चोट पहुंचा उसे हीन या दोयम दर्जे की भोग्या साबित करता रहेगा? इसी सोच को निरूपित करने के लिए उसने कॉलेजों, विश्वविद्यालयों में हिंदी प्राध्यापकों के कार्य-व्यवहार के एक पक्ष के भीतर व्याप्त विसंगतियों को उठाकर उदाहरणस्वरूप प्रस्तुत किया है। यह माना जा सकता है कि परिस्थितियां कमोबेश सब जगह एक सी हैं। इसी तरह उपन्यास किसी क्षेत्र विशेष का न होकर सार्वजनिक रूप धारण कर लेता है।

उपन्यास के पाठ में पाठक का साक्षात्कार विक्रांत, नवीन शुक्ल जैसे व्यक्तियों से होता है। विश्वविद्यालय में छात्रा-छात्राएं शोध कर रहे होते हैं। शोध पूरा करने में गाइड की अहम भूमिका

होती है- गाइड जब छात्राओं से शोध के अध्याय जांचने में आनाकानी करते हुए, तिथियों-पर-तिथियां देता है, व्यस्तता-पर-व्यस्तता दर्शाता है, तब वे पाती हैं कि अमुक निर्देशक गुरु नहीं गुरुघंटाल है। विनीता अग्रवाल डॉ. नवीन शुक्ल के अधीन शोध कर रही होती है. जब नवीन शुक्ल विश्वविद्यालय में शोध जांचने की बजाय घर पर अकेले आमंत्रण देता है- देह की मांग करता है या बलात्कार तक का प्रयास करता है तब पता चलता है कि वो दागदार व्यक्ति वास्तव में भेड़िया है। हवा बाहर आती है- फिर क्रम चलता है गाइड बदलने का।

इस वर्णन में उपन्यास में फ्लैशबैक भी है- कौन कैसे उस स्थिति तक पहुंचा, किन परिस्थितियों में। उपन्यास का वर्णन क्षेत्र दिल्ली, भोपाल, लखनऊ तक फैला है। यह हिंदी लेखकों के कुछ प्राध्यापकों की जीवनचर्या का एक भाग भी है जिसमें साप्ताहिक, सांध्य गोष्ठियों में शराब के साथ निरामिष बातें और साहित्य चर्चा के साथ विक्रांत नामक प्राध्यापक के दांपत्य जीवन का भी वर्णन है।

विक्रांत और विनीता अग्रवाल शोध के चक्र में मिले थे। विनीता एक संभ्रांत घर की लड़की थी। गाइड नवीन के चंगुल से किसी तरह बच कर निकली। विक्रांत ने मदद की और नए गाइड के निर्देशन में डिग्री प्राप्त कर पाई। दोनों का सान्निध्य बढ़ा और वे प्रेम विवाह करने में सफल हो गए। परिवार चला। दो बच्चियां भी हुईं मगर बिखराव।

दांपत्य संबंधों की एक अनिवार्य शर्त है कि दोनों एक दूसरे की भावनाओं, जरूरतों और प्रतिष्ठाओं का ध्यान रखें। मगर प्रायः ऐसा नहीं हो पाता। विनीता की विमुखता कहें या विक्रांत की मनःस्थिति, विक्रांत अपने पथ से पद्च्युत हो गया और शालिनी नामक एक उभरती लेखिका के चक्कर में पड़ गया। उनका प्रेम तिरोहित हो बस देह तक सीमित रह गया।

शालिनी एक कॉलेज में एडहॉक प्राध्यापक थी। उसकी साहित्यिक अभिरुचि और नौकरी करने की इच्छा उसके आई.ए. एस. पति को स्वीकार नहीं थी. लेकिन एक समय का शालिनी शुक्ल के पति का मित्र सुशील राय शालिनी को कविताएं लिखने के लिए प्रेरित करता है. राय दिल्ली के एक सांध्य महाविद्यालय में हिन्दी प्राध्यापक है और स्वयं भी कविताएं लिखता है. शालिनी हिन्दी साहित्य जगत में छा जाना चाहती है और सुशील राय उसकी इस चाहत को भांप उसका लाभ उठाता है। उससे शारीरिक संबंध स्थापित कर लेता है। परिणामतः शालिनी का पति से संबंध विच्छेद हो जाता है. साहित्य के शीर्ष पर पहुंचने के लिए वह देह को रास्ता मान लेती है और इसी क्रम में वह सुशील राय के परिचित युवा कवि-कथाकार, जो जे.एन.यू. का छात्र था, प्रेम प्रकाश के जाल में फंस जाती है.

शालिनी के जिक्र के साथ दिल्ली के कॉलेजों में प्राध्यापकी अथवा नौकरी पाने के तंत्र का भी बाखूबी उपन्यास में वर्णन किया गया है। विक्रांत ने जब शालिनी को देखा तो उसकी देययष्टि और वाक्पटुता ने उसे आकर्षित कर लिया। इससे पूर्व वह अपनी पहली बच्ची की देखभाल के लिए रखी गई नवयुवती मेड सुनीता के साथ भी संबंध स्थापित कर चुका था, जो गर्भपात तक पहुंच गया था। बाद में आत्मग्लानि से विक्षिप्त हो सुनीता ने आत्महत्या कर ली थी। विक्रांत और शालिनी का मिलन बढ़ा और एक दिन विनीता को पता चल गया। लड़ाई स्वाभाविक थी।

लेकिन विक्रांत का जीवन चक्र साप्ताहिक-साहित्यिक गोष्ठियों से होता हुआ आगे बढ़ता रहा। बैठकी में विश्वविद्यालयों, कॉलेजों के भीतर चल रहे व्यभिचार पर साहित्य के अलावा चर्चा का एक अलग विषय भी होता। और यह स्वाभाविक भी है- शराब के साथ शबाब की बात ही मनोरंजक रहती है। अपने विकासक्रम में ये प्राध्यापक अधिकांश में अपने गाइडों, वरिष्ठ प्राध्यापकों, विभागाध्यक्षों के यहां झाड़ू-पोचा तक से गुजर कर उभरे हैं या कहें प्राध्यापकी की नौकरी पाई है।

शालिनी, विक्रांत और प्रेम प्रकाश के बीच डोलती रही। सुशील राय को उससे अलग होना पड़ा। वह विश्वविद्यालय का एक्टिविस्ट भी था। पुराना नेक्सलाइट। अपने जीवन के तबाह होने का कारण शालिनी सुशील राय को मानती थी। शालिनी ने पुलिस को गोपनीय पत्र लिख उसे पकड़वा दिया। राय को तीन वर्ष सजा हुई। कालांतर में हार्ट-अटैक से उसकी मृत्यु हो गयी।

विक्रांत का दागदार चरित्र उपन्यास में उसके कृत्यों के तहत पड़ाव-दर-पड़ाव प्रकट होता गया है। उसके दो बेटियां थीं, स्मृति और सुष्मिता. पति की व्यभिचारी प्रवृत्ति और शराब की महफिलों से आजिज पत्नी विनीता ने अलग होना उचित समझा। दोनों में तलाक हो गया। पारिवारिक विघटन और कानूनी दाव-पेंच के तहत बड़ी बेटी ने पिता के साथ रहने का निर्णय किया। कारण कि पिता उसे उन्मुक्तता देते थे जबकि मां ऐसा नहीं चाहती थी। विक्रांत की शालिनी से मुलाकातें बढ़ती गईं। इसी बीच शालिनी के गर्भ ठहर गया। वह विक्रांत के साथ रहना चाहती थी, मगर वह बच्चे को नाम देने से मुकर गया। यद्यपि शालिनी जानती भी थी कि बच्चा प्रेम प्रकाश का है जो अब एक प्रतिष्ठित पत्र में पत्रकार होकर साहित्य पृष्ठ देखता था। मगर वह भी बच्चे के बारे में मुकर गया। यहां तक कि एक मंत्री की सहायता से वह दिल्ली छोड़ भोपाल में पत्रकारिता करने लगा और वहीं उसने जे.एन.यू. की अपनी पूर्व प्रेमिका से विवाह भी कर लिया, जो उन दिनों वहां विश्वविद्यालय से पी-एच.डी. कर रही थी । लेखक ने प्रेम प्रकाश के चरित्र के दोगलेपन को बाखूबी उभारा है जो जे.एन.यूं. पुस्तकालय में कार्य करने वाली एक युवती को शादी का झांसा देकर उसका दैहिक शोषण करता है. उसके गर्भवती होने पर और गर्भ के प्रेमप्रकाश द्वारा नकारे जाने से वह लड़की आत्महत्या कर

लेती है। लेकिन शालिनी गर्भपात करवा अपने मायके लखनऊ लौट जाती है। प्रेम प्रकाश भोपाल में भी साहित्यिक परिशिष्ट देखते हुए अपनी वासनामयी प्रवृत्ति का शिकार रहा। अनेक युवतियों से संबन्ध बनाए। लेकिन अनीता कश्यप ने जब नंगा किया तो वह उन्हीं केन्द्रीय मंत्री का सहारा लेकर पुनः दिल्ली के एक राष्ट्रीय अखबार में वापस लौट आया।

दिल्ली में विक्रांत प्रेम प्रकाश से मिला। प्रेमप्रकाश विक्रांत की साहित्यिक बैठकों और हर शनिवार को होने वाली शराब पार्टियों का हिस्सा बन गया. वह विक्रांत की बेटी स्मृति की ओर आकर्षित होता है और प्रेमप्रकाश की प्रतिभा और बहुपठित व्यक्तित्व से अपने से बहुत बड़ा होते हुए भी स्मृति उससे प्रेम करने लगती है. प्रेम प्रकाश का एक और शिकार. । लंबे साथ के बाद युवती के मन में स्थायित्व की चाह होती है- स्मृति ने प्रेम प्रकाश के आगे शादी का प्रस्ताव रखा। वह चाहती थी कि वह पत्नी को तलाक देकर उससे शादी करे। प्रेमप्रकाश टालता रहता है। इससे क्षुब्ध स्मृति और उसके मध्य वाक्युद्ध, हाथापाई और प्रेमप्रकाश द्वारा स्मृति की हत्या।

विक्रांत को कथालोक नामक पत्रिका में नीरदा नामक लेखिका की कहानी पढ़ने को मिली। यह कहानी मित्रों की साप्ताहिक गोष्ठी में चर्चित हुई थी। उसने प्रतिक्रिया लिखी। पत्राचार बढ़ा और मिलन लखनऊ तक चला गया। मानव प्रवृत्ति नीरदा भी उससे खुल जाती है- पता चलता है कि वह विधवा है और ससुराल से प्रताड़ित है।

व्यभिचारी पुरुष अपने हंसमुख चेहरे के भीतर की कुटिल चालों से किसी लक्ष्य के आगे चारा फेंकता है- व्याघ्र की तरह। जाल पड़ गया तो बस। नीरदा प्रसिद्धि चाहती थी। उसकी रचनाओं पर विक्रांत ने अपनी पत्रिका 'दृष्टि' का विशेषांक प्रायोजित किया। विमोचन हुआ और लक्ष्य सिद्ध। कालांतर में निकटता बढ़ी। जिंदगी से परेशान और स्थिरता की चाह में एक दिन विक्रांत ने रिटायरमेंट ली और नीरदा के साथ रहने लखनऊ चला गया।

दागदार चरित्रों की यह लंबी कथा जिंदगी के बीस-तीस सालों के अंतराल में फैली हुई है। विक्रांत को जीवन की गलत धारा से रोकने के प्रयास में एक समय उसकी शनिवार की बैठकों के पात्र प्रो. राम पाल त्रिपाठी और कमल गुप्त ने स्मृति को लेकर प्रेम प्रकाश के प्रति विक्रांत को आगाह भी किया था मगर मन पर पड़े आवरण ने उसे इस ओर सोचने ही नहीं दिया।

उपन्यास में जहां शैक्षणिक जगत में व्याप्त बुराइयों की ओर सोदाहरण इंगित किया गया है, वहीं पत्रकारिता के व्यवसाय में प्रकाशन की विसंगतियों और महिला शोषण को भी बाखूबी दर्शाया गया है।

ऐसा लगता है कि जीवन और उपलब्धियों की दौड़ में आदमी अपने निज को भूल जाता है- वह चेतता ही नहीं- विक्रांत को उसके विवेक ने सजग किया भी था- कहा था- "तुम्हारा जीवन कितना साफ-सुथरा है विक्रांत? कुछ वर्षों में ही तुमने तीन स्त्रियों के साथ संबंध स्थापित कर लिए।" (पृष्ठ 181) मगर यह व्यंग्य वह नहीं समझ पाया।

एक बात और कि पर-स्त्री लोलुपता किसी में भी रहे मगर यह घटना अमुक विशेष के अपने घर भी घट सकती है वह शायद यह नहीं सोच पाता। विक्रांत की पत्नी तो दूसरी राह न चली मगर बेटी स्मृति पुरुष लोलुपता की शिकार हुई और परिणामतः प्रेम प्रकाश के हाथों मृत्यु को प्राप्त हुई। विक्रांत के पारिवारिक जीवन की यह एक बहुत बड़ी हार है। यहां विचार उठना स्वाभाविक है कि अपने निजी क्षणिक दैहिक सुखों की चाह वाली दौड़ में उम्र के एक ठहराव पर आकर भी आदमी नहीं संभलता। बच्चों को यह कैसी उन्मुक्तता दी कि पिता पूछता ही नहीं कि वे क्या कर रहे हैं, कहां विचरण कर रहे हैं? बेटी जैसी नाजुक पारिवारिक इकाई रात को कहां जाती है, किस सहेली से मिलती है- कि यह कैसी बोल्डनेस दी जा रही है कि परिणाम खतरनाक स्थिति तक पहुंच जाते हैं।

प्रत्येक रचनाकार अपनी कृति के लिए एक शैली और भाषा का चुनाव करता है। रूप सिंह चन्देल ने इस उपन्यास की भाषा को आम पाठक की भाषा बना इसे सरस, सुग्राह्य और कौतुहलपूर्ण बनाया है। जिज्ञासा बनी रहती है। किसी उलझाव से वह बचे हैं। यथासंभव अपनी बात मुहावरों के माध्यम से भी प्रकट की है। इसके साथ यह उपन्यास शिक्षा जगत के उन प्राध्यापकों की काली करतूत को उजागर करता है जो निःसंदेह अपने दायित्व निर्वहन में चूक कर उस आदर्श को मैला कर रहे हैं जो एक गुरु का होता है।

प्रश्नधर्मी यह उपन्यास अपनी पठनीयता के साथ निस्संदेह पाठक वर्ग में एक जीवन के निम्न पहलू पर सवाल और समाधान की बात करता है। समाज के उस कोढ़ की ओर जोर देकर इंगित करता है जो जाने कितने समय से युवावर्ग को अपना शिकार बनाता जा रहा है। दगैल शैक्षणिक, साहित्यिक और पत्रकारिता जगत के साथ समाज की तमाम विद्रूपताओं पर प्रश्न चिन्ह खड़ा करता एक ऐसा उपन्यास है जिसे बिना पढ़े नहीं समझा जा सकता। निःसंदेह चन्देल जी बधाई के पात्र हैं जिन्होंने ऐसे विषय को रचना का विषय बनाया जिसपर लिखने से लेखक कतराते हैं।

ग्रीनवुड, दूसरी मंजिल, गांव दुधली,
डाकघर भराड़ी, शिमला-171 001, हिमाचल प्रदेश
मो. 0 94184 78878



मुख्य मंत्री श्री वीरभद्र सिंह चंबा मिंजर मेले के समापन अवसर पर रावी नदी के तट पर विधिवत मिंजर विसर्जन करते हुए

पंजीकरण संख्या : 845/1957 जुलाई, 2017 एच.पी./79 एस.एम.एल. 2015–17



बसोहली कलम में मेघदूत छाया : पद्मश्री विजय शर्मा

आर.एस. नेगी निदेशक, सूचना एवं जन सम्पर्क विभाग, हिमाचल प्रदेश द्वारा प्रकाशित तथा डॉ. डी. के. गुप्ता, नियंत्रक, मुद्रण एवं लेखन सामग्री विभाग द्वारा हिमाचल प्रदेश सरकार के लिए राजकीय प्रेस, शिमला–171005 से मुद्रित करवाकर शिमला से प्रकाशित। सम्पादक वेद प्रकाश।

ISSN 2454-972X

हिमप्रस्थ

अगस्त, 2017





मुख्य मंत्री श्री वीरभद्र सिंह शिमला जिले के रामपुर में राज्य स्तरीय स्वतंत्रता दिवस के अवसर पर ध्वजारोहण करते हुए

ISSN : 2454-972X

हिमप्रस्थ

वर्ष : 62 अगस्त, 2017 अंक : 5

सम्पादकीय कार्यालय : हि. प्र. प्रिंटिंग प्रेस परिसर, घोड़ा चौकी, शिमला-5

वार्षिक शुल्क : 150 रुपये, एक प्रति : 15 रुपये

E-Mail : himprasthahp@gmail.com
Tell: 0177 2633145, 2830374
Website: himachalpr.gov.in/himprastha.asp

ज्ञान सागर

वतन हमारा - इस पर सब कुर्बान,
शांति का दूत है - मेरा हिंदुस्तान।

इस अंक में

लेख

कहानी

कविता/ग़ज़ल

लघु कथा

समीक्षा

अपनी बात

कितना सुखद अहसास है कि आज हम एक स्वतंत्र राष्ट्र में पूर्ण आजादी के साथ रह रहे हैं। इससे भी अच्छी अनुभूति यह है कि हमारा संविधान हमें आजादी के साथ रहने और जीवन यापन की मनपसंद राह चुनने का अधिकार देता है। दूसरों से लड़कर तो हम 70 वर्ष पूर्व आजाद हो गए थे, लेकिन अपने अंदर व्याप्त कुरीतियों एवं कुसंस्कारों से लड़कर आजादी पाना अभी बाकी है। विश्व के एक विशालतम प्रजातांत्रिक देश के नागरिक के रूप में यह अत्यंत हर्ष का विषय है कि आज हमें राजनीतिक आजादी के साथ मौलिक अधिकार प्राप्त हैं जिससे लोगों को न केवल व्यक्तिगत स्वतंत्रता मिली है बल्कि उनके जीवन में अवांछित हस्तक्षेप भी कम हुआ है। समाज में संतोष व सुरक्षा की भावना सुदृढ़ हुई है। इतना ही नहीं इन अधिकारों के दायरे को बदलते समय व परिवेश के अनुरूप सुदृढ़ व वृहद किया जा रहा है। देश में संविधान लागू होने के 67 वर्ष बाद भी लोकतंत्र को मजबूत करने के प्रयास निरंतर जारी हैं और लोगों में अपने अधिकारों के प्रति बढ़ती जागरूकता के कारण ही नागरिकों को निजता का अहम मौलिक अधिकार प्राप्त हुआ है। हाल ही में देश के सर्वोच्च न्यायालय के नौ जजों की संविधान पीठ ने सर्वसम्मति से ऐतिहासिक निर्णय सुनाते हुए निजता को संविधान के अनुच्छेद 21 के तहत जीवन की स्वतंत्रता और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के मौलिक अधिकार का अभिन्न अंग माना है। लेकिन यह अधिकार इतना भी असीम नहीं हो सकता कि कोई भी इसके दुरुपयोग से मनमानी कर सके। इसलिए इस पर भी विधानपालिका न्यायसंगत नियंत्रण ला सकती है। देश के एक स्वतंत्र नागरिक के नाते हर किसी को इतनी आजादी प्राप्त है कि वह ईमानदारी के साथ किए कार्य के बदले अपना सम्मानजनक जीवन यापन कर सके। यह तभी संभव हुआ है जब हम स्वतंत्रता के बुनियादी उसूलों का ईमानदारी से पालन करने के अभ्यस्थ हुए हैं। स्वतंत्रता की इस गरिमा को बनाए रखने के लिए आवश्यक है कि हमें अपने अधिकारों के साथ-साथ कर्तव्यों का भी बोध होना चाहिए। ऐसी कोई भी आजादी जो हमें अपनी जिम्मेवारी या जवाबदेही से मुक्त कर दे, वह आजादी नहीं, बल्कि निरंकुशता होगी। जवाबदेही चाहे अपने घर के प्रति हो या कार्य क्षेत्र अथवा देश के प्रति, उससे किसी भी सूरत में मुक्ति की आजादी संभव नहीं है। आजादी की अहमियत और इसकी कीमत वही लोग बेहतर जानते हैं जिन्होंने पराधीनता देखी है और गुलामी का दंश झेला है। इसी आजादी के लिए असंख्य राष्ट्रभक्त देशवासियों ने स्वतंत्रता संग्राम के दौरान अंग्रेजी हुकूमत के असहनीय अत्याचारों को हंसते-हंसते सहन करते हुए अपना सर्वस्व न्योछावर कर दिया। उनके त्याग, बलिदान एवं कुर्बानियों का ही परिणाम है कि आज हम स्वाभिमान के साथ जी रहे हैं। भारत के स्वतंत्रता संग्राम और उसके उपरांत देश की एकता व अखंडता को बनाए रखने में हिमाचल प्रदेश के लोगों का योगदान भी कमतर न था। प्रदेश की इस पावन धरा पर 'धामी गोली कांड', 'पझौता आंदोलन', 'प्रजामंडल आंदोलन' तथा 'सुकेत सत्याग्रह' जैसे अनेक आंदोलनों ने पहाड़ों को स्वतंत्रता संग्राम से जोड़ने के लिए आमजन को जागृत किया। हिमाचल निर्माता डॉ. वाई.एस. परमार के गतिशील एवं कुशल नेतृत्व में प्रदेशवासियों ने स्वतंत्रता आंदोलन के साथ-साथ हिमाचल को देश का अलग राज्य बनाने के लिए लंबा संघर्ष किया। पूर्ण राज्य बनने के बाद प्रदेश ने विकास के हर क्षेत्र में अभूतपूर्व उपलब्धियां हासिल करते हुए खुशहाली और आर्थिक स्वावलंबन का नया दौर शुरू किया। देश की आजादी के पावन अवसर पर आओ हम सब मिलकर प्रण लें कि पूरी निष्ठा एवं समर्पित भावना से कार्य करते हुए भारत को विश्व का सुदृढ़ एवं सशक्त राष्ट्र बनाएंगे!

संपादक

71वां स्वतंत्रता दिवस

खुशहाल एवं समृद्ध हिमाचल



मुख्यमंत्री श्री वीरभद्र सिंह का स्वतन्त्रता दिवस पर आलेख

पंद्रह अगस्त हम सब भारतवासियों के लिए हर्ष का दिन है। इसी शुभ दिन वर्ष 1947 में, लम्बे संघार्ष तथा हमारे महान स्वतंत्रता सेनानियों के सर्वोच्च बलिदानों के उपरान्त भारत को स्वतंत्रता प्राप्त हुई थी। आज जब हम देश का 71वां स्वतंत्रता दिवस मना रहे हैं, तो हम अपने महान स्वतंत्रता सेनानियों, वीर सैनिकों तथा राष्ट्र-निर्माताओं को भी सम्मान एवं आदर के साथ याद करते हैं। इन्हीं महान लोगों के अथक प्रयासों के फलस्वरूप आज हमारा देश स्वतंत्र व सुदृढ़ पहचान बना पाया है। इन महान विभूतियों का राष्ट्र प्रेम हमारे लिए सदैव प्रेरणा स्रोत रहेगा तथा हमें अपनी मातृभूमि की गर्व के साथ सेवा करने तथा तिरंगे को स्वाभिमान के साथ लहराये रखने की प्रेरणा देता रहेगा।

हिमाचल प्रदेश के लोगों का भी स्वतंत्रता संग्राम में विशेष योगदान रहा है। 'धामी गोलीकांड', 'प्रजामंडल आन्दोलन', 'सुकेत सत्याग्रह' तथा 'पझौता आन्दोलन' जैसी घटनाओं ने स्वतंत्रता संग्राम के दौरान उस समय के राष्ट्रीय नेताओं का ध्यान आकर्षित किया था।

यह दिवस निःसंदेह, हर्षोल्लास व उत्सव का अवसर है। लेकिन, साथ ही साथ यह दिवस हमें, अपने गौरवमय इतिहास पर चिंतन करने का अवसर भी प्रदान करता है। हिमाचल प्रदेश स्वतंत्रता के आठ माह के उपरान्त, 30 पहाड़ी रियासतों के विलय के बाद अस्तित्व में आया। उस समय यह प्रदेश गरीबी तथा पिछड़ेपन से जूझ रहा था। प्रदेश के लिए, राष्ट्र के अन्य राज्यों के साथ विकास पथ पर चलना कठिन था। लेकिन प्रदेश के मेहनतकश व ईमानदार लोगों तथा हमारे नेताओं की सुदृढ़ राजनैतिक इच्छा शक्ति से इन चुनौतियों को सुअवसरों में परिवर्तित किया। प्रदेश में विकास की गति धीरे-धीरे लेकिन निरन्तर बढ़ती गई। प्रदेशवासियों के निरन्तर प्रयासों से आज हिमाचल प्रदेश, देश का एक अग्रणी व गतिमान राज्य बनकर उभरा है।

वर्तमान कांग्रेस सरकार ने 25 दिसम्बर, 2012 को सत्ता संभाली तथा इसके साथ ही राज्य में आर्थिक आत्म निर्भरता एवं स्वावलम्बन के नए युग का सूत्रपात हुआ। सरकार के वर्तमान कार्यकाल के दौरान राज्य में स्वास्थ्य, शिक्षा तथा समग्र विकास में अभूतपूर्व वृद्धि हुई है तथा प्रदेश को शिक्षा एवं समावेशी विकास में देश में सर्वश्रेष्ठ राज्य का दर्जा प्राप्त हुआ है। हिमाचल प्रदेश को देश के बड़े राज्यों में प्रथम 'खुला शौच मुक्त राज्य' घोषित किया गया। प्रदेश को खाद्यान्न उत्पादन में बढ़ोतरी के लिए 'कृषि कर्मण्य अवार्ड भी प्राप्त हुए हैं।

अपने वर्तमान कार्यकाल के दौरान, प्रदेश सरकार ने समाज के कमजोर वर्गों के कल्याण तथा उत्थान पर विशेष ध्यान दिया है। सामाजिक सुरक्षा पेंशन को 450 रुपये से बढ़ाकर 700 रुपये किया गया, जिससे 3,89,168 वृद्ध, विधवाओं तथा दिव्यांगों को लाभ मिला है। मानसिक रूप से अक्षम लोगों को भी बिना आय सीमा के सामाजिक सुरक्षा पेंशन प्रदान की जा रही है, जिससे प्रदेश के 9,000 दिव्यांगजनों को लाभ मिला है। शारीरिक रूप से अक्षम लोगों के विवाह अनुदान की राशि को 25,000 रुपये से बढ़ाकर 50,000 रुपये किया गया है। विभिन्न गृह निर्माण योजनाओं के अंतर्गत प्रदान की जाने वाली अनुदान राशि को भी 48,500 रुपये से बढ़ाकर 1,30,000 रुपये किया गया है।

प्रदेश में सभी को खाद्य सुरक्षा प्रदान करने के लिए

शत-प्रतिशत जनसंख्या को सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अंतर्गत लाया गया है। 'राजीव अन्न योजना' के तहत 37 लाख से भी ज्यादा लोगों को 2 रुपये प्रति किलोग्राम की दर से 3 किलोग्राम गेहूं तथा 3 रुपये प्रति किलोग्राम की दर से 2 किलोग्राम चावल प्रतिमाह प्रदान किए जा रहे हैं। इस अवधि में विशेष उपदान योजना के अंतर्गत सभी राशनकार्ड धारकों को उपदान दरों पर दालें, खाद्य तेल तथा नमक वितरित करने पर 750 करोड़ रुपये व्यय किए गए तथा वर्तमान वित्तीय वर्ष के दौरान 220 करोड़ रुपये व्यय किए जा रहे हैं।

कृषि गतिविधियों के विविधिकरण के लिए 321 करोड़ रुपये की परियोजना कार्यान्वित की जा रही है जिसके अंतर्गत कृषक समुदाय को जैविक खेती तथा नकदी फसलों की खेती करने के लिए प्रोत्साहित किया जा रहा है। इस योजना के अंतर्गत 212 करोड़ रुपये व्यय किए गए हैं, जिसके तहत अब तक किसानों को 5,28,674 मिट्टी स्वास्थ्य कार्ड तथा 7,14,221 किसान क्रेडिट कार्ड वितरित किए गए हैं। प्रदेश में मुख्यमंत्री खेत संरक्षण योजना को प्रभावी ढंग से कार्यान्वित किया जा रहा है तथा योजना के तहत आवारा पशुओं व बन्दरों से फसलों को बचाने के लिए बाड़ लगाने के लिए किसानों को 80 प्रतिशत का उपदान प्रदान किया जा रहा है। डॉ. वाई.एस. परमार स्वरोज़गार योजना के अंतर्गत 5.50 लाख वर्गमीटर के क्षेत्र में 3,050 पॉलीहाऊस निर्मित किए गए हैं, जिस पर 63.45 करोड़ रुपये व्यय किए गए।

प्रदेश में सभी को खाद्य सुरक्षा प्रदान करने के लिए शत-प्रतिशत जनसंख्या को सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अंतर्गत लाया गया है। 'राजीव अन्न योजना' के तहत 37 लाख से भी ज्यादा लोगों को 2 रुपये प्रति किलोग्राम की दर से 3 किलोग्राम गेहूं तथा 3 रुपये प्रति किलोग्राम की दर से 2 किलोग्राम चावल प्रतिमाह प्रदान किए जा रहे हैं। इस अवधि में विशेष उपदान योजना के अंतर्गत सभी राशनकार्ड धारकों को उपदान दरों पर दालें, खाद्य तेल तथा नमक वितरित करने पर 750 करोड़ रुपये व्यय किए गए तथा वर्तमान वित्तीय वर्ष के दौरान 220 करोड़ रुपये व्यय किए जा रहे हैं।

बागबानी हमारी ग्रामीण कृषि अर्थव्यवस्था में अहम् भूमिका निभाती है। प्रदेश के 2.27 लाख हैक्टेयर से भी ज्यादा के क्षेत्र में फलों की खेती की जा रही है तथा राज्य में फल उत्पादन 10.28 लाख मीट्रिक टन तक पहुंच चुका है। विश्व बैंक पोषित 1134 करोड़ रुपये की बागबानी विकास परियोजना को गुणात्मक फलों के उत्पादन में वृद्धि के लिए आरम्भ किया गया है। मौसम आधारित फसल बीमा योजना के अन्तर्गत 3.65 लाख किसानों को पंजीकृत किया गया है। एंटी हेलनेट पर उपदान को 50 प्रतिशत से बढ़ाकर 80 प्रतिशत किया गया है, जिसके तहत 50.60 लाख वर्ग मीटर का क्षेत्र लाया गया है। सेब, आम तथा नींबू प्रजाति के फलों के लिए मण्डी मध्यस्थता योजना को प्रभावी ढंग से कार्यान्वित किया जा रहा है।

प्रदेश का 3.35 लाख हैक्टेयर क्षेत्र है, जिसे सुनिश्चित सिंचाई सुविधा के तहत लाया जा सकता है, इसमें से 2.69 लाख हैक्टेयर क्षेत्र को सिंचाई योजनाओं के अन्तर्गत लाया गया है। वर्तमान वित्तीय वर्ष के दौरान विभिन्न जलापूर्ति योजनाओं तथा सिंचाई परियोजना पर 2,238 करोड़ रुपये व्यय किए गए हैं। ऊना जिले में 922.48 करोड़ रुपये की स्वां नदी तटीकरण परियोजना तथा कांगड़ा जिले में 180 करोड़ रुपये की छौंछ-खड्ड तटीकरण का कार्य प्रगति पर है। प्रदेश सरकार द्वारा राज्य में सड़कों के निर्माण को प्राथमिकता दी जा रही है। सरकार द्वारा प्रदेश के दूरदराज क्षेत्रों को सड़क से जोड़ने पर विशेष बल दिया जा रहा है। सरकार के वर्तमान कार्यकाल के दौरान 2,314 किलोमीटर नई सड़कों तथा 215 पुलों का निर्माण किया गया तथा 864 गांवों को सड़क से जोड़ा गया। कुल 3,226 पंचायतों में से 3,140 पंचायतों को मोटर योग्य सड़कों से जोड़ा गया तथा शेष पंचायतों को सड़क से जोड़ने का कार्य प्रगति पर है।

हिमाचल प्रदेश, देश में शिक्षा का केन्द्र बनने की ओर अग्रसर है। सरकार के वर्तमान कार्यकाल के दौरान प्रदेश में 50 नए महाविद्यालय खोले गए हैं तथा सरकार ने 6 महाविद्यालयों को अपने अधीन लिया है। इन नए खोले गए महाविद्यालयों के सुचारू कार्यान्वियन के लिए विभिन्न श्रेणियों के लगभग 900 पदों को सृजित किया गया है। इसके अतिरिक्त, शिक्षा विभाग में विभिन्न श्रेणियों के 9,600 पदों को भरा गया। इस अवधि के दौरान 1,485 नई राजकीय पाठशालाएं खोली अथवा स्तरोन्नत की गई हैं। इसके अतिरिक्त, प्रदेश में तीन इंजीनियरिंग महाविद्यालय, 35 औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थान तथा चार केन्द्रीय पोषित संस्थान जैसे आई.आई.टी., आई.आई.एम., आई.आई.आई.टी. तथा आर.वी.टी.आई. भी खोले गए हैं। इस अवधि के दौरान 'राजीव गांधी डिजिटल योजना' के तहत 10वीं व 12वीं कक्षा के मेधावी विद्यार्थियों को 37,500 नेट बुक/लैपटॉप वितरित किए गए तथा वर्तमान वित्तीय वर्ष के दौरान 10,000 अतिरिक्त विद्यार्थियों को भी लैपटॉप वितरित किए जाएंगे।

प्रदेश में स्वास्थ्य पर व्यय कुल सकल घरेलू उत्पाद का 1.43 प्रतिशत है, जोकि देश में दूसरा सर्वाधिक है। इस अवधि के दौरान प्रदेश में 230 से भी अधिक नए स्वास्थ्य संस्थान खोले गए हैं। शिमला के समीप चम्याणा में 290 करोड़ रुपये की लागत से आई.जी.एम.सी. के सुपर स्पेशियलिटी खण्ड का

निर्माण किया जाएगा। सिरमौर जिले के नाहन में डॉ. वाई. एस. परमार राजकीय मेडिकल कालेज खोला गया। मण्डी के ई.एस.आई. मेडीकल कालेज एवं अस्पताल को प्रदेश सरकार द्वारा अपने अधीन लिया गया तथा इसका नाम श्री लाल बहादुर शास्त्री के नाम पर रखा गया। चम्बा में पंडित जवाहर लाल नेहरू राजकीय मेडिकल कालेज खोला गया। इन दोनों मेडिकल कालेजों में 100-100 एमबीबीएस सीटों के साथ कक्षाएं इस शैक्षणिक सत्र से आरम्भ की जाएंगी। इसके अतिरिक्त, हमीरपुर में भी एक राजकीय मेडिकल कालेज खोलने की प्रक्रिया प्रगति पर है। हिमाचल प्रदेश दक्षिण पश्चिमी एशिया में छः नई स्वास्थ्य योजनाएं आरम्भ करने वाला प्रथम राज्य बन गया है। इन योजनाओं में इलैक्ट्रॉनिक स्वास्थ्य कार्ड तथा सार्वभौमिक प्रतिरक्षण कार्यक्रम के अन्तर्गत 18 वर्ष की आयु से कम के मधुमेह रोगियों के लिए निःशुल्क इंसुलिन की योजना भी शामिल है।

पंचायती राज संस्थानों को सुचारू एवं प्रभावी ढंग से कार्यशील बनाने के दृष्टिगत सभी पंचायतों को कम्प्यूटरीकृत किया गया है। 13वें एवं 14वें वित्तीय आयोग द्वारा ग्राम पंचायत स्तर पर मूलभूत सुविधाएं प्रदान करने के लिए इस अवधि में 963 करोड़ रुपये प्रदान किए गए। इसके अतिरिक्त, इस अवधि के दौरान राज्य वित्तीय आयोग द्वारा 398.72 करोड़ रुपये उपलब्ध करवाए गए हैं। प्रदेश सरकार ने पंचायत सहायकों, सिलाई अध्यापकों, पंचायत चौकीदारों के मानदेय को क्रमशः 5910 रुपये से बढ़ाकर 7000 रुपये, 2300 रुपये से बढ़ाकर 6300 रुपये तथा 2050 रुपये से बढ़ाकर 2350 रुपये किया है।

इस अवधि के दौरान प्रदेश में 5488.48 करोड़ रुपये के निवेश से 4,461 औद्योगिक इकाइयां स्थापित की गई, जिससे 63,000 युवाओं को रोजगार प्राप्त हुआ। कांगड़ा जिले के कन्दरौड़ी तथा ऊना जिले के पंडोगा में स्टेट ऑफ द आर्ट औद्योगिक क्षेत्र स्थापित किए जा रहे हैं।नए उद्योगों की स्थापना के लिए 45 दिनों के भीतर समयबद्ध स्वीकृतियां सुनिश्चित की जा रही हैं। 300 से ज्यादा हिमाचलियों को रोजगार देने वाली नई औद्योगिक इकाइयों से पांच साल तक केवल एक प्रतिशत विद्युत कर वसूला जाएगा। प्रदेश में मुख्यमंत्री 'स्टार्ट-अप/इनोवेशन परियोजनाएं/नई उद्योग परियोजना' आरम्भ की गई हैं, जिसके अन्तर्गत 10 लाख की ऋण राशि पर चार प्रतिशत का उपदान दिया जा रहा है।

प्रदेश की समृद्धि एवं खुशहाली में जल विद्युत के समुचित दोहन की अहम भूमिका है। प्रदेश में विद्यमान कुल 27,436 मैगावाट की क्षमता में से हमने अभी तक 10,351 मैगावाट विद्युत क्षमता के दोहन करने में सफलता प्राप्त की है। गत चार वर्षों के दौरान प्रदेश में घरेलू विद्युत उपभोक्ताओं को उपदानयुक्त दरों पर बिजली उपलब्ध करवाने पर 1490 करोड़ रुपये व्यय किए गए हैं। वर्तमान वित्तीय वर्ष के दौरान इस उद्देश्य के लिए 450 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया है।

बेरोजगार युवाओं के कौशल को स्तरोन्नत करने तथा रोजगार के अवसर बढ़ाने के दृष्टिगत प्रदेश सरकार ने 500 करोड़ रुपये की कौशल विकास भत्ता योजना आरम्भ की है। इस अवधि के दौरान 136.34 करोड़ रुपये की राशि व्यय कर 1,66,175 युवाओं को कौशल विकास भत्ता प्रदान किया गया है।

बेरोजगार युवाओं के कौशल को स्तरोन्नत करने तथा रोजगार के अवसर बढ़ाने के दृष्टिगत प्रदेश सरकार ने 500 करोड़ रुपये की कौशल विकास भत्ता योजना आरम्भ की है। इस अवधि के दौरान 136.34 करोड़ रुपये की राशि व्यय कर 1,66,175 युवाओं को कौशल विकास भत्ता प्रदान किया गया है। एशियन विकास बैंक की सहायता से 640 करोड़ रुपये की कौशल विकास परियोजना को कार्यान्वित करने के लिए कौशल विकास निगम की स्थापना की गई है। 42 रोजगार मेलों तथा 949 कैंपस साक्षात्कारों का आयोजन कर निजी क्षेत्र में 31,991 युवाओं को रोजगार प्रदान किया गया है।

एशियन विकास बैंक की सहायता से 640 करोड़ रुपये की कौशल विकास परियोजना को कार्यान्वित करने के लिए कौशल विकास निगम की स्थापना की गई है। 42 रोजगार मेलों तथा 949 कैंपस साक्षात्कारों का आयोजन कर निजी क्षेत्र में 31,991 युवाओं को रोजगार प्रदान किया गया है। 12वीं अथवा इससे अधिक की शैक्षणिक योग्यता प्राप्त पात्र बेरोजगार युवाओं को प्रतिमाह 1000 रुपये तथा दिव्यांग युवाओं को प्रतिमाह 1500 रुपये बेरोजगार भत्ता प्रदान किया जा रहा है।

पर्यटन क्षेत्र भी स्थानीय लोगों के लिए आय व रोजगार का एक अच्छा माध्यम बन सकता है। राज्य में हिमाचल प्रदेश सतत पर्यटन नीति-2013 को तैयार कर कार्यान्वित किया गया है। केन्द्रीय पर्यटन मंत्रालय ने, हिमालयन सर्किट के अन्तर्गत 100 करोड़ रुपये की 14 डी.पी.आर. स्वीकृत की हैं। प्रदेश में पर्यटन के विकास के लिए एशियन विकास बैंक ने 640 करोड़ रुपये की ऋण सहायता स्वीकृत की है। शिमला तथा धर्मशाला शहरों को स्मार्ट सिटी परियोजना के लिए चयनित किया गया है। शिमला तथा कुल्लू शहरों को अम्रुत योजना के अन्तर्गत चयनित किया गया है।

हिमाचल पथ परिवहन निगम के बेड़े में 1,615 नई बसें शामिल की गई। इसके अलावा, प्रदेश में लोगों को आरामदायक व भरोसेमंद यात्रा सुनिश्चित करने के लिए 88 सुपर स्पेशिलिटी

वॉल्वो-स्कैना तथा 20 ए.सी. लग्जरी बसें शामिल की गई हैं। प्रदेश की सीमा के भीतर निगम की बसों में महिलाओं को बस किराए में 25 प्रतिशत की छूट दी जा रही है। वर्तमान वित्तीय वर्ष के दौरान युवाओं को रोजगार के अवसर प्रदान करने के लिए कम से कम 1000 नए बस परमिट प्रदान किए जा रहे हैं।

परमवीर चक्र तथा अशोक चक्र विजेताओं को दी जाने वाली एकमुश्त राशि को 25 लाख रुपये से बढ़ाकर 30 लाख रुपये, जबकि उन्हें मिलने वाली वार्षिक राशि को 1.25 लाख रुपये से बढ़ाकर तीन लाख रुपये तथा महावीर चक्र विजेताओं को दी जाने वाली एकमुश्त राशि को 15 लाख रुपये से बढ़ाकर 20 लाख रुपये किया गया है। धर्मशाला में लगभग 10 करोड़ रुपये की लागत से युद्ध स्मारक संग्रहालय का निर्माण किया गया है। युद्ध विधवाओं की पुत्रियों के विवाह के लिए आर्थिक सहायता के तहत दी जाने वाली राशि को 15 हजार रुपये से बढ़ाकर 50 हजार रुपये किया गया। स्वतंत्रता सेनानियों की सम्मान राशि को 10 हजार रुपये से बढ़ाकर 15 हजार रुपये प्रतिमाह किया गया। इसी प्रकार स्वतंत्रता सेनानियों की विधवाओं की सम्मान राशि को भी 5 हजार रुपये से बढ़ाकर 15 हजार रुपये किया गया है।

राज्य सरकार ने अपने वर्तमान कार्यकाल के दौरान प्रदेश के कर्मचारियों व पेंशनधारकों को हजारों करोड़ रुपये के अतिरिक्त वित्तीय लाभ प्रदान किए। इस अवधि के दौरान सरकारी क्षेत्र में ही 50 हजार से भी ज्यादा युवाओं को रोजगार प्रदान किया गया है। अनुबंध आधार पर लगे कर्मचारियों की ग्रेड-पे को 50 प्रतिशत से बढ़ाकर 75 प्रतिशत तथा दैनिक भोगी कर्मचारियों की दिहाड़ी को 150 रुपये से बढ़ाकर 210 रुपये किया गया है।

हमारा प्रदेश शांति, सामाजिक सौहार्द तथा परस्पर भाईचारे के लिए जाना जाता है, जो किसी भी समाज के विकास व प्रगति के लिए नितांत आवश्यक है। मैं, प्रदेश के लोगों से राज्य में इसी प्रकार सौहार्द व शांति बनाए रखने का आग्रह करता हूँ, ताकि हमारा प्रदेश प्रगति, खुशहाली तथा समग्र विकास के मार्ग पर तेजी से आगे बढ़े।

हमारी सरकार प्रदेश में समान एवं संतुलित विकास तथा समाज के सभी वर्गों के कल्याण को सुनिश्चित बनाने के प्रति वचनबद्ध है। हमने सतत् विकास के लक्ष्यों के तहत हिमाचल प्रदेश के लिए एक भावी योजना एवं परिकल्पना निर्धारित की है तथा इसे हम प्रदेशवासियों के सहयोग से सन् 2030 की निर्धारित समयसीमा से पहले, वर्ष 2022 तक प्राप्त करने की आशा रखते हैं।

आइए ! स्वतंत्रता दिवस के इस पावन अवसर पर हिमाचल प्रदेश को देश का सबसे विकसित व अग्रणी राज्य बनाने के लिए हम सब एकजुट होकर कार्य करने का संकल्प लें।

0 0 0

कृषि गतिविधियों के विविधिकरण के लिए 321 करोड़ रुपये की परियोजना कार्यान्वित की जा रही है जिसके अंतर्गत कृषक समुदाय को जैविक खेती तथा नकदी फसलों की खेती करने के लिए प्रोत्साहित किया जा रहा है। इस योजना के अंतर्गत 212 करोड़ रुपये व्यय किए गए हैं, जिसके तहत अब तक किसानों को 5,28,674 मिट्टी स्वास्थ्य कार्ड तथा 7,14,221 किसान क्रेडिट कार्ड वितरित किए गए हैं। प्रदेश में मुख्यमंत्री खेत संरक्षण योजना को प्रभावी ढंग से प्रदेश में कार्यान्वित किया जा रहा है तथा योजना के तहत आवारा पशुओं व बन्दरों से फसलों को बचाने के लिए बाड़ लगाने के लिए किसानों को 80 प्रतिशत का उपदान प्रदान किया जा रहा है। डॉ. वाई.एस. परमार स्वरोज़गार योजना के अंतर्गत 5.50 लाख वर्गमीटर के क्षेत्र में 3,050 पॉलीहाऊस निर्मित किए गए हैं, जिस पर 63.45 करोड़ रुपये व्यय किए गए।

आलेख

स्वतंत्रता उपरांत विकास में जन सहयोग
अपनी मदद आप

● विनोद भारद्वाज

भारत का स्वतंत्रता संग्राम एक लंबी संघर्ष की यात्रा है। इस यात्रा में अनेक देशभक्तों ने भाग लिया। अनेकों ने अपने प्राणों की आहुति देकर गुलामी की जंजीरों से राष्ट्र को मुक्त करवाया। जिन भारतीयों ने परतंत्रता का जमाना देखा था और अंग्रेजों के अत्याचार को सहा था, उनके लिए 15 अगस्त, 1947 का ऐतिहासिक दिन एक अपूर्व उल्लास का पर्व था। उन्होंने हर भारतीय को स्वतंत्रता रूपी उपहार सौंपा था।

स्वतंत्रता आंदोलन एकजुटता, एक ध्येय की एक अनूठी मिसाल थी, ऐसी मिसाल दुनिया में कहीं देखने को नहीं मिलती है। अहिंसात्मक तौर पर प्राप्त आजादी में लोगों में जागृति आई। आजादी उपरांत भी देशवासियों ने अपने-अपने क्षेत्रों में सामूहिक प्रयासों से राष्ट्र निर्माण के कार्यों को आगे बढ़ाया।

हिमाचल देश की आजादी के आठ माह उपरांत 15 अप्रैल, 1948 को अस्तित्व में आया। यहां की भोलीभाली जनता ने स्वतंत्रता आंदोलन में देशवासियों का साथ दिया। अपनी-अपनी रियासत के खिलाफ आवाज उठाई। 15 अगस्त उपरांत, अलग अस्तित्व की लड़ाई लड़ी। डॉ. यशवंत सिंह परमार ने इस संघर्ष का नेतृत्व किया और 15 अप्रैल, 1948 को हिमाचल का उदय हुआ।

वर्ष 1948 की स्थिति पर नजर दौड़ाएं तो हिमाचल प्रदेश की तसवीर एक अविकसित व पिछड़े राज्य की थी। 30 छोटी-बड़ी रियासतों के विलय से बने इस प्रदेश की अलग-अलग समस्याएं व कठिनाइयां थीं। बड़ी रियासतें जैसे चंबा, सिरमौर, मंडी में तो कुछ-कुछ जन सुविधाएं थीं, लेकिन छोटी रियासतों में ये कोसों दूर थीं। 1948 में 10,451 वर्ग मील में फैले इस राज्य की जनसंख्या 11.09 लाख थी। साक्षरता दर 4.8 प्रतिशत (महिला साक्षरता दर 2 प्रतिशत) थी। विद्युतीकृत गांवों की संख्या 6, पेयजल प्राप्त गांव 300, शैक्षणिक संस्थान 331, स्वास्थ्य संस्थान 88, पशु चिकित्सा संस्थान 9, औद्योगिक इकाइयां 48, सड़कों की लंबाई 288 किलोमीटर, खाद्यान्न उत्पादन 1.99 मीट्रिक टन, फल उत्पादन 1200 मीट्रिक टन, सकल घरेलू उत्पाद 27 करोड़, प्रति व्यक्ति आय मात्र 240 रुपये थी। इन आंकड़ों से सहज ही अंदाजा लगाया जा सकता है कि हिमाचल, देश के मानचित्र पर एक पिछड़ा व अविकसित प्रदेश था। लोगों की निर्भरता कृषि कार्यों पर थी। मजदूरी तथा छोटे-मोटे कारोबार ही परिवार की आय के मुख्य साधन थे।

अविकसित राज्य होने के बावजूद यहां के मेहनतकश व हिम्मती निवासियों के दिलों में विश्वास व हाथों में कर्म की शक्ति थी। सबसे महत्त्वपूर्ण बात थी कि उस वक्त केंद्र व राज्य का राजनीतिक नेतृत्व दिशा देने वाला था। राज्य की भौगोलिक जरूरतों को मद्देनजर रखकर विकास की यात्रा आरंभ हुई थी।

15 अप्रैल के ऐतिहासिक दिवस पर आज की पीढ़ी के साथ राज्य की वह हकीकत बयां करने जा रहे हैं जो प्रदेशवासियों की सामूहिक प्रयासों की एक अनूठी मिसाल पेश करती है।

राज्य के गठन के समय उस वक्त के निवासियों ने रियासत, अंग्रजों का काल देखा था और गुलामी से आजादी की ओर कदम रखे थे। आजादी का जुनून सभी में था। राज्य के गठन उपरांत शिक्षण, स्वास्थ्य, पशु संस्थान खुलने का सिलसिला आरंभ हुआ। सड़क मार्ग बनने लगे। गांव रोशनी से जगमगाने लगे। कूहलें बनीं। सरकार तो इन कार्यों को आगे बढ़ा रही थी लेकिन राज्य के आरंभिक काल में लोगों की सूझबूझ व सहभागिता से कार्य आगे बढ़े, जिनकी मिसाल हम आज की पीढ़ी से साझा करना चाह रहे हैं। ये विकास कार्य जनता के शत प्रतिशत धन व श्रम से पूर्ण हुए। वे सरकार के इंतजार में नहीं रहे, बल्कि सामूहिक तौर पर आगे बढ़े।

राज्य के गांववासियों ने स्कूल भवनों का निर्माण किया। सड़कें बनानी आरंभ कीं। कूहलें बनाईं। गांव-गांव तक पहुंच रही बिजली की तारों को खींचा, खंभे उठाए और कर्मियों को संपूर्ण सहयोग दिया। हालांकि तत्कालीन सरकार के विभागों ने लोगों को हर संभव सहायता दी।

सोलन से मीनस सड़क जो 90 मील लंबी है तथा सोलन, सिरमौर के अंदरूनी इलाके से गुजरती है, के निर्माण के लिए लोग जी जान से जुटे। मर्द, औरत, बच्चे, बूढ़े, अफसर सब बिना किसी

भेदभाव के काम में जुट गए। तत्कालीन मुख्यमंत्री डॉ. यशवंत सिंह परमार ने लोक निर्माण विभाग, जिसे तब जन कार्य विभाग कहा जाता था, को तकनीकी मार्गदर्शन प्रदान किया। जहां-जहां सड़क पहुंचती, स्थानीय गांव के लोग अपनी रोटियां साथ लेकर आते और सड़क निर्माण में जुट जाते। लोगों की सहभागिता से सड़क सोलन, ओच्छघाट, मरयोग, गिरिपुल, सनोरा, पवियाणा होते हुए राजगढ़ तक पहुंची। हर घर से एक व्यक्ति कार्य पर तो आता ही था। अगर किसी वजह से वह नहीं आ पाता था, तो अपने बदले किसी की तैनाती अवश्य करता। सड़क निर्माण की यह कहानी इस बात को बयां करती है कि राज्य में लोगों ने समाज उत्थान के संघर्ष को आजादी उपरांत भी जारी रखा। सड़क मार्ग बनने से पहले राजगढ़ पहुंचने के लिए लोगों को सोलन जिले के सलोगड़ा से पैदल जाना पड़ता था। कठिन रास्तों से रास्ता तय कर उन्हें गिरि नदी को पार करना पड़ता था। बरसात के दिनों में तो यह मार्ग भी बंद हो जाता था फिर सराहां होकर पहुंचना पड़ता था।

आजादी के उपरांत यहां के निवासियों ने शिक्षा की अहमियत को भी जल्दी ही भांप लिया था। बड़ी रियासतों जैसे सिरमौर, मंडी, चंबा में तो विद्यालय खुले थे। कोटखाई, मंडी, चंबा में तो विद्यालय खुले थे। कोटखाई में पंजाब सरकार द्वारा हाई स्कूल खोला था। आजादी से पूर्व रियासतों से सुविधा संपन्न लोग तो अपने बच्चों को उच्च शिक्षा के लिए शिमला, पंजाब की रियासतों तक लाहौर भेज देते थे। गांव में तो स्कूलों का नामोनिशान न था। गांववासियों में शिक्षण संस्थान खुलवाने की जागृति आई। शिमला से 35 किलोमीटर की दूरी पर स्थित ठियोग में लड़कियों के स्कूल भवन का निर्माण वर्ष 1955 में लोगों द्वारा दान दिए गए 15 हजार रुपये में श्रमशक्ति से चार माह के भीतर हुआ। लोगों ने स्वयं पर्वत को काट कर जगह बनाई। यह स्कूल भवन नहीं, बल्कि शिक्षा के मंदिर का निर्माण था।

सिरमौर जिले के एक छोटे से कस्बे में मात्र एक छोटी सी डिस्पेंसरी थी। उस वक्त वहां की जागरूक जनता ने सरकार को अस्पताल भवन की स्वीकृति का आवेदन तो किया और आपसी मंत्रणा से क्षेत्रवासियों ने अस्पताल भवन निर्माण की ठानी। कस्बे के मशहूर लाला जी ठाकुर सूरत सिंह के नेतृत्व में धन एकत्रित किया गया। सभी ने अस्पताल निर्माण के लिए दिल खोल कर दान दिया। पचास हजार रुपये एकत्रित हुए। तत्कालीन सरकार ने पी. डब्ल्यू.डी. द्वारा 25 बिस्तरों वाले भवन का नक्शा बनाया। वन विभाग ने देवदार की लकड़ी उपलब्ध करवाई। इसे स्थानीय निवासी अपने कंधों व पीठ पर उठा कर लाए। छत निर्माण के लिए लोहे की चादरें अंबाला से पहले रेल द्वारा सलोगड़ा मंगवाई गई। लोगों ने अपनी पीठ पर इन्हें गिरिपुल होते हुए राजगढ़ पहुंचाया। तत्कालीन चिकित्सक डॉ. सोमदत्त भारद्वाज ने इस कार्य में अहम भूमिका निभाई। वन स्वीकृति प्राप्त करने तथा लोगों को इस पुनीत कार्य के लिए अंशदान देने के लिए प्रेरित किया। आज चाहे राजगढ़ में अस्पताल का आधुनिक भवन बन गया है, लेकिन इस भवन में आज भी विद्यालय चल रहा है।

चंबा में गोसदन राजकीय था, लेकिन भवन न था। जनता को दूध प्राप्त करने में मुश्किल हो रही थी। जनता जागी। मंदिर से जगह ली। 20 हजार रुपये की लागत से एक स्वतंत्र आधुनिक भवन का निर्माण कर दिया।

हिंदुस्तान-तिब्बत मार्ग पर स्थित छोटे से गांव मत्याणा के दौरे के दौरान तत्कालीन चीफ कमीश्नर भगवान सहाय ने वहां कृषि हाई स्कूल बनाने का विचार किया। स्थानीय जनता ने धन व श्रमदान कर 65 हजार रुपये की लागत से भवन निर्मित कर दिया।

हिमाचल के निवासियों ने 'अपनी मदद आप' भावना को अपनाया। इसके तहत सड़कें, कूहलें, ग्राम पथों, सरकारी भवनों का निर्माण करने के लिए लोगों ने स्वयं अपने हाथ बढ़ाए। स्कूली बच्चों ने भी अपने विद्यालयों में खेल मैदानों का निर्माण करवाया। राजगढ़ की प्राथमिक पाठशाला के मैदान की दीवार के लिए बच्चों ने खुद दूर से पत्थर उठाकर लाए। इससे अपने विद्यालय के प्रति बच्चों में सम्मान की भावना भी जागी।

उस वक्त अपनी सम्पत्ति को विकास व जनहित के कार्यों के लिए लोग दान देने में भी पीछे नहीं थे। सोलन के एक दानी महाशय श्री तुला राम गजराज जैन जो कलकत्ते के व्यापारी थे, ने लड़कियों के हाई स्कूल के लिए 11 लाख रुपये की लागत का भवन दान स्वरूप दे दिया। इसके अतिरिक्त भवन की मरम्मत के लिए भी अलग से धनराशि दी। उपराज्यपाल बजरंग बहादुर सिंह ने 16 अक्तूबर, 1955 को इसका लोकार्पण किया।

कूहलों, पगडंडियों के निर्माण को भी स्थानीय लोगों ने श्रमदान से आगे बढ़ाया। 1961 में मई माह में जनता द्वारा 23 मील लंबी पगडंडियों का निर्माण किया गया। एक अनुमान के अनुसार उस वक्त की दिहाड़ी के अनुसार यह 35 हजार रुपये का कार्य था।

हिमाचल के निवासियों ने 'अपनी मदद आप' भावना को अपनाया। इसके तहत सड़कें, कूहलें, ग्राम पथों, सरकारी भवनों का निर्माण करने के लिए लोगों ने स्वयं अपने हाथ बढ़ाए। स्कूली बच्चों ने भी अपने विद्यालयों में खेल मैदानों का निर्माण करवाया। राजगढ़ की प्राथमिक पाठशाला के मैदान की दीवार के लिए बच्चों ने खुद दूर से पत्थर उठाकर लाए। इससे अपने विद्यालय के प्रति बच्चों में सम्मान की भावना भी जागी।

000

आलेख

चंपारण सत्याग्रह के सौ साल
भारत में सत्य अहिंसा आंदोलन का पहला कदम

● विनोद भारद्वाज



भारत के गौरवमय स्वतंत्रता आन्दोलन के इतिहास में वर्ष 1917 एक सुनहरा पन्ना है। इस वर्ष अप्रैल माह में महात्मा गांधी के नेतृत्व में हुए चंपारण आन्दोलन में सत्याग्रह का प्रयोग जो आगे चलकर सम्पूर्ण राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलन का आधार बना। सत्य, अहिंसा तथा अंतरआत्मा की आवाज के आगे ब्रिटिश साम्राज्य घुटने टेकने को मजबूर हो गया और भारत 15 अगस्त, 1947 को आजाद हुआ।

गौरतलब है कि चम्पारण सत्याग्रह से पूर्व महात्मा गांधी दक्षिण अफ्रीका में बीस वर्ष तक वहां की गोरी सरकार की रंगभेद-नीति के विरुद्ध अहिंसात्मक संघर्ष की अगुवाई करके अपने सत्याग्रह वाली विचारधारा का सफल प्रयोग कर चुके थे। सत्याग्रह शब्द का उद्भव भी दक्षिण अफ्रीका में हुआ था। सत्य तथा अहिंसा पर आधारित सत्याग्रह का प्रयोग गांधी ने भारत में प्रथम बार चम्पारण की धरती पर किया था।

चम्पारण सत्याग्रह किसानों के हित में तथा अंग्रेजों द्वारा किसानों से गोरे नील बागबानों द्वारा जबरन नील की खेती कराने के खिलाफ शुरू किया था। चम्पारण के आंदोलन के इतिहास पर नज़र दौड़ाएं तो वर्ष 1914 चम्पारण के लिए काफी अशुभ रहा। इसकी वजह यह थी कि औद्योगिक क्रांति के उपरान्त नील की मांग बढ़ जाने के कारण ब्रिटिश सरकार ने भारतीय किसानों पर सिर्फ नील की खेती करने का दबाव डालना शुरू कर दिया। वर्ष 1916 में लगभग 21,900 एकड़ जमीन पर जिरात तथा तीन कठिया प्रथा लागू थी। चम्पारण से 46 प्रकार के कर वसूले जाते थे। और वह कर वसूली भी काफी बर्बर तरीके से की जाती थी। नील की खेती के खिलाफ चम्पारण के किसान राजकुमार शुक्ल की अगुवाई में चल रहे तीन वर्ष पुराने संघर्ष को 1917 में गांधी जी ने व्यापक आंदोलन का रूप दिया।

वर्ष 1916 में लखनऊ अधिवेशन में कांग्रेस ने एक प्रस्ताव पारित करके ब्रिटिश सरकार से निलहों के विरुद्ध एक जांच गठित करने का आग्रह किया था। 1916 में लखनऊ में हुए कांग्रेस के अधिवेशन में चम्पारण के एक किसान राजकुमार शुक्ल गांधी जी से मिले उन्हें चम्पारण के किसानों पर हो रहे अत्याचारों बारे अवगत करवाया व गांधी जी से स्वयं चलकर इसे देखने का आग्रह किया। गांधी जी ने उन्हें अगले वर्ष कलकत्ता अधिवेशन के वक्त मिलने तथा वादा किया कि वे अधिवेशन उपरान्त वहां से चम्पारण जाएंगे।

गांधी जी कलकत्ता अधिवेशन के उपरान्त कलकत्ता से पटना होते हुए मुजफ्फरपुर पहुंचे। उसके उपरान्त उन्होंने चम्पारण जिले के मुख्यालय मोतीहारी जाने का फैसला लिया।

अंग्रेज सरकार ने मुजफ्फरपुर प्रशासन के माध्यम से गांधी जी को कहा कि चम्पारण में सब कुछ सामान्य है। तथा वे मुजफ्फरपुर से शीघ्रातिशीघ्र बाहर चले जाएं। जब प्रशासन को उनके मोतीहारी जाने का पता चला तो उन्हें रास्ते में मैजिस्ट्रेट का एक नोटिस मिला,

जिसमें 24 घण्टे के भीतर चम्पारण छोड़ने का हुक्म दिया गया था। गांधी जी ने प्रशासन को जवाब दिया कि वे जिस कार्य के लिए आए हैं, उसके पूरा होने से पहले वापस नहीं जाएंगे। इस पर उन्हें सम्मन भेजकर जिला मैजिस्ट्रेट की अदालत में बुलाया गया और उन पर सरकारी आदेश की अवज्ञा का आरोप लगाया गया। गांधी जी ने बिना बहस के अपना अपराध स्वीकार कर लिया। अपने वक्तव्य में गांधी जी ने कहा कि वे मानवता तथा राष्ट्र की सेवा के लिए चम्पारण आए हैं। सरकार का आदेश उन्हें यहां के किसानों की सेवा करने के कर्त्तव्य से रोकता था, इसलिए उसकी अवज्ञा करना उनके लिए आवश्यक था। गांधी जी ने कहा कि सरकार के आदेश की अवज्ञा उन्होंने अपने जीवन के उच्चतर विचार, अंतरात्मा के आदेश का पालन करने के लिए की है और उसका परिणाम भुगतने के लिए वे तैयार हैं। अदालत में दिया गया उनका वक्तव्य देशभर में आग की तरह फैल गया। देशवासियों के मन को गांधी जी का वक्तव्य इस लिए छू गया कि वे अपनी अंतरात्मा की आवाज को सरकार के कानून से ऊपर मानते हैं। उनके इस वक्तव्य से चम्पारण जनपद के हजारों निवासी गांधी जी के दर्शनों के लिए उमड़ पड़े। गांधी जी और उनके सहयोगियों ने किसानों के आठ हजार ब्यान दर्ज किये। ब्रिटिश सरकार चम्पारण में गांधी जी की उपस्थिति से चिंतित हो उठी थी और उन्हें आशंका थी कि कहीं गांधी जी सरकार के खिलाफ ही सत्याग्रह न छेड़ दें। इसके दृष्टिगत होम मैंबर क्रेडाक की सलाह पर वायसराय ने बिहार के तत्कालीन गर्वनर एडवर्ड गेट को एक जांच समिति गठित करने की सलाह दी, जिसमें गांधी जी को सदस्य रखने की भी सिफारिश की गई। शीघ्र ही इस जांच समिति का गठन कर दिया गया। समिति में नील के गोरे ठेकेदारों का एक प्रतिनिधि, एक सरकारी कर्मचारी एक जमींदार और गांधी जी को रखा।

मध्य भारत के चीफ कमिश्नर को इस समिति का अध्यक्ष बनाया गया। रिपोर्ट तैयार कर गांधी जी को सुनाई गई। गांधी जी ने इस पर हस्ताक्षर करने से मना कर दिया। उन्हें अलग से सुझाव देने को कहा गया। गांधी जी ने तथ्यों के आधार पर रिपोर्ट लिखी। अंत में समिति की रिपोर्ट के आधार पर तीन कठिया पद्धति रद्द कर दी गई और नील कारोबार से जुड़े गोरों को किसानों से अनुचित रूप से ली गई रकम का एक भाग लौटाना पड़ा। इसके उपरान्त नील का कारोबार कर रहे गोरों को भारत छोड़ कर इंग्लैण्ड जाना पड़ा। गांधी जी को इस आन्दोलन में डॉ. राजेन्द्र प्रसाद, प्रो. जे.बी. कृपलानी, ब्रज किशोर बाबू और मौलाना मजहरुल हक जैसे महान नेताओं का सहयोग मिला। इस आंदोलन से जन सामान्य लोग हरवंश सहाय, राजकुमार शुक्ल और पीर मुहम्मद निकल कर सामने आए। चम्पारण सत्याग्रह महात्मा गांधी का आज से 100 वर्ष पूर्व भारत की धरती पर अहिंसा तथा सत्य का पहला प्रयोग था। इसने स्वतंत्रता आन्दोलन की सम्पूर्ण राह ही बदल दी। यह चम्पारण अंचल के किसानों की एक बड़ी जीत थी। गांधी जी ने इस अवधि में नील की खेती कर रहे किसानों की समस्या तक ही सीमित नहीं रखा। उन्होंने क्षेत्र के निवासियों के रहन-सहन में सुधार लाने और उनका आत्म सम्मान जगाने का भी प्रयास किया। किसानों के बयान लेने के काम से उनके जो सहयोगी मुक्त थे, उन्हें गांव-गांव जाकर शिक्षा का काम करने और किसानों को क्षेत्र की साफ सफाई रखने के प्रति जागरूक करने का जिम्मा सौंपा गया था। लोगों को अक्षर ज्ञान से लेकर, सफाई , कुटीर उद्योग, छुआ-छूत, जातिभेद मिटाने जैसे कार्यक्रमों को आगे बढ़ाया।



गांधी जी ने चम्पारण में 29 विद्यालय खुलवाए। मारवाड़ियों के यहां उन्होंने गौशालाएं देखीं, तभी से गौसेवा को उन्होंने अपने राष्ट्रीय आन्दोलन का अंग बनवाया। उन्होंने लोगों को बच्चों, स्त्रियों की रक्षा करने का भी संदेश दिया। गांधी जी का चंपारण आगमन एक युगांतकारी घटना साबित हुई। सत्य अहिंसा का यह प्रयोग कई मायनों में विलक्षण था। चम्पारण-सत्याग्रह में सहयोग करने वाले डॉ. राजेन्द्र प्रसाद ने पुस्तक 'द लास्ट फेज' की भूमिका में लिखा है, 'चंपारण पहुंचने पर गांधी ने जो पहला काम किया, वह था उनका यह एलान कि वे अंग्रेज बागान मालिकों को अपना दुश्मन नहीं समझते और उनका भला चाहते हैं। इस वाक्य से गांधी जी की अहिंसा, शत्रु भाव से रहित और मैत्रीभाव से युक्त विचारधारा का बोध होता है। यही विचारधारा आगे चल कर स्वतंत्रता आंदोलन का आधार बनी। इन्हीं विचारों, सत्य व अहिंसा के आदर्शों से वे गांधी से महात्मा गांधी बन गये।

आजाद हिंद फौज व भारत छोड़ो आंदोलन के 75 वर्ष

भारत छोड़ो आंदोलन में हिमाचली सूरमाओं का योगदान

● योग राज शर्मा

भारतीय स्वतंत्रता के इतिहास में अगस्त का महीना विशेष महत्त्व रखता है। अगस्त माह में न सिर्फ देश को आजादी मिली बल्कि अंग्रेजी हुकूमत के चंगुल से देश को आजाद करवाने का तानाबाना भी क्रांति के सूरमाओं ने इसी माह में बुना था। बात हो रही है भारत छोड़ो आंदोलन और आजाद हिंद फौज की। भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में अहम स्थान रखने वाली इन दो घटनाओं को घटे इस अगस्त महीने 75 साल हो गए हैं। समूचे देश ने भारत छोड़ो आन्दोलन की 75वीं वर्षगांठ बड़े हर्षोल्लास के साथ मनाई।

यूं तो देश के क्रांतिकारी सूरमाओं ने वर्ष 1857 के प्रथम स्वतन्त्रता संग्राम से ही देश को आजाद करवाने का शंखनाद कर दिया था। प्रथम स्वतंत्रता संग्राम ने अंग्रेजों को भारत से खदेड़ने के लिए अपना सर्वस्व न्योछावर कर दिया था। यह क्रांति मैदानों से लेकर पहाड़ों में स्थित अंग्रेजों की छावनियों तक फैली। तत्कालीन हिमाचल के जतोग, डगशई व कसौली में सैनिकों अंग्रेजों के खिलाफ बंदूक उठाई। सुबाथू में राम प्रसाद वैरागी ने एक गुप्त संगठन बनाया और क्रांति के लिए प्रोत्साहित किया। संगठन के सदस्यों ने गुप्त संदेशों के माध्यम से आम लोगों तक पहुंचाई। मंदिर, मस्जिद व गुरुद्वारे इस संगठन के गुप्त ठिकाने थे और संगठन के सदस्य साधु संतों और फकीरों के भेष में रहते थे। अंग्रेजी सरकार द्वारा संगठन के गुप्त पत्रों के पकड़े जाने पर क्रांतिकारी नेता राम प्रसाद बैरागी पकड़े गए और उन्हें फांसी की सजा दी गई। 1857 से लेकर 1900 तक देशभर में अंग्रेजों विरुद्ध आंदोलन चलते रहे।

इस दौरान कांग्रेस का गठन हुआ। लेकिन 20वीं सदी में गांधी जी के दक्षिण अफ्रीका से भारत लौटने पर स्वतंत्रता संग्राम को गति मिली। वर्ष 1942 के अगस्त महीने की 9 तारीख को राष्ट्रपिता महात्मा गांधी द्वारा आरंभ किए गए भारत छोड़ो आंदोलन ने देश भर में आजादी का ऐसा माहौल तैयार किया जिसने भारत में अंगेजी सरकार की चूलें हिला दी।

द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान ब्रिटिश सरकार को युद्ध में भारतीयों के सक्रिय सहयोग की आवश्यकता थी जिसे पाने के लिए ब्रिटिश सरकार ने केबिनेट मंत्री सर स्टैफोर्ड क्रिप्स के नेतृत्व में भारत भेजा। अपनी ब्रिटिश नीति के तहत क्रिप्स ने स्वतंत्रता आंदोलन से जुड़े नेताओं को मनाने की भरपूर कोशिश की। लेकिन वे इसमें सफल नहीं हुए और द्वितीय युद्ध की समाप्ति के बाद भारत को आजादी प्रदान करने से इनकार कर दिया। इससे गांधी जी को गहरा आघात लगा और भारतीय जनमानस और अधिक उग्र हो गया। उधर कांग्रेस ने भी देश को स्वाधीन करवाने के लिए सक्रिय उपाय अपनाने का फैसला किया। अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी की 8 अगस्त 1942 को मुंबई में हुई बैठक में भारत छोड़ो प्रस्ताव को स्वीकार किया गया और गांधीजी के नेतृत्व में एक अहिंसक जनसंघर्ष चलाने का निर्णय लिया गया।

8 अगस्त की रात को कांग्रेस प्रतिनिधियों को संबोधित करते हुए गांधीजी ने कहा -

"इसलिए मैं अगर हो सके तो तत्काल, इसी रात, प्रभात से पहले स्वाधीनता चाहता हूं--- आज दुनिया में झूठ और मक्कारी का बोलबाला है--आप मेरी बात पर भरोसा कर सकते है कि मैं मंत्रिमंडल या ऐसी दूसरी मांगों के लिए वायसराय से सौदा करने वाला नहीं हूं। मैं पूर्ण स्वाधीनता से कम किसी चीज से संतुष्ट होने वाला नहीं हूं-- अब मैं आपको एक छोटा सा मंत्र दे रहा हूं। आप इसे दिल में संजोकर रख लें और हर एक सांस में इसका जाप करें। वह मंत्र यह है करो या मरो! हम या तो भारत को स्वतंत्र करवाएगें या इसी प्रयास में मारे जाएंगे, मगर हम अपनी पराधीनता को जारी रहते देखने के लिए जीवित नहीं रहेंगे।"

लेकिन कांग्रेस आंदोलन चला सके, इससे पहले ही सरकार ने कड़ा प्रहार करते हुए गांधीजी सहित कांग्रेसी नेताओं को गिरफ्तार कर अनजान जगहों पर ले जाया गया। इन गिरफ्तारियों की खबर मिलने के उपरांत देश भर में जनाक्रोश फैला और हर जगह विरोध में आंदोलन उठ खड़ा हुआ। ब्रिटिश सरकार ने भी 1942 के आन्दोलन को कुचलने के लिए आंदोलनकारियों पर घोर अत्याचार किए और सरकार की क्रूरता इतनी अमानवीय थी कि आन्दोलन के दमन की कोई सीमा नहीं रही।

देश के अन्य भागों की भांति हिमाचली सूरमाओं ने भी भारत छोड़ो आंदोलन में बढ़-चढ़ कर भाग लिया। हिमाचल के पहाड़ी

क्षेत्रों जिनमें शिमला, ऊना, हमीरपुर, कांगड़ा धर्मशाला, कुल्लू, पालमपुर, नादौन, दौलतपुर, डलहौजी व नाहन शामिल थे, में 1942 की अगस्त क्रांति की खूब धूम थी। स्थानीय नेताओं ने लोगों को एकत्र कर विभिन्न स्थानों पर सभाएं की और अंग्रेजो भारत छोड़ो के नारों के साथ भारी जुलूस निकाले। इस आन्दोलन में शिमला में भागमल सौहटा, पंडित हरीराम, चौधरी दीवान चंद, सलिग राम शर्मा, नंदलाल वर्मा, तुफैल अहमद, ओम प्रकाश व संतराम आदि नेताओं को गिरफ्तार कर जेलों में डाला गया। इसी दौरान गांधी जी के भी जेल में बंद होने के कारण मुम्बई प्रकाशित होने वाली हरिजन पत्रिका का संपादन कार्य राज कुमारी अमृत कौर ने संभाला और और अपने निवास स्थान समरहिल से इस पत्रिका का प्रकाशन सफलतापूर्वक जारी रखा। अमृत कौर ने भारत छोड़ो आन्दोलन का नेतृत्व बड़ी सूझ-बूझ कर किया। इस आंदोलन के उपरांत भले ही भारत आजाद न हो पाया हो, लेकिन इसके पांच वर्ष बाद मिली आजादी की पटकथा 1942 के इस आंदोलन के दौरान ही लिख दी गई थी।

भारत छोड़ो आन्दोलन के दौरान शिमला में स्थानीय नेताओं के आंदोलन ने उग्र रूप धारण कर किया और क्रांति की योजना बनाई। इस योजना के पीछे नेताजी सुभाष चंद्र बोस की सशस्त्र क्रांति की अपील थी जो उन्होंने 1942 में आजाद हिंद फौज के गठन के बाद की थी। इसी काल में हिमाचल के हजारों राष्ट्रवादी सैनिक देश से बाहर भारत की आजादी के लिए सशस्त्र क्रांति की कोशिश में संलिप्त थे। पहली सितंबर, 1942 को नेताजी के नेतृत्व में बर्मा, सिंगापुर, थाईलैंड़, मलाया, इटली, जर्मनी जापान, ऑस्ट्रिया, फ्रांस, और लीबिया आदि देशों में आजाद हिंद फौज की स्थापना हुई। दक्षिण एशिया में रह रहे लगभग 30 लाख भारतीय नागरिकों ने आजाद हिंद फौज को अस्त्र-शस्त्र और धन प्रदान किए। हिमाचल के हजारों सैनिकों ने आजाद हिंद फौज में शामिल होकर देश को आजाद करवाने का प्रण लिया।

नेताजी के नेतृत्व में आजाद हिंद फौज ने जापान की सहायता से बर्मा के रास्ते भारत में अंग्रेजी सेना पर आक्रमण की योजना बनाई थी। अपनी मातृभूमि को स्वाधीन करवाने के विचार से प्रेरित होकर आजाद हिंद फौज के सैनिक अधिकारी यह आशा करने लगे थे कि वे स्वतंत्र भारत की अस्थायी सरकार का प्रमुख सुभाष चंद्र को बनाकर उनके साथ भारत में उसके मुक्तिदाताओं के रूप में प्रवेश करेंगे। अगस्त क्रांति के नाम से विख्यात ऐतिहासिक भारत छोड़ो आन्दोलन की 75वीं पूरे देश में धूमधाम से मनाई गई। देश भर में अपनी वीरता एवं शौर्य गाथाओं के लिए प्रसिद्ध हिमाचल प्रदेश में भी इस अवसर पर कांगड़ा जिला के धर्मशाला में समारोह का आयोजन कर भारत छोड़ो आन्दोलन के नायकों की स्मृति में युद्ध सग्रहालय का लोकार्पण और दाड़ी में स्वतंत्रता सेनानी स्मारक की आधारशिला रखी। धर्मशाला में 2190 वर्गमीटर क्षेत्र में फैले युद्ध संग्रहालय के बाहरी भाग में जनरल जोरावर सिंह और वीर नायकों के भित्ति चित्र प्रदर्शित किए गए है। जबकि इसके अंदर के भाग में वीरचक्र पुरस्कार विजेताओं जमादार बंधन राम तथा जमादार जाला की स्वर्ण पृष्ठभूमि में दीवार पर लिखी शौर्य गाथा को दर्शाया गया है। परमवीर चक्र तथा वीरचक्र विजेताओं में मेजर सोमनाथ शर्मा, मेजर धान सिंह थापा, कैप्टन विक्रम बत्रा, मेजर सुधीर कालिया व आनरेरी कैप्टन संजय कुमार को शामिल किया गया है।

इतिहास गवाह है, देश पर जब भी कोई विपत्ति आई, प्रदेश के बहादुर सैनिक देश के लिए सर्वस्व न्योछावर करने में पीछे नहीं हटे हैं।

आजाद हिंद फौज का अमर गीत

शुभ सुख चैन की बरखा बरसे, भारत भाग सुभागा,
पंजाब, सिंधः गुजरात, मराठा, द्रावड़ उत्तकल बंगा।
पंजल सागर विंदहिमालय, नीला जमुना गंगा॥
तेरे नित गुण गायें, तुझ से जीवन पायें, सब तन पाए आसा,
सूरज बन कर जग में चमके भारत नाम सुभागा।
जय हो, जय हो, जय हो, भारत नाम सुभागा॥
सबके दिल में प्रीत बसाए तेरी मीठी वाणी,
हर सूबे के रहने वाले, हर मजहब के प्राणी॥
सब भेद और फर्क मिटा के गादे में तेरी आ के,
गोंदे प्रेम की माला बे सूरज बन कर जग में चमके...
सुबह सबेरे पंख पखेरू तेरे ही गुण गाएं
बस भारी भरपूर हवाएं जीवन में रुत लाएं।
सब मिलकर हिंद पुकार जय आजाद हिंद नारा॥...

000

अमर हम संपूर्ण खिले गुलाब की खुशबू चाहते हैं तो हमें इसके साथ कांटों को भी अपनाना होगा। अगर हम प्रभात की मधुर मुस्कान चाहते हैं तो हमें रात के अंधेरे में गुजरना होगा। अगर हम स्वाधीनता का सुख और आजादी का आनंद चाहते हैं तो हमें इसकी कीमत चुकानी होगी और इसकी कीमत है तपस्या और बलिदान।

-नेता जी सुभाष चंद्र बोस

आलेख

पझौता आंदोलन और वैद्य सूरत सिंह

● भीम सिंह चौहान

हिमाचल प्रदेश में स्वाधीनता संग्राम को लेकर विभिन्न स्थानों पर कई आंदोलन हुए हैं। इसी तरह कई विद्रोह और बगावतें रियासती शासकों के अत्याचारों, अनाचारों के विरुद्ध भी समय-समय पर हुईं जिनमें सिरमौर रियासत में हुए 'पझौता आंदोलन' का स्थान अविस्मरणीय है। इस आंदोलन को 'पझौता गोली काण्ड', 'पझौता-किसान-आंदोलन', 'पझौता विद्रोह' आदि के नाम से भी जाना जाता है। सिरमौर रियासत के निरंकुश हुक्मरानों की दमनकारी नीतियों, कुप्रशासन और आम जनता के उत्पीड़न के विरुद्ध किया गया यह ऐसा संघर्ष था जो इतिहास के पन्नों पर अपनी अमिट छाप छोड़ गया। सन् 1942 ई. में जब सर्वत्र भारत में 'भारत छोड़ो आंदोलन' का शंखनाद गूँज रहा था उस समय पझौता क्षेत्र की जनता अपने ऊपर थोपे गए अनेकों करों और तत्कालीन सिरमौर रियासत के प्रशासकों द्वारा किए जा रहे उत्पीड़न से मुक्ति की बाट जोह रही थी। वस्तुनिष्ठ सत्य तो यह है कि लगभग सात महीने की लम्बी अवधि तक चले इस आंदोलन में 'पझौता किसान सभा' के नेताओं और आंदोलनकारियों ने रियासती सरकार के आदेश का सरेआम उल्लंघन किया था और पुलिस फोर्स व सरकारी अधिकारियों को पझौता क्षेत्र में काम नहीं करने दिया था। क्षेत्र में धारा 144 लगाई गई थी तथा आंदोलनकारियों की धर-पकड़ के लिए नगद इनाम और प्रशासन में नौकरी देने जैसे कई प्रलोभन दिए गए थे। यह आंदोलन इतना व्यापक बन गया था कि इसे कुचलने के लिए अंग्रेजी सेना की सहायता ली गई थी। पझौता पहुंचने पर तत्कालीन सेना के मेजर हीरासिंह बाम ने राजा को रिपोर्ट भेजी थी कि किसान सभा ने समानान्तर सरकार का गठन कर लिया है जिसके राजा चूंचू मियां, कमाण्डर गुलाबसिंह, मुख्य कमाण्डर कलीराम, जिला न्यायाधीश ध्यानसिंह पुलिस अधीक्षक पद्‌माराम, उप पुलिस अधीक्षक कुलगुराम और वनमण्डलाधिकारी सादिया बनाये गए हैं। मदनसिंह को परिषद् का अध्यक्ष तथा मेहरसिंह और रामदास सदस्य नियुक्त किए गए हैं। हालांकि यह संगठित लोगों द्वारा अपनी मांगों को मनवाने के लिए एक 'किसान सभा कार्यकारिणी' गठित की गई थी लेकिन इस बात को बढ़ा-चढ़ा कर बताया गया था। सिरमौर रियासत में यह पहला आंदोलन नहीं था इससे पूर्व भी निरंकुश वजीर दौलू मेहता के अत्याचारों से तंग आकर होकू मियां और सिंगटा ने रियासत के विरुद्ध संघर्ष का विगुल फूंका था जिन्हें धोखे से मरवा दिया गया था। इन वीरों की वीरता और बलिदान की गाथाएं हार, हारुल आदि के रूप में आज भी श्रद्धापूर्वक गाई जाती हैं यथा- ''देखे होकू उवो गिआ धोखा खाई, ईंट मारी बाणियांए लोउ लुआन गिआ हाई''। इसी तरह सन् 1878 ई. में रेणुका तहसील में हुआ पालवी आंदोलन की लोमहर्षित कहानी भी सुनने को मिलती है जिसमें अच्छबू और प्रीतम को कारागार में कठोर यातनाएं दी गई थी।

पझौता आंदोलन का श्रीगणेश रियासत में नियुक्त शासकों द्वारा लोगों के साथ किए जा रहे उत्पीड़न से हुआ और धीरे-धीरे इसमें 'निर्वाचित मन्त्रिमण्डल' की स्थापना करने, जबरन बेगार प्रथा को बन्द करने, फसलों के खुले व्यापार की छूट का कानून बनाने, रियासत के भ्रष्ट और अत्याचारी कर्मचारियों को बदलने, गाँवों में 'ग्राम सभा' तथा 'ग्राम पंचायत प्रथा' का संचालन जैसी प्रमुख बातों सहित नदियों पर पुलों का निर्माण, स्कूल, अस्पताल, डाकघर जैसी सुविधाएं गांव में मुहैया करवाने जैसी माँगे जुड़ती चली गईं। इस आंदोलन की अलख जगाने में वैद्य सूरत सिंह की उत्प्रेरक और अहम भूमिका रही है

पझौता आंदोलन का श्रीगणेश रियासत में नियुक्त शासकों द्वारा लोगों के साथ किए जा रहे उत्पीड़न से हुआ और धीरे-धीरे इसमें 'निर्वाचित मन्त्रिमण्डल' की स्थापना करने, जबरन बेगार प्रथा को बन्द करने, फसलों के खुले व्यापार की छूट का कानून बनाने, रियासत के भ्रष्ट और अत्याचारी कर्मचारियों को बदलने, गाँवों में 'ग्राम सभा' तथा 'ग्राम पंचायत प्रथा' का संचालन जैसी प्रमुख बातों सहित नदियों पर पुलों का निर्माण, स्कूल, अस्पताल, डाकघर जैसी सुविधाएं गांव में मुहैया करवाने जैसी माँगे जुड़ती चली गईं। इस आंदोलन की अलख जगाने में वैद्य सूरत सिंह की उत्प्रेरक और अहम भूमिका रही है

जिन्होंने अपनी सूझ-बूझ और कुशलता का प्रदर्शन करते हुए तत्कालीन रियासती सरकार को विभिन्न मांग पत्रों व संदेशों के माध्यम से जगाने का भरसक प्रयास किया था। किन्तु जब वह इसमें विफल रहे तो रियासत के विरुद्ध संघर्ष का मार्ग अपनाने का संकल्प लेकर क्षेत्र के लोगों को एकत्रित करके 'पझौता-किसान-सभा' का गठन किया था।

इतिहास इस बात का साक्षी है कि देश में रियासती शासकों के विरुद्ध जो भी आंदोलन, संघर्ष और बगावतें हुईं, उनका दमन करने के लिए शाही हुक्मरानों द्वारा विभिन्न प्रकार के हत्थकण्डे अपनाए गये और आंदोलनकारियों का उत्पीड़न करके संघर्ष को कुचलने के प्रयत्न किए गए। सिरमौर रियासत के शासकों द्वारा इस आंदोलन को कुचलने के लिए साम, दाम, दण्ड व भेद की नीति को अपनाते हुए जनता पर अनेक अत्याचार, अनाचार व दुराचार किए गए थे। गाँवों में घुसकर लूट-पाट व तोड़-फोड़ करना, भोले-भाले लोगों को धमकाना, किसानों की फसलों और घरों को आग लगाना व डायनामाइट से उड़ा देना जैसे अनेक अमानवीय जुल्म ढाकर क्षेत्र के लोगों को प्रताड़ित किया गया था। इन सभी के बावजूद जब आंदोलनकारियों की एकता और अखण्डता को नहीं तोड़ा जा सका तो रियासत के मातहतों और गुप्तचरों को सूचना देने वाले व्यक्तियों को नगद इनाम, नम्बरदारी, रियासती सरकार में नौकरी दिए जाने के प्रलोभन भी दिये गए थे। किन्तु इन सब ज्यादतियों से पझौता का वीर रक्त कदाचित विचलित नहीं हुआ और एकता और अखण्डता की मिसाल कायम की हुए उन्होंने पुलिस व सेना से सीधी टक्कर लेकर रियासती शासन से अपनी माँगों को मनवाने के लिए पूरे आंदोलन के दौरान दबाव बनाये रखा। आंदोलनकारियों ने अपने संघर्ष की रणनीति को मजबूत करते हुए गाँव-गाँव में कैम्प स्थापित किए और उनमें सतर्कता, गुप्तचर व्यवस्था तथा 'धा' (आवाज) के माध्यम से संचार व्यवस्था का सुव्यवस्थित प्रबन्ध किया था। यहां तक कि पुलिस के अधिकारियों और जवानों को अपने कब्जे में लेकर रियासती शासकों को यह आभास दिलाया था कि पझौता के वीर किसी के आगे झुकने वाले नहीं हैं और अपने प्राणों की आहुति देने को तत्पर हैं।

रियासती पुलिस द्वारा इस विद्रोह को नियन्त्रित करने में विफल होने पर तथा महाराजा पटियाला द्वारा प्रेषित रिपोर्ट को कांग्रेस के 'करो या मरो' से सम्बन्धित होने की गुप्त रिपोर्ट के आधार पर रियासत सिरमौर को ब्रिटिश

कविता

जेल का खेल

वैद्य सूरत सिंह

हिमाचल प्रदेश के स्वतंत्रता संग्रामों में 'पझौता आंदोलन' का एक प्रमुख स्थान है। सिरमौर राज्य में इसे गदर की संज्ञा दी गई थी। वैद्य सूरत सिंह जी उसके मुख्य संचालक रहे हैं। उन्होंने कारावास में रह कर देशभक्ति की कविताएं लिखीं। उनकी एक कविता जिसका प्रकाशन हिमप्रस्थ प्रथम अंक में हुआ था, को प्रकाशित किया जा रहा है।

हमारी प्यारी जेल ने,
अपने वतन के वासते,
मुसीबत ज़दों के वासते,
शैदा हमें बना दिया॥

मालिक, तेरे दरबार ने
बेड़ियों की झनकार ने,
तसलों की ठनकार ने,
मतवाला हमें बना दिया॥

कैसी अजब बहार है,
मुसीबतों की भरमार है,
ज़ुल्मी तेरा संसार है,
पर, हंसना हमें सिखा दिया॥

ज़ुल्मों की सरकार ने,
गोलियों की बौछार ने,
मुसल्लाह पुलिस की मार ने,
मरना हमें सिखा दिया॥

सताता अगर सय्याद ना,
आती वतन की याद ना,
लगती ये दिल पे आग ना,
जिसने हमें जला दिया॥

आया कभी सय्याद गर,
ओ, पूछ ली, फरियाद गर,
कहते हैं- दिल में याद कर,
कि तूने, हमें मिटा दिया॥

पूछा अगर, 'कसूर है?
कहते हैं हम, 'ज़रूर है,
इश्के-वतन का नूर है,
जिसने हमें जगा दिया॥

गलना, सिखाया बीज ने,
पिसना, हिना सी चीज़ ने,
जलना पंगत-शहीद ने,
रोना हमें मना किया॥

काली कमलिया ओढ़ के,
सींकचों का दर जोड़ के,
अशरतों से मुख मोड़ के,
दीवारों से दिल लगा दिया॥

दिल पै लगी इक चोट है,
सींकचों की फिर, ओट है,
जमाने की लोट-पोट है,
जिसने ये गुल खिला दिया॥

पझौता आंदोलन का संकल्प

- रियासत में प्रजातांत्रिक ढंग से निर्वाचन प्रणाली द्वारा मंत्रिमंडल की स्थापना।
- महिला समाज पर रीत टैक्स को हटाना
- आलुओं के व्यापार में सहकारिता के नाम पर किसानों के शोषण की समाप्ति
- कंट्रोल गल्ला के बहाने रियासत के किसानों के साथ की जा रही ज्यादतियों की समाप्ति
- पशु कर, छोलू घास, घराट टैक्स की समाप्ति

सरकार की मदद मिल चुकी थी। मेजर हीरा सिंह बाम के नेतृत्व में मई, 1943 में सेना की एक टुकड़ी राजगढ़ किले में तैनात कर दी गई थी। उधर इस खबर की भनक आंदोलनकारियों को भी लग चुकी थी तथा उन्होंने भी अपनी सरगर्मियों को तेज करते हुए अपने बथाऊ, खेड़ा और पालू की धारों पर स्थापित अपने कैम्पों में अपनी रणनीति सुदृढ़ कर ली थी। सेना के क्षेत्र में तैनात होने की सूचना से लोग काफी घबरा गए थे तथा इस बात की चर्चा इलाके में जोरों पर थी। सेना के कमाण्डर ने सन् 1943 ई. को 'इतला आम' शीर्षक से एक इश्तहार जारी कर क्षेत्र में धारा 144 लगा दी थी तथा अपने युद्ध कौशल के अनुसार गांव की जनता को परेशान करने के उद्देश्य से लोगों के घरों में लूटपाट करनी आरम्भ कर दी थी। 21 मई, 1943 को सेना ने कटोगड़ा में वैद्य सूरत सिंह के मकान में लूट-पाट की तथा उनके मकान को डायनामाइट से ध्वस्त कर दिया। इस घटना के बाद भी आंदोलनकारियों का मनोबल नहीं तोड़ा जा सका। पझौता आंदोलन के इतिहास में 11 जून, 1943 का वह काला दिन आया जब सेना ने आंदोलनकारियों को हताहत करने के उद्देश्य से गांव टालियां, कोट-कोलथ और सरोट गांवों में अपनी सैनिक टुकड़ियां तैनात कर इन तीनों स्थान के मध्य पड़ने वाले गांव कोटी में कलीराम और चेतसिंह के मकान में आग लगा दी। इस घटना की सूचना मिलने पर अपने-अपने कैंपों से जैसे ही आंदोलनकारी कोटी गांव की तरफ दौड़े तो सेना के सैनिकों ने निहत्थे आंदोलनकारियों पर चारों ओर से गोलियों की बौछार आरम्भ कर दी। इस कार्रवाई में कुल सत्रह राऊण्ड गोलियां फायर की गई जिसमें कटोगड़ा निवासी कमनाराम के माथे पर गोली लगने से वह वहीं पर ढेर हो गए और स्वर्ग सिधार गए। कुफ्फर गांव के मेहता तुलसी राम के टांग में गोली आर-पार हो गई थी और डरेणा के जातीराम, पालू के हेतराम, नेरी के कमाल चन्द, देवठी मझगांव के सहीराम तथा ठाणाधार के चेतराम और ठाणा के चेतसिंह इस गोलाबारी में बुरी तरह से जख्मी हो गए थे। यही 11 जून का दिन इतिहास में पझौता गोलीकाण्ड के नाम से दर्ज हो गया जिसे प्रत्येक वर्ष हाब्बन में श्रद्धापूर्वक मनाते हुए आंदोलनकारियों को श्रद्धांजलि देकर उन्हें याद किया जाता है।

पझौता आंदोलन कोई सामान्य विद्रोह नहीं था अपितु यह रियासती सरकार के विरुद्ध खुली बगावत थी। हालांकि यह सच्चाई के मार्ग पर चलाया गया आंदोलन था किन्तु रियासत द्वारा 'पझौता किसान-सभा कार्यकारिणी' को समानान्तर सरकार की संज्ञा देकर आंदोलनकारियों पर चलाए गए मुकदमों में रियासत के विरुद्ध षड्यंत्र और बगावत करने के आरोप भी शामिल किये गये थे। इस संघर्ष की विशेषता यह भी रही कि क्षेत्र के सभी वर्ग, जाति के लोगों ने आपसी मतभेद भुलाकर इसमें अपना भरपूर योगदान दिया था और कारागार में तथा कारागार से बाहर रहते हुए अनेक अमानुशिक यातनाएं और अत्याचार झेले।

वैद्य सूरत सिंह पझौता आंदोलन के भुक्तभोगी, संचालक व पथप्रदर्शक रहे हैं। उन्होंने अपना तन-मन-धन इस आंदोलन के लिए समर्पित किया था। उनकी माता का नाम मुन्नी देवी और पिता देवी सिंह थे। उनका जन्म 10 मार्च, 1912 को जिला सिरमौर के गाँव टिक्कर कटोगड़ा, राजगढ़, में हुआ था। उनकी प्रारम्भिक शिक्षा गुरुकुल 'फागू' सिरमौर में हुई थी। इसी गुरुकुल से संस्कृत शिक्षा का ज्ञान अर्जित करते हुए पंजाब विश्वविद्यालय लाहौर से संस्कृत प्राज्ञ-विशारद परीक्षाएं उतीर्ण कीं। ऋषिकेश में रहकर भारतीय आयुर्वेद विद्यापीठ बीकानेर और कानपुर से आयुर्वेद विशारद और आयुर्वेदाचार्य प्रथम श्रेणी में उतीर्ण की। ऋषिकेश में आयुर्वेदाध्ययन करते हुए वह राष्ट्रीय नेताओं के सम्पर्क में आए और उनके विचारों से प्रभावित होकर अपना जीवन राष्ट्रहित चिन्तन में समर्पित कर दिया। छात्र जीवन के दौरान ही गांधी जी द्वारा प्रचारित 'विदेशी वस्त्रों की होली जलाने' व 'शराब के ठकों पर पिकेटिंग' आदि गतिविधियों से राजनीति में पहला कदम रखा। उन्होंने सन् 1930 में खादी पहनने का संकल्प लिया और इस पर दृढ़ रहते हुए जीवन पर्यन्त खादी वस्त्र धारण किए। रियासत सिरमौर में प्रजामण्डल की स्थापना होने पर पूर्णरूपेण इस आंदोलन



में कूद पड़े तथा अपने इलाके में इसका खुलकर प्रचार करते रहे। पझौता आंदोलन के दौरान दो बार गिरफ्तार हुए थे। पहले 1936 ई. में जब उन पर झूठे आरोप लगाकर उन्हें धारा 353 के अन्तर्गत गिरफ्तार करके सराहां जेल में रखा गया था।

इस अवसर पर लोगों द्वारा एकता की मिसाल कायम करते हुए जत्थों के रूप में लोगों को सराहां भेजकर वैद्य जी की रिहाई का मार्ग प्रशस्त किया गया था। अंततः जनता के दबाव को देखते हुए रियासती प्रशासन को झुकना पड़ा था और ग्यारह दिनों तक जेल में रखने के बाद उन्हें रिहा किया गया था। उनकी इस गिरफ्तारी को 'पझौता आंदोलन' के सूत्रपात के कारण के रूप में भी माना जाता है।

उन्होंने सन् 1942 से 11 जून, 1943 तक 'पझौता' आंदोलन' का नेतृत्व किया। रियासती सरकार द्वारा चलाए गए मुकदमें में उन्हें 1943 में आजीवन कारावास तथा कालेपानी की सजा सुनाई गई और 17 मार्च, 1948 को लम्बे कारावास के बाद मुक्ति मिली। वह शिक्षित, विद्वान, सिद्धान्तवादी, दूरदर्शी, निडर और साहसी व्यक्ति थे। इनकी घुड़सवारी और तैराकी में विशेष रूचि थी।

विषम परिस्थितियों में रहते हुए भी उन्होंने इस आंदोलन को विफल नहीं होने दिया और जंगलों और गुफाओं में रहकर असंख्य कठिनाइयों को झेलते हुए वह तब तक अपने दायित्व के प्रति समर्पित रहे जब तक उन्हें गिरफ्तार नहीं कर दिया गया। जेल में भी वह चुप नहीं बैठे रहे उन्होंने कैदियों को सोने, खाने-पीने की सुविधाएं मुहैया करवाने के लिए उन्होंने भूख हड़ताल की थी और जेल प्रशासन की अनेक यातनाएं सहीं। आंदोलन का मुख्य संचालक होने के कारण उन्हें आजीवन कारावास की सजा हुई थी तथा देश के स्वतन्त्र हो जाने पर अपने दो साथियों के साथ सबसे अन्त में जेल से रिहा हुए थे।

वैद्य जी दो बार विधायक, दो बार खादी एवं ग्रामोद्योग बोर्ड के अध्यक्ष, हिमाचल प्रदेश स्वतन्त्रता सेनानी कल्याण बोर्ड के उपाध्यक्ष तथा भूदान बोर्ड के अध्यक्ष रहे। वह पहाड़ी, हिन्दी, संस्कृत, अंग्रेजी, उर्दू भाषाओं के जानकार तथा उच्च कोटि के साहित्यकार, लोक संस्कृति के प्रबल पोशक थे। उनके द्वारा रचित जेल गीत काफी प्रचलित रहा। त्याग और बलिदान इनके जीवन में कूट-कूट कर भरा था इसका प्रमाण इससे मिलता है कि पच्छाद विधान सभा क्षेत्र से एक बार निर्विरोध निर्वाचित होने के बाद दूसरी बार डॉ. परमार के लिए अपने विधान सभा क्षेत्र का त्याग करके शिलाई निर्वाचन क्षेत्र से चुनाव लड़ा।

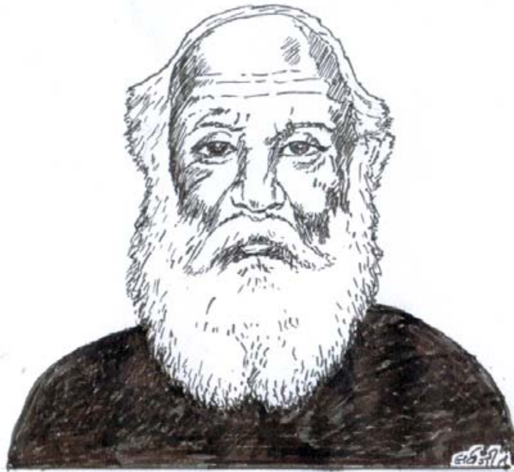
समाज में व्याप्त विषमताओं यथा- छुआछूत, सुरापान, गरीबों का शोषण, विवाहादि समारोह में फिजूलखर्ची, जातिप्रथा, बलिप्रथा आदि के प्रबल विरोधी रहे। पहाड़ी संस्कृति के उत्थान के लिए उन्होंने 29 नवम्बर, 1970 को पहाड़ी कलाकार संघ' की स्थापना की थी। उन्होंने कई लोकगीत भी लिखे। वह उच्च कोटि के गायक व नर्तक थे। जीवन पर्यन्त सादा जीवन उच्च विचार के आदर्श को अपनाते हुए क्षेत्र व प्रदेश के विकास के लिए तत्पर रहे। 30 अक्तूबर, 1992 को उनका देहावसान हो गया।

सहायक निदेशक, भाषा एवं संस्कृति विभाग,
हिमाचल प्रदेश, शिमला-171 009

आलेख

पहाड़ी गांधी बाबा कांशी राम के लेखन से कांप उठती थी अंग्रेज सरकार

● विवेक शर्मा



क्रांतिकारी गीतों, तरानों ने भारतीयों में आजादी का जोश भरा। भगतसिंह, राजगुरु और सुखदेव ने लाहौर जेल में फांसी के तख्ते की ओर बढ़ते हुए अपने लबों से वे तराने गाये जिससे देशवासियों में नया जोश भरा।

'दिल से न निकलेगी मरकर भी वतन की उल्फत
मेरी मिट्टी से भी खुशबू-ए-वतन आएगी।'

इन देशभक्तों की शहादत पर देशभर में आक्रोश फैला। इन राष्ट्र भक्तों की कुर्बानियां अनेकों के लिए प्रेरणा स्रोत बनी। गीत तथा तरानों ने देशवासियों का मनोबल तथा राष्ट्र भक्ति की नई चेतना जगाई। पहाड़ के निवासियों को भी इन घटनाओं तथा स्वतंत्रता आंदोलन ने प्रेरित किया। 11 जुलाई, 1882 को कांगड़ा जिले के डाडासीबा में लखनु शाह तथा माता रेवती के घर जन्में कांशीराम के मानस पटल पर भी भगतसिंह, राजगुरु तथा सुखदेव को मिली फांसी ने प्रभावित किया। वे इन राष्ट्र भक्तों की फांसी से इतने व्यथित हुए कि आजादी मिलने तक काले वस्त्र धारण करने का प्रण लिया। इस प्रतिज्ञा से वे स्याहपोश जनरैल कहलाए।

आजादी के दिवानों को सलाम

डाडासीबा में पैतृक निवास बनेगा स्मारक

देश स्वतंत्र्ता सेनानियों का ऋणी है, जिन्होंने अपना सर्वस्व हम सभी के लिए न्योछावर किया।

स्वतंत्रता सेनानी कांशीराम ने 13 वर्ष की आयु में अपने माता-पिता को खो दिया। 1905 में कांगड़ा घाटी में आए भूकम्प में उनके मन पर गहरा प्रभाव डाला। इस त्रासदी में बेसहारा व असहाय लोगों की मदद में उन्होंने सक्रिय भूमिका निभाई।

1919 में जलियांवाला हत्याकांड के उपरान्त उनके भीतर का कवि हृदय जागृत हुआ। उन्होंने महात्मा गांधी के संदेश को अपनी कविताओं व गीतों के माध्यम से पहाड़ी भाषा में प्रसारित किया। पहाड़ी कविताओं और छंदों के माध्यम से ब्रिटिश राज के विरुद्ध देशभक्ति का संदेश फैलाने के लिए 11 बार जेल गये और जीवन के 9 वर्ष जेल में बिताए।

1920 में पहली बार जेल गये। लाला लाजपतरा, लाल हरदपाल, सरदार अजीत सिंह और मौलवी बरकतउल्ला के सम्पर्क में आने के उपरान्त उनके जीवन का लक्ष्य ही बदल गया।

11 नवम्बर, 1922 को जेल से रिहाई मिली लेकिन कविता लिखना नहीं छोड़ा। उनका साहित्य के प्रति प्रेम तथा लेखन के माध्यम से लोगों को अंग्रेजों की यातनाओं का बखान करना निरन्तर जारी रहा। जलियांवाला हत्याकाण्ड के उपरान्त उन्होंने महात्मा गांधी के संदेश को कविताओं तथा गीतों के माध्यम से पहाड़ी भाषा में जन-जन तक पहुंचाया।

1934 में देश की महान कवयित्री एवं स्वतंत्रता सेनानी सरोजनी नायडू ने उन्हें बुलबुल-ए-पहाड़ का खिताब दिया। 1937 में 'पंडित जवाहर लाल नेहरू ने होशियारपुर के गड़ढीवाला में आयोजित कांग्रेस की सभा में नवाजा। उन्हें पहाड़ी गांधी की उपाधि देकर नवाजा।

पूर्व प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने उनके नाम पर डाक टिकट जारी किया। यह डाक टिकट पहाड़ी गांधी बाबा कांशी राम के राष्ट्र के प्रति सेवाओं का सम्मान था।

'स्याहपोश' की दहाड़

लाहौर सेंट्रल जेल में खासी हलचल थी। उस रोज का मुख्य समाचार था- 'स्थानीय जेल के राजनैतिक बंदी भूख हड़ताल पर'।

शहर में इस बात की चर्चा चल रही थी। जेल मे दारोगा रहमतुल्ला खां परेशान थे। वह एक बा-असूत अफसर रह चुके थे। फिरंगी हाकिमों के वफादार सेवक थे और विश्वास पात्र भी।

इधर उन्हें कुछ अजब ढंग के बंदियों से वास्ता आन पड़ा था। कारावास की निर्जीव, प्रशांत दीवारें बंदियों में रोष प्रदर्शन के कारण आज अचानक मुखर हो उठी थीं।

"यह खाना वापिस ले जाओ... हमारी मांगें पूरी करो... इन्कलाब... जिंदाबाद।"

और दरोगा का दिमाग यह सब सुनते-सुनते केतली में उबलते जल की तरह खौल उठा। विद्रोही कैदियों को डांट पिलाने के उद्देश्य से खां साहब चिंघाड़ने लगे-

"जेल के कायदे, कानून ताक पर नहीं रखे जाएंगे। तुम सब लोग अपराधी हो, तुम्हें यहां मौज-मस्ती या मनमानी करने नहीं भेजा गया है। इधर तुम कोई साजिश..."

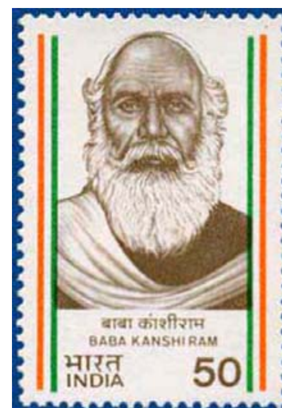
दरोगा साहब कुछ और कहते, तभी बैरक नं. 7 में से एक गंभीर स्वर सुनाई पड़ा। खान साहिब को लगा मानो कहीं से कोई शेर गरजने लगा हो।

"...दारोगा महोदय, आपकी जेल व्यवस्था को पलटने का हमारा कोई इरादा नहीं है। हमारा लक्ष्य बहुत महान है... बहुत पवित्र है। हम आज़ादी रूपी शमा के परवाने हैं...।"

...आपको मालूम ही है कि मैंने 'स्याहपोश' रहने की सौंगध खाई है... जब तक गुलामी के जुआ हमारे कंधों से नहीं उतर जाता... जब तक हम आज़ाद नहीं ही जाते ... मैं इसी काले लिबास में रहना पसंद करूंगा। आप हमारी यह उचित मांग कबूल कर लीजिए... बंदी अनशन तोड़ देंगे...।"

बात तूल पकड़ गई और अंततः जेल विभाग के मंत्री सर मनोहर लाल को हस्तक्षेप करना पड़ा। वे बंदियों से मुलाकात को जेल आए और 'स्याहपोश' जरनैल से मिलकर प्रभावित भी हुए और आखिर यह आज्ञा दे गए कि उक्त बंदी को उसकी मनपसंद पोशाक में रहने दिया जाए।





वे लम्बे अरसे तक देश की आजादी के लिए लड़ते रहे। अपनी कविताओं से उन्होंने पहाड़ के निवासियों को जागरूक किया। जब स्वतंत्रता आन्दोलन अपनी चरम सीमा पर था तो 15 अक्तूबर, 1943 को उन्होंने अन्तिम सांस ली। वे भारत को स्वतंत्र होते देख नहीं सके लेकिन उन जैसे देशभक्तों की कुर्बानियों का ही नतीजा है कि देश 15 अगस्त, 1947 को आजाद हुआ।

आज की युवा शक्ति तथा आने वाली पीढ़ियों को पहाड़ी गांधी के स्वतंत्रता आन्दोलन में दिए गये योगदान को तरोताजा रखने के लिए सरकार ने उनकी 135वीं जयन्ती पर उनके पैतृक आवास को अधिग्रहण करने का निर्णय लिया है। इस घर के संरक्षण तथा उनकी स्मृति में बनने वाली स्मारक हम सभी को राष्ट्रभक्ति की याद तथा देश सेवा के प्रति सदैव समर्पित रहने का संदेश देगा।

वर्तमान प्रदेश सरकार का यह प्रयास सराहनीय है जिसकी प्रशंसा प्रदेश में ही नहीं बल्कि देशभर में हुई है। इस वर्ष स्वतंत्रता दिवस पर हिमाचल प्रदेश सरकार का स्वतंत्रता सेनानियों के प्रति सम्मान तथा उनकी सेवाओं को अधिमान देने के लिए यह स्मारक एक तोहफा है।

उप संपादक, गिरिराज साप्ताहिक, शिमला-171 005

आलेख

विभाजन : कांगड़ा और एक मसीहा

● डॉ. उषा बंदे

15 अगस्त 1947!

भारत आजाद हुआ था। खुशी की एक लहर पूरे देश में उमड़ पड़ी थी पर साथ ही विभाजन की हिंसा दावानल की भांति फैल गई थी। देश का उत्तरी भाग इस आग में झुलस रहा था परंतु कांगड़ा शांत था। धर्मशाला के योल कैंट के अपने दफ्तर में बैठा एक युवा लेफ्टिनेंट, लेस्ली निक्सन, खबरों का जायजा ले रहा था। इस प्रकार की हिंसा की उसने कभी कल्पना भी नहीं की थी।

"भारत के लोग तो सहिष्णु है," वह सोच रहा था, "फिर यह सब क्यों?" भाईचारे, स्नेहभाव और आपसी मेल-जोल से रहनेवाले इन लोगों की सहिष्णुता पर उसे विश्वास था, पर यह विश्वास पूरी तरह डगमगा गया जब कांगड़ा में भी धुआँ उठने लगा। कई घर जले, कई लोग विस्थापित हुए, कई घायल हुए। इधर योल कैंट रिफ्यूजी कैंप में बदल दिया गया और गोरखा राइफल्स के लेफ्टिनेंट निक्सन को एक निष्पक्ष शांतिदूत का काम करने की जिम्मेदारी सौंपी गई।

1947 में कांगड़ा-धर्मशाला भागों में संचार व्यवस्था बहुत अच्छी नहीं थी परंतु फिर भी दिल दहलानेवाली खबरें हर ओर से आ रही थीं। रेड्क्लीफ (Radcliff) ने अपनी पेंसिल से लकीर खींचकर विभाजन में गुरदासपुर की तीन मुस्लिम-बहुल तहसीलों को पूर्वी पंजाब को अर्थात पाकिस्तान को दिया था और पठानकोट का हिन्दू-बहुल भाग भारत के पास आ गया था। आज के उत्तरी हिमाचल से (जो उस समय पंजाब का भाग था) जो मुस्लिम परिवार पाकिस्तान जाना चाहते थे उन्हें पूरी सुरक्षा देना आवश्यक था।

इन परिवारों को सुरक्षित ट्रक या रेलगाड़ी में बिठाने का जोखिम भरा काम लेस्ली निक्सन को करने के आदेश थे। गुस्साई भीड़ से बचाकर इन लोगों को अलग-अलग क्षेत्रों से इकट्ठा करना और धर्मशाला के मार्ग से नगरोटा रेलवे स्टेशन तक ले जा कर पठानकोट की गाड़ी में बिठाना, या मिलिट्री के ट्रकों में भरकर अमृतसर तक ले जाना आसान नहीं था।

उस समय लेफ्टिनेंट लेस्ली निक्सन केवल 22 वर्ष के थे। जिम्मेदारी बड़ी थी फिर भी सेना के जवान थे और आदेश का पालन अनुशासन से करने की ट्रेनिंग थी। काम सुचारु रूप से चल रहा था पर कई बार जाने-अनजाने कुछ ऐसी परिस्थिति आ जाती है जिसके लिए मनुष्य तैयार नहीं होता। अपनी बेटी के साथ बातचीत में निक्सन ने एक ऐसी घटना का उल्लेख किया है जब वे उन तीन मुस्लिम महिलाओं को बचा न सके जिन्हें बच्चों सहित बचाने के लिए वे गए थे। मुसीबत में फंसी उन तीन महिलाओं ने मिलिटरी ड्रेस में जब निक्सन और उनके गोरखा सिपाहियों को आते देखा तो तीनों डर, बेइज्जती के भय से घबराकर तीनों अपने बच्चों सहित कुएँ में कूद गईं। निक्सन तथा उनके सिपाहियों ने उन्हें निकालकर बचाने का भरसक प्रयास किया पर वे असफल रहे। इस घटना की पीड़ा को वह आजीवन भुला न सके।

लेस्ली निक्सन भारत तथा यहाँ के लोगों की मानसिकता से भली-भांति परिचित थे क्योंकि निक्सन परिवार लगभग चार पीढ़ियों से भारत में रह रहा था। लेस्ली के पड़-दादा, दादा तथा पिता रेलवे में ऊंचे ओहदों पर रहे थे और अधिकतर भुसावल में ही रहे थे। भुसावल महाराष्ट्र में स्थित रेलवे का बड़ा जंक्शन था (आज भी है) और लेस्ली और उनके भाई-बहन सब वहीं पढ़े और बड़े हुए थे, माता-पिता के साथ क्लब में जाते थे, भारतीय बच्चों से उनका काफी मेल-जोल था जिनके साथ खेलते थे जबकि अन्य ब्रिटिश अफसर लोग अपने बच्चों को भारतीय बच्चों के साथ खेलने नहीं देते थे। आजादी के कई वर्षों बाद भारत में आई लेस्ली निक्सन की बेटी देबोराह निक्सन (Deborah Nixon) ने अपने संस्मरण में भुसावल जाकर अपने पिता के बचपन के मकान और दादा, पड़-दादा की कब्रों को देखकर लिखा है कि निक्सन परिवार का भारत के साथ एक अजीब-सा स्नेह-संबंध रहा है। स्वतन्त्रता के बाद लेस्ली शायद यहीं रहते परंतु विभाजन के खून खराबे से वे इतने क्षुब्ध हो गए थे कि उन्होंने भारत सदा के लिए छोड़ दिया और ऑस्ट्रेलिया में जा बसे।

उपरोक्त बचाव कार्य लगभग चार महीने तक जारी रहा। लेस्ली निक्सन दिन-रात लगाकर पूरी निष्ठा एवं कर्तव्य परायणता से सुरक्षा कार्यों में जुटे थे। शरणार्थी कैंप में चल रहे हाहाकार, सदियों से बसे घर-बार छोड़ने का दुख, अपना शहर, अपना गाँव

कांगड़ा-धर्मशाला में हिंसा की वारदातें अन्य भागों से कम अवश्य थीं परंतु इस शांत क्षेत्र में जहां केवल प्रकृति की सुंदरता हो, झर-झर चलते खड्ड, स्वच्छ पानी के कूल, ऊपर मुस्कुराता धौलधार हो वहाँ कुरूपता का भला क्या काम? परंतु समय ही ऐसा अमानुषी था। अपनी बेटी को आपबीती सुनाते वक्त उन्होंने कहा है, "मेरी कहानियाँ इतिहासकारों की कहानियों से भिन्न हैं। जो इतिहासकार इतिहास लिखते हैं उन्होंने कभी गुस्से में गोली चलते- चलाते नहीं देखी होती। मैं तो शरणार्थियों के बीच था जब हम पर गोलियां बरसीं, हमारी गाड़ियों पर कटारें आईं, पर हमने उन्हें सुरक्षा देने में कमी नहीं की।"

छोड़ने की पीड़ा और अन्य नाते-रिश्तेदारों की चिंता आदि से योल कैंट का वातावरण बोझिल हो गया था। जख्मी शरणार्थियों का उपचार कैंट अस्पताल में केनडा से आई मिशनरी नर्सें कर रही थीं। उधर जो लोग स्वस्थ थे और सफर करने के योग्य थे उन्हें ट्रकों में ले जाया जा रहा था। इन चार महीनों में लेस्ली निक्सन धर्मशाला-नगरोटा-पठानकोट के बीच लगातार आते-जाते रहे और हर बार जान मुट्ठी में होती।

कांगड़ा-धर्मशाला में हिंसा की वारदातें अन्य भागों से कम अवश्य थीं परंतु इस शांत क्षेत्र में जहां केवल प्रकृति की सुंदरता हो, झर-झर चलते खड्ड, स्वच्छ पानी के कूल, ऊपर मुस्कुराता धौलधार हो वहाँ कुरूपता का भला क्या काम? परंतु समय ही ऐसा अमानुषी था। अपनी बेटी को आपबीती सुनाते वक्त उन्होंने कहा है, "मेरी कहानियाँ इतिहासकारों की कहानियों से भिन्न हैं। जो इतिहासकार इतिहास लिखते हैं उन्होंने कभी गुस्से में गोली चलते-चलाते नहीं देखी होती। मैं तो शरणार्थियों के बीच था जब हम पर गोलियां बरसीं, हमारी गाड़ियों पर कटारें आईं, पर हमने उन्हें सुरक्षा देने में कमी नहीं की।"

सर्वविदित है कि देश की स्वतन्त्रता और देश का विभाजन एक दूसरे के साथ-साथ ही आए। एक ओर खुशी की लहर और दूसरी ओर विभाजन की धधकती आग! इतना विरोधाभास था कि पंडित नेहरू ने 14 अगस्त 1947 की मध्य-रात्रि को दिये अपने प्रसिद्ध 'ट्राइस्ट विथ डेस्टिनी' (Tryst with Destiny) भाषण में खुशी और जिम्मेदारी का जिक्र करते हुए यह भी कहा था, "हम हमारे उन भाइयों और बहनों के लिए भी चिंतित हैं जो राजनीतिक सीमाओं के कारण हमसे कट गए हैं और जो दुर्भाग्यवश वर्तमान में मिली स्वतन्त्रता को साझा नहीं कर सकते हैं। चाहे कुछ भी हो जाए वे हमारे हैं और हमारे रहेंगे, हम उनके अच्छे या बुरे वक्त को समान रूप से साझा करेंगे।"

इस तरह की प्रतिज्ञाओं को पूरा करने वाले कुछ ऐसे अज्ञात लोग भी इस देश में थे जिन्होंने जान की परवाह किए बिना इन मुसीबत के मारे लोगों को बचाया और मसीहा बनकर उनके दर्द को कम करने का प्रयास किया, चाहे वे किसी भी धर्म या जाति के रहे हों। आखिर मानवता तो एक है!

विभाजन के दौरान निष्पक्ष शांतिदूतों की भांति जी-जान से बचाव कार्य करनेवालों में लेस्ली निक्सन (Leslie Nixon) का नाम बड़े आदर और प्रेम से लिया जाता है हालांकि विभाजन साहित्य में या रेसर्च में उनका उल्लेख बहुत कम पाया जाता है।

वेक्सलो, लोअर कैथु, शिमला, हिमाचल प्रदेश-171 003,
मो. 098161 14490

कविता

झुका हुआ पेड़

डॉ. सुशील कुमार फुल्ल



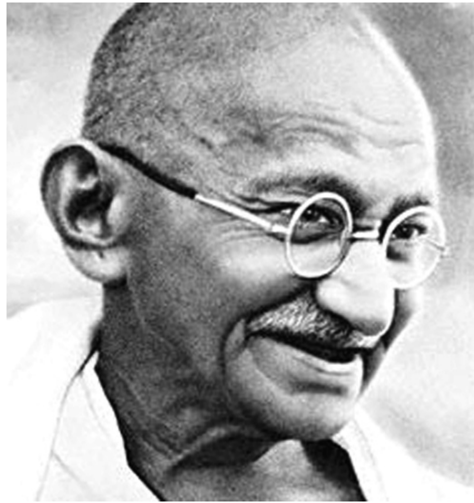
कहते हैं फलों से लदा हुआ पेड़
स्वयं झुक जाता है
ताकि छोटे बच्चों को
फल तोड़ने में किसी प्रकार की
असुविधा न हो
फलों ने तो टूटना गिरना ही है
अंततः तो क्यों न पुण्य का लाभ
स्वयं ही उठा लिया जाए और
सर्वजन की वाहवाही लूट ली जाए
उदारता और विनम्रता
वस्तुतः एक ही सिक्के के
दो पहलू हैं लेकिन झुका हुआ पेड़
बड़प्पन और सदाशयता का मिश्रण बन
एक जीवन की प्रभावी शैली का
संकेत बन बच्चों को बहलाता फुसलाता है।

राजपुर, पालमपुर, हिमाचल प्रदेश-176 061,
दूरभाष : 01894 238054

आलेख

महात्मा गांधी का शिक्षा चिंतन

● डॉ. ओम्प्रकाश सारस्वत



देश का हित चाहने वाला हर महान् विचारक, अपने देश की अन्य हितकारी नीतियों के साथ शिक्षा-नीति पर भी विचार करता है। महात्मा गांधी एक व्यापक दृष्टिसम्पन्न, दूरगामी सोच वाले ऐसे राष्ट्र उन्नायक व्यक्तित्व थे जो भारत का सर्वांगीण विकास चाहते थे। शिक्षा, स्वास्थ्य, श्रम, उद्योग, गरीबी, असमानता, अस्पृश्यता, लिंगभेद, जातिभेद, ग्रामोदय, शहरी विकास आदि सभी पहलुओं पर उन्होंने गहराई और व्यापकता में चिन्तन किया है। आजादी के पश्चात् देश के गौरव की पुनः प्रतिष्ठा और अन्तर्राष्ट्रीय सम्मान/मान शिखरों पर पुनरारूढ़ि उनका अभिलषित था।

गांधी जी का शिक्षा-चिन्तन, जीवन के समग्र विकास से जुड़ा है। उन्होंने मानव के विविध कार्यकलापों को धार्मिक, आर्थिक, नैतिक, राजनीतिक, सामाजिक एवं स्वास्थ्य तथा शिक्षा से सम्बन्धित सभी पहलुओं को अन्तरावलम्बित रूप में देखा। उन्होंने देखा कि बिना धार्मिक अर्थात् सद्वृत्ति सम्पन्न हुए बिना, अर्थ, अनर्थ का मूल बन जाता है। धर्म अर्थात् सदाचार द्वारा कमाया अर्थ ही व्यक्ति को निरापद स्वास्थ्य, नैतिकबल, निर्मल सोच और सामाजिक प्रतिष्ठा दे सकता है। सदाचार के बिना किए गए सारे कार्य, मात्र स्वार्थ के वृत्त पर खिलने वाले क्षणजीवी फूल ही हैं।

गांधी जी मानते थे कि सच्ची शिक्षा वही है जिससे बच्चे में स्वयं सीखने की इच्छा (सेल्फ लर्निंग या लर्निंग टु लर्न) की क्षमता उत्पन्न हो। उनके लिए भी शिक्षा का प्रयोजन चरित्र-विकास था। 'फीनिक्स-आश्रम' (अफ्रीका) में धार्मिक शिक्षा के सम्बन्ध में उन्होंने कहा था कि हमारा ख्याल है कि किसी भी समाज की शिक्षा, उसके धर्म की शिक्षा के बिना निकम्मी है, अतः धार्मिकवृत्ति के माता-पिताओं का कर्तव्य है कि वे अपने बालकों को धर्म की शिक्षा और लौकिक शिक्षा, दोनों साथ-साथ दें। गहराई से सोचे तो मालूम होगा कि हम जिसको लौकिक शिक्षा कहते हैं वह भी धर्म को दृढ़ करने वाली तालीम ही है। हमारे विचार से इस उद्देश्य से हीन शिक्षा हानिकर होती है।" स्मरण रहे गांधी जी के धर्म सम्बन्धी विचार किन्हीं भी रूढ़, ढांचाबद्ध, स्थिर मान्यताओं से सन्नद्ध नहीं हैं। आज धार्मिक शिक्षा का अर्थ 'सेक्युरिलरिज्म' के कारण, सांस्कृतिक मूल्यों पर आधारित शिक्षा हो गया है जिसमें आध्यात्मिकता, नैतिकता आदि समाहित हैं।

राधाकृष्ण कमीशन (1948-49) ने भी धार्मिक शिक्षा पर विशेष बल दिया था। धार्मिक शिक्षा में कुछ पूर्वग्रह होने के कारण कोठारी कमीशन (1964-66) तथा राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 में धार्मिक शिक्षा के स्थान पर सांस्कृतिक मूल्यों पर आधारित शिक्षा और नैतिक आदर्शों पर बल, देने की बात कही। किन्तु गांधी जी की धार्मिक शिक्षा से सही आशय नहीं ग्रहण किया गया और 'धर्म' शब्द को एक हौआ मानकर उसका परित्याग कर दिया गया। आध्यात्मिकता, नैतिकता के सर्वोच्च शिखरों को छूने वाला यह देश आज सेक्युलर, 'धर्मनिरपेक्ष'? राष्ट्र है किन्तु वर्तमान में दी जाने वाली तथाकथित नैतिक, आध्यात्मिक, चारित्रिक- शिक्षा, आडम्बर, प्रदर्शन के कागजी महल खड़ा करने के अतिरिक्त कुछ नहीं है। शिक्षा का चरित्र से गहरा नाता है। व्यक्तित्व के समस्त विकासात्मक पहलुओं को चारित्रिक विकास में, सत्य की सत्ता, न्यायबुद्धि, समत्वभावना, करूणा, दया, परोपकारिता, राष्ट्रीयता, विद्या-वय-बुद्धि सम्पन्न अग्रजों/वरिष्ठों के प्रति सम्मान, मैत्री भावना, विश्वास एवं कर्त्तव्य निष्ठा के मूल्यों का महत्त्व है। चरित्र की जैसी अपेक्षा हम अपने विद्यार्थियों से करते हैं उनकी वैसी प्रतिष्ठा क्या अध्यापकों में भी देखते हैं? आज, अध्यापकों में

अधिकाधिक निर्मत्सरी समझ विकसित करने की जरूरत है। अपने श्रेष्ठत्व का सर्वस्व देकर अपने अन्तेवासी जिज्ञासु छात्र का सर्वतोभद्र चाहने वाले आज कितने शिक्षा/गुरु उपलब्ध हैं? अच्छे शिक्षकों के संदर्भ में यदि विचार करें तो एक लंबी प्रश्नावली तैयार हो जाएगी। हर तरह की राजनीति में उलझे अधिसंख्य शिक्षक, न जाने, आज कितनी ही उपाधियों से विभूषित होने योग्य हैं!

शिक्षा, वास्तव में एक निःस्वार्थ, निस्पृह ज्ञानानुष्ठान तथा लाभ-लोभ रहित व्यवसाय था जो आज अन्य कोई काम न मिलने के कारण, शिक्षकीय मानसिकता से विरहित व्यक्तियों के लिए 'चलो यही सही' के तहत नौकरी हो गई है। जबसे शिक्षकों के वेतन बढ़े हैं तब से तमाम वणिक वृत्ति वाले 'जुगाड़ू' इसमें घुस गए। शिक्षा, आज इसलिए अध्ययन- अध्यापन का निर्लोभ कार्य न रह कर एक कमाऊ माध्यम बन गया है। कितने ही शिक्षक? आज राजनीतिज्ञों की 'जी-हुजूरी करके, उनके द्वार की ड्योढ़ियों पर ढिठाई दिखा/ पा पाकर, शिक्षा के क्षेत्र में 'आदर्श' हो रहे हैं। गांधी जी का मानना था कि जो शास्त्र, जो ज्ञान, आत्मसंयम नहीं सिखाता और जीवन में नैतिकता का समावेश नहीं करता वह शिक्षा की परिभाषा में नहीं आता। यंग इंडिया के 1.9.1921 के अंक में राष्ट्रीय शिक्षा के संदर्भ में वर्तमान शिक्षा नीति पर विचारते हुए उन्होंने कहा था कि 'यह विदेशी नीति पर आधारित ज्ञान' है, देशी संस्कृति का तो इसमें नामोनिशान तक नहीं। फिर यह हृदय और हाथ की संस्कृति पर ध्यान नहीं देती है बल्कि दिमाग की संस्कृति तक ही सीमित है। एक महत्त्वपूर्ण टिप्पणी जो उन्होंने की थी वह कि विदेशी माध्यम के द्वारा वास्तविक शिक्षा असंभव है।' यहां पर 'विदेशी माध्यम' विचारणीय है।

गांधी जी का शिक्षा-चिन्तन, जीवन के समग्र विकास से जुड़ा है। उन्होंने मानव के विविध कार्यकलापों को धार्मिक, आर्थिक, नैतिक, राजनीतिक, सामाजिक एवं स्वास्थ्य तथा शिक्षा से सम्बन्धित सभी पहलुओं को अन्तरावलम्बित रूप में देखा। उन्होंने देखा कि बिना धार्मिक अर्थात् सद्वत्ति सम्पन्न हुए बिना, अर्थ, अनर्थ का मूल बन जाता है। धर्म अर्थात् सदाचार द्वारा कमाया अर्थ ही व्यक्ति को निरापद स्वास्थ्य, नैतिकबल, निर्मल सोच और सामाजिक प्रतिष्ठा दे सकता है। सदाचार के बिना किए गए सारे कार्य, मात्र स्वार्थ के वृत्त पर खिलने वाले क्षणजीवी फूल ही हैं।

महात्मा जी, उपयोगी वस्तुओं के प्रयोग के विरोधी नहीं थे, किन्तु वे यह जरूर मानते थे कि कोई ज्ञान, कला व्यवसाय अपने देश की परिस्थितियों, वातावरण और आवश्यकताओं के अनुरूप विकसित होना चाहिए। ऐसे शिक्षार्थी जो ठीक से अपनी मातृ-भाषा/ भाषाओं तक को, एक अनुशासन की स्तरीयता तक नहीं जानते, उन्हें किसी भी अत्यन्त अपरिचित भाषा में ज्ञान-दान, बिलकुल बेमानी है। वे जरूरत के हिसाब से सब कुछ सीखने के पक्षधर थे परन्तु देश के प्रति आस्था, देश-प्रेम, देशभक्ति के विपरीत किसी तथ्य के वे समर्थक नहीं थे।

'हिन्द स्वराज्य' में भाषा के प्रश्न पर विचार करते हुए उन्होंने कहा कि अपनी भाषा में पाया हुआ ज्ञान ही आत्मसात् होता है। दूसरी भाषा, खासकर अंग्रेजी में पढ़ कर हमारे बच्चे अपनी संस्कृति/संस्कारों से दूर चले जाएंगे। हम एक दूसरे को जो पत्र लिखते है सो गलत-सलत अंग्रेजी में। गलत-सलत अंग्रेजी से साधारण एम.ए. पास व्यक्ति भी मुक्त नहीं है। हमारे अच्छे-से-अच्छे विचार प्रकट करने का साधन है अंग्रेजी। हमारी कांग्रेस का कारोबार भी अंग्रेजी में चलता है। हमारे अच्छे अखबार अंग्रेजी में हैं। यदि लम्बी अवधि तक ऐसा ही चलता रहा तो आने वाली पीढ़ी हमारा तिरस्कार करेगी और हमें उसका शाप लगेगा; ऐसी मेरी मान्तया है।[3] भाषा, राष्ट्रभाषा में हासिल किया ज्ञान ही यहां के बच्चों की ग्राहयता के अनुकूल है।

वे कहते थे कि हमें अपनी भाषाओं को चमकाना चाहिए। हमें अपनी भाषाओं के द्वारा ही शिक्षा लेनी चाहिए। जो अंग्रेजी पुस्तकें काम की हैं, हमें उनका अनुवाद करना होगा। बहुत से शास्त्र सीखने का दम्भ और भ्रम हमें छोड़ना होगा। ... प्रत्येक पढ़े-लिखे भारतीय को अपनी भाषा का, हिन्दू क्षेत्र संस्कृत का, मुसलमान को अरबी का, पारसी को फारसी का और हिन्दी का ज्ञान सब को होना चाहिए।[4]

समग्रतः गांधी जी, शिक्षा में ज्ञान और श्रम, नैतिकता और चारित्रय, राष्ट्रभक्ति और सामाजिक जागरूकता, अपनी भाषा के प्रति प्रेम और विशेषज्ञता, अन्यज्ञानानुशासनों में बहुज्ञता, लौकिकता और आध्यात्मिकता का समावेश आवश्यक मानते थे। उनकी मान्यता थी कि जो राष्ट्र अपनी प्राचीन समृद्ध संस्कृति पर गर्व होने की हद तक प्रेम नहीं करता और निज भाषा, भूषा और भूमि को प्रथम सम्माननीय/रक्षणीय नहीं मानता वह आने वाली संततियों के लिए जवाबदेह होता है।

जी-6, नॉल्सवुड कॉलोनी, छोटा शिमला,
हिमाचल प्रदेश-171 002 , मो. 94180 54054

संदर्भ :

1. गांधी वाङ्मय, खण्ड 9, पृ. 140-141
2. द रिपोर्ट ऑफ द यूनिवसिटर एजूकेशन कमीशन भारत सरकार 1983
3. सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय, खण्ड, 10, पृ. 551
4. वही पृ. 56

पुण्यतिथि (01 अगस्त)

निर्भीक क्रांतिनायक लोकमान्य तिलक

● डॉ. रामसिंह यादव



बम्बई के समुद्र तट पर चौपाटी के मैदान में तिलक महाराज का ज्यों ही शव चिता पर रखा गया एक मुस्लिम युवक आगे बढ़कर चिता प्रज्वलित होते ही छलांग लगाकर उसमें यह कहकर कूद पड़ा - 'तिलक महाराज, आप कहां चले गये?' युवक की आयु 20-22 साल की थी और वह उनके शव के साथ भस्म हो जाना चाहता था। पूरे 72 साल पहले 01 अगस्त को भारत के यशस्वी योद्धा लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक को श्रद्धांजलि देने पांच लाख नर-नारी एकत्र थे। बाल गंगाधर के संक्षिप्त नाम से इतिहास में विश्रुत और अपने राजनैतिक अभ्युदय के काल में प्रख्यात त्रिमूर्ति 'बाल' (बाल गंगाधर तिलक), 'पाल' (विपिनचन्द्र पाल), और 'लाल' (लाला लाजपत राय) में गिने जाने वाले इस महापुरुष को स्वाधीनता संग्राम का प्रथम सेनानी कहना सच्ची श्रद्धांजलि होगी। तब वर्तमान इतिहास के प्रख्यात गांधी युग का राष्ट्रीय क्षितिज पर उदय पूरी तरह नहीं हो पाया था। राजनीति में वर्चस्व उन दिनो सर फीरोजशाह मेहता और गोपालकृष्ण गोखले जैसे दिग्गज नेताओ के हाथ में था। उन्हीं के संरक्षण एवं परामर्श पर दक्षिण अफ्रीका में बैरिस्टर मोहनदास करमचंद गांधी सार्वजनिक क्षेत्र में प्रवेश कर चुके थे। प्रथम विश्व महायुद्ध के कुछ बाद ही 1925 ई. में वे भारत लौट आए थे और दक्षिण अफ्रीका में जाति भेद के प्रश्न पर सविनय अवज्ञा आंदोलन के लिये उनको ख्याति मिल चुकी थी। उसके इन पहले परीक्षणों पर भारत में चर्चा तब शुरू हो गई थी, परन्तु प्रख्यात गांधी युग का सूर्य अभी मध्यान्ह काल में प्रवेश नही कर पाया था।

क्रांतिकारी आह्वान

राष्ट्रीय महासभा की बागडोर तब नरमपंथियों के हाथों में थी, धारा प्रवाह भाषणों एवं लेखों से संवैधानिक प्रगति की मांग अंग्रेज शासकों से वे लोग किया करते थे। पूर्ण स्वराज अथवा औपनिवेशिक स्वराज्य के लिये नहीं, अपितु होमरूल के अंतर्गत अंग्रेजों के संरक्षण में रहकर ऊंची नौकरियों में भारतीयों के प्रवेश की सुविधा, कतिपय आर्थिक सुधारों का श्रीगणेश करने के लिये विदेशी शासकों से मनुहार करने की प्रणाली उन दिनों प्रचलित थी। इस शताब्दि के दूसरे दशक तक वर्तमान राष्ट्रीय महासभा (कांग्रेस) का ढांचा इसी नींव पर खड़ा हुआ था। कांग्रेस के जन्मदाता ओहयूम एक अंग्रेज कलेक्टर रहने के बाद भारतीयों को शासन व्यवस्था एवं आर्थिक ढांचे में सहयोगी बनाने के पक्षधर बने थे। उनके नेता इन्हीं माडरेटों की श्रेणी में से थे। तब तक कर्मवीर विशेषण से पुकारे जाने वाले मोहनदास करमचंद गांधी के प्रारंभिक राजनैतिक गुरु गोपालकृष्ण गोखले भी इसी वर्ग के नेता थे। कोटि-कोटि भारतीय जनों द्वारा बाद में महात्मा नाम से समादृत और कर्मपथ पर निरन्तर बढ़ते अहिंसक क्रांतिकारी गांधी ने अपने जीवन पर गोखलेजी के कर्तव्य की छाप के संस्मरण अपनी आत्मकथा में बड़े भावभीने शब्दों में अनेक स्थलों पर व्यक्त किये हैं, परन्तु गांधीजी के सहयोगी हेनरी पोलक ने अपने संस्मरणों में स्पष्ट लिखा है कि दक्षिण अफ्रीका से भारत में 1915 में बम्बई से आने के बाद गांधीजी पूना में लोकमान्य का आशीर्वाद लेने गये थे। प्रसिद्ध अंग्रेज पत्रकार वेल्सफोर्ड ने अपने संस्मरणों में राजभक्त गांधीजी को क्रांतिकारी बनाने का श्रेय तिलक को दिया है। पराधीनता पर आक्रोश की अभिव्यक्ति कांग्रेस में नरमदलियों के नेतृत्व के बावजूद भारतीय मानस बराबर करता ही रहता था। इन गरमदलियों में अग्रणी महाराष्ट्र एवं बंगाल का एक वर्ग था जो शासकों की भक्ति करने से दूर था। वह अंग्रेजो से बलपूर्वक अपने अधिकारों की मांग करता था। इसी वर्ग के अगुआ थे बाल गंगाधर तिलक, जिनका प्रथम उद्घोष था- 'स्वराज हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है। यह एक क्रांतिकारी आह्वान था जिसने भारत की राजनीति में एक नई वेरावती धारा को राजनैतिक मंच पर लाकर खड़ा किया था। उनसे पूर्व पाश्चात्य शिक्षा से मंडित अन्य माडरेट राजनैतिक नेता हरबर्ट स्पेंसर और एडमण्ड वर्ग जैसे विचारकों के उद्‌बोधक प्रेरणाप्रद लेखों को पढ़कर भी बलपूर्वक यह बात नही

कह पाते थे। हाँ, धार्मिक एवं सामाजिक स्तर पर बंगाल के सन्यासी स्वामी दयानंद द्वारा विदेशी पराधीनता के विरुद्ध अभियान चलाने जैसे छुटपुट प्रमाण भारतीय इतिहास में अवश्य मिलते हैं। देश में अनेक स्थलों पर किसान आंदोलन एवं धार्मिक पुनर्जागरण के बाद बंगभंग चाफेकर बंधुओं द्वारा हिंसक प्रतिशोध आदि कार्यवाइयों के कारण जन मानस का क्षोभ समय समय पर उभरता रहा और उसको एक मुखर स्वर तिलक महाराज के "स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है।" के उस उद्घोष से मिला था। महाराष्ट्र और बंगाल के इस वर्ग के बाद में पंजाब में शामिल हुए थे लाला जाजपतराय, बाल-पाल-लाल की यही तिगड्डी तत्कालीन भारतीय जनता की सजीव आकांक्षाओं की उन दिनों आराध्यस्थली थी।

निर्भीकता की मूर्ति

निर्भीकता और साहस की लोकमान्य जीवंत प्रतिमा थे। भय अथवा लाग-लपेट को उन्होंने जीवन में कहीं स्थान नही दिया। सत्याग्रह नाम से जो प्रयोग गांधीजी ने राजनीति में बाद में किया और सत्य ही परमेश्वर है की गुहार दी, वह व्रत तिलक के जीवन में प्रारंभ से ही बना रहा। उनकी बहादुरी और सत्यनिष्ठा का प्रमाण उनके जीवन काल में दिये गये सैकडों भाषणों एवं लेखो से पता चलता है।

25 वर्ष की युवावस्था में तिलक ने 1880 में मराठी 'केसरी' और अंग्रेजी में 'मराठा' समाचार पत्र निकाले, दोनों ही अखबार उन दिनों में युवा एवं जागृत भारत की आक्रोशपूर्ण आवाज थे। अंग्रेज शासन उनके लेखों से घबराते थे। परिणाम स्वरूप कोल्हापुर रियासत के तत्कालीन दीवान द्वारा चलाये गये मानहानि के एक मुकदमे मे फंसाकर 26 वर्ष के नवयुवा तिलक को चार मास के सश्रम कारावास का दंड दिया गया। इसके बाद इन्हीं लेखों की परम्परा में उनके अन्य सहयोगी आगरकर एवं अन्य संपादकीय साथियों ने अपनी निर्भीकता के पुरस्कार में अनेक बार जेल यात्राएं की। इस प्रकार निर्भीक व स्वतंत्र भारतीय पत्रकारिता का सर्वोच्च मानदंड सर्वप्रथम देश में लोकमान्य ने ही स्थापित किया था। पिछली शताब्दि मे भारतीय जेल क्रूरता की तांडवस्थली थी।

ओजस्वी वक्ता

युवावस्था के इस साहसिक देशभक्ति पूर्ण जेल प्रवास ने युवक बाल गंगाधर को एक ही पग में समूचे राष्ट्र का एक प्रचंड ओजस्वी नेता बना दिया। हजारों देशवासियों ने जेल से रिहाई होने पर फाटक पर उनकी आगवानी की जनता ने विशाल जुलूस निकाला तत्कालीन समस्त राष्ट्रीय भाषा एवं अंग्रेजी के समाचार पत्रों ने उनकी भरपूर प्रशंसा की, यह उनके जीवन के प्रारंभिक उत्कर्ष का नमूना था। वे तेजी से राष्ट्र की सेवा में अग्रसर हो रहे थे। इसके बाद एक अंग्रेजी रैंड की हत्या पर जहां कोकणी ब्राहमण चार्फकर बंधुओं (बाल गंगाधर स्वयं रत्नागिरी में उसी कोकण वंश परम्परा मे जन्मे थे) को फांसी की सजा दी गई, बाल गंगाधर तिलक को भी उसी प्रसंग में अंग्रेज सरकार द्वारा 18 मास की सख्त कैद की सजा देकर जेल मे ठूस दिया गया। उन पर अपराध लगाया गया की उनके समाचार पत्रों मे प्रकाशित लेखो के कारण ही ऐसा हुआ था। इस दूसरी घटना ने देशवासियों का सिर जहां अभिमान से ऊंचा कर दिया, वहां तिलक ने अपने विचारों को मूर्त रूप देकर उन्हें अडिग देशभक्त बना दिया। इसके बदले देशवासियों ने पहली बार उनको 'लोकमान्य' की उपाधि से विभूषित किया और वे सर्वत्र इसी नाम से पुकारे जाने लगे। देश के नवयुवा और जनसाधारण के लिये उनकी एक ही शिक्षा थी।

'सब कुछ त्यागकर देश के लिये, बलिदान हो जाओ, तुम्हारा अपना कुछ नहीं है। जो कुछ भी तुमने पाया है, यह देश और उसकी जनता का है। और वह उसी को लौटा दो। न कुछ लेकर आये हो और न कुछ लेकर जाओ। मातृभूमि की सेवा में सब कुछ वही बिखेर कर जीवन का अवसान कर दो।"

कर्मयोगी

गणित, ज्योतिष और अध्यात्म लोकमान्य के प्रिय विषय थे। उनकी अमर अंग्रेजी की कृतियों में से 'ओरायन' और 'आर्कटिक होग आफ दि वेदाज' ने खगोल विद्या में सर्वथा नई दृष्टि दी जिसके आधार पर पाश्चात्य विद्वानों द्वारा निश्चित वेदों का इतिहास काल ईसा से 3000 वर्ष पूर्व से पीछे हटाकर उन्होंने 6000 और 10000 वर्षों के बीच की स्थापना की थी। राजद्रोह के अभियोग में जब 1909 में उनको मंडाले जेल में 6 वर्ष का देश निकाला हुआ, तब उन्होने 'गीता रहस्य' मराठी में लिखकर अध्यात्म की नई व्याख्या समाज के सामने रखी, परन्तु इसके अतिरिक्त उनकी विलक्षण राजनैतिक सूझबूझ और गहरी पैठ का पता उनके अनेको लेखो एवं भाषणों में मिलता है। राजद्रोह के मुकदमे की भी पैरवी लोकमान्य ने स्वयं ही अदालत में की थी और आगे प्रियी काउंसिल के लिए भी कानूनी नोट्स उन्होंने ही तैयार किए थे। ऐसे थे प्रतिभा के धनी लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक। मंडाले जेल में ही उनको अपनी जीवन संगिनी की मृत्यु का समाचार मिला था जिसे उन्होंने बड़े धैर्य से सहा। वे लखनऊ में कांग्रेस के सभापति बने थे।

जीवन के अंतिम वर्षो में लोकमान्य का स्वास्थ्य तेजी से गिर रहा था और ऐसी दशा में 1919 की अमृतसर कांग्रेस में उन्होंने स्वेच्छा से राष्ट्र की बागडोर गांधीजी के हाथों में सौंप दी जो उनके प्रतिपक्षी और नरमदलियों के सहयोगी माने जाते थे। वह लोकमान्य जीवन का चरमोत्कर्ष काल कहा जाना चाहिए। लोकमान्य इस घटना के आठ मास बाद स्वर्ग सिधार गए। वस्तुतः यह तिलक युग का अंत और गांधीयुग का आरंभ काल था जब उन्होंने अपना ताज अपने हाथों से गांधीजी को सौंपा था।

14, उर्दूपुरा, उज्जैन, मध्य प्रदेश,
मो. 0 96693 00515

आलेख

भारतीय नारी का स्वरूप और उसका दायित्व

● वीणा

वर्तमान युग में सब ओर स्वतंत्रता की आकांक्षा जाग्रत हो गई है। नारी के हृदय में भी इसका होना स्वाभाविक है। इसमें संदेह नहीं कि स्वतंत्रता परम श्रेष्ठ धर्म है और नर तथा नारी दोनों को ही स्वतंत्र होना भी चाहिए। यह भी परम सत्य है कि दोनों जब तक स्वतंत्रत नहीं होंगे, तब तक यथार्थ प्रेम होगा भी नहीं; परंतु विचारणीय प्रश्न यह है कि दोनों की स्वतंत्रता के क्षेत्र तथा मार्ग दो हैं या एक ही; सच यह है कि नर और नारी का शारीरिक और मानसिक संघटन नैसर्गिक दृष्टि से कदापि एक-सा नहीं है। अतएव दोनों की स्वतंत्रता के क्षेत्र और मार्ग भी दो हैं। दोनों अपने-अपने क्षेत्र में अपने-अपने मार्ग से चलकर ही स्वतंत्रता प्राप्त कर सकते हैं। यही स्वधर्म है। स्त्री घर की रानी है, सम्राज्ञी है, घर में उसका एकछत्र राज्य है, पर वह घर की रानी है स्नेहमय माता और आदर्श गृहिणी के ही रूप में। इसी से कहा गया है कि दस शिक्षकों से श्रेष्ठ आचार्य है, सौ आचार्यों से श्रेष्ठ पिता है और हजार पिताओं की अपेक्षा अधिक श्रेष्ठ वंदनीय और आदरणीय माता है।

नारी का यह सनातन मातृत्व ही उसका स्वरूप है। वह मानवता की नित्यमाता है। भगवान राम-कृष्णा, भीष्म-युधिष्ठिर, कर्ण-अर्जुन, बुद्ध-महावीर, शंकर-रामानुज, गांधी-मालवीय, सुभाष बोस-भगत सिंह, शिवाजी आदि जगत के सभी बड़े-बड़े पुरुषों को नारी ने ही सृजन किया और बनाया है। उसका जीवन क्षणिक वैषयिक आनंद के लिए नहीं, वह तो जगत को प्रतिक्षण आनंद प्रदान करने वाली स्नेहमय जननी है। उसमें प्रधानता है प्राणों की- हृदय की और पुरुष में प्रधानता है शरीर की। इसलिए पुरुष की स्वतंत्रता का क्षेत्र है शरीर और नारी की स्वतंत्रता का क्षेत्र है प्राण-हृदय! नारी शरीर से चाहे दुर्बल हो, परंतु प्राण से वह पुरुष उतने त्याग की कल्पना नहीं कर सकता जितना त्याग नारी सहज ही कर सकती है। कोई जोश में आकर चाहे यह न स्वीकार करे, परंतु होश में आने पर तो यह मानना ही पड़ेगा कि नारी देह के क्षेत्र में कभी पूर्णतया स्वाधीन नहीं हो सकती। प्रकृति ने उसके मन, प्राण और अवयवों की रचना ही ऐसी की है। वह स्वस्थ मानव-शिशु को जन्म देकर अपने हृदय के अमीरस से उसे पाल-पोसकर पूर्ण मानव बनाती है। इस नैसर्गिक दायित्व की पूर्ति के लिए ही उसकी शारीरिक और मानसिक शक्तियों का स्वाभाविक सद्व्यय होता रहा है। स्त्री को बाल, युवा और वृद्धावस्था में जो स्वतंत्र न रहने के लिए कहा गया है, वह इसी दृष्टि से कि उसके शरीर का नैसर्गिक संघटन ही ऐसा है कि उसे सदा एक सावधान पहरेदार की जरूरत है। यह उसका पद-गौरव है न कि पारतंत्र्य। जिन पाश्चात्य देशों में नारी-स्वातंत्र्य का अत्यधिक विस्तार है वहां की स्त्रियां पुरुषों की भांति निर्भीक रूप से विचरण नहीं कर पातीं। नारी में मातृत्व है, उसे गर्भ धारण करना ही पड़ता है। प्रकृति ने पुरुष को इस दायित्व से मुक्त रखा है और नारी पर इसका भार दिया है। अतएव उसकी शारीरिक स्वाधीनता सर्वत्र सुरक्षित नहीं है, परंतु इस दैहिक परतंत्रता में भी वह हृदय से स्वतंत्र है; क्योंकि तपस्या, त्याग, धैर्य, सेवा आदि सद्गुण सत्-स्त्री की सेवा में सदा लगे ही रहे हैं। पुरुष में इन गुणों को लाना पड़ता है। सो भी पूरे नहीं आते। स्त्री में स्वभाव से ही इन गुणों का विकास रहता है। इसी से नारी देह से परतंत्र होते हुए भी प्राण से स्वतंत्र है। नारी की यह सेवा महान है और केवल नारी ही इसे कर सकती है एवं इसी महत्सेवा के लिए स्रष्टा ने नारी का सृजन किया है। नारी अपने इस प्राकृतिक उत्तरदायित्व से बच नहीं सकती। जो बचना चाहती है, उसमें विकृत रूप से इसका उदय होता है। यूरोप में नारी-स्वातंत्र्य है; पर वहां की स्त्रियां क्या इस प्राकृतिक दायित्व से बचती हैं? क्या वासनाओं पर उनका नियंत्रण है? वे चाहे विवाह न करे, चाहे उनके विवाह योग्य उम्र में न होने पाए, परंतु पुरुष-संसर्ग तो हुए बिना रहता नहीं। कुछ समय पूर्व इंग्लैंड की संसद की साधारण सभा में एक प्रश्न के उत्तर में मजदूर सदस्य श्रीयुत लेज ने बताया था कि इंग्लैंड में बीस वर्ष की

नारी का यह सनातन मातृत्व ही उसका स्वरूप है। वह मानवता की नित्यमाता है। भगवान राम-कृष्ण, भीष्म-युधिष्ठिर, कर्ण-अर्जुन, बुद्ध-महावीर, शंकर- रामानुज, गांधी-मालवीय, सुभाष बोस-भगत सिंह, शिवाजी आदि जगत के सभी बड़े-बड़े पुरुषों को नारी ने ही सृजन किया और बनाया है। उसका जीवन क्षणिक वैषयिक आनंद के लिए नहीं, वह तो जगत को प्रतिक्षण आनंद प्रदान करने वाली स्नेहमय जननी है। उसमें प्रधानता है प्राणों की-हृदय की और पुरुष में प्रधानता है शरीर की।

कविता

चंपा के फूल

◆ तेज राम शर्मा

इस शहर में
मेरे घर में आंगन में
चंपा के बड़े पेड़ पर
खिल आए हैं चंपा के बड़े-बड़े सफेद फूल
तीसरी मंजिल की खुली छत पर
टहनियां बांह फैलाएं मिलाती हैं मुझ से हाथ

छत पर घूमता हूं सुगंध की टोह में
पर शहरी जीवन के इतने बड़े फूलों में कोई महक नहीं
मैं सोचता हूं कि
क्या शहर के दौड़-भाग वाले
एकाकी सुगंधहीन जीवन की छाया में
पला-बढ़ा होगा यह पेड़?

याद आया बचपन का
देव प्रांगण में चंपा का बड़ा पेड़
जहां गांव के जीवन जैसे छोटे-छोटे पीले फूल
फैला देते थे गांव भर में चंपा की महक
पिता बनाते थे केले के तने की छाल से
किश्तीनुमा छोटा बक्सा
जिसमें रखे चंपा के फूल
कई दिनों तक ताजा रहते थे
देव प्रांगण में
चंपा के बड़े पेड़ के चबूतरे पर लेटे
दूर से आती सामासिक संस्कृति की सुगंध
मिट्‌टी की सौंधी खुशबू के साथ मिल कर
फैल जाती थी दसों दिशाओं में

याद आता है दादा का गीता के साथ-साथ
चंपा वाले फूलों के बक्से को
संदूक में सहेज कर रखना
याद आती है दादा की निरामय बांटती मंत्रित राख
और वह कठिन, कठोर, सरल, जीवन सुगंध

दादा बांचते रहते गीता के श्लोक-
शिशु, युवा, वृद्ध शरीर के संस्करण
जैसे यहां वैसे ही आगे भी-
चंपा के फूल की तरह थे दादा
कि कुम्हलाएं सूख जाएं
पर जीवन सुगंध फैलती ही जाए

पार्थिव शरीर के लिए दादा ने
पहले से पंचरत्न के साथ रखे थे
चंपा के सूखे फूल
महक के साथ
सबको ढांढस बंधाते-से।

श्रीरामकृष्ण भवन, अनाडेल, शिमला, हिमाचल प्रदेश-171 003, मो. 0 94180 73611

आयुवाली कुमारियों में चालीस प्रतिशत विवाह के पहले ही गर्भवती पाई जाती हैं। आपने यह भी कहा कि देश का ऐसा नैतिक पतन कभी देखने में नहीं आया। क्या ऐसा स्त्री-स्वातंत्र्य भारतीय स्त्री कभी सहन कर सकती है? विदेशियों का पारिवारिक जीवन प्रायः नष्ट हो गया है। सम्मिलित कुटुंब जो दया, प्रेम, स्नेह, सेवा, परोपकार, संयम और शुद्ध अर्थ-वितरण की एक महती संस्था है। एक महान सुशृंखल कुटुंब है जिसके भरण-पोषण तथा पालन में गृहस्थ अपने को धन्य और कृतार्थ समझता है का तो नामोनिशान भी वहां नहीं मिलेगा। इसी से वहां जरा-जरा सी बात में कलह, अशांति, तलाक या आत्महत्या हो जाती है। गृहस्थ-जीवन का परम शोभनीय आदर्श उसकी कल्पना से बाहर की वस्तु हो गया है। व्यक्तिगत स्वातंत्र्य और स्वतंत्र प्रेम के मोह में वहां की नारी आज इतनी अधिक पराधीन हो गई है कि उसे दर-दर भटक कर विभिन्न पुरुषों की ठोकरें खानी पड़ती हैं। यह कैसी स्वतंत्रता है और कैसा सुख है? और खेद तथा आश्चर्य है कि आज भारतीय महिलाएं भी इसी स्वतंत्रता और सुख की ओर मोहवश अग्रसर हो रही हैं। भारतीय महिलाएं आज हर क्षेत्र में अपना स्थान बना रही हैं, ऐसा कौन सा क्षेत्र है जो उनसे अछूता रहा है। आज वायु सेना, स्थल सेना व जल सेना में बड़े ऊंचे पदों पर महिलाएं लगी हैं, उनकी योग्यता, सहयोग और आत्म-विश्वास ने भारत को उन्नति के शिखर पर ला खड़ा किया है। खेलों के क्षेत्र में भारतीय महिलाएं अग्रसर हो रही हैं। देश की उन्नति के हर क्षेत्र में उनका योगदान मिल रहा है। यह सत्य है कि पारिवारिक जिम्मेवारियों को निभाने में उन्हें काफी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है परंतु यदि पुरुष व परिवार का सहयोग मिल जाए तो उन्हें सुगमता होगी।

फ्लैट नं. 002, टॉवर जे.-वन, द व्यूज, मोहाली हिल्ज़, एम. आर. एम.जी. एफ., सेक्टर-105, मोहाली, पंजाब, मो. 0 99102 29774

आलेख

रक्षा और सुरियल से मिलने का पर्व गुग्गा नवमी

● पवन चौहान

हिमाचल के निचले क्षेत्रों में गुग्गा पूजन का अपना एक खास महत्व है। रक्षाबंधन के बाद हिमाचल में गुग्गा नवमी का त्योहार बड़े हर्षोल्लास के साथ मनाया जाता है। सांपों से अपने परिवार की रक्षा और सुरियल से दोबारा मिलने की प्रार्थना हेतु इस त्योहार का बहुत महत्त्व है। यह त्योहार पंजाब, हरियाणा, मध्य प्रदेश और राजस्थान में भी खूब धूमधाम से मनाया जाता है। मध्य प्रदेश और राजस्थान में इसे 'गोगा नवमी' कहा जाता है। रक्षाबंधन के दिन से गुग्गा घर-घर जाकर नौ दिन तक लोगों को अपने दर्शन देता है। उसके बाद फिर पूरे साल भर के लिए अंतर्ध्यान हो जाता है। इस वर्ष गुग्गा नवमी का यह त्योहार 16 अगस्त तक चला। यह त्योहार एक अनोखी सांस्कृतिक गरिमा का द्योतक है। जो हमारे सामाजिक परिवेश और परंपरा को समृद्ध करता है।

गुग्गा अर्थात गुग्गमल चौहान की कथा बहुत ही रोचक है। गुग्गा जहरपीर भगवान विष्णु का प्रसाद है जो शिव की जटाओं से फल के रूप में निकला था। यह फल सांपों का शत्रु था जिसे एक बार सभी सर्पों की प्रार्थना पर शिव ने अपनी जटाओं में बांध दिया था। जब बाघड़ देश (मरुदेश) की रानी बांछला (जो ब्रह्मा, विष्णु व महेश की उपासक और गुरु गोरखनाथ को अपना गुरु मानती थी) को संतान प्राप्ति हेतु यह फल देने जा रहे थे तो उसकी छोटी बहन कांछल ने धोखे से ये दो फल हथिया लिए। इन फलों से उसके दो पुत्र अर्जुन और सुर्जन पैदा हुए। बांछल जब गुरु गोरखनाथ के पास अपनी व्यथा लेकर पहुंचती है तो गुरु बांछल की समस्या का समाधान करते हैं। इसे मण्डी (हिमाचल प्रदेश) के लोकगीत द्वारा समझा जा सकता है-

मजले मजले गडी चलदी नौ लखे दे बागा
आगे राजा जेवर चलदा पीछे बाछल माता
मजले मजले बाछल चलदी गोरखा दे डेरे आई
काहनी चेला क्या उठ बोले हूण बांछल आई

गुरु गोरखनाथ जा रहे थे तो रास्ते में बासुकी नाग ने छल द्वारा गोरखनाथ से यह फल मांग कर खा लिया ताकि सांपों को सर्वनाश से बचाया जा सके। लेकिन भगवान विष्णु द्वारा भेजे गए दयालक ऋषि ने झाड़ू मारकर इस फल को गुग्गल धूप में बदल दिया क्योंकि सांप गुग्गल धूप नहीं खाते।

रानी बांछल ने फल का अंदर वाला हिस्सा और इसकी दासी गोली ने इस फल का छिलका खाया। परिणामस्वरूप गोली के नौ महीने बाद लड़की हुई जिसे गुगड़ी नाम दिया। लेकिन रानी बांछल को गर्भ धारण किए हुए 12 महीने बीत चुके थे और बच्चा अभी भी पेट में ही था। कांछल जायदाद के लिए इस बच्चे को मारना चाहती थी। इसलिए कांछल ने धोखे से बांछल को जहर दे दिया। जहर देने पर बांछल का बच्चा मरा नहीं अपितु वह इस जहर के कारण गर्भ से बाहर आ गया। इसलिए इसे 'जहरपीर' कहा जाने लगा।



गुग्गा जहरपीर

यही जहरपीर बाद में बहुत ही शक्तिशाली और प्रतापी राजा बना। इसी दौरान गुग्गा को मालव देश के राजा द्वारा अपनी पुत्री सुरियल से विवाह का निमंत्रण आता है। गुग्गा मान जाता है। लेकिन कुछ दिनों के बाद मालव राजा सुरियल का विवाह गुग्गा से न करवा कर कच्छु देश के राजा से करवाने की इच्छा पाल लेता है। गुग्गा को राजा धोखा देता है। गुग्गा जब यह बात गुरु गोरखनाथ को बताता है तो गोरखनाथ वासुकी नाग की सहायता से सुरियल को डसवा लेता है। वासुकी के जहर का तोड़ राज वैद्य के पास भी नहीं मिलता। दूसरे वेश में मौजूद वासुकी राजा को इस जहर को उतारने के लिए गुग्गा मंत्र की सलाह देता है। मंत्र काम कर जाता है और सुरियल की जान बच जाती है और राजा अपनी पुत्री का विवाह सहर्ष गुग्गा से करवा देता है। विवाह के तुरंत बाद ही कांछल के दोनों पुत्र अर्जुन और सुर्जन गुग्गा से आधे राज्य की मांग करने पर अड़ जाते हैं। यह बात यहां तक बढती है कि दोनों ओर से युद्ध छिड़ जाता है। इस युद्ध में दोनों चचेरे भाइयों की गुग्गा के हाथों मौत हो जाती है। इस


गुग्गा जहरपीर गुग्गाजी को भेंट देती महिला

बात से क्रोधित गुग्गा की मां गुग्गा को भी अपने प्राण त्यागने और अपना चेहरा न दिखाने के लिए कहती है। गुग्गा अपनी मां की आज्ञा का पालन करता हुआ धरती मां से उसे अपने अंदर समा लेने की प्रार्थना करता है और धरती में समा जाता है।

यह खबर सुनते ही पत्नी सुरियल गहरे शोक में डूब जाती है। वह विलाप करने लगी। उसकी दशा को देखकर आकाशीय वाणी उसे बताती है कि गुग्गमल चौहान जीवित है और पाताल लोक में ख्वाजा पीर (पानी का देवता) के साथ हार-पासा खेल रहा है। यह बात सुनकर सुरियल शिव अराधना में रम जाती है। उसकी कड़ी तपस्या से प्रसन्न होकर शिव गुरु गोरखनाथ को उसकी सहायता हेतु भेजते हैं। गुरु गोरखनाथ गुग्गा को समझाते हैं। अब गुग्गा रक्षाबंधन के दिन से रोज सुरियल से मिलने आने लगता है। सुरियल भी अब पहले जैसा सुहागिनों का शृंगार करने लग जाती है। माता बांछल के बार-बार पूछने पर सुरियल सारी सच्चाई बता देती है। सुरियल बताती है कि वह हर रोज रात को गोबर का चौका देती है। जिस पर बैठकर गुग्गा रात भर उसके साथ हार-पासा खेलता है और चौका सूख जाने पर वापिस चला जाता है। गुग्गा यह बात सुरियल को माता बांछल को बताने के लिए मना करने के साथ चेतावनी भी देता है। लोकगीत के माध्यम से यह बात कुछ इस तरह से कही जाती है -

आपणे महेला राजा जे आया
सुरियल करदी शृंगार
राजा क्या बोले क्या समझावे
बांछल न दसे मेरे आउणे री बात
जे माता बांछल जो तु देंगही दसी
ता हुंगा लंबा बगाड़

बांछल सुरियल को चौके पर तेल का लेप चढ़ाने की सलाह देती है ताकि चौका सूखने न पाए। सुबह होने तक चौका नहीं सूखता और माता बांछल गुग्गा को दरवाजे पर रोक देती है और वापिस जाने के लिए मना करती है। लेकिन गुग्गा नहीं मानता और वह उसी वक्त अपने गले की माला तोड़कर जमीन पर फेंक देता है। माता बांछल जैसे ही माला को उठाने नीचे झुकती है। गुग्गा मौके का फायदा उठाकर हमेशा के लिए यह कहकर चला जाता है कि वह फिर वापिस नहीं आएगा। आज गुग्गा को आते हुए पूरे नौ दिन बीत चुके थे। कहा जाता है कि गुग्गा ने सुरियल को धोखा देने (तेल वाला चौका देकर) पर यह सजा दी कि अब वह उससे मिलने रोज नहीं सिर्फ रक्षाबंधन के दिन से भाद्रपद की सप्तमी तक ही आया करेगा। यही कारण है कि गुग्गा पूरी साल में सिर्फ इन नौ दिनों में ही बाहर निकलता है और घर-घर जाकर गोबर के चौके पर ही विराजता है। इन दिनों लोगों के घरों से इक्ट्ठे किए गए अनाज का गुग्गा नवमी के दिन भण्डारा लगाया जाता है। इन नौ दिनों में गुग्गे की गाथा गाकर गुग्गे को मनाया जाता है कि वह सुरियल से फिर पहले की तरह रोज मिलने आया करे।

यह त्योहार हिमाचल का एक अलग प्रकार का त्योहार है। इस दिन छिंज (कुश्ती) आदि का भी आयोजन किया जाता है। दीवारों पर हल्दी से सर्प के चित्र या फिर आटे के सर्प बनाकर पूजे जाते हैं और सांप के बिलों के पास दूध और मक्खन भी रखा जाता है। ऐसा माना जाता है कि गुग्गा नवमी के बाद सारे सांप जमीन के अंदर गुग्गा के साथ ही चले जाते हैं। इसके बाद सांपों का खतरा बहुत कम हो जाता है। गुग्गा मढ़ी से प्रसाद के रूप में मिले पानी से घरों के अंदर व बाहर छिड़काव किया जाता है। बुजुर्गों के अनुसार ऐसा करने से सांप व भूत-प्रेत घर में दाखिल नहीं होते। हिमाचल प्रदेश के जिला मण्डी की 'ग्राउडु गुग्गा मण्डली' बहुत ही ईमानदारी के साथ इस परंपरा का निर्वहन कर रही है। मण्डली में मोहन लाल, संत राम, भगत राम, धर्मपाल, सागर दत्त, नरेन्द्र कुमार, राम लाल, रमेश कुमार और धर्मसिंह प्रमुख हैं। मण्डली के अनुसार, 'हमारी युवा पीढ़ी इन त्योहारों की पृष्ठभूमि और इनके मूल्यों से के अनभिज्ञ है। जागरुकता की कमी के चलते वे ऐसे त्योहारों से दूर होते जा रहे हैं। इन त्योहारों को जीवित रखने का दायित्व हम सब पर है। हमें आने वाली पीढ़ी को इनका महत्त्व बताने की आवश्यकता है। ऐसे त्योहार हमारी समृद्ध सांस्कृतिक विरासत का अटूट हिस्सा हैं जो हमारे अतीत के साथ जुड़कर हमें संस्कारवान बनाते हैं।'


गुग्गा मंडली घर-घर जाकर गुग्गा गीत गाती हुई

गांव व डा. महादेव, तह. सुन्दरनगर, जिला मंडी
हिमाचल प्रदेश- 175018,
मो : 0 98054 02242

कविता

भारत की एकता

● मंजु गुप्ता

आज सुनों मेरे सुरम्य भारत की कहानी
विविधता से भरे प्रांतों की पहचान पुरानी
जिसकी माटी को सींचते वीर, बलिदानी
जिसमें गूँजती बुद्ध, नानक, सूर की वाणी ।

भारत को लूटा लोदी, बाबर अनेकों ने
समा गए भारत माँ में हुए न पराए
अत्याचारों से संस्कृति को मिटा न पाए
महिमा भारतीय संस्कृति की जग है गाए।

जीवन दर्शन, संस्कारों की यह तपोभूमि है
हरिश्चन्द्र, अशोक, गांधी की धर्मस्थली है
परहित में पन्ना दे अपने लाल की कुर्बानी
देह में से दें अपनी हड्डी दधीचि दानी।

भारत देश हमको प्राणों से भी है प्यारा
सभ्यता, संस्कृति, मूल्यों की सुरभि से भरा
जहाँ बहती ज्ञान, योग, अध्यात्म की धारा
हिमालय से घिरी है वन, पर्वत, घाटी धरा ।

विविध इसका खान-पान, वेश भूषा परिवेश
किंतु सब में हैं एक राष्ट्र चेतना के भाव
विभिन्न भाषाओं से जुड़ा हुआ है यह देश
आत्मसात करता सब की संस्कृति समभाव ।

खिलते सदा बहुभाषी-भाषा के फूल यहाँ
लगता अनेकता में एकता का गुलदस्ता
विविध जाति, नस्ल, वर्ण, धर्म का संगम यहाँ
जिनमें धर्म निरपेक्ष, धर्म समभाव बसता ।

इसके गिरजाघर, गुरुद्वारे, मंदिर, सारे
जिनकी पूजा, अर्चना, वन्दना पद्धति अनेक
लगते सारे धर्म यहाँ पर सहोदर प्यारे
लेकिन जन -मन में ईश्वर का भाव है एक ।

'अतिथि देवो भव' को है यहाँ पूजा जाता
आस्था के पत्थरों में ईश को जपा जाता
सदियों से वसुधैव कुटुम्बकम इसको भाता
सत्यं - शिवं - सुन्दरम् से धरा है महकाता ।

जहाँ बहे विविध प्रथा, परम्पराओं की धारा,
मनाता दीवाली, ईद, होली, कुम्भ जन-मन ,
पर्वों की संस्कृति में रंगता भारत सारा ,
जुड़ जाते हैं टूटे दिल रिश्तों के आँगन ।

गंगा, यमुना, सोन, नर्मदा नदियाँ हैं अनेक
जिनमें पनपी,पोषित कई संस्कृतियाँ नेक
गाती हैं गाथा रामायण, व्याकरण, वेद
कलरव करते पक्षीगण, कोयल, काग की टेर।

त्याग - भोग से लाते यहाँ संतुलन जीवन में
तब मानव में बसती मानवता की बस्ती
सच, सहयोग, अहिंसा, अध्यात्म पर चल के
मिटा न सका 'मंजु' कोई भारत की हस्ती।

19, द्वारका, प्लॉट 31, सेक्टर 9ए, वाशी नवी मुंबई-400 703, मो. 0 98339 60213

आलेख

हमारा राष्ट्र गान

• प्रमीला गुप्ता

राष्ट्रगान हो या राष्ट्रगीत देशवासियों की आन-बान-शान का प्रतीक होता है। आज हमारा देश भारत विश्व की महासत्ता बनने की ओर कदम बढ़ा रहा है। इसके विकास की नींव भौतिक विकास, नैतिक तत्त्वज्ञान, आदर्शों के मूलभूत सिद्धांतों और सार्वभौमिक मूल्यों पर आधारित होना अत्यावश्यक है। इन मूल्यों का सजीव प्रतीक है हमारे भारत का राष्ट्रगान - 'जन गण मन, अधिनायक जय हे भारत भाग्य विधाता'।

कवीन्द्र रवीन्द्र नाथ ठाकुर ने 1910 ई. में बांग्ला भाषा में 'जन गण मन' गीत की रचना की थी। यह गीत 1913 ई. में साहित्य के नोबल पुरस्कार से सम्मानित कृति 'गीतांजली' में संकलित है। यह अविभाजित परतंत्र भारत में लिखा गया था।

पाँच पदों वाले इस गीत का पहला पद भारत के राष्ट्रगान के रूप में गाया जाता है। राष्ट्रगान के रूप में स्वीकृत इस गीत की धुन को कैप्टन रामसिंह जी ठाकुर ने तैयार किया था। 27 दिसंबर, 1911ई. को भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अधिवेशन में सर्वप्रथम विधिवत गाया गया था।

जनवरी,1912 ई. को 'तत्वबोधिनी' पत्रिका में 'भारत भाग्य विधाता' शीर्षक से प्रकाशित यह गीत पहली बार लोकप्रिय हुआ।

1919 ई. में स्वयं रवीन्द्र नाथ ठाकुर ने इस गीत का अँग्रेजी अनुवाद 'दी मॉर्निंग सॉन्ग ऑफ इंडिया' शीर्षक से किया था।

24 जनवरी, 1950 ई. को भारतीय संविधान में इस गीत को राष्ट्रगान के रूप में मान्यता प्रदान की गई।

यूनेस्को ने विश्व की सर्वोच्च सर्च इंजिन वेबसाइट 'गूगल' के माध्यम से यूनेस्को एंड नेशनल एंथिम की साइट पर 'जन गण मन' को विश्व का सर्वश्रेष्ठ राष्ट्रगान बताया है। आर्थिक, सामाजिक दृष्टिकोण से परिपूर्ण इस राष्ट्रगान में सांप्रदायिक सद्भाव झलकता है। रवीन्द्र नाथ ठाकुर विश्व के एकमात्र ऐसे कवि हैं जिनकी रचना को एक से अधिक देशों में राष्ट्रगान के रूप में मान्यता प्राप्त है। उनकी एक अन्य रचना 'आमार सोनार बांग्ला' बांग्लादेश का राष्ट्रगान है।

यूनेस्को ने विश्व की सर्वोच्च सर्च इंजिन वेबसाइट 'गूगल' के माध्यम से यूनेस्को एंड नेशनल एंथिम की साइट पर 'जन गण मन' को विश्व का सर्वश्रेष्ठ राष्ट्रगान बताया है। आर्थिक, सामाजिक दृष्टिकोण से परिपूर्ण इस राष्ट्रगान में सांप्रदायिक सद्भाव झलकता है। रवीन्द्र नाथ ठाकुर विश्व के एकमात्र ऐसे कवि हैं जिनकी रचना को एक से अधिक देशों में राष्ट्रगान के रूप में मान्यता प्राप्त है। उनकी एक अन्य रचना 'आमार सोनार बांग्ला' बांग्लादेश का राष्ट्रगान है।

भारत का राष्ट्रगान अनेक अवसरों पर बजाया अथवा गाया जाता है। राष्ट्रगान के बारे में समय-समय पर अनुदेश जारी किए जाते रहे हैं। इनमें वे अवसर जिन पर इसको बजाया अथवा गाया जाना चाहिए तथा उन अवसरों पर उचित गरिमा का पालन करने के लिए राष्ट्रगान को सम्मान देने की आवश्यकता का उल्लेख होता है। सामान्य सूचना और मार्गदर्शन के लिए इस सूचनापत्र में इन अनुदेशों का सारांश निहित है।

राष्ट्रगान के गायन की अवधि लगभग 52 सेकेंड है। कुछ अवसरों पर राष्ट्रगान संक्षिप्त रूप में भी गाया जाता है। इसमें प्रथम तथा अंतिम पंक्तियाँ ही बोली जाती हैं।

राष्ट्रगान का पूर्ण संस्करण इन अवसरों पर सामूहिक गान के रूप में गाया जाता है।

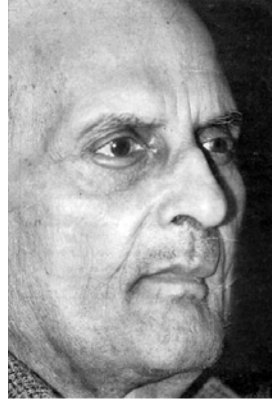
1. राष्ट्रीय ध्वज को फहराने के अवसर पर।
2. सांस्कृतिक अवसरों, परेड के अतिरिक्त अन्य विशिष्ट औपचारिक राजकीय कार्यक्रमों व सरकार द्वारा आयोजित कार्यक्रमों में राष्ट्रपति के आगमन पर व उनके वापिस जाने के अवसर पर।
3. विद्यालयों में, दिन के कार्यक्रमों में राष्ट्रगान को सामूहिक रूप से गा कर आरंभ किया जा सकता है।

दवारा डॉ. जगदीश प्रसाद, 1018, सेक्टर-43 बी, चंडीगढ़-160043 दूरभाष : 0 172 2660391

आलेख

आलोचना के शलाका पुरुष : रामविलास शर्मा

● राजेंद्र परदेसी



सर्जक अपनी कृतियों में जिस संसार का सृजन करता है, उसमें उसकी अनुभूतियाँ आकार ग्रहण करके रचनाकार एवं उसके रचना-संसार से जुड़े पात्रों के चित्र को उभारती हैं, परम्परा और प्रयोग के सह-अस्तित्व में निर्मित कृतियाँ सामान्य भाषा से ऊपर उठकर विशिष्ट भाषा के सम्बल से साहित्य कोटि में पहुँचती हैं, जिसमें रचनाकार पात्रों के रूप में अपने वैचारिक अस्तित्व को बनाये रखने का भरपूर प्रयास करता है। यही रचना का वस्तु तत्व एवं रचनाकार का मुख्य ध्येय होता है, जिसको सहज, सुबोध एवं प्रतीति के स्तर पर सुग्राह्य बनाने का काम आलोचना करती है। वस्तुतः वह रचना का समग्र निरीक्षण करता है तथा उसके विभिन्न रूपों की व्याख्या विश्लेषण प्रस्तुत करके उसके सत्य रूप का उद्‌घाटन करता है। इस प्रक्रिया में आलोचक की दृष्टि न केवल रचनात्मक वैशिष्ट्य की परिधि में चक्कर लगाती, अपितु उन बिन्दुओं पर भी केन्द्रित होती है, जिसका संबंध रचनाकार के व्यक्तित्व उसकी कलात्मक प्रेरणा, कला-प्रयोजन एवं समकालीन परिस्थितियों से भी होता है। आलोचक के द्वारा रचना में निहित आन्तरिक मूल्यों, कलात्मक अभिव्यक्ति एवं रचनात्मक वैशिष्ट्य का उद्‌घाटन उसके गुण-दोषों के संदर्भ में होता है। डॉ. श्याम सुन्दर दास का कथन है- साहित्य के क्षेत्र में ग्रंथ को पढ़कर उसके गुण और दोषों की विवेचना करना और उसके संबंध में अपना मत प्रकट करना आलोचना कहलाता है। तटस्थता आलोचना की अनिवार्य विशेषता होती है। अर्थात् राग-द्वेष से वह मुक्त होकर सत् एवं असत् का सही स्वरूप निर्धारित करती है। आलोचनात्मक दायित्व के निर्वाह में विविध समीक्षा पद्धतियों को अपनाना पड़ता है, जिसका सीधा संबंध आलोचक की साहित्यिक अवधारणा से होता है। साहित्य के क्षेत्र में आलोचना का आविर्भाव संस्कृत साहित्य में ही हो चुका था, किन्तु वह सम्पूर्ण मूल्यांकन में असमर्थ रही। सीमित आलोचना से ऊपर उठकर हिंदी के क्षेत्र में आलोचना का विकास द्विवेदी युग के बाद आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के आगमन के साथ हुआ। आचार्य शुक्ल ने अपनी क्रान्तिकारी भूमिका से हिंदी आलोचना को एक नया स्वरूप प्रदान किया। जिसमें गंभीर एवं वैज्ञानिक समीक्षा के दर्शन हुए। प्रथम महायुद्ध के बाद हिंदी का आलोचना साहित्य संबंधी शोध-कार्य साहित्य के इतिहास को विभिन्न कालों में बाँटकर अलग-अलग विद्वानों द्वारा उसकी विवेचना नयी आलोचना की एक कड़ी है। इस दिशा में डॉ. रामकुमार वर्मा, आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, माता प्रसाद गुप्त, डॉ. नागेन्द्र, आचार्य नंददुलारे बाजपेयी इत्यादि का प्रयास स्तुत्य है। आधुनिक हिंदी आलोचना को मार्क्सवादी विचारधारा एवं फ्रायडवादी विचारधारा ने काफी प्रभावित किया। मार्क्सवादी विचारधारा से प्रभावित आलोचना अधिक व्यापक एवं सशक्त बनकर उभरी, जिसमें डॉ. रामविलास शर्मा अपनी प्रखर एवं प्रभावकारी आलोचना दृष्टि के कारण सबसे अलग एवं आधुनिक बनकर साहित्य क्षितिज पर उभरे और आलोचना के क्षेत्र में वह मुकाम हासिल किये, जहाँ पहुँचकर कोई अपने युग और साहित्य का सशक्त हस्ताक्षर बन जाता है। प्रगतिशील आलोचक डॉ. रामविलास शर्मा का जन्म उन्नाव (उत्तर प्रदेश) के एक छोटे से गाँव ऊँच गाँव सानी में 10 अक्तूबर 1912 को हुआ था। लखनऊ विश्वविद्यालय से 1934 में अंग्रेजी साहित्य में एम.ए. किया। स्नातकोत्तर उपाधि के उपरान्त वे 1938 तक शोधकार्य में लगे रहे। 1940 में लखनऊ विश्वविद्यालय से ही पी.एच.डी. की उपाधि हासिल की। सन् 1938 से 1941 तक वे लखनऊ विश्वविद्यालय में अंग्रेजी के प्राध्यापक रहे। उसके बाद वे 1971 तक बलवंत कालेज, आगरा में अंग्रेजी विभागाध्यक्ष रहे। बाद में आगरा विश्वविद्यालय के कुलपति के अनुरोध पर वे के.एम. हिंदी संस्थान के निदेशक बने और 1974 में सेवानिवृत्त हुए।

डॉ. रामविलास शर्मा की पहचान वैसे तो एक प्रख्यात आलोचक, इतिहासकार और भाषाविद् के रूप में ही होती है, किन्तु साहित्य क्षेत्र में उनका आगमन कवि रूप में हुआ। अज्ञेय द्वारा सम्पादित प्रथम 'तारसप्तक' जिसका प्रकाशन 1943 में हुआ था, उसमें गजानन माधव मुक्तिबोध, नेमिचन्द्र जैन, भारत भूषण अग्रवाल, प्रभाकर माचवे, गिरिजा कुमार माथुर, अज्ञेय सहित रामविलास शर्मा की कविताएं संकलित हुई। बाद में चलकर इनकी दिशा आलोचना की और मुड़ गई और अपनी रचनात्मक ऊर्जा का उपयोग इसी क्षेत्र में करते हुए ख्यातिलब्ध आलोचक की हैसियत से साहित्य जगत में अपनी अलग पहचान बनाकर

कीर्तिमान स्थापित किया। प्रगतिवादी आलोचक डॉ. रामविलास शर्मा ने मुख्य रूप से दो प्रकार के निबंध लिखे हैं - एक तो किसी कृति या कृतिकार की समीक्षा करने वाला निबंध और दूसरा छोटे-छोटे आकार वाले तीखे व्यंग्यात्मक, स्वतंत्र विषयों पर लिखे गये उन्मुक्त चिन्तनपरक निबंध, जिनमें उनका धक्कड़पन उजागर होता है। वे बेलौस होकर अपने विचार रखते हैं, बिना इसकी परवाह किये किसी को बुरा लगेगा या अच्छा। उनके निबंध साहित्य के विषय में डॉ. जयचन्द्र राय ने लिखा है कि - प्रगतिवादी आलोचक डॉ. रामविलास शर्मा की अधिकांश निबंध आलोचनात्मक ही है। उनमें दो टूक बात कहने की प्रवृत्ति है और इसीलिए निष्कर्ष तथा निर्णय पर पहुँचने की जल्दी और बेचैनी, व्यंग्य का प्रयोग वे तीक्ष्ण शस्त्र की भाँति करते हैं। उनकी विचार-प्रक्रिया सरल और स्पष्ट है। भाषा तदनुकूल सभी प्रकार के चलते शब्दों से सम्पन्न है। साहित्यकार के लिए वर्गभेद पर आधारित सामाजिक पहचान को वे आवश्यक मानते थे। उन्होंने अपनी पुस्तक भाषा, साहित्य और संस्कृति में लिखा है - पार्टीजन साहित्यकार बनकर ही हम ऐसे साहित्य का निर्माण कर सकेंगे, जो अगली पीढ़ियों के लिए मूल्यवान हो। डॉ. रामविलास शर्मा का चिंतन देशभक्ति और मार्क्सवादी चेतना में ही अधिक केन्द्रित रहा। इसीलिए वे प्रश्न उठाते हैं कि किसका साहित्य अमर हो सकता है और किसका क्षणिक। वे व्याख्यायित भी करते हैं कि जिसमें जितना अधिक नैतिक बल होगा, उसका साहित्य उतना ही श्रेष्ठ एवं अमर होगा। इसके विपरीत जिस लेखक का मनोबल क्षीण हो गया है, या जो व्यक्ति जीवन संग्राम से पलायन करता है, जिसके कंठ से शत्रु के लिए ललकार नहीं करुण चीत्कार निकलती है, जो उसके सामने भयभीत हो उठता है, भला ऐसा कायर व्यक्ति अमरत्व का दावेदार कैसे हो सकता है। उसे अमरत्व पाने का कोई अधिकार नहीं है। अमरत्व का अधिकारी वही हो सकता है, जो सामाजिक उत्तरदायित्व का निर्वाह कर सकता है। ऐसी स्थिति में अपने सामाजिक उत्तरदायित्व से बचना वस्तुतः एक प्रकार की कायरता ही है। दूसरी बात यह है कि लेखक समाजिक उत्तरदायित्व निभाता है या नहीं। यह प्रश्न साहित्य के लिए भले ही महत्त्वपूर्ण न हो पर यह प्रश्न लेखक की नैतिकता से अवश्य जुड़ा है। सामाजिकता से जुड़ना लेखक का परम उत्तरदायित्व है। उसके प्रगतिवादी चिंतन की निरंतरता वाल्मीकि और कालिदास से लेकर मुक्तिबोध तक जाती है, जिसमें उनकी रचनाओं का मूल्यांकन प्रगतिवादी चेतना के आधार पर किया गया है।

'आचार्य रामचन्द्र शुक्ल और हिंदी आलोचना' को उनकी समीक्षा शैली का केन्द्र बिन्दु समझना होगा, जिसमें आचार्य शुक्ल की लोक-सम्पृक्ति के अतिरिक्त उनके अन्तर्विरोधों को भी उजागर किया गया है। डॉ. शर्मा का चिंतन काफी गंभीर है। उनके इस चिंतन में समाज-साहित्य तथा परम्परा के आपसी संबंधों का वास्तविक विवेचन अधिक प्रामाणिक एवं पुख्ता होकर प्रभावी बन गया है। सामाजिक विकास की दिशा में साहित्य की क्रांतिकारी भूमिका को स्पष्ट करने के लिए परम्परा का ज्ञान, उसकी समझ और मूल्यांकन के विवेक की अनिवार्यता पर बल देते हुए डॉ. शर्मा ने अपनी पुस्तक 'परम्परा का मूल्यांकन' में बड़ी तर्क संगत चर्चा की है। उन्होंने लिखा है- जो लोग साहित्य में युग परिवर्तन चाहते हैं, जो लकीर के फकीर नहीं हैं, जो रूढ़ियाँ तोड़कर क्रांतिकारी साहित्य रचना चाहते हैं, उनके लिए साहित्य की परम्परा का ज्ञान सबसे ज्यादा आवश्यक है', परम्परा और आधुनिकता की युग सापेक्ष समझ विकसित करने में इस पुस्तक के माध्यम से उन्होंने एक सार्थक पहल की है।

डॉ. रामविलास शर्मा ने अपने लेखन से जीवनी-साहित्य को भी एक नया आयाम दिया है और उसे समृद्धि प्रदान की है। जीवनी साहित्य में निराला के जीवन पर तीन खण्डों में प्रकाशित उनकी पुस्तक 'निराला की साहित्य साधना काफी चर्चित और लोकप्रिय हुई। इस पुस्तक में डॉ. शर्मा ने निराला के व्यक्तित्व और कृतित्व को व्यापक स्तर पर प्रस्तुत करके उन्हें वैसे ही गौरवान्वित किया है जैसे आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने कबीर को किया है। निराला पर इतनी वृहद पुस्तक अभी तक कोई दूसरी नहीं है। 1969 में प्रकाशित 'निराला की साहित्य साधना' पुस्तक पर डॉ. शर्मा को साहित्य अकादमी पुरस्कार से पुरस्कृत किया गया था। जीवनी-लेखन में डॉ. शर्मा की शैली वैविध्यपूर्ण होने के साथ-साथ लालित्यपूर्ण भी है। इसके अतिरिक्त डॉ. रामविलास शर्मा की प्रमुख रूप से उल्लेखनीय पुस्तकें हैं - प्रगति और परम्परा (1948) संस्कृति और साहित्य (1949) भाषा और संस्कृति (1954) प्रगतिशील साहित्य की समस्याएँ (1954), लोक जीवन और साहित्य (1955), स्वाधीनता और राष्ट्रीय साहित्य (1956), आस्था और सौन्दर्य (1956), विराम चिह्न (1957), प्रेमचन्द और उनका युग, महावीर प्रसाद द्विवेदी और हिंदी जागरण, भारत में अंग्रेजी राज और मार्क्सवाद आदि। लम्बी और समृद्ध है। 'साहित्य अकादमी के अतिरिक्त सन् 1988 में हिंदी अकादमी, दिल्ली का 'शलाका सम्मान', 1990 में भारत-भारती पुरस्कार, 1991 में व्यास पुरस्कार एवं वर्ष 2000 में उन्हें हिंदी भाषा और साहित्य की आजीवन अप्रतिम सेवा के लिए हिंदी अकादमी दिल्ली का 'शताब्दी सम्मान' प्राप्त करने का गौरव मिला। हिंदी साहित्य के अनमोल रत्न डॉ. रामविलास शर्मा का निधन 29 मई 2000 को दिल्ली में हुआ। हिंदी साहित्य के विन्यास, विकास, श्रीवृद्धि और समृद्धि में डॉ. शर्मा की भूमिका अविस्मरणीय है। वे एक व्यक्ति ही नहीं, एक संस्था थे। साहित्य जगत के लिए उनका व्यक्तित्व और कृतित्व सदा आदरणीय बना रहेगा और अनुकरणीय भी।

44, शिव विहार, फरीदी नगर,
लखनऊ, उत्तर प्रदेश-226 015, मो. 0 94180 45584

कहानी

भावनाओं की चकाचौंध

● रमेश चंद्र शर्मा

मैंने उसे समझाया कि उसके होते हुए मुझमें शक्ति थी। बल था। पांच वर्ष पूर्व उसने मुझे शोकातुर किया और परलोक में अपना स्थान ग्रहण किया। अब जब भी मैं अकेला बैठा होता हूं तो मेरे अंतर में अतीत का चलचित्र सा मुझे मंत्रमुग्ध कर देता है। और उसकी यादों के झरोखे से एक परछाईं मुझे घूरने लगती है। मेरा गगन जैसा स्वाभिमान टूटने लगता है। कांच के दर्पण की भांति तिड़क गया है मेरा आत्म-विश्वास! उसने मुझे विस्तारित नज़रों से देखा। फिर हंस पड़ा। बोला, कि इसका इलाज है मेरे पास। चलो मेरे साथ। और उसने मुझे बिस्तर से उठने के लिए कहा। पास पड़े सोफासैट पर से उसने अपना बैग उठाया और खींचते हुए, बाजू से पकड़ कर, सोफे पर बिठा दिया। चलो तैयार हो जाओ। हम मॉल पर घूमेंगे। उस माहौल में तुम्हारी समस्या का समाधान ढूंढेंगे। वह कमरे से बाहर खड़ा हो गया। मैंने दरवाजा बंद किया। कपड़े बदले। और बाहर आकर उसके सामने खड़ा हो गया। अकेले बैठे रहते हो जी, तुम्हारा दिमाग पिशाच का कारखाना बन गया है। हम बाहर सड़क पर आ गए थे। धीरे-धीरे साथ-साथ चलने लगे। नहीं जी, मेरा मस्तिष्क 'नॉस्टैल्जिया' का कारागृह सा है।

शाम की शोभा को डूबते सूरज की धूप ने सजाया। मॉल की ओर लोगों, सैलानियों की चहलकदमी कायम थी। उसके पूछे बिना मैंने कहा कि दिन भर मैं कमरे, दरवाजे, खिड़कियों और दीवारों की बातों को सुनता रहा। एक दीवार बोली- यह बूढ़ा पढ़ते-पढ़ते थकता नहीं। खिड़की ने कहा- तभी तो मैं रोशनी को कमरे में फैलाती हूं। इस पर तरस खाती हूं। दरवाजा थोड़ा हरकत में आया। स्त्री की अंगड़ाई लेने वाली एक धीमी सी ध्वनि हुई, वह बोला- अब यह मुझे पूरी तरह बंद नहीं करता। इसकी पत्नी मुझे बंद करती थी, कभी खोलती थी, फिर बंद करता। यह क्रम जारी रहता था। अब इस आदमी की आंखें मेरी ओर झांकती रहती हैं। पर्दा ही खुला रहता है। कभी-कभी बहू या बेटा या पोता आते हैं। कोई कुछ लाता है। यहां खिलाने, पिलाने की सामग्री परोस कर छोड़ जाता है। फिर खाली बर्तन ले जाता है। बूढ़ा फिर पढ़ने बैठ जाता है। अकसर वह अखबार ही पढ़ता है। कभी-कभी लिखने बैठ जाता है। फोन की घंटी बजती है, तो बोलने से बाज़ नहीं आता। दीवार ने कहा कि उसके पीछे की दीवार को देखो, गंजों के सिर जैसी हो गई है। दिन भर उसकी पीठ के धक्के सहती है। अब तीसरी दीवार बोली- मैं उसके 'वार्डरोब' का सहारा हूं, मुझे उसकी सेवा करने में मज़ा आता है। चौथी दीवार से रहा नहीं गया। बोली- मैं दीवार हूं पर खिड़कियों को संभाले रखती हूं। सबके सब बोलते हैं। मैं ही सुनती हूं। मुझे मूक-बधिर इन सबका सहारा है।

वह और मैं अब एम.एल.ए. क्वार्टर वाले होटल के ऊपर पहुंच गए थे। यहां, आजकल सड़क में, कई लोग अजनबी लगे। मुझे तो सभी अपने मीत जैसे लगते हैं। इस वक्त सूरज की सुनहरी किरणों में अमलतास के फूलों जैसी खूबसूरती दीख पड़ती है, उसी ने मेरी बातों पर पूर्ण विराम लगाया। मुस्कुराया। किसी ने आकर उसे सामने से रोका। हाथ मिलाया- तो चल रहे हो गोष्ठी में? उसने कहा, हां! इस अपने वंदनीय मित्र को भी ले आऊंगा। मैंने कहा, नहीं, आप जाएं। मैं किसी रेस्टोरेंट में चाय नाश्ता करूंगा। फिर घंटे भर में स्कैंडल प्वाइंट पर मिलूंगा।

उसने कहा कि मुझे एक ऐसे लेखक के लेख के बोलने के बाद अपने विचार व्यक्त करने हैं जिसकी कल्पनाएं अविश्वास जगाने वाली होती हैं। मैंने कहा, जो चाहो बोल देना। मगर उसका सम्मान कायम रखना। वह चला गया। मैं अपनी धीमी चाल में चलता रहा। मैं भी तो लिखता हूं। शायद अंतिम दिन भी कलम मेरे हाथ में होगी। अब तो पढ़ना भी पड़ता है। पहले वह खूब पढ़ती थी। मेरे लिए संदर्भ जुटाती थी। मैं अपने उपन्यास को लिखने में व्यस्त रहता था। अब उस मित्र ने पीछे मुड़ कर देखा। मैं चला जा रहा था। 'कंबरमेयर' ब्रिज के पास पहुंचने वाला था। उसने आवाज़ देकर पूछा- वापस मेरे साथ ही चलेंगे ना। मैंने कहा- हां जी। मैंने चलते रहना है। मेरी यात्राएं अभी खत्म नहीं हुई हैं। आपके साथ ही लौटूंगा। अगले दिन फिर चलूंगा। उसने हाथ हिलाया। मैंने भी हिलाया और कहा 'बैस्ट ऑफ लक'।

इस सड़क पर मिलने वाले, लगभग सभी लोग बड़े प्यार और सद्भाव से मिलते हैं। आज इस मित्र से उल्लास, उत्सुकता और उत्साह के साथ मुलाकात हुई। उसने मेरा साक्षात्कार किसी पत्रिका में छपवाना है। शुक्र है, सोचने, समझने की शक्ति कायम है। स्मरण शक्ति भी बढ़ी उम्र की शिकार नहीं हुई। कई लोग

आश्चर्य करते हैं! पर हां, मेरी सहचरी के निधन के बाद बहुत कुछ अव्यवस्थित लगता है। इस साक्षात्कार के दौरान सुख-दुःख सब सुना डालूंगा। जो छपेगा, वह उसकी समझबूझ पर निर्भर है।

आज अचानक एक स्त्री मेरे सामने आकर खड़ी हो गई। मुस्कुराई! आधुनिक कट के कपड़े, बिलकुल मेम साहब! मुझे रुक जाना पड़ा। उसकी वह मुस्कान अब बातों में समाने लगी। आप, आप, मैंने उसे पुराने घरेलू नाम से पुकारा...। हां, मैं मैं ही हूं।

मैंने पूछा इतने अर्से बाद? शायद सन इकावन के बाद मिल रहे हैं। यानी साठ साल की लंबी अवधि के बाद! उसने हां के लिए सिर हिलाया। आप तो अमेरिका में बस चुकी थीं।

हां, वहां मेरा जवान बेटा है और पति भी है।

अकेली आई हो?

जी हां। मरण आई हां! अपने मुलक में।

हम अब ट्रेफिक से आने जाने की रोक न बनते हुए, बायीं ओर दुकानों की तरफ खड़े हो गए। वह भी अस्सी वर्ष की हो चुकी होंगी। क्योंकि मैं भी तो इसी आयु में ईश्वर के सहारे जी रहा हूं। यह मेरी 'क्लासफेलो' थीं। मैं गांव के साथ लगते कस्बे के स्कूल में पढ़ता था, और वह किसी बड़े शहर में शिक्षा ग्रहण कर रही थी। हमने मैट्रिक की परीक्षा एक ही साल में पास की थी। तुम बदली नहीं! उसने कहा आप भी तो वैसे-के-वैसे लगते हैं! बाल ही सफेद हुए हैं। आपने बड़ी तरक्की की। बहुत उच्च पद से रिटायर हुए। आप शिमला में बस गए हैं। मुझे सब पता है! चकित था! यह महिला, इस सीधे-सादे गांव के ग्वाले जैसे व्यक्ति को भूली नहीं! इतनी आधुनिक अमीर मां-बाप की बेटी, जो सन् 1945 की मैट्रिक पास, मुझ गांव के छोकरे से अब तक के पूरे जीवन-वृत्त से वाकिफ है। छुट्टियों में जब वह अपने माता-पिता के पास आया करती थी तो हमारे गांव पिकनिक मनाने आते थे वे सभी। मेरी जान-पहचान तभी हुई थी। उसके पिता और मेरे पिता जी घनिष्ठ मित्र थे। मेरा पहरावा बहुत ही साधारण लड़के जैसा था। मलेशिया का कमीज पायजामा। मैं इन सभी से इतराता था। हालांकि हम एक ही क्लास के विद्यार्थी थे। फिर भी हम में ज़मीन आसमान का अंतर था। उसने प्रस्ताव रखा। कल मेरे फ्लैट में आने की कृपा करें।



मैंने इस फ्लैट को बेच देना है। कैथू में है। स्कूल के साथ। शाम पांच बजे प्रतीक्षा करूंगी, क्योंकि मैंने उस घर को बेचना है। आप मुझे 'गाईड' करेंगे। मैं किसी 'ब्लैक ब्लैक' के झंझट से बचना चाहती हूं।

मैं इनकार न कर सका।

ज़रूर। मैंने वे फ्लैट देख रखे हैं।

मेरा फ्लैट सड़क के साथ है, अब वह बोली। वहां गाड़ी खड़े होने के लिए काफी जगह है।

उसने चलते-चलते मुझसे मेरी पत्नी के निधन का जिक्र करते हुए कहा, कि क्यों करूं अफ़सोस! मुझे पता है, वह, उसकी रूह, आपके साथ ही तो रहती है। पर हां, दुःख है मुझे उससे मिलने का मौका मिल जाता। आप मेरे पास आते तो उन्हें ज़रूर साथ में ले आते। खैर आप हैं, यह बड़े सौभाग्य की बात है। उम्र के इस प्रकार के पड़ाव में आकर दोस्तों-मित्रों को परखने का मौका मिल रहा है। उसने अपनी उन्मुक्त मुस्कुराहट से मुझे याद दिलाया कि जब मैं कॉलेज में था। तो इसे रिज पर मिलने का अवसर मिला था। 1950 या 1949 में! उस दिन यह मुस्कान आकर्षक हंसी में बदली हुई थी। तब मैं कुछ-कुछ कॉलेज का विद्यार्थी भी लग रहा था। ठीक-ठाक कपड़े थे। मैं बात करते हुए खिलखिल कर हंसता भी था। तब इसकी शादी हो चुकी थी। लड़कपन था। आंखों ने उसकी सराहना की, दिल में लगन की, उसकी मनोहरता की नदी सी बहने लगी थी।

वह अब तक सड़क के दूसरी ओर बैंच पर बैठी औरतों के बीच जा बैठी थी। उनसे बातें करने लगी थी।

मैंने जाखू मंदिर के पहाड़ की ओर देखा। जाखू हनुमान जी का मंदिर देवदार वृक्षों की ओट में छिपा हुआ था। देवदार के वृक्ष शाम के सूरज की किरणों में सराबोर थे। झूमे। हवा चली। मैं आगे बढ़ा। गर्मी थी। एक दुकान पर जूस पिया। अब तक तो मेरे उस साहित्यकार मित्र को आ जाना चाहिए। उसी दुकान पर आराम से बैठ कर जूस की चुस्कियां लेता रहा। एक जीने योग्य लंबा जीवन जीना भी अनुभव है। शिमला के स्कैंडल प्वाइंट और रिज के साथ के पार्क के वृक्ष यहां की पहचान बन चुके हैं। इनको देख कर लगता है कि शिमला अभी भी शिमला है। निष्प्राण लाजपत राय चौक, जिसे हम 'स्कैंडल प्वाइंट' कहते हैं किंतु मान्य है। यहां बिछड़े हुए भी मिल जाते हैं। इसकी यह परंपरा रही है। मेरा आत्मविश्वास जागा। शायद मेरे चेहरे पर चमक थी। संध्या की सहलाती धूप मेरे दिल के घाव भरने का प्रयत्न करने लगी। आदमी अकेला होकर भी पृथक नहीं। वह दूज का चांद जिसे देखने को लड़कपन का मन, तरस जाता था, आज चौथ का चांद बनकर सामने आया है। जवानी में महिवाल

जैसी आस आई और सोहनी अज्ञात को उफनती नदी पार करके महिवाल की हो गई। विवाह के बाद कौमार्यता की मजबूरियां नहीं रहीं। वह गई, तो ज़रूर, खंडहर से सुनसान जीवन में, पतझड़ का सा वातावरण है मेरे आंगन में, इस पुरानी पहचान ने तपते हुए पथरीले पथ पर घटा की सी छांव फैला दी। पर घटाएं भी तो मौसमी होती हैं। आती हैं चली जाती हैं। चंद लम्हे चैन के खोजते हुए, इस दोस्त मित्र जैसी स्त्री ने मुझे कुछ पल हंसने का मौका दिया। मैं गेयटी थ्येटर के बाहर खड़ा हो गया। और वह मेरा साहित्यकार मित्र भी जब बाहर आया, बोला, कुछ खाया, पिया।

नहीं! बेमौसम ही बहार आई है और अतीत के फूल खिले हैं। गर्मी ने पुनः वातावरण को अपनी ऊष्मा से भर दिया।

वह बोला, आपको खुश देखकर अच्छा लगा। अब क्या इरादा है? आओ वापस लौट चलें।

मैंने कहा, आपने तो अंदर ही चाय पी ली होगी। मैंने अभी-अभी जूस पिया है। हम जब उस बैंच के पास पहुंचे, जहां मेरी मित्र मुझसे विदा लेकर बैठ गई थी, वहां कोई सैलानी दिखने वाले और ही बैठे थे। मैंने साहित्यकार मित्र को वह सब कुछ बताया, जो देखा, जो इस नए मिलन में सहयोगी समय में बातें हुई। जो मुंह में आया, और मन ने चाहा, सभी सुना डाला। वह कई बार, अच्छा जी! बहुत खूब, इत्यादि जुमलों में जवाब देता रहा।

तुम इस मुलाकात के अर्थ को आंको और मुझे बताओ कि उस स्त्री के मन में क्या है? मुझसे ज्यादा आप ही उसे समझ सकते हैं। किंतु एक बात तो स्पष्ट है कि उस बुढ़िया ने आपको नहीं भुलाया?

मैंने बात काट कर कहा, उम्र कोई बुढ़ापे को आंकने की मशीन नहीं है। आप देखते तो, हैरान रह जाते। न माथे पर झुर्रियां,न चेहरे पर बुढ़ापे की छाप, बाल भी लगभग काले ही थे। मेकअप का छद्मावरण, बूढ़ों के बुढ़ापे को पूर्णतया छिपा नहीं सकता। उसका चेहरा खिलखिला था। मुस्कान जवानों जैसी ही थी। बूढ़े हो जाएं उसके दुश्मन! आयु के आंकड़े तो मिथ्या साबित हो गए हैं।... पत्नी की कौंधती यादों की हवाओं ने हमारे बीच, कुछ देर के लिए सन्नाटा सा भर दिया।

इस मुलाकात से मेरे विधुर हृदय के खालीपन को, कुछ पल के लिए ही सही, सहारा मिला। उसके लिए कुछ तो दिया। मेरा प्रिय सोच रहा था। हम चलते-चलते वापस अपने उस एम.सी. वार्ड में पहुंच गए थे, जहां मेरा घर था। और निकट की नई बसी बस्ती में वह रहता था।

उसने अपना मौन तोड़ा। बड़ी दिलचस्प दास्तान है आपकी। मैं कल तक प्रश्नावली तैयार कर लूंगा। कल फिर एक बैठक होगी और सवाल-जवाब लिख लिए जाएंगे। पत्रिका में छपवाऊंगा। जब छप जाएंगे तो सूचित करूंगा! कल तो मैंने उस मंजिला से मिलने जाना है। अगले इतवार को फिर मिलेंगे।

उसी समय नगर निगम की स्ट्रीट लाइटें जगमगा उठीं। शाम का जर्जर अंधेरा सा, रोशनी की झीनी चादर में छिप गया। मैंने उसे याद दिलाया। मैंने कभी आपको तुम कहा, कभी आप। अभी आपकी आग्रहपूर्ण हिदायत के पालन करने की आदत नहीं हुई। उम्र का तकाज़ा जरूर है कि मैं आपके पिता जी की सी उम्र का हूं। परंतु आप पत्रकार है। स्तंभकार हैं। इसलिए मेरा फर्ज बनता है कि आपको आप ही कहूं। वह हंसने लगा। विदाई के लिए हाथ बढ़ाया। मैंने हाथ मिलाया। उसने हंस कर कहा- आपकी मर्जी। मैंने कहा, बाई, बाई।

तुम इस मुलाकात के अर्थ को आंको और मुझे बताओ कि उस स्त्री के मन में क्या है? मुझसे ज्यादा आप ही उसे समझ सकते हैं। किंतु एक बात तो स्पष्ट है कि उस बुढ़िया ने आपको नहीं भुलाया? मैंने बात काट कर कहा, उम्र कोई बुढ़ापे को आंकने की मशीन नहीं है। आप देखते तो, हैरान रह जाते। न माथे पर झुर्रियां, न चेहरे पर बुढ़ापे की छाप, बाल भी लगभग काले ही थे। मेकअप का छद्मावरण, बूढ़ों के बुढ़ापे को पूर्णतया छिपा नहीं सकता। उसका चेहरा खिलखिला था। मुस्कान जवानों जैसी ही थी। बूढ़े हो जाएं उसके दुश्मन!

पूरी रात चैन की नींद सोया। वरना कई बार रात रात भर, नियति-विधि से पीड़ित, जागता रहता था। अगले दिन की सुबह मित्र मिलन की आशा में उम्मीदों के स्वप्न सजाने लगी थी। न मैं उसका हो सकता था, न वह महिला मेरी कुछ बन सकती थी। ग़म तो ग़लत होने की कोशिश में था, पर मुझे बदनाम करने की चेष्टा करने लगा। मैं उसके घर पहुंचा। ड्राइवर ने गाड़ी को रफ्तार दी। मैं निश्चित समय पर बाद दोपहर उसके घर के आगे सड़क पर रुक गया। वह इंतज़ार में थी। बाहर आई। बोली- हां ठीक है। कार किनारे लगा कर आ जाइए। मैं और मेरा ड्राइवर उसके 'फ्लैट' में प्रवेश करके छोटी सी ड्राइंगरूमनुमा जगह में बैठ गए। उसने कहा, क्या लेंगे, चाय, कॉफी या कोल्ड ड्रिंक। मैंने कहा, कुछ भी नहीं। हम खा पीकर घर से निकले हैं। ड्राइवर ने कहा, मुझे 'किचन' दिखा दीजिए, मैं कुछ ठंडा बना लाऊंगा। मैंने कहा, जी हां। मैं तो आपसे मिलने आया हूं। 'फ्लैट' देखकर आपको अपनी राय दूंगा।

ड्राइवर रसोई में गया, उसने उसे जरूरी जानकारी और हिदायत दी। फिर मुझे फ्लैट में घुमा-फिराकर कहा, कि मैं इसे इसी हालत में फर्निशिड ही, सज्जित, फर्नीचरयुक्त बेचना चाहती हूं। हम फिर उसी 'एनक्लोजर' में बैठ गए, जहां सोफा सैट आदि वाली बैठक बनी थी। वह मेरे पास ही बैठ गई। मैंने अपना बाज़ू उसकी गर्दन के पीछे से घुमाकर उसके दाएं कंधे पर रख रख दिया। मैंने

आलेख

तनाव के सागर में डूबती जीवन नैया

● रीना मौर्य 'मुस्कान'

आज के आधुनिक दौर में हमने खुद को एक मशीन का रूप दे दिया है। जीवन में कुछ करने की ललक और समाज में खुद को स्थापित करने की जिद मात्र से मनुष्य भीतरी स्वभाव से खोखला, असंवेदनशील एवं एकाकीपन का जीवन जी रहा है। परिवारजनों के साथ बैठना-कुछ पल उनके साथ बिताकर अपने और सबके सुख-दुःख की बातचीत, अब ये दौर बहुत पीछे छूट गया है। कहने को तो हमारे पास एक-दूसरे से जुड़ने के कई माध्यम हैं, पर यह माध्यम केवल मशीनी माध्यम के तौर पर ही है इनमें अपनत्व का अहसास कहाँ। ऐसे में युवा पीढ़ी एक दोहरी जिंदगी जी रही है। एक मुखौटे का सहारा लिए, जहां बाहरी आवरण बहुत चमकदार है पर भीतर ही भीतर एक एकाकी जीवन है। जहाँ कोई अपना न दिखता हो जिससे वह अपने मन की बात कह सके अपनी समस्याओं को साझा कर सके। एक घुटन भरी जिंदगी आखिर कब तक सहन कर सकता है। कई परिणाम हमारे सामने हैं, ऐसे तनावग्रस्त युवाओं द्वारा आत्महत्या करने जैसे कई मामले सामने आये हैं। जब युवा पीढ़ी ने तनावग्रस्त होकर आत्महत्या की है, तो क्यों नहीं इसकी वजह की जाँच माता-पिता खुद करें। अपने बच्चों से एक मैत्रीपूर्ण व्यवहार रखें। उस पर पढ़ाई का या अन्य किसी भी बात का कोई दबाव ना हो, घर का वातावरण मैत्रीपूर्ण हो, जिससे वे आपको अपने मन की बातें और तकलीफें खुले विचारों में सहज रूप से आपके सामने रख सकें। परिवार के वरिष्ठ भी बच्चों की भावनाओं को समझते हुए उनकी इच्छा उनकी रूचि का सम्मान करते हुए उनको सही दिशा दें। ऐसा ना हो की कहीं आपकी महत्वाकांक्षा आपके बच्चों को आपसे दूर कर दे। बच्चों से जुड़ने का उनके मन से जुड़ने का एक प्रयास तो होना ही चाहिए, क्योंकि जीवन समाप्त हो गया तो सब कुछ समाप्त हो जाएगा। सारी महत्त्वकांक्षाएँ धरी की धरी रह जाएंगी और हाथ में आएगी तो केवल हार। इसलिए अपनी इच्छाओं की अग्नि में बच्चों की खुशियों की आहूति देना अपने ही कोख को सूना करना है। बच्चे और माता-पिता दोनों को ही एक दूजे की भावनाओं को समझना होगा। एक बात बच्चों को समझना बहुत ही जरूरी है कि माता-पिता से बढ़कर हमारा भला चाहने वाला इस दुनिया में और कोई नहीं है।

परिवारजनों के साथ बैठना-कुछ पल उनके साथ बिताकर अपने और सबके सुख-दुःख की बातचीत, अब ये दौर बहुत पीछे छूट गया है। कहने को तो हमारे पास एक-दूसरे से जुड़ने के कई माध्यम हैं, पर यह माध्यम केवल मशीनी माध्यम के तौर पर ही है इनमें अपनत्व का अहसास कहाँ। ऐसे में युवा पीढ़ी एक दोहरी जिंदगी जी रही है। एक मुखौटे का सहारा लिए, जहां बाहरी आवरण बहुत चमकदार है पर भीतर ही भीतर एक एकाकी जीवन है।

बिल्डिंग नं. 6, फ्लैट नंबर 406,
सागबाग, मारोल, अंधेरी कुरला रोड,
अंधेरी- (ई.), मुंबई-400059

क्षण भर के लिए उसे अपनी ओर दबाया। दोस्ती का दम भरा। वह चुप रही।

यह अनायास ही हो गया। इससे पहले कि मैं उससे क्षमा मांगता, उसके बाहर के दरवाजे से घंटी बजी। मैंने अपना हाथ उसके कंधे से उठा लिया। स्त्री तो स्त्री होती है और पुरुष पुरुष ही है। असमंजस में था। मैंने यह क्या किया। उसने मुझे सहमत नज़रों से देखा, खड़ी हुई। बाहर का दरवाजा खोला दिया। अपने दिल को समझाया, विदेश में रहकर इसकी सभ्यता में कुछ तो फर्क आना ही था। ड्राइवर ट्रे में ठंडा परोस लाया। दो ही गिलास थे। अब तक कमरे में दो और स्त्रियां प्रवेश कर गईं। एक विदेशी लगी, दूसरी विदेशी पहनावे में भारतीय नारी थी। दोनों शायद पास वाले 'पब्लिक स्कूल' में पढ़ाती थीं। उसकी घनिष्ठ मित्र लगी, क्योंकि उसने हंस-हसंकर उनका स्वागत किया, उनसे गले मिली। आते ही उन्हें अपना घर दिखाने लगी। बोली, मैं बीस लाख से कम नहीं लूंगी।

मैंने ठंडा पिया, दूसरा गिलास ड्राइवर को थमाया, तुम भी पियो और फिर चलते हैं।

इतने में वह मेरी महिला मित्र, फिर मेरे पास बैठ गई और उसकी वे दोनों सहेलियां साथ वाले सोफे पर बैठ गईं। मैं खड़ा हो गया। ड्राइवर अपनी कार के पास जा चुका था। मैंने कहा, अब चलता हूं। आप इन सहेलियों से बात करें। मुझे आज्ञा दें। उसने हामी भर दी। फिर मुस्कुराई। दरवाजा खोला। हाथ जोड़ दिए। कहने ही वाला था- यह मुलाकात नहीं है, सपना है, जो टूट गया!!

रिटायर्ड आई.ए.एस., टकसाल हाउस, छोटा शिमला,
शिमला, हिमाचल प्रदेश-171 002, मो. 0177 2621199

कहानी

खोया हुआ सुख

● सूरत ठाकुर

रूलदाराम को अपनी टपरी के नीचे काम करते हुए देखकर मुझे आश्चर्य हुआ। वही पुराने कपड़े, काला सा लंबा कुर्ता, सलेटी रंग का पाजामा और आधे बाजू की जैकेट। यह रूलदाराम की पुरानी पोशाक है, जिसे वह टपरी के नीचे काम करते हुए पहना करता था। आज लगभग पांच वर्ष बाद अपनी उस पुरानी मैली- कुचैली गद्दी के ऊपर बैठकर वह बूट पालिश कर रहा था। मुझे आश्चर्य इस बात से नहीं हुआ कि रूलदा ने अपना पुराना व्यवसाय फिर क्यों शुरू किया। हैरानी इस बात से हुई कि जिसने पांच साल पूर्व जूते पालिश करने का काम छोड़ दिया था, वह दोबारा वही काम क्यों करने लगा। उसका बेटा कॉलेज में प्रोफेसर है। अच्छा वेतन लेता है। फिर क्यों इसे उसी पुराने काम को करने की जरूरत पड़ी होगी। हर व्यक्ति की अपनी जिंदगी होती है, मजबूरी होती है, अपने हालात होते हैं। सबके जीवन में सुख-दुख दिन और रात की तरह बारी-बारी से आ धमकते हैं। समय की मार किसी को नहीं छोड़ती। हो सकता है रूलदा राम की भी कोई मजबूरी रही होगी, इसीलिए उसे मजबूरन दोबारा वही पुराना काम करना पड़ गया।

शायद तीन दशक पहले की बात है। मैं दसवीं पास करके गांव से निकलकर कालेज में दाखिल हुआ था। कालेज मेरे गांव से 40 किलोमीटर की दूरी पर छोटे से कस्बे में था। स्कूल में स्कूल द्वारा निर्धारित खाकी पैंट, कमीज तथा सफेद रंग की रकावियां ही पहननी पड़ती थीं। मेरे गांव के जो युवक कालेज पढ़ते थे, उनसे सुना था कि वहां खाकी कपड़े नहीं चलेंगे। कालेज में सभी लड़के टेरीकाट की पेंट-कमीज और पांव में चमड़े के काले जूते पहनते हैं। सूटिड-बूटिड होकर कालेज न जायें तो पिछड़े गंवार का तगमा लगते देर नहीं लगती। इसलिए कालेज में दाखिला लेने से पूर्व नये कपड़े सिला लिए थे। उस कस्बे में म्युसिपैलिटी वालों ने रेहड़ी-फड़ी वालों के साथ बस स्टैंड के एक किनारे पर बूट पालिश करने वालों को पांच-सात दुकानें निर्धारित की हुई थीं। वहीं से दफतर जाने वाले बाबुओं और कालेज जाने वाले प्रोफेसरों व युवकों का रास्ता था।

छह फुट चौकोर जगह के ऊपर इन्होंने टूटे-फूटे टीन की छतें लगा रखी थीं, ताकि बारिश और धूप से बचाव हो सके। पास में एक बक्सा, सामने लोहे का आधा फुट ऊंचा पावा, रबी, कटार, जमूर, मोगरी का टुकड़ा, तीन चार बूट पालिश के लिए भूरे और काले रंग के ब्रश, उतनी ही भूरे और काले रंग की शीशियां, पालिश की डिब्बी, बकसुआ तथा चपटा सा तीखा धागे काटने वाला छुरा। ये लोग सुबह नौ बजे के लगभग आकर बक्से से यह सब सामान खोल देते और शाम अन्धेरा होते-होते बक्से में डालकर उसमें ताला लगाकर अपने घरों को लौट जाते। पालिश करने वालों में चंदू हीरू, चाहड़ू, जगन और रूलदा राम के अतिरिक्त और भी दो तीन लोग थे।

मैं पढ़ने में ठीक-ठाक था। दसवीं में प्रथम श्रेणी में पास हुआ। अपने स्कूल में प्रथम आया। गांव में मेरा नाम हो गया। मेरे पिता जी पुहाल थे। जब लोग कहते एक पुहाल का बेटा स्कूल में प्रथम आया है, तो बापू का सीना गर्व से फूल जाता। उन्होंने स्कूल के हैडमास्टर के कहने पर मुझे कालेज में पढ़ाने का निर्णय लिया। हां. जब मैं नये-नये कपड़े और चमड़े के काले जूते पहनकर गांव के ही एक सीनियर लड़के के साथ दाखिल होने कालेज गया तो मुझे लगा था कि मैं किसी फिल्म का हीरो बन गया हूं।

खैर, बात हो रही थी रूलदाराम बूट पालिश करने वाले की। मैंने सबसे पहले उससे ही अपने बूट पालिश करवाये थे। उसने बड़े प्यार से पालिश किये थे। उसके हाथों में कमाल था। बूट शीशे की तरह चमकाता। पालिश करने के बाद वह करीम लगाता और अन्त में जब उस पर कपड़ा फेरता तो बूट की चमक देखते ही बनती। रूलदाराम ने ग्राहकों को बैठने के लिए पास में ही अपना बक्सा रखा होता, जिसके आगे दो एक चप्पलों की जोड़ी रखी रहती, ताकि बूट पालिश करवाने वाला उन्हें पहन सके। गांव से आने के बाद, मैं हर सोमवार उससे अपने बूट पालिश करवाता। जब तक कालेज में पढ़ता रहा, उससे ही बूट पालिश करवाता रहा। मेरा उसके साथ एक अनाम सा रिश्ता जुड़ गया था। वह मेरी पढ़ाई के बारे में पूछता। मेरे गांव की बातें करता। मुझे कभी नहीं लगा कि वह कोई गैर है। कई बार वह सोमवार को नहीं आता, तो मैं पूरे हफ्ते बूट पालिश नहीं करवाता।

स्नातक करने के बाद एम.ए. करने के लिए बड़े शहर जाना

पड़ा। फिर भी जब मैं इस कस्बे में आता, तो उसके पास दो घड़ी जरूर बैठता और उससे कस्बे का हाल-चाल पूछता। इसी दौरान उसने बताया कि उसने विवाह कर लिया है, उसके एक बेटा भी हुआ है। पढ़ाई पूरी करने व नौकरी तलाश करने के बीच चार-पांच वर्ष बीत गए। गांव आते-जाते उससे सम्बन्ध बना रहा। बाद में मेरी पोस्टिंग दूसरे शहर में एक राष्ट्रीयकृत बैंक में हो गई। इस बीच उससे मिलना नहीं हुआ। कोई छः वर्ष बाद मेरा स्थानांतरण इस कस्बे में हुआ। बैंक जाने से पूर्व सुबह नौ बजे मैं रूलदा राम के पास गया। इतने वर्षों बाद मुझे देखकर उसके चेहरे की भंगिमा बता रही थी कि वह प्रसन्न है। उसने बक्से के ऊपर की धूल झाड़ते हुए मुझे बैठने का संकेत किया और बोला-बाबू इस बार बहुत समय बाद आए हो।'

'लगभग छह साल बाद।' मैंने बक्से पर बैठते हुए कहा। अब तो साहब बन गए होंगे। बूट पर ब्रश मारते हुए उसने पूछा।

'हां... मैनेजर हो गया हूं। इसी कस्बे में ट्रांसफर होकर आया हूं।'

'तब तो रोज मिलना होगा।'

'बिलकुल... तुम्हारा बेटा कैसा है, बड़ा हो गया होगा अब तो।'



आठवीं में पढ़ता है। हर साल प्रथम आता है। उसके चेहरे पर गर्व की रेखा स्पष्ट दिख रही थी। बूट मेरे हवाले करते हुए उसने ही बात आगे बढ़ाते हुए कहा, बाबू मैं भी अपने बेटे को आप की तरह बड़ा आदमी बनाना चाहता हूं।' उसकी आंखों में बेटे के लिए उज्ज्वल भविष्य के सपने साफ दिख रहे थे। मैंनें उसे प्रेरित करते हुए कहा, क्यों नहीं बन सकता। वह भी एक दिन अच्छी नौकरी पर लगेगा, बस उसकी पढ़ाई जारी रखना।'

'मैं अपना पेट काटकर और कष्ट सहकर भी उसे ऊंची तालीम दिलाऊंगा बाबू। और जब मेरा बेटा नौकरी पर लगेगा, तब यह काम छोड़ दूंगा। आराम से जिंदगी जीऊँगा।' वह कहीं सपनों की दुनियां में डूबता हुआ बोला।

'तब तुम्हें यह काम करने की आवश्यकता ही नहीं रहेगी।' मैंने उसे उत्साहित करते हुए कहा और जूते के तस्में बांधकर बैंक की ओर मुड़ गया।

इस तरह कुछ बरस सरक लिए। बैंक की नौकरी ही ऐसी है कि एक ब्रांच में तीन बरस से अधिक नहीं रह सकते। इसलिए एक कस्बे से दूसरे, दूसरे से तीसरे में स्थानांतरित होते हुए भी मैं साल में दो बार अवश्य अपने गांव आता और रूलदाराम से अवश्य मिलता। उसके बेटे की पढ़ाई के बारे में पूछता। एक बार गर्मियों में 31 जून का काम निपटाकर मैं घर आया तो मुझे उसी मुस्तैदी से बूट पालिश करता हुआ रूलदाराम मिला। बहुत खुश लग रहा था। खुशी एक चिड़िया है, जो दिलों में चहकती है। तितली है, जो हमारी हथेलियों पर दमकती है। एक अनुभूति है, जो मन की क्यारी में महकती है। ऐसी ही खुशी उसके चेहरे से साफ झलक रही थी। जैसे ही मैं उसके पास पहुंचा तो वह खुशी से चहक उठा और मुझ से बोला, 'बाबूजी ! आज मेरा सपना पूरा हो गया।'

'कैसा सपना?'

'मेरा बेटा नौकरी लग गया। अपने कस्बे के कालेज में ही प्रोफेसर हो गया है।'

'बधाई हो।' उसके उल्लास को देखते हुए मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई।

'बाबू! मेरा जीवन सफल हो गया। मेरी तपस्या काम आ गई। भगवान ने मेरे सपने को पूरा किया। मेरी मेहनत का फल दे दिया। कल से यह काम बन्द। बेटा भी कहता है, अब मुझे यह काम करने की आवश्यकता नहीं है। बाबूजी मैं सचमुच बहुत खुश हूं।' वह अपनी रौ में कहता गया।

गरीब बूट पालिश करने वाला, जो सौ दौ सौ रुपये रोज कमाता है। उसी से परिवार भी चलाता है और बेटे की पढ़ाई का खर्च भी पूरा करता है। जिस प्रकार बहुत दिनों बाद भूखे को रोटी मिल जाती है, तो वह चहक उठता है। उसी तरह अपने बेटे की नौकरी लगने की खुशी रुलदाराम से बेहतर और कौन समझ सकता था।

'जिसका बेटा पढ़-लिख कर अफसर बनता है, उसके लिए इससे बड़ी खुशी और क्या हो सकती है?' मैंने उससे कहा।

मेरे सामने ही अपनी टपरी पड़ोसी जगन को सौंपते हुए उसने कहा, 'देख भाई जगन! मैं अपनी यह टपरी तुम्हें सौंप रहा हूं। यह किसी और को न देना।'

'किसी और को क्यों न दूं?'

'इसलिए कि कभी-कभी तुम्हारे पास आकर गप्पे मारने आया करूंगा। मैं इस जगह को कभी नहीं भूल सकता। इसी जगह पर मेहनत करने के कारण ही तो मेरा बेटा इस मुकाम पर पहुंचा है। इसलिए यह जगह तुझे अमानत के तौर पर दे रहा हूं। इस का किराया भी मैं ही म्युसिपैलिटी को दिया करूंगा।'

'अब तुम्हें यहां आने की आवश्यकता नहीं रहेगी। तुम्हारे कष्ट वाले दिन गए। अब तुम्हारे अच्छे दिन आ गए हैं।'

मैंने कहा।

रूलदाराम ने मेरे सामने ही अपनी टपरी जगन के हवाले की पहने हुए कपड़े बक्से में डाले और दूसरे कपड़े पहनकर घर की ओर रुखसत हुआ।

आज.......... पांच बरस बाद रुलदाराम सिर झुकाये अपने उसी काम को कर रहा है, जिसे वह छोड़ कर गया था। मैं उसके पास गया और उत्सुकता से पूछा, 'रुलदा भाई। यह क्या? आपका बेटा तो अच्छी नौकरी पर है। तब दोबारा यह काम क्यों ?' रुलदाराम ने अपना चेहरा ऊपर उठाया और मुझे नमस्ते करते हुए बोला, बाबू जब औलाद रिश्तों को तोड़ कर दूर चली जाये, तो पेट पालने के लिए कुछ तो करना ही पड़ता है। उसके चेहरे में उदासी की लकीरें साफ नजर आ रही थीं।

'क्या?... बेटे को कुछ हो गया।' मैंने चौंकते हुए कहा।

'नहीं बाबू... ऐसी बात नहीं है। मेरा घर छोटा था न, इसलिए उसने दूसरा घर ले लिया है।" उसने नजरें नीची करते हुए कहा।

मुझे लगा वह कुछ छुपा रहा है। मैंने उसे कुरेदते हुए कहा, 'वह खर्चापानी तो देता होगा तुम्हें?'

मैं उसके पास गया और उत्सुकता से पूछा, 'रुलदा भाई। यह क्या? आपका बेटा तो अच्छी नौकरी पर है। तब दोबारा यह काम क्यों ?' रुलदाराम ने अपना चेहरा ऊपर उठाया और मुझे नमस्ते करते हुए बोला, बाबू जब औलाद रिश्तों को तोड़ कर दूर चली जाये, तो पेट पालने के लिए कुछ तो करना ही पड़ता है। उसके चेहरे में उदासी की लकीरें साफ नजर आ रही थीं।

'खर्चापानी देता तो... मैं क्यों फिर से यह काम करने लगता। यह कहते हुए उसका गला भर्रा गया। कुछ देर वह चुप रहा। मुझे लगा उसे कुरेदकर मैंनें ठीक नहीं किया। मैं भी चुप रहा। कुछ देर बाद वह संयत होता हुआ बोला, बाबू मुझे लगता है आपको अपनी व्यथा सुनाकर शायद मैं हलका हो जाऊंगा। मेरा दिल कहता है कि आपको बताना गलत नहीं होगा।'

उसने कहना शुरू किया... मेरा बेटा मेरा पूरा खयाल रखता, जेबखर्च के लिए रुपये देता। गांव वालों से अपने बेटे की प्रशंसा सुनते हुए मेरा सीना गर्व से फूल जाता। मैं अपने आप को दुनिया का सबसे खुशनसीब बाप समझने लगा। पत्नी से भी कहता कि हमने एक होनहार बच्चे को जन्म दिया है। शायद पिछले जन्म में हमने अच्छे कर्म किए होंगे, इसीलिए हमारा बेटा आज अच्छे मुकाम पर पहुंचा है। बेटा कालेज से आते समय कभी केले, कभी आम, कभी संगतरे लाता, हमें प्यार से खिलाता उसकी मां तो उसकी बलैयां लेती ।

पंछी जैसे पंख फैलाकर दूर आकाश में ओझल हो जाता है, वैसे ही एक बरस उड़ गया, हमें पता ही नहीं चला। अब हम अपने रिश्तेदारों से बेटे के लिए अच्छी सी बहू लाने के ख्वाब देखने लगे। एक दिन मैंने बेटे से कह ही दिया, बेटा! अब तुम्हें विवाह कर लेना चाहिए। हमने पार के गांव में एक लड़की देखी है, दसवीं तक पढ़ी है। सिलने-बुनने का काम भी जानती है। अगर तुम चाहो तो बात चला दें।'

बेटे ने तो पहले से ही अपने साथ पढ़ने वाली लड़की छांट रखी थी। उसने तुरन्त कहा, 'बापू! मैं और मधु एक दूसरे को पसन्द करते हैं।'

'ये मधु कौन है?'

'मेरे साथ ही कालेज में पढ़ती थी। हम शीघ्र ही विवाह करने वाले हैं।'

'यह तो अच्छी बात है। बता दे उसका घर कहां है? मैं कल ही जाकर उसके मां बाप से बात कर लेता हूं।'

'नहीं... नहीं बापू! वह बड़े घर की बेटी है। आपको वहां जाने की आवश्यकता नहीं है और न ही उसके घर वाले विवाह के लिए राजी होंगे। इसलिए हम शीघ्र ही मंदिर में शादी करने वाले हैं।' बेटा बोला ।

कुछ सप्ताह बाद सचमुच उन दोनों ने विवाह कर लिया। मैं और मेरी जोरू भी खुश थी कि इतने बड़े घर से उनकी बहू आई है। दोनों कमाते हैं। परन्तु दिल के एक कोने में अवश्य मलाल था कि हम धूम-धाम से बेटे का विवाह नहीं करवा सके। हमें अपनी बिरादरी और गांव वालों को बेटे की शादी दिखाने का बड़ा चाव था।

हमारा छोटा सा डेढ़ मंजिला घर था, जिसमें नीचे वाले कमरे में हम स्वयं रहते थे, ऊपर वाला कमरा रसोई के तौर पर प्रयुक्त होता था। जब बेटे ने विवाह किया तो हमने अपना कमरा उन्हें दे दिया और खुद पति-पत्नी रसोई में रहने लगे थे, ताकि बेटे-बहू को कोई तकलीफ न उठानी पड़े।

बहू बड़े घर की थी। उसके नखरे भी वैसे ही थे। मेरा छोटा घर उसे छोटा लगता। बात-बात में कह उठती कि इस गंदे घर में गंदे लोगों के बीच रहकर उसे घिन्न आती है। उसके मोहपाश में बेटा भी इस कदर खो गया कि उसके इशारे पर उनसे दूर-दूर रहने लगा। जो बेटा कालेज से आने के बाद हमसे ढेर सारी बातें करता था, वह पत्नी के आते ही कमरे में बन्द हो जाता। पहले जो ताजे मौसमी फल ले आता, अब हमें फलों के दर्शन दुर्लभ हो गए। पहले वह मेरे लिए सिगरेट-बीड़ी ले आता। अब वह भी बन्द हो गई। जेब खर्च भी बन्द। बहू तो वैसे ही हमसे बात नहीं करती थी। अब बेटे ने भी बोलना छोड़ दिया।

एक दिन मैंने बेटे से झिझकते हुए कहा, 'बेटा! मेरी बीड़ी खत्म हो गई है। क्या ला के दोगे। इससे पहले की बेटा कुछ कहता, मेरी यह बात बहू ने सुन ली। वह तमक कर बोली, सारा दिन बीड़ी पीते रहते हो और जहां-तहां थूकते रहते हो। तुम्हारे

थूकने से हम भी बीमार पड जायेंगे। और बेटे से मुखातिब होते हुए बोली, खबरदार, जो इन्हें आज के बाद बीड़ी-तम्बाकू लाकर दिया तो।

एक दिन तो हद हो गई। बेटे के कुछ दोस्त घर आए हुए थे। मैंने बेटे को अपने दोस्त से कहते हुए सुना कि ये हमारे नौकर हैं। यह सुन कर मुझे लगा जैसे मेरे कान में किसी ने जलता हुआ सीसा डाल दिया हो। छाती पर नुकीला पत्थर घुसेड़ कर हृदय को चीर दिया हो। इतना कष्ट तो मुझे बहू के कटाक्ष से भी न होता था, जितना बेटे की इस बात से हुआ। पर अपनी व्यथा किससे कहता। मुझे समझ नहीं आ रहा था, करूं तो क्या करूं।

गांव बेहड़ में हम जितनी शेखी अपने बेटे की बघारते थे, हमारी सारी शेखी अब बिसूरने लगी। अब तो एक-एक दिन काटना मुश्किल हो गया। जेब में एक धेला भी नहीं होता था, बीड़ी कहां से खरीदता। हमारी जिंदगी गुलाम जैसी हो गई, मैं न तो बाहर कमाने जा सकता था और न ही अपनी इच्छा पूरी कर सकता था। मुझे लगा जैसे हम अपने ही घर में नजरबंद हो गये हैं।

एक दिन मैं पत्नी के साथ गांव में किसी विवाह में गया हुआ था। वहां रिश्तेदारों ने मुझे थोड़ी सी पिला दी। हम जब घर लौटे तो बहू के साथ-साथ बेटा भी गुस्से में था। बेटे ने गुस्से में कहा, आपने हमारी नाक काट ली। हम इतने बड़े प्रोफेसर और हमारा बाप गांव में जाकर सूर पीकर आ रहा है, शर्म आनी चाहिए आप को। बेटे की डांट सुन कर मुझे जैसे सांप सूंघ गया। पत्नी तो वैसे ही डरी सहमी रहती थी। उसकी सिट्टी-पिट्टी गुम हो गई। बीड़ी खरीद लाता और शाम को गुड़ की बनी हुई शराब का एक अधिया गले से नीचे गटक लेता और घर आकर आराम से सो जाता। न कोई धिक्कारने वाला, न कोई रोकने वाला और न टोकने वाला। कुछ रुपये बचाकर बेटे की पढ़ाई में खर्च कर लेता। कितना सुखी था मैं तब। दाल रोटी में गुजारा हो जाता। मुझे याद है, जब बेटा विश्वविद्यालय में पढ़ने गया, तो मैंने देर रात तक टपरी पर बैठकर काम करना आरंभ किया था। बीड़ी का खर्च घटा लिया था। देसी दारू भी कभी-कभी ही पी लेता, ताकि बेटे की पढ़ाई का खर्चा पूरा हो सके। जब बेटा नया-नया नौकरी लगा था, तो उसने ही मुझे अंग्रेजी शराब की बोतल लाकर दी थी और कहा था कि कभी-कभी पिया करे।... ब्याह करते ही सब कुछ बदल गया।

फिर भी बेटे-बहू की खातिर हमने परिस्थिति से समझौता कर लिया। इसी ढर्रे पर अपनी जिंदगी गुजारते हुए लगभग तीन साल बीत गए। बहू गर्भवती हो गई। वह प्रसव के लिए हस्पताल गई। हस्पताल में एक नन्हें शिशु को जन्म दिया। जैसे ही मुझे यह खबर मिली कि हमारे पोता हुआ है, तुरन्त पोते को देखने के लिए हस्पताल की ओर चल दिया। हस्पताल के गेट पर ही बेटा मिला। बेटे ने वहीं से यह कह कर लौटा दिया कि डॉक्टर ने किसी को भी बहू और पोते को देखने से मना किया है।

पांच दिन बाद बहू और पोता हस्पताल से घर लौटे। मेरी पत्नी ने प्रसन्नता से जब पोते को पकड़ने के लिए अपने हाथ उसकी तरफ बढ़ाये, तो बहू ने डांटते हुए टोक दिया, अपने गन्दे हाथों से मेरे बेटे को मत छुओ इसे संक्रमण हो जाएगा। यह सुनते ही हमें ऐसा झटका लगा, जैसे बिजली का नंगा तार छू लिया हो। उसके बाद हमें पोते को पकड़ने की हिम्मत ही नहीं हुई।

हमने कितने अरमान पाले थे कि पोते के साथ खेलेंगे। उसे लोरी सुनायेंगे, उसे गोदी में बिठाकर गांव में घुमायेंगे। यहां तक कि उसे अपने साथ ही सुलायेंगे, परन्तु बहू की डांट ने हमारे सारे अरमानों पर पानी फेर दिया। हमारी सारी खुशी काफूर हो गई। मुझे लगा, शायद तभी बेटे ने मुझे हस्पताल गेट से ही वापिस लौटाया था, ताकि हमारा अपना पोता हमारे छूने से मैला न हो जाये। जैसे हम जिन्न हों या भूत हों। जिस प्रकार भूतों से बचाने के लिए बच्चे के गले में ओझा द्वारा अभिमंत्रित धागा बांधा जाता है। उसी तरह हमारे अपने खून, हमारे अपने बेटे ने, पोते को हमसे दूर रखना आरम्भ कर दिया। अगर हम दूर से भी पोते की ओर देखने लगते, तो बहू की घूरती आंखें हमें आंखें फेरने पर मजबूर करतीं। पोते पर हमारी छाया भी न पड़े, इसलिए एक दिन बेटे ने अपने कालेज के पास ही दो कमरों का एक मकान किराये पर ले लिया, और दूसरे ही दिन अपना सारा सामान समेट कर हमें अकेला छोड़ कर चला गया।

जिस दिन बेटा-बहू पोते को लेकर चले गये, उस शाम हम पति-पत्नी ने खाना नहीं खाया। पत्नी तो जैसे सकते में आ गई। मैंने मन कड़ा कर लिया। सोचने लगा, इससे तो हम निस्संतान ही ठीक थे। आज यह दिन तो न देखना पड़ता। जिस बेटे के लिए पेट काटकर दिन रात मेहनत की पढ़ाया लिखाया, ताकि बुढ़ापे में हमारा सहारा बन सके। परन्तु समय आने पर वही बेटा हमें अछूत बनाकर छोड़ गया। उस रात हमें नींद नहीं आई। आती भी कैसे? मैं रात भर सोचता रहा।

सुबह होते मैंने सोच लिया और पत्नी से कहा, 'तू मुझे दो रोटी बनाकर पोटली में बांध ले, मैं काम पर जाऊंगा। मैं अपना वही पुश्तैनी काम फिर से शुरू करूंगा और इज्जत की रोटी खाऊंगा। मेरे हाथों में अभी भी वही कौशल है।'

पत्नी मेरी बात से सहमत होते हुए बोली, हां, यही ठीक रहेगा। इस प्रकार आपका दिल भी लगेगा और हमारा खोया हुआ सुख भी वापिस लौटेगा।'

'बाबू यही है मेरी कहानी। अब तो एक साल हो गया, न मेरा बेटा आता है, न बहू' और अपने आंसुओं को पलकों की पोरों में छुपाते हुए रुलदा राम बूट पर जोर-जोर से ब्रश फेरने लगा।

मैं सोचने लगा, क्या ऐसी भी होती है संतान। शायद हां. इतिहास में ऐसे अनगिनत साक्ष्य जो भरे पड़े हैं।

गांव भून्तर, तहसील भूंतर, जिला कुल्लू, हि.प्र.-175125

कहानी

बसंती दादी

● मनमोहन गुप्ता

गौरवर्ण मुखारविन्द। नासिका शुक। उस पर थोड़ा गोल बड़ा सा नाक का कांटा। पैरों में लच्छे चांदी के। वह भी केवल दो-दो। श्वेत केश युक्त वाली हमारी बसंती दादी थी। ग्राम अवार निवासी हमारी दादी सबकी लोकप्रिय थी गांव में।

गांव का हर बालक, युवा, प्रौढ़ दादी ! राम राम... दादी... राम रामू। कहकर अभिवादन करते थे उसका। युवावस्था में विधुर हो जाने पर जो दर्द उन्हें हुआ था वह गांव वालों द्वारा दिये गये सम्मान से धीरे-धीरे विलुप्त हो गया था।

बसंती दादी दुकान चलाकर अपनी उदरपूर्ति करती थीं। उनके दो बेटे और एक बेटी के बारे में गांव में जरूर चर्चा होती थी। बसंती दादी की इस प्रकार तीन संतान थीं। बड़ा बेटा बहुत ही परिश्रमी था। आजीविका के लिए किसी दूसरी जगह जाकर हलवाई का काम करता था। कोई कहता था कि नहीं वह तो गोविन्दा के साथ सट्टा लगाता था। गोविन्दा लड़कियों का व्यापार भी करता था। बसंती दादी के बड़े बेटे छीतर ने उसी के माध्यम से अपना घर भी बसा लिया था। लेकिन उसकी पत्नी वाचाल थी। इसीलिए वह अपनी देहरी लांघ जाती थी।

उसी का परिणाम यह हुआ कि एक दिन बसंती दादी का ये बड़ा लड़का आग लगाकर आत्महत्या करने को विवश हो गया था। बसंती दादी आज भी कहती है- 'नौ महीने तक पेट में रखकर मैंने जो दुःख उठाए वह मैं ही जानती हूँ। उसे मैंने कितने लाड़ प्यार से पाला था यह मेरा हृदय ही जानता है। पहिले पति परलोक गमन कर मेरा सिंदूर मिटाकर चले गये थे। अब दुख के अपार सागर में यह जवान बेटा छीतर मेरी कमर तोड़कर चला गया है !'

दूसरा बेटा आपका क्या करता है ? भुल्ली ने सहज भाव से जब दादी से पूछा तो उसकी आंखों से अविरल अश्रुधारा प्रवाहित होने लगी थी। 'छोटा बेटा। जगदीश गोरा चट्टा। बिलकुल मेरे जैसा है। बुद्धि में अपने पिता हरिश्चंद्र से भी अधिक कुशाग्र। पिता की छत्रछाया जब पुत्र के ऊपर से हट जाती है तो उसका बचपन सूना हो जाता है। उसे संरक्षण और प्यार की आवश्यकता होती है। इसी कारण मैंने उसे लालन पालन और शिक्षा के लिए भंवर स्वरूप बेटे के पास भेज दिया है।

'ये भंवरस्वरूप कौन है तुम्हारा ? जिसे तुम बेटा भी कह रही हो ? भुल्ली ने बसंती दादी से तपाक से प्रश्न कर डाला। 'अरे वह मेरा अपना बड़ा बेटा ही है। छीतर से भी बड़ा। बसंती दादी ने गर्व से कहा।

'वह कैसे ?'

'अरे तुम क्या जानो भुल्ली ? अपने पिताजी से पूछना वह तुम्हें सब बता देंगे। वह मेरा बड़ा बेटा जो सबसे प्रिय है मुझे उसके बारे में... भुल्ली से बसंती दादी ने कहा, 'दादी ! मैं अपने पिताजी से क्यों पूछूं ? भंवर स्वरूप के बारे में। वह तुम्हारा बेटा कहां से आया। गांव में तो बस हम सभी यही जानते हैं कि तुम्हारे दो बेटे और एक बेटी जिसका नाम मेरी अम्मा अंगूरी बता रही थीं। यही थे तुम्हारे। भुल्ली ने बसंती दादी से कहा।

'मैं तुम्हें तुम्हारे पिताजी से पूछने के लिए इसलिए कह रही हूँ भुल्ली कि वह इस बेटे के बारे में अच्छी तरह जानते हैं। तुम अभी बालक हो। मैं तुम्हें यह सब कैसे बताऊँ। यह मुझे कैसे प्राप्त हुआ था। क्योंकि जब मैं यह सब बताने का प्रयास करती हूँ तो मुझे तुम्हारे बाबा की याद आने लगती है जिसकी वह पहली निशानी छोड़कर गए थे मेरे लिए। बसंती दादी ने धाराप्रवाह बोलते हुए सिसिकियों के साथ रोना शुरू कर दिया था।

एक दिन भन्ने वाले कुंए पर बात हो रही थी। बाबा हरिशचन्द्र की तीन शादी हुई थीं। पहली पत्नी की निशानी भंवरस्वरूप बाल्यावस्था में था तब ही उसकी मां उसे छोड़कर चिरनिद्रा में सो गई थी। दूसरी पत्नि हरिशचंद को बिना कोई उपहार दिए ही इस लोक से विदा हो गई थी।

इस प्रकार दो-दो पत्नियों का युवावस्था में बिछोह हो जाने पर हरिशचन्द बिलकुल टूट गया था। निराश रहने लगा था। तुलसी बाबा जो उनके पिता थे। वह इस अपार दुख को सहन करने में अपने आपको संभाल नहीं पा रहे थे। तभी बसंती दादी जो पूर्ण यौवन पर संस्कार युक्त वयस्क लड़की थी। उसका रिश्ता हरिशचंद के लिए आ गया था। भन्ने वाले कुएं पर भुल्ली के साथ और भी किशोर वहां खड़े थे। जब उन्होंने हरिश्चंद्र बाबा की दो-दो शादी और फिर उसके पश्चात तीसरी शादी की कहानी सुनी तो सभी दांतों तले अंगुली दबाकर रह गए थे।

बसंती दादी का बेटा जगदीश अपने बड़े भाई को पिता के समक्ष सम्मान देकर उसके पास रहता था। कहा जाता है कि भंवर स्वरूप के दो लड़के जगदीश से बड़े थे। लेकिन दोनों जगदीश को

चाचाजी कहकर ही सम्बोधित करते थे।

कालक्रम के अनुसार समय गुजरता गया। भंवरस्वरूप सरकारी नौकरी में लग गया था। जगदीश पढ़ाई में अव्वल था। दसवीं कक्षा विद्यालय में प्रथम स्थान पाकर उत्तीर्ण हुआ था। उसके भाई ने जब और आगे पढ़ाने के लिए जब हाथ ऊँचे कर दिए तो वह अपने स्तर पर किसी बड़े शहर में चला गया था। जो किसी प्रदेश की राजधानी भी था। उसने ट्यूशन पढ़ाकर अपनी पढ़ाई जारी रखी।

बसंती दादी की लड़की अंगूरी रामजीलाल के साथ, परिणय-सूत्रबंधन में बंध गई थी। वह दिल्ली में रहने लगी थी। जगदीश महालेखाकार कार्यालय में .उच्च अधिकारी नियुक्त हो गया था। इस प्रकार सब तरह से बसंती दादी की संतान साधन सम्पन्न थी।

लेकिन बसंती दादी अपने पति हरिश्चन्द्र के गांव को नहीं छोड़ना चाहती थी। उसका कहना था कि मैं अपने पति के गांव में ही अपनी अंतिम सांस लेना चाहती हूँ। और उसी राख में मिल जाना चाहती हूँ जहां मेरे पति के पार्थिव शरीर की राख हो गई थी। वह किसी का निकाह हो या विवाहोत्सव सभी कन्याओं को कन्यादान और उपहार देकर हमेशा आती थी। हिंदू-मुस्लिम सभी धर्माबलंबियों की प्रिय थी।

बसंती दादी सिला बीनने भी जाती थी। सिला बीनने का अर्थ है - खेतों में पड़े अन्न के एक-एक दाने को चुगकर अपनी झोली में एकत्रित करके लाना। बसंती दादी ने सिला बीनकर अपना पेट भरा था।

दूसरे सच्चाई तो यह है कि बसंती दादी के वृद्धावस्था के बोझ को उठाने के लिए कोई भी लड़का उनका तैयार नहीं था। जब तक हाथ पैर चले। बसंती दादी परिश्रम करके अपना पेट भरती रही। लेकिन जब उम्र बढ़ने लगती है तो स्वयं शरीर प्रयास करो तो वृद्धावस्था में वह भी मुँह मोड़ कर दूर खड़ा हो जाता है। शिथिल अवस्था में समस्त शरीर के अंग मनुष्य को बिल्कुल पराश्रयी और पंगु बना देते हैं।

बसंती दादी को असाध्य रोग हो गया था। सभी ने उसके लिए अपने दरवाजे बंद कर दिए थे। बड़े बेटे भंवरस्वरूप के घर बसंती दादी जब आई तो वहां भी उसे रखने को कोई राजी नहीं था। एक तो बढ़ती उम्र से ग्रसित वृद्धावस्था ने असहाय कर दिया था। दूसरी तरफ इस उम्र में गर्भाशय का कैंसर हो गया था। उससे रक्तपात निरंतर जारी था। रक्त में जब दुर्गन्ध आती देखी गई तो बड़े बेटे की किराएदार गायत्री ने नाक मुंह सिकोड़ते हए परामर्श दिया कि इन्हें इनके गांव ही भेज दिया जाए। यहां चारों तरफ रक्त ही रक्त और उसमें दुर्गन्ध का मिश्रण।

बसंती दादी को रिक्शे में बिठाकर उसे उसके गांव अकेले जीवन व्यतीत करने को विवश करने के लिए बस के द्वारा रवाना कर दिया गया था। जहां बसंती दादी साफ सुथरी रहकर अपना शेष जीवन व्यतीत कर रही थी। अब उसे अपना अतीत याद आने पर उसे फूट फूटकर रोने को विवश कर दिया था। कंपकंपाती सर्दी में रजाई में लिपटी बसंती दादी एक अभागिन याचक बन गई थी। मैली खाट की चद्दर दुर्गन्धयुक्त थी। रजाई भी बहुत गंदी थी। जगह-जगह रक्त के धब्बे नजर आते थे।

बड़े बेटे की बहू गुलकदी ने जब आलू के परांठे और हलुआ बनाकर अपनी सास के पास भेजे तो उसने कहा था 'मैं किसना जाट के यहां आई लापसी खाऊँगी। हलुआ और आलू के परांठे. ..अब अगले जन्म में खाऊँगी। जब खाने के दिन थे तो किसी ने भी कुछ न भिजवाया था। बसंती दादी ने रोते हुए कहा था।

पंडित रेवती रमन ने बताया था कि 'हम रोज दादी को देखने जाते थे। अभी उसकी गाड़ी चल रही है या नहीं ? मैले-कुचौले वस्त्र, और बिछौना और सभी से दुर्गन्ध आने के कारण कोई बसंती दादी के पास जाता नहीं था। लेकिन मैं राधा-रमन और लच्छी को रोज उनके पास भेजता था। मुझे बसंती दादी के यौवन का वह बसंत खूब याद आ रहा है जब वह फागुन में थोक मँड़न में से किसी को बिना रंग बिरंगा करे नहीं जाने देती थी।

'अरे भुल्ली, जुगला... दाताराम बाबा बसंती दादी अब नहीं रहीं चलो जल्दी चले... ग्रामीण जनों के मध्य जोरों का ये संवाद चल रहा था।

'ऐसा करो एक ढकेल मंगाओ या फिर बैलगाड़ी, बसंती दादी के शव में से बहुत बदबू और दुर्गन्ध आ रही है। इसे कौन स्पर्श करेगा ? कौन संस्कार से पूर्व होने वाली प्रक्रिया अपनाएगा। चलो. .. चलो... जल्दी शमशान कंडे भिजवाओ, मैं बैलगाड़ी या ढकेल ले आता हूँ। उसमें बसंती दादी श्मशान चली जायेंगी अनेक संवादों के मध्य एक संवाद सुनाई पड़ा था।

बसंती दादी ! भरा-पूरा परिवार छोड़ कर गई थी। और अंतिम दिनों में उसने कैसे-कैसे कष्ट उठाए थे ? आज वह चिरनिद्रा में सो गई है। बसंती दादी की याद में आज पूरी ग्रामीण जनता रो रही है जो सबको प्यार बांटती थी। उसे बुढ़ापे में अपनी ही संतान का प्यार नहीं मिला। अंतिम संस्कार के समय उसका अपना पुत्र तक नहीं था। जिसे गर्भ में नौ महीने रखकर कैसे-कैसे दुख उठाए थे। अपार प्रसव की पीड़ा को सहन कर वह जाए थे। खुद गीले में सोकर पुत्र को सूखे में सुलाया था... उसने उसे जीवन भर रूलाया था। आज बसंती दादी का पार्थिक पंचतत्त्व में विलीन हो रहा है। ग्रामीण जन की लोकप्रिय बसंती दादी... अब हमेशा के लिए अदृश्य हो गई है। सभी ग्रामवासी बसंती दादी के मृदुल वात्सल्य की चर्चा कर रहे हैं शमशान में।

जयघोष का निनाद हो रहा है। बसंती दादी अमर रहे... बसंती दादी अमर रहे...॥'

एस.बी.के. गर्ल्स हायर सेकेंडरी स्कूल के पास, मंडी
अटलबंद, भरतपुर, राजस्थान-321 001, मो. 0 99834 09454

कहानी

अपहरण

● प्रमोद तिवारी

धरती के चप्पे-चप्पे पर अमावस की कालिमा छाई हुई है। कालिमा इतनी गहरी कि करोड़ों तारे भी मात्र टिमटिमा रहे हैं। ये अंधेरे को किंचित् भी कम करने में सर्वथा असमर्थ सिद्ध हो रहे हैं। प्रकाश के अपहरण का दोष हमेशा अमावस और अंधकार पर रहा है। तारों की कोशिश की सराहना आज तक किसी ने नहीं की ।

आज की अमावस रात रूपली अपने पति के पास की खाट पर लेटी है। रूपली नाम के अनुरूप रूपवान और सुन्दर थी भी। उसका गोल सुन्दर चेहरा, गोरा रंग और आमंत्रण देती आँखों को देख कर ही सोमला उसे अपने घर पढ़ाने के लिए लाया था। वैसे पढ़ाने का तो बहाना था। असल में पाँच साल के वैवाहिक जीवन के सन्तान शून्य को भरने के लिए उसकी सोची समझी साजिश थी। एक-दो साल में ही उसने अपनी पत्नी झमकु के खेत-खलिहान, हाट-बाजार, ढोर-बकरी चराने जाने जैसी दीर्घ अनुपस्थिति की एकान्त बेला उसे प्यार सिखा दिया।

अभी-अभी उसका पति सोमला उससे बातें कर रहा था। दूर से मांदल की थाप सुनाई दे रही थी। फल्ये (मजरे) के अधिकांश स्त्री-पुरुष और बच्चे दूसरे फल्ये में हो रहे विवाह में चले गए हैं। फल्ये एक-दो किलोमीटर दूर है और घर दो सौ फीट दूर। इसलिए घर रखवाली के लिए कोई बूढ़ा-बूढ़ी या एकाध प्रौढ़ ही बचा हुआ है। विवाह में सोमला ने अपने घर से प्रतिनिधि के तौर से बड़ी पत्नी झमकु को भेज रखा है। अकसर यही होता है या तो सोमला रूपली को लेकर समाज या गांव में जाता या अकेली झमकु। खेत में और घर रखवाली में भी ऐसी साझी-पाती चलती-रहती है।

एक झपकी आना ही चाहती है कि कहीं दूर से चार-पांच कदमों की हल्की सी ध्वनि कानों में पड़ती है। दोनों ही चौकन्ने हो जाते हैं। चार-पांच हल्की परछाइयां उनकी तरु तेजी से बढ़ती आ रही हैं। दोनों सतर्क हो खटिया पर बैठ जाते हैं। एक ही क्षण में रूपली और सोमला को घेर लेते हैं। सोमला ज्यों ही उठता है तो उसके सिर पर फाल्या (बड़ा हंसिया) का वार होता है। फुर्ती से वह उसे बचा तो लेता है। लेकिन उसकी नोक फिर भी उसके सिर में लग ही जाती है।

सोमला के परिवार में कुल जमा तीन प्राणी ही हैं। ब्याह के दस सालों ने झमकु को बांटी (बांझ) का श्राप दिया है। रूपली की बेल धरती से निकलती जरूर, लेकिन कभी एक-दो पत्ते फूटते हैं, तो बकरियां बटक लेती हैं। कभी कंद को ही धरती में कीड़े खा जाते हैं। रूपली के गर्भ को प्रकृति कई बार खराब कर चुकी है। कारण भी था। तेरह साल की कच्ची उम्र में सोमला ने उसे तोड़ दिया था। पंद्रह की होते-होते पेट रह गया। पांच साल के वैवाहिक जीवन में एक बालिका ने जन्म दिया जरूर पर वह चार महीने से अधिक जी न सकी।

उसके पहले और बाद में चार अधूरे (गर्भपात) भी हुए।

अभी फिर वह एक माह से आशान्वित है। आज की रात में विवाह में नहीं जाने का एक कारण यह भी है। आराम और सतत् पिया का सान्निध्य। दिनभर खेत में काम करने से शरीर पस्त है। अंधेरी रात में अपनी-अपनी खटिया पर बतियाते हुए सोने की कोशिश जारी है। लेकिन कानों में मांदल की आवाज कभी विवाह की ओर ले जाती तो कभी थकान नींद की ओर।

एक झपकी आना ही चाहती है कि कहीं दूर से चार-पांच कदमों की हल्की सी ध्वनि कानों में पड़ती है। दोनों ही चौकन्ने हो जाते हैं। चार-पांच हल्की परछाइयां उनकी तरफ तेजी से बढ़ती आ रही हैं। दोनों सतर्क हो खटिया पर बैठ जाते हैं। एक ही क्षण में रूपली और सोमला को घेर लेते हैं। सोमला ज्यों ही उठता है तो उसके सिर पर फाल्या (बड़ा हंसिया) का वार होता है। फुर्ती से वह उसे बचा तो लेता है। लेकिन उसकी नोक फिर भी उसके सिर में लग ही जाती है।

छोटे से सुराख से जैसे पानी रिस जाता है, वैसे ही सोमला इनके घेरे से बच निकलता है। बल्कि उनकी रणनीति भी यही थी। सोमला पास के अपने जीजा के घर की ओर जाकर शोर मचाता है- 'चोट्या, आई पड्या रे, बचाड़ो रे चोट्या... (चोर आ धमके हैं, बचाओ रे... चोर...)

उधर रूपली भी भागने के फिराक में थी। वह भागी मगर पीछे उन्होंने उसे टापरी से दूर भागने का अवसर दिया। उसे आहत करने का भी उनका इरादा नहीं था। वह टापरी के पीछे तलावड़ी

(छोटा तालाब) की ओर भागने लगी अच्छा-बुरा, काँटे-फूल कुछ नहीं सूझता। अपने को सुरक्षित करने के लिए कहीं भी भागना धर्म हो जाता है।

आगे-आगे रूपली और पीछे-पीछे पाँच। घबराहट में वह उठी, 'बचाओ-बचाओ।' जान छोड़कर भागती रही। पर जैसे जंगल में अकेली हिरणी को चार-पाँच शिकारी कुत्ते घेर लेते हैं उसी तरह रूपली को तलावडी में घेर लिया। दो ने उसे पकड़ रखा। एक ने मुँह पर कपड़ा बाँधा। एक ने पैर बाँधे और एक चादर में बाँधकर तुरत-फुरत सिर पर रखकर नाले-नाले दौड़ते चले जा रहे हैं। थोड़ी-थोड़ी देर उठाने वाले बदलते जाते। वैसे पोटली का वजन चालीस किलो से ज्यादा न था। सब हट्टे-कटे थे। पहाड़ों पर लकड़ी के लट्टे और गट्टे उठाने का खासा अभ्यास था। अतः उनके लिए तो मैदान में यह सहज था। पोटली उठाकर मजे से दौड़ लगाते चल रहे थे।

पोटली में जब होश आया तो रूपली की आँखें बहने लगीं। वह सोचने लगी कि न यह सुन्दर रूप रंग होता, न ऐसी मुसीबत आती। यह सुन्दरता उसकी जान की दुश्मन बन गई है। उसे याद आया जब वह हैण्डपम्प पर पानी भर रही थी। तब यही केरसिंह उधर से निकला था और घूर-घूर कर देख रहा था। शाम को केरसिंह दो साथियों के साथ उसके घर दारू पीने आया था। तब भी वह खा जाने वाली निगाह से देखे जा रहा था। उसे डर लग रहा था। आज उसका डर इतने भयानक रूप में घटित हुआ, कभी सोचा न था। उसका मन उस हिरनी जैसा पछता रहा था जो अपनी सीगों की सुन्दरता को तालाब में निहारती। लेकिन जब यही सींग झाड़ी में फंसें तो उसकी जान आफत में डालने वाले सिद्ध हुए। रूपली भी उसी तरह अपनी सुन्दरता को कोस रही थी। इसी सुन्दरता के कारण आज पोटली में बंधना पढ़ा।



एक किलोमीटर दूर सड़क पार करके पुनः नाले का रास्ता ही सुरक्षित जानकर चलने लगे। तभी रूपली की पोटली उतारी और थोड़ा सुस्ताने और टोह लेने लगे। पीछा करने वालों की आवाज आ रही थी।

इधर सोमला की आवाज सुन उसके जीजा घर से निकला फल्ये के दो-चार बच्चे लोग भी आ गए। उसका बड़ा भाई भिखला, काका जामसिंह भी शामिल थे। सोमला ने कहा- चार-पाँच जोण फाल्या लई ने आइरिया, ने रूपली के ली ढास्या (चार-पाँच लोग बड़ा हँसिया लेकर आये और रूपली को ले भागे)। अपने सिर से टपकते खून की हथेली से रोकने की कोशिश करता, पर बेकार। एक कपड़ा कसकर बाँधा और सब के साथ उस दिशा में चल पड़ा। पर जैसे ही बेटरी का उजाला चमकाते कि गोफन के पत्थर सननू से आते। इसी कारण थोड़ी दूरी बनाये रखी और बेटरी चमकाना बंद कर दिया। धीरे-धीरे यह दूरी इतनी अधिक हो गई कि लुटेरे कहाँ और किस दिशा में गए, पता नहीं चला। दरअसल पाँच में से दो पीछे रुककर गीफन चलाते और उनको रोकते जाते थे।

सड़क की ओर से उनका पीछा करने निकलते हैं लेकिन वे तो नाले के रास्ते से कभी के दूर जा चुके थे। निराशा होकर सब फल्ये में पहुँचे फिर विचार-विमर्श और जाँच-पड़ताल की योजना बनाने लगे।

मिखला ने प्रश्न किया कि कौन नया आदमी इधर चक्कर लगा रहा था। सोमला ने याद किया और कहा- "हाँ, डूमसिंह तो मेरे घर आता रहता था। उसका साला भी दो-तीन बार इधर से निकला था। हो सकता है, वही हो।"

सुबह आस-पास के फल्ये में जाँच-पड़ताल की गई। ''कौन गायब है ?" "कौन हो सकता है?" फुफेरे भाई डूमसिंह के यहाँ तलाशा गया। पत्नी ने बताया कि वह तो गाँव गया है। साथ ही उसका भाई भी आया था।

सारे तार जोड़े गए। सूत्रों से निष्कर्ष निकला कि वह करतूत डूमसिंह और उसके साले की ही है। फल्ये के लोगों को जमा किया गया। डूमसिंह के पिता-भाई और पत्नी भी उपस्थित थे। सबने संदेह की सत्य को जामा पहना दिया। उसका नाम, गाँव और पता मालूम किया गया। थाने जाकर रपट लिखाने जाते हैं। दो और साथ हो जाते हैं।

थाने में नामजद रपट लिखने के पहले हजार रुपए देने पर पुलिस ने कार्यवाही का आश्वासन दिया। सोमला जानता था यह आश्वासन कोरा है। उसने अपनी कोशिश जारी रखी। रात-दिन उस गाँव के संदिग्ध स्थानों पर दो-चार साथियों के साथ तलाश की। ऐसा चार बार किया। एक-दो बार पुलिस के साथ भी गया।

लेकिन डूमसिंह के साले केरसिंह का कहीं पता नहीं चला। उधर रूपली को पोटली से निकाला। पैर छोड़े तो हाथ पीछे बांध

आलेख

नारी को समझें

● शिल्पी मिश्रा

जीवन एक संघर्ष है, यह हम सब जानते हैं। परन्तु यह संघर्ष एक नारी के लिए दोगुना हो जाता है, जब वह अपने ढंग से अपना जीवन स्वयं संवारना चाहती है। नारी का अपने अस्तित्व के लिए संघर्ष तो उसके पैदा होने के साथ ही शुरू हो जाता है या यूं कहें कि पैदा होने के पहले ही वह अपने अस्तित्व के लिए संघर्ष करने लगती है। जीवन के प्रत्येक मोड़ पर उसे संघर्षों का सामना करना पड़ता है। इन संघर्षो का सामना हम तभी कर सकते हैं, जब हम स्वयं अपने अस्तित्व को स्वीकारें, उसको एक मजबूत आधार दें और स्वयं का सम्मान करें। कभी भी स्वयं को किसी से कम मत आंके। स्त्री होने काम मतलब यह नहीं कि हमारी सोचने, समझने या निर्णय लेने की क्षमता किसी से कम है। अपने जीवन के महत्त्वपूर्ण फैसलों के लिए किसी की ओर देखने से अच्छा है कि स्वयं के अस्तित्व का अहसास कराएं। स्वयं ही एक मर्यादा रूपी दायरा बनाकर उसमें सिमटने की जरूरत नहीं है। जरूरत है इस दायरे से बाहर निकलने की और स्वयं को साबित करने की। क्योंकि मर्यादा का सिर्फ एक ही दायरा है जो कि स्त्री और पुरुष के लिए समान है। नारियों को तो और अधिक सजग रहना है और बड़ी कुशलता एवं चतुराई से अपने संसाधनों का उपयोग करते हुए स्वयं को साबित करना है। क्योंकि हमारे पास संसाधन और गलतियां करने के अवसर दोनों ही पुरुषों की अपेक्षा सीमित होते हैं।

म. सं. 34, तरीनपुर, सीतापुर, (उ. प्र.)

दिए। दो आगे, बीच में रूपली, दो पीछे। केरसिंह रूपली की धकियाता और जल्दी-जल्दी चलने हेतु मजबूर करता।

सुबह हुई तो सतपुड़ा के जंगलों-घाटियों में रुकमा और केरसिंह रह गए। बाकी लोग अपने मुकाम पर चले गए। परिवर्तन हुआ यह कि केरसिंह की पत्नी रुकमा आ गई। रूपली की थोड़ी शांति मिली। लगा एक नारी तो नारी का दर्द समझेगी।

केरसिंह का घर जाना खतरे से खाली नहीं था। पर उसे पल-पल की खबर मिलती रहती। कभी पुलिस का आना तो कभी सोमला का आना। सब दूर से देखते। फिर पहाड़ों-घाटियों में गुम हो जाते। रूपली का मन होता कि अभी भागकर सोमला से जा कर लिपट जाए। लेकिन एक किलोमीटर का फासला। केरसिंह के फाल्ये और तीर-कमान का डर रोके हुए है।

जंगल में भटकते-भटकते आठ दिन हो गए। रुकमा रूपली को साथ रखती। केरसिंह जंगल के रास्तों से खूब परिचित था सो रिश्तेदारों के पास जाकर रोटी-मिर्च-प्याज ले आता। रुकमा को यह अपहरण, मन से अच्छा नहीं लगा। उसने आंखों से रूपली की सहयोग का विश्वास दिलाया ।

एक रात पुलिस इनके ठिकाने के पास आ गई । केरसिंह, रूकमा और रूपली पहाड़ों की ओर निकल कर छिपते रहे। रूपली का मन हुआ कि जोर से चिल्ला दूँ। लेकिन केरसिंह के धनुष पर चढ़े बाण से जान का खतरा ज्यादा था। उसे अभी सोमला के लिए जीना था। वह बेमौत मरना नहीं चाहती थी।

रात कटी, सुबह हुई। जंगल-पहाड़, घने पेड़ों की छाया के बीच वापस उस मुकाम पर। यह जगह केरसिंह के घर के ऊपर पहाड़ी पर थी। जहाँ से घर के आस-पास की गतिविधियों पर नजर रखी जाती थी। खतरा होने पर भागने की सहूलियत थी।

एक शाम केरसिंह देर से आने का कहकर चला गया। इधर रुकमा ने रूपली को पगडंडी की राह समझा दी। पक्की सड़क के बाद शहर आ जाने का भरोसा दिलाया। हिम्मत बढ़ी तो पैरों में ताकत आ गई। घंटों चलती रही। डरती-सहमती । शहर की रोशनी दिखी तो जान में जान आती लगी। कुत्ते भौंकने लगे। उसे लगा कि भेड़ियों से बचे तो कुत्तों में फंसे।

कुत्तों की तेज आवाज को दो गश्ती जवानों ने सौंपा। अपनी मोटर साइकल उधर मोड़ दी। उन्होंने देखा एक महिला की छाया। पास आते ही थकी, भूखी, प्यासी रूपली पस्त होकर गिर पड़ी। आंखों में अमावस का अंधेरा छाने लगा। तारों की टिमटिमाहट उस अंधेरे को दूर नहीं कर पाई।

दोनों जवान गाड़ी से उतरे। बेहोश रूपली के चेहरे पर बोतल का पानी छींटा। होश में न आते देख उसे बीच में बैठा कर थाने ले आये। यहां सोमला केरसिंह के गाँव पुलिस के साथ जाने के लिए आया हुआ है। थोड़ी देर में रूपली को होश आया और सोमला को देखकर वह खुशी से रो पड़ी।

132, केशवनगर मार्ग, बड़वानी रोड, राजपुर,
मध्य प्रदेश-451447, मो. 0 98934 21884

समीक्षा

संबंधों में 'तुरपाई' की अहमियत बयां करती कहानियां

● अश्वनी कुमार भमौता

पुस्तक का नाम : तुरपाई एवं अन्य कहानियां, **लेखिका :** वीणा विज 'उदित', **प्रकाशक :** आस्था प्रकाशन, लाडोवाली रोड, जालंधर (पंजाब), पृ. 108, मूल्य : 250 रुपये,

'**तुरपाई** एवं अन्य कहानियां' वीणा विज 'उदित' द्वारा लिखित बीस कहानियों का संग्रह है। संग्रह में लेखिका नारी मन की अतल गहराइयों में हलचल से उत्पन्न ज्वालामुखी को सतह पर ले आई हैं। यही लावा पृथ्वी के संपर्क में शांत होकर मधुर संबंधों एवं सकारात्मक सोच की उपजाऊ जमीन तैयार करता है जिस पर संवेदनाओं के अंकुर से उपजी परिस्थितियों में अस्तित्व की पहचान के लिए संघर्ष है। सहजता से भोगा गया यथार्थ है। स्वतंत्र अभिव्यक्ति है। स्वच्छ हवा के झोंके हैं। स्वच्छंद चाल है। कदमों के ताजा निशां हैं। यहां बालपन अपने आस-पास घटित घटनाक्रम को देखकर बड़ा हो रहा है। उस पर सोच-विचार करता है। कल्पना की उड़ानें आकाश छूने की ललक पैदा करती हैं। वह इस गोलमाल से परेशान है कि सामने वाले घर की दीदी ब्याह कर रोती हुई दूर चली गई जबकि गुड्डा-गुड़िया का ब्याह होने पर वे दोनों उसके घर में ही हैं। जब उसे बड़ा होने का आभास दिलाया गया, तब उसे यह भा नहीं रहा था। हमजोलियों संग उसकी असीम खुशी छीनी जा रही थी। दौड़-दौड़ कर तितलियां नहीं पकड़ सकती थी। स्वच्छंद हवा में सांस लेना अब नियंत्रित हो गया था। बचपन की 'दहलीज' पर खड़े उसके मन में हर रोज किसी-न-किसी प्रश्न का एक सूरज चमकता है। एक हवाई हादसे में अपने मां-बाप खो चुकी कली के दादा-दादी टूट गए। उसे होस्टल भेज कर वे खुद एक कम्युनिटी सेंटर चले गए। अपनी पढ़ाई पूरी करने के बाद वह अपने दादा-दादी को परवश देखकर भावुक हो गई। उन्हें अपने साथ घर ले जाना चाहती है। उन्होंने अपना वर्तमान और भविष्य वहीं पर सुरक्षित देखा। उसे अपना भविष्य संवारने को कहा। निरुत्तर कली ने भावनाओं पर काबू रख 'अनुमोदन' दे दिया। लेखा का युवा मन अपने अस्तित्व की तलाश में घर की दहलीज लांघकर 'अनकही' निकल गया। उसके दिमाग में फिल्म जगत की चकाचौंध का कीड़ा घुस चुका था। उम्र के इस नाजुक पड़ाव पर बिना पंखों के ऊंची उड़ान भर कर जमीन पर गिरने की बात उसकी बड़ी बहन को समझ आ चुकी थी। उसकी सूझबूझ और समझदारी किसी अनहोनी से बचा उसे घर वापिस ले आती है। यहां एक नारी मन दूसरी नारी को हकीकत का आईना दिखाता है। अवनि चिकित्सा क्षेत्र में विशेषज्ञता हासिल करती जा रही थी। उसने जीवन में एक मुकाम हासिल कर लिया था। लोग-बाग की प्रशंसा उसमें नवजीवन का संचार करती। उसकी खुशियां बढ़ती रहीं, उम्र भी। इसको वह अपने मां-बाप से बांटती रही। इस बीच विवाह की उम्र निकल गई। मां-बाप चल बसे। घर में अकेलापन, प्रशंसा में मिले दो शब्द शेयर करने को दर-ओ-दीवार था। 'कोई अपना' की चाहत में आलोक के जीवन में प्रवेश कर अपनी खुशियां हासिल करने की हसरतें जागी हैं। उसकी पत्नी बीमार थी। अवनि उसकी डॉक्टर। उसकी मौत उपरांत आलोक के युवा बच्चे भी दोनों की दोस्ती को एक तरह से मान्यता दे देते हैं।

हाल की दो घटनाओं ने ध्यान खींचा। मन उद्वेलित हुआ। खिन्नता से भर गया। पहली घटना, एक बुजुर्ग महिला का घर में कंकाल रूप में मिलना। वह पति की मृत्यु के बाद घर में अकेली रहती थी और बेटा अमेरिका में। उसकी मृत्यु कैसे हुई, ना-मालूम। मगर बेटे, किसी रिश्तेदार, पड़ोसी ने एक-डेढ़ साल में उसकी सुध तक लेने की जहमत नहीं उठाई। वह किस हालत में जी-मरी। भूखी-प्यासी रही। बीमार थी। तड़पती रही या चुपचाप नींद में सोई हुई इस संसार से चली गई। दूसरी, एक धनाढ्य बुजुर्ग का सब कुछ विरासत के रूप में बेटे को सौंप देना। उसे कुछ न मिला। एक किराये के मकान में जीवन जीते हुए एकाकी रहना। ऐसा एहसास हुआ कि संतान के प्रति विश्वास हो, न कि अंधविश्वास, जो बाद में ठोकरें खाने या अकेलेपन का दंश झेलने को विवश कर दे। यह अपनी संतानों से उम्मीद लगाए सपनों का मर जाना है। संवेदना के प्राण तत्त्व के निकल जाने जैसा। दिल से धड़कन के रिश्ते का टूट जाना है। शायद 'मृग मरीचिका' की नीरू ने आने वाले हालातों को भांप लिया था। तभी वह एक कड़ा फैसला कर सकने में समर्थ रही। अमेरिका बेटे-बहू के पास मोहवश खुशी-खुशी गई थी कि वह दादी बनने जा रही है लेकिन बहू द्वारा उसका तिरस्कार और उपेक्षा, बेटे का ढुलमुल रवैया, उसकी बेबसी को वह समझ गई। भारत में कदम रखते ही वह पासपोर्ट फाड़ कर पति के साथ आत्मीयता और खुशी के साथ हो लेती है। यहां कागज के टुकड़े का फाड़ना भर नहीं, बल्कि छाती चीरकर कलेजे को शरीर से बाहर निकाल देना है। पति-पत्नी के संबंधों की प्रगाढ़ता, विश्वास जो एक-दूसरे को बरबस ही खींचते हैं, की ओर

इशारा है। वान्या भी अपने 'अहम् को तिलांजली' इसलिए देती है कि उसे पति का सामीप्य चाहिए था। उसे मां के शब्द, 'अपने अहम् की आहुति दे दोगी, तो जीवन की राह फूलों भरी हो जाएगी।' याद हैं। वह उसी अनुरूप जीवन जीती गई। आखिरकार उसकी ओर से की गई पहल जीवन के सकारात्मक तंतु बनकर पति-पत्नी को समीप ले आई।

दूसरी ओर 'अपूर्व पूर्णत्व' की गार्गी का पति जब समझ लेता है कि उसके पास धर्मपत्नी के रूप में एक बहुमूल्य हीरा है जिसकी उपेक्षा वह कर रहा है। उसकी बेरुखी से वह आहत थी, जान गया, उसकी ओर प्रेम और श्रद्धा से भर जाता है। उसका आंचल सारे जहान के पुरस्कारों से भर गया, यही वह चाहती थी। लेकिन 'धुएं की लकीर' की कैली पति-पत्नी के संबंधों को कायम न रख सकी। दोनों के बीच कड़वाहट बनी रही। वह खुद को दोषी नहीं मानती। शर्मिंदा भी नहीं होती बल्कि अपने तर्कों से इसे जायज ठहराती है। दो बच्चों की मां कैली शारीरिक रसायन गड़बड़ी या परिवर्तन के कारण अपनी सहेली से संतुष्टि पाती है। पति इस सबसे परेशान है। मालूम होने पर अपने बच्चों, रिश्तेदारों, दोस्तों से इस बात को छुपाए रखता है। समाज में ऐसे रिश्ते उनकी प्रतिष्ठा को लांछित कर सकते थे। यह पीड़ा, परेशानी खुद के लिए घातक सिद्ध हुई। धुएं की लकीर आखिर कब तक अपने को बचाए रख पाती! नाते-रिश्ते में थोड़े-बहुत आंसू। कुछ सिसकियां... और उसके बाद उसकी ब्रह्मांड में पूर्णतया विलीनता...। यही परम सत्य है। जो लोग अकसर बस-ट्रेन में यात्रा करते रहते हैं, उनको मालूम है कि इस दौरान कैसे-कैसे लोगों से बावस्ता होना पड़ता है। सहयात्री दिलचस्प और बातचीत में साथ दे तो यह सफर आसानी से कट जाता है। दो अनजाने मुसाफिरों को विचारों के सफर में बंधने नहीं देता। 'एक फौजी की दास्तान' में ऐसा ही कुछ है। फौजी ने वार्तालाप में बहुत ही दिलचस्प किस्से सुनाए जिसने यात्रा को काफी रोचक और मनोरंजक बना दिया। ये वीर सैनिक देश की सीमाओं पर महीनों अकेलेपन को जीते/झेलते हैं। जब कोई हमदर्द या अपनों का सान्निध्य पाते हैं, तब अपनी पीड़ा को साझा कर मन को हल्का कर लेते हैं।



'सोने का हिरण' उन लोगों के इर्दगिर्द घूमती कहानी है जो धन-दौलत कमाने के लिए विदेश जाते हैं। कुछ अपना रास्ता चुन कर कामयाब हो जाते हैं। कई अनचाहे व जघन्य अपराध करने को मजबूर। बहुत सी मुसीबतों से घिर उनसे छुटकारा पाकर किसी तरह देश वापसी का टिकट कटवा लेते हैं। दो दोस्त की उम्मीदें थीं, सपने थे। दोनों ही विदेश में एक तरह से भावनात्मक ब्लैकमेलिंग का शिकार बनते हैं। कुछ पाने की तलाश/भटकन और मुश्किल से दो-चार होने के बाद बेमन से वतन लौट आते हैं।

तुरपाई, फटे-पुराने वस्त्रों को उपयोग में लाने का बेहद पुराना तरीका आज भी बदस्तूर जारी है। नए वस्त्रों में भी इसका इस्तेमाल किया जाता है। ऑपरेशन या चोट वाली जगह टांके लगाने में सूई-धागा काम आता है। लेकिन आत्म अथवा अहम् पर किए गए घाव और चोट को तो भावनात्मक तरीके से ही सिला या भरा जा सकता है। उस पर स्पर्श का मरहम काम करता है। इस संग्रह की कहानी 'तुरपाई' में ससुर की वासना भरी निगाहें ससुर-बहू के रिश्ते को नापाक कर गईं। 'शह और मात' में सास-ननद-ननदोई की त्रिमूर्ति की चालबाजियां एक विधवा के सम्मान और लाज को धोखे से हर लेती हैं। हमारा आचार-व्यवहार, चरित्र, मर्यादा सब सामाजिक पर्यावरण प्रदूषण के शिकार हो गए हैं, ऐसा जान पड़ता है। किसी घटना, दुर्घटना, दर्दनाक बम विस्फोट के समय यह सब उभर कर प्रकट होता है जब मृतकों, घायलों, भागते-दौड़ते लोगों के सामान, उनके पर्स, हाथ और कानों तक से पहने गहनों पर कुछ मौकापरस्त हाथ तक साफ कर लेते हैं। 'विस्फोट' में घायल पीहू को कोई चेतनाशून्य कामाचारी अपनी हवस का शिकार बना लेता है। यह विकृति, ओच्छी हरकत, समाज के कुरूप चेहरे की कालिमा को प्रदर्शित करती है। अति निम्न स्तर तक गिर चुके हमारे चरित्र की अंतिम पायदान को भी लांघ चुकी है। जंगल में हर वक्त जान पर खतरा मंडराता रहता है। कब कौन किस का शिकार कर ले, नहीं पता। प्रत्येक क्षण चौकन्ने और सतर्क रहने की विवशता। इसी को ध्यान में रखते हुए आदमी ने समूह, परिवार और समाज में रहना-जीना सीखा ताकि एक दूसरे की रक्षा और सुरक्षा का भरोसा रहे, खास तौर से महिलाओं और बच्चों की हिफाजत का। लेकिन अब यही जंगल में तबदील होने लगे हैं। भरोसा टूटने लगा है। इनसानी सोच, आस्था, ईमान, चरित्र डगमगाने लगे हैं। ऐसे हालात समाज में दहशत का माहौल पैदा करते हैं जिनसे शैलजा इतनी सहमी हुई है कि अपनी बेटी को किसी से खेलने-मिलने नहीं देती। वह एक मनोरोगी की हालत तक जा पहुंची है। अपने आस-पास एक असुरक्षित माहौल देखती है। आखिरकार एक मजदूरिन की बात कि उसने अपने बच्चों को आत्म-रक्षा के सब गुर सिखा दिए हैं। आप भी अपनी बेटी को बहादुर बना दो। इसने उसमें साहस व आत्मशक्ति का संचार कर उसकी आंखें भी खोल दीं और वह 'पुनर्जीवा' हो उठी। कैरोलीना कश्मीर का नैसर्गिक सौंदर्य, डल झील की निस्तब्धता, पहाड़ों की

लघु कथा

बेटी अपनी सीमा को मत लांघना

● नरेश कुमार 'उदास'

ऑस्ट्रेलिया से उसकी बेटी स्मिता का फोन आया था। वह बहुत खुश लग रही थी। जब उसने मुझे यह बताया, "पापा जहां मैं पीएचडी पर शोध कर रही हूं। वहीं मेरे साथ शोधरत मैथ्यू भी पीएचडी कर रहा है। पापा वह बहुत अच्छा लड़का है। मेरा बहुत ध्यान रखता है। मैं उसके साथ ही रिलेशनशिप में रह रही हूं। पापा यह अमरीका में रहता है। यहां उसके अंकल हैं। पापाऽऽऽ सब बहुत अच्छा लग रहा है।"

स्मिता धाराप्रवाह बोले जा रही थी।

तभी मैंने उसे रोकते कहा था, "स्मिता तुम्हारी मम्मी के न रहने पर, मैंने तुम्हें मां का प्यार भी दिया है। बेटी हम भारतीय हैं। हमारे कुछ संस्कार हैं। हमारी कुछ सीमाएं हैं। बेटी उन सीमाओं को कभी मत लांघना। बस मैं तुम्हें यही कहूंगा। सोच-समझकर कदम बढ़ाना।"

इतना कहते-कहते मैं सोच में डूब गया था।

"ओके पापा, अब मैं दूध पीती बच्ची नहीं रही। आप भी, पापाऽऽ छोड़ोऽऽ न। अच्छा पापा रखती हूं। आई लव यू पापाऽऽ वैरी मच।" कहकर उसने फोन काट डाला था।

फिर बीच में उसने फोन करने कम कर डाले। मैं अनुमान लगाता रहा, कि वह अपनी पीएचपी की पढ़ाई में दिन-रात जुटी होगी। तभी एक दिन उसका फोन आया था। उसने 'हैलो' कहे ही जोर से रोना शुरू कर दिया था। मैंने पूछा भी "क्या हुआ है? चुप होकर बताओ।" तो सिसकते बोली थी, "पापा, मैथ्यू धोखेबाज निकला। उसने तो अमरीका में शदी कर रखी थी। लेकिन मुझे बताया वह कुंवाराऽऽऽ है।" उसकी हिचकियां बंध गई थीं सुनाते-सुनाते।

"पापा मैं भारत लौट रही हूं कल।"

आकाश-कविता निवास, मकान नं. 54, गली नं. 3, लक्ष्मीपुरम, सैक्टर बी-1 (चनौर), पोस्ट बनतलाब, जिला जम्मू-181 123, मो. 0 84181 93842

ऊंचाई इकबाल की आंखों में देखती है। उसके 'सम्मोहन' में ऐसी बंधी कि अपने पति, बच्चों को छोड़कर कुछ डॉलर उसके मां-बाप को थमा कर, उसे अपने साथ अमेरिका ले गई। 'तुरपाई', 'कदमों की थाप' और 'सम्मोहन' कहानियां कश्मीर के परिवेश को लेकर लिखी गई हैं। इनके पात्र आज के अशांत कश्मीर के हालात के प्रतीक हैं जो घर (देश) और बाहर (विदेश) के कुछ लोगों के हाथों का खिलौना बनकर रह गया है। वहां के अवाम के सुख-चैन के दुश्मन बन कर ये लोग अपना 'खेल' खेल रहे हैं। काश! किसी भी इकबाल को बाहरी दुनिया के सब रंग फीके लगें। अपने कश्मीर की वादियों को छोड़कर सात समंदर पार की हसीना का सम्मोहन न खींचे। इसी के 'सम्मोहन' से हर कोई खिंचा चला आए और पुकार उठे- धरती का स्वर्ग यहीं है, यहीं है। अशांति के बादल छंट जाएं। अमन-ओ-चैन की बयार फिर से बहनी शुरू हो जाए।

'दाल में काला' की रेशु को देवर-देवरानी के झूठ, चालाकियों में छिपे स्वार्थ में घर-परिवार के प्रेम और विश्वास की नींव का आधार खिसकता नजर आया। अपनों से हाथ लगी निराशा और मिले दुख से किनारा करने के लिए बाऊजी दूसरों की खुशियों में अपनी खुशी के लिए ट्रस्ट बनवा कर कैंसर मरीजों के लिए 'अंतहीन जीवनधारा' बहाने में प्रयासरत हुए।

आदमी को जो हासिल है, उससे नाखुश रहता है, जो नहीं है, उसे पाने की चाहत उसमें तब-जब हिलोरे लेती रहती है। वर्तमान में न जीता हुआ वह या तो पूर्व को साथ लेकर चलता या फिर भविष्य के सपनों का गुलाम बन कर रह जाता है। वास्तविकता से सामना होने पर 'ठहराव' का भ्रम टूटता है। वहीं दूसरी ओर रूही जैसी शांत रहने वाली सीधी सादी लड़की अंकल के घर की शान-ओ-शौकत देखकर चकित थी। वैसे घर की तमन्ना उसके मन में घर कर गई। संयोगवश उसकी शादी उसी घर में हुई। लेकिन जल्द ही हकीकत से सामना हुआ। पति किसी दूसरी विवाहिता के प्रेमजाल में उलझ गया। उसका जीवन नरक बनता गया। घर के हर सदस्य के उपेक्षित व्यवहार से वह नींद की गोलियों के सहारे जीने लगी। स्कूल में उसे गरीब बच्चों को पढ़ाने के बहाने जीवन में घिर आए 'कोहरे के पार' जीने का मकसद नई उम्मीद लेकर आया।

वीणा विज कहानी लिखती नहीं- कहती-सुनाती चलती हैं- सब कुछ एक ही सांस में कह जाती हैं। पाठक श्रोता बनकर सांस रोके बस सुनता चलता है- शुरू से कहानी के आखिर तक मौन समाधि में तल्लीन हुआ। धड़कनें बढ़ती जाती हैं। वीणा विज वर्तमान दौर में बनते-बिगड़ते-बदलते रिश्तों पर लिखती चली गई हैं। लेखिका के पास कहने को बहुत-कुछ है। यही उनकी लेखनी की ताकत है। मजबूत पक्ष है। जीवन अनुभव की पूंजी इन कहानियों को घड़ने-बनाने में लगा दी है। इनमें जमा यह धन भविष्य में उन्हें संभावनाओं के नए क्षितिज तलाशने में और भी परिपक्व और मजबूत लेखन का आधार प्रदान करेगा। वीणा विज 'उदित' की कहानियां हमारे आस-पास घटित यथार्थ का आईना ही हैं जिसे हम सब रोज देखते हैं और चुपचाप अपने गंतव्य की ओर निकल पड़ते हैं।

द्वारा भारद्वाज भवन, रामनगर, शिमला, हिमाचल प्रदेश-171 004, मो. 0 98162 85095

स्वाधीनता सेनानियों को हिमाचलवासियों का शत्-शत् नमन

71वें स्वाधीनता दिवस

के पावन अवसर पर



आईए, हम प्रण लें
असंख्य स्वाधीनता सेनानियों के प्राणों की आहुति से सश्रम अर्जित आज़ादी की मूल भावना को समझते हुए सत्य, अहिंसा व सद्मार्ग पर चल कर प्रदेश व देश की उन्नति व खुशहाली में अपना योगदान देंगे।

देश की आन, बान और
शान की ख़ातिर
अपना सर्वस्व न्योछावर करने वाले
स्वाधीनता सेनानियों को
प्रदेशवासियों का नमन।

-सूचना एवं जन सम्पर्क, हिमाचल प्रदेश

पंजीकरण संख्या : 845/1957 अगस्त, 2017 एच.पी./79 एस.एम.एल. 2015–17



गोल्फ मैदान नालदेहरा, शिमला छाया : विनोद

आर.एस. नेगी निदेशक, सूचना एवं जन सम्पर्क विभाग, हिमाचल प्रदेश द्वारा प्रकाशित तथा डॉ. डी. के. गुप्ता, नियंत्रक, मुद्रण एवं लेखन सामग्री विभाग द्वारा हिमाचल प्रदेश सरकार के लिए राजकीय प्रेस, शिमला–171005 से मुद्रित करवाकर शिमला से प्रकाशित। सम्पादक वेद प्रकाश।